बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

जन्म : 14 अप्रैल, 1891 परिनिर्वाण 6 दिसंबर, 1956

बाबासाहेब

डॉ. अम्बेडकर

सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड 37

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : भाषण

डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय

खंड : 37
डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : भाषण

पहला संस्करण : 2019 (जून)
दूसरा संस्करण : 2020 (अगस्त)

ISBN : 978-93-5109-145-5

आवरण परिकल्पना : डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

पुस्तक के आवरण पर उपयोग किया गया मोनोग्राम बाबासाहेब डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के लेटरहेड से साभार

ISBN (सेट) : **978-93-5109-129-5**

रियायत के अनुसार सामान्य (पेपरबैक) 1 सेट (खंड 1–40) का मूल्य : रू 1073/-
रियायत नीति (Discount Policy) संलग्न है,

प्रकाशकः
डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार
15 जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट :http://drambedkarwritings.gov.in
Email-Id :cwbadaf17@gmail.com

मुद्रक : अरावली प्रिंटर्स एंड पब्लिशर्स प्रा.लि., W-30 ओखला, फेज–2, नई दिल्ली–110020

परामर्श सहयोग

डॉ. थावरचन्द गेहलोत

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार

एवं

अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

श्री रामदास अठावले

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री कृष्णपाल गुर्जर

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री रतनलाल कटारिया

सामाजिक न्याय और अधिकारिता राज्य मंत्री

श्री आर. सुबह्मण्यम

सचिव

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय भारत सरकार

सुश्री उपमा श्रीवास्तव

अतिरिक्त सचिव एवं सदस्य सचिव, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार

डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, पी.एच.डी.

निदेशक

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

डॉ. बृजेश कुमार

संयोजक, सी.डब्ल्यू.बी.ए.

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सकंलन (अंग्रेजी)

श्री वसंत मून

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री
भारत सरकार
MINISTER OF SOCIAL JUSTICE & EMPOWERMENT
GOVERNMENT OF INDIA
तथा
अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
CHAIRPERSON, DR. AMBEDKAR FOUNDATION

संदेश

स्वतंत्र भारत के संविधान के निर्माता डॉ. अम्बेडकर, बहुआयामी प्रतिभा के धनी थे। डॉ. अम्बेडकर एक उत्कृष्ट बुद्धिजीवी, प्रकाण्ड विद्वान, सफल राजनीतिज्ञ, कानूनविद्, अर्थशास्त्री और जनप्रिय नायक थे। वे शोषितों, महिलाओं और गरीबों के मुक्तिदाता थे। डॉ. अम्बेडकर सामाजिक न्याय के लिए संघर्ष के प्रतीक है। डॉ. अम्बेडकर ने सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक सभी क्षेत्रों में लोकतंत्र की वकालत की। एक मजबूत राष्ट्र के निर्माण में डॉ. अम्बेडकर का योगदान अतुलनीय है।

डॉ. अम्बेडकर के लेख एवं भाषण क्रांतिकारी वैचारिकता एवं नैतिकता के दर्शन–सूत्र है। भारतीय समाज के साथ–साथ संपूर्ण विश्व में जहां कहीं भी विषमतावादी भेदभाव या छुआछूत मौजूद है, ऐसे समस्त समाज को दमन, शोषण तथा अन्याय से मुक्त करने के लिए डॉ. अम्बेडकर का दृष्टिकोण और जीवन–संघर्ष एक उज्ज्वल पथ प्रशस्त करता है। समतामूलक, स्वतंत्रता की गरिमा से पूर्ण, बंधुता वाले एक समाज के निर्माण के लिए डॉ. अम्बेडकर ने देश की जनता का आह्वान किया था।

डॉ. अम्बेडकर ने शोषितों, श्रमिकों, महिलाओं और युवाओं को जो महत्त्वपूर्ण संदेश दिए, वे एक प्रगतिशील राष्ट्र के निर्माण के लिए अनिवार्य दस्तावेज है। तत्कालीन विभिन्न विषयों पर डॉ. अम्बेडकर का चिंतन–मनन और निष्कर्ष जितना उस समय महत्त्वपूर्ण था, उससे कहीं अधिक आज प्रासंगिक हो गया है। बाबासाहेब की महत्तर मेधा के आलोक में हम अपने जीवन, समाज राष्ट्र और विश्व को प्रगति की राह पर आगे बढ़ा सकते हैं। समता, बंधुता और न्याय पर आधारित डॉ. अम्बेडकर के स्वप्न का समाज–"सबका साथ सबका विकास" की अवधारणा को स्वीकार करके ही प्राप्त किया जा सकता है।

मुझे यह जानकर अत्यंत प्रसन्न्ता हो रही है, कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय का स्वायत्तशासी संस्थान, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, "बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर : संपूर्ण वांग्मय" के अन्य अप्रकाशित खण्ड 22 से 40 तक की पुस्तकों को, बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के अनुयायियों और देश के आम जन–मानस की मांग को देखते हुए मुद्रत किया जा रहा है।

विद्वान, पाठकगण इन खंडों के बारे में हमें अपने अमूल्य सुझाव से अवगत कराएंगे तो हिंदी में अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

(डॉ. थावरचंद गेहलोत)

बाबासाहेब अम्बेडकर के सम्पूर्ण वाड्मय (Complete CWBA Vols.) का विमोचन

हिंदी और अंग्रेजी में CWBA / सम्पूर्ण वाड्मय, (Complete Volumes) बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर के संग्रहित कार्यों के संपूर्ण खण्ड, डॉ. थावरचंद गेहलोत, सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, और अध्यक्ष, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत सरकार, नई दिल्ली द्वारा जारी किया गया है। साथ ही डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी, निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान और श्री सुरेन्द्र सिंह, सदस्य सचिव भी इस अवसर पर उपस्थित थे। हिंदी के खंड 22 से खंड 40 तक 2019 में पहली बार प्रकाशित हुए है।

उपमा श्रीवास्तव, आई.ए.एस.
अपर सचिव
UPMA SRIVASTAVA, IAS
Additional Secretary

भारत सरकार
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
शास्त्री भवन, नई दिल्ली-110001
Government of India
Ministry of Social Justice & Empowerment
Shastri Bhawan, New Delhi-110001
Tel. : 011-23383077 Fax : 011-23383956
E-mail : as-sje@nic.in

प्राक्कथन

भारतरत्न डॉ. बी.आर. अम्बेडकर भारतीय सामाजिक–राजनीतिक आंदोलन के ऐसे पुरोधा रहे हैं, जिन्होंने जीवनपर्यंत समाज के आख़िरी पायदान पर संघर्षरत् व्यक्तियों की बेहतरी के लिए कार्य किया। डॉ. अम्बेडकर बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे इसलिए उनके लेखों में विषय की दार्शनिक मीमांसा प्रस्फुटित होती है। बाबासाहेब का चिंतन एवं कार्य समाज को बौद्धिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समृद्धि की ओर ले जाने वाला तो है ही, साथ ही मनुष्य को जागरूक मानवीय गरिमा की आध्यात्मिकता से सुसंस्कृत भी करता है।

बाबासाहेब का संपूर्ण जीवन दमन, शोषण और अन्याय के विरुद्ध अनवरत क्रांति की शौर्य–गाथा है। वे एक ऐसा समाज चाहते थे जिसमें वर्ण और जाति का आधार नहीं बल्कि समता व मानवीय गरिमा सर्वोपरि हो और समाज में जन्म, वंश और लिंग के आधार पर किसी प्रकार के भेदभाव की कोई गुंजाइश न हो। समता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के प्रति कृतसंकल्प बाबासाहेब का लेखन प्रबुद्ध मेधा का प्रामाणिक दस्तावेज़ है।

भारतीय समाज में व्याप्त विषमतावादी वर्णव्यवस्था से डॉ. अम्बेडकर कई बार टकराए। इस टकराहट से डॉ. अम्बेडकर में ऐसा जज़्बा पैदा हुआ, जिसके कारण उन्होंने समतावादी समाज की संरचना को अपने जीवन का मिशन बना लिया।

समतावादी समाज के निर्माण की प्रतिबद्धता के कारण डॉ. अम्बेडकर ने विभिन्न धर्मों की सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था का अध्ययन व तुलनात्मक चिंतन–मनन किया।

मैं प्रतिष्ठान की ओर से माननीय सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री, भारत सरकार का आभार व्यक्त करती हूँ जिनके सद्परामर्श एवं प्रेरणा से प्रतिष्ठान के कार्यों में अपूर्व प्रगति आई है।

उपमा श्रीवास्तव

(उपमा श्रीवास्तव)
अतिरिक्त सचिव
सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय,
भारत सरकार, एवं
सदस्य सचिव

प्रस्तावना

बाबासाहेब डॉ. भीमराव रामजी अम्बेडकर एक प्रखर व्यक्तित्व, ज्ञान के प्रतीक और भारत के सुपुत्र थे। वह एक सार्वजनिक बौद्धिक, सामाजिक क्रांतिकारी और एक विशाल क्षमता संपन्न विचारक थे। उन्होंने सामाजिक और राजनीतिक स्थितियों के व्यावहारिक विश्लेषण के साथ–साथ अंतःविषयक दृष्टिकोणों को अपने लेखन और भाषणों के माध्य से प्रभावित किया जो बौद्धिक विषयों और भावनाओं को अभिव्यक्त एवं आंदोलित किया। उनके लेखन में वंचित वर्ग के लोगों के लिए प्रकट न्याय और मुक्ति की गहरी भावना है। उन्होंने न केवल समाज के वंचित वर्गों की स्थितियों को सुधारने के लिए अपना जीवन समर्पित किया, बल्कि समन्वय और 'सामाजिक समरसता' पर उनके विचार राष्ट्रीय प्रयास को प्रेरित करते रहे। उम्मीद है कि ये खंड उनके विचारों को समकालीन प्रासंगिकता प्रदान कर सकते हैं और वर्तमान समय के संदर्भ में डॉ. अम्बेडकर के पुनःपाठ की संभावनाओं को उपस्थित कर सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, भारत के साथ–साथ विदेशों में भी जनता के बीच बाबासाहेब डॉ. अंबेडकर की विचारधारा और संदेश के प्रचार–प्रसार हेतु स्थापित किया गया है। यह बहुत ख़ुशी की बात है कि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्री के नेतृत्व में प्रतिष्ठान के शासी निकाय के एक निर्णय के परिणामस्वरूप, तथा पाठकों की लोकप्रिय माँग पर डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान, बाबासाहेब अम्बेडकर के हिंदी में संपूर्ण वांग्मय (Complete CWBA Volumes) का दूसरा संस्करण पुनर्मुद्रित कर रहा है।

मैं संयोजक, अनुवादकों, पुनरीक्षकों, आदि सभी सहयोगियों, एवं डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान में अपनी सहायक, कुमारी रेनू और लेखापाल, श्री नन्दू शॉ के प्रति आभार प्रकट करता हूँ, जिनकी निष्ठा एवं सतत् प्रयत्न से यह कार्य संपन्न किया जा सका है।

विद्वान एवं पाठकगण इन खंडों के बारे में सुझाव से डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान को उसकी वैधानिक ई–मेल आई.डी. **cwbadaf17@gmail.com** पर अवगत कराएं ताकि, अनुदित इन खंडों के आगामी संस्करणों को और बेहतर बनाने में सहयोग प्राप्त हो सकेगा।

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान हमेशा पाठकों को रियायती कीमत पर खंड उपलब्ध कराने के लिए प्रयास करता रहा है, तदनुसार आगामी संस्करण का भी रियायत नीति (Discount Policy) के साथ बिक्री जारी रखने का निर्णय लिया गया है। अतः प्रत्येक खंड के साथ प्रतिष्ठान की छूट नीति को संलग्न कर दिया गया है। आशा है कि ये खंड पाठकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बने रहेंगे।

(डॉ. देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता मंत्रालय, भारत सरकार,

15, जनपथ,
नई दिल्ली

जाति प्रथा को बनाए रखने वालों को प्रोत्साहित करना भारत में प्रजातंत्र का प्रोत्साहन न होकर उसके प्रजातंत्र को एक बड़े खतरे में झोंकना होगा

— डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

विषय सूची

रियायत नीति (Discount Policy)

भाषण

1

महान संघर्ष

''वर्ष 1927 के पहले दिन, यानी 1 जनवरी की शुरुआत दलित वर्गों द्वारा ''कोरेगांव युद्ध स्मारक'' पर आयोजित एक सभा से हुई। उस वर्ष दलित वर्ग के सभी ख्याति प्राप्त नेताओं ने इस सभा में भाग लिया।

डॉ. भी.रा. अम्बेडकर ने सभा को संबोधित किया और बताया कि उनके समुदाय से सैंकड़ों योद्धाओं ने गोरों ('ब्रिटिश') के साथ मिलकर लड़ाई में भाग लिया था और वे जी जान से लड़े थे। परन्तु लड़ाई के तुरन्त बाद उन्हीं गोरों ने उनको ''असैनिक समुदाय की उपाधि देकर बदनाम कर दिया था, क्योंकि सवर्ण हिन्दू उनसे अछूतों जैसा व्यवहार करते हैं, और घोर घृणा करते हैं, के वे स्थाई जीविका के साधन न होने के कारण मजबूरीवश गोरों की सेना में भर्ती हुए। अन्त में उन्होंने (बाबा साहिब) लोगों का आवाहन किया कि वे सरकार की इस नीति का जोरशोर से विरोध करें और उनकी सैनिक सेवा भर्ती पर लगाई रोक को हटाने पर सरकार को मजबूर कर दें''[1]

कोरेगांव युद्ध स्मारक का महत्वः

तथापि अछूतों की गोरों की सेना {विशेषतया बम्बई सेना} में विगतकाल में हुई भर्ती ने अछूतों को एक सुनहरा मौका प्रदान किया था। जहां वे अपना शौर्य व वीरता देश के भीतर व बाहरी लड़ाई के मैदान में दिखा सके और गोरे साहबों ने उनकी भरपूर प्रशंसा की थी।

'' जनरल मैलकॉम ने बम्बई अधिकारियों व सिपाहियों की कर्त्तव्यनिष्ठा के लिए प्रशंसा की थी। जनरल मैलकॉम ने सन् 1816 में निदेशक मंडल के सचिव को लिखकर इस बात की पुष्टि की थी कि बम्बई सेना में सभी वर्गों और सभी धर्मों जैसे हिन्दू, मुसलमान, यहूदी व इसाई धर्म के लोग थे। महाराष्ट्र के हिन्दुओं में परवरिस (महार) संख्या में राजपूतों व कुछ दूसरी सवर्ण जातियों की संख्या से कहीं अधिक थे। यह परवरिस बम्बई के दक्षिणी समुद्र तट के रहने वाले थे। महार सिपाहियों की प्रशंसा में बहुत कुछ लिखा गया था जैसे कि इन 'बम्बई सेना' के

[1] कीर, पृष्ठ 69 से उद्धृत

सैनिकों ने खाद्य सामग्री की कमी के चलते व बहुत से लोगों व पशुओं में बीमारी फैली होने पर भी पैदल कूच करते हुए मुश्किलें झेलने की अच्छी क्षमता दिखाई थी। चाहे वे कूंच करते या धावा बोलते, घिर जाते या कैदी बना लिए जाते, किलों में बारूद लगाते या व्यवहार कुशलता के तौर पर पीछे हटते हुए वे हमेशा हर स्थिति में अपने अधिकारियों व सहकर्मियों के साथ अडिग रहे। उन्होंने हमेशा अपने रेजिमेंट का सम्मान व गौरव बनाए रखा व कोई ऐसा कार्य नहीं किया जिससे शर्मिंदा होने की गुंजाइश हो। सन् 1818 के नव वर्ष दिवस पर तो महार सैनिकों ने भीमा नदी के किनारे कोरेगांव युद्ध क्षेत्र में लड़ते हुए वह कर दिखाया जिसने उनके सम्मान में चार चांद लगा दिए। 500 सैनिकों का एक छोटा दल जो कि बम्बई देशी पैदल सेना (इंफैंटरी) की पहली रेजिमेंट दूसरी बटालियन से था उनके साथ पूना अनियमित अश्वसेना के 250 सैनिक और मद्रास तोप खाने के 24 गोरे तोपचियों के साथ–साथ तोपें जिनकी क्षमता 6 पौंड गोले दागने की थी कप्तान एफ.एफ. स्टान्टन के नेतृत्व में बिना रुके, बिना विश्राम, बिना भोजन व बिनापानी, बाजीराव पेशवा II की बड़ी फ़ौज, जिसमें 20,000 घुड़ सवार सैनिक व 8000 पैदल सैनिक थे, पुणे और किरकी में ब्रिटिश सेना को घेर रखा था, से लोहा लिया व टक्कर दी।

31 दिसम्बर की शाम को सिरूर से कैप्टन स्टान्टन की सैनिक टुकड़ी को पूना के सेनागढ़ की रक्षा हेतु भेजा गया था। यह सैन्य टुकड़ी 27 मील की दूरी तय करती हुई रात भर पैदल चलकर पहली जनवरी 1818 की सुबह कोरेगांव पहुंची और वहां उसने मशहूर मराठा घुड़सवारों द्वारा घमासान लड़ाई का सामना किया। कप्तान स्टान्टन अपनी सेना को कोई निर्देश दे पाते, उससे पहले ही पेशवा सैनिकों की लगभग 600 सैनिकों की तीन टुकड़ियों ने तीन दिशाओं से आगे बढ़कर उन की सैन्य टुकड़ी को ललकारा। पेशवा सैनिकों के पास दो तोपें थी जो वे आगे बढ़ती तीन टुकड़ियों को प्रोत्साहित कर रही थीं और राकेट से अग्निबाणों की बौछार से स्टान्टन के सैनिकों को आगे बढ़ने से रोक रही थीं। पूना की अनियमित अश्व सेना के वीरतापूर्वक प्रयास के बावजूद पेशवा के मराठा घुड़सवारों और पैदल सेना ने कोरेगांव में पूरी ब्रिटिश सेना का घेरा डाल दिया था और नदी की ओर जाने वाले सारे रास्तों को जाम कर दिया था। चढ़ाई करने वाली फ़ौजों ने अपनी शक्तियों का पूरा उपयोग कर सामने वालों को पीछे धकेलते हुए गांव के बीचों बीच कुछ मजबूत एवं महत्वपूर्ण जगहों पर कब्जा कर लिया था और उनसे कब्जा छुड़ाना लगभग असम्भव था। हर एक घर, झोपड़ी व गली के लिये भीषण हाथापाई चल रही थी और गोरों की सेना की भारी क्षति हो रही थी। परन्तु भारतीय सैनिक, जिनमें बहुत से महार थे, बड़ी दृढ़ता एवं अत्यन्त धैर्य के साथ जमकर लड़ रहे थे। कप्तान स्टान्टन ने अपने सैनिकों से आखिरी आदमी और

आखिरी गोली तक लड़ते रहने को कहा। महार सैनिकों ने जबरदस्त उत्साह दिखाते हुए अति विशम परिस्थितियों में अत्यन्त बहादुरी से लड़ाई जारी रखी। जब सूर्यास्त हुआ तो गोरों ने अपने आप को बड़ी निराशाजनक हतप्रथम परिस्थिति में पाया। मराठा सेना का नेतृत्व योग्य जनरल गोखले कर रहे थे और गोरों पर सब तरफ से हावी थे। सौभाग्यवश, रात होने के साथ मराठा सैनिकों का हमला थोड़ा ढीला पड़ा और गोरों ने कुछ राहत की सांस ली। तब केवल एक अकथनीय रहस्यमय अवसर ने सारी लड़ाई के घटनाचक्र को ही बदल दिया। इस बार कोई निष्कर्ष निकालना कठिन था कि पेशवा सैनिक जब जीत के इतना नजदीक थे तो उन्होंने रात के नौ बजे गोलियां चलाना क्यों रोक दिया व कोरे गांव से सेना क्यों पीछे हटा ली। मद्रास पैदल सेना के 12, 21वीं रेजिमेंट की बम्बई देशवासी पैदल सेना के पचास सैनिक व तीन ब्रिटिश सैन्य अधिकारी युद्ध में एक सौ तेरह सैनिक और दो ब्रिटिश सैन्य अधिकारी घायल हुए। 21वीं रेजिमेंट की बम्बई देशी पैदल सेना के जो सैनिक शहीद हुए उनमें 22 महार परवरिस थे (नाम के अंत में 'नाक' से उनकी पहचान हुई),* उनमें 16 मराठा, 8 राजपूत, 2 मुसलमान और 1 या 2 सम्भवतः भारतीय यहूदी भी थे।

इस वीरतापूर्ण साहस, सहनशक्ति, मानसिक दृढ़ता, अनुशासित निर्भयता दर्शाने वाले सैनिकों के कृत्य ने महार सैनिकों के लिए एक अमर प्रसिद्धि अर्जित करा दी[1]। ''दस्तावेजों में लिखित है कि, ''यह कहना कठिन है कि इस सबसे किसकी ख्याति, कीर्ति और गौरव ज्यादा बढ़ा, स्वयं भारतीय सैनिकों का या गोरे अधिकारियों का जो अपने नेतृत्व व स्पष्ट आदेश से एक विश्वास व अडिग आदेश पालन की भावना और आश्चर्यजनक स्वामिभक्ति भारतीय सैनिकों में जगा पाए''[2] (भारतीय सैनिकों में बहुत से महार थे)।

---

* महार शहीदों के नामः 1. सोमनाक कमलनाक नायक 2. रामनाक यमनाक नायक 3. गोडनाक कोठे नाक 4. रामनाक यशनाक 5. भोगनाक हरनाक 6. अम्बानाक कनानाक 7. गननाक बलनाक 8. बलनाक कोंडनाक 9. रूपनाक लखनाक 10. वापनाक रामनाक 11. वितनाक धमनाक 12. रगनाक गननाक 13. वापनाक हरनाक 14. रायनाक वाननाक 15. गजनाक धर्मनाक 16. देओनाक आननाक 17. गोपालनाक बालनाक 18. हरनाक हिरनाक 19. जेत नाक धै नाक 20. गन नाक लखनाक। महार सैनिक जो हुए घायलः 21. जननाक हिरनाक 22. भीकनाक रतननाक 23. रतननाक घननाक (संदर्भ– डा. बाबा साहिब अम्बेडकर का ''बहिष्कृत भारतीय''

[1] अग्रलेख (मराठी) सम्पादक रत्नाकार गणवीर पृष्ठ 247
ब्रिगेडियर–जनरल लॉयनेल स्मिथ की रपट प्रशासक के प्रतिनिधि को पूना में रपट सौंपी रपटा, सेना के कमांडर–इन–चीफ डक्कन व भारत के गर्वनर जनरल और ईस्ट इंडिया कम्पनी के निदेशकों द्वारा कोर्ट के प्रेषित आदेश।

[2] मेजर जे.टी. गोरमैन का एतिहासिक दस्तावेजः द्वितीय बटैलियन चौथी बम्बई हथगोलन्दाज (ग्रेनेडियरज़) 1776–1933

[3] ''कोरेगांव की लड़ाई'' लै. कर्नल एच.ई. कैन्यों द्वारा यूनाइटिड सर्विसज़ जनरल 1931।

शीघ्र ही, कोरेगांव लड़ाई का सामरिक महत्व समझ में आ गया। यह निर्णय लिया गया कि कोरेगांव के उस बिन्दु पर जहां पहला गोला दागा गया था, वहां पर लगभग 32 वर्गफीट का चबूतरा बनाया जाए और उस पर 65 फीट ऊंचा एक स्मृति स्तंभ खड़ा किया जाए[3]। इस स्तंभ की नींव का शिलान्यास 26 मार्च 1821 को हुआ था। यह स्तंभ सैनिकों के शौर्यपूर्ण वीरता के कार्य के स्मृति चिन्ह के रूप में किया गया था। बहादुर सैनिकों के कृत्य को चिर स्थायी बनाने के लिए यह निर्णय लिया गया था कि शहीद और घायल हुए सैनिकों के नाम स्तंभ पर खुदवा दिए जाऐंगे क्योंकि यह उन सैनिकों की वीरता, व कर्तव्य परायणता ही थी जिससे उस दिन फ़ौज की कीर्ति और गौरव बढ़ा। एक विशेष पदक भी 1851 में जारी किया गया जिस पर ''भारतीय सेना को'' व पदक के मुखड़ों पर ''किरकी'' व कोरेगांव भी छापे गए।

उसके बाद भी महार बम्बई सेना की कमुक व कार्यवाहियों में भाग लेकर संदेह से परे साहस और अडिग कर्तव्यनिष्ठ का परिचय देते रहे। उन्होंने लड़ाईयां लड़ते हुए काठियावाड़ (1826), मुलतान व गुजरात (1849) और कन्धार (1880) में वीरता, शौर्य व साहस का प्रदर्शन कर ख्याति प्राप्त की। बम्बई सेना ने अफ़गान युद्ध प्रथम व द्वितीय, मियानी की लड़ाई (1843), फ़ारस की लड़ाई (1856–57)[4] में भाग लिया। बम्बई सेना के सैनिक चीन (1860), अदन (1865) और अबीसिनीया (1867) में गए। मग्दाला के जनरल सर चार्ल्स नैपियर, जिनके नेतृत्व में बम्बई सेना लड़ी थी, कभी भी बम्बई देशी पैदल सेना की 25 वीं टुकड़ी का महत्वपूर्ण योगदान भुला न पाये, क्योंकि बम्बई सैनिकों की बदौलत उन्होंने सिंध पर विजय पाई थी। जनरल कहा करते थे, ''मैं बम्बई सेना को सबसे अधिक प्रेम करता हूँ। मेरे जहन में जब–जब बम्बई सेना के सिपाही का विचार आता है मैं उनकी प्रशंसा किये बगैर नहीं रह पाता''। बम्बई सेना के महार सिपाही नज़दीक भी व दूर सब जगह जाते थे और लड़ाई के मैदानों में अपने शौर्य की अमिट छाप छोड़ जाते थे।

द्वितीय अफ़गान युद्ध (1878–1895) में एक महार सैनिक ने एक बार फिर अपने अतिविशिष्ट वीरता, शूरता, निडरता, निर्भीकता के गुणों के प्रदर्शन से कोरेगांव में महार सैनिकों के कृत्य की याद ताजा करा दी। सिपाही सोननाक टननाक की उच्च श्रैणी की वीरता, साहस व शौर्य की गाथा मुम्बई में वॉडवी मार्ग पर लगे एक

---

4 भारतीय सेना का पहला ''विक्टोरिया क्रास'' फ़ारस की लड़ाई 20 वीं बम्बई स्थानीय पैदल सैना (120 वीं राजपुताना राइफलस) का नेतष्त्व करते हुए कप्तान जे.ए.वुड ने जीता। सूबेदार–मेजर मोहम्मद शरीफ व सिपाही भीर भट्ट (दोनों ही 20वीं बम्बई स्थानीय पैदल सेवा के नाम भी इस इनाम के लिए भेजे गए थे पर नहीं दिये गए क्योंकि अक्तूबर 1911 से पहले यह इनाम भारतीय सैनिकों को नहीं दिया जाता था।

शिलाखण्ड पर दर्ज है। पढ़िये, ''इस मार्ग का नामकरण मेजर सिडनी जेम्स बॉडबी के नाम पर रखा गया जो कि इलाही बख्श व सोननाक टननाक (सभी 19वीं बम्बई पैदल सेना के) 16 अप्रैल, 1880 को अफ़गानिस्तान में डबराई चौकी का बचाव करते हुए शहीद हुए। उन्हें सूचित किया गया था कि दुश्मन कभी भी हमला कर सकता है इसलिए चौकी खाली करने में भलाई है। उन तीनों ने चौकी छोड़ने से इंकार कर दिया व लगातार तीन घंटें तक बड़ी वीरता से दुश्मन के लगभग 300 सैनिकों को जबरदस्त टक्कर दी और उनमें से बहुतों को मौत के घाट उतारा। अंततः जब उनकी बारूद खत्म हो गई तो वे दौड़कर लड़ते हुए दुश्मनों के बीच घुस गए और लड़ते–लड़ते वीरगति को प्राप्त हुए''।[1]

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने महार समुदाय का सन 1818 से पहले पेशवाओं के राज्यकाल में सामाजिक स्तर के बारे में वर्णन करते हुए कहा, ''पेशवाओं के राज्य में मराठा गाँवों में जब कोई सवर्ण हिन्दू आम रास्ते जा रहा हो तो, किसी अछूत को उस रास्ते से आना जाना वर्जित था कि कहीं अछूत अपनी छाया से सवर्ण हिन्दू को अस्वच्छ न कर दे। अछूत को अपनी कलाई या अपने गले में काला धागा पहनना होता था ताकि अछूत की पहचान हो सके और सवर्ण हिन्दू गलती से भी अछूत को छू कर अस्वच्छ न हो।'' पेशवाओं की राजधानी पूना में अछूत को अपनी कमर में पीछे एक झाड़ू बांधकर जमीन पर लटका कर चलना होता था ताकि वह पीछे दूषित की हुई जमीन पर से धूल हटा कर साफ करता जाए जिससे कि पीछे आने वाला सवर्ण हिन्दू दूषित होने से बच सके। पूना में अछूत को अपनी गर्दन से एक मिट्टी का बर्तन (हंडिया) रस्सी बांध कर लटकाना होता था जिसमें वह अछूत थूकता था ताकि कोई सवर्ण हिन्दू अनजाने में भी जमीन पर पड़े थूक पर पैर डालकर दूषित न हो।''[2]

● ● ●

---

1. सदैव सबसे आगे – महार रैजिमैंट का इतिहास, लेखक वी. लोंगर पृष्ठ 12–15

[2] लेख एवं भाषण खंड 1, पृष्ठ 39

2

किसी व्यक्ति का मूल्य स्वतः सिद्ध और स्वस्पष्ट होता है

''18 जनवरी, 1928 को नासिक के नजदीक त्रयम्बक (जिसको हिन्दू तीर्थ स्थान मानते हैं) में एक महान संत चोखा मेला के नाम से मंदिर बनाने के प्रस्ताव पर चर्चा के लिए दलित समाज ने एक सभा आयोजित की। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को सभा की अध्यक्षता करने को विषेषतया आंमत्रित किया गया था। सर्वश्री बी. के गायकवाड़, भालेराव, पंजाजी, नवसाजी जाधव आदि ने सभा को संबोधित किया। इन के साथ–साथ नासिक से श्री दातार शास्त्री, ''स्वराज्य'' के संपादक श्री मराठे व श्री वाडेकर और जलगाँव से श्री थोरात व श्री चौधरी ने जन समूह को संबोधित किया'' ।[1]

पूर्ण चर्चा के बाद इस सभा में निर्णय लिया गया कि एक महान संत का सच्चा स्मारक छुआछूत के धब्बे को पूर्ण उत्साह से समाज से मिटाना, एक मंदिर के निर्माण से कहीं बढ़कर है। वास्तविकता यह थी कि एक तो डॉ. अम्बेडकर अपने अर्न्तमन विचार से सवर्ण व अछूतों के लिऐ अलग–अलग मंदिरों के विरोध में थे दूसरे भवन निर्माण का भारी व्यय एक वित्तीय बोझ था और तीसरे डॉ. अम्बेडकर एक मूर्ति पूजक न होकर वस्तु की उपयोगिता में कहीं अधिक आस्था रखते थे।

डॉ. अम्बेडकर के विचार में, सन् 1300 से 1600 के काल में महाराष्ट्र के भागवत धर्म के प्रचारक रहे संत कवियों ने कभी भी खुल कर जाति प्रथा के विरुद्ध प्रचार नहीं किया। जाति प्रथा सामाजिक असमानता पर आधारित है व सामाजिक अन्याय को प्रोत्साहन देती है, क्योंकि जाति प्रथा एक जाति पर दूसरी जाति के अधिपत्य पर आधारित है। इन संत कवियों के प्रयास एक ब्राह्मण व एक शूद्र को समानता के दर्जे पर लाने के नहीं रहे बल्कि एक ब्राह्मण को एक हरि उपासक शूद्र में समानता लाने तक सीमित रहे। इस प्रयास में सन्त सफल हुए और ब्राह्मणों को उपासकों का वर्चस्व स्वीकारना पड़ा चाहे उपासक किसी भी जाति से रहा हो। सबसे अन्त में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अध्यक्षीय भाषण दिया। उन्होंने अपने भाषण में कहा कि संतों के प्रयास का समाज पर ''जाति प्रथा के सम्पूर्ण विनाश के मामले में कोई प्रभाव नहीं हुआ। समाज के लिए मनुष्य का मूल्य उसकी समाज के लिए

---

[1] ''बहिष्कृत भारत'', 3 फरवरी, 1928

सर्वविदित व सर्वसिद्ध उपयोगिता है जो प्रकट व प्रत्यक्ष होकर रहती है और यह कोई भक्ति का मुलम्मा नहीं है। संतों ने यह सच्चाई समझाने के लिए संघर्ष नहीं किया। इसके विपरीत उनके संघर्ष का दलित समाज पर बड़ा हानिकारक प्रभाव पड़ा। इससे ब्राह्मणों को एक कुतर्क मिल गया कि तुम भी चोखामेला की ऊंचाई को छू लो तो ब्राह्मण तुम्हारा भी आदर करेंगे। यह दलितों का मुंह बन्द करने में अचूक था। डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, क्योंकि हिन्दू धर्म के अलग–अलग पंथों के अनुयायी अपनी जातीय पूर्वाग्रहों से ग्रसित धारणाओं से ओत–प्रोत थे उन्होंने सामाजिक समानता, न्याय प्रियता, बन्धुत्व व मानव प्रेम से केवल मुंह ही नहीं मोड़े रखा, बल्कि झूठी मनगढंत उपलब्धियों को बढ़ा–चढ़ा कर बताया और भ्रम फैलाया।

जहां तक रामदास पंथ का प्रश्न है, डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि प्रारम्भ से ही उनके अनुयायी और उनके संस्थापक जातीय पूर्वाग्रहों से ग्रस्त व बदनाम थे व ब्राह्मणों की वरिष्ठता मानने जैसे विचारों से प्रभावित थे। रामदास के अनुसार स्वर्ग में व पृथ्वी पर भी एक पतित ब्राह्मण भी दूसरी जातियों के लोगों से श्रेष्ठ है, इतना ही नहीं ब्राह्मण को तो देवता भी नमन करते हैं।[2]

●●●

---

[2] कीर पृष्ठ सं. 109–110

3

हम एक योद्धा कुल से हैं

भारतीय बहिष्कृत समाज सेवक संघ के संरक्षण में रत्नागिरी जिला बहिष्कृत परिषद द्वारा आयोजित सभा का दूसरा अधिवेशन डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में शनिवार 13 अप्रैल, 1927 को 4:30 शाम चिपलून में हुआ। देवराव नायक ''समता'' के संपादक, एस.एन. शिवतरकर, डी.वी. प्रधान, एस.एस. गुप्ते, बी.आर. काडरेकर भी सम्मेलन में उपस्थित रहे। कोई आठ हजार पुरुष व स्त्रियां अधिवेशन में पहुंचे।[1]

अधिवेशन के समय तनाव की स्थिति थी। अधिवेशन हेतु पण्डाल लगाने की जगह पाने के लिए कठिन प्रयास करना पड़ा। सनातन पंथी हिन्दुओं के मन में भय था कि महाड़ कांड कहीं दोहराया न जाए और अगर सम्मेलन उनके कस्बे में हुआ तो अछूत हिन्दू उनके पानी को दूषित कर सकते हैं। इसलिए, उन्होंने बड़े ध्यान, सावधानी व सुरक्षा से सारे कुएं बन्द कर दिए थे मानों कुछ दुश्मन लोग उन पर हमला बोल रहे हों। डॉ. अम्बेडकर और उनके सहकर्मी चिपलून के डाक बंगले में दो दिन ठहरे थे।

प्रगतिशील विचारधारा के लोग जैसे विनायक राव बर्वे और बी.जी. खाटू दो स्थानीय नेताओं ने भी अधिवेशन में उपस्थिति दर्ज कराई। ओम स्वामी रागजी ने अधिवेशन में आये प्रतिनिधियों का अभिनंदन किया और सवर्ण हिन्दुओं को आशा जताई कि मौके की नजाकत को समझते हुए वे अपने दृष्टिकोण में खुलापन लाने की आवश्यकता को समझें।

अपने अध्यक्षीय भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''तुम्हें अपनी दासता का समापन स्वयं करना होगा, अपने आत्म सम्मान को बेचकर जीना कलंकित हो कर जीने के समान है। जीवित रहने के लिए आत्म सम्मान एक आवश्यक टानिक है। बिना आत्म सम्मान के मनुष्य शून्य मात्र है। आत्म सम्मान से जीने के लिए अपनी कठिनाइयों पर आप को काबू पाना होगा। कड़े परिश्रम व निरंतर संघर्ष से ही आपको शक्ति, आत्मविश्वास व मान्यता मिलेगी'' तब उन्होंने कोंकण में परिचालित भूमि व्यवस्था जिसे 'खोती' कहते थे, के बारे में चर्चा की। खोती व्यवस्था के अंतर्गत उनका

---

1. ''बहिकृष्त भारत'', 3 मई, 1929

खून चूसा जा रहा था और डॉ. अम्बेडकर ने उनको आश्वासन दिलाया कि वे पूरा प्रयास करेंगे और खोती व्यवस्था से उन्हें हमेशा के लिए मुक्ति दिलवाएंगे। उन्होंने इसके लिए कोई भी खतरा झेलने को तैयार हैं की घोषणा की। यदि मैं यहां आप की दरिद्रता व लज्जित जीवन के प्रति आपको जागरूक करता हूं तो मुझे जान से मारने की धमकी मिलेगी। मनुष्य का शरीर नश्वर है। हर एक को एक दिन तो मरना ही है, परन्तु हम यह प्रण करें कि अपना मनुष्य जीवन सुधारने व आत्म सम्मान जैसे उत्तम आदर्शों के लिए समर्पित कर देंगे। हम किसी के दास नहीं हैं। हम योद्धाओं के कुल से हैं। किसी शक्तिशाली व्यक्ति के लिए अपना आत्मसम्मान खोकर और बिना स्वदेश प्रेम के जीवन जीने से बड़ा कोई अपमान नहीं हो सकता''।

''तब डॉ. बाबा साहेब ने सुझाव दिया ''क्यों न हमारे लोग पलायन कर किसी अच्छे व दूरस्थ स्थान पर जाकर बस जाएं। यह सवर्ण हिन्दुओं व हिन्दू जागीरदारों व जमींदारों के अत्याचारों से बचने का एक उपाय हो सकता है।'' उन्होंने कहा कि वे सिंध व इंदौर राज्यों में कुछ कृषि भूमि लेने का प्रयास करेंगे। उन्होंने अपने पड़ोसी मुसलमानों का उदाहरण देते हुए बताया कि वे अफ्रीका देश जाकर बस गये थे और पैसा कमाकर व धनाढय बनकर कोंकण में वापिस आ गये। सम्भवतः पलायन व और कहीं जा बसने का विचार उनके मन में तब आया जब वे दूसरे पार्षदों के साथ सक्कर बांध का परीक्षण करने सिंध गए थे, जिसके अन्तर्गत हजारों एकड़ रेगिस्तान की भूमि को उपजाऊ कृषि क्षेत्र में विकसित करने की आशा थी इसी प्रकार इंदौर के महाराजा के साथ उनका नया अनुबंध हुआ था इसलिए उनमें शायद यह आशा जगी कि वे महाराजा से अछूतों के लिए कुछ भूमि लेने में सफल होंगे।

श्री विनायक बर्वे ने रात्रि भोज के लिए डॉ. अम्बेडकर को सप्रेम आमंत्रित किया था। वे इस भोज में इस मान्यता के साथ सम्मिलित हुए कि ''किसी को भी ऐसे अंतर्जातीय भोज में भागीदार बनना चाहिए, इसलिए नहीं कि अगर कोई ब्राह्मणों के संग भोजन कर लेगा तो उसके लिए स्वर्ग के द्वार खुल जाएंगे बल्कि ऐसा करना इसलिए उत्तम है, क्योंकि ऐसे भोजों से सामाजिक मेल जोल बनता है, आपसी संबंधों में समरसता आती है और समानता के सिद्धान्त को बढ़ावा मिलता है।''[2]

● ● ●

[2] कीर, पृष्ठ सं. 127 – 128

4

विधायिकाओं के लिए उपयुक्त प्रतिनिधि चुनें

रत्नागिरी जिला किसान सम्मेलन 14 अप्रैल, 1929 को चिपलून में हुआ। बम्बई से अतिथियों में देवराव नायक, डी.वी. प्रधान, बी.आर. काडरेकर, शंकरराव गुप्ते, शंकर वडवाल्कर, शिवतारकर, बाबा आदरेकर, गायकवाड़, मोरे इत्यादि थे व चिपलून के गणमान्य लोग सर्वश्री विनायक राव बर्वे, साठे, राजाध्यक्ष, खानसाहिब देसाई, बेंडके, शिवराम जाधव, उपस्थित थे। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अधिवेशन की अध्यक्षता की।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने भाषण देते हुए लोगों से कहा–

''उन्हें अब विश्वास हो चला है कि उनका जीवन दलितों के कल्याण के लिए ही है।'' उन्होंने कहा कि वे एक निर्धन परिवार से हैं और वे गरीबों के बीच बम्बई के सुधार न्यास के द्वारा बनाई गई खोली में रहे है। डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, ''मैं आपके कष्टों को जानता हूं। यह खोती व्यवस्था आपका खून चूस रही है। यह व्यवस्था जिसमें कृषक को सीमित अवधि के लिये जमीन पट्टे का अधिकार मिलता है समाप्त किया जाना चाहिए। इसके समाप्त होने से आप को शांति मिलेगी व प्रगति होगी। अपनी निर्णायक मंजिल तक पहुंचने के लिए आपको आन्दोलन जारी रखना होगा। आने वाले चार या पांच वर्षों में हम पूर्णतया अपने भाग्य व भविष्य निर्माण के निर्णय लेने में सक्षम होंगे। उस समय आप सबको विशेषतया यह ध्यान देना होगा कि अपने प्रतिनिधियों का चुनाव पूरी समझ से करें और विधायिकाओं में ऐसे प्रतिनिधियों को भेजें जो पूर्ण भक्ति व निष्ठा से खोती व्यवस्था को समाप्त करने में संघर्ष के लिए समर्पित हों।''[2]

● ● ●

---

[1] (''बहिष्कृत, भारत'' 3 मई, 1929)

[2] कीर, पृष्ठ 128–129

5

एक देश, एक संविधान और एक भाग्य की भावना से जुड़े लोग स्वाधीन होने का जोखिम उठाते हैं

साइमन आयोग (कमीशन) की रपट पर प्रतिक्रिया व्यक्त करने के लिए, योजनाबद्ध तरीके से अछूतों के भविष्य के लिए राजनीतिक अधिकारों के बारे में जांच करना व निर्णय लेना अति आवश्यक था। इसके अतिरिक्त लन्दन में होने वाली गोलमेज़ अधिवेशन के लिए अछूतों के प्रतिनिधियों के नामांकन भी करने थे जिसमें भविष्य के भारतीय संविधान की रूप रेखा पर चर्चा होनी थी।

भारत के भविष्य का निर्णय लेते समय यह अति आवश्यक था कि सात करोड़ अछूतों के राजनीतिक अधिकारों के संरक्षण के लिए उचित प्रतिनिधत्व हो। इसके लिए एक राष्ट्रीय स्तर का सम्मेलन बुलाने की आवश्यकता थी और यह सम्मेलन नागपुर में हुआ। इस ऐतिहासिक घटना का श्रेय नागपुरवासियों को जाता है।

स्थानीय अछूत नेतागण विशेषकर दशरथ लक्ष्मण पाटिल और लक्ष्मण राव ओगले विधायक इस विषय पर डॉ. बी.आर. अम्बेडकर से चर्चा के लिए बम्बई गये। उन दोनों ने अपनी इच्छा जताई कि वे डॉ. अम्बेडकर की अध्यक्षता में सम्पूर्ण भारत दलित वर्ग महासम्मेलन नागपुर में रखना चाहते हैं। डॉ. अम्बेडकर ने इस पर स्वीकृति जताई व सम्मेलन के लिए 8 और 9 अगस्त, 1930 के बारे में सहमति हुई। स्वागत समिति का, श्री टी.सी.साखरे, सभापति, श्री दशरथ लक्ष्मण पाटिल, बेला उप–सभापति, श्री विश्राम जी सवायथूल कोषाध्यक्ष, श्री एल.के. ओगले, विधायक अमरावती, श्री हरदास एल.एन., काम्पटी, श्री पी.के. भाटकर, अमरावती; श्री श्यामराव जी राहटे, वड़गांव; श्री एच.टी.बेहाड़े, मातंग समुदाय के नेता नागपुर का सचिवों के पदों के साथ गठन हुआ।

सम्मेलन सचिव श्री हरदास एल.एन. ने श्री शिवराम जानबा काम्बले पूना से निवेदन किया कि प्रस्तावित अखिल भारतीय सम्मेलन नागपुर में बुलाये गये विशिष्ट अतिथियों के नाम व सभापति के नाम सूचित करें।

यह पत्र इस प्रकार थाः

अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस

कार्यालयः विश्राम हाल,
लकड़गंज सर्कल 15/10
नागपुर शहर
1 फरवरी, 1930

स्वागत समिति सभापति : के.जी. नन्दागावली
उप–सभापति : डी.एल. पाटिल
कोषाध्यक्ष :वी. एस. सवायथूल
सचिव : एल.के. ओगले, विधायक, एल.एन. हरदास
पी.के. भाटकर, एच.डी. बेहड़े

सेवा में,
श्री एस. जे. काम्बले*
पूना

प्रिय महोदय,

आपको विदित ही है कि भविष्य के राजनीतिक भारतीय संविधान के विषय पर प्रस्तावित लन्दन में गोल मेज अधिवेशन आगामी शरद् ऋतु में होना तय है। मुझे आपकी सहमति का पूरा भरोसा है कि दलित वर्गों को इस विकट क्षण में अपना दावा पेश करना चाहिए और उन सब शक्तियों को जो भविष्य के भारतीय संविधान को प्रभावित कर सकने व निर्णय लेने में सक्षम हैं को यह बातें स्पष्ट कर दें कि अछूतों को कौन से नागरिक अधिकार देने से उनका संरक्षण व बचाव हो सकता है। इस प्रकार के महत्वपूर्ण विषय पर चर्चा के लिए हमारे लोगों का ध्यानाकर्षण करने की तुरंत आवश्यकता है। देश के सभी प्रदेशों से लोगों का प्रतिनिधित्व जुटाने के लिए, जिससे सबके विचारों व भावनाओं को सुना व समझा जा सके, हमने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, एम.ए., पी.एच.डी., डी.एस.सी., बार–अैट–ला, विधायक बम्बई की सहमति से अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस का सम्मेलन किसी भी समय ''साइमन आयोग'' की रपट छपने के तुरन्त बाद आयोजित करना निश्चित किया है और आपकी स्वीकृति की प्रत्याशा में स्वागत समिति गठित की है।

---

* शिवराम जानबा काम्बलेः– पूना के एक अतुलनीय विशिष्टता प्राप्त अछूतों के नेता जिन्होंने भारतीय सत्र का अछूतों का पहला अधिवेशन आयोजित किया। अम्बेडकर काल से पहले युग के नेता, ''सोमवंशीय मित्र'' पूना के संपादक रहे व इन्होंने ब्रिटिश सरकार को 1910 में अछूतों में जागरूकता व उनके उद्धार के लिए चेताने हेतु ज्ञापन भेजा।

कृपा करके अग्रिम 15 फरवरी से पहले सूचित करें व अपने विचारों से अवगत करायें कि यह कांग्रेस आयोजन कहां तक तर्कसंगत है और इसकी अध्यक्षता के लिए भी नाम की प्रस्तावना कर हमें अनुग्रहीत करें।

धन्यवाद,

आप के शुभचिंतक
हरदास एल.एन.', सचिव, ए.आई.डी.सी.सी.सी., नागपुर[1]

श्री शिवराम जानबा काम्बले का उत्तरः

कामटीपुरा, 5वीं गली,

कैम्प पूना,

फरवरी, 1930

सेवा में,

सचिव,

अखिल भारतीय, दलित वर्ग कांग्रेस,

नागपुर,

महोदय,

मुझे आपका दिनांक 1 फरवरी 1930 का मुद्रित पत्र मिला। मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि जल्द ही आप अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस का सम्मेलन नागपुर में आयोजित कर रहे हैं।

प्रस्तावित कांग्रेस की अध्यक्षता के लिए मैं डॉ. अम्बेडकर के नाम की प्रस्तावना करता हूं। तथा वे ही दलित वर्ग के प्रतिनिधि की भूमिका निभाने लन्दन में होने वाली गोलमेज अधिवेशन में भेजे जाएं।

मेरी हार्दिक इच्छा है कि हमारे बहुत वर्षों से पददलित रहे 6 करोड़ बन्धुओं के उत्थान करने सम्बन्धी प्रयास सार्थक हों।

भवदीय शुभचिंतक,
शिवराम जानबा काम्बले[2]

हरदास एल.एन.– सचिव, अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस, नागपुर, डा. अम्बेडकर के प्रशंसक व समर्पित अनुयायी, काम्पटी (विदर्भ से)। बाबु हरदास के नाम से ख्याति प्राप्त

1. सुर्वडे, खंड 1, पृ. 83–84

2. सुर्वडे, पृ. 84

श्री हरदास एल.एन. अधिवेशन सचिव ने इस अधिवेशन से संबंधित एक परिपत्र जारी किया। यह परिपत्र नीचे दिया गया है।

अखिल भारतीय, दलित वर्ग कॉँग्रेस,

कार्यालय

विश्राम हाल, नागपुर शहर

तिथि 20 जून, 1930

परिपत्र सं. 5

संदर्भ सं.: 5 ....

प्रिय महोदय,

समाचार पत्रों के माध्यम से ज्ञात हुआ कि साइमन कमीशन की रिपोर्ट 24 जून को प्रकाशित हो जाएगी। अतः हमें अधिवेशन की तिथि निश्चित करने का आधार मिला और प्रांतीय स्वागत समिति ने 24.5.1930 की अपनी बैठक में अधिवेशन के लिए 12 व 13 जुलाई 1930 का दिन, यह ध्यान में रखते हुए निर्धारित किया कि इससे हमारे नेताओं को रिपोर्ट को ध्यान से पढ़ने व कुछ निश्चित धारणा बनाने के लिए पर्याप्त समय मिल जाएगा।

परन्तु डॉ. अम्बेडकर ने इन तिथियों पर हमसे पुनर्विचार करने का अनुरोध किया है। उनका कथन है कि साइमन रिपोर्ट का पहला भाग 10 जून 1930 को प्रकाशित हुआ है। परन्तु अभी उसकी कोई प्रति नहीं मिल पा रही है व 22 जून तक मिलने की सम्भावना नहीं है। दूसरा भाग संभवतः 24 जून को उपलब्ध हो सकेगा और अगर पुस्तक की प्रतियां मिलने में ऐसे ही देरी हुई तो बिना रिपोर्ट पाये या बिना रिपोर्ट पढ़े ही अधिवेशन की कार्यवाही का भय बना रहेगा व ऐसी परिस्थिति में अधिवेशन निरर्थक हो जाएगा। इस बात को ध्यान में रखते हुए हमें अधिवेशन की तिथियां अवश्य बदलनी चाहिएं।

अतः हमारी स्वागत समिति ने 20 जून की सभा में अखिल भारतीय अधिवेशन के लिए 8 और 9 अगस्त 1930 तिथि का चयन किया है। विषय समिति की सभा के लिए भी हमें प्रावधान रखना चाहिए और स्वागत समिति के लिए डॉ. अम्बेडकर ने सुझाया कि सभी नेताओं को अधिवेशन प्रारम्भ से एक दिन पहले ही 7 अगस्त को नागपुर में उपलब्ध होने का निमंत्रण दिया जाए। निस्संदेह हमारे नेताओं को इन दिनों घोषित अवकाश होने के कारण अधिवेशन में उपस्थित होना सुविधाजनक होगा।

प्रान्तीय स्वागत समिति से प्राप्त सुझावों के आधार पर सामाजिक, शैक्षणिक, युवा वर्ग व और महिलाओं की सभाओं का आयोजन भी इस अधिवेशन के साथ ही करने का निर्णय भी लिया है और इस प्रकरण में राव साहेब राम चरण, बी.ए.एल.एल.बी. अधिवक्ता, एम.एल.सी., यू.सी., मुनिस्वामी पिल्लई एफ.एम.यू.एम.टी. सी. (मद्रास) उट्टकमंड, माननीय एम.बी. मलिक, एम.ए.बी.एल. अधिवक्ता, विधायक (बंगाल) कलकत्ता से और श्रीमती गुणबाई गाड़कर पूना से क्रमानुसार ऊपर प्रस्तुत आयोजित सभाओं का सभापतित्व करने हेतु आमंत्रित किया गया है और मुझे यह सूचित करते हुए हर्ष हो रहा है कि उन्होंने यह प्रस्ताव स्वीकार कर लिया है। हर सभा के लिए अलग–अलग स्वागत समितियां गठित कर ली गई हैं और इन सभाओं के लिए 10 और 11 अगस्त की तिथियां निर्धारित की गई हैं।

संपूर्ण भारत की दलित वर्ग संस्थाओं से सच्चे मन से अनुरोध है कि वे अपने प्रतिनिधियों को इस अधिवेशन और सभाओं को सफल बनाने हेतु भेजकर कृतार्थ करें। कृपया प्रतिनिधियों के नाम व प्रस्ताव सामग्री सचिव के नाम उपर दर्शाए पते पर भेजें।

आपका शुभचिंतक,
हरदास एल.एन.,
सचिव

नागपुर शहर,[1]

20 जून, 1930

समिति ने इस अवसर पर पृथक सभाओं की घोषणा इस प्रकार की थी–

अखिल भारतीय दलित वर्ग अधिवेशन सुबह 8 बजे से दोपहर पश्चात 2 बजे तक शुक्रवार व शनिवार 8 अगस्त 1930 व 9 अगस्त 1930 को, संतरा बाजार भवन में नागपुर शहर (मध्य प्रांत) में आयोजित होगा।

अध्यक्षताः डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

एम.ए., पी.एच.डी., डी.एस.सी., बार एट लॉ, विधायक बम्बई, स्वागत समिति की बैठक 7.8.1930 को होगा।

प्रस्तावित अधिवेशन निम्न महत्वपूर्ण बिन्दुओं पर चर्चा हेतु आमंत्रित किया गया :

(1) भारत में चल रहे राजनितिक आन्दोलन के प्रति दलित वर्ग का पक्ष सुनिश्चित करने।

[1] सुर्वडे, पृ. 99–100

(2) साइमन आयोग की सिफ़ारिशों के प्रति दलित वर्ग का समुचित दृष्टिकोण सुनिश्चित करने।

(3) समय—समय पर पूरे देश में उठने वाली दलित वर्ग की समस्याओं और वेदनाओं को उठाने के लिए अखिल भारतीय मंच का गठन करने।

स्वागत समिति

प्रधान : टी.सी. सखा, नागपुर, उप प्रधानः डी.एल. पाटिल, बेला, कोषाध्यक्षः बी.एस. सवायल, नागपुर सचिव— एल.के. ओगले, विधायक अमरावती, हरदास एल.एन. काम्पटी, पी.के. भाटकर, अमरावती, एस.जी. रहाटे, वड़गांव, एच.डी. बेहड़े, नागपुर।

सामाजिक सभा

रविवार 10 अगस्त 1930 को प्रातः 8.00 बजे।

अध्यक्ष : राव साहिब रामचरण बी.ए.एल.एल.बी. अधिवक्ता,

विधायक (संयुक्त प्रांत) लखनऊ

स्वागत समिति

प्रधान : किसन फागु बनसोड़ पाटिल, नागपुर

सचिव : डी.एम. नगरारे, एस. जी. जाधव, एम.टी. गोड़घटे नागपुर, एन.यू. आठे, रायपुर

शैक्षणिक सभा

रविवार 10 अगस्त 1930 को प्रातः मध्याह्न 2 बजे।

अध्यक्ष : राव साहिब वी.आई. मुनिस्वामी पिल्लई

एफ.एम.यू. विधायक (मद्रास) उट्टकमंड से

स्वागत समिति

प्रधानः जे.जी. सोनोने, अमरावती

सचिवः सी.एम. सोमकुवर, नागपुर, वी.डी. मकेसर, यवतमाल,

आर.एस. खंडारे, अकोला

युवा सभा

सोमवार 11 अगस्त 1930 को प्रातः 8:00 बजे

अध्यक्ष : माननीय एम. बी. मलिक, एम.ए.बी.एल,

अधिवक्ता, विधायक (बंगाल), कलकत्ता

स्वागत समिति

प्रधान : आर. एम. बोरकर, नागपुर

सचिव : डी. बी. बरसे नागपुर, आर. एस. मांडवघरे, अकोला, जी.जी. जी. आर.इनी अन्जनगांव बाड़ी।

महिला सभा

सोमवार 11 अगस्त 1930 को मध्याह्न 2 बजे

अध्यक्षा : सौ. गुण बाई गाड़कर, पूना

स्वागत समिति

अध्यक्षा : सौ. गुण बाई गाड़कर, पूना

सचिव : तुलसा बाई बंसोड़ पाटिल, जयबाई चौधरी, नागपुर काशी बाई मांडवधरे अकोला

कृपया ध्यान दें : कार्यक्रम में कोई भी परिवर्तन उसी समय प्रकाशित कर सूचित किया जाएगा।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के ठहरने की व्यवस्था राज्यपाल निवास के नजदीक अब्दुल भाई खाकर के बंगले पर की गई थी, परन्तु डॉ. बी. बार. अम्बेडकर ने वहां रहने से इन्कार कर दिया और उन्होंने बाकी नेताओं के संग ठहरने को वरीयता दी।

अधिवेशन का स्थल वैंक्टेश नाट्यषाला में था (यह नाट्यशाला बाद में श्याम सिनेमा के नाम से जानी गई)। कपास मण्डी के पास अतिथियों के ठहरने के लिए एक बड़ा पण्डाल तैयार किया गया था। इस अधिवेशन के संग सामाजिक, शैक्षणिक, युवा तथा मानव सभाओं का भी आयोजन किया गया था। श्री पी.एन. राजभोज ने सामाजिक सभा की अध्यक्षता की जबकि श्री दशरथ पाटिल इस सभा की स्वागत

समिति के प्रधान रहे। महिला सभा की स्वागत सभा की अध्यक्षता सौ. शेवंताबाई ओगले ने की जबकि सचिव का दायित्व सौ. तुलसाबाई बन्सोड़, नागपुर, सौ. जयबाई चौधरी नागपुर व सौ. काशीबाई मांडवधरे, अकोला ने संभाला। युवा सम्मेलन की अध्यक्षता अधिवक्ता शिवदयाल सिंह, लखनऊ ने की तथा स्वागत समिति के प्रधान श्री राघवेन्द्र राव बोरकर रहे।

इस काँग्रेस का महत्वः

''अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस'' अधिवेशन ने अछूतों के राजनैतिक उत्थान के लिए एक ऐतिहासिक भूमिका निभाई। प्रथम तो यह अधिवेशन अपने आप में एक पहल भी थी जिसने पूरे अछूत वर्ग को एक झंडे के नीचे संगठित किया। दूसरे यह पहला अवसर था कि अछूत नेताओं ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के नेतृत्व को स्वीकार किया और सबने मिलकर संपूर्ण भारत के स्तर पर अपनी राजनीतिक मांगें रखीं। तीसरे, सब अछूतों ने एकमत होकर लन्दन में गोलमेज अधिवेशन के लिए डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को अपना प्रतिनिधि चुना। चौथे, अछूतों की एक अखिल भारतीय संस्था बन गई तथा अंत में अछूतों के लिए एक योजनाबद्ध राजनीतिक जीवन की भी नींव डाली गई।

संक्षेप में, बहिष्कृत भारतीयों की स्वतंत्रता संग्राम का पहला पृष्ठ अछूतों के इस कांग्रेस में लिखा गया। उसके उक्त अधिवेशन में कुल तेरह संकल्प एक ध्वनि से पारित हुए।

दलित वर्ग कांग्रेस में पारित संकल्पः

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर एम.ए. पी.एच.डी. डी.एस.सी., बार एट ला, विधायक मुम्बई की अध्यक्षता में हुए अखिल भारतीय दलित वर्ग़ कांग्रेस के 8 अगस्त 1930 के अधिवेशन के पहले सत्र में निम्न दिये संकल्प पारित हुए।

1. यह सभा बिना संकोच यह घोषणा करती है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित स्वतन्त्रता का विचार भारत के हितों के लिए हानिकारक व विनाशकारी होगी। अतः यह सभा इस प्रस्ताव से दूर रहेगी। इस सभा के विचार में भारत को ब्रिटिश प्रभुत्व के अंतर्गत स्वशासित घोषित करना भारत की वर्तमान स्थिति के अनुरूप होगा।

तत्काल डोमिनियन स्थिति :

2. इस अधिवेशन को केवल वे विषय, जिनका कार्यकारी दायित्व हस्तान्तरण प्रशासनिक कुशलता की वजह से तुरन्त नहीं किया जा सकता को छोड़कर बाकी सभी विषयों के नियंत्रण का अंतरण करने में इस काँग्रेस को तत्काल डोमिनियन उद्देश्य पूर्ति के लिए कोई आपत्ति नहीं है। शर्त यह है कि दलित वर्ग की सुरक्षा व संरक्षा के लिए भारतीय संविधान में निम्न प्रावधान कर दिए जाएंः—

1. केन्द्रीय व प्रांतीय स्तर पर पूरे देश से दलित वर्ग के सांसदों व विधायकों का पर्याप्त संख्या में प्रतिनिधित्व।

2. देश की लोक सेवाओं में पर्याप्त अनुपात में आरक्षण।

3. ऐसे प्रकरण जिनमें शिक्षा सम्बन्धी उपेक्षित स्थानीय स्वशासित सरकार व दलित वर्ग के अधिकार व हितों से टकराव हो, राज्य के सचिव को पुनर्विचार करने के बारे में अपील का अधिकार। इस व्यवस्था को सुचारु बनाने के लिए आवश्यक हो कि राज्य सचिव को पुनर्विचार कर बजट में प्रावधान या ऐसी व्यवस्था जो उसे उचित लगे प्रमाणित करने की क्षमता प्राप्त हो और उनका दिया प्रमाण पत्र भारतीय राज्यों व केन्द्रीय कार्यपालिका के लिए बाध्य हो।

अमानवीय व्यवहारः

4. क्योंकि रूढ़िवादी लोग दलित वर्ग के लोगों के प्रति उनके अमानवीय व्यवहार को बदलने व दलितों का विष्वास जीतने में असफल रहे हैं और भविष्य के भारतीय संविधान में दलित वर्ग के बचाव में प्रावधान लाने के लिए स्वीकृति व रुचि नहीं दिखाई है, अतः दलित वर्ग का यह मानना है कि कोई भी राजनीतिक भारतीय संविधान देश की सामाजिक दशा को ध्यान में रखे बगैर तथा बिना आपसी सहमति के आवश्यक लचीलापन लाने में सफल नहीं हो सकता और नागरिक अवज्ञा आन्दोलन किसी भी प्रकार की शान्ति वार्ता के वातावरण के प्रतिकूल व शान्ति वार्ता में अवरोधक है। इसलिए, यह अधिवेशन नागरिक अवज्ञा आन्दोलन के मार्ग को स्वीकृति प्रदान नहीं कर सकता और दलित वर्ग को इस आन्दोलन में भाग न लेने का परामर्श देता है।

गोलमेज की स्वीकृतिः

5. यह अधिवेशन गोलमेज अधिवेशन को वर्तमान संवैधानिक समस्याओं को सुलझाने का सर्वोत्तम उपाय मानता है तथा दलित वर्ग को इसमें भाग लेने का परामर्श देता है। यह अधिवेशन इस अवसर का लाभ लेते हुए सरकार से यह अनुरोध करता है कि सभी दल (जिसमें दलित वर्ग भी आते हैं) से जनसंख्या अनुपात के आधार पर प्रतिनिधि आमंत्रित कर गोलमेज अधिवेशन को सफल बनावें।

6. यह अधिवेशन मनोनीत सिद्धान्त द्वारा दलित वर्ग प्रतिनिधियों के देश की विधायिकाओं के लिए चयन का विरोध करता है। हम साइमन आयोग सिफारिश के इस आशय को कि दलित वर्ग के प्रतिनिधियों का चयन (गैर दलित) दूसरे समुदायों के लोगों द्वारा मनोनीत व राज्यपाल द्वारा प्रमाणित किए जाने को सिरे से नकारते हैं और हम यह मांग करते हैं कि दलित प्रतिनिधित्व हमारे अपने समुदाय के सदस्यों द्वारा चुनाव के माध्यम से निर्धारित होना चाहिए।

संयुक्त निर्वाचक मंडल की मांगः

7. यूं तो हमारा विश्वास पृथक निर्वाचक मंडल की प्रभाविकता में है फिर भी यह कांग्रेस संयुक्त निर्वाचक मंडल के सिद्धान्त को मानने को तैयार है। उसमें दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व के लिए आरक्षित स्थान के साथ वयस्क मताधिकार प्रणाली का पालन हो।

8. यह अधिवेशन खेद व्यक्त करता है कि साइमन कमीशन ने दलित वर्ग की समस्याओं तथा मांगों को कम आंका है और दूसरे अल्पसंख्यक समुदायों के प्रति झुकाव दिखाया है जबकि दलित वर्ग द्वारा झेली गई सामाजिक विषमतायें कहीं ज्यादा हैं और अल्पसख्यकों को कोई सामाजिक विषमता नहीं झेलनी पड़ती। यह अधिवेशन सब अल्पसंख्यकों के हित के लिए सामाजिक समानता के सिद्धान्त का आवाहन करते हुए दलित वर्ग के लिए जनसंख्या के अनुपात के साथ–साथ सामाजिक विषमताओं को ध्यान में रखते हुए उचित संख्या व मात्रा में प्रतिनिधत्व दिये जाने की मांग करता है।

अप्रत्यक्ष प्रतिनिधित्वः

9. यह अधिवेशन विधायिकाओं व राज्य परिषद में दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व के लिए अप्रत्यक्ष चुनाव प्रणाली को स्वीकार करता है। परन्तु यह मांग करता

है कि दलित वर्ग के पर्याप्त प्रतिनिधित्व के अधिकार को मान्यता प्रदान की जाये।

10. यह अधिवेशन खेद व्यक्त करता है कि साइमन आयोग ने राज्य सभाओं में दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व के लिए कोई प्रावधान नहीं रखा और यह मांग करता है कि दलित वर्ग की राज्य सभाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व के अधिकार को मान्यता प्रदान की जाये।

11. साइमन आयोग द्वारा निर्मित विधायिका पुनर्निर्माण की रूपरेखा के लाभ को समझते हुए यह अधिवेशन यह राय व्यक्त करता है कि यह रूपरेखा विधायिकाओं से ज्यादा राज्यसभा गठन के लिए उपयुक्त है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए तथा राज्यसभा के गठन को ज्यादा लोकतान्त्रिक बनाने के दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए इस अधिवेशन का मत है कि साइमन आयोग द्वारा विधायिकाओं के लिए सुझाई व्यवस्था को राज्य सभा चयन के लिए लागू किया जाये तथा विधायिकाओं का गठन सीधे चुनाव की व्यवस्था के आधार पर हो।

साइमन रिपोर्ट की भर्त्सना:

12. यह अधिवेशन भारत में सेना के बारे में साइमन आयोग द्वारा दी गई सिफारिशों का अनुमोदन नहीं करता। हमारा यह मत है कि सेना का मामला एक गम्भीर संरक्षित मामला है इसे भारत सरकार के कार्यकारी क्षेत्र से बाहर नहीं किया जाना चाहिए।

13. यह अधिवेशन दलित वर्ग के हितों के लिए एक अखिल भारत केन्द्रीय संगठन के गठन की आवश्यकता में विश्वास व्यक्त करता है। इसलिए हम एक समिति नियुक्त करते हैं जो : –

i) ऐसी केन्द्रीय संस्था के संविधान की रूपरेखा तैयार कर इस अधिवेशन के अगले सत्र में पेश करेगी।

ii) दलित वर्ग से सम्बन्धित सभी विषयों तथा वर्तमान भारत के राजनीतिक वातावरण में उठने वाले विषयों पर इस अधिवेशन की यह ''कार्यकारिणी समिति'' कार्य करेगी।[1]

---

1 ''बाम्बे क्रॉनिकल, 18 अगस्त, 1930

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का अध्यक्षीय भाषण, अखिल भारतीय दलित वर्ग अधिवेशन नागपुर, 8 अगस्त, 1930 में उन्होने कहा, :–

बहिनो और भाइयो,

आपने इस महत्वपूर्ण चर्चा में मुझे आमन्त्रित कर और सभापतित्व सौंप कर मेरा मान बढ़ाया; के लिए मैं आपका कृतज्ञ हूं। यह एक अति असामान्य कठिनाई वाला दायित्व जिससे बचकर भागना कोई विवकेपूर्ण कार्य नही होता, जिस प्रेम भाव से आपने मुझे सौंपा, मैं उसे अपना कर्तव्य मानता हूं। अतः मेरी यह मान्यता है कि इस कठिन घड़ी में हर सामाजिक जन का अपनी सामर्थ्य के अनुरूप बिना किसी हिचक के अपने साथी देश प्रेमियों के सार्वजनिक कार्य के लिए अथक परिश्रम में अपनी शक्ति लगा देने का कर्तव्य बनता है। मैंने भी यह दायित्व स्वीकार कर लिया है। अतः मेरा विश्वास है कि आप सबका समर्थन व सहायता जो मुझे प्राप्त है वह कभी कम नहीं होगा तथा हमारे विश्वसनीय नेताओं की सूझबूझ व गहरे अनुभव का लाभ आप सबको और मुझे मिलता रहेगा। इससे मुझे संबल व प्रोत्साहन मिला है।

I. भारत में स्वशासन की समस्या

2. ''क्या यह संभव है कि भारत की जनता स्वयं में'' ''एक संगठित स्वशासित समुदाय'' बन जाये? यह प्रश्न आज अस्पष्ट सा उभर रहा है। हम आज यहां यह परिभाषित करने के लिए इकट्ठे हुए हैं कि दलित वर्ग इस प्रश्न के बारे क्या धारणा रखता है, क्योंकि यह प्रश्न आज केवल भारतीयों व ब्रिटिश राज्य के मानस में ही द्वन्द्व नहीं बना हुआ है बल्कि पूरे विश्व में पूछा जा रहा है। इस प्रश्न का हमारे द्वारा उत्तर इस देश के भविष्य के लिए बहुत महत्वपूर्ण होगा। देश के भविष्य का फैसला जल्दी होता है या देरी से या देश का भविष्य बनता है या बिगड़ता है, यह क्षमता हमारे द्वारा लिए गए निर्णय में होगी। इसलिए मैं यह कहने का साहस जुटा रहा हूं कि इस प्रश्न को हल्के से न आंकें। गहन विचार के साथ इसके पक्ष व विपक्ष पर चिन्तन करें। इस डर को मन से निकाल फेंके कि हमारा निर्णय दूसरों के निर्णय से भिन्न होगा, परन्तु इस पर अवश्य ध्यान दें कि हमारा निर्णय स्वतंत्र विचार, निष्ठा तथा विश्वास पर आधारित हो।

3. आपको विदित है कि इस प्रश्न के दो पहलू हैं। यह निष्कर्ष निकाला गया है कि यहां भारत के लोग अलग–अलग जातियों में बटे हैं, अलग अलग धर्मो का पालन करते हैं और भिन्न–भिन्न धार्मिक संस्कार करते हैं, व अलग भाषाएँ बोलते हैं और बेमेल अंधविश्वासी धारणाओं में द्वेषपूर्ण सामाजिक प्रथाओं,

परस्पर विरोधी धार्मिक आस्थाओं तथा स्वार्थों में विभाजित हैं। प्रश्न यह पूछा जाता है कि इतनी विषमताओं से घिरे लोग एक स्वशासित समुदाय बनकर दायित्व का वहन कैसे कर सकते हैं? यह कटु सत्य जिन्हें कोई भी बुद्धिजीवी अनदेखा नहीं कर सकता, क्योंकि स्वशासन से इन तथ्यों का सीधा सम्बन्ध है। परन्तु इन कठोर तथ्यों को मानते हुए क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता है? महानुभावों इससे पहले कि आप अपनी राय व्यक्त करें मैं कुछ सामान्य कठोर तथ्यों पर आपका ध्यान आकर्षित करना चाहूंगा। जो स्थिति कुछ देशों जैसे, लेटविया, रूमानिया, लिथूआनिया, यूगोस्लाविया, इस्टोनिया व चैकोस्लावाकिया में आज है पर विचार करें। यह सब नये राज्य हैं जो 1914 के महायुद्ध के बाद स्थापित हुए हैं। ध्यान रहे कि यह महायुद्ध दुनियाभर में स्वशासित राज्यों के स्थापित करने के स्पष्ट सिद्धान्त पर लड़ा गया था। यह सभी नये स्थापित देश स्वशासित, सर्वोच्च, स्वतंत्र तथा अपने आन्तरिक व विदेशी मामलों पर स्वतंत्र निर्णय लेने में सक्षम हैं। इन राज्यों की आन्तरिक सामाजिक स्थितियां क्या हैं? आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि वहां की स्थिति भारत से ज्यादा खराब नहीं तो भारत जितनी खराब है। लटविया में लट, रूसी, यहूदी व जर्मन के अतिरिक्त अन्य राष्ट्रीयता के लोग हैं। लिथुआनिया में लिथुआनिये, यहूदी, पोल व रूसीयों के अतिरिक्त अन्य अल्पसंख्यक जातियां पाई जाती हैं। यूगोस्लाविया में सर्ब, क्रोटस, स्लावंज, रूमानियन, हंगेरियन, अल्बानियनज और जर्मन के अतिरिक्त बहुत से दास लोग हैं। इस्टोनिया में इस्टोनियनज़, रूसी, जर्मन और अल्पसंख्यक हैं। चैकोस्लोवाकिया में चैकस् , जर्मन, मगयार, रूथिनियनज़ और अन्य लोग हैं। हंगरी में मगयार, जर्मन व स्लोवैक हैं। थोड़े –थोड़े लोगों के ये गुट अलग कुल व भाषाओं से बंट अपने–अपने हर राज्य में परस्पर विरोधी झगडालू देशों की भांति तैयार हैं। इन विषम विचार वालों को एकता की लड़ी पिरोने वाली धार्मिक एकता भी नहीं है। उनमें आप को चार या पांच प्रकार के कैथोलिक ईसाई मिल जाएंगे। यहां रोमन कैथोलिक, ग्रीक कैथोलिक व चैकोस्लोवक कैथोलिक हैं। इनके अतिरिक्त इवैंजकलिकलस, यहूदी, प्रोटेस्टैंटस व बहुत छोटी धर्म की प्रजातियां वहां पाई जाती हैं। इस पर थोड़ा विचार करें। क्या भारतीय समाज की स्थिति ज्यादा भय पैदा करने वाली है, इन देशों की विषमता से बढ़कर। मैं साहस से कह सकता हूं – नहीं। अगर आपको इस विषय पर निष्कपट व स्वतंत्र निर्णय लेना है तो ऊपर कथित तथ्यों का संज्ञान लेना ही होगा। सज्जनो इस तुलना के आधार पर

कि यदि सब प्रकार की कुल, धर्म, भाषा व संस्कृति में भिन्नता के रहते हुए भी लैटविया, लिथुआनिया, यूगोस्लाविया, इस्टोनिया, चैकोस्लोवाकिया, हंगरी और रूमानिया स्वशासित समुदाय बनकर रह सकते हैं, तो भारत क्यों नहीं, इस प्रश्न का कोई उत्तर आपके विचार में आता है? मेरे पास इसका कोई उत्तर नहीं है और मैं बहुत आशा से उन मित्रों को सुनना चाहूंगा जो इस प्रश्न का उत्तर देने में स्वयं को सक्षम समझते हैं।

4. मुझे ऐसा लगता है कि किसी देश की भिन्न–भिन्न दिशाओं में बिखरे तत्वों पर यह शर्त थोपना कि पहले वह एकत्रित हों तभी उनको स्वशासित होने का आशीर्वाद मिल सकता है का कभी–कभी विपरीत प्रभाव होता है और हम स्वशासित राज्य बनने, एकबद्ध होने की शक्ति के प्रभाव की उपेक्षा कर देते हैं। ऐसे बहुत कम देश होते हैं जिनकी सीमाओं से सामंजस्य से जुड़े लोग एक भाषा, एक धर्म, एक संस्कृति में बंधे हों। परन्तु ऐसे देशों की अधिकता होती है, जहां ऐतिहासिक, भौगोलिक व राजनैतिक कारणों से भिन्न धर्मों, भिन्न भाषाओं व भिन्न संस्कृति वर्गों के लोग एक दूसरे से घुलमिल गये होते हैं। अगर समरसता का सिद्धान्त कड़ाई से ऐसे राष्ट्रों पर लगाया गया होता तो वे राष्ट्र कभी भी स्वशासित राज्य घोषित ही नहीं हो पाते जिसके वे आज उत्तराधिकारी हैं। यह सब कहने के बाद क्या स्वशासित राज्य प्रणाली ने लोगों को एकबद्ध नहीं कर दिया और अगर वे लोग स्वशासित राज्य न बनते तो वे जैसे एक दूसरे से अलग अलग व भिन्न थे वैसे ही आज भी बने रहते। क्या जर्मनी द्वारा स्वशासित संविधान अपनाना व जर्मन साम्राज्य, जर्मन नागरिकों को एकबद्ध करने में एक महत्वपूर्ण कारक नहीं बना? क्या बैवेरियन, प्रशियनज, सैक्सनज व अनके दूसरे जन समूह जो 1870 ई. से पहले पृथक राष्ट्र थे, एकत्रित होकर एक राष्ट्र बन सकते थे, अगर वे एक मिलीजुली सरकार के नियंत्रण में नहीं लाए गए होते? भिन्न व विरोधी विचारधारा के लोगों को एक राष्ट्र में ढालने के लिए साझी सरकार एक बहुत अच्छा उपकरण साबित हो सकता है। परन्तु उदाहरण के लिए जर्मनी तक दूर जाने की आवश्यकता नहीं है। भारत ही क्या इसे सिद्ध नहीं करता? अगर आज भारत में एकता और राष्ट्रीयता की जो पनपती भावना है वह निश्चय ही ब्रिटिश राज की भारत पर एक सरकार के कारण ही है। ऐतिहासिक कारणों व तर्क के बल पर कोई भी भारत को स्वशासित राज्य घोषित करने में परिस्थितियों व लोगों की विषमता को बाधक नहीं बता सकता। वास्तव में, अगर भारत में एकता लाने को हम एक आदर्ष

मानें तो मैं विश्वस्त होकर कह सकता हूं कि इस आदर्श को पाने के लिए स्वशासित सरकार एक शक्तिशाली उपकरण सिद्ध होगा।

II. समस्या की वस्तुस्थितिः

5. आप निश्चय ही पूछेंगे तो क्या परिस्थितियों व लोगों की विषमता का इस समस्या पर कोई प्रभाव नहीं? क्या एक स्वशासित भारत के संविधान में विषमता पर ध्यान देने की आवश्यकता नहीं है? बेहिचक मैं कहता हूँ कि विषमता पर अवश्य चिंतन हो। भारत के एक सामान्य कांग्रेस राज नेता की सोच लोगों व परिस्थितियों की विषमता को अनदेखा कर किसी सीमा व प्रतिबंध के बिना एक संविधान हो व भारत स्वशासित हो की तर्ज पर है। सज्जनों, इस देश की सामाजिक परिस्थितियों को अनदेखा कर स्वशासित भारत निर्माण होने पर राजनीतिक शक्ति का केन्द्र बिन्दु कहां होगा? क्या आपके विचार में यह अल्पसंख्यक समुदायों के लोगों के इर्द गिर्द होगा? क्या आप सोचते हैं कि दलित वर्ग के लोगों की इस शक्ति केन्द्र का उत्तराधिकारी बनने की संभावना है? मेरा इस विषय में केवल एक ही सुनिश्चित मत है कि ऐसे स्वशासित भारत में जहां भारतीय समाज के कटु तथ्यों की अनदेखी होगी वहां राजनीतिक शक्ति के तार भारतीय समाज के भद्र, शिक्षित व समृद्ध अर्थात अमीर रईस, शिक्षित व समाज के उच्च स्थान प्राप्त लोगों के पास होंगे। जैसा कि जीवन के हर पहलू में प्रायः होता है राजनीति में भी जीत हमेशा ताकत वाले की होती है। अमीर रईस अपने धन व शिक्षा के बल पर साधन सम्पन्न व सक्षम हो जाएंगे। परन्तु ऊँची जातियों के अमीर रईसों को केवल यही लाभ नहीं होगा जिसके विरोध में अल्पसंख्यक और कमजोर समुदाय को राजनीति में अपने हिस्से (भाग) के लिए लड़ाई लड़ना अनिवार्य होगा। इसके अतिरिक्त एक चतुर व गूढ़ वास्तविकता है जिसे सामाजिक निर्धारण कहा जा सकता है। सामाजिक निर्धारण के अंतर्गत कुशलता या योग्य पात्रता के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती इसमें केवल संबंध ही देखा जाता है। एक भारतीय दूसरे वे लोग, जो उसके वर्ग के नहीं है पक्षपात करने को प्रेरित करते हैं। इस निर्धारण का भयानक दर्द अल्पसंख्यक समुदाय को बहुसंख्यक समुदाय के हाथों भुगतना पड़ेगा और वे हमेशा–हमेशा के लिए अल्पसंख्यक समुदाय को राजनीति से बाहर कर देंगे। यह निर्धारण सबसे ज्यादा दलित वर्ग के हितों का विनाशक होगा। जैसा कि आप को विदित है भारत में धर्म के नाम पर जातियों का श्रेणीकरण कर सम्मान देने व घृणा करने का मापक बनाया गया है। इसका प्रभाव निम्नवर्ग के लोगों के मस्तिष्क में उच्च वर्ग

के लोगों के प्रति आदर भाव व उच्च वर्ग के लोगों के मन में निम्न वर्ग के लोगों के प्रति उपेक्षा व घृणा भरना है। ऐसे मनोविज्ञान के तहत दलित वर्ग की राजनीतिक शक्ति के संघर्ष में निश्चय ही विनाशकारी परिणाम होंगे। छूत लोग अछूतों द्वारा एक भी वोट डाले बिना अछूतों के वोटों की हुंडी प्राप्त कर लेंगे और इस प्रकार अछूत न चाहते हुए भी अपने विरोधियों की जीत में योगदान देंगे। अगर सामाजिक तथ्यों को अनदेखा करने का दुष्परिणाम अमीर, रईस, पढ़े–लिखे और समाज प्रभावी शासक जाति बनाना है तो ऐसी होनी को कभी भी न होने देने के लिए हमारे सामूहिक प्रयास को मैं अपना दायित्व समझता हूँ। क्योंकि केवल अपना मालिक बदलना ही हमारा ध्येय नहीं है। मैं कांग्रेसियों से इस बात पर सहमत हूं कि कोई भी देश किसी दूसरे देश पर अपना राज्य नहीं थोप सकता परन्तु मैं पूरे मन से यह कहता हूँ कि यह बात यहीं समाप्त नहीं होती और यह बात ''कि कोई कितना भी अच्छा वर्ग क्यों न हो दूसरे वर्ग/वर्गों पर अपना राज नहीं थोप सकता'' भी उतना ही सत्य है। मैं धन, शिक्षा व उत्कृष्ट सामाजिक दर्जे की संयुक्त शक्ति को स्थानीय कुलीन'' का नाम दे रहा हूं। यूरोपियन नौकरशाही और स्थानीय कुलीनों में यदि परस्पर प्रतिस्पर्धा में दावा करना हो कि किसे भारत के जनसमूह के रहन सहन, उनकी आदतें, उनके रहने के तरीके, उनके विचार, उनकी आवश्यकतायें और शिकायतों, उनके विचारों की गहराई से आकलन व शिकायत निवारण, इत्यादि प्रश्नों के बारें में ज्ञान है तो स्थानीय कुलीन का दावा यूरोपियन नौकरशाही से अधिक सशक्त होगा। परन्तु मुझे ऐसा लगता है कि स्थानीय कुलीनों की जातीय पक्षपात, निश्चित वंषवाद व अपनी गोत्रावली के प्रति झुकाव ऐसी कमियां हैं जो उन्हें भारत के जनसमूह का भाग्य निर्धारक बनने के लिए अयोग्य करार देती हैं। वास्तविकता है कि स्थानीय कुलीनों का जनसमूह से अलगाव इतना है कि इनको जनसमूह की लालसाओं, इच्छाओं व आवश्यकताओं आदि का दायित्व नहीं सौंपा जा सकता क्योंकि वे उनकी उत्कृष्ट लालसाओं के ही शत्रु हैं। मैं यह बात इन कुलीनों के विरुद्ध पूरे दावे से इसलिए कहता हूँ कि स्वशासित भारत जनसमूह के लिए सुरक्षित तभी बनेगा जब भारत में प्रजातंत्र की जड़ें गहरी होने व पनपने दी जाएंगी और कुलीन अमीरों के हाथों में यह बागडोर सुरक्षित नहीं हो सकती क्योंकि हज़ारों वर्षों में बने विचार व संस्कार जो प्रतिदिन के व्यवहार में आज भी वे धारण किये हुए हैं, विशाल जनसमूह के हित में आड़े आएंगे। आधुनिक प्रजातंत्र राज्य का मूल सिद्धान्त इस आस्था पर टिका है कि हर इकाई मानव के मूल्य की पहचान हो और इस विश्वास पर आधारित है कि

हर एक का अपना जीवन है व हर एक को अपने जीवन के उत्कृष्ट तक पहुंचने का अवसर प्राप्त हो। भारत में कुलीन अमीरों को इन मान्यताओं में से एक भी मान्यता भारत के जीवन दर्शन के तहत स्वीकार नहीं। इसके विपरीत, वे तो यह विश्वास करते हैं कि वर्तमान जीवन लगातार मिलते रहने वाले जन्मों में से मात्र एक है इस जीवन में प्राप्त पिछले जन्मों के भले बुरे का बकाया है अतः किसी का अच्छे से अच्छा चरित्र, कितना भी महान प्रयास; जन्म द्वारा मिले सामाजिक स्तर को बदल नहीं सकता। अमीरों की यह धारणा कि जो ब्राह्मण पैदा हुआ है ब्राह्मण के अतिरिक्त और कुछ नहीं बन सकता तथा पारिहा का बेटा पारिहा ही रहेगा; परिहा के अतिरक्ति और कुछ नहीं। यह बकवास नहीं है यही जीवन व कर्मण्यता की आस्था है। ऐसे लोगों को असीमित शक्ति देना जल्लाद के हाथ में शस्त्र देने के समान है।

6. हममें से जो लोग ऐसा दृष्टिकोण अपनाते है उनको निर्ममता से साम्प्रदायिक और प्रायः देश का शत्रु करार दिया जाता है। कांग्रेसी यह कहते कभी नहीं थकते कि हर देश में शक्ति सदा बुद्धिजीवियों के हाथों में ही रहती है और दक्ष प्रबन्धन के लिए सदैव ऐसा होना चाहिए। जिन के विचार से मिलने वाली राजनीतिक शक्ति कुलीनों के हाथ में होनी चाहिए, संभवतः सामाजिक शक्ति व राजनीतिक शक्ति को मानव आचरण के दो भिन्न पहलू मानते हैं व ऐसे सोचते हैं कि दोनों का एक दूसरे से कोई लेना देना नहीं है। साथियों, आपको ऐसी मौलिकता रहित राय वाली मानव आचरण की परिभाषा में बह जाने से बचने के लिए सजग रहना है। अगर आप इस सार की बात को सदैव अपने जहन में रखेंगे तो आप समझेंगे कि राजनीतिक कार्य ही नही बल्कि किसी भी और कार्य के लिए लोगों की न तो गणना जा सकती है और न ही वे एक दूसरे के आगे, पीछे या ऊपर नीचे किन्हीं अंकों के आधार पर क्रमबद्ध किये जा सकते हैं। एक मनष्य जब वोट मांगने आता है तो उसकी विचारधारा, स्वार्थ व विचार उसके साथ ही बने रहते हैं और वह राजनीति के लिये इनको अपने पुराने कपड़ो की भांति उतार नहीं सकता। वह सब जिससे उसका व्यक्तित्व व जीवन के प्रति दृष्टिकोण बनते हैं उस के वोट के साथ ज्यों के ज्यों बने रहते हैं। कुलीनों की प्रतिभा देश की एक बड़ी सम्पदा है। परन्तु इसके आधार पर देश प्रबन्धन का अधिकार इनको नहीं सौंपा जा सकता। अपने चरित्र व प्रतिभा का कैसा व कितना उपयोग वे कुलीन संभवतः अपना निर्णय करने के लिए करेंगे। हमारे ऊपर उन को

शासन करने का अधिकार देने से पहले हमें उन कुलीनों की क्षमता या कार्यकुशलता पर नहीं बल्कि उनकी उपयोगिता पर नज़र डालनी चाहिए। एडीसन ने कहा था कि, ''अगर अच्छी प्रतिभा से केवल प्रतिभावान को बिना यह सोचे विचारे कि उस प्रतिभा का उपयोग कैसे होता है सम्मान मिले तो मानव समाज की इससे बड़ी कोई और हानि नहीं हो सकती। प्रकृति की भेंट व कला में उपलब्धियां बहुमूल्य हैं परन्तु तभी जब वे गुणों के लाभ के लिये हों या सम्मानजनक नियमों से प्रतिबंधित हों। हम केवल उनकी बातों से ही प्रभावित न हो जाएं और कोई धारणा तब बनाएं जब हमें उनके द्वारा किये गए भले कार्यों की पुष्टि होने तथा उनके स्वच्छ हृदय की जानकारी मिल जाए अन्यथा उनकी ऊपरी सुन्दरता व उनकी बुद्धि कौशल का मोह भंग होने पर आप उनको घृणा करने को बाध्य हो जाएंगे''। मैंने कुलीन रईस, जो कि राजनीतिक शक्ति पाने के लिए जोड़ तोड़ में लगे हैं के चरित्र के विषय में काफी कुछ कह दिया है तथा और अधिक नहीं कहना चाहता। ऐसी कुछ चीजें जिनके चलते रहने के लिए यह कुलीन रईस उत्तरदायी हैं को अनदेखा नहीं किया जा सकता। इस देश में 5 से 6 करोड़ जनसंख्या छुआछूत से अभिशप्त है और यह अभिशाप दुनिया में कहीं और नहीं है। उस जनसमूह को मूलभूत अधिकारों से वंचित रखा जा रहा है तथा सभ्यता और संस्कृति के लाभों से भी दूर रखा जा रहा है। समानता के अधिकारों व अवसरों से वंचित वे बहुत अपमानजनक स्थिति में हैं। अछूतों के अतिरिक्त इस देश में लगभग उतनी ही बड़ी जनसंख्या आदिवासी व पहाड़ी जातियों की है जो बंजारे, बेघर, जंगलियों की तरह घूमने के लिए छोड़ दिये गये हैं व उनको सभ्यता व संस्कृति के दायरे में लाने का कोई प्रयास नहीं किया जा रहा है। यह इस बात के जीते जागते उदाहरण हैं कि अमीर रईसों ने इनके प्रति बीते समय में कितना दायित्व दर्शाया। हमें यह विश्वास दिलाया जाता है कि भविष्य में इन रईसों का आचरण बिल्कुल भिन्न होगा। मुझे एक भी ऐसा दृष्टांत ध्यान में नहीं है जहां आज का शैतान रातों रात अगले दिन एक देवदूत में बदल गया हो।

7. हमें यह भी समझाया जाता है कि सामाजिक समस्या को देश की राजनीतिक स्वतंत्रता प्राप्त होने तक छोड़ा जा सकता है। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति इस तर्क से सहमत नहीं होगा। कहीं वार्तालाप में घुसने से पहले यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि इसमें कोई छल तो नहीं। हम सब जानते हैं कि वह व्यक्ति जिसका कब्जा होता है वह बेदखल व्यक्ति से कहीं अधिक शक्तिशाली होता है। हम सब को यह भी मालूम है और ज्ञान भी होना चाहिए कि कोई

भी काबिज़ व्यक्ति किसी बेदखल व्यक्ति के भले के लिए अपनी इच्छा से कब्ज़े के अधिकार का त्याग नहीं करता। इसलिए, यह भ्रम न पालें कि अगर एक बार शक्ति उनके हाथों मे आ गई तो सामाजिक समस्या का समाधान समझौते से कर लेंगे क्योंकि समझौते से उनकी शक्ति का नुकसान होता है। वे एक नये आन्दोलन से पदच्युत हुए बगैर यह बात समझौते से मानने वाले नहीं। मित्रों, मैं आपको यह परामर्श एक दार्शनिक एडमण्ड बर्क के कथनानुसार, ''अपनी सुरक्षा व्यवस्था में अधिक आस्था रखकर नाश कराने से अच्छा है कि हम शंकालु कहला कर अपमानित होना झेल लें'' दे रहा हूँ। इस परामर्श पर चलते हुए मेरा मानना है कि हमे सामाजिक समस्या के समाधान के लिए राजनीतिक तंत्र द्वारा पूर्ण संरक्षण की शर्त पर अडिग रहना है और इस समस्या को उनके भरोसे न छोड़ें जो निरंकुश नियंत्रण के लिए चालें चल रहे हैं।

III. दलित वर्ग के लिए सुरक्षा उपायः

8. यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि हमारे विचार में ये सामाजिक मुद्दे भारत में स्वशासन के आड़े नहीं आएंगे परन्तु स्वशासित भारत के संविधान में नियंत्रण और संतुलन की शक्ति के प्रावधान की, अल्पसंख्यकों व कमजोर समुदायों को उत्पीड़न से बचाने की आवश्यकता हेतु अनदेखा नहीं कर सकते। दलित वर्ग के हितों का संरक्षण एक अच्छे ढंग से कैसे सुनिश्चित करें यह मेरा अगला प्रश्न है जिस पर चिन्तन प्रस्तुत है। कुछ वे लोग जिन्होंने भारतीय राजनीतिक समस्या का अध्ययन किया है इस बात से सहमत हैं कि इस समस्या का कोई समाधान अवश्य होना चाहिए और वह समाधान स्वशासित भारत के संविधान का अंग होना चाहिए। इन अध्ययनकर्ताओं ने समस्या का हल सुझाने में अधिकांश उन देशों को, जिन्हें स्वतंत्रता विश्वयुद्ध के पश्चात मिली थी और जिनका उल्लेख मैंनें पहले अपने भाषण में किया है के संविधानों की तर्ज पर किया है और यह अति स्वाभाविक क्रिया है। क्योंकि ये ही वे राज्य हैं जहां भारत जैसी ही स्थितियां हैं। इन राज्यों ने संविधान में अल्पसंख्यकों के मूलभूत अधिकारों को अधिनियमित कर उनके संरक्षण के प्रावधान बनाकर उनके हितों की रक्षा की। नेहरू समिति ने भी दलितों के संरक्षण के लिए इसी विधि को उत्तम करार दिया है व अंगीकृत किया है। मैं आपको चेतावनी देना चाहता हूँ कि कहीं, आप बहकावे में न आ जाएं। भारतीय नेताओं को संविधान में अधिनियमित विधि (LAW) में बहुत विश्वास लगता है जिसे वे मानव अधिकार कहते हैं व इनके अन्तर्गत

अल्पसंख्यकों को देने के लिए उसी प्रकार बहुत उत्सुक हैं जैसे वे दफ्तरी बाबुओं द्वारा उनके ही समूह के अधिकारों के हनन के विरुद्ध प्रावधान के पक्ष में थे। परन्तु हमें केवल ऐसे संरक्षण के प्रावधानों भर से संतुष्ट नहीं होना है। ऐसा नहीं कि हम इन घोषणाओं का स्वागत नहीं करते परन्तु यह नहीं भूलना चाहिए कि कोई भी प्रावधान जिसकी शर्त व आशय कितने भी विस्तार से संविधान में क्यों न लिखें हों, अपने आप में इन विशेष अधिकारों का लाभ नहीं दिला सकते। इस अधिकार के लाभ की गांरटी उस घोषणा में नहीं बल्कि उस अधिकार के हनन होने पर उसके उपचार के लिए बनाए प्रावधान में है जिससे अधिकार प्राप्ति के लिए बाधित किया जा सके। युद्ध के बाद स्वतंत्र घोषित राज्य, जिनका मैंनं पहले उल्लेख किया है, के संविधानों में इतना प्रावधान तो है कि यदि अल्पसंख्यकों को लगे कि उनके मानव अधिकारों का बहुमत समुदाय ने उल्लंघन और हनन किया है तो वे राष्ट्र संघ के समक्ष पुनर्विचार की प्रार्थना कर सकते हैं और राष्ट्रसंघ की एक समिति इसी आशय की शिकायतें लेने व उन पर पंचायती निर्णय देने में सक्षम हैं। क्या नेहरू समिति रिर्पोट में मानव अधिकारों के उल्लंघन व हनन की स्थिति में उपचार का प्रावधान है? मुझे इसमें कोई ऐसी अपील की धारा नहीं दिखी। इसलिए, नेहरू संविधान में यह गांरटी मात्र एक भ्रम है।

9. अगर नेहरू संविधान में अपील का उपबंध होता तो भी मैं आप लोगों को इस व्यवस्था को स्वीकारने का परार्मश नहीं देता। राष्ट्रसंघ या वाइसराय या सरकार को अपील याचिका लगाने का अधिकार दलित वर्गों के लिए आयुधशाला में एक अच्छा वांछित अतिरिक्त अस्त्र साबित होता। परन्तु यह एक प्रभावशाली अस्त्र नहीं हो सकता। अपने अधिकारों की रक्षा के लिए सबसे प्रभावशाली उपाय तो नियंत्रण की शक्ति स्वयं के हाथों में होने से ही है, ताकि जब कोई तुम्हारे अधिकारों के विरुद्ध साजिश करे तो स्वयं केवल उसे दण्ड ही न दे पाओ बल्कि ध्यान भी रख पाओ जिससे कोई साजिश ही न कर पाये। किसी भी तीसरा अर्थात राज्यपाल या वाइसराय या राष्ट्र संघ के हाथों में नियंत्रण शक्ति छोड़ देने से यह उद्देश्य पूरा नहीं हो सकता, क्योंकि ऐसी शक्ति हमारे किस काम की कि जब हम उस शक्तिपुंज से किसी आवश्यकता के समय हस्तक्षेप की याचना करें और वह शक्ति नियंत्रक शक्ति उपयोग से इन्कार कर दे। अपने हितों की रक्षा के बचाव के लिए सब से उपयुक्त उपाय तो स्वषासित भारत में कार्यकारी नियंत्रण हमारे अपने हाथों में होना है और यह तभी संभव है जब देश की विधायिकाओं में हमारा पर्याप्त प्रतिनिधित्व

हो। केवल इसके द्वारा ही, हम दिन–प्रतिदिन की कार्यकारी कारगुजारी पर सतर्क निगरानी रख सकते हैं तथा इस माध्यम से हम अपना संरक्षण भी कर सकते हैं और प्रगति भी। अगर तुम्हें इसके अतिरिक्त और अधिक रक्षोपाय तथा गांरटी मिल सकता है तो हिचक किस बात की। इससे तुम्हारे धनुष की अतिरिक्त डोरियां वाली स्थिति होगी। परन्तु पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मांग को छोड़ने पर तुम्हें और कुछ भी मिलता हो तो उसे स्वीकारना नहीं। अगर आप किसी भी प्रकार के देश के राजनीतिक गठन को स्वीकार करने से इन्कार करते हो जिसमें आपको पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं दिया जाता, तो आप अपने अधिकार क्षेत्र में ही होंगे।

10. उपयुक्त प्रतिनिधित्व पद हर अल्पसंख्यक की जुबान पर है परन्तु मात्रात्मक परिभाषा के अभाव में इसका अर्थ अस्पष्ट रह जाता है और यह झगड़ालू चर्चा का विषय बन जाता है। यदि हम अपनी इस मांग को एक प्रत्यक्ष स्वरूप देना चाहते हैं तो इस पद को एक मात्रात्मक परिभाषा देना अत्यावश्यक है। कांग्रेसियों में एक विचारधारा बहुत प्रचलित हो रही है जिसके अनुसार उपयुक्त प्रतिनिधित्व का अर्थ जनसंख्या के आधार पर प्रतिनिधित्व है। मेरे विचार से अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधित्व के लिए ऐसा गणित सूत्र एक भद्दा व भोंडा मजाक है तथा बहुसंख्यक समुदाय का अनिच्छा से अल्पसंख्यकों को कुछ भी न देने की भावना उजागर करती है। अल्पसंख्यकों की शक्ति तो उनके प्रतिनिधियों से प्राप्त शक्ति तथा उनके अपने सामाजिक स्तर शक्ति पर आधारित हैं और उनको यह लगता है कि इतनी शक्ति उनके लिए कम है, इसलिए वे इसमें बढ़त चाहते हैं। इस शक्ति में बिना किसी बढ़त के उनको लगता है कि बहुमत समुदाय जो पहले ही शक्तिशाली है तथा और राजनीतिक शक्ति हाथ में आने के बाद अल्पसंख्यक उनसे मुकाबला नहीं कर पाएंगे। इस तर्क के आधार पर अल्पसंख्यकों का बचाव उनकी जनसंख्या के अनुपात से अधिक प्रतिनिधित्व देकर ही हो सकता है। अगर यह सत्य है तो प्रश्न उठता है कि जनसंख्या के अनुपात में ही प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए तो अल्पसंख्यकों का संरक्षण कहां से आएगा? अल्पसंख्यकों के संरक्षण की बात तथा उसके साथ ही साथ जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व की बात में मुझे विरोधाभास लगता है। विधायिकाओं में प्रतिनिधित्व जनसंख्या के अनुपात में निर्धारण करने का अर्थ तो यह होगा कि विधायिका एक छोटे पैमाने पर वैसी ही होगी जैसा कि सदन की विधायिकाओं के बाहर समाज में है। ऐसी योजना के तहत शक्ति जैसी

की तैसी ही बनी रहेगी, यानी कि यथावत। अल्पसंख्यकों के संरक्षण तथा बचाव को ध्यान में रखते हुए, अगर अल्पसंख्यकों के हित में वास्तव में कुछ सुधार लाना हैं तथा अल्पसंख्यकों की सहायता के लिए शक्ति संतुलन का पलड़ा झुकाना है तो जनसंख्या के अनुपात से बने हिस्से से कुछ अधिक प्रतिनिधित्व देकर ही किया जा सकता है।

11. सभी अल्पसंख्यक प्रतिनिधि संख्या में अधिमान के सिद्धान्त से तो सहमत हैं परन्तु इसे लागू कैसे किया जाये पर एकमत नहीं हैं। मुझे ऐसा लगता है कि यह अधिमान की कार्य शैली को पूर्णतया न समझ पाने के कारण है। मेरे ऊपर के कथनानुसार अधिमान की योजना का तत्कालिक प्रभाव अल्पसंख्यकों की भुजा अगर अपने संरक्षण के लिए छोटी पड़ती हो तो उसे लम्बी करना है। भुजा को कितना और लम्बा किया जाए इस बात पर निर्भर करेगा कि भुजा कितनी छोटी पड़ रही है। अगर भुजा छोटी है तो जोड़े जानी वाली भुजा लम्बी रखी जाएगी, अगर भुजा लम्बी है तो भुजा जोड़ने की बजाय कम करनी होगी। इसी बात को और तरह से भी समझाया जा सकता है कि सभी अल्पसंख्यकों के लिए यह अधिमान सहायता एक समान नहीं हो सकती। अल्पसंख्यक के सामाजिक स्तर के अनुसार यह अधिमान सहायता कम या ज्यादा होगी। अगर अल्पसंख्यक समाज का सामाजिक स्तर ऊंचा है तो अधिमान सहायता कम होगी और अगर सामाजिक स्तर निम्न है तो अधिमान सहायता अधिक होगी। दुर्भाग्यवश कुछ एक अल्पसंख्यक समुदायों में यह प्रवृति पाई जाती है कि वे अपने आप को एक आम नागरिक के स्तर से ऊँचे स्तर का दिखावा कर ज्यादा प्रतिनिधित्व की मांग पर एकल अधिकार जताते हैं। इस तथ्य के आधार पर कि उनके अल्पसंख्यक समुदाय का स्तर ऊँचा है न कि स्तर नीचा होने की शर्त पर। जैसा कि मैंने कहा कि अल्पसंख्यक को अधिमान सहायता की यथार्थता एक मेमने (जिसकी शीतकाल में पूरी ऊन कटवा दी गई हो) को शीत हवाओं से बचाना मात्र है और ऊपर बताई विकृति से बचाव करना अति–आवश्यक है क्योंकि इस प्रकार के आचरण से देश व दूसरे अल्पसंख्यकों के हितों की हानि होगी।

12. अभी तक मैंने अल्पसंख्यक प्रतिनिधित्व में अधिमान सहायता के सही मायने और उचित उपयोग के बारे में ही चर्चा की तथा दिशा निर्देशों की ओर ध्यानाकर्षित किया। यह प्रश्न शेष है कि अधिमान सहायता कितनी मात्रा में दी जाए। यह मात्रा परिस्थितियों के अनुसार बदलती रहनी चाहिए और मैं इस सम्बन्ध में इसके अंकलन के लिए एक सूत्र सुझाने से अधिक कुछ

नहीं कर सकता। यह इस प्रकार है। सबसे पहले बहुसंख्यक समुदाय व अल्पसंख्यक समुदाय में आपसी समझौते द्वारा एक अंक पर सहमति बनाई जाए कि प्रतिनिधित्व के जनसंख्या अनुपात में कितनी अधिकतम वृद्धि की जाएगी और इसको अधिमान गुणनखंण्ड पुकारा जाए। उपयोग में किसी एक विशेष अल्पसंख्यक के लिए पर्याप्त प्रतिनिधित्व के लिए अधिमान गुणनखंड उस अल्पसंख्यक वर्ग के सामाजिक स्तर के विपरीत अनुपात के आधार पर घटना/बढ़ना चाहिए और इसकी परिभाषा (1) सामाजिक स्तर (2) इसकी धन शक्ति (3) शैक्षणिक स्थिति पर आधारित होनी चाहिए। मुझे ऐसा लगता है कि अगर हम ऐसा कर लें तो भिन्न–भिन्न अल्पसंख्यक समुदायों/वर्गों में आम मत हो जाएगा और अल्पसंख्यक वर्गों व बहुसंख्यक वर्गों में भी न्याय और समानता के आधार पर एकमत हो जाएंगे तथा किसी भी किस्म की शिकायत की गुंजाइश नहीं रहेगी।

13. हमारे लिए अगला विचारणीय प्रश्न निर्वाचक मंडल तथा मताधिकार से सम्बन्धित है। मित्रो, इस सम्बन्ध में हमारी मांग क्या होगी? निर्वाचक मंडल गठित करने के लिए हमारे पास दो विकल्प हैं। एक है अलग–अलग निर्वाचक मंडल बनाना व दूसरा विकल्प मिले जुले निर्वाचक मंडल में आरक्षित स्थानों की योजना। मुझे मालूम है कि इस विषय पर दलित वर्ग की राय विभाजित है। बहुत से लोगों का यह विचार है कि निर्वाचक मंडल अलग अलग होने चाहिएं। उन्हें यह डर है कि संयुक्त निर्वाचक मंडल प्रणाली में बहुसंख्यक वर्ग के मतदाता अपने मताधिकार का प्रयोग करते समय हमारे उम्मीदवारों में केवल उन्हें मतदान करेंगे जो उनसे दबकर रहने वाले हों। मैं यह नहीं कहता कि यह डर निराधार हैं। परन्तु अगर यह सत्य है तो इस का हल निर्वाचन मण्डल को दो अलग–अलग भागों में बांटने में नहीं है बल्कि वयस्क मतदान की मांग द्वारा मतदाता शक्ति अधिक से अधिक बढ़ाने में है ताकि बहुसंख्यक समाज का हमारे प्रतिनिधियों के चुनाव में पड़ने वाला प्रभाव न्यूनतम या बिल्कुल न हो। हमें व्यस्क मतदान की मांग पर अड़ना बहुत जरूरी है। क्योंकि यह हमारी बहुत आवश्यक मांग है तथा संयुक्त निर्वाचन मंडल के साथ दलित वर्ग के लिए आरक्षित स्थानों की योजना लागू होने पर हमें विरोध करने की कोई आवश्यकता नहीं है।

14. इस संबंध में मैं एक टिप्पणी करना आवश्यक समझता हूँ कि इस बात पर किसी को कोई एतराज नहीं हो सकता कि हमारा देश जाति व धर्म के आधार पर विभाजित है और जब तक अल्पसंख्यक समुदायों के बचाव के लिए संविधान में विशेष प्रावधान व अधिनियम लागू नहीं होते ये एक संगठित एवं

स्वशासक समुदाय नहीं बन सकते। अल्पसंख्यकों को यह बात ध्यान में रखनी होगी कि यद्यपि आज के समय हम धर्म व सम्प्रदाय के नाम पर बिखरे हुए हैं, परन्तु हमारा आदर्श एक संगठित राष्ट्र बनना है। कोई भी अल्पसंख्यक समुदाय जो यह चाहते हैं कि उनकी बात सुनी जानी चाहिए इस आदर्श को सबसे प्रथम दर्जे पर रखने में कोई चूक न करें। इस तर्क से यह बात निकलती है कि सभी अल्पसंख्यक समुदायों के लिए यह अतिआवश्यक है कि अल्पसंख्यकों के संरक्षण के लिए बनाए गये नियमों व प्रावधान हमारे आदर्श यानी ''एक संगठित राष्ट्र'' बनने में कहीं आड़े न आए। आप अपने संरक्षण के लिए बनाए प्रावधानों के प्रति जागरूक रहें क्योंकि आज के दिन असमानता एक वास्तविकता है और संरक्षण द्वारा हमें असमानता की दूरी को पाटना है। नियम या प्रावधान कहीं ऐसे न बन जाएं कि असमानता चिरस्थाई बन जाए व हम हमेशा के लिए पंगु बन कर इन प्रावधानों को बैसाखियां मानकर इनके मोहताज हो जाएं। निस्संदेह बहुसंख्यक समुदाय पर अल्पसंख्यकों के संरक्षण का एक बड़ा उत्तरदायित्व है। इसके साथ ही अल्पसंख्यकों पर भी एक भारी उत्तरदायित्व है कि वे ऐसे संरक्षण नियमों के लिए न अड़ें जिससे सब की एकता में बाधा उत्पन्न होती हो। इस दृष्टिकोण से संयुक्त निर्वाचन मण्डल के साथ आरक्षित सीटों वाली योजना अलग–अलग निर्वाचन मंडल की योजना से बेहतर है। क्योंकि यह आज की वास्तविकता को पूरा करता है और भविष्य में आदर्श के प्रति भी सहायक है।

15. दलित वर्गों के संरक्षण के बारे में एक और महत्वपूर्ण बात है। यह उनके लोक सेवा में प्रवेश के बारे में है। विधायिकाओं द्वारा विधि बनाने की शक्ति से विधि अनुसार प्रशासन चलाना कम महत्वपूर्ण नहीं है। प्रशासन के कुचक्र से बड़ी आसानी से विधि में निहित भावना का अगर अतिक्रमण न भी किया जाए परन्तु उल्लंघन तो किया ही जा सकता है। दलित वर्ग को प्रशासन शक्ति पर काबू पाना केवल इसीलिए महत्वपूर्ण नहीं है। प्रायः काम की अधिकता का दबाव या विशिष्ट परिस्थितियों में विधि में बहुत सी बातें विभाग के मुख्यअधिकारी की समझ व सूझ–बूझ से निर्णय लेने के लिए छोड़नी पड़ती हैं। लोक हित व कल्याण अधिकारियों द्वारा उनकी समझ से लिए गये निष्पक्ष निर्णयों पर निर्भर करते हैं अर्थात निष्पक्षता किस प्रकार की है। भारत जैसे देश में जहां लोक सेवा में एक समुदाय का विशेष प्रकार से आधिपत्य बना हुआ है इस सूझ–बूझ के दायरे में लिए गए निर्णयों के बारे में इस शक्ति का वर्ग विशेष द्वारा सम्पदा बनाने या अनुचित लाभ उठाने के लिए अति–दुरुपयोग का भय आंशका मात्र नहीं है। इसका हल केवल

यह है कि लोक सेवा में सभी जाति, धर्म व दलित वर्ग का एक उचित मिश्रण हो, इसके लिए हमें दबाव बनाना होगा। हमें लोक सेवा में किसी प्रतिशत तक दलित वर्ग के लिए सुरक्षित स्थान रखे जाने की मांग उठानी चाहिए और संविधान में इस बात की गांरटी का प्रावधान रखने में कोई कठिनाई नहीं होगी। अगर दलित वर्ग से देश में आने वाली सरकारों में मंत्रियों का प्रतिनिधित्व निश्चित होता है तो इस प्रकार के संरक्षण व बचाव के प्रावधान की कोई आवश्यकता नहीं होती। परन्तु यह तो अंसभव प्रतीत होता है, क्योंकि दलित वर्ग सदैव अल्पसंख्यक ही रहने वाला है। इस लिए यह अति आवश्यक हो जाता है कि आप ऐसी गांरटी के लिए अड़ें।

IV. दलित वर्ग और साइमन आयोगः

16. मैंने कई सारे रक्षोपायों की ओर आपका ध्यान आकर्षित किया जिनको मैं आपके लिए स्वशासित भारत में अत्यावश्यक मानता हूँ। साइमन आयोग ने हमारे संबंध में अनुमोदन किये हैं, अब मैं उन पर चर्चा करूंगा। निस्संदेह साइमन आयोग ने दलित वर्ग के संवैधानिक संरक्षण के लिए सहानुभूतिपूर्वक विचार किया है। आयोग ने दलित वर्ग की दशा के सही चित्रण का प्रयास किया है परन्तु यहां दशा चित्रण किसी भी प्रकार पूर्ण चित्रण नहीं है। उन्होंने विद्यालय व कुएं की समस्या के बारे में लिखा है। इन अभागी जातियों की शिकायतों की लम्बी सूची में से यह एक छोटा अंशमात्र है। फिर भी यह कहा जा सकता है कि दलित वर्ग के संरक्षण के लिए साइमन आयोग द्वारा सुझाये गये संवैधानिक संरक्षण प्रावधान व आवश्यकता को साइमन ने मोन्टफोर्ड रिपोर्ट से कहीं अच्छे से समझा है। परन्तु मैं बड़े खेद से यह कहना चाहता हूँ कि हमारे प्रतिनिधित्व के लिए सुझाया ढंग तथा हमारा प्रतिनिधित्व कितना हो; इसके अनुमोदन के विषय पर साइमन ने हमें बहुत ही निराश किया है।

17. जैसा आपको विदित है कि वर्तमान में दलित वर्ग के प्रतिनिधि मनोनीत किए जाते हैं। हममें से वे जो दुर्भाग्यवश मनोनयन द्वारा आपके प्रतिनिधि बने इस मनोनीत प्रणाली के दुष्परिणामों से आपको अवगत करायेंगे। मुझे यह कहते प्रसन्नता हो रही है कि पूरे भारत से साइमन आयोग के सामने साक्ष्य प्रस्तुत करते हुए इस प्रणाली की व्यापक भर्त्सना की गई। इस प्रणाली के अंतर्गत हमारे लोगों को अपनी पंसद के तथा योग्य प्रतिनिधि चुनने के अधिकार से वंचित रखा जाता है यह उनकी स्वतंत्रता का हनन है। इसी प्रकार हमारे मनोनीत प्रतिनिधियों को कार्य करने में कोई स्वतंत्रता नहीं है। यह खेद की बात है कि साइमन आयोग ने इतने पर भी इस दुष्टतम प्रणाली को नहीं

त्यागा है। इसी प्रणाली से चिपके रहकर यह सिफारिश की है कि दलित वर्ग से चुनाव के लिए उचित उम्मीदवार न मिलने की परिस्थिति में राज्यपाल को दलित वर्ग का प्रतिनिधि मनोनीत करने का अधिकार होगा। इतना ही नहीं, साइमन आयोग ने एक बहुत ही अवांछनीय सिफारिश की है कि विधायिकाओं में राज्यपाल दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व के लिए किसी भी गैरदलित को मनोनीत कर सकेगा। परन्तु ये सब तो सुरक्षित निर्णय होंगे और इन पर ज्यादा माथा–पच्ची करने की जरूरत नहीं। मेरे विचार से आम प्रस्ताव भी उतना ही अमान्य है। इसके अंतर्गत दलित वर्ग के प्रतिनिधि संयुक्त निवार्चन समूह के आधार पर आरक्षित स्थान से निर्वाचन पद्धति से चुने जाएगें। अगर इस सिफारिश में इसके अतिरिक्त कुछ और न होता तो हमारी वर्तमान स्थिति से हमारा विकास होता। परन्तु इसमें एक शर्त लगा दी है कि दलित वर्ग का कोई भी सदस्य उम्मीदवार तभी बनेगा जब उस राज्य का राज्यपाल उसकी योग्यता प्रमाणित करे अन्यथा नहीं। हमें यह प्रणाली तथा नई सुझाई प्रणाली इसलिए मान्य नहीं है क्योंकि वर्तमान प्रणाली व नई सुझाई प्रणाली में बहुत ही समानता है कि उनमें से चुनने लायक कुछ भी नहीं और ऐसी स्थिति में जब किसी निर्वाचन क्षेत्र से राज्यपाल महोदय केवल प्रत्याशी को प्रमाणित करेंगे तो यह एक विशुद्ध मनोनीत किया हुआ प्रतिनिधि ही तो होगा न कि कुछ और। इसके बारे में कोई भी विस्तृत जानकारी नहीं है कि प्रमाणित करने की प्रणाली कैसे काम करेगी तथा इसके लिये क्या–क्या प्रस्तुत करने को कहा जाएगा। इस आयोग ने सुझाव दिया है कि राज्यपाल या तो दलित वर्ग संगठनों से इस सम्बन्ध में मंत्रणा कर सकते हैं, अन्यथा जो उन्हें उचित लगे। इन दोनों ही विधियाँ हमें अस्वीकार्य हैं। अगर संगठनों से चर्चा की विधि का पालन होता है तो नकली संगठनों की भरमार हो जाएगी तथा केवल अपने पिछलग्गू प्रत्याषी को आगे बढ़ाना ही उनका ध्येय रहेगा। चाहे वह प्रत्याशी सामान्य जनता को कतई स्वीकार न हो। और अगर अन्यथा वाली कार्यवाही प्रयोग में लाई जाती है तो जल्द ही प्रणाली बिगड़ने का डर है तथा प्रामाणिक शक्ति मामलातदार व तहसीलदार जैसों के हाथों में फंसकर बाबूगीरी के हाथों की दासी बनकर रह जाएगी क्योंकि राज्यपाल को उनकी रिपोर्ट के आधार पर ही समझ से निर्णय लेना होगा। आप इस बात से भली भांति परिचित हैं कि ये मामलातदार व तहसीलदार किस श्रेणी के अधिकारी हैं तथा इनका दलित वर्ग व बुद्धिजीवी लोगों के प्रति कितना विकृत दृष्टिकोण है। इसलिए, आप कल्पना कर सकते हैं कि ये किस प्रकार के लोगों को प्रमाणित करने की सिफारिश करेंगे।

18. मैं आयोग के इस तर्क से सहमत नहीं हो सकता कि दलित वर्ग के प्रतिनिधियों के मामले में प्रमाणन की कोई विशेष आवश्यकता है। अगर इस नियम का उद्देश्य केवल अयोग्य लोागों को विधायिकाओं से दूर रखना है तो मेरा कथन है कि ऐसे और भी बहुत हैं जिनके लिए प्रमाणित करने की व्यवस्था आवश्यक होनी चाहिए। यदि अयोग्यता का अर्थ अंग्रेजी का ज्ञान न होना तथा अंग्रेजी में भाषण न दे पाना है तो मुझे मुम्बई विधान परिषद से ऐसे कई गैर ब्राह्मणों व बहुसंख्या में सिंध के मुसलमानों के बारे में जानकारी है जो सदस्य होते हुए भी अंग्रेजी से अनभिज्ञ हैं। उन्होंने न कभी कोई प्रश्न पूछा और न ही भाषण दिया है। मैं यह कहने का साहस रखता हूं कि हमारे दलित वर्ग के प्रतिनिधि भी अपने–अपने विधान परिषदों से ऐसे कई नाम स्मरण कर सकते हैं। अगर उनके लिए प्रमाण पत्र की आवश्यकता नहीं होती तो मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि केवल दलित वर्ग के प्रतिनिधियों के लिए ही यह क्यों आवश्यक है? इसलिए हमें इस सुझाई प्रणाली को सिरे से ही नकारना है और हम स्वेच्छा से, अपनी पंसद से, बिना किसी बाधा या बिना शर्त अपने प्रतिनिधि चुनने का अधिकार मांगते हैं। हमें अपने हितों की अच्छी समझ है और हमे यह निर्णय लेने का अधिकार है कि हमारे लिए क्या अच्छा है और अपना यह अधिकार हम राज्यपाल को कतई नहीं दे सकते।

19. मुझे नहीं मालूम की साइमन आयोग द्वारा विरचित केन्द्रीय विधानमंडल के गठन की इस स्कीम के बारे आप क्या सोचते हैं। वर्तमान में, विधान परिषद तथा विधान सभा के सदस्य बनने के लिए प्रत्यक्ष निर्वाचन का चलन है। साइमन आयोग ने सिफारिश की है कि राज्य की विधायिकाओं का गठन पहले की तरह प्रत्यक्ष निर्वाचन से ही बना रहना चाहिए परन्तु विधान परिषद के गठन के लिए विधान सभाओं के लिए निर्वाचित सदस्यों द्वारा परोक्ष निर्वाचन से अनुपाती प्रतिनिधित्व प्रणाली के अंतर्गत नियमित हो। मैं परोक्ष निर्वाचन प्रणाली का समर्थक नहीं हूँ तथा मैंने बम्बई राज्य साइमन समिति के सदस्य होने के नाते विरोध जताया था तथा घोर आपत्ति जताते हुए भर्त्सना की थी। परन्तु साइमन आयोग ने जिस तरह से इसे पेश किया है। इसमें सुविधा/असुविधा दोनों है। प्रथमतः इससे अल्पसंख्यक समुदायों के प्रतिनिधियों के चुनाव के लिए संयुक्त व पृथक निर्वाचन मंडलों की आवश्यकता अपने से ही हट जाती है। दूसरे, इससे एक विधान सभा व दूसरी विधान परिषद के लिए अलग–अलग मतदाता सूचियाँ बनाने व रखने से संबंधित दोषों से मुक्ति

मिल जाती है। तीसरे, इससे सभा का प्रबन्धन आसान होगा। अब अवगुणों के सम्बन्ध में कहना उचित होगा कि इस प्रणाली से लोगों तथा सरकार के रिश्ते के बंधन पर कमज़ोर होने का प्रभाव पड़ेगा और मैं विश्वास से कह सकता हूँ कि देश के उत्थान से जुड़ी बातों का जनता की दृष्टि से ओझल रखने का प्रभाव राष्ट्रीय एकता की भावना की गति में भी अवरोध उत्पन्न करेगा। परन्तु साइमन आयोग की प्रस्तावित प्रणाली के प्रभावों में परिणामों या दुष्परिणामों में से चाहे कोई भी पलड़ा भारी हो, यह प्रणाली केन्द्रीय विधायिका गठन में लागू होगी ही। प्रश्न केवल यह है कि यह प्रणाली कहाँ के लिए ज्यादा उपयुक्त होगी विधान सभा या राज्य सभा के लिए? यह तो जग जाहिर है कि दोनों में तो यह लागू हो ही नहीं सकती क्योंकि परोक्ष निर्वाचन की सबसे बड़ी कमी/कमज़ोरी ही यह है कि ''काठ की हंडिया'' की तरह एक बार प्रयोग में ही समाप्त हो जाती है। निणार्यक केवल एक बार ही मतदाता से दूरी बनाते हुए प्रतिनिधि चुनाव में सत्यता दर्शा सकता है। अगर मतदाता से दूसरी बार निर्मित दूरी रखते हुए निर्वाचक प्रतिनिधि मनोनीत करें तो सत्यता तथा विश्वसनीयता दोनों नष्ट हो जाती हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि अगर देश विधान सभा तथा राज्य सभा दोनों सदनों को रखने का निर्णय लेता है और हम लोक सभा तथा विधायिकाओं में यह प्रणाली प्रयोग में लाते हैं तो राज्य सभा निर्वाचन में हमारे पास स्रोत नहीं बचेंगे। अभी तो राज्य परिषद एक बुरी विसंगति है और अगर विधि रचना में इसे अपना दायित्व निभाना है तो भारत सरकार में इसे इसके वर्तमान स्वरूप में रहने नहीं दिया जा सकता। अगर मैं अपनी सोच में सही हूँ तो विधान परिषद के चुनाव प्रत्यक्ष प्रणाली के तहत तथा परोक्ष प्रणाली के तहत राज्य परिषद का निर्वाचन करना सर्वोत्तम उपाय लगते हैं। केंद्रीय परिषद के गठन के लिए अंततः किस आधार पर कौन सा उपाय चुना जाता है। दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व चुनने के लिए परोक्ष चुनाव ही सबसे आसान प्रक्रिया है चाहे वो किसी भी सदन के लिए हो। इस परिणाम पर हमें कोई भी विलाप नहीं करना। क्योंकि पहले से ही चल रही मनोनयन व्यवस्था की तुलना में इससे पर्याप्त सुधार होगा।

20. प्रांतीय परिषद जो अभी गठित हैं, में दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व बहुत कम है। 1919 की साउथ बोरो समिति ने इस विषय में दलितों के साथ बड़ा अन्याय किया और भारत सरकार ने भी इस दयनीय निर्धारित अंश में वृद्धि करने की सिफ़ारिश की थी। पर यह अन्याय की स्थिति वैसी की वैसी ही बनी रही।

सन् 1923 की मुद्दीमन समिति ने इस बारे में टिप्पणी की कि परिषदों में दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व बिल्कुल नाममात्र ही है और सुझाव दिया कि बड़े पैमाने पर इसमें बढ़ोतरी की जानी चाहिए। परन्तु कहीं कहीं कोई एक या दो प्रतिनिधि और जोड़ने के अतिरिक्त शिकायत दूर करने के लिए कोई कदम नहीं उठाये गये। दलित वर्ग की कमजोर स्थिति के कारण उन्हें सरकारी दफ्तरों से सहारा लेने को कहा गया। अनुभव ने हमें सिखाया है कि सरकारी कर्मचारी हमारे या किसी के भी साथी नहीं है बल्कि यह तो अपने आप के ही मित्र हैं और उनकी दोस्ती उनके स्वार्थ–साधन से ही जुड़ी होती है। मुझे यह कहते हुए खेद हो रहा है कि गत दस वर्षों में सरकारी कर्मचारियों ने जितना दलित वर्ग को दिया है उससे कहीं ज्यादा इन्होंने पाया है। जैसा भी हो, अब दलित वर्ग को यह संदेहपूर्ण लाभ भविष्य में भारत के संविधान के अंतर्गत सरकारी कर्मचारी से मिलने वाला नहीं है तो क्या यह न्यायसंगत नहीं होगा कि दलित वर्ग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाये जैसा कि हर अल्पसंख्यक वर्ग को दिया जा रहा है? साइमन आयोग राज्य सभाओं में दलित वर्ग को कितना प्रतिनिधित्व देने को राजी है? उन्होंने कहा है कि, ''दलित वर्ग आरक्षित स्थानों का भारत की सामान्य वर्ग के अर्न्तगत कुल स्थानों का अनुपात दलित वर्ग की जनसंख्या तथा निर्वाचन क्षेत्र की कुल जनसंख्या के अनुपात का तीन चौथाई यानि 75 प्रतिशत होगा''। अब साइमन आयोग ने भारत के अल्पसंख्यकों को क्या दिया, इसका अवलोकन करें।

कांग्रेस के कड़े विरोध को अनदेखा करते हुए मुसलमान अल्पसंख्यकों को लखनऊ समझौते के अंतर्गत उन्हें प्राप्त अपनी जनसंख्या के अनुपात से कहीं अधिक प्रतिनिधित्व की आज्ञा को वैसी की वैसी बना रहने दिया गया। भारतीय ईसाई, आंगल भारतीयों व यूरोपियनों को आयोग ने उनकी जनसंख्या के अनुपात से कहीं अधिक अधिमानी सुविधा दी है। क्या यह एक कलंकपूर्ण अपवाद नहीं है? क्या बाधाओं से घिरे इस समाज के प्रति दयाभाव दिखाना तो दूर वे न्यायोचित भाग पाने के हकदार भी नहीं हैं? यहां तक कि भारतीय केन्द्रीय समिति ने भी दलित वर्ग को उनकी जनसंख्या के अनुपात से प्रतिनिधित्व देने की सिफारिश की है और अगर यह स्वीकार कर लिया जाता है तो हमें कम से कम हर अल्पसंख्यक के बराबर तो मिलेगा।

21. केंद्रीय परिषद के द्वार दलित वर्ग के लिए आरम्भ से ही बन्द रहे हैं और 1921 में जब लोकप्रियता के आधार पर नये नियम बनाए गए तब भी ये दलित वर्ग के लिए बन्द ही रहे। 1926 ई. तक दलित वर्ग के लिए कुछ भी नहीं हुआ। जब 150 सदस्यों वाली विधान सभा में दलित वर्ग को एक सदस्य

चुने जाने का अधिकार देकर उन पर एक अहसान किया गया। राज्य सभा के द्वार उनके लिए अभी भी बन्द हैं। साइमन आयोग ने दलित वर्ग के लिए केंद्रीय परिषद में कुछ सीटों के लिए प्रावधान बनाकर एक प्रयास किया है। परन्तु ये प्रावधान केवल विधान सभा के बारे हैं और राज्यसभा के लिए लागू नहीं होते । जहां मैं उनके द्वारा दर्शाई दयालुता के लिए उनका कृतज्ञ हूं, वहीं मैं उनके इस कंजूसी की शिकायत करता हूं। आपको याद होगा कि लगभग उस समय जब साइमन आयोग की नियुक्ति हुई थी, दलित वर्ग की गणना का लेखा जोखा जिसमें सभी लोगों तथा सरकार ने दावा किया था कि जनगणना में पाई दलित वर्ग की संख्या वास्तविक जनसंख्या से अधिक है। साइमन आयोग के द्वारा अंकित न्यूनतम दलित वर्ग जनसंख्या ब्रिटिश भारत की जनसंख्या की 20 प्रतिशत पाई गई। परन्तु साइमन आयोग द्वारा सुझाए प्रावधान दलित वर्ग की विधान सभा में प्रतिनिधित्व 8 प्रतिशत तक है व राज्य सभा में प्रतिनिधित्व की कोई बात ही नहीं।

22. मैं साइमन आयोग द्वारा अपने दावों तथा आवश्यकताओं को इस व्यवस्थित ढंग से अवमूल्यन की बात को नहीं समझ पा रहा हूँ। हम सब आशावान थे कि साइमन आयोग केवल दलितों को न्याय ही नहीं देंगे बल्कि दयालुता दिखाकर कुछ ज्यादा ही देंगे। ऐसी दयालुता दिखाने के कारणों की भी कोई कमी नहीं थी। यह बात मेरी समझ से परे है कि कोई समुदाय अपनी राजभक्ति के बल पर संविधान बनने के समय कुछ विशेष अधिकार अपने लिए कैसे प्राप्त कर सकता है ? परन्तु जहां तक राजभक्ति द्वारा भारत में कुछ राजनीतिक विशेष अधिकार खरीदने का प्रश्न है दलित वर्ग की राजभक्ति तो असीमित थी। वे केवल सिद्धान्तों के लिए ही अंग्रेजो से प्रेम नहीं करते थे बल्कि उनके प्रति आसक्त थी। दलित वर्ग के विशिष्ट अधिकार की मांग का जोरदार दावा तो दलित वर्ग की बहुत ही अधम हालत से जुड़ा था। भारत का कोई भी अल्पसंख्यक वर्ग इतना पद दलित नहीं है जितना कि यह दलित वर्ग और उस पर बिल्कुल निसहाय। उनके दु:ख असाधारण हैं व इतने हैं कि ये ही शायद भारत को 'स्वशासन के अयोग्य' करार देने के लिए पर्याप्त थे। निस्संदेह एक समुदाय जिस पर समाज ने अत्याचार कर खूब पाप अर्जित किये हों उस समुदाय (दलित वर्ग) को निष्कपटतापूर्ण, उदारतापूर्ण व्यवहार पाने का हक था। दलित वर्ग को साइमन आयोग के हाथों उदारता तो मिली ही नहीं, बल्कि उनको तो न्याय मात्र भी नहीं मिला। कोई यह प्रश्न पूछ सकता है कि लार्ड बिर्कहैड के भावुक विचार

जो उन्होंने साइमन आयोग की नियुक्ति के समय संसद में प्रस्ताव लाने के समय व्यक्त किये, का क्या हश्र हुआ ? उस समय दलित वर्ग ने एक विशेष ट्रस्ट बनाया और ब्रिटिश लोग दलित वर्ग के संरक्षण के प्रावधान बनाये बिना इस ट्रस्ट को किसी और को सौंप कर नहीं जा सकते थे। क्या हम यह मानें कि साइमन आयोग की सिफारिशों के साथ शब्दाडम्बर की भावना की भरपाई हो गई? मित्रो, हमें सावधान रहना होगा कि लोग हमारे साथ कैसा व्यवहार कर रहे हैं। मुझे डर है कि ब्रिटिश जानबूझकर हमारे दुर्भाग्यशाली हालात का प्रचार करते हैं इसलिए नहीं कि वे हमारी स्थिति सुधारने के बड़े इच्छुक हैं बल्कि यह सब वे इसलिए करते हैं कि इससे उन्हें भारत की राजनीतिक प्रगति को धीमा करने का एक बहाना मिलता है। मेरी धारणा है कि हमारे नेता इस बात की बहुत कम चिंता करें कि ब्रिटिश ने अभी तक हमारे लिए क्या किया और यह चिंता ज्यादा करें कि भविष्य में हमारे साथ क्या हो सकता है और बिना किसी भय के अपनी जीवनचर्या का निर्धारण सुनिश्चित करें। अगर उदारतापूर्ण व्यवहार नहीं मिलता तो कम से कम न्याय मांगने की दुहाई अवश्य लगाते रहें क्योंकि हमारी विशेष परिस्थितियों के कारण हम यह मांगने के हकदार अवश्य हैं।

V. दलित वर्ग और स्वराज

23. मेरे विचार में स्वशासित भारत के भविष्य के संविधान में दलित वर्ग के लिए आवश्यक गांरटियां तथा संरक्षण प्रावधानों के बारे मैंने सब कुछ कह दिया है। परन्तु इस बैठक में जिन सभी विषयों पर चर्चा होनी चाहिए अभी समाप्त नहीं हुए। अगर हम देश में चल रहे राजनीतिक आन्दोलन पर अपने विचार रख एक धारणा न बनाएं तो यह सभा अधूरी ही रह जाएगी। आपको याद होगा कि कलकत्ता में दिसम्बर 1928 के अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने प्रस्ताव पारित कर घोषणा की थी कि दिसम्बर 1929 तक 'ब्रिटिश प्रभुता की भारत सरकार' की स्थापना करे नहीं तो हमारी मांग प्रभुता की सरकार से बदलकर पूर्ण स्वतंत्रता मांगने की हो जाने की धमकी की थी। इस धमकी के उत्तर में ब्रिटिश प्रभुता की सरकार की स्थापना करना उनका लक्ष्य है। कांग्रेस इस घोषणा से संतुष्ट नहीं हुई। कांग्रेस ने ब्रिटिश प्रभुता की सरकार लक्ष्य वाली बात को नकारते हुए कहा कि उन्होंने उस दिन तक प्रभुता सरकार की स्थापना मांगी थी तथा दिसम्बर 1929 की सभा में ''भारत को स्वतंत्रता'' की मांग का लक्ष्य घोषित किया। आपको यह घोषणा

करनी है कि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के इस राजनीतिक लक्ष्य के बारे में आप सबका क्या दृष्टिकोण है ? स्वतंत्रता की इस मांग को हम, महत्व के गणित से निरस्त करते हैं। मेरे विचार में देश की वर्तमान दशा में यह विनाशकारी, दुर्भाग्यपूर्ण व असम्भव होगा। देश को स्वतंत्र होने का खतरा लोग तभी झेल सकते हैं जब वे एक देश, एक संविधान व एक प्रारब्ध की भावना से बंधे व जुड़े हों। ''हम इस स्थिति से मीलों दूर हैं'' इस सत्य को कोई नहीं नकारता। ब्रिटिश प्रभुता की सरकार वाला लक्ष्य मुझे ज्यादा अच्छा भाता है क्योंकि इसमें स्वतंत्रता तो है परन्तु पूर्ण स्वतंत्रता से जुड़े खतरे नहीं हैं। इसलिए कांग्रेस की स्वतंत्रता की मांग को हम समर्थन न दें जैसा कि बहुत से कांग्रेसियों में भी इस बात को लेकर शंकाएं हैं।

24. परन्तु डोमिनियन स्थिति के बारे में हम क्या कहेंगे क्योंकि दूसरे अर्थ में यह ''स्वराज'' ही तो है? क्या इसमें लोगों की सरकार, लोगों के लिए सरकार और लोगों द्वारा सरकार का तत्व अंतवर्लित है ? इसके बारे में निर्णय लेने से पहले हमें विचार करना है। निस्संदेह ब्रिटिश का भारत में आगमन भारत के लोगों के लिए एक वरदान रहा है। मुझे संदेह होता है कि इस दैविक सौभाग्यपूर्ण मिलन के बगैर इतनी जल्दी और इतनी अधिक बौद्धिक जागरूकता संभव नहीं थी। भारतीय समाज को कभी भी अपनी सामाजिक प्रथाओं को जिन्हें वे धर्मपरायण संहिता मान बैठ थे पर उतनी आत्मग्लानि व लज्जा अनुभव न होती अगर वे यूरोपियन सभ्यता के सम्पर्क में न आये होते, क्योंकि यूरोपियन सभ्यता के सामान्य विचारों के आधार स्वाधीनता, समानता व बन्धुत्व हैं। यह दो सभ्यताओं का जीवित सम्पर्क ही था कि निर्दयी विषमता ने भारत को आपने सामाजिक मूल्यों का पुर्नमूल्यांकन तथा बहुत सी सामाजिक प्रथाओं की सामाजिक ज्यादतियां अथवा गलतियां स्वीकारने को मजबूर कर दिया। इसने भारत को विकास पथ पर पुर्नजन्म दिया जो अन्यथा किसी भी प्रकार से सम्भव नहीं था। भारत को शानदार अवसर तथा लाभ हेतु सामान्य सरकार व्यवस्था और सामान्य कानून व्यवस्था मिले जो ब्रिटिश के भारत आगमन के बिना असम्भव था। ये दोनों साधन जो देश के हित में एक असाधारण भूमिका निभाते हैं को एक नगण्य उपलब्धि नहीं आंका जा सकता। भारत के लिए इनके महत्व का आकलन नहीं किया जा सकता। इन साधनों ने भारतीय राष्ट्रीयता की जड़ों को गहरा होने के लिए पृष्ठभूमि तैयार की और एक स्थाई सरकार की नींव डाली। ऐसा भी नहीं कहा जा सकता कि उन्होंने देश की परवाह नहीं की, क्योंकि उन्होंने आधुनिक सभ्यता लाने के लिए मुद्रा, सड़कें, नहरें, रेल तथा डाक सेवा जैसे साधन उपलब्ध कराये।

25. यह सब सत्य है। परन्तु प्रश्न है कि हमने इसका क्या मूल्य चुकाया ? इसमें कोई सन्देह नहीं कि भारतीय वंश को बौना दिखाने का काम ब्रिटिश सरकार के राज में हो रहा है। श्रीमान स्वर्गीय गोखले के शब्दों में, ''अपने जीवन के प्रत्येक दिन हमें बाधित किया जिाता है कि हम तुच्छता का अनुभव करें और हममें से जिन का कद बड़ा है उन्हें झुकने को मजबूर किया जाता है। कोई भी भारतीय होने का गर्व अनुभव नहीं कर सकता जो एक स्वशासित देश के नागरिकों के लिए ऊपर उठने का एक स्रोत होता है। आप ''स्वराज'' की मांग के साथ जुड़े नैतिक कारणों से शायद ज्यादा प्रभावित न हों और जब एक रईस के मुंह से ''स्वराज'' की मांग के साथ जुड़े नैतिक कारणों से शायद ज्यादा का व्याख्यान सुनें तो आप मन ही मन मुस्करायें क्योंकि शायद कहीं यह आपको एक शैतान धार्मिक पुस्तकों को पढ़कर सुनाने जैसी एक ढोंगपूर्ण याद को ताजा कराता हो। इसमें कोई संदेह नहीं है कि ब्रिटिश सरकार का भारी मूल्य जनता में से हर किसी को चुकाना पड़ रहा है। यह विश्व की सबसे मंहगी सरकार है। आप शायद इस कथन से सहमत न हों क्योंकि इस देश में विधि तथा अनुशासन बनाये रखने के लिए कितनी भी कीमत कम नहीं है। परन्तु लोगों की निर्धनता की बात तो तुम्हें जरूर जंचेगी। क्या विश्व में कोई ऐसा भी देश है जहां की जनसंख्या इतनी निर्धन हो जितनी भारतीय जनता? 19वीं शताब्दी के पहले चतुर्थांश में पड़े अकालों में लगभग 10 लाख जानों का नुकसान हुआ। ऐसे ही दुसरे, तीसरे तथा आखिरी 19वीं शताब्दी के चतुर्थांश में भी अकालों से अनुमानित पीड़ितों की मृत्यु संख्या क्रमषः 4 लाख, 50 लाख व 1.5 करोड़ से 2.6 करोड़ रही। इसमें उन बेकारों की गिनती नहीं है जो एक साल में ही 60 लाख के ऊपर थे वह, जिन्हें ''बेकारों को सरकारी भत्ते'' के नाम पर मुट्ठी–मुट्ठी भर अनाज देकर जीवित रखा गया था। मित्रो, इस सबका क्या कारण था? साधारण भाषा में यह इस देश की सरकार की इच्छा तथा सोची समझी नीति के अनुसार था। ब्रिटिश सरकार का सदा ही उद्देश्य इस देश के व्यापार तथा उद्योग की बढ़त को हतोत्साहित करना रहा है। यह महज अनुमान के आधार पर किया एक दोषारोपण नहीं है। यह ब्रिटिश सरकार का एक सर्वस्वीकृत सिद्धान्त रहा है कि भारत पर शासन ऐसे किया जाए कि ब्रिटिश सामान के लिए भारत एक खुला बाजार बना रहे। इस नीति के परिपालन ने ही भारत को एक स्थायी गरीब देश बनाकर छोड़ दिया है। भारतीयों में इस क्रमशः बढ़ती गरीबी में वे लोग कौन हैं जो सबसे अधिक पिसते हैं? मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि कृषि से जुड़ी जनसंख्या में से वे आधे जो साल में से छः महीने कभी भर पेट भोजन नहीं

पाते उनमें सबसे अधिक लोग दलित वर्ग से हैं। उनकी नितांत निर्धनता के कारण अकाल पीड़ित मरने वालों की संख्या भी सर्वाधिक उन्हीं की रहती है। अगर ये आपकी प्रजा हैं और आप उनके हितैशी हैं तो उनके बारे में आप अपनी आंखें मूंद कर नहीं रह सकते और न ही उनकी इस दिल दहलाने वाली दशा की अनदेखी कर सकते हो। सज्जनो, आप लोग केवल इसलिए कि उन्होंने सड़कें सुधरवा दीं, अच्छे तकनीकी वैज्ञानिक सिद्धान्तों पर नहरें बनवा दीं, रेल यातायात दिया, पत्र वाहक सेवा व तार द्वारा संदेश, मुद्रा की स्थिरता कायम, तोल और माप की नियमितता, धार्मिक विचारों में शुद्धिकरण, भूगोल, खगोल विद्या व दवाईयों तथा हमारे आपसी झगड़ों को रोक दिया हम नौकरशाही की बड़ाई में गीत तो गाते नहीं रह सकते। यह सारी प्रशंसा विधि व व्यवस्था में प्राप्त सफलता के लिए होती है। परन्तु सज्जनो हम यह न भूलें कि ऐसे लोगो जिसमें दलित वर्ग भी हैं को जीवित रहने के लिए रोटी तथा मक्खन की आवश्यकता होती है केवल विधि व व्यवस्था इसके लिए पर्याप्त नहीं हो सकते। जीवन के इस निर्दयी कटु सत्य से प्रेरित होकर दलित वर्ग को भी ऐसी सरकार की मांग उठानी आवश्यक है जिससे देश की आर्थिक समृद्धि में बढ़ोतरी आये तथा दलित वर्ग की जीवन दशा में भी सुधार हो। आप में से कुछ प्रश्न कर सकते हैं कि लोगों की कंगाली कम उत्पादन के कारण है तथा धन का असमान बंटवारा है। मैं सर्वप्रथम स्वीकारता हूँ कि बहुचर्चित ''वार्षिक राजकर'' जो इस देश के लोग इंगलैंड को देते हैं वह उस धन जो इस देश के जमींदार तथा पूंजीपति उन गरीब मजदूरों की मेहनत की गाढ़ी कमाई में (जो उनके लिए दिन रात खटते हैं) से जबरन वसूल किए धन के सामने फीका पड़ जाता है। परन्तु मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि आप जमीदारों तथा पूजिपतियों द्वारा गरीब मजदूरों के ऊपर लादे गये कमरतोड़ भार से छुटकारा दिलाने की ब्रिटिश सरकार से कैसे आशा की जा सकती है? प्रोफेसर डाइसी का कथन है कि सरकार चाहे कितनी भी शक्तिशाली क्यों न हो, को दो कठिन बाधाओं से निपटना पड़ता है। पहली बाधा शासकों के चरित्र, प्रेरक शक्ति और निहित स्वार्थ से उत्पन्न होती है और यदि ब्रिटिश सरकार भारतीय समाज में जीवन्त शक्तियों से सहानुभूति नहीं रखती, शिक्षा के प्रति उदासीन है, और स्वदेशी के विरुद्ध है तो यह इस कारण नही ंकि इसकी अनुमति नहीं दे सकती बल्कि इसलिए कि यह इनके चरित्र, प्ररेणा तथा निहित स्वार्थ के प्रेरणा विरुद्ध है। दूसरी बाधा, जो सरकार की क्षमता पर हावी होती है वह बाहरी शक्तियों के विरोध का डर है। क्या भारत सरकार उन सामाजिक बुराइयों को समाप्त करने के महत्व

को समझती है जो इस समाज को दीमक की तरह खोखला किए दे रही हैं? क्या भारत सरकार उस जनता के बारे में चिंतित नहीं है जिसको ये पूंजीपति चूस–चूस कर सुखा रहे हैं? क्या भारत सरकार उन गरीब मज़दूरों के प्रति अपना दायित्व नहीं समझती जिनको पूंजीपति न तो उचित मजदूरी देते हैं और न ही काम करने का सही वातावरण? सरकार यह अनुभव तो करती है फिर भी इसने कभी इन बुराइयों को दूर करने का साहस नहीं किया। आखिर क्यों? क्या इसके पास इसको रोकने की पर्याप्त शक्ति नहीं है? नहीं। सरकार को भय है कि अगर उसने वर्तमान सामाजिक तथा आर्थिक जीवन संहिता को संशोधित करने हेतु हस्तक्षेप किया तो उसका विरोध होगा। यही हस्तक्षेप न करने का कारण है ऐसी सरकार किसी का क्या भला कर सकती है? ऊपर बताई दो बाधाओं से डरी सरकार एक पक्षाघात के रोगी के समान लोगों की भलाई के काम भी रोके रखती है। हमारी सरकार ऐसी होनी चाहिए जिसमें महत्वपूर्ण कार्यों के लिए देश को समर्पित लोग हों। उत्तरदायित्व वाले पद पर ऐसे लोग हों जो समझें कि आज्ञा पालन की सीमा कहां है तथा विरोध कहां से आरम्भ होगा। उन्हें सामाजिक तथा आर्थिक जीवन संहिता को संशोधित करने से भय नहीं लगता क्योंकि यह न्याय और समय की मांग उन्हें प्रेरणा प्रदान करती है। ब्रिटिश सरकार यह भूमिका कभी न निभा पायेगी। यह कृत्य तो ''लोगों की, लोगों द्वारा'' व लोगों के लिए बनी सरकार अर्थात ''स्वराज सरकार'' द्वारा ही संभव है।

26. अब इस प्रश्न को निजी स्वार्थ के दृष्टिकोण से देखें। गोरों के आगमन से पहले आप घृणित छुआछूत की परिस्थितियों में थे। क्या ब्रिटिश सरकार ने छुआछूत से छुटकारे के लिए कुछ किया? ब्रिटिश से पहले आप कुएं से पानी नहीं खींच सकते थे। क्या ब्रिटिश सरकार ने कुएं का अधिकार तुम्हें दिलाया? ब्रिटिश से पहले आप मंदिर में नहीं घुस सकते थे। क्या तुम अब घुस सकते हो? ब्रिटिश से पहले तुम्हारे लिये पुलिस में भर्ती होने पर रोक थी। ब्रिटिश से पहले तुम्हें सेना में सेवा करने की अनुमति नहीं थी। क्या वह जीवनचर्या का मार्ग अब तुम्हारे लिए खुला है? सज्जनो, इन प्रश्नों में से किसी का भी उत्तर हाँ नहीं है। वे जिनके पास देश के नियंत्रण के लिए इतनी बड़ी शक्ति थी तथा जिन्होंने देश पर इतने लम्बे समय तक शासन किया उन पर कुछ अच्छा करने का दायित्व बनता था। परन्तु आपकी स्थिति में कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं आया। जहां तक तुम्हारा प्रश्न है कि ब्रिटिश सरकार ने जो व्यवस्था पहले से बनी थी उसे ही स्वीकार किया और उन व्यवस्थाओं को

निष्ठापूर्ण ढंग से वैसे ही बनाए रखा, जैसे कि चीन के एक दर्जी ने जिसे एक पुराना कोट एक नमूने के तौर पर दिया गया था तो उसने बड़े गर्व से हुबहू उनकी नकल बनाई, सैम्पल अगर किसी जगह से फटा था या घिसा था तो तैयार कोट भी वैसा ही बनाया, जहां सैम्पल में कोई टाकी लगाकर पेवन सिली थी तो वैसी ही टाकी का पेवन नये तैयार कोट पर भी लगाया। तुम्हारे ऊपर किये जाने वाले अपराध खुले घाव की तरह नासूर बन रहे हैं और उनके इलाज के नाम पर कुछ भी नहीं किया गया। मैं कहता हूं कि ब्रिटिश सरकार प्रेरणावश तथा सैद्धान्तिक आधार पर गतिशील होते हुए भी तुम्हारे कष्टों से अनभिज्ञ और कुछ भी करने में असमर्थ बनी रहेगी। कोई भी तुम्हारा वैसा कष्ट निवारण नहीं कर सकता जैसा तुम स्वयं कर सकते हो और तुम स्वयं भी अपने कष्ट निवारण तब तक नहीं कर सकते जब तक राजनीतिक शक्ति तुम्हारे अपने हाथों में न हो। जब तक ब्रिटिश सरकार वर्तमान जैसी बनी रहती है राजनीतिक शक्ति का एक अंश भी तुम्हारे हिस्से में नहीं आ सकता। स्वराज मिलने पर ही कुछ शक्ति अंश तुम्हारे हाथ में आने की संभावना है और शक्ति के बगैर तुम अपने भाईयों व बहनों के मसीहा नहीं बन सकते। मुझे ज्ञात है कि हममें से बहुतों को स्वराज तो एक अनैतिक भूत–प्रेत जैसा लगता है और यह एक सामान्य सोच है। स्वराज की सोचते ही उन्हें स्मरण हो आती हैं वे यातनाएं, अत्याचार व अन्याय जो उनके अपने ही देशवासियों ने उन पर ढाये थे और स्वराज में इस सबकी पुनरावृत्ति का भय उनको भयभीत करता है। परन्तु सज्जनो अगर आप एक क्षण भर के लिए अपने बीते कल को भुला कर स्वराज में भविष्य की कल्पना करें तो पाएंगे कि स्वराज कोई छलावा नहीं है। स्वराज में वह सब व्यवस्थाएं समाविष्ट हैं जिनसे तुम्हें दुष्कर्मियों और अत्याचारियों से रक्षा तथा बचाव वाली एक सरकारी शासन व्यवस्था और जिसमें आप स्वयं भागीदार होंगे और समानता का अधिकार प्राप्त कर सर्वोच्च अधिकार प्राप्त देश के शासकों के बीच स्थान भी पाएंगे। मन में भूतकाल की कष्टप्रद यादों को भुला दो। भय या लालच के प्रभाव–वश अपने निर्णयों में न डोलें। आपकी स्वार्थसिद्धि कहां सबसे अच्छी तरह होती है पर गम्भीरता से चिंतन करें और मुझे विश्वास है कि आप स्वराज के पक्ष में अपना लक्ष्य बनाएंगे।

27. अगर आप यह निर्णय लेते हैं तो आप भविष्य की भारत सरकार के लिए साइमन आयोग की सिफारिशों से सहमत नहीं हो सकते। मैं विस्तार से सामइन आयोग की सिफारिशों का विवेचन नहीं कर सकता क्योंकि इसके लिए हमारे पास

समय नहीं है। इस आयोग ने देश की सरकार की जवाब देही निर्धारित करने का प्रयास किया है। आपका इस ओर ध्यानाकर्षित कर मैं संतुष्ट हो जाऊंगा। आयोग ने केंद्रीय सरकार की कार्यपालिका में कोई मूलभूत बदलाव नहीं किए हैं। केन्द्र की कार्यपालिका वैसी की वैसी गैर– जबाबदेह या लापरवाह बनी रहेगी जैसे पहले थी। राज्यों में कार्यपालिका को विधान सभाओं के समक्ष उत्तरदायित्व बनाने का प्रयास किया है। परन्तु इसमें राज्यपाल आपदा शक्ति का प्रयोग कर ऐसे कार्यकारी अधिकारी नियुक्ति कर सकता है जो राज्य विधान सभाओं को उत्तरदायी नहीं होंगे और राज्यपाल किसी भी विभाग का अपने अधीन करने में सक्षम होगा। सज्जनो, मुझे साइमन आयोग प्रणाली के बारे केवल एक बात कहनी है मुझे ऐसा लगता है कि इस समस्या का समाधान दो प्रकार से है। एक, भारतीय विधायिकाओं के कार्यपालिकाओं को कितनी शक्ति दी जाए, दूसरा केन्द्र राज्यों में भारतीय कार्यपालिका को कितनी शक्ति अपने पास रखने की अनुमति देता है तथा उसके बाहर वे अपने–अपने सदन/विधायिका के प्रति कितने उत्तरदायी होते हैं। इसमें आयोग ने पहला समाधान चुना है। मेरे विचार से जब सदन/विधायिकाएं लोगों के सब हितों का पूरा प्रतिनिधित्व करती हैं तो सही हल दूसरा बनता है न कि पहला। अगर मेरी सोच सही है तो हर कार्यक्षेत्र में उत्तरदायित्व का सिद्धान्त लागू किया जाना चाहिए। केवल उन अपवादों को छोड़कर जहां इसे लागू करना अभी सम्भव नहीं है। मुझे राज्यों की कार्यपालिका को पूर्ण रूप से उत्तरदायी बना दिया जाऐ का कोई कारण क्यों नहीं सूझता। इसी प्रकार सेना तथा विदेश नीति से सम्बन्धित कुछ विषयों को छोड़कर केन्द्र की कार्यपालिका को भी पूर्णतया उत्तरदायी बनाने में कोई बाधा नहीं लगती।

28. हम लोगो में से कुछ कह सकते हैं कि दिल्ली तो अभी बहुत दूर है और दलित वर्ग को तो राज्यों के उत्तरदायित्व तक ही सीमित रहना चाहिए। मैं उनको केन्द्र या राज्यों की कार्यपालिका को उत्तरदायी बनाने सम्बन्धित राय बनाते समय दो बातों पर ध्यान केन्द्रित कर विचार करने का सुझाव देता हूँ। एक कि दलित वर्ग सहित देश हित की बातें ज्यादा घनिष्टता तथा ज्यादा सघन प्रकार से केन्द्र सरकार से जुड़े हैं न की राज्य सरकारों से। इसलिए, केन्द्र की चक्की कितनी आसानी से व कितना बारीक पीसेगी, यह बात इस देश के लोगों की समृद्धि की सीमा निर्धारित करेगी। कार्यपालिका अपनी कार्य शैली में विधायिका के प्रति कितनी संवेदना के साथ कदम से कदम मिलाकर चल पाऐगी। इस दृष्टिकोण से अगर हम लोगों की

आध्यात्मिक और वित्तीय स्थिति में प्रगति देखने को उतावले हैं तो हम केंद्रीय सरकार के उत्तरदायित्व के प्रश्न की अनदेखी नहीं कर सकते। परन्तु एक और कारण है जो इसी उत्तर की ओर इंगित करता है। राज्य सरकार की कार्यपालिका कानून तथा व्यवस्था बनाए रखने में केन्द्रीय सरकार के महत्वशाली अभिकर्ता की भूमिका वहन करती रहेगी। अगर दोनों को एक दूसरे की ताल से ताल मिलाकर कार्य करना है तो यह अत्यावश्यक है कि उन्हें आदेश एक ही स्रोत से प्राप्त हों। इसके बगैर दोनों में घोर विवाद होगा। एक राज्य का अधिकारी जो राज्य की विधानसभा का उत्तरदायी हो वह सम्भवतः केन्द्रीय सरकार से आदेश नहीं ले सकता विशेषतया जब केन्द्रीय सरकार की कार्यपालिका अपने कार्य के लिए केन्द्रीय सदन का उत्तरदायी न होकर राज्य सचिव के अधीन कार्यरत हो। ऐसे विवाद की स्थिति में आपदा के समय देश का प्रशासन बिल्कुल शक्तिहीन हो सकता है। इसलिए, आप कभी केवल राज्य कार्यपालिका को उत्तरदायी नहीं बना सकते इसके लिए चाहे इच्छा से चाहे अनिच्छा से कुछ सीमा तक केन्द्रीय कार्यपालिका को ही उत्तरदायी बनाना होगा।

VI. दलित वर्ग तथा नागरिक अवज्ञाः

29. सज्जनो, चाहे हम संरक्षण के साथ डोमिनियन स्थिति में स्वशासन को समर्थन देने की बात करें तो क्या इससे यह अर्थ निकलता है कि महात्मा गाँधी द्वारा पिछले वर्ष मार्च से शुरू किये गये ''नागरिक अवज्ञा आन्दोलन'' में हमें भाग लेना चाहिए? इस प्रश्न पर हमें अपनी राय स्पष्ट करनी होगी। जैसा कि आपको ज्ञात है कि सभी नरम दल वालों ने इस आन्दोलन की निन्दा की है तथा इसे असंवैधानिक का दर्जा करार दिया है। मैं स्वीकार करता हूं कि मुझे उनका तर्क प्रभावित नहीं करता। अगर यह रूढ़िवादी वर्ग आपसे कहता कि ''तुम्हारा यह मंदिरों में प्रवेश आंदोलन असंवैधानिक है तो आप क्या कहोगे?'' कि सीधे मंदिरों में प्रवेश को त्याग कर रूढ़िवादियों से अनुरोध करो, कोर्ट कचहरी में अर्जी दो और कानून में परिवर्तन कराओ। क्या आप अपने रूढ़िवादिता के विरूद्ध स्वतंत्रता संग्राम में अपने उपयोग में लाने वाले अस्त्र–शस्त्र को इस तर्क से प्रभावित होकर लगाम लगाने को सहमत हो जाओगे? मुझे लगता है कि आप संवैधानिक उपाय की शरण तभी ले सकते हैं अगर पहले ही स्वीकृत संविधान लागू हो। परन्तु अगर कोई संविधान हो ही नहीं तो कोई भी संवैधानिक उपाय को ईश्वर का उपदेश मानने को कतई तत्पर न होगा। यह तर्क ब्रिटिश के दिल और दिमाग में न आएगा ऐसा नहीं

है। क्योंकि अल्सतर आंदोलन भी तो क्या नागरिक अवज्ञा आन्दोलन नहीं था? तो क्या जाने माने ब्रिटिश राजनीतिज्ञों ने इसमें भाग नहीं लिया और क्या आन्दोलनकारियों को प्रोत्साहित नहीं किया? प्रश्न यह है कि क्या यह चुना गया मार्ग हमारे लोगों के हितों की सुरक्षा व संरक्षण के साथ–साथ एक अनुकूल अवसर व अस्त्र हैं? मैं नागरिक अवज्ञा आंदोलन का विरोध करता हूं। क्योंकि मैं निश्चित ही इसे अत्यंत प्रतिकूल अवसर मानता हूं। ब्रिटिश साम्राज्यवाद की सभी बुराईयों से इन्कार करते हुए भी मुझे इसमें भारतीयों की उन्नति की आशा लगती है। ऐसी धारणा वाला मैं अकेला नहीं हूँ। यह महात्मा गांधी की सोच है जिनकी यह घोषणा है कि भारत में सत्तारूढ सरकार के विरुद्ध राजद्रोह करना उनका प्रतिबद्ध कर्त्तव्य है। ब्रिटिश प्रभुता के तहत भारत को स्वशासित बनाना ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य है तथा 1920 में इस भावना को सत्यता में परिवर्तित करने के लिए राज्यों के उत्तरदायित्व से एक शुरूआत की जिससे धीरे–धीरे भारत में स्वशासन लाया जा सके। शायद वास्तविकता उद्देश्य से ज्यादा बौनी रह गई। शायद उद्देश्य की ओर बढ़ने की गति बहुत धीमी रह गई थी। परन्तु क्या इसे दिए गए वचन से फिरना कहा जा सकता है? अगर यह वचन से फिरना था तब तो अवज्ञा आन्दोलन में कुछ अनुकूल अवसर की चाल समझ आती है। परन्तु ऐसा कुछ भी नहीं था। वायसराय की डोमिनियन प्रस्थिति स्वशासन की घोषणा उद्देश्य को स्पष्ट भाषा में व्याख्या करती थी और भारतीयों को गोल मेज सभा में बुलाकर उद्देश्य की शीघ्र प्राप्ति के रास्ते तलाशने का एक अवसर दिया गया था। यह भी एक सत्य है कि वे सब जो तुरन्त प्रभाव से डोमिनियन प्रस्थिति स्वराज चाहते थे उनके दृष्टिकोण से इसमें कुछ कमियां थी। परन्तु केवल इस आधार पर गोल मेज सभा के न्योते को ठुकरा देना पर्याप्त कारण नहीं था। वायसराय या ब्रिटिश कैबिनेट मंत्रियों से वचनबद्धता या काम का जिम्मा लेकर असमर्थता के बिन्दुओं पर लड़ाई मुझे आवश्यक और अनुपयोगी लगती है। किसी ने जिम्मा लिया हो या न लिया हो अगर भारत की स्वशासन की मांग एक स्वर में उठती है तो कोई कारण नहीं कि इसका प्रभाव ब्रिटिश पार्लियामेंट पर न पड़े। कुछ भी हो अगर कांग्रेस गोल मेज सभा का न्यौता स्वीकार कर लेती तो कुछ खो तो नहीं जाता। गोल मेज सभा की वार्ता असफल होने का प्रभाव केवल अवज्ञा आंदोलन की शुरूआत एक वर्ष बाद होने पर रहता और इससे कांग्रेस का प्रभाव बढ़ता। वे लोग जो केवल सही या गलत के विश्वास में जीते हैं वे संभवतः मार्ग से भटक कर निराश हो जाएंगे। सभी बिन्दुओं पर विचार कर मैं यह कहने को विवश हूं कि इस

समय नागरिक अवज्ञा आंदोलन शुरू कर और गोल मेज सभा में होने वाले शांतिवार्ता को नकार कर कांग्रेस ने एक भारी भूल की है।

30. एक दूसरा कारण भी है जिससे मैं नागरिक अवज्ञा आन्दोलन का समर्थन नहीं कर सकता। मेरा विचार है कि आंदोलन हमारे संरक्षण व सुरक्षा हितों की रक्षा के अनुकूल नहीं है। यह आंदोलन तो जनसमूह को उद्वेलित करने की क्रिया होगी। यह एक आंदोलन है जिसका सार दबाव बनाना होगा। यह तो एक भगदड़ है और अगर इसका विस्तार कर बड़े पैमाने तक लाया जाए तो यह एक क्रान्ति में परिवर्तित हो सकता है। क्रांति, परिवर्तन लाने का एक तरीका है। एक क्रांति में विषय बहुत अनिश्चित होता है, अव्यवस्था होती है और घोर विपत्ति की स्थिति होती है, चाहे क्रांति में खून बहे या न बहे। उदाहरणतया, हम फ्रांस की क्रांति को लें, लोक दिखावे के लिए यहां गणतंत्र की स्थापना करना क्रांति का विषय था परन्तु वहां अनियंत्रित शासन की स्थापना हुई। क्रांतियां प्रायः टाली नहीं जा सकतीं अर्थात ये अवश्यंभावी होती हैं। फिर भी, हमें यह न भूलना चाहिए कि क्रांति और वास्तविक सामाजिक परिवर्तन में बहुत बड़ा अंतर है। एक क्रांति में राजनीतिक सत्ता शक्ति का परिवर्तन एक दल से दूसरे दल के पास होता है बिल्कुल वैसे ही जैसे एक जीत से सत्ता परिवर्तन एक देश या वंश से दूसरे के पास। मैं यह निश्चित तौर पर कह सकता हूं कि हम केवल इस प्रकार के परिवर्तन से संतुष्ट नहीं हो सकते। हम ऐसा परिवर्तन चाहते हैं जिसमें सत्ता परिवर्तन के साथ–साथ सत्ता शक्ति का वितरण भी हो जिसका परिणाम असली सामाजिक परिवर्तन हो यानि कि समाज में शक्ति का पारस्परिक परिवर्तन। यह पारस्परिक समायोजन तथा समाधान से होगा। दलित वर्ग का भविष्य पूर्णतया समायोजन को स्वीकृति और इसे कार्यान्वित करने पर निर्भर करेगा। भारत में समस्या एक सरकार बनाने की नहीं है और न ही स्वतंत्रता देने की। समस्या तो है स्वतंत्र सरकार बनाने की। दोबारा बर्क के शब्दों में ''सरकार बनाने के लिए कोई बहुत दूरदर्शिता की आवश्यकता नहीं होती। सदस्य चुनने के अधिकार की शक्ति को निर्धारित करो, आज्ञाकारी होने की शिक्षा दो और कार्य हो गया। स्वतंत्रता देना तो और भी आसान है। इसमें मार्ग –दर्शन की कोई आवश्यकता नहीं है केवल लगाम थमा दो। किन्तु स्वतंत्र सरकार बनाने के लिए स्वतंत्रता और नियंत्रण के दो परस्पर विरोधी तत्वों का समरूप मिश्रण बनाना अनिवार्य है और इसके लिए गहरी सोच व चिंतन की आवश्यकता है।

31. सज्जनो, ये वे कारण हैं जिसके लिए मैं यह सोचता हूं कि दलित वर्ग को नागरिक अवज्ञा आन्दोलन का समर्थन नहीं करना चाहिए। यह उनके हित

में होगा कि वे गोल मेज सभा में शांति वार्तालाप कर अवसर का लाभ उठायें। वे इस बात को दबाव बनाकर कहें कि दलित वर्ग को पर्याप्त प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाए और तुम्हारा प्रतिनिधित्व केवल योग्य और ईमानदार व्यक्ति ही करें जिन्हें आपका पूर्ण विश्वास प्राप्त हो।

VII. दलित वर्ग का संगठनः

32. मेरे कई मित्रों ने मुझे सावधान किया है कि दलित वर्ग की तटस्थ रणनीति का खामियाजा दलित वर्ग को काफी मंहगा पड़ेगा और उनको चाहिए कि उन्हें अपने को ब्रिटिश सरकार या भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस में से एक के साथ, मित्र बनकर जुड़ जाना चाहिए। मैंने इस प्रश्न पर गहनता से विचार किया है और इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि दोनों से अलग अपनी स्वतंत्र पहचान बनाए रहना ही दलित वर्ग के हित में है। जैसा कि मैंने कहा है कि मैं भारत के लिए डोमिनियन स्थिति स्वशासित देश का दर्जा देने का विरोध नहीं कर सकता क्योंकि मुझे पूरा विश्वास है कि ब्रिटिश सरकार हमारी समस्या का समाधान नहीं कर सकती। मुझे यह समझ नहीं आता कि कांग्रेस के साथ मिलने से हम अपनी समस्या के हल के नजदीक कैसे पहुंच सकते हैं ? ऐसा कहते हैं कि कांग्रेस छुआछूत नहीं मानती और यही विशाल जन समूह का प्रतिनिधित्व करने वाली एक संस्था है। निःसंदेह महात्मा गांधी के संरक्षण में इस संस्था ने एक प्रस्ताव पारित कर छुआछूत प्रथा को एक अपराध माना। परन्तु कांग्रेस ने इसका समाधान करने के लिए क्या किया? कांग्रेस की सदस्यता बढ़ाने के लिए खद्दर को हर सदस्य के लिए विशेषाधिकार शर्त घोषित किया। कांग्रेस ने खद्दर की जगह छुआछूत हटाने को हर सदस्य के लिए विशेषाधिकार शर्त से क्यों नहीं जोड़ा? ऐसी विशेषाधिकार शर्त का पालन अत्यंत सरल होता। ऐसी शर्त के पालन की पात्रता के लिए छूत को किसी अछूत को अपने घर में सेवक या विद्यार्थी के रूप में अपनी शरण में रखने की बात रखी गई होती। महात्मा गांधी ने छुआछूत दूर करने के लिए क्या प्रयास किया? गाँधी के व्यक्तित्व, स्वयं का प्रभाव पैसे के संसाधनों तथा धर्मपरायणता को देखते हुए छुआछूत की चर्चा तो की परन्तु प्रयोगात्मक उपाय नहीं अपनाए। प्रत्येक वर्ष वह सूत कातने वालों के लिए धन इकट्ठा करने यात्रा पर जाते हैं, क्या कभी उन्होने 'छुआछूत हटाने' के लिए धर्मयुद्ध छेड़ने की घोषणा की? जितना वे चरखे पर खर्च करता है उसका एक सौंवा भाग भी उन्होंने छुआछूत उन्मूलन पर खर्च नहीं किया? आप सबको विदित है कि कैसे महात्मा गांधी ने तीन सप्ताह तक हिन्दू और मुसलमान एकता के लिए

उपवास रखा। क्या महात्मा गांधी ने कभी छूतों व अछूतों के बीच सद्भावना या उदारता भावना के लिए एक दिन का भी व्रत रखा? यदि कुछ ऐसे प्रयोग किए होते तो कोई भी कांग्रेस मंच को स्वीकृति देता। परन्तु छुआछूत के दाग को हटाने के ऐसे किसी भी असली प्रयास का कोई साक्ष्य या प्रमाण उपलब्ध नहीं है। परन्तु हमें मालूम है कि कैसे स्वामी श्रद्धानन्द को जब यह लगा कि कांग्रेस छुआछूत हटाने का दिखावा करने के अतिरिक्त इस विषय पर कुछ भी करना नहीं चाहती तो उन्हें निराश होकर कांग्रेस छोड़नी पड़ी। अगर कांग्रेस के द्वारा पारित प्रस्तावों के आधार पर निर्णय लेना हो तो कोई भी आसानी से यह स्वीकार नहीं करेगा कि कांग्रेस एक विशाल जन समूह का प्रतिनिधित्व करने वाली पार्टी है। इसके आर्थिक प्रस्तावों के अवलोकन से पता चलता है कि इसका ध्यान उच्च वर्ग एवं मध्यम वर्ग के विषयों पर केन्द्रित हैं। इस पार्टी के व्यापार सम्बन्धी प्रस्ताव व्यापारिक तथा निर्माताओं से सम्बन्धित हैं और कामगार, मज़दूर को बड़ी कठोरता से भुला दिया गया है। एक संस्था जो एक पाउंड की तुलना में रुपये के 16 पैसे विनिमय मूल्य का समर्थन करती है उसे जनसमूह की प्रतिनिधि कहलाने का अधिकार तो खोना ही होगा। नमक कर का विषय नागरिक अवज्ञा आन्दोलन से जोड़कर कांग्रेस को नया मुखौटा नहीं मिल सकता। नमक कर का विरोध विस्फोटक है तथा राजनीतिक आन्दोलन के लिए एक स्वागत योग्य पहलू है। परन्तु जैसे खीर का मानदण्ड उसके स्वाद में है वैसे ही नमक कर का असली मानदण्ड इस बात पर निर्भर करेगा कि कितनी तत्परता से इसके बदले में बोझा कहीं और डालने के लिए समारोपण कर पाएंगे जो पूंजीपति को तो काटे परन्तु निर्धनों को अपने प्रभाव से मुक्त कर सके। समय ही अकेले इसके साथ जुड़ी वास्तविकता का बयान कर सकता है। मुझे इस बात में कोई शक नहीं कि जब परीक्षण का समय आएगा तो बहुत से कांग्रेसी तुरन्त अमीरों के साथ में होंगे न कि जनसमूह के साथ। कांग्रेस गरीबों तथा जनसमूह की समस्याओं के प्रति उदासीन और निरूत्साहित रहेगी, यह एक अवश्यंभावी सत्य है। क्योंकि कांग्रेस एक राष्ट्रीय आन्दोलन का प्रतिनिधित्व कर रही है और वह एक राजनीतिक पार्टी नहीं है। इसलिए इसके कार्यक्रम और योजना सब गोलमाल हैं। यह सबको अवश्य विदित हो गया होगा कि एक संस्था अगर सबका हित सोचने को बाधित है तो संस्था केवल कुछ लोगों के हित की निगरानी का नाटक मात्र कर सकती है और सबसे कमज़ोर को उसके भाग्य पर छोड़ देगी। मैं यह समझने में असमर्थ हूँ कि हम कांग्रेस से समर्थन की आशा कैसे कर सकते हैं जब उसके ऐसा करने से हमारे विरोधी कांग्रेस के विरुद्ध हो जाएंगे और कांग्रेस उनके समर्थन के बल पर ही जीवित है।

33. हममें से वे जो कांग्रेस की सेवा करने के बारे में चिंतित हैं, इस बात को लेकर विश्वस्त हैं कि स्वराज मिलने के बाद कांग्रेस हमारी सेवा से प्रसन्न होकर पुरस्कार में हमारे छुआछूत को मिटा देगी। अगर हम अभी उसकी सेवा नहीं करते हैं तो कांग्रेस पार्टी हमारे इस दोष के लिए हमसे अपराधियों वाला व्यवहार करेगी। मैं तो केवल इतना कहूंगा कि अनुग्राहक सेवाओं का पुरस्कार विरले को ही मिला करता है। परन्तु मैं यह कहने के लिये उतावला हूं कि चाहे जो जितनी कांग्रेस की सेवा कर ले पर स्वराज मिलने के बाद कांग्रेस को ढूंढते रह जाओगे। तब हमें अपने ही साधनों पर निर्भर होना होगा, क्योंकि तब कांग्रेस स्वराज के रूप में अपना लक्ष्य प्राप्त कर दृश्य से गायब हो चुकी होगी, और हैमिल्टन के शब्दों का प्रयोग करते हुए ''हमारा सामना उस समय देश के महान क्रूर जंगली मनुष्य से होगा जो उस समय पूर्णतया मदमस्त होगा।'' मुझे भ्रम है कि वह महात्मा गाँधी, जिसके भरोसे हमें अपनी सारी पीड़ा भूलने तथा उनका अंत करने के लिए कहा जाता है, भी उस समय हमारी सहायता करने में असमर्थ होंगे, यह मानते हुए भी कि वह उस समय तक जीवित बचे रहेंगे क्योंकि प्रकति नश्वर मानव को क्षमा नहीं करती।

34. अगर मेरी सोच ठीक राह पर है तो हमें अपना इतिहास स्वयं रचना चाहिए। हममें से वे जो ऐसा कुछ भी करने से आशंकित है मैं उन्हें समझ रहा हूँ। वे कांग्रेस तथा सरकार दोनों से ही स्वतंत्र होने में हानि के डर से भयभीत हैं। यह हमारी निर्बलता की स्वीकारोक्ति है और मैं इस बात से सहमत हूँ कि स्वतंत्र होने के बाद अगर दलित वर्ग की गिनती शक्ति वालों के साथ नहीं होती तो यह एक चिंतनीय विषय है। लेकिन मैं यह पूछता हूँ कि कांग्रेस या सरकार पर निर्भर रहने का क्या लाभ है? व्यावहारिकता में, आपकी मनोवृत्ति एक अधिक शक्तिशाली पार्टी की नजरों में भले बने रहने के खातिर उससे संबंध जोड़े रखने की मानसिकता को भिक्षावृति या शर्मनाक आत्मसमर्पण से ज्यादा कुछ नहीं कहलाएगी। दलित वर्ग के सामने सबसे बड़ा प्रश्न है कि वे कैसे एक ऐसी शक्ति बनकर उभरें कि, उनके दृष्टिकोण तथा विचार सभी अवसरों पर बाकी सभी वर्गों के विचारों से अधिक महत्वशील हों। मुझे दलित आन्दोलन में दो कमियां लगती हैं। पहली तो यह कि दलित वर्ग की एकमत जैसी कोई धारणा नहीं है तथा दूसरी दलित वर्ग का एकजुट होकर कार्य प्राप्ति के लिए किसी भी साधन या उपाय का न होना। मुझे लगता है कि काफी समय से हम गूंगे बने हुए हैं तथा अपनी व्यथाएं बिना किसी चर्चा के झेलते रहे हैं। यही एक बड़ा कारण है कि हमारी समस्याओं का समाधान

नहीं हुआ। हम औचित्य से अपनी दुर्व्यवस्था के लिए सरकार या सुधारकों को दोषी नहीं ठहरा सकते। हमें यह स्वीकारना होगा कि हमारे चुप्पी साधे रहने से उनको न तो कोई संकेत मिला न कोई समर्थन, अतः इसके हम उत्तरदायी हैं। मैं बड़ी व्याकुलता से विचार करता हूँ कि हमारे द्वारा पारित प्रस्तावों को, हमारे द्वारा सरकार को भेजे प्रतिवेदनों को तथा हमारी उठाई गई मांगों को वह महत्व क्यों नहीं दिया जाता जो बाकी सब समुदायों की शिकायतों को वही निर्णायक देते हैं और बहुत विचार के पश्चात् मेरा यह मत है कि ऐसा केवल इसलिए है कि हम क्षेत्रीय या प्रादेशिक होकर रह गये हैं। किसी एक प्रदेश की समस्या को वह प्रोत्साहन नहीं जो केन्द्रीय स्तर से उठाई समस्या या मांग को मिलता है। मेरी यह धारणा है कि दलित वर्ग को अपने आप को झंझोंड़ने की आवश्यकता है तथा एक ''अखिल भारतीय दलित संगठन'' बनाने की आवश्यकता है ताकि हमारी आवाज एक गूंज बन सके और शासन तंत्र में समस्याओं को उठाने तथा निपटाने में हमारी पैठ बने। पिछले दो या तीन वर्षों से एक ''अखिल भारतीय दलित संगठन'' बना है परन्तु यह एक खुला सत्य है कि उस संगठन में केवल पदाधिकारी हैं सदस्य नहीं हैं। मेरे अपने प्रांत में तो इस संगठन की शाखा का यह हाल है। ऐसी जाली संस्था दलित वर्ग के किसी काम की नहीं। हमारे संगठन में ऐसी जान होनी चाहिए जो दलित वर्ग की भावनाओं को आवाज प्रदान कर सके तथा उससे समुदाय के सच्चे कार्यकर्ता जुड़े हों तथा उसका तंत्र पूरे भारत में हो। यह एक बड़ी उपलब्धि होगी, अगर हम एक छोटी समिति गठित कर उसे संस्था का संविधान का मसौदा बनाने की जिम्मेवारी सौंपे। यह बहुत विचार योग्य बात है और बिना किसी देरी के इस पर कार्यवाही होनी चाहिए।

VIII दलित वर्ग का उत्थानः

35. सज्जनो, मैंने संभवतः अपनी राजनैतिक शक्ति प्राप्त करने के बारे में आवश्यकता से अधिक ही कह दिया है। परन्तु अब मैं बलपूर्वक कहता हूँ कि दलित वर्ग की सभी समस्याओं से छुटकारा पाने के लिए राजनैतिक शक्ति कोई रामबाण नहीं है। उनकी मुक्ति तो सामाजिक स्तर के उत्थान में है। दलित वर्ग को अपनी बुरी आदतों को छोड़कर स्वच्छ बनना चाहिए। उन्हें अपने बुरे रहन–सहन में सुधार लाना आवश्यक है। उन्हें अपनी जीवन शैली में परिवर्तन लाकर अपने को सम्मानजनक व दूसरों में उनसे मित्रता करने की लालसा बढ़ाने पर बल देना चाहिए। उन्हें शिक्षित होना चाहिए। इसके लिए केवल साधारण अक्षर ज्ञान से काम चलने वाला नहीं क्योंकि हममें से

बहुतों को ज्ञान क्षेत्र में ऊंचाइयाँ छूनी हैं जिससे कि पूरे दलित समाज की ख्याति उनकी दृष्टि में बढ़े। इस दयनीय संतुष्टि की मानसिकता को समाप्त करने की आवश्यकता है तथा आत्म उत्थान के लिए अति आवश्यक दैवी असंतुष्टि की भावना को जागृत करना है। और सबसे महत्वपूर्ण बात यह है दलितों को प्रोत्साहित कर उत्साहित किया जाए कि वे अपना भय पूर्णतया त्याग कर दूसरे सभी की भांति मानवीय अधिकारों का प्रयोग करें। अपने हाथों में राजनैतिक शक्ति के आने से इन परिणामों का शुभागमन अपने आपसे नहीं होगा। हमें यह भली भांति समझ लेना होगा कि राजनैतिक शक्ति तो केवल परिणाम प्राप्त करने को साधन मात्र है। कहीं दलित वर्ग यह सोचने की घातक भूल न कर बैठें कि कुछ दलितों के परिषद में स्थान पा लाने मात्र से ही सब दलितों का उद्धार हो जायेगा तथा वे दलित न रहेंगे, मैं समय रहते यह चेतावनी देना आवश्यक समझता हूँ। यह दलितों के उत्थान का कार्य तो स्वर्गीय गोखले की भारतीय समाज सेवक या स्वर्गीय लाला लाजपतराय द्वारा स्थाापित लोक समाज सेवक संस्थाओं को आदर्श प्रतिमान स्वीकार कर दलित समाज की संस्थाओं का दायित्व बनता है।

36. निष्कर्ष:

सज्जनो, मुझे खेद है कि निश्चय ही मैंने आपको इस लम्बे वक्तव्य से चिंता में डाल दिया है। मैं हमेशा संक्षिप्तता को ध्येय मानता हूँ फिर भी ऐसे अवसरों पर जहाँ राजनीति से अपरिचित लोग पहली बार महत्वपूर्ण निर्णायक विषयों पर चर्चा कर रहे हों, समस्या के सब पहलुओं को सामने रखना ही उचित होता है। आपका पूरा मार्गदर्शन कर सकने की इच्छा से व्याख्यान इतना लम्बा हो गया। मेरी इच्छा है कि यह हमारी अंतिम सभा न होकर एक महान आन्दोलन की शुरूआत होगी जिसके परिणामस्वरूप हमारे देश में एक ऐसे समाज व राज्य की स्थापना होगी जहां राजनीति, सामाजिक व उद्योग और संपदा विकास क्षेत्रों में समता होगी तथा हमारे लोगों की मुक्ति होगी।

मुझे सम्मानित करने और ध्यापूर्वक सुनने के लिए मैं पुनः आपका धन्यवाद करता हूँ।''[1]

● ● ●

6

सवैंधानिक सुरक्षा के उपाय और गारंटी सुनिश्चित करें

''डॉ. पी.जी. सोलंकी की अध्यक्षता में टाउन हाल बम्बई में इस सप्ताह के अंत* में एक विशाल सभा का आयोजन हुआ। इसमें बम्बई दलित वर्ग के गुजरातियों व मराठों ने भाग लिया। यह सभा अभी कुछ दिन पहले दलित वर्ग काँग्रेस के नागपुर अधिवेशन में चर्चित विषयों तथा मांगों को समझाने के उद्देश्य से बुलाई गई। काँग्रेस के अध्यक्ष डॉ. बी.आर. अम्बेडकर मुख्य वक्ता थे।

डॉ. अम्बेडकर ने दलितों के लिए संवैधानिक सुरक्षा के उपायों और उनकी गांरटी सुनिश्चित करने से संबंधित विषयों पर विस्तार व्याख्या की। उन्होंने बलपूर्वक उनसे अवज्ञा आन्दोलन से दूर रहने के लिए कहा।

●●●

* सभा की तिथि का उल्लेख नहीं था—संपादक

1 टाइम्स ऑफ इंडिया, 2 सितम्बर, 1930

7

वर्तमान से अधिक संगठित और ज्यादा आंदोलित बनें

दलितों की एक आध्यात्मिक संस्था ''संत समाज संघ'' का 36वां वार्षिक सम्मेलन 27 सितम्बर, 1930 बृहस्पतिवार को पूना में आयोजित किया गया। इसमें डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की पूर्व निर्धारित व्यस्तता के कारण अनुपस्थिति में श्री बी. जी. जगताप, प्राचार्य शिवाजी मराठा उच्च विद्यालय ने अध्यक्षता की।

श्री के.जी. पातड़े, सचिव, दलित वर्ग शिष्ट मण्डल समिति, पूना ने सभासदों को संबांधित कर संघ व इसके कार्य के बारे में जानकारी देते हुए कहा कि संघ का संदेश दलित वर्ग को सामाजिक समता दिलाना है। समाज के लोगों तथा दलितों में एकता लाना ''संत समाज संघ'' संस्था का नैतिक दायित्व है। उन्होंने डॉ. अम्बेडकर और सूबेदार घाटगे की भूरि–भूरि प्रशंसा की और कहा कि उनके विचार से दलित वर्ग के प्रतिनिधित्व के लिए सूबेदार घाटगे को बम्बई विधान परिषद में भेजना उनके हित में होगा।

इस समय तक डॉ. अम्बेडकर भी पंहुच गये थे तथा उन्होंने अपना स्थान ग्रहण कर लिया था। अतः जब वे सभा को संबोधित करने के लिए उठे, तो वातावरण उनके जय–जयकार से गूंज उठा। अपने संबोधन में उन्होंने कहा कि जितना कुछ वे अपने निजी प्रयास से कर पा रहे थे दलितों की शिकायतों को दूर करने के लिये अपर्याप्त है। इसलिए ''और अधिक संगठित होकर और ज्यादा उत्तजित होकर आन्दोलन करो'' का संदेश दिया। डॉ. अम्बेडकर ने जोर देकर कहा कि गोलमेज अधिवेशन में वे ब्रिटिशों को दलितों की समस्याओं से अपने सामर्थ्य के अनुरूप पूर्णतया अवगत कराकर उनके लिए अधिकतम अधिकार सुनिश्चित करेंगे।[1]

● ● ●

1 टाइम्स ऑफ इडिया, दिनांक 29 सितम्बर, 1930

8

अन्यथा उन्नत हिन्दू जातियाँ सत्ता में रहेंगी और अल्पसंख्यकों पर शासन करती रहेंगी

बम्बई दलितों के लगभग 10,000 पुरुष तथा महिलाएं बृहस्पतिवार, 2 अक्तूबर, 1930 को दामोदर ठाकरसे हाल, परेल, बम्बई के बाहर मैदान में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, जो गोलमेज अधिवेशन में दलित लोगों के प्रतिनिधि के रूप में शनिवार को इंगलैंड को प्रस्थान कर रहे थे, को शुभ विदेश यात्रा की बधाई देने एकत्रित हुये। इस सभा में बहुत उमंग दिखी व जिसका सभापतित्व डॉ. पी.जी. सोलंकी ने किया था।

सभापति ने भाषण के प्रारम्भ में ही दलितों के लिए डॉ. अम्बेडकर द्वारा कई प्रकार की सेवाओं के बारे चर्चा की और आश्वस्त किया कि गोलमेज अधिवेशन में दलितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए डॉ. अम्बेडकर से बढ़कर योग्य कोई दूसरा नहीं। उन्होंने अपनी और पूरी जनता की ओर से डॉ. अम्बेडकर की सुखद लम्बी विदेश यात्रा तथा दूरगामी उद्देश्य की सफलता की कामना जताई।

तत्पश्चात श्री शिवतरकर ने डॉ. अम्बेडकर को जनता की शुभकामनायें अपने भाषण के माध्यम से दी ।

इसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने सभा को विस्तार से संबोधित किया। उन्होंने दलितों के राजनैतिक तथा सामाजिक कल्याण संबन्धी विषयों पर दलितों का रुझान बनाये रखने के लिए लगातार प्रचार की आवश्यकता पर बल दिया। उन्होंने घोषणा की कि दलितों के नेताओं ने उनकी पुरानी पत्रिका को नये नाम ''जनता'' से पुनर्जीवित करने का निर्णय लिया है।

डॉ. अम्बेडकर ने इंगलैंड की आगामी यात्रा के संबंध में कहा कि कांग्रेसी कह रहे हैं कि गोलमेज अधिवेशन का कोई लाभ नहीं होगा परन्तु उनका अपना मानना था कि इस अधिवेशन में कुछ अच्छा होना सुनिश्चित है तथा दलितों को तो इससे अवश्य लाभ मिलेगा ही। मैं बम्बई के कांग्रेसियों की कार्यप्रणाली का सहभागी नहीं बन सकता, क्योंकि उसके प्रभाव से हजारों लोग बेरोजगार हो रहे हैं और उससे देश का भी कोई भला नहीं हो रहा।

वे बिना संकोच कह सकते हैं कि दलित भी कांग्रेसी की तरह ही स्वराज्य की मांग करते हैं परन्तु उन्हें और देश के अल्पसंख्यकों को भी देश के नये संविधान में उचित तथा सम्मानजनक अंश मिलना चाहिए। कांग्रेस की सोच ऐसी प्रतीत होती है कि ब्रिटिशों को नये संविधान के अंतर्गत देश के प्रशासन को जैसे का तैसा छोड़कर चले जाने का यह अर्थ है कि सवर्ण उन्नत हिन्दू समुदाय सत्ता में बना रहेगा तथा

वे अल्पसंख्यकों पर प्रभुता बनाये रखेंगे। दलित वर्ग इसी बात का विरोध करते हैं। उन्होंने घोषणा की कि अगर सवर्ण उन्नत समाज के इस दृष्टिकोण से गोलमेज अधिवेशन वार्ता असफल होती है तो इसके लिए कांग्रेस तथा सवर्ण उन्नत हिन्दू ही दोषी होंगे। उन्होंने आश्वासन जताया कि गोलमेज अधिवेशन वार्ता के हिन्दू विशिष्ट प्रतिनिधि अगर वार्ता की सफलता चाहते हैं तो वे अल्संख्यकों द्वारा उठाई मांगों को स्मरण रखेंगे। आगे डॉ. अम्बेडकर ने बताया कि उनकी इंगलैंड में कुछ ज्यादा दिन रुककर आवश्यक कामों को निपटाने की मंशा थी। दलित वर्ग की दो बड़ी शिकायतें थीं कि दलितों की पुलिस तथा फ़ौज में भर्ती पर रोक थी और वे यह शिकायत युद्ध कार्यालय तथा ब्रिटिश मंत्रालय के सामने रखना चाहते थे ताकि यह रोक हट सके। वे दलितों के हित में प्रचार करने रूस, जर्मनी, अमेरिका व जापान भी जाना चाहते थे। कांग्रेस इन देशों में इंगलैंड के विरुद्ध प्रचार कर रही थी। इसलिए, बाबा साहेब भारत में दलितों की वस्तुस्थिति से इन देशों के लोगों को परिचित कराने के पक्षपर थे और उनकी दलितों के प्रति सहानुभूति प्राप्त करने को उचित मानते थे।

तत्पश्चात श्री केलुसकर और श्री नायक ने सभा को संबोधित किया[1]। यद्यपि डॉ. अम्बेडकर ने कई और विषयों पर चर्चा की थी जिसका कीर के अनुसार प्रलेखन किया जो नीचे वर्णित हैं।

—संपादकः

इस सम्बोधन के उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उनकी थोड़ी बहुत सफलता का श्रेय असंख्य लोगों तथा सहकर्मियों के सहयोग को जाता है। उन्होंने डॉ. सोलंकी द्वारा विधान परिषद में उनकी सहायता और उनके अच्छे कार्य की प्रशंसा की तथा देवराव नायक को अपना दाहिना हाथ कहा और यह विश्वास जताया कि उनकी अनुपस्थिति में देवराव नायक उनके द्वारा चलाये गए आन्दोलन को सही दिशा प्रदान करेंगे। उन्होंने श्री शंकर राव एस. पार्शा का विशेष रूप से आन्दोलन पर भारी धन राशि खर्च करने के बारे धन्यवाद ज्ञापन किया।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि गोलमेज अधिवेशन निश्चय ही दलितों के हित में है। उन्होंने आगे कहा कि जहां तक मेरा प्रश्न है मैं अपने लोगों के लिए न्यायोचित मांग करूंगा और स्वराज की मांग का समर्थन करूंगा। अंत में उन्होंने भरोसा दिलाया कि अगर संभव हुआ तो दलितों की समस्या राष्ट्रों की महापंचायत के समक्ष रखेंगे। उन्होंने अपने सहयोगियों तथा लोगों को चेतावनी देते हुए कहा कि आपसी झगड़ों से बचें अन्यथा नेतागीरी का लालच उनकी शक्ति को कम कर उनकी स्थिति और खराब कर उनके ध्येय का अहित करेगा।''[2]

● ● ●

[1] टाइम्स ऑफ इडिया, 3 अक्तूबर, 1930

[2] कीर, पृष्ठ 145

9

तुम्हे शक्ति तथा सम्मान संघर्ष से मिलेगा

गोलमेज अधिवेशन के दूसरे सत्र की सभा में अछूतों के प्रतिनिधि के रूप में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को सम्मलित होना था। उनको भारत से लन्दन के लिए 15 अगस्त 1931 को प्रस्थान करना था। इसके उपलक्ष में 14 अगस्त 1931 को सर कावसजी जहांगीर हाल में एक विदाई समारोह का आयोजन किया गया था। इस सभा की अध्यक्षता डॉ. पी.जी. सोलंकी ने की। डॉ. अम्बेडकर ने दो अलग अलग सभाओं, एक महिलाओं के लिए शाम 8 बजे तथा दूसरी पुरुषों के लिए रात्रि 10 बजे, को संबोधित किया।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने एक उत्तेजक भाषण से दलित वर्ग की महिलाओं का संबोधन किया। उन्होंने आवाहन करते हुए कहा ''अगर आप अपनी दासता को जड़ से समाप्त करने के लिए परेशानियां तथा कठिनाइयों को झेलने के लिये तत्पर हैं और अगर यह कठिन कार्य करने में मैं सफल हो जांऊ तो इसका श्रेय आप लोगों को होगा।''

इसके तुरन्त बाद इसी स्थल पर उन्होंने दलित वर्ग के पुरुषों को संबोधित किया। बड़े भावुक होते हुए उन्होंने कहा कि उन लोगों के असीम प्यार से वे बहुत प्रोत्साहित हुए हैं। जहाँ तक गोलमेज अधिवेशन का प्रश्न है उन्होंने कहा, ''125 सदस्यों की सभा में हम केवल दो लोग आपके प्रतिनिधि होंगे परन्तु आप निश्चित रहें कि हम तुम्हारे जन कल्याण के लिए जमीन आसमान एक कर देंगे। आज अपराह्ण में मेरी गांधी से बातचीत हुई थी। अभी तुम्हारे हित में वो कुछ भी नहीं कर सकते। हमें स्वावलंबी बनना होगा और अपने अधिकारों की लड़ाई स्वयं अपनी क्षमता से लड़नी होगी। अतः अपना आन्दोलन जारी रखो तथा अपनी शक्तियों को सुव्यवस्थित करो। शक्ति और सम्मान तुम्हें संघर्ष से मिलेगा।''[2]

● ● ●

[1] जनता, 17 अगस्त, 1931

2 कीर, पृष्ठ 168

10
हिन्दुओं की आगामी पीढ़ियाँ मेरी सेवाओं को सराहेंगी

गोलमेज सम्मेलन में शामिल होने के बाद डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के आगमन की पूर्व संध्या पर सरकार ने बलार्ड पीयर बम्बई की व्यवस्था पर निम्न आदेशदिये थे :–

मौलाना शौकत अली और डॉ. अम्बेडकर का एस.एस. 'मुल्तान' समुद्री जहाज द्वारा 29 जनवरी 1932 को आगमन –

अधीक्षक, "एच व आई" विभाग

"सचिव बम्बई बन्दरगाह ट्रस्ट द्वारा सचिव, दलित वर्ग संस्थान, बम्बई को लिखित पत्र की प्राप्ति आपको सूचनार्थ प्रेषित की जाती है। इससे आप को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर और मौलाना शौकत अली को बलार्ड स्तंभ पहुंचने पर दलित वर्ग और खिलाफत समिति को दी गई छूट के बारे में जानकारी मिलेगी।

2. आप बाड़ा के बन्दरगाह प्रबन्धक बन्दरगाह के इस माह की 27 तारीख की टिप्पणी, जिसकी एक प्रति सीधे आपको प्रेषित कर दी गई है, पर ध्यान दें और तदानुसार अपनी व्यवस्था करें। सचिव है दलित वर्ग और सचिव खिलाफत समिति से हुई सहमति के अनुसार वैसी ही व्यवस्था की जाये जैसी श्री गांधी के लिए की गई थी। दलित वर्ग के स्वयंसेवकों को सड़क मार्ग पर हाल के प्रवेश द्वार से हरे द्वार तक पंक्तिबद्ध खड़े होने दिया जाये। आवश्यकतानुसार अधीक्षक सामान्य यातायात में बाधा न आने देने के लिए स्वयंसेवकों को निर्धारित स्थानों पर खड़ा करें। जहाज–घाट पर किसी को जाने की अनुमति जब तक नाव को घाट पर रस्से से बांध न लिया जाए, न दी जाए। पासधारकों के अलावा, किसी को भी जहाज तक जाने के लिये चुंगी हाल के अन्दर प्रवेश न करने दें।

3. अन्य गोलमेज अधिवेशन समितियों के सदस्यगण जो इसी नाव से पहुंच रहे हैं के विरोध में काँग्रेस प्रदर्शन की सम्भावना है। अधीक्षक 'अ' विभाग व्यवस्था बनाये रखने के लिए सुनिश्चित कार्यवाही करें। किसी भी परिस्थिति में किसी विरोध पूर्ण प्रदर्शनकारी को बलार्ड स्तंभ की सीमा के आस–पास न फटकने दिया जाए।

4. मोल क्षेत्र के यातायात को व्यवस्थित करने के लिए टी विभाग से 3 अधिकारी लिये जाएंगे। मोटर कार पहले की तरह पार्क की जाएंगी।
5. विरोध पूर्ण प्रदर्शनकारियों के लाल द्वार से प्रवेश पाने के प्रयास की संभावना से इनकार नहीं किया जा सकता। इस बिन्दु पर पर्याप्त सुरक्षा का इंतजाम किया जाये।
6. हाल के भीतर प्रवेश के लिए अनुमति पत्र की एक प्रति संलग्न है।
7. मौलाना शौकत अली और डॉ. अम्बेडकर को जहाज से प्रातः 7:15 से 7:30 प्रातः के बीच उतरने की व्यवस्था की गई है और दोनों संगठनों के सचिवों को बलार्ड स्तंभ प्रातः 8:30 से पहले खाली करने की सूचना दे दी गई है। विशेषाधिकार समिति के सदस्य प्रातः 8:30 से प्रातः 9:00 के बीच बलार्ड स्तंभ से राज भवन के लिए कार से प्रस्थान करेंगे। 'राज भवन' कारें प्रातः अनुमानित 8:30 बलार्ड स्तभं स्थल पर लाल द्वारा से प्रवेश करेंगी।
8. एस.एस. ''मुलतान'' संभवतः प्रातः 4 बजे बलार्ड स्तंभ पर पहुंचेगा। डॉक नाव के समय से पहले पहुंचने पर डाक गाडियों, कुलियों और डाक कर्मचारी आदि को प्रवेश देने के लिए हरे द्वार को पोर्ट टस्ट द्वारा जल्दी खोल देने का प्रचलन है। इस अवसर पर ऐसा नहीं किया जावेगा तथा डाक घर कर्मचारी लाल द्वार से सीधे बलार्ड स्तंभ पहुंचेगे। संभवतः इस कारण हरा द्वार खोलने से पहले लाल द्वार तथा बलार्ड स्तंभ पर अतिरिक्त चौकसी बरतनी होगी।

( )

उपायुक्त पुलिस, बंदरगाह[1]

प्रति

उप अधीक्षक, बलार्ड

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर 4 जनवरी, 1932 रविवार को लन्दन वापस पहुंचे। 15 जनवरी , 1932 को उन्होंने लन्दन छोड़ा और मार्सेसिल्स से जहाज में बैठकर 29 जनवरी, 1932 को बम्बई पहुंचे। जहाज पर विशेषाधिकार समिति के ब्रिटिश सदस्य थे। वे ब्रिटिश प्रधान मंत्री ने नियुक्त किये थे, जिनमें डॉ. अम्बेडकर भी एक सदस्य के नाते शामिल थे। सदैव की भांति डॉ. अम्बेडकर के सामान में उनकी खरीदी नई पुस्तकें, 24 डिब्बों में उनके साथ थीं।

डॉ. अम्बेडकर के जहाज को प्रातः 6 बजे तट पर लगना था। प्रभात से ही उनके समर्थकों तथा प्रशंसकों की अपार भीड़ उनके आने का उत्सुकता से इंतजार कर रही थी। कुछ दलित नेताओं जिनमें राजनैतिक तौर पर गांधी से जुड़े पी. बालू व काजरोलकर भी शामिल थे, ने जहाज पर डॉ. अम्बेडकर के मार्लापण किया तथा उनके मंगल की कामना की।

डॉ. अम्बेडकर तथा उनके सहयात्री मौलाना शौकत अली मोल स्टेशन पर उतरे। करतलों की गड़गडाहट भरी ध्वनि से मुस्लिम नेता व दलित नेता का स्वागत हुआ। मुस्लिम नेता ने मुस्लिमों व दलितों की अपार भीड़ को संबोधित करते हुए कहा कि हर कोई आन्दोलन के सिद्धांत को सर्वोपरि माने और डॉ. अम्बेडकर की आन्दोलन के प्रति निष्ठा की खूब प्रशंसा की। जन समूह ने शौकत अली व डॉ. अम्बेडकर को विशाल जुलूस में बायकुला तक घुमाया।

डॉ. अम्बेडकर अब दलित वर्ग के लिए शक्ति, आशा व महत्वाकांक्षा का एक प्रतीक बन गए थे। यह अब सर्वविदित था कि उनका दमन संभव नहीं था। उन्होंने योग्यतापूर्वक दलितों का नेतृत्व एक नये आयाम तक पहुंचा दिया। दलितों में एक नई शक्ति, नया खून तथा नया जोश स्पष्ट दिखता था। यह शक्ति, दूरदृष्टि व सर्तकता दलितों के भविष्य की कठिनाइयों तथा आपात स्थिति के समय में सहनशक्ति प्रदान करेगी।

उसी शाम परेल, बम्बई में एक अपार जन समूह की सभा में डॉ. अम्बेडकर को 114 संस्थाओं द्वारा एक संबोधन द्वारा सम्मान किया गया।''[2]

[1] फाईल सं: 3447/एच/III–32–37

[2] कीर, पृष्ठ 193

सम्मान पत्र

'' डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

एम.ए. पीएच.डी., डी.एस.सी., बार एट लॉ,

एम.एल.सी. प्रतिनिधि, भारतीय, गोलमेज अधिवेशन

के सम्मान में

मान्यवर

हम सब नीचे दर्शाये गए संगठन भारत के दलित वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हुए हमारे विधिसम्मत अधिकारों की मान्यता के लिये आपके कठोर संघर्ष हेतु आपके भारत आगमन पर हार्दिक स्वागत करते हुए गर्व व हर्ष अनुभव कर रहे हैं। आपने द्वितीय गोलमेज अधिवेशन में समुद्र पार दलित वर्ग की न्यायोचित मांगे पूरी तरह उठाई जिसमें बाकी सबके समरूप सम्मान व समता का अधिकार मांगा। हमें भय था कि हमारा पक्ष अगर इतने जोर से न रखा गया होता तो हमारे हक की उपेक्षा कर दी जाती। आपने हमारे अधिकारों की रक्षा के लिए मनुष्य शक्ति में संभव था सब किया। हमे पूर्ण विश्वास है कि लन्दन में आपके कठिन प्रयासों का परिणाम हमें निकट भविष्य में मिलेगा तथा हम सब भारत की बहुसंख्यक सवर्ण जातियों व समुदायों के लोगों से समता प्राप्त कर पाएंगे।

हमें निःसंकोच यह कहने की अनुमति प्रदान करें कि गोलमेज अधिवेशन में हमारा प्रतिनिधित्व आपसे बेहतर कोई नहीं कर सकता था। आपका राव बहादुर श्रीनिवासन के साथ मिलकर किया गया कार्य हमारे लक्ष्य प्राप्ति में बहुत महत्वपूर्ण रहा। लन्दन तथा दूसरे स्थानों पर सशक्त भाषणों के माध्यम से आपने दुनिया भर को जता दिया कि दलित वर्ग एक विशाल अल्पसंख्यक समाज है और उनके अलग प्रतिनिधित्व के बिना उनका हित सुरक्षित नहीं होगा। इस बात का श्रेय भी आपको जाता है कि आपने कांग्रेसी नेताओं की अविश्वसनीयता को उजागर कर दिया जो दलित वर्ग के प्रति झूठी सहानुभूति दर्शाते हैं। श्रीमान जी, अभी विशेषाधिकार समिति के सदस्य के नाते दलित वर्ग को अधिकार दिलाने के कार्य को और प्रगति प्रदान करें क्योंकि यह समिति शीघ्र ही कार्य शुरू करेगी। हमें पूर्ण विश्वास है और आपको स्मरण कराना चाहते हैं कि विशषाधिकार समिति के समक्ष तथा देश के संविधान के निर्माण में आप अपने भाइयों के लिए समानता तथा सम–प्रतिष्ठा के अधिकार से कम पर संतुष्ट नहीं होंगे।

हम युगों से दमन, शोषण तथा तानाशाही से पीड़ित हैं व आपका सामाजिक जीवन के क्षितिज पर उदय होना स्वर्ण अक्षरों में लिखा जाएगा ऐसी हमारी सोच है। महाड, नासिक तथा दूसरे स्थानों पर आपने हमारे भीतर साधारण मानवीय अधिकारों के प्रति हमारे अधिकार और दावे की जो जागरूकता पैदा की है उससे हमें नया जीवन व एक नई मनोदशा मिली है और हमने अपनी हीन भावना को कहीं दफना कर भुला दिया है। पूरे देश में हमारा समुदाय कर्तव्य परायण है और अपने अधिकारों की मांग के लिए जूझने को तत्पर हैं। इसे कहने में कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी कि यह सब आपके कठिन परिश्रम तथा मार्ग दर्शन का ही फल है। हमें भली भांति ज्ञात है कि हमारे समाज के ऐसे विरले ही साथी हैं, परन्तु आप तो इस समुदाय के लिए महान बलिदान दे रहे हैं।

यह दोहराना आवश्यक है कि हमारे हित, राजनैतिक हों या दूसरे, आपके हाथों में पूर्णतया सुरक्षित हैं और हम सब केवल आपमें पूर्ण आस्था रखते हुए विश्वस्त हैं कि आप इस कुचले हुए व शोषित समुदाय को मुक्ति दिलाने में सफल होंगे।

हम हैं,

आपके सच्चे समर्थक

1. सामाजिक एकता सेना (बम्बई प्रेसीडेंसी)
2. मित्र संघ, पेलिसले मार्ग
3. सोमवंशीय आबालवृद्ध सेवा मंडल
4. बहिष्कृत सेवा मंडल
5. महाराष्ट्र बलवीर शिक्षण प्रसारक मंडल
6. बहिष्कृत हितचिंतक सेवा मंडल
7. दक्षिण भारतीय आदि–द्राविड़ महाजन सभा
8. महिला मंडल, बम्बई
9. महार समाज सेवा संघ
10. सतारा जिला युवक संघ
11. नगर जिला बहिष्कृत सेवा संघ
12. युवक संघ सामाजिक जलसा
13. ट्रामवे कम्पनी कार्यषाला दलित वर्ग संगठन
14. नवरंग सिगरेट कम्पनी, दलित वर्ग
15. बहिष्कृत महिला सेवा मंडल
16. बड़ा चाल सेवा संघ
17. रत्नागिरी जिला सामाजिक समता संघ
18. गुजरात दलित वर्ग संघ
19. पूना जिला दलित संघ
20. पूना जिला बहिष्कृत संघ
21. सतारा जिला सामाजिक समता सेना

22. बहिष्कृत दलित वर्ग संघ
23. बहिष्कृत दलित वर्ग नवयुवक संघ
24. पेवालाती सहकारी मंडल
25. धोबी तलाव सोमवंशीय मंडल
26. धोबी तलाव सोमवंशीय महिला मंडल
27. 'फ' वार्ड बहिष्कृत सेवा मंडल बम्बई
28. टाटा मिल्ज खोली, महार पंच
29. कोकन प्रांतिक चैम्बर परिषद
30. फोरास मार्ग सिमेंट खोली पंच
31. मझ गांव खड्डा पंच
32. जूना ढोर खोली, पंच
33. बाटात्याची खोली, पंच
34. फोरास मार्ग, ब्लाक संख्या 1 से 3 दलित वर्ग कोठड़िया
35. नवी धार खोली पंच
36. सोमवंषीय निराश्रित शिक्षण वर्धक समाज
37. सोलापुर जिला महार सेवा संघ
38. सतारा जिला विते तालुका पंच
39. बहिष्कृत सहकारी संघ
40. दलित वर्ग काश्तकार, बी.डी.डी. ब्लाक नं. 7
41. महाराष्ट्रीय पुरातन महार उन्नति संघ
42. सतारा जिला दलित वर्ग संघ
43. गुलाबवाड़ी पंच मंडली

*44 भंडारा समाज संघ

45. भारतीय तरुण युवक संघ बहिष्कृत
46. श्री सोमवंशीय मंडली
47. नईगांव खोली नवा साह कुम्फोर पंच
48. बहिष्कृत हितवर्धक समाज
49. पिंपरी सय्यद नाशिक तालुका जलसा, काम्पू
50. रोहिदास ज्ञानदेव समाज
51. चर्मकार महिला मंडल
52. चर्मकार सुधारक मंडल
53. महार युवक संघ विंचूर
54. नई गांव सामाजिक समता संघ
55. बहिष्कृत भजन समाज वडाला
56. चन्दनवाड़ी महिला मंडल
57. चन्दनवाड़ी दलित वर्ग संघ
58. सोलापुर जिला तालुका कर्माले हितवर्धक समाज
59. सतारा जिला बलवीर सैनिक दल
60. ठाणा जिला दलित वर्ग संघ
61. बांद्रा कटवाड़ी वरूदे मंडल
62. नासिक युवक संघ
63. नईगांव बी.डी.डी. ब्लाक खोली किराएदार संघ
64. बी.एण्ड सी. आई. रेलवे दलित वर्ग संघ
65. नासिक जिला मध्यवर्ती मंडल
66. मध्यवर्ती समता सैनिक दल

---

[4] यह भंडारी हो सकता है – संपादक

67. भारतीय समाज सेवा मंडल
68. रावनगांव दलित वर्ग संघ
69. अत्पाड़ी दलित वर्ग संघ
70. कुलाबा जिला दलित वर्ग संघ
71. ट्रामवे सहकारी संघ खोली किरायेदार संघ
72. सामाजिक समता संघ
73. जांगिड़ा बहिष्कृत प्रजा चिरोल मंडल
74. दादर महिला मंडल
75. नवयुवक मंडल अहमदाबाद
76. धारवाड़ जिला दलित वर्ग संघ
77. बेलगांव जिला दलित वर्ग संघ
78. कारवाड़ जिला दलित वर्ग संघ
79. मेघवाल सुधारक समाज
80. गुजरात दलित सुधारक मंडल
81. सतारा जिला तरुण सेवा मंडल
82. रविदास तरुण मंडल ठाणे
83. सोमवंशीय सन्मार्ग दर्षन संघ कल्याण
84. ठाणे जिला चर्मकार आइकेछु मंडल मानिकपुर
85. कमाठीपुरा 13वीं गली भजन समाज
86. बेरार, अस्पृश्य समाज सुधारक सेवा मंडल बेरार
87. सूपा परगना, क्षत्रिय युवक संघ
88. सतारा जिला वंदार मनार संघ
89. बी.पी.टी. बहिष्कृत श्रमिक नवयुवक
90. कर्नाटक मचिगनार संघ
91. कर्नाटक दलित वर्ग युवा संघ

92. दलित वर्ग संघ हुबली
93. चित्रा बाजार, बोरी खोली दलितवर्ग संघ
94. रोहे तालुका महार संघ
95. कमाठीपुरा घुड़साल गली महार संघ
96. अग्रपाड़ा नगर पालिका खोली दलित वर्ग किरायेदार संघ
97. बांद्रा चानी दलित वर्ग संघ भाओगरा
98. बांद्रा पाली बहिष्कृत समाज
99. महार सैनिक भारतीय अधिकारी संघ
100. महिम किला दलित वर्ग संघ
101. रेतीचा धक्का पंच मंडल
102. बी.आई.टी. पोइबावाड़ी खोली दलित वर्ग संघ
103. पनवेल सेवानिवृत महार पंच
104. क्राउन सिगरेट कम्पनी के दलित वर्ग श्रमिक मंडल
105. नाना चौक महार संघ
106. अखिल भारतीय अस्पृश्यता संघ पूना
107. महाराष्ट्र सेवा संघ पूना
108. दक्षिण महाराष्ट्र सत्य प्रसारक मंडल कोल्हापुर
109. मातंग ज्ञानोदय समाज बम्बई
110. अस्पृश्योन्नति मंडल नासिक रोड़
111. मंदिर प्रवेश सत्याग्रह मंडल, नासिक
112. बहिष्कृत हितचिंतक सेवा संघ नासिक रोड़
113. श्री शाहू छत्रपति बोर्डिंग नासिक
114. अस्पृश्य तरुण समता समाज चिड़ाबाजार*

---
*हटोले, पृ. 29–33

अपार जन समूह के सामने जब उनके अपनों ने प्यार व कृतज्ञता दर्शाई तो डॉ. अम्बेडकर बहुत प्रभावित हुए और मंत्रमुग्ध से एक पल के लिए कुछ अचंभित और मूर्तिवत हो गये। एक विराम के पश्चात उन्होंने जनसमूह के सामने घोषणा की, ''मैं जो भी सेवा दे पाया हूँ वह सब कार्यकर्ताओं के सहयोग व लोगों के निडर समर्थन का ही फल है''। उन्होंने कहा कि किसी ध्येय की प्राप्ति या उसकी असफलता के लिए कोई नेता उत्तरादायी नहीं होता, इसलिए अपना संघर्ष बनाए रखें। जहां तक उनका अपना प्रश्न है उन्होंने कहा आखिर वे भी एक मनुष्य है और मानव तो गलतियों का पुतला है। संभवतः, वे कभी पक्षपात कर गये हों। परन्तु उसके लिये उन्हें क्षमा किया जाए।

उन्होंने कहा, ''मैंने गांधी का विरोध किया, इसलिए कांग्रेसी मुझे देशद्रोही की संज्ञा देते हैं। मैं इससे व्याकुल नहीं होता, क्योंकि यह दोषारोपण निराधार, झूठा व दुर्भावना से प्रेरित है। परन्तु दुनिया के लोगों की सोच को एक झटका तब लगा जब गांधी ही आप लोगों की गुलामी की बेड़ियां कटने के हिंसक विरोधियों के प्रवर्तक बने। मैं निःसंकोच कह सकता हूं कि हिन्दुओं की आने वाली पीढ़ियां जब गोलमेज अधिवेशन का इतिहास पढेंगी तो वे मेरी सेवाओं को सराहेंगी'' उन्होंने भेद खोला कि कैसे वे लन्दन में गांधी से चार या पांच बार मिले, कैसे गांधी बड़े रहस्यमय ढंग से पवित्र कुरान पुस्तक हाथ में लिए आगा खां से मिले व दलित वर्ग को समर्थन वापस लेने को कहा और कैसे आगा खां ने ऐसा करने से इन्कार किया*। अन्त में उन्होंने अपने समर्थकों से अनुरोध किया कि वे उन्हें को पूज्य न बनायें, क्योंकि वे स्वयं पूज्य बनाने के क्रम से घृणा करते हैं। सभा समापन के समय उन्होंने नासिक वीरों का सम्मान किया जो तब तक जेल से छूट चुके थे।[1]

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने श्रोतागण का धन्यवाद ज्ञापन करते हुए कहा कि अगर उन्हें सात करोड़ अछूतों का मजबूत समर्थन न मिला होता तो वे गोलमेज अधिवेशन में दलित वर्ग का पक्ष न रख पाते। उन्होंने अपने तथा कुछ विषेष दलित वर्ग के मतभेद का उल्लेख किया तथा उन्होंने विश्वास दिलाया कि वे पूरे दलित समुदाय के हितों को सुरक्षित रखने वाली किसी भी योजना को स्वीकारने को तैयार हैं। गांधी जब दलितों से वार्ता कर रहे थे तो साथ ही साथ अल्पसंख्यकों की समस्या लेकर रहस्यमय ढंग से मुसलमानों से सांठ गांठ में लगे होने को लेकर उन्होने गांधी के दृष्टिकोण की आलोचना की। उन्होंने श्रोताओं को सदैव अपनी शक्ति पर भरोसा रखने को कहा तथा किसी नेता पर आश्रित न होने की सलाह दी। अन्त में उन्होंने नासिक मंदिर में प्रवेश करने वाले सत्याग्राहियो को बधाई दी।[2]

●●●

* जनता : जनवरी, 30, 1932

[1] कीर, पृष्ठ 193.

[2] बम्बई नगरी एस.बी., जनवरी 30, 1932

11

गौतम बुद्ध तथा रामानुज के संघर्ष को सदैव अपनी दृष्टि में रखें

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने विशेषाधिकार समिति के सदस्य के नाते 1932 में मद्रास की यात्रा की। ''28 फरवरी को मद्रास में डॉ. अम्बेडकर का भव्य स्वागत हुआ, जिसमें दलित वर्ग के 10,000 लोगों ने भाग लिया। स्वागत समारोह में मुसलमानों, ईसाइयों व गैर ब्राहमणों ने भी भागीदारी की। दलित वर्ग सेना सेवा के अध्यक्ष ने अध्यक्षता की। लगभग सभी दक्षिण भारत के दलित वर्ग संगठनों, जैसे दलित वर्ग सैनिक सेवा संस्थान, मद्रास प्रादेशिक दलित वर्ग फ़ैडरेशन, आदि द्राविड़ मलयालम सभा, आदि आन्ध्र महासभा, अरुनधात्ये महासभा, केरल दलित वर्ग संघ और मजदूर यूनियन के अध्यक्षों ने सर्वसम्मति से डॉ. अम्बेडकर को सम्मान पत्र भेंट किया।

सभा में डॉ. अम्बेडकर ने पृथक चुनाव नामावली से बदलकर संयुक्त चुनाव नामावली में आरक्षित स्थान को राजा की कलाबाजियों के बारे में बताया। उन्होंने कहा कि राजा को अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ की काम्पटी सत्र में होने वाली सभा से पहले वचनबद्धता नहीं करनी चाहिए थी। उन्होंने इसलिए अछूतों को राजनीतिक शक्ति पर कब्जा करने को प्रोत्साहित किया तथा अलिखित झूठे वादों से बचने की नसीहत दी और कहा कि केवल उन नेताओं का विश्वास करें जिन्होंने स्वयं व्यथाए झेली हैं। अन्त में, उन्होंने श्रोताओं को स्मरण कराया कि गौतम बुद्ध तथा रामानुज जैसे उच्च जातीय स्पृश्य नेताओं ने उनकी स्थिति सुधारने तथा अस्पृश्यता के धब्बे को हटाने के संघर्ष को सदैव अपनी दृष्टि में रखें।''[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ संख्या 196

12
अछूतों को राजनीतिक शक्ति मिलनी चाहिए

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ के दूसरे सत्र की सभा काम्पटी में रखने का निर्णय लिया। स्वागत समिति के प्रधान एल.एन. हरदास ने सभा का महत्व बताने को निम्न परिपत्र जारी किया– सम्पादक

''जैसा आपको विदित है सभा का दूसरा सत्र अग्रिम अप्रैल की 24 व 25 तारीखों को काम्पटी में होगा।

इस सभा का बड़ा भारी महत्व है। इस सत्र में निम्नलिखत विषयों पर चर्चा की जायेगी।

1. गोलमेज़ अधिवेशन में प्रस्तुत अल्पसंख्यक समझौता जिसमें दलित वर्ग के प्रतिनिधि सहभागी हैं।

2. एक केन्द्रीय संगठन की स्थापना जो भारत के दलितों के हित के लिए कार्य करेगा तथा बात करेगा।

अल्पसंख्यक समझौता नये संविधान के अंर्तगत दलित वर्ग के राजनीतिक अधिकारों का मूर्तिरूप है। बहुसंख्यक समुदाय के प्रतिनिधियों ने इसे गोलमेज़ अधिवेशन में स्वीकृति नहीं दी। यद्यपि दलित वर्ग ने इस अल्पसंख्यक समझौते को पूरा समर्थन दिया था। हाल ही में कुछ दलित संगठन जो अपने आपको दलितों के मसीहा कहते हैं और दलितों की बात करते हैं को हिन्दू महासभा ने किन्हीं तर्कों से कायल कर लिया है, इसलिए यह संगठन अल्पसंख्यक समझौते को नकारने लगे हैं। इसलिए, यह अति आवश्यक है कि दलित वर्ग के प्रतिनिधि मिलें तथा बुद्धि जीवी लोग इस अल्पसंख्यक समझौते के प्रावधानों को गहन विचार से पढ़ें, समझें व चर्चा कर अपने निर्णय से अवगत करायें। इस सम्बन्ध में गोलमेज़ अधिवेशन में दलितों के प्रतिनिधि डॉ. बी.आर. अम्बेडकर तथा राव बहादुर आर. श्रीनिवासन भी इस सभा में उपस्थित रहकर अल्पसंख्यक समझौते की परिस्थितियों तथा प्रावधानों की व्याख्या करेंगे।

राव बहादुर एम.सी. राजा तथा श्री जी. ए. गवई को आमंत्रित करने का भी प्रस्ताव है ताकि अल्पसंख्यक समझौते को पारित करने से पहले उनके विचार जानने का लाभ हमें मिल सके।

इस सभा को बुलाने का दूसरा प्रयोजन उतना ही महत्वपूर्ण भी है। इसकी विस्तार से चर्चा करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि आप जानते हैं कि कैसे राजनीतिक विषयों पर दलितों की राय का गलत प्रस्तुतीकरण किया जा रहा है। इन षड़यन्त्रों को समाप्त करने के लिए एक केन्द्रीय संगठन को तुरंत गठित करने की आवश्यकता है और दलित वर्ग से संबंधित विषयों पर टीका टिप्पणी के लिए, केवल इस संगठन का प्रवक्ता ही अधिकृत हो।

अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ नाम की संस्था द्वारा अपनाई जाने वाली चालों को रोकने के उद्देश्य से इस सभा को बुलाना आवश्यक है। समाचार पत्रों में छपा था कि इस संघ की कार्यकारिणी समिति को सभा गत 21 व 22 फरवरी को दिल्ली में हुई थी। इस सभा में संयुक्त या पृथक निर्वाचक मंडल तथा नये संविधान में दलितवर्ग को कितने आरक्षित स्थानों का प्रस्ताव किया जाए। किन्तु इन विषयों पर कोई निर्णय नहीं लिया जा सका। इसलिए, इस संघ की कार्यकारिणी ने निर्णय लिया कि दलित वर्ग के मुख्य नेताओं का अधिवेशन इन विषयों पर चर्चा के लिए नागपुर बुलाया जाये। ऐसी आशा थी कि अधिवेशन रखा जाएगा परन्तु अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ ने अघोषित बताये कारणों से यह अधिवेशन नहीं बुलाया। इन परिस्थितियों में दलित वर्ग की जनता की लामबंदी तथा एक निश्चित राय बनाने के लिए यह सभा बुलाना अति आवश्यक हो गया है, जिससे न ही कोई शरारत हो सके और न ही किसी चाल से कोई नुकसान हो और इन बड़े महत्वपूर्ण विषयों पर जनता की राय कायम करने का अवसर मिल सके।

इसलिए मैं आशान्वित हूं कि इस सत्र के महत्व को ध्यान में रखते हुए आप इस सभा के लिए अवश्य समय निकालेंगे तथा उपस्थित रहेंगे।

आपका विश्वसनीय,

एल. एन. हरदास

अध्यक्ष, स्वागत समिति[1]

"डॉ. बी. आर. अम्बेडकर शिमला से बम्बई 4 मई, 1932 को वापस पहुंचे। तुरंत 6 मई 1932 को वे कलकत्ता मेल में बैठकर अखिल भारतीय दलित वर्ग कांग्रेस संघ की नागपुर के समीप काम्पटी की सभा के लिए प्रस्थान कर गए। डॉ. अम्बेडकर की सुविधा के लिए पहली सभा को स्थगित किया गया था। यात्रा

[1] जनता : अप्रैल 9, 1932

के मार्ग में समर्थक प्रशंसक अछूतों का कसरा से नागपुर के बीच डॉ. अम्बेडकर से मिलने वालों का तांता लगा रहा।

7 मई, 1932 को सुबह 9 बजे रेल गाड़ी ने नागपुर स्टेशन पर प्रवेश किया और ''डॉ. अम्बेडकर अमर रहें'' के नारों से प्लेटफार्म गूंज उठा। कोई 5000 लोगों की विशाल भीड़ ने प्लेटफार्म पर भव्य स्वागत किया। तुलाराम सरवारे विधायक ने डॉ. अम्बेडकर व अन्य नेताओं की प्लेटफार्म पर अगवानी की। शहर दण्डाधिकारी तथा पुलिस अधीक्षक शांति व्यवस्था बनाये रखने के लिए उपस्थित थे।

सभा का पंडाल सजाया गया था और यह 15000 लोगों के लिए पर्याप्त था। भाषण देने के लिए मंच खूब बड़ा था। क्योंकि भारत के चारों कोने से दलित नेता एक महत्वपूर्ण निर्णय लेने को एकत्रित हुए थे। वातावरण में तनाव व उत्तेजना अनुभव की जा सकती थी। निर्धन होते हुए भी इतनी बड़ी संख्या में दलित प्रतिनिधियों का एकत्र होना बहुत आश्चर्यजनक था। यह भी बहुत महत्वपूर्ण था कि यह सभा डॉ. मुंजे व ''राजा मुंजे समझौता'' की घोषणा के तुरंत पश्चात अखिल भारतीय दलित वर्ग संघ के महासचिव श्री गवई को लिखे पत्र में डॉ. अम्बेडकर ने उत्तेजनाजनक भाषा में ललकार कर लिखा था ''अगर तुम्हारी संस्था संयुक्त निर्वाचक मंडल तथा सुरक्षित स्थानों की वकालत करती है तो यह हमारे बीच एक दरार पैदा करेगी तथा हम सबमें संघर्ष की स्थिति होगी'। ऐसा सुनने में आया था कि गवई ने लार्ड लोथियन को इस धमकी के विरोध में आपत्ति जताई थी।

7 मई की संध्या को सभा आरम्भ हुई। लगभग 200 संदेश अल्पसंख्यक समझौते के अनुरूप पृथक निर्वाचक मंडल के समर्थन और ''राजा मुंजे समझौते'' के विरोध में तथा सभा की सफलता के लिए शुभकामनायें जताने को प्राप्त हुए और पढ़कर श्रोताओं को सुनाए गए। बुद्ध महासभा के महासचिव ने शुभकामनाओं का संदेश भेजा और दलितों को बौद्ध धर्म अपनाने की सलाह दी। डॉ. अम्बेडकर की संस्था सुव्यवस्थित थी तथा इसने कड़े अनुशासन का पालन किया। बेचारे राजभोज और उसके समर्थकों को ऐसा समर्थन प्राप्त न था।

अध्यक्ष एल.एन. हरदास ने दलित वर्ग संघ के इतिहास पर प्रकाश डालते हुए दलित वर्ग की एकता को समय की मांग बताते हुए कहा, ''पृथक हरदास नियम से हम तैरेंगे या डूबेंगे''। मुनिस्वामी पिल्ले ने अपने दो घंटे के भाषण में सरकार के व्यवहार से असंतुष्टता दर्शायी तथा विशेषतया, सरकार से दलित वर्ग के प्रतिनिधियों की संख्या में कम से कम दो और प्रतिनिधियों को आमंत्रित करने के लिये कहा।

अगले दिन खुला सत्र आरम्भ हुआ। दलित वर्ग कांग्रेस ने 12 प्रस्ताव पारित किये। अल्पसंख्यक समझौते के अंतर्गत दलित वर्ग की न्यूनतम मांगे हैं और इनमें किसी प्रकार की कटौती सम्भव नहीं। इस संघ के प्रतिनिधियों ने राजा–मुंजे समझौते को नकारा क्योंकि यह दलित वर्ग की भलाई में नहीं था और उन्होंने डॉ. अम्बेडकर तथा राव बहादुर श्रीनिवासन द्वारा गोलमेज अधिवेशन में शानदार सेवाओं की प्रशंसा की।[1]

सभा का सम्बोधन करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''राजनीति की लगाम अछूतों के हाथ में आने की आवश्यकता है। उसके लिए हम सबको संगठित होना होगा तथा राजनीतिक प्रतिष्ठा प्राप्त करनी होगी। अछूत जब तक राजनीति तंत्र पर प्रभुता नहीं पा लेते, भारत से अस्पृश्यता जड़ से नहीं मिटेगी''[2]।

अधिवेशन में, ''इस प्रकार दलित वर्ग कांग्रेस ने घोषणा की कि वे डॉ. अम्बेडकर तथा अल्पसंख्यक समझौते का समर्थन करते हैं''[3]।

● ● ●

---

[1] कीर, पृष्ट 199–200

[2] जनता :14 मई, 1932

[3] कीर, पृष्ट 200

13

मैं अपने सही उद्देश्य के मार्ग से तनिक भी विचलित नहीं होऊंगा (पूना, 28 अप्रैल, 1932)

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर दलित वर्ग प्रतिनिधि गोलमेज अधिवेशन व वर्तमान सदस्य बालिग मताधिकार समिति मई के शुरू में ''अखिल भारतीय अस्पृश्यता विरोधी संघ'' मुख्य कार्यालय नागपुर के आमन्त्रण पर अपने प्रशंसनीय कार्य के लिए संघ से सम्मान पत्र भेंट स्वीकार करने नागपुर पधारेंगें।

उसी समय पूना जिले के दलित समाज ने भी उन्हें सम्मान पत्र भेंट करने का निर्णय लिया है।

सूबेदार आर.एस.घाटगे की अध्यक्षता में एक स्थानीय स्वागत समिति इस उपलक्ष्य की तैयारियों में लगी है''[1]

''काम्पटी की सभा के बाद डॉ. अम्बेडकर पूना, शोलापुर तथा निपानी गये, जहां उन्होंने दलित सभाओं को संबोधित किया। इनमें से पूना का दौरा बहुत महत्वपूर्ण था। वे 21 मई 1932 की शाम पूना पहुंचे। वहां उन्हें एक जुलूस में घुमाया गया। विशाल जुलूस में जन समूह रूढ़िवादिता के विरुद्ध नारे लगाते हुये अहिल्याश्रम के खुले आंगन में पहुंचा। वहां डॉ. बी.आर अम्बेडकर को उनके स्वागत में श्री ए.बी. लाठे की अध्यक्षता में सम्मान पत्र[2] भेंट किया गया। लाठे ने गोपनीय बात को जाहिर करते हुए बताया कि लन्दन में ब्रिटिश राजनेता और उच्च अधिकारी डॉ. अम्बेडकर के बारे में गुप्त रूप से पूछते थे कि क्या डॉ. अम्बेडकर किसी भारतीय क्रांतिकारी दल से सम्बन्ध रखते हैं। लाठे ने आगे कहा कि राष्ट्र की देशभक्त कहलाने वाली पत्रकारिता के लिए डॉ. अम्बेडकर की राष्ट्रद्रोही जैसी छवि बनाना एक बड़ी शर्मनाक बात है। ऐसा सुनने में आता है कि लाठे ने कभी डॉ. अम्बेडकर को आर्टस महाविद्यालय कोल्हापुर के प्रिंसिपल पद की प्रस्तावना की थी, उस याद को ताजा करते हुए उन्होंने यह दृष्टांत दोहराया। उन्होंने डॉ. अम्बेडकर से पूछा कि उन्हें वकालत में कैसी सफलता मिली है? डॉ. अम्बेडकर ने उत्तर दिया कि उनके अनुसार अगर वे दलित वर्ग को मनुष्यों की मान्यता दिला सकते हैं तो वे इसे अपनी सफलता मानेंगे। लाठे ने अन्त में कहा कि डॉ. अम्बेडकर भारत में दलित मानवता के सुधार तथा उन्नति के प्रयास में जुटे

---

[1] टाइम्स आफ इंडिया, 30 अप्रैल, 1932

[2] यह सम्मान पत्र मराठी भाषा में ''पूना जिला दलित संघ द्वारा भेंट किया गया। इस पर 332 पुरुष व 42 महिलाओं के नाम छपे थे। – संपादक

हैं और उनकी सेवाएं ही भारत तथा विश्व के लिए एक बड़ी उपलब्धि हैं।[3]

स्वागत भाषण के उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने कहा ''वर्तमान में मैं इस हिन्दू भारत में सबसे घृणित व्यक्ति हूं। मुझे एक देशद्रोही की संज्ञा दी जाती है तथा हिन्दुओं का शत्रु बताकर बदनाम किया जाता है। मुझे हिन्दू धर्म का विनाशक तथा देश का सबसे बड़ा शत्रु कहा जाता है। परन्तु मेरी इस बात का विश्वास करें कि कुछ समय बाद गोलमेज अधिवेशन की प्रकाशित रिपोर्ट का निष्पक्ष अध्ययन इतिहासकारों द्वारा किया जाएगा तो भविष्य में आने वाली हिन्दू पीढ़ियाँ मेरी देश सेवा की प्रशंसा करेंगी। अगर वे इसे स्वीकार न भी करें तो मुझे इसकी कोई चिन्ता नहीं। उन्होंने बड़े शांत भाव से यह कहते हुए समापन किया, कि मेरी बड़ी सन्तुष्टि इसमें है कि दलित वर्ग की मेरे काम के प्रति अव्यक्त आस्था है और वे मेरे लक्ष्य प्राप्ति में अविभाजित मेरे साथ खड़े हैं। मैं दलितों के यहां पैदा हुआ, उन्हीं में मेरा पालन पोषण हुआ व उन सबके बीच मैं रह रहा हूं, उस दलित वर्ग की मरने तक भी सेवा करने तथा उनके अधिकारों की लड़ाई लड़ने की पूर्ण गंभीरता से प्रतिज्ञा करता हूं। मैं अपने सही उद्‌देश्य के मार्ग से तनिक भी विचलित नहीं होऊंगा और हिंसक तथा मुझे नीचा दिखाने वाले अपने निंदकों की आलोचनाओं की परवाह नहीं करूंगा।[1]

डॉ. अम्बेडकर के भाषण में कई अतिरिक्त पहलू भी थे जो ''बम्बई क्रानिकल'' समाचार पत्र में छपे थे। वे पहलू इस प्रकार हैं –सम्पादक

डॉ. अम्बेडकर ने उत्तर देते हुए कहा, मुझे अपने लोंगों के लिए ''मुझे न मंदिर चाहिए, न पानी के कुएं चाहिए और न ही अंतर्जातीय भोज। मुझे तो केवल सरकारी नौकरी, अनाज, कपड़े, शिक्षा व दूसरे सुवअसर चाहिए।''

वर्ण व्यवस्था के अतिरिक्त भी कई भिन्नताए बनाई गई हैं जैसे शिक्षा में गुण भेद। इनके लिए राजनीतिक सुधारों की आवश्यकता है। इस कारण अब उन्होंने अपने विचारों में परिवर्तन किया था और अब उन्हें विश्वास हो गया था कि सामाजिक सुधारों से पहले राजनीतिक सुधारों की आवश्यकता है।

इसलिए अब वे समुदाय के लिए फिलहाल पृथक निर्वाचक मंडल पर विशेष दबाव बना रहे थे जबकि राव बहादुर राजा और गवई संयुक्त निर्वाचक मंडल की वकालत कर रहे थे।''[2]

● ● ●

---

[3] जनता : 25 जून, 1932

[1] कीर, पृष्ठ सं. 201–202

[2] बम्बई क्रॉनिकल, 23 मई, 1932

14

सामाजिक सुधार से पहले राजनीतिक सुधार को प्राथमिकता दें

दक्षिण भाग के दलित वर्ग ने 24 मई 1932 को बेलगाम में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को सम्मान पत्र भेंट किया। कार्यक्रम का आयोजन निपानी जिला बेलगाम में संपन्न हुआ। अध्यक्षता करते दीवान बहादुर लाठे ने डॉ. अम्बेडकर का परिचय हृदय से एक शक्तिशाली राष्ट्रवादी कहकर दिया। सम्मान पत्र में डॉ. अम्बेडकर के दलित वर्ग के लिए की गई सेवाओं का प्रशस्ति वर्णन था। सम्मान पत्र तथा रू. 500 की थैली भी डॉ. अम्बेडकर को भेंट की गई।

सम्मान पत्र के उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि सामाजिक सुधार से पूर्व राजनीतिक सुधार को प्राथमिकता दें क्योंकि राजनीतिक सुधारों के बिना दलित वर्ग के स्तर में सुधार की कोई गुंजाइश नहीं है। यद्यपि डॉ. अम्बेडकर द्वारा केवल दलितों के भले के लिए किए गये प्रयासों को स्वार्थपूर्ण बताया जा सकता है, परन्तु देश द्वारा उनके साथ किए महान अन्याय के संदर्भ में इसे न्याय संगत ठहराया जा सकता है।

रात्रि में डॉ. अम्बेडकर ने शोलापुर के लिये प्रस्थान किया।[1]

● ● ●

---

[1] टाइम्स आफ इंडिया – 26 मई, 1932

15

अध्यात्मिक भोजन से अधिक भौतिक पदार्थों पर ध्यान दें

पूना पैकेट के बाद सभी अछूत डॉ. अम्बेडकर को सुनने का अवसर पाने को आतुर थे। इस परिस्थिति में वारली, बम्बई के युवकों ने एक जनसभा रखी। यह सभा बी.डी.डी. चॉल के खुले मैदान में बुधवार 28 सितम्बर, 1932 को हुई। इस सभा की अध्यक्षता श्री देवराव नायक ने की ।[1]

डॉ. अम्बेडकर, जिन्होंने अपने ही ढंग से नासिक मंदिर प्रवेश का जोरदार आन्दोलन चलाया था, ने अब अपने आन्दोलन की पतवार की दिशा को तीव्रता से बदल दिया था। उन्होंने अपने लोगों को अपनी सारी शक्ति राजनीतिक ताकत प्राप्त करने में लगाने को प्रेरित किया। डॉ. अम्बेडकर ने सभा संबोधन में कहा :–

''मंदिर प्रवेश आंदोलन का लक्ष्य ठीक था। परन्तु आप आध्यात्मिक भोजन से अधिक भौतिक भलाई पर ध्यान दें। पैसे की कमी के कारण तुम्हें खाने को भोजन नहीं मिलता, पहनने को कपड़े नहीं मिलते, बच्चों की पढ़ाई के अवसर नहीं मिलते और चिकित्सा सुविधा नहीं मिलती। इसलिए, आप राजनीतिक सहभागिता पर ध्यान दें, अपनी शक्ति विकसित करें और जीवन में धन प्राप्ति तथा भौतिक बढ़ोतरी के लिए संघर्ष करें'' डॉ. अम्बेडकर ने श्रोताओं से इस सभा में आंदोलन के मुख्यालय के लिए एक भवन निर्माण के लिए धन जुटाने के बारे में जोरदार अपील की।''[2]

● ● ●

[1] जनता : 8 अक्तूबर, 1932

[2] कीर, पृष्ठ सं. 217–218

16

अपने हाथ में आने वाली शक्ति को अमल में लाओ और उपयोग करो

रविवार, 9 अक्तूबर, 1932 को 10.30 बजे रात बम्बई के इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट चॉल बेलासिस मार्ग पर डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने सभा को संबोधित किया। सामाजिक सेवा संघ के मुख्य कार्यकर्ता श्री बापू साहेब सहस्त्रबुद्वे ने सभा की अध्यक्षता की। श्री एस.एन. शिवतरकर भी उपस्थित थे।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने अपने स्पष्ट तथा जीवन्त कथन में लोगों को समझाया कि कैसे वे एक दूसरी दुनिया की अनदेखी खुषी की चाह में एक मृग मरीचिका की भांति जीवन को संघर्षमय बनाकर जीते रहते हैं और इस दुनिया की भौतिक शक्तियों पर मस्तिष्क नहीं लगाते।

उन्होंने एक हृदय विदारक अपील करते हुए कहा, ''क्योंकि लोग जीवन की भौतिक जरूरतों की अनदेखी करते थे और वे उस ज्ञान जिससे भौतिक पदार्थ पाये जा सकते हैं, से विरक्त हो गये। उससे पूरा देश पिछड़ रह गया और उन्नति पर रोक लग गई। तुम्हारे गले में डली हुई तुलसी के पत्तों की माला तुम्हें साहूकार के चुंगल से छुटकारा नहीं दिला सकती। तुम्हें राम के भजन गाने से मकान मालिक से किराये में कोई राहत नहीं मिल सकती। प्रतिवर्ष पंढरपुर तीर्थ यात्रा से तुम्हें महीने के अंत में वेतन तो नहीं मिल सकता। क्योंकि समाज के अधिकतर लोग जीवन की इन व्यर्थ की रहस्यमयी बातों, रहस्यवाद व अंधविश्वास पर आधारित औपचारिकताओं में लिप्त हैं। कुछ चालाक और स्वार्थी व्यक्ति अपनी समाज विरोधी कारगुजारियों के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त कर लेते हैं। उन्होंने निष्कर्ष निकालते हुए कहा मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि कुछ कर दिखाओ और अपने हाथ जो भी राजनीतिक शक्ति आने वाली है, उसका उपयोग करो। अगर तुम विरक्त रहते हो और अपनी शक्ति का उपयोग नहीं करते तो तुम्हारी चिंताएं अनगिनत होंगी। मेरे मस्तिष्क में एक डर घर किए हुए है कि जिस दासता के विरुद्ध हम लड़ रहें हैं, कहीं वही दासता हमें दुबारा न दबोच ले। क्या हमारी यह जागरूकता थोड़े समय तक ही रहेगी?।[2]

●●●

---

[1] जनता : 15 अक्तूबर, 1932

[2] की, पृष्ठ सं. 213

17

दासता के विचार को त्याग दो

28 अक्टूबर 1932 को 'सर कावसजी जहांगीर हाल' में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को रूसी समाज ने एक सम्मान पत्र भेंट किया। अछूत नेता डॉ. पी.जी. सोलंकी ने सभा की अध्यक्षता की। समता सैनिक दल के स्वयं सेवक व्यवस्था तथा रख रखाव की देखभाल के लिए उपस्थित थे।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने अपने लोगों को मंदिर प्रवेश आन्दोलन तथा पारस्परिक भोज की भूल भुलैया में खो जाने के विरुद्ध चेताया। उन्होंने समझाया कि इससे उनकी दाल–रोटी की समस्या हल नहीं होगी। ''इस मूर्खतापूर्ण धारणा कि तुम्हारी कंगाली तथा विपदा ईश्वर द्वारा निर्धारित है जितनी जल्दी त्याग दो उतना ही तुम्हारे लिए बेहतर है। यह विचार कि तुम्हारी गरीबी अवश्यंभावी है, जन्मजात है तथा मृत्युपर्यन्त है कोरी झूठ तथा गलत है। उन्होने आगे कहा कि अपने आपको दास, समझने वाली विचार–धारा को त्याग दो।[2]

● ● ●

---

[1] जनता : 5 नवंबर, 1932

[2] कीर, पृष्ठ सं. 219

18

भाग्य के भरोसे न रहो, अपनी शक्ति पर भरोसा रखो

शनिवार 18 फरवरी, 1933 को कसारा में ठाणे जिला अधिवेशन की अध्यक्षता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने की। डॉ. अम्बेडकर कार द्वारा बम्बई से कसारा 8 बजे रात्रि पहुंचे। सर्वश्री शिवतरकर, दिवाकर पगारे और गणपत बुवा जाधव छद्मनाम मड़केबुवा, डॉ. अम्बेडकर के साथ गये जबकि श्री. बी.के. गायकवाड़ और के.बी. जाधव, लिम्बाजी भालेराव और रोकड़े नासिक से पधारे। स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री शंकरनाथ बर्वे थे।[1]

मंदिर प्रवेश बिल के संबंध में वक्तव्य देने के बाद डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने आध्यात्मिकता का क्षणिक प्रचलन तथा अंधविश्वास के विरोध में दुष्प्रचार के बारे में कहा कि इन बुराइयों ने दलितों को युगों से शक्ति विहीन किया है और उनकी पौरुषता को समाप्त कर दिया है। रोटी भगवान की पूजा से बेहतर है, कहकर उन्होंने लोगों के मन तथा मस्तिष्क पर छाप छोड़ी। अधिवेशन में डॉ. अम्बेडकर ने अछूतों से कहा, ''हमें हिन्दू धर्म में समता चाहिए। चतुर्वण व्यवस्था को उखाड़ फेंकना होगा। उच्च्य जातियों के लिए विशेष सुविधाऐं और निम्न वर्गों के लिए गरीबी के सिद्धान्त का अब अंत होना चाहिए। ब्रिटिश सरकार विदेशी सरकार है, इसलिए हमारी दशा में अधिक प्रगति नहीं है। फूट को अपने ऊपर हावी न होने दें। आपसी फूट सर्वनाष की ओर ले जाती है। परिवेश परिस्थितियों का स्वयं की दृष्टि से अध्ययन करें। यह न भूलें कि महाड़ तथा नासिक की तुम्हारी मुठभेड़ से तुम्हें शीघ्र ही राजनीतिक प्रतिष्ठा मिलने वाली है। नासिक सत्याग्रह के समाचार लन्दन के ''टाइम्स'' में हर दिन छपते थे तथा इनसे ब्रिटिश निवासियों में हमारे बारे में जानने की रुचि बढ़ी और उन्हें सीखने को मिला।

उन्होंने आगे कहा, ''तुमने जो खोया, उससे दूसरों को लाभ हुआ। तुम्हारे अपमान से दूसरों का गौरव बढ़ता है। तुम्हें अभावों की जिन्दगी जीने को मजबूर, वस्तुओं से वंचित तथा अपमानित किया जाता है, क्योंकि वे जो तुमसे ऊपर हैं, प्रबल तानाशाह हैं और अविश्वसनीय हैं और यह किसी भी तरह तुम्हारे पूर्वजन्म में किये पापों का फल नहीं है। तुम्हारे पास कोई जमीन नहीं है क्योंकि दूसरों ने हड़प ली है। तुम्हारे पास कोई पद नहीं है क्योंकि दूसरों ने उन पर एकाधिकार बना लिया है। भाग्य के भरोसे न रहो, अपनी शक्ति में विश्वास रखो''।[2]

---

[1] जनता : 25 फरवरी, 1933

[2] कीर, पृष्ठ सं. 239

●●●

19

करेंगे जो संघर्ष, वे होंगे कामयाब

फरवरी 1933 के अंतिम सप्ताह में मझगांव, बम्बई में एक जनसभा का आयोजन हुआ। इस सभा में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा–

''आज मेरी स्थिति वैसी है जैसी एक बार तिलक की थी। जब तक मेरे विराधी मेरे बारे में अपशब्द बोलते हैं मैं विश्वस्त हो जाता हूं कि मेरा आपके लिये संघर्ष ठीक ढंग से चल रहा है। पिछले 2000 वर्षों में कभी भी अस्पृश्यता को जड़ से समाप्त करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। अछूतों को अब विष्वास हो गया है कि दलित वर्ग के समर्थन के बिना स्वराज की मांग तथा हिन्दुओं के उद्देश्य पर बुरा प्रभाव पड़ेगा। हिन्दू कुछ भी तुम्हारे प्रति दया भाव या दान की भावना से नहीं करते। वे यह सब अपने कल्याण व स्वार्थ के लिए ही करते हैं। हमारे आन्दोलन का ध्येय तानाशाही, अन्याय तथा झूठी रीति की परम्पराओं के विरोध में लड़ना और शक्तिशाली वर्ग की विशेष सुविधाओं और विशेषाधिकारों को हटवाना और पीडीत लोगों को दासता की बेड़ियों से मुक्ति दिलाना है। हमारी अनथक निरन्तर लड़ाई से हमारे ध्येय को मान्यता प्राप्त हो गई है।''

''मृत पशुओं का मांस खाना छोड़ दें।'' मेरे से लोग पूछते हैं, ''तो वे क्या खायें?'' इसके उत्तर में मैं आपको एक गुणवान तथा चरित्रवान नारी का उदाहरण स्मरण रखने को कहूंगा। उसके कितने भी बुरे दिन क्यों ना आ जाऐं वह कभी वेश्यावृति को स्वीकार नहीं करती। वह आत्म सम्मान के लिए पीड़ा सहती है। इस दुनिया में आप आत्म सम्मान के साथ जीना सीखो। आपको इस दुनिया में कुछ करने की महत्वाकांक्षा को संजोए रखना है। जो करते हैं संघर्ष वे होते हैं कामयाब। आप में से कुछ एक ने एक गलत धारणा बना रखी है कि आप प्रगति नहीं कर सकते। परन्तु स्मरण रहे कि बेबसी या लाचारी का युग समाप्त हो गया है और एक नया युग शुरू हो गया है। इस देश में अब आपकी राजनीति और विधान सभा और विधान परिषद में सहभागिता से कुछ भी संभव है, अर्थात् असंभव कुछ भी नहीं''।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ सं. 233–34

20

ईष्वर या दैविक शक्ति पर आश्रित न हों

''शनिवार 4 मार्च, 1933 को 9:30 रात्रि, बम्बई सैंडहर्स्ट मार्ग के समीप जी.आई.पी. रेलवे आवास के मैदान पर अछूतों की एक सभा हुई। श्री आर.डी कावली बी.ए.एल.एल. बी. का नाम अध्यक्ष पद के लिए पंजाजी जाधव ने प्रस्तावित किया और श्री करड़क ने इसका समर्थन किया। यह सभा डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को 85 लोगां द्वारा हस्ताक्षरित सम्मान पत्र भेंट करने के लिए बुलाई गई थी। इस अवसर पर एक विशाल पण्डाल निर्मित किया गया था जो खचाखच भरा था। शिवतरकर, नायक, सहस्रबुद्धे, दिवाकर पगारे, उपश्याम, कमलकांत चित्रे, मेशराम इत्यादि प्रतिष्ठित नेता उपस्थित थे''[1]

दिवाकर पगारे ने डॉ. अम्बेडकर के सम्मान में सम्मान पत्र पढ़ा। सम्मान पत्र के उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

बहनों और भाईयो

''आपने मुझे जो सम्मान पत्र भेंट किया है मैं उसके लिए आप सबका आभार व्यक्त करता हूं। यह सम्मान पत्र मेरे काम और गुणों के लिए प्रशंसा से भरा है। इसका अर्थ है कि आप अपने जैसे ही एक साधारण मनुष्य को 'पूजा की वस्तु' मान रहे हैं। यह नायक पूजा की सोच अगर तुरंत समय रहते नहीं रोकी गई तो यह आप का विनाश कर देगी। किसी एक व्यक्ति को पूज्यनीय बनाकर आप अपनी सुरक्षा तथा मुक्ति का दायित्व उस अकेले व्यक्ति पर डाल कर भारमुक्त हो विश्राम मुद्रा में चले जाते हैं और आप में आश्रित रहने तथा अपने कर्तव्य के प्रति उदासीनता की आदत पड़ जाती है। अगर आप ऐसे विचारों के शिकार बन जाते हैं तो आपका भाग्य राष्ट्र की जीवन धारा में बहते कटे लकड़ी के लट्ठे से बेहतर तो नहीं हो सकता। आपका संघर्ष तो शून्य हो जाएगा।''

उन्होंने आगे कहा, ''नवयुग ने आपको जो राजनीतिक अधिकार उपलब्ध कराये हैं उनकी उपेक्षा मत करो। आपका पूरा समाज अब तक पैरों तले रौंदा जा रहा था क्योंकि आपके मन तथा मस्तिष्क मे बेबसी भरी थी। मैं यह भी कहूंगा कि

[1] जनता, 11 मार्च, 1933

नेता पूजा के विचार, नेता पूजा तथा कर्तव्य की अनदेखी ने हिन्दू समाज का विनाश किया है तथा हमारे देश के पिछड़ने के कारण बनें है।'' उन्होंने बताया, ''दूसरे देशों में राष्ट्रीय विपत्ति तथा संकट के समय लोग एकजुट होकर खतरे को टालने के लिए सक्रिय हो जाते हैं और शांति तथा संपन्नता प्राप्त करते हैं। इसके विपरीत हमारा धर्म हमारे कानों में बार–बार ''मनुष्य कुछ नहीं करता'' का राग अलापता रहता है और मनुष्य को निष्क्रिय कर देता है। वह एक बेबस लकड़ी के लट्ठे के समान है। किसी भी राष्ट्रीय संकट के समय ईश्वर के अवतरित होने तथा संकट से उभारने की आशा रखी जाती है। सारांश में, शत्रुओं से एकजुट होकर निपटने के बजाय वे इस काम को करने के लिए अवतार लेने की प्रतीक्षा करते रहते हैं''*

''इस दासता का उन्मूलन आपको स्वयं ही करना है। इसके लिए ईश्वर या किसी दैविक शक्ति पर निर्भर न रहें। आपकी मुक्ति तो आपकी राजनीतिक शक्तियों में है न कि तीर्थ यात्राओं अथवा उपवास रखने में। धर्मग्रथों के प्रति निष्ठा से आपको अपने दासता के बन्धनों, अभावों व गरीबी से मुक्ति नहीं मिल सकती। तुम्हारे पूर्वज ये सब पीढ़ी दर पीढ़ी करते आये हैं पर उन्हें दुखद जीवन से नाम मात्र भी राहत नहीं मिली। आप अपने पूर्वजों की ही तरह चिथड़े पहनते हो। उनकी तरह तुम फेंके हुए बचे–खुचे टुकड़ों पर जीते हो, उनकी तरह गंदी बस्तियों में गंदी झोपड़ियों में सड़ रहे हो और उन्हीं की तरह बिमारियों के आसान शिकार होते हो और मुर्गियों के चूजों की भांति मरते हो। आपके धार्मिक उपवासों, संयम व प्रायश्चित ने भी आपको भुखमरी से नहीं बचाया।''

उन्होंने समापन में कहा, ''यह विधानमंडल का कर्तव्य है कि आपको भोजन, कपड़े, आवास, शिक्षा, औषधि व रोजगार उपलब्ध कराये। कानून का निर्माण कार्य और इसे लागू करना जैसे कार्य आपकी स्वीकृति, सहायता व आपकी इच्छा से पारित किए जाएंगे। संक्षेप में, कानून वैश्विक प्रसन्नता का आवास है। आप कानून बनाने की शक्ति पर अपना कब्ज़ा बनाओ। इसलिए अपना ध्यान उपवास, पूजा और प्रायश्चित से हटाकर विधि व्यवस्था निर्माण करने की शक्ति को अपने काबू में करने पर करो। इसी में आप की मुक्ति है। इसी मार्ग से आपकी भुखमरी का अंत होगा। स्मरण रहे कि यह आवश्यक नहीं है कि संख्या में लोगों का बहुमत हो। वे हमेशा सतर्क, शक्तिशाली, सुशिक्षित और आत्मसम्मान के प्रति सजग हों, तभी वे सफल होंगे।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ सं. 234–235

21

मैं देश के लिए सर्वाधिक संभव शक्ति प्राप्त कर लूंगा

लन्दन प्रस्थान की पूर्व संध्या को पूना के दलित वर्गों ने 23 अप्रैल, 1933 को दामोदर हाल बम्बई में डॉ. अम्बेडकर को सम्मान पत्र भेंट किया। इस सभा में 8 से 10 हजार लोग एकत्रित हुए। रायबहादुर एस.के. बोले ने सभा की अध्यक्षता की। श्री पी.एल. लोखंडे ने श्रोतालाभ के लिए सम्मान पत्रा पढ़ा और श्री हरि भाउ हनुमंत रोकड़े के कर कमलों से दलित वर्ग संघ पुणे जिले की ओर से डॉ. अम्बेडकर को भेंट किया। इस अवसर पर अनेक जिला समितियों ने उनके द्वारा इकठ्ठी की गई अलग–अलग धनराशि भी डॉ. अम्बेडकर को भेंट की।

''सभा को संबोधित करते हुए डॉ. साहेब ने बताया कि गोलमेज अधिवेशन के दूसरे सत्र की सभा में जाते समय वे बेबस थे। वे गांधी को समर्थन देकर ब्रिटिश सरकार से विमुख नहीं हो सकते थे क्योंकि गांधी दलित वर्ग के लिए कुछ भी मानने को तैयार नहीं थे। उन्होंने घोषणा की कि उनकी दलितों के अधिकारों की लड़ाई सफलता के करीब है। वे अपनी संपूर्ण शक्ति देश के लिए सर्वाधिक संभव शक्ति प्राप्त करने में लगा देंगे। सभा के अंत में उन्होंने अपने लोगों से अनुरोध किया कि वे उन्हें व्यवहारिक विदाई देने के लिए बैलार्ड स्तम्भ पर न आयें। उन्होंने कहा कि अपना एक दिन का वेतन खोकर वे ऐसा कतई न करें''[2]

●●●

1 जनता : 29 अप्रैल, 1933

2 कीर, पृष्ठ 238

22

ऐसे प्रतिनिधि चुनें जो तुम्हारे हितों का संवर्धन करें

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में ''कोलाबा जिले की खेतिहर' सभा का तष्तीय अधिवेशन रविवार, 16 दिसम्बर, 1934 को अलीबाग तालुका के चारी में रखी गई। किसानों ने स्वयं ही इसकी प्रारम्भिक व्यवस्था की। पर्याप्त लम्बा चौड़ पंडाल निर्मित किया गया था और पंडाल के बीचों बीच सम्मानित मेहमानों के बैठने के लिए मंच पर जो चबूतरा बना था, उस स्थल को झण्डों व रंग बिरंगी झंडियों से सजाया गया था। जगह–जगह कपड़े के बैनर लटकाए गये थे, उन पर कुछ नारे जैसे ''खेतिहरों की विजय'', खेतिहरो एक हो'' इत्यादि लिखे थे। डॉ. अम्बेडकर का सरल, रेवास, हाशिउरे, नरींगी इत्यादि के खेतिहरों ने फूल मालाओं से स्वागत किया। अधिवेशन के लिए पूरे जिले से लगभग 6000 खेतिहरों का जमावड़ा था। उनमें सर्वश्री जी.एन. सहस्रबुद्धे बुधे (बम्बई एस.एस.संघ), एम.वी.डोंडे (मुख्य प्राचार्य, परेल उच्च विद्यालय), एस.वी. पारूलेकर (भारत सेवक संघ), डी.वी. प्रधान, के.वी. चित्रे, टी.वी. पारवते (संपादक मराठा), एस.जी. टिपनिस, सी.जी. देश पाण्डे, एन.एम. देश पाण्डे, सूबेदार सावड़कर, दामुअन्ना पोटनिस (भोर प्रजा परिषद) और अन्य तथा श्री अर्देशिर बारिया पेज़ारी के जमींदार भी उपस्थित थे। वहाँ अलीबाग के मामलातदार, पुलिस उपनिरीक्षक और अन्य सरकारी अधिकारी उपस्थित थे।

श्री एन.एन पाटिल, अध्यक्ष स्वागत समिति ने प्रतिनिधियों का अभिनन्दन किया।

डॉ. अम्बेडकर का भाषण

जैसे ही डॉ. साहब भाषण के लिए उठे पंडाल 'डॉ. अम्बेडकर की जय जयकार' से गूंज उठा।

उन्होंने कहा, :–

आपको अपनी शिकायतों को दूर करने के लिए ध्यान केन्द्रित कर उपाय सोचने हैं। 'शेतकारी' के सम्बन्ध में मैं आपको बताना चाहता हूं कि आपकी भाषा में इस शब्द का गलत उपयोग हो रहा है, यह ऐसे लोग, जो बहुत अधिक जमीन के मालिक हैं कोई भी शारीरिक परिश्रम वाला कार्य कृषि के लिए नहीं करते और वे

जिनके पास अपनी कोई जमीन नहीं और उन्हें खेतों में अपनी रोटी के लिए कड़ी मेहनत करनी पड़ती है। जमीन से दोनों के प्रयोजन अलग–अलग व परस्पर विरोधी हैं। इन दोनों समूहों को एक दूसरे से बांधे रखना सही नहीं है। मेरा सुझाव है कि इन दोनों की भिन्नता को समझ कर शेतकारी की परिभाषा सही की जानी चाहिए।

अब मैं उस प्रश्न पर आता हूं जो सब श्रोताओं विशेषकर ''चारी'' के लोगों में सबसे अधिक उथल–पुथल किए हुए है। मेरा तात्पर्य ''चारी'' के काश्तकारों से है जिन्होंने पिछले दो सालों से साहूकारों तथा भूमि मालिकों के विरुद्ध हड़ताल की धमकी दे रखी है। हड़ताल के औचित्य या अनौचित्य में जाए बिना मेरा मानना है कि भूमिपतियों व कास्तकारों के आपसी मतभेद मध्यस्थता के माध्यम से ''समझौता समिति'' बने जिसमें दोनों पक्ष के प्रतिनिधि तथा एक सदस्य सरकार द्वारा मनोनीत हो। इस समझौता समिति का निर्णय दोनों पक्षों पर बाध्य हो। मुझे कोई कारण समझ नहीं आता कि सरकार इसमें हस्तक्षेप कर समझौता समिति का गठन क्यों नहीं कर रही।

मुझे मालूम है कि इस क्षेत्र में चालू व्यवस्था जिसे 'खोती व्यवस्था' के नाम से बुलाते हैं के विरुद्ध बहुत सी शिकायतें हैं। मुझे ज्ञात है कि कैसे खोत काश्तकारों को बड़ी दयनीय स्थिति में जब चाहे तब निकाल फेंकते हैं। भूपति अपनी इच्छा पर कभी भी काश्तकारों को अपनी जमीन से बेदखल कर उनके जीवन को अस्थिर और दयनीय बना देता है। यह एक सहज में ही दिखने वाला अन्याय है, जिसका कष्ट काश्तकार को झेलना पड़ता है। बिना औपचारिकता अपनाए खोत को कास्तकार को बेदखल करने की मिली शक्ति से काश्तकार द्वारा मिट्टी सुधारने हेतु कई वर्षो की गई कड़ी मेहनत से वंचित कर दिया जाता है।

काश्तकारों की इस प्रकार की शिकायतें कानून बनाकर तुरन्त दूर की जा सकती हैं। ऐसे वंचित काश्तकारों का समाधान उनकी मेहनत का पर्याप्त मुआवजा खोतों द्वारा देने को मजबूर करने के प्रावधान से हो सकता है। भू–स्वामी द्वारा खोती की जमीन पर बने काश्तकारों के रहने के घर को गिराने की धमकियों की घटनाओं से मेरे विचार से ऐसे अन्याय पराकाष्ठा तक पहुंच चुके हैं क्योंकि जब भी खोत और काश्तकार के बीच झगड़ा होता है भू–स्वामी की इच्छा अनुसार काश्तकार को मजबूर किया जाता है। यह मेरी समझ से बाहर है कि ऐसे आँखों में खटकते अन्याय क्यों चलने दिए जाते हैं। मैं बेहिचक कह सकता हूं कि इस गंभीर आरोप के लिए सरकार भी दोषी है, क्योंकि वे इस अमानवीय अन्याय के मूकदर्शक बनकर मौन स्वीकृति दे रहे हैं। कई बम्बई के मिल मालिक जो आवासीय सुविधा प्रदान

करते हैं उदाहरणार्थ, जब भी कोई मिल के श्रमिक हड़ताल पर जाते हैं तो नौकरी खोने के साथ–साथ परिवार के सड़क पर आने के डर से हड़ताल के डंक की टीस आधी भी नहीं रह जाती। ऐसी व्यवस्था को चलने नहीं देना चाहिए और आज की सभा में एक ऐसा सुअवसर अवश्य तलाशा जाना चाहिए जिस पर इस विषय से सम्बन्धित अपने मन की भावनाएं दिल खोलकर उड़ेली जा सकें।

आप सदैव यह स्मरण रखें कि उन चर्चित समस्याओं का समाधान मैंने उपयुक्त कानून बनाने में सुझाया है। आपकी शिकायत निवारण के लिए हड़ताल अवश्य ही सुनिश्चित हल नहीं है। मैं आपके हड़ताल के अधिकार के प्रति कोई द्वेष भावना या अनिच्छा नहीं रखता। परन्तु यह एक ऐसा षस्त्र है जिसका प्रयोग कभी कभार ही होना चाहिए। ऐसे कानून को विधानसभा में कैसे पारित करना है का उत्तर हमें पाना है। जब तक आपके प्रतिनिधि विधानसभा में नहीं हैं तब तक आप इस शिकायत का हल नहीं पा सकते। अगर विधायिकाओं में प्रतिनिधि नहीं हैं तो आपकी समस्याएं बनी रहेंगी। ऐसे आदमी तलाशे जो आपके हित के लिए काम करेंगे। अपने प्रतिनिधि की तलाश में कभी यह गलतफहमी ना पालें कि कांग्रेस नेताओं जैसे लोग ही आपके अधिकार की लड़ाई लड़ रहें है। आज के दिन कांग्रेस केवल ब्रिटिश के विरुद्ध एक इकाई के अलावा कुछ भी नहीं है।

काश्तकारों के कल्याण के लिए सभा में प्रस्ताव पारित किए गए तत्पश्चात् सभाध्यक्ष ने कुछ समापन टिप्पणियां करते हुए सम्मलेन का धन्यवाद ज्ञापन दिया।[1]

● ● ●

[1] बंबई क्रानिकल, 22 दिसंबर, 1934

23

दुर्भाग्यवष मैं एक अछूत हिन्दू जन्मा था, परन्तु मैं वैसा मरूंगा नहीं

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने दस वर्ष के अनथक प्रयास के पश्चात राजनीतिक तथा सामाजिक स्थिति की समीक्षा हेतु दलित वर्ग का येवला (जिला नासिक) में रविवार, 13 अक्तूबर 1935 को एक अधिवेशन बुलाने का निर्णय लिया।

शनिवार, 12 अक्तूबर, 1935 को डॉ. अम्बेडकर के नासिक आगमन पर उनका खूब जोष से स्वागत हुआ तथा उन्हें एक बड़े जुलूस में नासिक शहर ले जाया गया। उन्होंने नासिक शहर में वाचानालय का उद्घाटन किया।

इस अवसर पर उन्होंने कहा ''आप आत्म सहायता में विश्वास करते हो। आपको अपने पैरों पर खड़े होकर अपनी उन्नति के लिए संघर्ष करना है। अगर अचानक मेरे साथ कोई अनहोनी हो जाए या मैं ना रहूं तो मेरे बाद भी आपको संघर्ष जारी रखना होगा''।

रविवार पेठ की हीरालाल गली में रात्रि को 9 बजे एक अर्न्तजातीय भोज का भी आयोजन किया गया, जिसमें केवल एक कांग्रेसी श्री देश पाण्डे ने भाग लिया।

रविवार 13 अक्तूबर 1935 को डॉ. अम्बेडकर विंचुर गये और वहां उनका स्वागत हुआ। इसी भांति जब वे येवला जा रहे थे तो रास्ते भर गांव वालों ने उनका स्वागत किया। येवला नगरपालिका ने सुबह डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को सम्मान पत्र भेंट किया। सम्मान पत्र का उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा–

''अब हम इस निष्कर्ष पर पंहुचे हैं कि छूतों की मनोवृति में कोई बदलाव नहीं आया है और अछूतों का अधिकारों के लिए निरन्तर लड़ाई के बाद भी छूतों के व्यवहार में कोई स्नेह वाली बात नहीं है। इस कारण हमने हिन्दुओं से अलग रहने का, स्वालंबी होने तथा संघर्ष से कामयाब होने का निर्णय लिया है।''[1]

13 अक्तूबर 1935 को 10 बजे रात्रि येवला के अधिवेशन में विभिन्न विचाराधारा वाले लगभग 10,000 अछूतों ने उपस्थिति जताई। इस अधिवेशन में हैदराबाद राज्य और मध्य प्रांत के प्रतिनिधि भी उपस्थित रहे। स्वागत समिति के अध्यक्ष अमृत राव

---

1 खैरमोड़, पुस्तक 6, पृष्ठ 84–85

रणखम्बे ने दलित वर्ग के महान प्रदर्शन तथा भविष्य निर्माण के प्रति रुचि दिखाने पर अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए कहा, ''पतन की ओर अग्रसर हिन्दूवाद को ब्राह्मणवाद कहना उचित था क्योंकि यह श्रेणीबद्ध समाज के नाम पर केवल ब्राह्मण उच्चता को प्रतिष्ठित और लाभान्वित करता है''।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अत्यंत संवेदनशील तथा भावना पूर्ण विचार प्रकट करते लगभग 1½) घंटे दलितों की अति गंभीर वित्तीय, सामाजिक, शैक्षणिक, राजनीतिक अर्थात जीवन के हर क्षेत्र में चल रहे पिछपड़ेन का वर्णन किया और उनके महान बलिदानों का स्मरण कराया जो दलितों ने हिन्दुत्व के तत्वावधान में हिन्दू समुदाय के ही लोगों से अपने लिए न्यूनतम मानव अधिकार हिन्दु बने रहते मांगे थे। उन्होंने कालाराम मंदिर प्रवेश आन्दोलन का उल्लेख किया जहां पिछले पांच वर्षों में दलित वर्ग के लोगों से अमानुषिक व्यवहार किया गया। उन्होंने आगे बताया कि कैसे उनके न्यूनतम प्रारम्भिक अधिकार और हिन्दू समाज में समानता में की बात व संघर्ष, पूर्ण रूप से ठुकरा दिए गये। बाबा साहेब ने बताया कि बड़े दुःख से उन्हें यह यथार्थ समझ में आया कि हमें अपना ध्येय प्राप्त करने के लिए लगाया समय, तथा धन और प्रयास सब व्यर्थ गए।

उन्होंने कहा कि मेरा सुझाव है कि समस्या के समाधान के लिए अंतिम निर्णय लेने का समय आ गया है। वे अयोग्यताएं जो हम झेल रहे हैं और तिरस्कार जो हम भोगते हैं केवल हमारे हिन्दू होने के ही कारण हैं। उन्होंने श्रोताओं से पूछा कि क्या यह हमारे लिए बेहतर न होगा कि हम यह धर्म ही त्याग दें और किसी दूसरी धार्मिक आस्था को अपना लें, जहाँ हमें समता का स्तर, सुरक्षामय स्थिति और न्यायोचित अधिकार मिलते हों।

गहन गंभीर आगज में उन्होंने श्रोताओं को हिन्दुत्व से सब रिश्ते नाते तोड़ने के बाद राहत तलाशने और आत्म सम्मान प्राप्त करने जैसी क्रियाऐं किसी दूसरे धर्म में शरणागत होने पर प्राप्ति के लिए प्रोत्साहित किया। परन्तु उन्होंने चेतावनी दी कि उन्हें नई धार्मिक आस्था के चुनाव में सावधानी बरतनी होगी कि व्यवहार में समता, प्रतिष्ठा और अवसर प्रदान करने में कोई भी शर्तें लागू न हों।

डॉ. अम्बेडकर ने निजी निर्णय के विषय में अवगत कराते हुए कहा कि दुर्भाग्यवश उनका जन्म एक अछूत हिन्दू के यहां हुआ था। इसको रोकना उनके वश की बात नहीं थी परन्तु उन्हें जन्म से तुच्छ और अपमानजनक अवस्था में जीना स्वीकार नहीं है और ऐसा करना उनके वश में है। उन्होंने गरजना की'' ''मैं पूरी गम्भीरता से आप सबको विश्वास दिलाता हूँ कि मैं हिन्दू मंरूगा नहीं''। अन्त में उन्होंने अपने लोगों से कालाराम मंदिर सत्याग्रह रोकने को कहा क्योंकि पिछले पांच साल में तानाशाह छूत हिन्दुओं ने अड़चनें डालकर हमारे प्रयास को विफल कर और

अपने किए पर किसी भी प्रकार का पछतावा न होना प्रदर्षित कर, इस आन्दोलन की व्यर्थता को उजागर कर दिया है। उन्होंने अपने लोगों को प्रोत्साहित करते हुए कहा कि भविष्य में उनका आचार ऐसा हो जिससे बाहरी दुनिया में किसी को भी आपके हिन्दू समुदाय से पृथक और उनकी धार्मिक आस्था से किसी भी प्रकार का संबंध न रखने के बारे में कोई शंका न रहे। इस प्रकार आप अपने लिए एक स्वतंत्र नागरिक के उपयुक्त भविष्य तराशें।

तदनुसार, सम्पूर्ण चर्चा के बाद छूत हिन्दुओं के दलितों की सामाजिक समता की मांग के प्रति बेदर्द हृदयहीनता में व्यवहारवाली मानसिकता और अपराध संबंधी तटस्थता को ध्यान में रखते हुए एक संकल्पबद्ध प्रस्ताव पास किया गया। इसके अंतर्गत आदेश दिया गया कि दलित वर्ग का दस वर्ष से चल रहा अछूतों की प्रतिष्ठा तथा शक्तिशाली समाज बनाने के लिए दोनों समुदायों को दृढ तथा सबल करने के अभियान को विराम दिया जाए। इसके अतिरिक्त अछूतों को प्रोत्साहित करते हुए आग्रह किया कि अछूत असफल प्रयासों में अपनी शक्ति व्यर्थ न गवाएं, वे अपने आप को एक उच्च स्तर तथा प्रतिष्ठा प्राप्त करने में लगाएं तथा हिन्दुस्तान के दूसरे समुदायों के साथ समता के आधार पर अपने लिए स्वतंत्र स्थान बनायें।[1]

''डॉ. अम्बेडकर अपने सिपहसालारों के साथ येवला से प्रस्थान कर नासिक ठहरे। उनके वहां रहते सफाई कर्मी (मेघवाल समुदाय से) ने रात्रि का भोजन तथा चाय–पान से 15 और 16 अक्तूबर 1935 को स्वागत किया''[2]

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर हिन्दू धर्म को त्यागने तथा किसी और किसी अन्य धर्म को ग्रहण करने का समाचार पूरे विश्व में विस्तृत रूप से फैलाया। यह घोषणा बेदर्द हिन्दू समाज के लिए एक भीषण तूफ़ान की भांति थी। यह घोषणा वज्रपात की तरह थी और हिन्दू आश्चर्यचकित व हतप्रभ रह गये। हिन्दुओं तथा हिन्दू रक्षात्मक समूहों में भयंकर क्रोध का वातावरण था। इस समाचार को लेकर इन समूहों में अत्यधिक प्रतिक्रिया थी जो इस प्रकार थी।

–संपादक

''निर्दयी तथा मानव जाति से घृणा करने वाले रूढिवादी हिन्दुओं को दलितवर्ग के इस निर्णय ने प्रभावित नहीं किया। वे इतने जर्जर तथा खोखली अवस्था में थे कि उनके दिमाग कुंठित थे और देख नहीं पाते थे। गैर–ब्राह्मण अशिक्षितों ने सोचा कि धर्म संबंधी बातों का निर्णय ब्राह्मणों के पाले में है। येवला निर्णय पर खुशियां मनाई, सनातनी हिन्दुओं ने चैन की सांस ली और नासिक के सनातनी

---

[1] कीर, पृष्ठ सं. 252–53

[2] खैरमोड़े, पुस्तक 6 पृष्ठ 86

हिन्दू जो पिछले 5 साल से मंदिर प्रवेश सत्याग्रह से आहत हुए थे, वे दलितों के हिन्दू धर्म छोड़कर जाने के निर्णय से उल्लसित थे। अछूतों की ताजा घोषणा के प्रकाश में नासिक रथ जुलूस पर लगी रोक को तुरंत प्रभाव से हटाने का प्रार्थना पत्र जिलाधीश के कार्यालय में लगा दिया गया।

बुद्धिजीवीयों और राजनीति प्रेरित व्यक्तियों ने दलितों के निर्णय की निंदा की।

एक सिंधी हिंदू ने रक्त से लिखे पत्र द्वारा डॉ. अम्बेडकर को हिन्दुत्व त्यागने पर जान से मारने की धमकी दी'',[1]।

डॉ. अम्बेडकर के येवला भाषण पर गांधी जी की प्रतिक्रियाः

वर्धा, 15 अक्तूबर

एसोसिएटेड प्रेस प्रतिनिधि ने गांधी जी से डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बारे में साक्षात्कार कर प्रतिक्रिया चाही, गांधी जी ने कहा ''वह भाषण जिसके लिए डॉ. अम्बेडकर को उत्तरदायी ठहराया जा रहा है पर उस विश्वास नहीं हो रहा। यदि उन्होंने यह भाषण दिया है और सभा में संकल्पबद्ध हिन्दुत्व से सब नाते तोड़ने व कोई ऐसा और धर्म जो उनको समता की गांरटी दे सके का प्रस्ताव पारित किया है, तो मैं इन दोनों घटनाओं को दुर्भाग्यपूर्ण मानता हूं, विशेषतया तब जब कभी कभार हुई, कोई छुटपुट घटना को छोड़कर अस्पृश्यता अंतिम सांसे गिनने में है।

मैं डॉ. अम्बेडकर जैसी पुण्य आत्मा और उच्च शिक्षा प्राप्त मनुष्य के प्रति काविठा तथा दूसरे गांवों में उनके साथ किए गए अत्याचार के क्रोध का अनुमान सकता हूं।

परन्तु धर्म कोई घर या अंगवस्त्र नहीं है जो जब जी चाहे बदल लो। यह तो हमारे शरीर तथा आत्मा का एक अभिन्न अंग है। धर्म किसी भी जन को उसके सृजनकर्ता से जोड़ता है जबकि शरीर नश्वर है और मनुष्य इस का नाश होता है परन्तु धर्म का अस्तित्व तो मृत्यु के बाद भी है।

अगर डॉ. अम्बेडकर की ईश्वर में आस्था है तो मैं उन्हें प्रेरित करना चाहूंगा कि वे अपने रोष को शांत कर अपनी स्थिति पर पुनः विचार करें और अपने पूर्वजों के धर्म का आकलन उसके अपने महत्व व गुणों के आधार पर करें, न कि अविश्वस्त अनुयाइयों की कमजोरियों के आधार पर।

अंत में, मैं आश्वस्त हूं कि उनके तथा उनके साथ जिन्होंने संकल्प किया था और जो उन्होंने सोचा है, वे उसमें सफल नहीं हो पाएंगे क्योंकि दसियों लाख

---

[1] विविध वृत 3 नवम्बर 1935

[2] कीर, पृष्ठ सं. 256–258

[3] बम्बई क्रानिकल, 16 अक्तूबर, 1935

[4] गांधी जी के धर्म परिवर्तन लेख के लिए देखें अनुक्रमांक

अनपढ़ देहाती हरिजन लोग जब पाएंगे कि डॉ. अम्बेडकर और उसके अनुयाइयों ने पूर्वजों की धरोहर आस्था को अपना मानने से इन्कार कर दिया है विशेषकर जब वे अपने और सवर्ण हिन्दूओं के साथ भले–बुरे जीवन के क्षणों को पेड़ तथा लता के मानिंद सम्बन्धों का स्मरण करेंगे– एन.पी.।

गांधी जी की प्रतिक्रिया पर डॉ. अम्बेडकर का मतः

" बम्बई, 15 अक्तूबर

एसोसिएटेड प्रेस के प्रतिनिधि ने जब डॉ. अम्बेडकर को, नासिक भाषण पर गाधी जी का वक्तव्य दिखाया, तो उन्होंने घोषणा की "हमने अभी निर्णय नहीं लिया है कि किस धर्म को अपनाएगें, क्या योजना व साधन हम प्रयोग करेंगे, परन्तु गहन विचार तथा विचारों के अदान–प्रदान के पश्चात हम इस दृढ निर्णय पर पहुंचे हैं कि हिन्दू धर्म हमारे हित में नहीं है।"

उन्होंने कहा, "असमानता ही वह तथ्य है जो बहस का आधार है और उसकी भी उसी की शाखाऐं हैं, इनके चलते दलित जातियां कभी भी पनप नहीं सकीं। कोई भी यह न सोचे कि मैंने यह क्रोधवश कहा है या काविठा गांव या किसी भी और स्थान पर दलितों के साथ हुई ज्यादतियों के विरोध में रोष और आवेगवश किया है। यह गहरे चिंतन और सोच समझ से लिया गया निर्णय है। धर्म आवश्यक है, गांधी जी की इस बात से तो मैं सहमत हूं परन्तु यह बात कि मनुष्य को अपने पूर्वजों के धर्म से ही जुड़ा रहना चाहिए, चाहे वह धर्म उसकी सोच में अति अरुचिकर हो और जो उसके नैतिक व्यवहार के माप दण्ड पर खरा न उतरता हो, चाहे जीवन में प्रगति तथा कुशलक्षेम के लिए प्रेरित न करता हो, से मैं सहमत नहीं हूं।"

उनसे यह पूछने पर कि वे धर्म परिवर्तन कब तक करने की सोच रहे हैं या यह एक व्यक्तिगत निर्णय तक रहेगा या जनसमूह धर्म परिवर्तन होगा, उसके उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने कहा, "मैंने धर्म परिवर्तन करने का अपना मन बना लिया है। अगर जन समूह इसके लिए आगे नहीं आता तो मुझे इसकी चिंता नहीं है। इसका निर्णय उन्हें लेना है। अगर उन्हें यह अच्छा लगेगा तो वे मेरा अनुसरण करेंगे और अगर अच्छा नहीं लगेगा तो वे मेरे उदाहरण पर नहीं चलेंगे। मेरी अपनी सलाह है कि गांधी जी इस विषय पर दलितों को अपनी रूपरेखा निर्धारित करने का अवसर दें। काविठा कोई छुटपुट या इक्का–दुक्का घटना नहीं है परन्तु यह तो हिन्दुओं के पूर्वजों के धर्म की कार्य प्रणाली का आधार है।"[1]

● ● ●

[1] बंबई क्रानिकल, 10 अक्तूबर, 1935

24

मेरी योग्यता तथा प्रतिष्ठा मेरी कड़ी मेहनत और बुद्धि के फल हैं

रविवार 8 दिसम्बर, 1935 को फ़ोरस मार्ग बम्बई में जनसभा हुई। येवला में डॉ. अम्बेडकर की धर्म परिवर्तन की घोषणा के बाद बम्बई में यह पहली जनसभा थी। इस सभा में लगभग 10,000 अछूतों, के साथ 50–75 मुस्लिम और कुछ ईसाई उपस्थित थे। सभा की अध्यक्षता डॉ. सोलंकी ने की। श्री देवराव नायक ने परिचयात्मक व्याख्या की और इसके बाद सुर्वा टिपनिस का भाषण हुआ। सर्वश्री डोंडे और बापू साहेब सहस्त्रबुदे भी उपस्थित थे।[1]

''डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने घोषणा की कि धर्म परिवर्तन के विषय पर प्रथम महार अधिवेशन में निर्णय लिया जाएगा जिसकी संभावनाओं पर वे सोच विचार कर रहे थे। प्रेस में पत्रों की तो मानो बरसात हो रही थी, उनमें से अधिकतर में डॉ. अम्बेडकर की भर्त्सना तथा निंदा थी और अल्पमत ने इसका समर्थन किया था। ऐसे लेखों और पत्रों में एक पत्र किसी अर्ध–समाज सुधारक का था और उसने धमकी भरी भाषा में लिखा था कि डॉ. अम्बेडकर अगर हिन्दू धर्म त्याग कर बाहर जाएंगे तो वे नगण्य हो जाएंगे क्योंकि उसके विचार में डॉ. अम्बेडकर की प्रतिष्ठा उनके अस्पृश्य/अछूत होने के कारण थी। डॉ. अम्बेडकर ने भी अपने ही अन्दाज में जवाब दिया कि उनकी योग्यता तथा प्रतिष्ठा उनके धैर्य, परिश्रम और ज्ञान के फल हैं और इसलिए वे अपनी व्यक्तिता/विशिष्टता कहीं भी किसी भी आस्था में या साहित्यकारों, या आदरणीय राजनीतिज्ञ, चाहे ब्राह्मण हो या गैर ब्राह्मण के बीच बनाये रख पाऐंगे। यद्यपि उन्होंने जोड़ा कि अगर किसी और आस्था या धर्म के अंर्तगत उनके दलित भाई संपन्नता प्राप्त करने में सफल होते हैं, तो वे बिना प्रतिष्ठा के जीवन को भी पसन्द करेंगे।

● ● ●

---

1 जनता, 15 दिसंबर, 1935

2 कीर, पृष्ठ 260

25

हम कहीं भी रहें, हमें अपने कल्याण के लिए संघर्ष करना होगा

येवला की धर्म परिवर्तन घोषणा से हिन्दुओं में प्रतिक्रियाओं की लहर आ गयी थी। हिन्दू अछूतों का इस घोषणा का समर्थन निरंतर बढ़ता जा रहा था। 11 और 12 जनवरी, 1936 को पूना में इस घोषणा के समर्थन में महाराष्ट्र अछूत नवयुवक संघ ने एक सभा का आयोजन किया। मद्रास के एक ख्याति प्राप्त नेता प्रोफेसर एन. शिवराज ने इस अधिवेशन की अध्यक्षता की। लगभग 10,000 नर तथा नारियों ने इस सभा में भाग लिया। कुछ सवर्ण हिन्दू, मुस्लिम और सिक्ख भी इस सभा में उपस्थित थे।[1]

अपने अध्यक्षीय भाषण में श्री शिवराज ने कहा, ''दलितों को अस्पृश्यता से निजात पाने के लिए उन्हें हिन्दू धर्म को त्याग देना चाहिए। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि अस्तित्व में जो धर्म हैं, उनमें से किसी एक धर्म को ही अपनाया जाए। शायद एक नया धर्म शुरू किया जा सकता है या एक पुरातन धर्म जो आर्यों के भारत आगमन से पहले प्रचलित था को पुनर्जीवित किया जा सकता है। आर्य अपने साथ भारत में हिन्दुत्व और उसके साथ जुड़ीं भिन्न–भिन्न प्रथाऐं लेकर आये थे''।

डॉ. सोलंकी के बाद डॉ. अम्बेडकर बोले। अपने भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने चेतावनी दी कि कुछ लोगों में यह गलत धारणा है कि धर्म परिवर्तन उनको सदा के लिए नरक से उठा कर सीधे समता के स्वर्ग में स्थापित कर देगा। उन्होंने आगे कहा कि किसी भी नये धर्म में उन्हें स्वतंत्रता और समता के लिए संघर्ष करना आवश्यक होगा। उन्होंने कहा कि हम पूरी तरह इस तथ्य से परिचित हैं कि हम कहीं भी जाएं, किसी भी धर्म को अपनाएं, हमें अपने कल्याण के लिए संघर्ष करना होगा। चाहे तो हम ईसाई, इस्लाम या सिक्ख धर्म धारण करें। ऐसा सोचना हमारी मूर्खता होगी कि अगर हम इस्लाम अपना लेते हैं तो हम सबके सब नवाब बन जाऐंगे या ईसाई बने तो सीधे पोप द्वितीय। हम कहीं भी जाएं संघर्ष तो हमें करना ही होगा''। उन्होंने

---

[1] जनता : 8 और 15 फरवरी, 1936

कहा कि उनके द्वारा समझौते के लिए सुझाई गई शर्तों में से यह शर्त कि हिन्दू मत में रहकर समानता की लड़ाई हमेशा चलती रहेगी सवर्ण हिन्दू कभी भी पूरी नहीं करेंगे क्योंकि रोटी और मक्खन तो कभी चर्चा या विवाद के विशेष बिन्दु नहीं रहे। निस्संदेह इस सारे झगड़े में कोई पक्का अध्यात्मिक कारण रहा है। अन्यथा धन देने के प्रस्ताव न आते– विरोधी शिविरों से ऐसी अफवाह है कि निज़ाम ने सात करोड़ रूपये तक देने का प्रस्ताव किया[2]। उन्होंने कहा शायद यह ईश्वर के लिए संभव नहीं था। गांधी द्वारा शुरू किए गए हरिजन धनराशि की चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि इसका प्रयोजन अछूतों को ''सवर्ण हिन्दू शिविर'' में दास बनाकर रखना है। उन्होंने घोषणा की कि सवर्ण हिन्दू सहायता करें या अड़चनें पैदा करें, वे तो धर्म परिवर्तन करेंगे ही। अगर वे साक्षात ईश्वर से भी मेरे ऊपर धर्म परिवर्तन न करने का दबाव डलवायें तो भी मैं अपने निर्णय को नहीं बदलूंगा''।[3]

● ● ●

---

[2] एम.वी.डोंडे, जनता : 14 अप्रैल, 1951

[3] कीर, पृष्ठ सं. 261–263.

26
मैंने हिन्दू धर्म त्यागने का निर्णय लिया है

मार्च, 1936 के अंत में 'जात–पात तोड़क मंडल, लाहौर' ने डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को सूचना दी कि उन्होंने होने वाली सभा को मई के मध्य तक स्थगित कर दिया है। पंजाब प्रेस उत्तेजक हो रही थी और रूढ़िवादी जनता ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को मंडल का अध्यक्ष चुनने पर मंडल की कड़ी और कटु आलोचना की, क्योंकि उन्होंने डॉ. अम्बेडकर को हिन्दू धर्म से घृणा करने वाला घोषित कर दिया था। इसका परिणाम यह हुआ कि भाई परमानन्द, डॉ. नारंग, महात्मा हंस राज और राजा नरेन्द्र नाथ जैसे कट्टर नेताओं को मंडल से संबंध विच्छेद करना पड़ा। मंडल के प्रकाश स्तंभ संतराम ने हर भगवान को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को मंडल की स्थिति से अवगत कराने बम्बई भेजा। हर भगवान बम्बई में 9 अप्रैल को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर से मिले और अध्यक्षीय भाषण का तैयार अंश उनसे ले लिया।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने भी बम्बई से अमष्तसर के लिए 10 अप्रैल 1936 को ''सिक्ख धर्म प्रचारक अधिवेशन'' में षामिल होने को प्रस्थान किया। यह अधिवेशन 13 व 14 अप्रैल को था। इस अधिवेशन में बड़ी संख्या में पंजाब, केरल संयुक्त प्रदेश और मध्य प्रांत से सिक्खों और दलित जातियों के जन–समूहों ने उपस्थिति दर्ज कराई। इस अधिवेशन की अध्यक्षता एक सेवा निवश्त जिला न्यायाधीश सरदार बहादुर हुक्कम सिंह ने की और स्वागत समिति के सभापति बसाखा सिंह थे। अध्यक्ष और सभापित दोनों ने अपने–अपने भाषणों में दलित जातियों की दशा सुधारने हेतु गहन धर्म प्रचार कार्यों पर ध्यानपूर्वक उपयुक्त अमल करने पर जोर दिया।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अधिवेशन को संबोधित करते हुए सिक्खों में समता के सिद्धान्तों के प्रति अपनी स्वीकृति जताई और बताया कि यद्यपि उन्होंने हिन्दू धर्म को त्यागने का निर्णय तो ले लिया है परन्तु किसी दूसरे धर्म के बारे में उन्होंने अभी मन नहीं बनाया।

एक अन्य वक्ता सर जोगेन्द्र सिंह ने धर्म प्रचार कार्य के साथ–साथ इस प्रयोजन के लिए एक न्यास का सृजन करने का सुझाव दिया तथा श्रोताओं से धन राशि दान करने की विनती की। इस अधिवेशन की अन्य प्रमुख विशेषता केरल से पांच विशिष्टथिया जाति दलित जाति नेताओं का डॉ. कुट्टीर के नेतृत्व में और संयुक्त प्रांत, मध्य प्रांत से अन्य पचास लोगों का सिक्ख धर्म में प्रविष्ट होने के लिए आगमन था।''[1]

[1] कीर, – पृष्ठ सं. 267

● ● ●

27

मैं सफलता के लिए अपनी आत्मा का बलिदान नहीं कर सकता

जब डॉ. बी.आर. अम्बेडकर 1 मई, 1936 की सुबह वार्धा पहुंचे तो दलित वर्ग के लोगों ने उनका गर्मजोशी से स्वागत किया। जब तक डॉ. अम्बेडकर वार्धा ठहरे ''निर्भय तरुण संघ'' ने उनके बारे में सभी प्रकार की सावधानी बरती। डॉ. अम्बेडकर नालवाड़ी भी गये। मध्याह्न पूर्व 11:30 पर दलित वर्ग के नेतागण सर्वश्री पुरुषोतम खापरड़े, शंकरराव सोनवाने, गोमाजी टेम्भरे ने डॉ. अम्बेडकर से धर्म परिवर्तन से जुड़े विषयों के बारे में चर्चा की। डॉ. अम्बेडकर ने बिना किसी लाग लपेट के स्पष्ट तौर पर कहा :—

''अभी तक मैं किसी को भी इस्लाम या ईसाई धर्म अपनाने की सिफारिश नहीं करता। अगर कोई भी अपने उत्तरदायित्व पर इस्लाम धर्म या किसी अन्य धर्म के अनुयायी की अनुशंसा पर धर्म अपनाता है और धोखा खाता है तो उस कृत्य का मैं उत्तरदायी नहीं हूंगा। यह भी एक तथ्य है कि मैंने धर्म परिवर्तन के बारे में घोषणा की है। परन्तु अभी तक किसी धर्म विशेष के अपनाने के बारे कुछ नहीं कहा। उस समय तक सभी धर्म परिवर्तन की बात का प्रचार तो करेंगे परन्तु किसी धर्म विशेष का नाम प्रसारित न करें। जब मैं घोषणा करूंगा तभी सब के सब 7 करोड़ अछूत एक साथ धर्म परिवर्तन करेंगे।''

तत्पश्चात डॉ. अम्बेडकर ने दूसरे अछूत नेताओं से एकान्त में वार्ता की।[1]

कीर ने डॉ. अम्बेडकर की वार्धा यात्रा का वर्णन इस प्रकार किया।

''अब डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की गतिविधियों से गांधी शिविर की शांति भंग होने लगी थी। इसलिए सेठ वालचंद हीराचंद ने तर्क से डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को गांधी से मिलने को राजी किया। डॉ. अम्बेडकर और वालचंद पहले वार्धा और बाद में सेगांव[2] में गांधी से मिले परन्तु समस्या के समाधान संबंधी कोई सहमति

---

[1] महाराष्ट्र दैनिक, 6 मई, 1936, पुनः मुद्रित को सारे पृष्ठ 296

[2] बाद में इसका नाम सेवा ग्राम पड़ा

[3] गांधी एम.के. के पत्र सरदार वल्लभ भाई पटेल के नाम पृष्ठ सं. 15

नहीं बनी। गांधी ने गलत निष्कर्ष निकाला कि भारत और लन्दन की कुछ अदृश्य शक्तियों ने डॉ. अम्बेडकर को प्रोत्साहन प्रदान कर डॉ. अम्बेडकर की धमकियों के चलते समस्या को खूब बढ़ा दिया है।[3]

सेगांव से वापस जाते हुए वार्धा स्टेशन पर दलितों ने बड़े उत्साह से डॉ. अम्बेडकर का स्वागत किया।

गांधी के लाखों सर्मथकों धन पति, वालचन्द हीराचन्द और जमनालाल बजाज ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर से पूछा कि वे गांधी के शिविर में सम्मलित क्यों नहीं हो जाते क्योंकि अगर वे ऐसा करें तो उनको दलित वर्ग के उत्थान के लिए असीम सम्पदा और संसाधन उपलब्धि होने की संभावना होगी। डॉ. अम्बेडकर ने स्पष्ट उत्तर दिया कि गांधी और उनमें सर्वोच्च विषयों पर विभिन्न मत हैं। यह सुनकर उन्होंने नेहरू का उल्लेख किया और कहा कि वे अपने विचारों को एक किनारे छोड़कर नेहरू और गांधी के मार्ग पर चलें। इस पर उन्होंने यह कहकर कि नेहरू का उदाहरण उन पर लागू नहीं होता चुप करा दिया और यह जुमला जड़ा कि वे अपनी सफलता के लिए दोनों लक्ष्मी पुत्र अपनी आत्मा का बलिदान नहीं कर सकते।

डॉ. अम्बेडकर के स्वागत में उमड़ी दलितों की भारी भीड़ को देख लाखों लोग आश्चर्य चकित रह गये और उन्होंने कहा यद्यपि वे इतना धन हरिजनों के कल्याण पर खर्च करते हैं परन्तु इतनी उत्साही प्रतिक्रिया देखने को नहीं मिलती। डॉ. अम्बेडकर कहां चुप रहने वाले थे और उत्तर थमाया कि यह अन्तर तो एक माँ और एक आया के बीच का है।[4]

● ● ●

[4] कीर, पृष्ठ सं. 268–269

28

मुक्ति और उन्नति के लिए धर्म परिवर्तन आवश्यक है

रविवार 17 मई, 1936 को पूर्व और दक्षिण ठाणे जिले के अछूतों ने कल्याण में एक महाअधिवेशन का आयोजन किया। यह अधिवेशन डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में धर्म परिवर्तन घोषणा को खुले समर्थन के उपलक्ष्य में आयोजित किया गया था। आस–पास के 100 से 150 गांवों के अछूतों की भीड़ रेलवे स्टेशन पर डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के स्वागत में उमड़ पड़ी। 3 बजे अपराह्न कल्याण रेलवे स्टेशन पहुंचने पर अनेक नेता उनसे मिले और अभिनन्दन किया।

रेलवे स्टेशन के बाहर लोग नारे लगा रहे थे ''अम्बेडकर जिन्दाबाद, थोड़े दिन में भीमराज''। बाहर जुलूस में लगभग 4000 अछूत थे। इस जलूस में बैंड पार्टी, शारिरिक व्यायाम तथा कलाबाजी और करतब करने वाले लोगों की मंडलियां भी थीं। पूरा वातावरण गूंगे और बहरे कहे जाने वाले अछूतों के प्यार तथा आत्मसम्मान की मनोदशा से ओत प्रोत था।

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने विस्तार से समझाया कि अछूतों के पास धर्म परिवर्तन को छोड़ कोई दूसरा विकल्प क्यों नहीं है। – सम्पादक

''धर्म परिवर्तन के बारे में मेरे विचार जानने को आप यहाँ सम्मिलित हुए हैं। इसलिए मैं आप लोगों से इस विषय पर विस्तार से चर्चा करना आवश्यक समझता हूं।

कुछ लोग यह प्रश्न उठाते हैं, ''हम अपना धर्म परिवर्तन क्यों करें?'' तब मेरी सहज प्रतिक्रिया उलट प्रश्न करने की होती है, ''हम धर्म परिवर्तन क्यों न करें?''

मैं अपने जीवन में घटे कुछ दृष्टातों का वर्णन करूंगा तब आपको मेरे धर्म परिवर्तन के विकल्प को समझना आसान होगा। आपको भी अपने जीवन में ऐसे कटु अनुभव हुए होंगे।

मेरे जीवन में घटित चार या पांच घटनाओं ने मेरे मस्तिष्क पर गहरी छाप छोड़ी और मुझे हिन्दू धर्म त्यागकर कोई और धर्म अपनाने को प्रेरित किया। आज उनमें से दो या तीन घटनाऐं आपको बताऊंगा।

मेरा जन्म महू, इन्दौर में हुआ, जहां मेरे पिता जी सेना में सेवारत थे। वे उस समय सूबेदार थे। क्योंकि हम छावनी में रहते थे, सेना क्षेत्र से बाहर की

दुनिया से वास्ता बहुत कम था। मुझे अस्पृश्यता का कोई अनुभव नहीं था। जब पेंशन पाकर मेरे पिताजी सेवानिवृत हुए तो हम रहने के लिए सत्तारा चले गये। मैं जब पांच वर्ष का भी नहीं हुआ था तो मेरी मां चल बसी थीं। गोरेगांव में अकाल पड रहा था इस पर काबू पाने के लिए सरकार ने 'अकाल सहायता रोजगार' शुरू किया। उन्होंने पानी के एक बड़े हौज की खुदवाई शुरू की और मेरे पिताजी की नियुक्ति मज़दूर शिविर पर मज़दूरों में मजदूरी बांटने के लिए की गई। उनको इस सिलसिले में गोरेगांव शिविर में रहना पड़ा और हम चार बच्चे सत्तारा में रह गए। चार–पांच साल तक हमें केवल चावल पर ही रहना पड़ा। सत्तारा आने के बाद ही हमें अस्पृश्यता किसे कहते हैं। इसका अनुभव हुआ। पहली चोट मुझे तब लगी जब मैंने यह जाना कि कोई भी नाई मेरे बाल काटने को राजी नहीं हुआ। इससे हम विचलित थे। मेरी बड़ी बहन जो अभी भी जीवित है, हमारे घर के बाहर चबूतरे पर बैठकर मेरे बाल काटा करती थी। यह बात मेरी समझ से परे थी कि इतने नाइयों के होते कोई भी, कोई नाई मेरे बाल क्यों नहीं काटता था।

दूसरा दृष्टांत भी उसी समय से संबंधित है। जब मेरे पिताजी गोरेगांव में थे तो वे हमें पत्र भेजते थे। एक पत्र में उन्होंने हमें गोरेगांव आने का निमन्त्रण दिया। रेलगाड़ी द्वारा गोरेगांव जाने के विचार ने मुझे बहुत रोमांचित किया क्योंकि मैंने तब तक रेलगाड़ी कभी नहीं देखी थी। मेरे पिताजी के भेजे रुपयों से हमने नये कपड़े सिलवाये और मेरा भाई, मेरी बहन की बेटी और मैंने गोरेगांव के लिए यात्रा शुरू की।

हमने चलने से पहले ही एक पत्र भिजवाया था, परन्तु दुर्भाग्यवश हमारे नौकर की लापरवाही के कारण या उसकी चूक के कारण वह पत्र मेरे पिताजी तक नहीं पहुंचा। हम आश्वस्त थे कि मेरे पिताजी किसी नौकर को हमें लेने रेलवे स्टेशन अवश्य भेजेंगे। रेलगाड़ी से उतरने के बाद जब हमें कोई नौकर नहीं दिखा तो हमें बहुत कष्ट हुआ।

जल्द ही सभी लोग प्रस्थान कर गए और हमारे अतिरिक्त प्लेटफार्म पर कोई यात्री नहीं बचाया। हमने इंतजार में लगभग 45 मिनट व्यर्थ गंवाये। स्टेशन मास्टर ने हमसे पूछा कि हम किसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। किस जाति से हैं और हमें कहां जाना था। हमने बताया कि हम महार जाति से हैं। उसे यह सुनकर धक्का लगा और वह कोई पांच कदम पीछे हट गया। परन्तु हमारे कपड़े देख उसने अंदाजा लगाया होगा कि हम किसी संपन्न परिवार से हैं। उसने हमें भरोसा दिलाया कि वह हमें कोई बैलगाड़ी दिलवाने की कोशिश करेगा। परन्तु हमारी जाति महार होने के कारण कोई भी गाड़ीवान हमें अपने वाहन में नहीं ले जाना चाहता था। शाम होने वाली थी, शाम के 6 या 7 बजे तक हमें कोई गाड़ी नहीं मिली। अंततः एक

गाड़ीवान हमें अपनी गाड़ी में ले जाने को तैयार हुआ। परन्तु उसने पहले ही यह बात खोल ली कि हमारे लिए गाड़ी की कोचवानी वह नहीं करेगा।

क्योंकि मैं सेना क्षेत्र में रहा हुआ था मुझे कोचवानी करने में कोई कठिनाई नहीं दिखी। जैसे ही हमने उसकी यह शर्त स्वीकार कर ली वह अपना वाहन ले आया और हम सब बच्चों ने गोरेगांव के लिए प्रस्थान किया।

गांव के बाहर थोड़ी दूर पर हमें एक पानी का नाला दिखा। कोचवान ने हमसे कहा कि रास्ते में और कहीं पानी नहीं मिलेगा इसलिए हमें यहीं खाना खा लेना चाहिए। अतः हम गाड़ी से उतरे और भोजन किया। पानी गंदा था और उसमें गोबर और लीद भी मिली थी। इसी बीच गाड़ीवान भी अपना रात्रि का भोजन खाकर वापस आ गया था।

जैसे शाम का अंधेरा गहराया, गाड़ीवान भी चुपके से बैलगाड़ी में चढकर हम लोगों के पास बैठ गया। जल्दी ही अंधेरा इतना बढ़ गया कि मीलों तक न तो किसी दीपक की टिमटिमाती रोशनी और न ही कोई इन्सान दिख रहा था। डर, अंधेरा व अकेलेपन से हमें रोने को मन हो रहा था। आधी रात बीते काफी समय हो गया था और हमें डर लग रहा था। हम इतना डर गये थे कि लगा हम कभी गोरेगांव नहीं पहुंचेंगे। जब हम चुंगी नाका पहुंचे तो हम गाड़ी से कूद पड़े। हमने नाकादार से सवाल पूछा कि क्या आस–पास कुछ खाने को मिल सकता था। मैं फारसी भाषा जानता था इसलिए फारसी में बात करने में मुझे कठिनाई नहीं थी मैंने उससे फारसी में ही बात की। उसने रूखेपन से संक्षिप्त उत्तर दिया और पहाड़ियों की तरफ उंगली इंगित कर दी। किसी तरह हमने रात गहरी संकरी घाटी में बिताई और सुबह जल्दी ही गोरेगांव के लिए यात्रा पर दोबारा निकल पड़े। अंत में, अगले दिन मध्याह्न उपरान्त हम थककर निढ़ाल तथा लगभग अधमरे होकर गोरेगांव पहुंचे।

तीसरी घटना जब मैं बड़ौदा रियासत में सेवारत था से संबंधित है। बड़ौदा रियासत से छात्रवृति प्राप्त कर मैं विदेश शिक्षा पाने गया था। इंगलैंड से वापस लौटकर अनुबंध की शर्तों के अंतर्गत मैं बड़ौदा दरबार में सेवारत हुआ। मुझे बड़ौदा में रहने को घर नहीं मिला। पूरे बड़ौदा शहर में न कोई हिन्दू, न मुसलमान मेरे को घर देने को राजी हुआ किसी भी मोहल्ले में जगह न पाने से हताश होकर मैंने पारसी धर्मशाला में आवास पाने का निर्णय लिया। अमेरिका और इंगलैंड में रहकर मेरा रंग साफ व गोरा हो गया था और व्यक्तित्व भव्य। मैंने अपना फर्जी नाम 'अदलजी सोराबजी' रखा और पारसी बन एक पारसी धर्मशाला में रहने लगा। पारसी मैनेजर ने मुझे आवास 2/– प्रतिदिन की दर से दिया। परन्तु जल्दी ही लोगों को इस तथ्य की भनक लग गई कि बड़ौदा के महाराज गायकवाड़ ने एक महार लड़के को अपने दरबार में एक

अधिकारी नियुक्त किया है। जल्दी ही मेरे फर्जी नाम से पारसी धर्मशाला में रहने को लेकर मैं संदेह के दायरे में आ गया और मेरा भेद खुल गया।

मेरे वहां रहने के दूसरे ही दिन जब मैं सुबह का जलपान कर कार्यालय के लिए निकलने को था कि कोई पंद्रह से बीस पारसी लठैतों की भीड़ ने मुझे टोका और जान से मारने की धमकी देते हुए मुझसे पूछा कि मैं कौन था, मैंने कहा, ''मैं एक हिन्दू हूँ''। परन्तु उन्हें इस उत्तर से संतुष्ट नहीं होना था। क्रोध में उन्होंने मेरे पर गालियों की बौछार कर दी और मुझे तुरन्त कमरा खाली करने को कहा। समय पर काम आई मेरी बुद्धि और मेरे ज्ञान से मुझे संबल मिला। नम्रता से मैंने 8 घंटे और ठहरने की स्वीकृति मांगी। दिन भर मैंने आवास पाने के प्रयास किए परन्तु मैं कहीं भी सिर छुपाने के लिए जगह पाने में बुरी तरह विफल रहा। मैंने अपने कई मित्रों से सहायता मांगी परन्तु हर एक ने कोई न कोई बहाना बनाकर मेरी प्रार्थना ठुकरा दी और मुझे ठहराने में असमर्थता जता दी। मैं पूरी तरह से निराश तथा निढ़ाल हो गया। आगे क्या करता? निर्णय मैं नही ले पाया। निराश और पराजित मैं चुपचाप एक स्थान पर बैठ गया और मेरी आंखों से अश्रुधारा बह रही थी। घर मिलने की कोई आशा न होने पर और नौकरी छोड़ना ही दूसरा विकल्प लगने की स्थिति में, मैंने त्याग पत्र दे दिया और रात की गाड़ी से बम्बई के लिए रवाना हो गया।

जीवन में भयभीत करने वाली ऐसी घटनायें आपके जीवन में भी अवश्य घटित हुई होंगी। मैं आप लोगों से पूछना चाहूंगा ऐसे समाज के भीतर जीने की क्या तुक है जिसमें मानवता है ही नहीं, जिसमें आपके प्रति आदर नहीं, जो आपकी रक्षा नहीं करता और जो आपको मानव ही नहीं मानता? इसके विपरीत यह समाज आपका अपमान करता है, नीचा दिखाता है तथा तुम्हें आहत करने का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देता। कोई भी मनुष्य जिसमें रत्तीभर भी आत्मसम्मान है और शिष्टाचार है इस निर्दयी धर्म से जुड़कर रहना पसन्द नहीं करेगा, केवल वे जो गुलामी पंसद करते हैं वे ही इस धर्म में रह सकते हैं।

मेरे पिता तथा पूर्वज बड़े श्रद्धालु हिन्दू थे परन्तु हिन्दू धर्म द्वारा लगाई पाबन्दियों के चलते वे शिक्षा ग्रहण नहीं कर पाए। धर्म ने उन्हें शस्त्र धारण करने की स्वीकृति नहीं दी। हिन्दुत्व के अन्दर उनको धन अर्जित करना भी वर्जित था। इस धर्म का एक अनुचर होते हुए मेरे पिता ये तीनों वस्तुएं नहीं पा सके।

मैं संस्कृत पढ़ना चाहता था परन्तु हिन्दू धर्म द्वारा लगाई गई रोकों के चलते मेरे लिए संस्कृत सीख पाना संभव नहीं हुआ। अब मेरे लिए, शिक्षा, धन पाना और शस्त्र धारण करना संभव हो गया है।

इस तथ्य के आधार पर कि हिन्दू धर्म ने तुम्हारे पूर्वजों को अपमानजनक जीवन जीने को मजबूर किया और उन्हें हर प्रकार से नीचा दिखाया उनको गरीब तथा अज्ञानी बनाए रखा। ऐसे अत्यन्त दुष्टतापूर्ण धर्म की परत में तुम क्यों लिपटे रहना चाहते हो? अगर तुम अपने पूर्वजों की तरह अपमानजनक जीवन जीने, नीचे स्तर पर बने रहने और अपमान सहने को स्वीकार करते रहोगे तो तुम घृणास्पद ही बने रहोगे न ही कोई तुम्हें आदर करेगा, न ही कोई तुम्हारी सहायता को आएगा।

इन कारणों से धर्म परिवर्तन का प्रश्न हमारे लिए बहुत महत्वपूर्ण हो गया है। अगर तुम हिन्दू धर्म की परत में ही बने रहते हो तो तुम्हारा स्तर एक दास के स्तर से ज्यादा नहीं हो सकेगा। व्यक्तिगत रूप से मेरे लिए कोई प्रतिबन्ध नहीं है। अगर मैं एक अछूत बना रहूंगा तो भी मैं किसी सवर्ण हिन्दू के बराबर का स्तर प्राप्त कर सकता हूं। इस प्रकार मैं हिन्दू बना रहूं या नहीं, इससे मेरे स्वास्थ्य पर इसका कोई दुष्प्रभाव नहीं पड़ता। मैं एक उच्च न्यायालय का न्यायमूर्ति या विधायिका या विधान परिषद का सदस्य या एक मंत्री बन सकता हूं। परन्तु आपकी मुक्ति और प्रगति के लिए धर्म परिवर्तन मुझे अति आवश्यक लगता है।

प्रतिष्ठा से गिराए हुए तथा निर्लज्ज जीवन को बदलकर स्वर्णिम जीवन और भविष्य बनाने के लिए धर्म परिवर्तन नितांत आवश्यक है। मुझे आशा है कि आपकी दशा सुधारने हेतु आपके मित्र व शुभचिंतक अवश्य आपकी सहायता के लिए सहयोग देंगे। आपका भाग्य सुधारने के लिए मुझे धर्म परिवर्तन प्रक्रिया आरम्भ करनी होगी। मैं अपनी प्रगति के प्रश्न के बारे में कतई चिंतित नहीं हूं। जो कुछ भी मैं आज के दिन कर रहा हूं उसमें आप सबका हित व प्रयोजन निहित है।

आप मुझे ईश्वर की तरह सम्मान देते हो परन्तु मैं आप सबकी तरह एक मानव हूं और मैं देवमूर्ति नहीं हूं। आप मुझसे जो भी सहायता चाहते हैं मैं करने को तैयार हूं। मैंने आपको इस निराश व अपमानजनक अवस्था से छुटकारा दिलाने का निर्णय किया है। मैं कुछ भी निजी लाभ के लिए नहीं कर रहा हूं। आपके उत्थान और आपके जीवन को उपयोगी तथा उद्देश्यपूर्ण बनाने के लिए मैं संघर्षरत रहूंगा। आपको अपना उत्तरादायित्व समझना अति आवश्यक है और मेरे दर्शाये मार्ग पर चलें। अगर आप गंभीरता से अनुपालन करेंगे तो लक्ष्य प्राप्त करना कतई कठिन नहीं होगा। ''[1]

● ● ●

---

[1] जनता : 23 मई 1936 मराठी में प्रकाशित (अनुवादित)

29

मुक्ति का मार्ग क्या है?

येवला, जिला नासिक में 13 अक्तूबर, 1935 की घोषणा, की पृष्ठ भूमि में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 30 और 31 मई, 1936 को दादर, मुम्बई में एक सभा का आयोजन किया ''मैं गम्भीरता से आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं हिन्दू के रूप में नहीं मरूंगा।'' इस सभा का एकमात्र उद्देश्य धर्म परिवर्तन आन्दोलन के लिए अपने लोगों के समर्थन का आकलन करना था। यहां लगभग तीस हजार अछूत महार उपस्थित थे।

विशेषतौर पर निर्मित पंडाल में निम्न नारे प्रदर्षित थेः–

- धर्म मनुष्य के लिए है न कि मनुष्य धर्म के लिए।
- दयामय बनने के लिए, धर्म परिवर्तन करो।
- संगठित होने के लिए, धर्म बदलो।
- शक्ति प्राप्त करने के लिए, धर्म परिवर्तन करो।
- समता लाने के लिए धर्म परिवर्तन करो।
- स्वतंत्रता के लिए धर्म बदलो।
- अपने निजी जीवन की खुशहाली के लिए धर्म बदलो।
- उस धर्म में क्यों बने रहना चाहते हो जो तुम्हें मानव नहीं समझता?
- उस धर्म में क्यों हो, जहां आपको मन्दिरों में प्रवेश निषेध हैं?
- उस धर्म में क्यों हो, आपको पानी पीने की मनाही है?
- उस धर्म में क्यों हो, जिसमें आपको शिक्षा प्राप्त करना वर्जित है?
- उस धर्म में क्यों हो, जहाँ आपका कदम–कदम पर अपमान किया जाता है।
- उस धर्म में हो जिसमें आपको नौकरी पाने में अवरोध है?
- धर्म परायण मानवीय संबंधों की मनाही वाला धर्म नहीं–कोरा शक्ति प्रदर्शन है।

- ❖ मानवता की पहचान को जो अधर्म कहे वह धर्म नहीं—एक रोग है।
- ❖ एक धर्म जो अपवित्र जानवर को छूने की आज्ञा देता हो, परन्तु मानव को छूने की मनाही करे, वह धर्म नहीं एक मूर्खता है।
- ❖ एक धर्म जो योजनाबद्ध षड़यंत्र से, एक वर्ण को शिक्षा से वंचित रखे, धन संचय तथा शस्त्र धारण करने को मना करे, यह धर्म नहीं है, बलिक मानव जीवन का उपहास है।
- ❖ एक धर्म जो निरक्षर को निरक्षर बने रहने तथा गरीब को गरीब बने रहने के लिए बाधित करता है, धर्म नहीं एक दण्ड है।
- ❖ वे जो दावा करते हैं कि ईश्वर सर्वव्यापी हैं लेकिन इन्सान से, जानवरों से भी खराब व्यवहार करते हैं, वे पाखण्डी हैं। ऐसे लोगों की संगति से दूर रहो।
- ❖ वे जो चीटियों को चीनी खिलाते हैं लेकिन आदमियों को पानी पीने को मनाही कर मारते हैं वे पाखण्डी हैं। इनकी संगति से बचो।

एक यूरोपियन मिशनरी मि. स्टैनी जोन्स तथा श्री बी.जे. जाधव वहाँ विशेषतौर पर आमन्त्रित थे। वहां पर बहुत से सिक्ख, मुस्लिम नेता तथा पुरोहित भी थे जो धर्म परिवर्तन के प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष संकेतों को समझने के उत्सुक थे। इस सम्मेलन का मुख्य उद्देश्य 13 अक्तूबर 1935 को येवला में की गई घोषणा को कार्यान्वित करने के तरीके व नीति ढूंढना था। श्री डी. डोलास ने प्रतिनिधियों का स्वागत किया जबकि श्री वी.एस. वेंकेटराव हैदराबाद से आए दलित वर्ग के नेता, इस सभा के अध्यक्ष रहे।[1] इस बारे में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने 31 मई 1936 को मराठी में विस्तारपूर्वक वर्णन किया। उन्होंने तब पहले से तैयार भाषण का वाचन किया। – संपादक

उन्होंने कहा—

देवियो और सज्जनो,

अब तक आप जान गए होंगे कि यह सभा मेरे द्वारा हाल ही में धर्म परिवर्तन घोषणा पर गम्भीरतापूर्वक विचार करने के उद्देश्य से बुलाई गई है। धर्म परिर्वतन का विषय मेरा बहुत प्रिय विषय है। केवल यही नहीं, मेरे विचार से आपका पूरा भविष्य इस विषय पर आधारित है। मुझे यह कहने में कोई हिचकिचाहट नहीं है कि आपको इस समस्या की गम्भीरता अच्छे से समझ आ गई है। अगर ऐसा नहीं होता तो आप इतनी विशाल संख्या़ में एकत्रित न हुए होते। मुझे इस भारी संख्या़ को देखकर बहुत खुशी है।

---

[1] जनता, 20 जून, 1936

धर्म परिवर्तन की आवश्यकता

मेरे धर्म परिवर्तन की घोषणा के पश्चात हमारे आदमियों ने विभिन्न स्थानों पर बहुत सी सभाएँ गठित की और अपने मत तथा विचार प्रकट किए जो आप तक पहुंच गए होंगे। लेकिन हमें पहले कभी इकट्ठे होकर धर्म परिवर्तन समस्या पर विमर्श तथा निर्णय लेने का अवसर नहीं मिला। मुझे इस अवसर की बहुत प्रतीक्षा थी। आप सभी सहमत होंगे कि धर्म परिवर्तन आंदोलन को सफल बनाने की योजना अत्याश्यक है। धर्म परिवर्तन बच्चों का कोई खेल नहीं है। यह एक मनोरंजन का विषय नहीं है। यह मानव जीवन को सफल बनाने से संबंधित है। जिस तरह एक नाविक अपनी लंबी यात्रा शुरू करने से पहले अपनी सभी आवश्यक तैयारी कर लेता है, उसी तरह हमें भी पूरी तैयारी करनी चाहिए। इसके बिना दूसरे किनारे तक पहुंचना असम्भव हैं। लेकिन जैसे एक नाविक तब तक सामान नहीं लादता जब तक कि उसे कितने मुसाफिर नाव पर चढ़ाने हैं का अन्दाजा नहीं लग जाता। मेरी भी स्थिति वैसी ही है और मैं सही तथ्यों के बगैर धर्म परिवर्तन आंदोलन को आगे नहीं बढ़ा सकता। जब तक मुझे यह पता नहीं कि कितने लोग हिन्दू धर्म त्यागने को तैयार हैं, मैं धर्म परिवर्तन की तैयारी शुरू नहीं कर सकता। जब मैंने बम्बई के कुछ श्रमजीवियों के सामने यह प्रकट किया कि मैं धर्म परिवर्तन के बारे में लोगों की राय सभा में मिले बगैर जानने में सक्षम नहीं हूं, उन्होंने स्वेच्छा से सभा को बुलाने का दायित्व बिना खर्चे तथा बिना मजदूरी वहन किया। हमारे आदरणीय नेता तथा स्वागत समिति के प्रधान श्री रियो जी दगड़जी, दोलास अपने भाषण में संयोजकों द्वारा उठाए गए। कष्टों का उल्लेख पहले ही कर चुके हैं। मैं सभा की स्वागत समिति का आभारी हूं जिन्होंने इस सभा के आयोजन में कड़ा परिश्रम व प्रयास किया।

केवल महारों की सभा क्यों?

कुछ लोग आपत्ति कर सकते हैं कि केवल महारों की सभा क्यों बुलाई गई? अगर धर्म परिवर्तन की घोषणा सभी अछूतों के लिए है तो सब अछूतों की सभा क्यों नहीं बुलाई गई? सभा के सामने विषयों पर विचार–विमर्श करने से पहले मैं इन प्रश्नों के उत्तर देने के लिए प्रतिबद्ध हूं। यहां पर केवल महारों की सभा बुलाने के पीछे कई कारण हैं। पहले इस सभा के लिए हमने न ही सरकार से संरक्षण की मांग की है और न ही हिन्दुओं से सामाजिक अधिकारों की मांग उठाई है। सभा के सामने केवल एक प्रश्न है, "हम अपने जीवन को सफल बनाने के लिए क्या करें ? हम अपने जीवन के भविष्य के रास्ते को कैसे तराशें? इस प्रश्न का हल संभव है और प्रत्येक जाति को अलग–अलग अपनी समस्या का हल निकालना आवश्यक है। यही कारण है कि मैंने सभी अछूतों की सभा एक साथ नहीं बुलाई।

केवल माहरों की सभा बुलाने का एक कारण और है । मैंने लगभग दस महीने पहले घोषणा की थी। इस कार्यकाल में लोगों की चेतना जगाने के पर्याप्त प्रयत्न हुए। मुझे लगा कि लोगों की राय जानने का सही समय आ गया है। मेरे अनुसार राय जानने का सरल उपाय अलग–अलग जाति की अलग सभा करना है। धर्म परिवर्तन की घोषणा करने के लिए लोगों की राय समझना आवश्यक हैं। और मुझे विश्वास है कि अछूतों की एक आम सभा बुलाने की अपेक्षा प्रत्येक जाति के लोगों की अलग–अलग सभा कार्यान्वित सभी अछूतों की वास्तविक राय जानने के लिए अधिक भरोसेमन्द होगी। इस तरह की सर्वजाति सभा की राय चाहे सभी अछूतों की राय कही जाए परन्तु सभी अछूत जातियों की प्रतिनिधि राय नहीं होगी। इस तरह की दुविधा से निपटने तथा लोगों की विश्वस्त राय जानने के लिए ही केवल महार जाति की सभा बुलाई गई। यद्यपि दूसरे समुदाय इसमें सम्मिलित नहीं है, इससे उनकी हानि नहीं है। अगर उनमें धर्म परिवर्तन की इच्छा नहीं है तो उनको इस सभा में सम्मिलित न होने के पश्चाताप का कोई कारण नहीं होना चाहिए। अगर वे सभी हिन्दू धर्म को छोड़ने के इच्छुक हैं और उनके रास्ते में ऐसी कोई रुकावट नहीं कि उन्होंने इस सभा में भाग नहीं लिया है शेष समुदाय के अछूत लोग स्वतंत्र तौर पर अपनी जाति सभाएं और अपनी राय जग जाहिर करें। मैं उनको सलाह देना चाहूंगा कि इस तरह की सभाओं में मैं जितना हो सके सचमुच मदद करने के लिए तैयार रहूंगा, इतना परिचय बहुत है। अब मैं मुख्य विषय पर आता हूं। एक आम आदमी के लिए धर्म परिवर्तन जितना अधिक महत्वपूर्ण है, समझना उतना ही कठिन है। इस धर्म विषय पर आम आदमी को संतुष्ट करना आसान काम नहीं है। अतः आप लोगों के पूर्णतया आश्वस्त हुए बगैर धर्म परिवर्तन को कार्यान्वित करना जोखिम भरा है। मैं इस विषय को सुगम से सुगम तौर पर अपने स्तर पर समझाऊंगा।

धर्म परिवर्तन का भौतिक दृष्टिकोण

धर्म परिवर्तन विषय को सामाजिक और धार्मिक, भौतिक और अध्यात्मिक दृष्टिकोण दो पहलुओं से दृष्टिगत करना चाहिएः– चाहे जो भी रहा हो या सोचने की कोई भी धारा हो पहले अस्पृश्यता की प्रकृति व इसके चलन को समझने की आवश्यकता है। इसके समझे बिना मेरी धर्म परिवर्तन की घोषणा के निहित वास्तविक अर्थ को स्पष्ट रूप से समझने में आप अक्षम रहेंगे। अस्पृश्यता की स्पष्ट जानकारी व जीवन में चलन के लिए में आपको दी गयी यातनाओं तथा ज्यादत्तियों की कहानियों के स्मरण की सलाह दूंगा। उदाहरण स्वरूपः सवर्ण हिन्दू द्वारा साधारण कारणों के लिए पिटाई जैसे कि आपके बच्चों को सरकारी स्कूल में जाने का अधिकार का दावा या सार्वजनिक कुएं से पानी निकालने का अधिकार का दावा या शादी के

दौरान वर का घोड़ी की पीठ पर बैठ जुलूस के अधिकार का दावा आम साधारण घटनाएं हैं। आप सभी इन तथ्यों के बारे में जानते हैं क्योंकि यह सब आपकी आंखों के सामने नित्य घटित होते हैं। लेकिन दूसरे बहुत से कारण है, जिनके लिए हिन्दू जाति के सवर्णों द्वारा अछूतों पर अत्याचार किए जाते हैं अगर यह भेद खोल दिए जाएं तो हिन्दुस्तान से बाहर के लोगो को चौका देंगे। अछूत अगर अच्छा कपड़ा पहने तो वे पीटे जाते हैं। उनके लोहे तथा तांबे के बर्तन इस्तेमाल करने पर उनको कोड़े लगाए जाते हैं। उनके घर जला दिए जाते हैं, क्योंकि उन्होंने भूमि की जुताई की। पवित्र धागा अपने शरीर पर पहनने के लिए वे पीटे जाते हैं। मरे हुए पशुओं को उठाने से मना करने पर तथा सड़ा मांस न खाने पर या जुराब व जूते पहन कर गांव की सड़क पर चलने या सवर्ण हिन्दुओं के आगे झुक कर अभिवादन न करने पर या खुले खेतों में पाखाना के लिए जाते समय तांबे के लोटे में परिक्षालन के लिए पानी लेकर जाने पर भी उनकी पिटाई होती है। हाल ही में एक घटना सामने आई जिसमें अछूतों की पिटाई इसलिए की, क्योंकि उन्होंने एक रात्रि भोजन में चपातियां (रोटियां) परोसी। आपने ऐसी घटनाएं अवश्य सुनी होंगी और आप में से कई ने ऐसी यातनाएं अनुभव भी की होंगी। जहाँ पिटाई करना सम्भव नहीं होता, वहां समाज से बहिष्कार का अस्त्र आपके विरुद्ध उपयोग होने का ज्ञान भी आपको होगा। आप सबको ज्ञात है कि कैसे सवर्ण (छूत) हिन्दू आपको काम पर न रखने की पाबन्दी, पशुओं को जंगल में चराने पर रोक और आपके आदमियों पर गांव में घुसने पर रोक इत्यादि लगाकर आपके दैनिक जीवन में कठिनाइयां पैदा कर जीना दूभर कर देते हैं। परन्तु आप में से किसी विरले ने ही यह समझने की कोशिश की होगी कि ऐसा क्यों होता है। उनकी इस तानाशाही का आधार क्या है? मेरे लिए यह अतिआवश्यक है कि हम सब यह समझें।

यह एक वर्ग संघर्ष का मामला है

उपरोक्त उदाहरणों का किसी के व्यक्तिगत सद्‌गुणों या बुरी आदतों के साथ कोई संबंध नहीं है। यह किन्हीं दो प्रतिद्वंदियों के बीच की पुश्तैनी दुश्मनी नहीं हैं। छुआछूत की समस्या भी वर्ग संघर्ष का मामला है। यह हिन्दू जाति के छूतों और अछूतों के बीच का संघर्ष है। यह एक आदमी के प्रति अन्याय करने का मसला नहीं है। यह एक वर्ग पर दूसरे के द्वारा अन्याय करने का मसला है। इस वर्ग संघर्ष का सम्बन्ध सामाजिक, स्तर का वर्ग है। यह संघर्ष दर्शाता है कि एक वर्ग के दूसरे वर्ग के साथ सम्बन्ध कैसे रखने चाहिए। आप जैसे ही दूसरों के साथ बराबरी का व्यवहार करने का दावा करते हैं तुरन्त ही यह संघर्ष शुरू हो जाता है। अगर पहले से ऐसा नहीं होता तो रोटी परोसना, अच्छी किस्म के कपड़े पहनना, पवित्र धागा

धारण करना, धातु के बर्तन में पानी लाना, घोड़े की पीठ पर दूल्हे का सवारी करना इत्यादि जैसे साधारण कारणों पर संघर्ष नहीं हुए होते। इन सभी मामलों में आप अपना धन खर्चते हैं, फिर भी उच्च हिन्दू जाति वाले क्रोधित क्यों होते हैं? उनके गुस्से का मात्र कारण बड़ा सीधा है आपको उनके साथ बराबरी के व्यवहार से उनकी बेईज्जती महसूस होती है। आपका स्तर उनकी आंखों में निम्न है, आप अशुद्ध हैं, वे आपको खुश रहने की आज्ञा तभी देंगे जब आप समाज की सीढ़ी का सबसे निचला डंडा ही बने रहोगे। जैसे ही आप अपने स्तर को पार करते हैं, संघर्ष शुरू हो जाता है। उपरोक्त दिया गया उदाहरण एक और तथ्य को उजागर करता है कि छुआछूत की विशेषता अस्थायी न होकर स्थायी है। सीधे तौर पर कहा जा सकता है कि यह संघर्ष हिन्दू जाति तथा अछूतों के मध्य स्थायित्व तौर पर उल्लेखनीय है। यह संघर्ष कभी रुकने वाला नहीं है, क्योंकि उच्च सवर्ण वर्ग के लोगों के मतानुसार धर्म ने आपको समाज के सबसे निचले स्तर पर रखा है और अपने आप में यह व्यवस्था आदि और अनन्त है। समय तथा परिस्थितियों के अनुसार कोई परिवर्तन सम्भव नहीं है। आप आज समाज की सीढ़ी रूपी रीढ़ के सबसे निम्न स्तर के डंडे हैं। आप सदा ही निम्न स्तर पर रहे व आगे भी बने रहोगे। इसका मतलब है कि हिन्दुओं तथा अछूतों के बीच का संघर्ष आगे भी चलता रहेगा। इस महत्वपूर्ण प्रश्नवाचक संघर्ष के बीच आप कैसे बचे रहोगे और सोच के बगैर आप यहां से बाहर निकल भी नहीं सकते। केवल उनको इस समस्या पर सोचने की आवश्यकता नहीं है जो हिन्दुओं के हुक्म बजाने में जीने की इच्छा रखते हैं, या वे जो उनके दास बने रहने की इच्छा रखते हैं। लेकिन जो आत्मसम्मान तथा समता का जीवन जीने की इच्छा रखते हैं उनको इस प्रश्न पर अवश्य सोचना होगा। इस संघर्ष में हम कैसे जीवित रहेंगे? मेरे अनुसार इस प्रश्न का उत्तर कठिन नहीं है। आप सब श्रोता जो यहां एकत्रित हुए हैं, सहमत होंगे कि किसी संघर्ष में शक्तिशाली ही जीतता है। वह जिसमें शक्ति नहीं है उसे सफलता की आशा भी नहीं करनी चाहिए। यह अनुभव के द्वारा सिद्ध हो चुका है और मुझे इस पर और उदाहरण देने की आवश्यकता नहीं है।

पहले शक्ति हासिल करो

अब आपको इस प्रश्न पर सोचना आवश्यक है कि क्या इस संघर्ष में अस्तित्व में बने रहने के लिए आप सक्षम हैं? तीन तरह की शक्तियों से आदमी परिचित है। 1. आदमी की ताकत 2. धन, और 3. बौद्धिक शक्ति । इनमें से कौन सी शक्ति आपके पास है? जहां तक आदमी की ताकत का प्रश्न है यह साफ है कि आप अल्पसंख्यक हैं। बम्बई प्रेसीडेंसी में अछूत कुल जनसंख्या का केवल आठवाँ हिस्सा है और वे भी असंगठित हैं। उनकी अपनी जातियां उनको संगठित होने की

आज्ञा भी नहीं देती हैं। वे भली भांति जुड़े भी नहीं है बल्कि गांवों में बिखरे हुए हैं। इन्हीं कारणों से ये अल्प जनसंख्यक अछूत संघर्ष में नम्बर जुटा पाने में असमर्थ हैं इसलिए और कमजोर पड़ते हैं। वित्तीय शक्ति भी इसी तरह की है। यह एक अविवादित तथ्य है कि कम से कम कुछ आदमियों की ताकत तो है लेकिन आपके पास वित्तीय ताकत बिल्कुल नहीं है। आपके पास न ही व्यापार, न ही काम, न ही नौकरी और न ही जमीन है। उच्च जाति के लोगों द्वारा रोटी के टुकड़े बाहर फेंक दिये जाते हैं उसी से आप जीवित रहते हैं। आपके पास न ही खाना है, न ही कपड़े, आपके पास क्या वित्तीय शक्ति है? अगर आपके साथ अन्याय होता है तो आप समस्या समाधान के लिए सक्षम नहीं हैं कि आप सुधार के लिए अदालत जा सकें। हजारों अछूत अपमान सहन करते हैं, क्योंकि अदालत जाने को उनके पास धन नहीं है और निडर हिन्दुओं के हाथों तानाशाही और अत्याचार, बिना सिसकी के सहने को मजबूर हैं, क्योंकि वे अदालत के खर्चों को वहन करने में सक्षम नहीं हैं। बौद्धिक शक्ति की स्थिति भी अभी तक खराब है। सदियों से आपने न केवल उच्च जाति की सेवा की है बल्कि उसकी तानाशाही व अपमान भी झेले हैं, बिना किसी शिकायत या शिकवे के, क्योंकि आप मुंहतोड़ जवाब नहीं देते तथा विद्रोह करने के स्वर मर चुके हैं। आपमें आत्मविश्वास उत्साह और अभिलाषा लुप्त हो चुकी हैं। इस सबने आपको लाचार, उत्साहीन तथा धीमा बना दिया है। सभी तरफ अपराजय तथा निराशावादी वातावरण बना हुआ है। आपका दिमाग छोटे से विचार तक, जिससे आप कुछ कर पाऐं को पैदा होने ही नहीं देता।

अत्याचार केवल आप पर ही क्यों ?

मेरे द्वारा ऊपर व्यक्त तथ्य अगर सत्य हैं तो आपको इसके परिणाम से भी सहमत होना होगा। निष्कर्ष यह है कि अगर आप केवल अपनी शक्ति पर निर्भर करते हैं तो आप अत्याचार का सामना कभी भी नहीं कर पाओगे। मुझे इसमें कोई शंका नहीं है कि आप पर अत्याचार केवल इसलिए होता है क्योंकि आप में शक्ति नहीं है। यह भी नहीं कि केवल अकेले आप ही अल्पसंख्या में हैं। मुस्लिम भी आप की तरह अल्पसंख्या में हैं। महार तथा मांगों की तरह गांवों में उनके घर भी कम हैं। परन्तु मुस्लिमों को छेड़ने की हिम्मत कोई नहीं करता जबकि तुम हमेशा तानाशाही के निशाने पर हो। ऐसा क्यों हैं? यह एक स्थायी प्रश्न है और आपको इसका उचित उत्तर अवश्य ढूंढना चाहिए। मेरे विचार में इस प्रश्न का केवल एक उत्तर है कि हिन्दू इस यथार्थ को अच्छे से समझते हैं कि भारत की पूरी मुस्लिम जनसंख्या उन गांव के दो घरों के साथ है इसलिए हिन्दू उन मुस्लिमों को छेड़ना तो दूर, स्पर्ष करने तक का साहस नहीं जुटा पाते। वे गांव के दो घर स्वतंत्र और निडर जीवन गांव

में बिताते हैं क्योंकि उन्हें मालूम है कि अगर किसी हिन्दू ने किसी मुसलमान पर बिना उकसाये आक्रमण किया तो पंजाब से मद्रास तक का पूरा मुसलमान समुदाय उनके संरक्षण के लिए हर हालत में धावा बोलने पंहुच जाएगा। इसके विपरीत, हिन्दू पूरी तरह आश्वस्त हैं कि अछूतों को बचाने कोई नहीं आएगा, कोई तुम्हारी सहायता नहीं करेगा, कोई धन राशि तुम तक नहीं पहुंचेगी और चाहे कुछ भी हो जाए कोई अधिकारी भी तुम्हारी सहायता नहीं करेगा। तहसीलदार तथा पुलिस छूत हिन्दुओं में से हैं और छूतों तथा अछूतों में किसी विवाद की दशा में वे अपनी जाति का पक्ष लेते हैं न कि अपने कर्तव्य का। हिन्दू तुम्हारे साथ अन्याय व तानाशाही केवल तुम्हारे असहाय होने के कारण करते हैं। ऊपर की चर्चा से दो तथ्य स्थापित होते हैं। पहला, बिना शक्ति के आप अत्याचार व तानाशाही का मुकाबला नहीं कर सकते तथा दूसरा कि तानाशाही का विरोध करने के लिए आप में पर्याप्त सक्षमता नहीं है। यह दो तथ्य सिद्ध होने पर तीसरा तथ्य अपने आप परोक्ष में आता है कि तानाशाही का विरोध करने के लिए शक्ति बाहर से प्राप्त करने की आवश्यकता है। आपको यह शक्ति बाहर से कैसे प्राप्त करनी है एक महत्वपूर्ण प्रश्न है और बिना किसी पूर्वाग्रह के हमें इस प्रश्न पर गहन चर्चा करनी पड़ेगी।

सामर्थ्य बाहर से प्राप्त करना आवश्यक है

मुझे ऐसा लगता है, इस देश में जातिवाद और धार्मिक मताधंता का लोगों के दिमाग व नैतिकता पर एक अनोखा प्रभाव होता है। इस देश में किसी को भी लोगों की निर्धनता तथा कष्ट को देखकर बुरा नहीं लगता यानि कोई सहानुभूति नहीं होती और अगर किसी को दर्द की अनुभूति होती है तो वह कष्ट को समाप्त करने का प्रयास नहीं करता। लोग केवल अपनी ही जाति तथा धर्म के लोगों की निर्धनता, दुःख व कष्ट में सहायता करते हैं। यद्यपि यह नैतिकता से विमुखता को दर्शाता हैं, पर हम यह न भूलें कि इस देश में यही चलन हैं। गावों में छूत, अछूतों का शोषण करते हैं, का ये अर्थ नहीं है कि उन गांवों में दूसरे धर्म के लोग नहीं रहते और उनको स्पष्ट तौर से अछूतों के साथ अन्यायपूर्ण दुर्व्यवहार का ज्ञान नहीं है या इस बात का ज्ञान नहीं कि छूतों का अछूतों पर अत्याचार करना अति अनुचित है। परन्तु उनमें से कोई भी अछूतों के बचाव में आगे नहीं आता। इसके पीछे क्या कारण हैं? अगर आप किसी से प्रार्थना भी करते हैं तो वह तुम्हारी सहायता क्यों नहीं करता, उसका उत्तर यह है कि हर किसी क्षेत्र में हस्तक्षेप करना उनके अधिकार में नहीं है और अगर आप उनके धर्म के अनुयायी होते तो वे आपकी सहायता अवश्य करते। इससे आपको स्पष्ट हो गया होगा कि किसी दूसरे समाज से गहरे सम्बन्ध बनाए बिना या उनके धर्म के अनुयायी बने बिना आपको बाहर से षक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। उसका स्पष्ट अर्थ है कि आप अपना धर्म अवश्य छोड़ें और किसी दूसरे

समाज में सम्मिलित हो जाओ। इसके बिना आपको उस समाज की शक्ति प्राप्त नहीं हो सकती। जब तक आपको बाहर से सामर्थ्य प्राप्त नहीं होता तब तक आप और आपकी आगे आने वाली पीढ़ियों को इसी दयनीय अवस्था में अपना जीवन व्यतीत करना होगा।

धर्म परिवर्तन का आध्यात्मिक पक्ष

अभी तक भौतिक लाभ पाने के लिए धर्म परिवर्तन क्यों जरूरी हैं, पर हमने चर्चा की है। अब मैं अपना मत आपके समक्ष प्रस्तुत करता हूं कि आध्यात्मिक सुख के लिए धर्म परिवर्तन क्यों आवश्यक हैं। धर्म किसलिए है? इसकी आवश्यकता क्यों है? आइए हम इसे समझें। आप पाएंगे कि विभिन्न लोगों ने धर्म को अलग–अलग तरीके से परिभाषित किया है। परन्तु इन सभी परिभाषाओं में एक ही सबसे ज्यादा अर्थपूर्ण और सर्व स्वीकृत है। जो लोगों के ऊपर शासन करे वह धर्म है। धर्म की यही एक सही परिभाषा है। यह परिभाषा मेरी नहीं है। सनातनी हिन्दुओं के सबसे अग्रणीय नेता श्रीमान तिलक इस परिभाषा के लेखक हैं। अतः कोई भी मुझ पर धर्म की परिभाषा में गलत आकलन का दोष नहीं लगा सकता। यद्यपि यह परिभाषा मैंने नहीं दी है, ऐसा नहीं है कि मैंने इसे केवल तर्क के लिए स्वीकार कर लिया है। मैं इसे स्वीकार करता हूं। धर्म का अर्थ है समाज को कायम रखने के लिए नियमों को थोपना। धर्म के बारे में मेरी भी यही धारणा है। यद्यपि यह परिभाषा वास्तविकता और तर्क के आधार पर सही लगती है परन्तु समाज पर शासन के लिए बनाए नियमों की प्रकृति के बारें में कुछ भी नहीं दर्शाती। समाज के चलन के लिए नियमों की प्रकृति के बारे में अभी भी प्रश्न बना हुआ है। यह प्रश्न धर्म की परिभाषा से ज्यादा महत्वपूर्ण है। क्योंकि धर्म की परिभाषा से यह सुनिश्चित नहीं होता कि कौन कृत्य धर्म है और कौन कृत्य धर्म नहीं है। परन्तु जहां नियम समाज को बांधते हैं वहीं नियमों की प्रकृति और प्रयोजन से समाज का शासन प्रभावित होता है। धर्म की प्रकृति क्या हो? इसके उत्तर पर निर्णय करते समय एक और प्रश्न उभर कर आता है कि मानव और समाज में क्या सम्बन्ध होना चाहिए। आधुनिक दार्शनिकों की इस प्रश्न के उत्तर में तीन अभिधारणाऐं दी हैं। कुछ ने कहा है कि समाज का अन्तिम लक्ष्य व्यक्तिगत लक्ष्य प्राप्त कराना है। कुछ दार्शनिकों का मत है कि मनुष्य के अनुवांशिक गुणों और क्षमताओं का विकास जिससे वह व्यक्ति अपनी उच्चता प्राप्त करने में सफल हो'', समाज का दायित्व है। कुछ दावा करते हैं कि सामाजिक संगठन का महत्वपूर्ण उददे्श्य व्यक्तिगत विकास और प्रसन्नता नहीं है परन्तु एक आदर्श समाज का निर्माण करना है। हिन्दू धर्म की धारणा इन तीनों धारणाओं से बिल्कुल भिन्न है। हिन्दू धर्म में किसी एक व्यक्ति का कोई स्थान नहीं है। हिन्दू धर्म

वर्गीकरण की धारणा पर निर्मित है। हिन्दू धर्म एक व्यक्ति को दूसरे व्यक्ति के प्रति व्यवहार के बारे में कोई उपदेश नहीं देता। निजी तौर पर एक धर्म जो व्यक्तिगत इकाई के महत्व को स्वीकृत प्रदान नहीं करता मुझे मान्य नहीं है। यद्यपि समाज एक व्यक्तिगत आवश्यकता है, केवल सामाजिक कल्याण धर्म का अन्तिम लक्ष्य नहीं हो सकता है। मेरे अनुसार व्यक्ति का कल्याण और विकास धर्म का वास्तविक लक्ष्य होना चाहिए। यद्यपि हर व्यक्ति समाज का अंग है, व्यक्ति का समाज के साथ सम्बन्ध शरीर और अंग या ठेले और इसके पहिए की भांति नहीं है।

समाज और व्यक्ति

मनुष्य का व्यवहार पानी की बूंद की तरह नहीं बिल्कुल भिन्न है क्योंकि पानी की बूंद समुद्र में गिरकर समुद्र में ही समा कर अपनी पहचान खो देती है इसके विपरीत मनुष्य समाज में रहकर भी अपना अस्तित्व बनाए रखता है। आदमी का जीवन स्वतंत्र है, वह समाज सेवा के लिए पैदा नहीं हुआ अपितु अपने विकास के लिए हुआ है। केवल इसी कारण विकसित देशों में एक मनुष्य दूसरे मनुष्य को दास नहीं बना सकता। वह धर्म जिसमें एक व्यक्ति का कोई महत्व नहीं है, यह मुझे स्वीकार नहीं है। हिन्दूतत्व एक व्यक्ति विशेष के महत्व को स्वीकार नहीं करता इसलिए यह मुझे स्वीकार नहीं है। मैं उस धर्म को स्वीकार नहीं करता जिसमें केवल एक वर्ग को ज्ञान प्राप्त करने का अधिकार प्राप्त है दूसरे को अस्त्र धारण करने का अधिकार प्राप्त है, तीसरे को व्यापार और चौथे को केवल सेवा। हर एक को ज्ञान की आवश्यकता है, हर एक को शस्त्रों की आवश्यकता है, हर एक को धन चाहिए। वह धर्म जो यह सब भूल जाता है और केवल कुछ को शिक्षित करना और शेष सबको अंधेरे में रखता है, एक धर्म नहीं परन्तु मानसिक दासता के लिए एक षड़यन्त्र है। एक धर्म जो एक को अस्त्र धारण करने को कहता है और दूसरे पर रोक लगाता है, धर्म नहीं है । एक दूसरे को जन्म जन्मान्तर तक दास बनाए रखने की धूर्तता की चाल है। वह धर्म जो कुछ के लिए सम्पदा प्राप्त करने का रास्ता खोलता है और दूसरों के रोजमर्रा के जीवन की जरूरतों के लिए निर्भर रहने का दबाव डालता है, एक धर्म नहीं बल्कि स्वार्थपूर्ति है। इसको हिन्दुत्व में चर्तुवर्ण कहा गया है। मैंने इसके बारे में अपना पक्ष रख दिया है। अब आप विचारें कि क्या हिन्दुत्व आपके लिए लाभप्रद है? बुनियादी विचार से धर्म का कर्तव्य किसी भी व्यक्ति का आध्यात्मिक विकास का वातावरण तैयार करना है। यदि आप इससे सहमत हैं तो यह स्पष्ट है कि आप हिन्दुत्व में अपना विकास बिल्कुल नहीं कर सकते। किसी भी व्यक्ति को अपना स्तर पर ऊंचा करने के लिए तीन तत्वों की आवष्यकता है। सहानुभूति, समता और स्वतंत्रता। क्या आप अपने अनुभव से कह सकते हैं कि इन तीनों तत्वों में से कोई भी तत्व आपके लिए हिन्दुत्व में विद्यमान है?

क्या हिन्दुत्व में आपके लिए कोई सहानुभूति है?

जहां तक सहानुभूति का प्रश्न है इसका अस्तित्व नहीं है। आप कहीं भी जाओ आपको सहानुभूति से कोई देखता भी नहीं हैं। आप सबको इसका खूब अनुभव है। हिन्दुओं में आपके प्रति कोई बंधुत्व नहीं है। आपके साथ विदेशियों से भी अधिक बुरा व्यवहार होता है। अगर गांव में रहने वाले हिन्दुओं और अछूतों पर दृष्टिपात करें तो कोई भी उनको भाई नहीं मानेगा। वे तो एक लड़ाई के मैदान में विरोधी सेनाओं की तरह ज्यादा दिखते हैं। हिन्दुओं का आपके प्रति उतना भी आकर्षण नहीं है जितना कि मुस्लिमों के साथ है। वे मुस्लिमों को आपसे ज्यादा नजदीक समझते हैं। स्थानीय बोर्ड, विधान परिषद और व्यापार में हिन्दू और मुस्लिम एक दूसरे की सहायता करते हैं। क्या आप एक भी ऐसा दृष्टान्त बता सकते हैं, जिसमें छूत हिन्दुओं ने आपके प्रति सहानुभूति दिखाई हो। इसके विपरीत, उन्होंने आपके प्रति घृणा का बीज बोया। वे लोग जो अदालत में न्याय मांगने गए या पुलिस की सहायता के लिए गए उनको इस भयानक घृणा के लिए क्या—क्या झेलना पड़ा, उन्हीं से सुना जा सकता है। क्या आप में से कोई भी विश्वस्त है कि उसको अदालत से न्याय या पुलिस से सही सहायता मिलेगी? अगर नहीं तो आपके प्रति यह घृणा के बीज बोने का क्या कारण है? मेरे विचार से इस अविश्वास का एक ही कारण है। आप विश्वास करें कि हिन्दू अपनी शक्ति का प्रयोग उचित ढंग से नहीं करेंगे क्योंकि उन्हें आपसे सहानुभूति नहीं है। अगर यह सत्य है तो ऐसी घृणा के बीच में रहने का क्या अर्थ है?

क्या हिन्दुत्व में आपके लिए समता है?

वास्तव में, यह प्रश्न नहीं पूछना चाहिए। अस्पृश्यता कुछ नहीं बल्कि एक ठोस असमानता है। असमानता की जीता जागता ऐसा उदाहरण कहीं नहीं मिलेगा। दुनिया के इतिहास में किसी भी समय अस्पृश्यता से ज्यादा गंभीर असमानता नहीं मिलेगी। उच्चता और हीनता की भावनाओं के आधार पर एक अपनी बेटी का ब्याह नहीं कर सकता या एक दूसरे के साथ मिलकर भोजन नहीं कर सकते। असमानता के ऐसे बहुत उदाहरण हैं। विश्व में कहीं भी हिन्दू धर्म और हिन्दू समाज के अतिरिक्त ऐसा कोई धर्म नहीं है जिनमें एक मानव को दूसरे से नीचा माना जाता हो और उसके छूने पर रोक हो? क्या कोई विश्वास करेगा कि कोई ऐसा भी पशु हैं जिसको मनुष्य कहते हैं परन्तु मात्र उसके छूने से पानी दूषित हो जाता है। ईष्वर भी भ्रष्ट होकर पूज्यनीय नहीं रहता? क्या एक अछूत और कुष्ट रोगी से किए जाने वाले व्यवहार में कोई अन्तर है? यद्यपि कुष्ठ रोगी को हाथ लगाने में लोगों को घृणा होती है परन्तु उनके मन में कुछ

सहानुभूति तो होती है। आपको देखकर लोगों को उबकाई जैसा अनुभव होता है और उनके मन में आपके प्रति घृणा भरी है। इस प्रकार आपकी दशा एक कुष्ठ रोगी से भी बुरी है। आज भी अगर कोई उपवास खोलते समय किसी माहर की आवाज़ सुन लेता है तो वह भोजन को हाथ नहीं लगाता। आपके शरीर और शब्दों को ऐसे मल से जोड़ा गया है। कुछ लोग कहते हैं कि अस्पृश्यता हिन्दू धर्म के नाम पर एक काला धब्बा है। इस कथन का कुछ भी अर्थ नहीं निकलता। क्योंकि कोई भी हिन्दू, हिन्दू धर्म को एक धब्बा नहीं मानता। हिन्दुओं में बहुतायत से यह धारणा है कि आप लोग एक धब्बा हो क्योंकि आप अशुद्ध हो। इस दशा तक आप कैसे पहुंचे? मेरे विचार से आपको इस दशा में धकेल दिया गया क्योंकि आप हिन्दुत्व से जुड़े रहे। आप में से जो मुस्लिम बन गए, हिन्दू उन्हें न तो अछूत मानते हैं और न ही असमान मानते हैं। ये ही मापदण्ड उन पर लागू होता है जो ईसाई बन गए। क्योंकि हिन्दू उन्हें भी न अछूत और न ही असमान मानते हैं। त्रावणकोर में हुई घटना का दृष्टान्त सुनाने लायक है। उस क्षेत्र के थिया कहलाने वाले अछूतों के गली में चलने पर रोक है। कुछ दिन पहले इनमें से कुछ ने सिक्ख धर्म अपना लिया। तुरन्त प्रभाव से उनके सड़क पर चलने को लगी रोक को वापस ले लिया गया। इन सबसे यह सिद्ध होता है कि आपको अछूत और असमान मानने का कोई कारण है तो यह हिन्दू धर्म से सम्बन्ध होना ही है।

इस असमानता और अन्याय की स्थिति में कुछ हिन्दू अछूतों को शांत करना चाहते हैं। वे कहते हैं, ''शिक्षा प्राप्त करो, स्वच्छ रहो और तब हम आपको छुएंगे और अपने समान मान लेंगे।'' वास्तव में, हम सब अपने अनुभव से जानते है कि एक शिक्षित, धनी और स्वच्छ महार की दशा एक अशिक्षित, निर्धन और गंदे महार से कहीं अच्छी नहीं है। आओ हम अभी चिंतन करें कि यदि किसी को उसके अशिक्षित, निर्धनता या अच्छी पोशाक न होने से उसका आदर नहीं किया जाता तो एक सामान्य महार इसके लिए क्या करे? किसी को समानता कैसे प्राप्त हो सकती है जब उसको शिक्षा का अधिकार प्राप्त नहीं है, सम्पदा का अधिकार प्राप्त नहीं है और न ही अच्छी वेशभूषा का? ईसाई धर्म और इस्लाम धर्म में समानता के सिद्धान्त का ज्ञान, धन और वेशभूषा से कोई लेना देना नहीं है क्योंकि ये सब तो बाहर से दिखने वाले पक्ष हैं। ये दोनों धर्म मानवता की अनुभूति को दृष्टिगत करते हैं। वे यह उपदेश देते हैं कि सबको मानवता का सम्मान करना चाहिए और किसी को भी मानवता का अपमान नहीं करना चाहिए और कोई भी दूसरे को अपने से असमान न माने। ऐसे उपदेश हिन्दू धर्म में देखने को नहीं हैं। इस धर्म की क्या उपयोगिता है जहां मनुष्य की मानवीय चेतना का सम्मान नहीं होता? और इससे चिपकने का क्या लाभ? इसके उत्तर में कुछ हिन्दू उपनिषदों की बात करते हैं और गर्व से कहते हैं कि उपनिषदों के अनुसार ईश्वर

सर्वव्यापी हैं। यहां यह कहा जा सकता है। कि धर्म और विज्ञान दो अलग चीजे हैं। यहां यह समझना आवश्यक है कि कोई विशेष मत विज्ञान का नियम है या धर्म की शिक्षा है। 'ईश्वर सर्व व्यापक हैं, विज्ञान का एक नियम है धर्म का नहीं, क्योंकि धर्म का सीधा सम्बन्ध मनुष्य के आचरण से है। ईश्वर का सभी जगह विद्यमान होना धर्म शिक्षा नहीं है परन्तु विज्ञान का नियम है। इस कथन को इस बात से बल मिलता है कि हिन्दुओं के कृत्य इस नियम के अनुरूप नहीं है। इसके विपरीत यदि हिन्दू आग्रह करें कि ईश्वर की सर्वविद्यमानता दर्शनशास्त्र का नियम नहीं है, बल्कि धर्म का सिद्धान्त है तो मेरा सरल सा उत्तर होगा कि पूरे विश्व में कहीं भी उन्होंने ऐसे संकुचित मनोवृत्ति वाले नीच इंसान नहीं देखे जैसे हिन्दुओं में हैं। हिन्दुओं को उन अत्याचारियों की श्रेणी में रखा जा सकता है जिनकी करनी व कथनी में उत्तर व दक्षिण ध्रुवों की दूरी है। उनके मुंह में राम है तो बगल में छुरी। वे संतों की वाणी बोलते हैं परन्तु उनके कृत्य कसाइयों वाले हैं। वे ईश्वर को सर्वव्यापक मानने का ढोंग करते हैं परन्तु मनुष्यों के साथ पशुओं से भी बुरा व्यवहार करते हैं उनके संग मत रहो। वे जो चींटियों को तो शक्कर खिलाते हैं परन्तु मनुष्यों को पीने के पानी पर प्रतिबन्ध लगा कर मारते हैं उनसे संपर्क मत करो। आप कल्पना भी नहीं कर सकते कि इनकी संगत का आप पर क्या दुष्प्रभाव पड़ा है। आपने अपना सम्मान खो दिया है आपने अपना स्तर गंवा दिया है। यह कहना कि केवल हिन्दू ही तुम्हारा सम्मान नहीं करते अपर्याप्त है। केवल हिन्दू ही नहीं, मुस्लिम तथा ईसाई भी तुम्हें अधमों में सबसे अधिक अधम गिनते हैं। सत्यता तो यह है कि इस्लाम तथा इसाई धर्म शिक्षा ऊंच और नीच का भेदभाव पैदा नहीं करते। तब इन दोनों धर्मों के अनुयायी तुम्हारे साथ भेदभाव क्यों करते हैं, इसका कारण है कि हिन्दू तुम्हें नीचा मानते हैं। अगर वे तुम्हें समानता का स्तर दें तो उन्हें यह डर है कि हिन्दू उन्हें भी निम्न स्तर का मानेंगे। अतः मुस्लिम और ईसाई दोनों ही हिन्दुओं की तरह अस्पृश्यता को मानते हैं। इस तरह हम केवल हिन्दुओं की दृष्टि में ही नीचे नहीं हैं बल्कि हमारी गिनती पूरे भारत में हिंदुओं द्वारा हमारे साथ किए जाने वाले व्यवहार के कारण सब से नीचे स्तर पर होती है। यदि आपको इस लज्जाजनक दशा से मुक्ति पानी है यदि आपको अपने पर लगे कलंक को दूर करना है और इस मूल्यवान जीवन को शोभामित करना है तो उसका केवल एक मार्ग है कि हिन्दू धर्म तथा हिन्दू समाज को व्यर्थ समझकर त्याग दो।

क्या आपको हिन्दू धर्म में कोई स्वतंत्रता है?

कुछ लोग शायद कहें कि कानून ने दूसरे नागरिकों के समान आप को व्यापार करने की स्वतंत्रता दी है। यह भी कहा जाता है कि दूसरों की तरह आप को स्वतंत्रता का अधिकार है। ऐसे कथनों पर आप को गहराई से विचार करना होगा

कि क्या वास्तव में इनका कुछ अर्थ है। व्यापार करने की स्वंतत्रता का आपके लिए क्या औचित्य रह जाता है जब आपको अपने पैतृक या पूर्वजों द्वारा किए गए धंधे के अतिरिक्त कोई भी दूसरा व्यवसाय करने पर समाज का प्रतिबंध है। किसी का यह कहना कि तुम्हें अपनी सम्पति तथा जायदाद का उपभोग करने की स्वतंत्रता है और कोई भी दूसरा तुम्हारे पैसों को छुएगा भी नहीं जबकि उनके लिए जायदाद बनाने के सभी मार्ग बन्द हों तो इस स्वतंत्रता के अधिकार का क्या अर्थ रह जाऐगा? एक मनुष्य जिसे समाज ने उसके जन्म के आधार पर गन्दा मानकर किसी भी सेवा के लिए अयोग्य करार दे दिया हो तथा जिसके अधीन कार्य करना उसको दूसरों को घृणास्पद लगे यह कहना कि उसे सेवा करने का अधिकार है तो यह कथन उस मनुष्य के साथ एक भद्दा मजाक ही कहा जाएगा। कानून तो आपको कई अधिकारों की गांरटी दे सकता है, परन्तु असली अधिकार तो वे ही कहलाएंगे जिनको समाज प्रयोग करने की स्वीकृति दे। कानून तो अछूतों को अच्छे कपड़े पहनने के अधिकार की गारंटी देता है परन्तु हिन्दू छूत इसकी अनुमति अछूतों को नहीं देते तो इस अधिकार का उनको क्या लाभ? कानून अछूतों को धातु के बर्तनों में पानी लाने का अधिकार, धातु के बर्तनों के उपयोग का अधिकार, घरों की छतों पर खपरैल लगाने के अधिकार की गांरटी देता है, परन्तु हिन्दू समाज उन्हें इन अधिकारों के उपयोग की अनुमति नहीं देता। तब ऐसे अधिकारों का क्या औचित्य रह जाता है? ऐसे अनेक और भी दृष्टांत उद्धृत किए जा सकते हैं, जहां कानून का उल्लंघन किया जाता है। संक्षिप्त में केवल वही अधिकार सही मायने में अधिकार कहला सकते हैं, जिन्हें समाज पालन करने दे। ऐसे अधिकार का प्रावधान जिसका सीधा विरोध समाज करता हो, का कोई लाभ अछूतों के लिए तो है नहीं। कानूनी प्रावधानों से मिली स्वतंत्रता से कहीं अधिक सामाजिक स्वतंत्रता की अछूतों को तुरंत आवश्यकता है। जब तक आपको सामाजिक गुलामी से मुक्ति नहीं मिल जाती, कानूनी अधिकारों और प्रावधानों से आपको कोई लाभ नहीं। आपको कुछ लोग सुझा सकते हैं कि आपको शारीरिक स्वतंत्रता है। निःसन्देह कानूनी प्रतिबन्ध की सीमा में आप कहीं भी जा सकते हैं और बोल सकते हैं परन्तु ऐसी स्वतंत्रता हमारे है किस काम की? मान्व के पास शरीर भी है मस्तिष्क भी। केवल शारीरिक स्वतंत्रता किस काम की। मस्तिष्क की स्वतंत्रता तो सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। वास्तव में, मनुष्य की शारीरिक स्वतंत्रता के अर्थ क्या हैं? इसके मायने हैं कि वह अपनी इच्छा से कोई कार्य करने को स्वतंत्र है। एक कैदी की हथकड़ियां तथा जंजीर खोल दी गई। इसका सैद्धान्तिक अर्थ क्या है? सिद्धान्त के अनुसार उसे अपनी स्वतंत्र स्वेच्छा से कार्य करने की स्वतंत्रता होनी चाहिए और उसे अपनी योग्यताओं के अधिकतम उपयोग का अवसर प्राप्त हो। परन्तु इस सब स्वतंत्रता का उसे जिस का मस्ष्तिक स्वतंत्र नहीं हो, क्या लाभ हो

सकता है? मस्तिष्क की स्वंतत्रता ही सही अर्थों में स्वतंत्रता है। वह जिसका मस्तिष्क स्वतंत्र नहीं, वह सांखल के बन्धन में नहीं होने पर भी दास है। जिसका मस्तिष्क स्वतंत्र नहीं है जीवित होने पर भी मृतप्राय है। प्रत्येक व्यक्ति के अस्तित्व का प्रमाण मस्तिष्क स्वतंत्रता में निहित है। एक मानव के भीतर स्वतंत्रता की लौ मस्तिष्क में अभी बुझी नहीं है, का मापदण्ड या प्रमाण कैसे निर्धारित किया जाए? किसी के बारे हम यह निष्कर्ष कैसे निकालें कि वह मस्तिष्क से स्वतंत्र है? कोई भी सतर्क मानव जो अपने दायित्वों, अधिकारों व कर्तव्यों को समझता है, जो अपनी परिस्थितियों का दास नहीं है और विषम परिस्थिति को अपने अनूकूल बनाने को उत्सुक व प्रयासरत हो, मैं उसे स्वतंत्र मानता हूं। जो केवल इस तर्क पर कि यह उसे पूर्वजों से मिला है, व्यवहार, रीति रिवाज, परम्पराओं और धार्मिक उपदेशों में जकड़ा दास न हो और जिसकी तर्क की लौ बुझी नहीं है, मैं उसे स्वतंत्र मानता हूं। वह जिसने आत्मसमण र्ण नहीं किया है, जो दूसरों के उपदेशों पर नहीं चलता, जो जब तक कोई भी बात तर्क की कसौटी पर खरी नहीं उतरती और जब तक आलोचनात्मक मापदण्ड पर तथा कारण और प्रभाव सिद्धान्त पर सही न हो, विश्वास नहीं करता, उसे मैं स्वतंत्र मानता हूं। जो सदैव अपने अधिकारों की रक्षा करने को तत्पर हो, जिसे लोक निन्दा का डर न हो, जिसमें पर्याप्त बुद्धि हो और इतना आत्मसम्मान भरा हो कि दूसरों के हाथ में खिलौना न बने, उसे मैं स्वतंत्र मानव मानता हूं। वह, जो अपना जीवन दूसरों के दिशा–निर्देश पर निर्धारित न करे, जो अपने जीवन को अपने तर्कानुसार निर्धाति करे और जो अपने जीवन का नेतृत्व कैसे करना है कौन से मार्ग पर ले जाना है, यह निर्णय स्वयं करे, उसे मैं स्वतंत्र मानव मानता हूं।

ऊपर लिखे कथनों के प्रकाश में क्या आप स्वतंत्र है? अपने उद्देश्य को तराशने के लिए क्या आप स्वतंत्र हैं? मेरे विचार से न तो आपको कोई स्वतंत्रता है और आप दास से भी बद्तर हैं। दासता में तुम्हारे तुल्य कोई नहीं। हिन्दु धर्म के अन्तर्गत किसी को भी बोलने की स्वतंत्रता नहीं हो सकती। जो भी हिन्दू धर्म का पालना करता है उसे अपने बोलने के अधिकार का समर्पण करना पड़ता है। उसे वेदों के अनुसार अनुपालन करना होगा। अगर कार्य शैली को वेदों से समर्थन नहीं मिलता तो निर्देश 'स्मृतियों' से प्राप्त करें। अगर किसी विषय पर स्मृतियों से भी दिशा न मिले तो महापुरूषों के पद चिन्हों पर चलें। हिन्दुत्व में अन्तःकरण, तर्क व विचारों का न तो कोई महत्व है और न ही कोई गुंजाइश। किसी भी हिन्दू को अनिवार्य रूप से वेदों या स्मृतियों या महापुरूषों की नकल का दास होना ही होगा। उससे अपनी तर्क शक्ति के उपयोग की आशा नहीं की जाती। अतः, जब तक आप हिन्दू धर्म के अधीन हैं, आपसे स्वतंत्र विचारों की उम्मीद नहीं की जा सकती है। कुछ लोग यह प्रश्न पूछ सकते हैं कि हिन्दू धर्म ने मानसिक दासता केवल अछूतों

पर ही तो जबरन नहीं थोपी परन्तु यह स्वतंत्रता तो सभी हिन्दू समुदाय से छीनी है। निःसन्देह यह एक सच्चाई है कि सभी हिन्दू मानसिक दासता की अवस्था में जी रहे हैं। परन्तु इसका यह कतई अर्थ न लगाया जावे कि सबकी वेदना की अनुभूति एक सी है। इस मानसिक दासता के बुरे प्रभाव हिन्दू धर्म के प्रत्येक अनुपालक या अनुयायी पर एक से नहीं हैं। इस मानसिक दासता ने छूत हिन्दुओं को आर्थिक पहलू पर कोई क्षति नहीं पहुंचाई। यद्यपि सभी छूत हिन्दू, ऊपर वर्णित तिकड़ी (वेद, स्मृतियां तथा महापुरूष) के दास हैं परन्तु हिन्दू सामाजिक व्यवस्था में उन्हें उच्च स्तर पर रखा गया है। उनको दूसरों पर सत्ता करने का अधिकार दिया गया है। यह एक अविवादित सत्य है कि छूत हिन्दूओं ने छूत हिन्दूओं के कल्याण और खुशहाली के लिए ही हिन्दू धर्म की व्यूह रचना की। जिसे वे धर्म की संज्ञा देते हैं, उस धर्म ने तुम्हें केवल दास की भूमिका दी। धर्म में वह सब व्यवस्था की गई है कि तुम दासता से किसी भांति बच न सको। अतः आप को दासता की जंजीरों तथा बंधनों को तोड़ने की आवश्यकता कहीं अधिक है, जितनी बाकी हिन्दुओं को अभी नहीं। इस प्रकार, हिन्दूत्व ने तुम्हारा दोहरा नुकसान करते हुए तुम्हारी प्रगति रोकी है। इसने अछूतों को मानसिक स्वतंत्रता के अधिकार से वंचित व समाज से निष्कासित कर तुम्हें दास बना दिया। इसने बाहरी विश्व में भी दासता की शर्तें लगा कर अछूतों को विनाश की ओर धकेल दिया। अगर आप स्वतंत्रता चाहते हैं तो तुम्हें अपना धर्म अवश्य बदलना चाहिए।

अछूतों का संगठन और धर्म परिवर्तन

वर्तमान में हो रहे अस्पृश्यता हटाओ आन्दोलन की इसलिए निंदा की जा रही है क्योंकि अछूत वर्ग में अनेक जातियां एक दूसरे से आपसी व्यवहार में जातिय दोषों में लिप्त ही नहीं वे अस्पृश्यता भी बरतते हैं। महार तथा मांग मिलकर भोजन नहीं करते। इन दोनों जातियों के लोग कूड़े कबाड़ हटाने तथा झाड़ु लगाने वालों को नहीं छूते और उनसे अस्पृश्यता बरतते हैं। इन लोगों का सवर्ण हिन्दुओं से अस्पृश्यता न बरतने की मांग करने का क्या अधिकार है। जबकि वे स्वयं अस्पृश्यता व जातिवाद बरत रहे हैं? यह प्रश्न हमेशा उठाया जाता है। अछूतों को उपदेश दिया जाता है कि वे पहले आपस की अस्पृश्यता को दूर कर समाधान के लिए आएं। हमें इस तर्क की सत्यता को स्वीकार करना पड़ता है। परन्तु इसमें लगाया आरोप गलत है। इस तथ्य से इनकार नहीं किया जा सकता कि अछूतों में सम्मिलित जातियां वर्गवाद तथा अस्पृश्यता में लिप्त हैं। परन्तु उन पर लगाया यह आरोप कि वे इस जुर्म के किसी प्रकार से अपराधी हैं सर्वथा गलत है। जातिवाद तथा अस्पृश्यता का आरम्भ अछूतों से नहीं वरन सर्वण हिन्दुओं से हुआ है। जातिवाद तथा अस्पृश्यता के

नियम निर्धारण का पाठ पढ़ाया तथा इसका प्रयोग भी सवर्ण हिन्दुओं ने ही किया। अगर यह सत्य है तो इस जातिवाद व अस्पृश्यता का दायित्व सवर्ण हिन्दुओं पर ही है, न कि अछूतों पर। अगर यह पाठ गलत है तो इस झूठ के दोष का दायित्व उपदेश का है जिसने यह पाठ पढाया न कि उसका जिसने इसे स्मरण किया। यद्यपि यह उत्तर सही लगता है मैं इससे संतुष्ट नहीं हूं। यद्यपि जातिवाद तथा अस्पृश्यता जिस की जड़ें हमारे बीच भी हैं के कारणों के लिए हम उत्तरदायी नहीं हैं तो क्या इस प्रथा की भर्त्सना न करना और जैसे यह चल रही है, यथावत बने रहने देना उचित है? यद्यपि जातिवाद व अस्पृश्यता के घुसने में दायित्व हमारा नहीं है यह तो हमारा दायित्व है कि इसे जड़ से समाप्त किया जाए। और मैं प्रसन्न हूं कि यह जिम्मेवारी हमने स्वीकार कर ली है। मुझे विश्वास है कि महार जाति में कोई ऐसा नेता नहीं है जो इस कुरीति का समर्थक हो। अगर इस बारे में कोई तुलना करनी है तो नेताओं में करनी होगी। यदि हम महार जाति के शिक्षितों और ब्राह्मणों के ब्राह्मणों में तुलना करें तो हमें यह मानना पड़ेगा कि अछूतों के शिक्षित वर्ग, जातियों के उन्मूलन के बारे में ज्यादा उत्सुक हैं। यह तथ्य स्वेच्छा से किए कार्यों से भी सिद्ध होता है। महारों में केवल शिक्षित ही नहीं यहां तक कि अशिक्षित व अनपढ़ महार भी जाति उन्मूलन आन्दोलन के नेतृत्व में अगुवाई करने को आतुर हैं। यह भी सिद्ध किया जा सकता है कि आज के दिन महार समुदाय में एक भी ऐसा नहीं है जो महार तथा मांग के अंतर्जातीय भोज का विरोध करे। मुझे बहुत संतोष का अनुभव हो रहा है, कि आपने जाति उन्मूलन की आवश्यकता के 'यथार्थ' को स्वीकार किया है तथा इसके लिए मैं आप सबको हार्दिक बधाई देता हूं। क्या आप ने कभी सोचा है कि अछूतों में जातिवाद तथा अस्पृश्यता उन्मूलन के प्रयासों को सफल कैसे बनाया जा सकता है? केवल छुटपुट अंतर्जातीय भोजों व अंतर्जातीय विवाहों से जाति उन्मूलन लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकता। जाति मस्तिष्क की मनोदशा है, यह मस्तिष्क का रोग है। हम जातिवाद का पालन करते हैं तथा अस्पृश्यता को व्यवहार में लाते हैं क्योंकि हिन्दू धर्म हमें ऐसा करने को कहता है तथा हम हिन्दू धर्म के बीच रहते हैं। एक कड़वी वस्तु को मीठा बनाया जा सकता है। नमकीन तथा कड़वे स्वाद वाली वस्तुओं का स्वाद बदला जा सकता है। परन्तु विष से अमृत नहीं बनाया जा सकता। हिन्दुत्व में रहते जातिवाद के उन्मूलन की बात करना विष को अमृत में बदलने के समान है।

संक्षेप में, जब तक हम हिन्दू धर्म के अनुयायी है और वह धर्म एक मनुष्य से गंदगी के जैसा व्यवहार करने की सीख देता है, भेदभावपूर्ण बोध हमारे मस्तिष्क में गहरा पैठा है। इसे गिराया नहीं जा सकता। अछूतों में आपसी अस्पृश्यता तथा जाति उन्मूलन के लिए, धर्म परिवर्तन ही विष कम करने की उपयुक्त दवा है।

नाम परिवर्तन तथा धर्म परिवर्तन

अभी तक मैंने धर्म परिवर्तन के पक्ष में विचार रखे। मैं आशान्वित हूं कि यह विश्लेषण आपके लिए विचारोत्तजक होगा। वे जो इस चर्चा से डरते उनकी खातिर मैं सामान्य भाषा और सामान्य विचार का प्रयोग करूंगा। धर्म परिवर्तन में ऐसा नवीन क्या है? वास्तविकता के धरातल पर सवर्ण हिन्दू के साथ आपके सामाजिक संबंध किस प्रकार के हैं? आप सवर्ण हिन्दुओं से उतने ही अलग हैं, जितने मुस्लिम और इसाई हैं। क्योंकि हिन्दू अंतर्जातीय भोज या शादी की पार्टियों में मुस्लिमों और इसाईयों के यहां नहीं जाते, उनका ऐसा ही संबंध आपके साथ है। आपका समाज तथा हिन्दुओं का समाज दो भिन्न–भिन्न गुट हैं। धर्म परिवर्तन से किसी भी समाज को यह नहीं लगेगा कि उनका समाज बंट गया। आप हिन्दुओं से उतने ही अलग रहेंगे जितने आज हैं। इस धर्म परिवर्तन के कारण कुछ नया नहीं होगा। अगर यह सत्य है तो मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि कुछ लोग धर्म परिवर्तन के नाम से क्यों डरे हुए हैं? यद्यपि आप धर्म परिवर्तन के महत्व को नहीं समझ पा रहे हैं पिफर भी आप नाम बदलने के महत्व को अवश्य समझ गये हैं। अगर आप में से किसी से भी उसकी जाति पूछें तो वह उत्तर देता है चोखामेला, हरिजन इत्यादि, परन्तु वह यह नहीं कहता कि वह महार है। कोई भी कुछ शर्तें पूरी किये बगैर अपना नाम नहीं बदल सकता। ऐसे नाम परिवर्तन के पीछे सीधा सा कारण है। एक अनजान आदमी छूत तथा अछूत का अन्तर नहीं समझ सकता और जब तक एक हिन्दू को तुम्हारी जाति की जानकारी नहीं मिलती और वह आश्वस्त नहीं हो जाता कि तुम अछूत हो, वह तुम्हारे से घृणा नहीं कर सकता। सवर्ण हिन्दू तथा अछूत जब तक वे एक दूसरे की जाति से अनजान हैं एक दूसरे से यात्रा के दौरान बहुत अच्छा व्यवहार करते हैं, वे एक दूसरे से पान, बीड़ी, सिगरेट, फल आदि का अदान प्रदान भी करते हैं। परन्तु जैसे ही हिन्दू को पता चलता है कि वह एक अछूत से बात कर रहा है तो उसके दिमाग में घृणा के कीटाणु अंकुरित होने लगते हैं। वह विचार करता है कि उसे धोखा दिया गया है। वह क्रोधित होता है और अन्त में वह अस्थाई मित्रता गालियों तथा झगड़े से समाप्त होती है। मुझे विश्वास है कि आप को ऐसे अनुभव हुए हैं। आपको अवश्य मालूम है कि ऐसा क्यों होता है? तुम्हारी जातियों के नाम उन्हें इतने मलिन लगते हैं कि उन शब्दों की ध्वनि से ही सवर्ण हिन्दू को उल्टी होने जैसा अनुभव होता है। इसलिए, अपने आप को महार न कह चोखामेला बोल कर आप लोगों को धोखे में रखना चाहते हो। लेकिन आपको मालूम है कि लोग भुलावे में नहीं आते। चाहे आप अपने को चोखामेला कहो या हरिजन लोग समझ लेते हैं कि आप कौन हो। अपने कृत्यों से आपने नाम परिवर्तन की आवश्यकताओं को सिद्ध

कर दिया है तो मैं आपसे पूछना चाहूंगा कि अगर आप नाम बदलने को आवश्यक समझते हैं तो धर्म परिवर्तन में कोई आपत्ति क्यों? धर्म परिवर्तन भी नाम परिवर्तन की तरह ही है। धर्म परिवर्तन के साथ नाम परिवर्तन आपको अधिक लाभप्रद रहेगा। अपने आपको एक मुस्लिम, एक इसाई, एक बौद्ध या एक सिक्ख कहना केवल धर्म परिवर्तन ही नहीं, नाम परितर्वन भी है। यह परिवर्तन एक वास्तविक परिवर्तन है। इस नाम के साथ गंदगी नहीं लगी, यह एक सशक्त परिवर्तन है। कोई इसके उद्गम की तलाश नहीं करेगा। नाम बदलकर चोखामेला, हरिजन इत्यादि का कोई अर्थ नहीं है। क्योंकि इसमें असली नाम के साथ जुड़े तिरस्कार तथा घृणा दूसरे नाम के साथ स्थानांतरित हो जाते हैं। जब तक आप हिन्दू धर्म में रहोगे आप को नाम बदलने ही पड़ेंगे। अपने आप को हिन्दू कहना पर्याप्त नहीं है। कोई भी स्वीकार नहीं करता कि कोई हिन्दू भी होता है। ऐसे ही अपने आप को केवल महार कहने से भी काम नहीं चलेगा। जैसे ही आप नाम उच्चारण करोगे कोई तुम्हारे पास भी नहीं आऐगा। आज एक नाम बदलने, कल दूसरा नाम और इस प्रकार एक घड़ी के पेंडुलम/लोलक की स्थिति में बने रहने की बजाय मैं आप से कहता हूं कि आप स्थाई तौर पर अपना धर्म परिवर्तित कर अपना नाम भी क्यों न परिवर्तन कर लें।

विरोधियों की भूमिका

इस धर्म परिवर्तन आन्दोलन के शुरू होते ही बहुत से लोगों ने बहुत आपत्तियां उठाई हैं। आओ हम इन आपत्तियों में सत्यता की जांच करें। कुछ हिन्दू धार्मिक होने का बहाना करते हुए आपको उपदेश देते हैं कि धर्म कोई आनन्द लेने की वस्तु नहीं है। धर्म को हम पोशाक की तरह प्रतिदिन नहीं बदल सकते। आप हिन्दू धर्म को त्यागकर किसी और धर्म के अनुयायी बनना चाहते हो तो क्या आप ने कभी विचार किया है कि आपके पूर्वज जो इस धर्म से इतने लम्बे काल से जुड़े रहे, क्या वे पागल थे?'' अपने आप को बुद्धिमान कहलाने वालों ने यह प्रश्न उठाया हैं पर मुझे इस आपत्ति में कोई सार नहीं लगता। कोई मूर्ख ही यह तर्क दे सकता है कि वह अपने धर्म से केवल इसलिए चिपका रहा क्योंकि यह धर्म उसके पूर्वजों का था। कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति ऐसा तर्क नहीं दे सकता। वे जो यह कहते हैं कि पूर्वजों के धर्म का त्याग नहीं करना चाहिए, संभवतः उन्होंने कभी भी इतिहास का अध्ययन नहीं किया। चिरकाल में आर्यों का धर्म 'वैदिक धर्म'' था जिसमें मुख्यतया तीन लक्षण विशेषकर गोमांस का भक्षण, मद्यपान तथा मौज उड़ाना उस समय के धर्म के अंग थे। हजारों की संख्या में भारत में इस धर्म के अनुयायी थे तथा आज भी कुछ ब्राह्मण उसमें वापस जाने के स्वप्न देखते हैं। अगर पुरातन धर्म से ही जुड़े रहना था तो भारत में लोग हिन्दू धर्म त्याग कर बौद्ध

धर्म के अनुयायी क्यों बने? वैदिक धर्म छोड़ जैन धर्म के अनुयायी क्यों बने? इस बात को नकार नहीं सकते कि हमारे पूर्वज प्राचीन धर्म के अनुयायी थे, परन्तु यह ज्ञात नहीं कि उस धर्म से क्या वे स्वयं इच्छा से जुड़े थे। इस देश में चर्तुवर्ण प्रणाली काफी लम्बी अवधि के लिए चली। इस प्रणाली में ब्राह्मण को शिक्षा का अधिकार, क्षत्रिय को युद्ध, वैश्य को व्यापार व संपदा तथा शूद्र को सेवा करने का के अधिकार उस काल के नियम थे। इस प्रथा के अन्तर्गत शूद्र को शिक्षा, अस्त्र तथा सम्पति अधिकार नहीं थे। आपके वे पूर्वज जिन्हें इस धर्म में निर्धन व निहत्थे बनाकर इस दशा में रहने को विवश किया गया, कोई भी सामान्य ज्ञान वाला व्यक्ति यह मानने को तैयार न होगा कि उन्होंने अपनी इच्छा से यह धर्म स्वीकार किया होगा। यहां यह समझना भी आवश्यक है कि क्या तुम्हारे पूर्वजों द्वारा इस धर्म व्यवस्था का विरोध करना सम्भव था। अगर उनके लिए विद्रोह करना सम्भव था और तब भी उन्होंने विद्रोह नहीं किया तभी हम यह कह सकते हैं कि यह धर्म उन्होंने स्वेच्छा से स्वीकार किया था। परन्तु यदि हम वास्तविक परिस्थितियों पर नजर डालें तो स्पष्ट तौर पर पायेंगे कि हमारे पूर्वजों को उस धर्म के बीच रहने को विवश किया गया था। अतः यह हिन्दू धर्म हमारे पूर्वजों का धर्म नहीं है, परन्तु यह दासता तो उन पर लादी गई थी। हमारे पूर्वजों के पास इस दासता के विरुद्ध लड़ाई लड़ने के साधन उपलब्ध न होने के कारण वे विद्रोह नहीं कर पाए। वे दबाव में इस धर्म में रखे गये। उनकी असहाय वाली स्थिति के प्रकाश में उनको दोषी नहीं ठहराया जा सकता। यथार्थः कोई भी उन पर दया करेगा। परन्तु अब आज के युग की पौध को कोई भी किसी भी प्रकार की दासता में जबरन विवश कर नहीं रख सकता। उनको हर प्रकार की स्वतंत्रता प्राप्त है। इस स्वतंत्रता का लाभ उठाते हुए भी अगर ये स्वयं को मुक्त नहीं करते तो बड़े खेद से उनको इस धरती पर रहने वाला अति नीच, दासत्व प्रिय और परम्पराओं पर आश्रित कहा जाएगा।

मनुष्य और पशु में अन्तर

हमें अपने धर्म से बांधा रहना चाहिए क्योंकि हमें यह हमारे पूर्वजों से मिला है, यह कथन किसी मूर्ख की ही वाणी हो सकती है। कोई समझदार व्यक्ति यह तर्क नहीं दे सकता। यह पशुओं के लिए एक उपयुक्त उपदेश है और किसी मनुष्य के लिए यह बात कि उन्हीं परिस्थितियों में रहता रहे जिनमें वह रहता रहा है कभी भी उपयुक्त नहीं। मनुष्य और पशु में यह अंतर है कि मनुष्य तो उन्नति कर सकता है परन्तु पशु नहीं कर सकता। धर्म परिवर्तन बदलाव का ही एक रूप है। परिवर्तन ही प्रगति का दूसरा नाम है। और यदि प्रगति धर्म परिवर्तन के बिना संभव नहीं है तो धर्म परिवर्तन आवश्यक है। एक प्रगतिशील मानव के मार्ग में पूर्वजों की देन धर्म कभी भी अड़चन पैदा नहीं कर सकता।

धर्म परिवर्तन के विरोध में एक और तर्क दिया जा सकता है कि धर्म परिवर्तन को पलायनवाद की मनोवृत्ति कह सकते हैं। आज अनेक हिन्दू, 'हिन्दू धर्म सुधार कार्य, करने पर तुले हैं। वे दावा करते है कि उनके प्रयास से अस्पृश्यता तथा जातिवाद का पूर्ण उन्मूलन हो जाएगा। इसलिए, इस मोड़ पर धर्म परिवर्तन उपयुक्त नहीं है। कोई इन हिन्दू समाज सुधारकों के बारे में कोई मत व्यक्त करे, निजी तौर पर उन से मेरी घृणा है। मुझे उनके बारे में बहुत अनुभव है और उन अर्ध–बुद्धिजीवियों से मुझे प्रबल अनिच्छा अनुभव होती है। यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वे जो अपनी ही जाति में रहना चाहते हैं, अपनी ही जाति में ब्याह रचाना चाहते हैं और अपनी ही जाति में मरना चाहते हैं, अपने भ्रामक नारों, (''जैसे कि वे जाति प्रथा को तोड़ने का विश्वास दिलाते हैं और किसी अछूत के विश्वास न करने पर वे नाराजगी जाहिर करते हैं,'') के बल पर लोगों को बेवकूफ बनाते हैं। जब मैं हिन्दू समाज सुधारकों के नारे सुनता हूं तो मुझे बरबस अमेरिकी नीग्रो (हब्शी) के बंधन मुक्ति के लिए अमेरिकी गोरों के प्रयासों का स्मरण हो जाता है। वर्षों पहले अमेरिकी नीग्रो की हालत भारत में अछूतों के जैसी ही थी। दोनों में अन्तर केवल इतना है कि हब्शियों की दासता को कानून की स्वीकृति थी जबकि आपकी दासता धर्म की एक उत्पत्ति है। कुछ अमेरिकी सुधारकों ने नीग्रो दास मुक्ति का बीड़ा उठाया हुआ था। लेकिन क्या हिन्दू समाज सुधारकों की तुलना अमेरिकी गोरे सुधारकों से की जा सकती है जिन्होंने नीग्रो को मुक्ति दिलाई? उन अमेरिकी गोरे समाज सुधारकों ने अपने निजी संबंधियों के विरुद्ध सशस्त्र सैन्य लड़ाईयां लड़ीं। उन्होंने हज़ारों गोरे अमेरिकियों को जान से मार दिया क्योंकि वे दास प्रथा जारी रखने के समर्थक थे और ऐसा करते हुए अमेरिकी गोरे सैनिकों ने भी अपने खून का बलिदान दिया। जब हम इन घटनाओं का वर्णन इतिहास के पृष्ठों में पढते हैं, तो हम यह कहने को विवश हो जाते हैं कि अमेरिकी समाज सुधारकों की तुलना में भारतीय सुधारक तो किसी गिनती में नहीं आते। ''कहाँ राजा कहाँ पोतराजा'' जिसको उत्तर भारत में ''कहां राजा भोज कहां गंगू तेली'' कहते हैं वाली लोकोक्ति लागू होती है। अपने आपको भारत के अछूतों के उपकारी कहने वाले सुधारकों से कोई पूछे कि क्या आप अपने ही हिन्दुओं व भाईयों के विरुद्ध गृह युद्ध लड़ने को तैयार हो जैसा अमेरिकी गोरों ने अपने ही गोरे भाईयों के विरुद्ध हब्शियों के निमित्त लड़ा था? अगर नहीं तो यह लम्बी चौड़ी सुधारों वाली बातों का क्या सार? अछूतों के निमित लड़ाई का दावा करने वाले हिन्दुओं में सबसे महान हिन्दू , महात्मा गांधी हैं। वे किस सीमा तक साथ दे सकते हैं। महात्मा गांधी जो ब्रिटिश सरकार के विरुद्ध अहिंसात्मक आन्दोलन का नेतृत्व कर रहे हैं, अछूतों के अत्याचारी हिन्दुओं के विरुद्ध बोलकर हिन्दुओं की भावनओं को आहत करने को भी तैयार नहीं है। वह उनके विरुद्ध सत्याग्रह आरम्भ करना नहीं चाहते। वे हिन्दुओं के विरुद्ध कानूनी लड़ाई

भी लड़ना नहीं चाहते। ऐसे सुधारकों से मुझे कुछ भला होते नहीं दिखता।

दोष केवल छूत हिन्दुओं का ही है

कुछ हिन्दू अछूतों की सभा में उपस्थित होते हैं और सवर्ण हिन्दू जाति की निंदा करते हैं। कुछ मंच पर विराजमान होकर अछूतों को उपदेश देते हुए कहते हैं, ''भाईयो, स्वच्छ रहो, शिक्षा ग्रहण करो, अपने पैरों पर खड़े हो, इत्यादि''। वास्तव में अगर दोषारोपण करना है तो दोष केवल सवर्ण हिन्दुओं का है। ये सवर्ण हिन्दू ही गलत करते हैं। इस पर भी कोई इन सवर्ण हिन्दुओं को इक्ट्ठे कर इनकी भर्त्सना नहीं करता। वे लोग जो हिन्दुओं की सहायता से और हिन्दू धर्म में बने रहकर अछूतों को आन्दोलन जारी रखने का उपदेश देते हैं, को इतिहास की कुछ घटनाओं का स्मरण कराना चाहूंगा। पिछले विश्व युद्ध में एक अमेरिकी और ब्रिटिश गोरे सैनिक के बीच वार्ता का पढ़ा हुआ अंश स्मरण हो रहा है। इस क्षण मुझे वह एकदम उपयुक्त लग रहा है। उनके वार्ता का विषय था कि युद्ध कितना लम्बा चलना चाहिए। अमेरिकी के इस प्रश्न का उत्तर अंग्रेज ने बड़े गर्व से देते हुए कहा ''जब तक अंतिम फ्रांसीसी नहीं मारा जाता हम यह युद्ध लड़ेंगे।'' इसके विपरीत जब हिन्दू समाज सुधारक अछूतों के निमित्त अंत तक लड़ने का दावा करता है तो उसका अर्थ अंतिम अछूत के मारे जाने तक का होता है। उनके नारे की घोषणा का यही अर्थ मेरी समझ में आता है। आप के लिए यह निर्णय कठिन नहीं होना चाहिए कि जो केवल दूसरों के जीवन को दांव पर लगा कर युद्ध लड़ता है उसके जीतने की आषा नहीं होती। यदि हमें अपनी स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए अपनी लड़ाई में स्वयं मरना है तो हमें गलत जगह से लड़ने का क्या लाभ? हिन्दू समाज को सुधारना न तो हमारा लक्ष्य है और न ही हमारा कार्यक्षेत्र। हमारा प्रयोजन तो अपनी मुक्ति पाना है। किसी और विषय से हमारा कुछ लेना देना नहीं है। अगर हमें धर्म परिवर्तन से मुक्ति मिल सकती है तो हम हिन्दू समाज को सुधारने का बोझा अपने कंधों पर लादने का दायित्व क्यों ले? और उसके लिए हम अपनी तेजस्विता, बल और धन का बलिदान क्यों दें? कोई भी हमारे इस आन्दोलन का गलत अर्थ ''हिन्दू समाज के सुधार'' से न जोड़े। हमारे आन्दोलन का मुख्य उद्‌देश्य केवल अछूतों की सामाजिक स्वतंत्रता है और उतना ही सत्य है कि इस उद्‌देश्य की पूर्ति, धर्म परितर्वन के बिना संभव नहीं। मेरी दृष्टि में समता पाने के दो उपाय हैं। समता या तो हिन्दू धर्म के अनुयायी बने रहने से मिलेगी या दूसरे धर्म में परिवर्तन से मिलेगी। अगर हमें हिन्दू बने रहते समता प्राप्त करनी है तो केवल छूत बन जाने मात्र से समस्या हल नहीं होगी। समता तो केवल तभी आएगी, जब अंतर्जातीय भोजन, अंतर्जातीय वैवाहिक संबंध होंगे अर्थात् अछूतों के साथ रोटी व बेटी का रिश्ता होगा। इसका अर्थ यह है कि चतुर्वर्ण का उन्मूलन कर देना चाहिए

और ब्राह्मण धर्म को जड़ समेत उखाड़ फेकना चाहिए। क्या यह सम्भव है? और यदि सम्भव नहीं, तो क्या हिन्दू धर्म के बने रहते कभी समता के व्यवहार की आशा रखना बुद्धिमत्ता होगी? और क्या आप अपने प्रयासों में सफल हो पाओगे? तुलना करें तो धर्म परिवर्तन बहुत सुगम रहेगा। हिन्दू समाज मुस्लिमों को समानता देता है। हिन्दू समाज ईसाई को समानता देता है। प्रत्यक्ष धर्म परिवर्तन से सामाजिक समता, सुगमता से प्राप्त की जा सकती है। अगर यह सत्य है तो हम धर्म परिवर्तन का सरल रास्ता क्यों न अपनाऐं? मेरे मतानुसार इस धर्म परिवर्तन से अछूतों व हिन्दुओं दोनों को ही प्रसन्नता होगी। जब तक आप हिन्दू बने रहोगे जब तक आपको स्पर्ष से भ्रष्ट, भोजन और पानी तथा अंतर्जातीय विवाह जैसे विषयों पर संघर्षरत रहना पड़ेगा। और जब तक यह संघर्ष जारी रहेगा आप और हिन्दू एक दूसरे के लिए जन्म जब तक जन्मान्तर के शत्रु बने रहोगे। धर्म परिवर्तन से सब झगड़े जड़ से समाप्त हो जायेंगे। तब न तो आपको उनके मंदिरों पर दावे करने का अधिकार होगा और न ही उसकी आवश्यकता होगी। आपको सामाजिक अधिकारों जैसे अंतर्जातीय भोज, अंतर्जातीय विवाह इत्यादि की प्राप्ति के लिए संघर्ष की आवश्यकता ही नहीं होगी, तो झगड़े समाप्त हो जायेंगे तथा एक दूसरे के प्रति प्यार और अच्छे संबंध होंगे। एक ओर हिन्दू तथा दूसरी ओर मुस्लिम और इसाईयों के संबंधों पर दृष्टिपात करें। मुस्लिमों तथा इसाईयों दोनों को हिन्दू अपने मंदिर में घुसने नहीं देते, ठीक वैसे ही जैसे आपको नहीं घुसने देते। उनके साथ भी अंतर्जातीय भोजन तथा वैवाहिक संबंध नहीं है। इसके प्रभाव से मुक्त उनके प्रति आकर्षण तथा सम्मान जो हिन्दुओं का उनके साथ है, वह आप और हिन्दुओं के बीच नहीं है। इसका मुख्य कारण है कि आप हिन्दूधर्मी हैं इसलिए हिन्दू समाज से सामाजिक और धार्मिक अधिकारों के झगड़े बने रहते हैं। परन्तु मुस्लिम और ईसाईयों के हिन्दू धर्म से बाहर होने के कारण उनको सामाजिक और धार्मिक अधिकारों की लड़ाई हिन्दुओं से नहीं लड़नी पड़ती। दूसरे उनके हिन्दू समाज में अंतर्जातीय विवाह व अंतर्जातीय भोज जैसे सामाजिक अधिकारों का कोई झगड़ा नहीं है, फिर भी हिन्दू उन्हें बराबरी का नहीं मानते। अतः, अगर धर्म परिवर्तन से समानता लाई जा सकती है तो हिन्दुओं तथा अछूतों में सद्भावना बनाई जा सकती है तो अछूत इस सुगम मार्ग को अपनी प्रसन्नता तथा समानता पाने के लिए क्यों न अपनाऐं? समस्या को इस कोण से देखते हुए, धर्म परिवर्तन ही आजादी का सही मार्ग है जिससे समता प्राप्त की जा सकती है। धर्म परिवर्तन पलायनवादी नहीं है और न ही यह कायरता का मार्ग, ये तो बुद्धिमत्ता का मार्ग हैं। धर्म परिवर्तन के विरोध में एक और तर्क दिया जाता है। कुछ हिन्दू कहते हैं कि अगर आप जाति प्रथा के विरुद्ध कुण्ठा से ग्रसित होकर धर्म परिवर्तन के लिए प्रभावित होते हैं तो यह बेकार है। हिन्दू कहते हैं कि आप कहीं भी जाओ जातीयता तो मिलेगी ही। अगर आप एक मुस्लिम बनते हैं तो उसमें जातिवाद

है, अगर आप ईसाई बनते हैं तो उसमें भी जातिवाद है। दुर्भाग्यवश यह स्वीकार करना पड़ता है कि जातिप्रथा प्रणाली देश के दूसरें धर्मो में भी घुस गई है। परन्तु इस महा पाप की सिंचाई का दोष तो केवल हिन्दुओं पर ही है। इस रोग का स्त्रोत हिन्दू हैं और इसके बाद रोग ने दूसरों भी को ग्रस्त किया। उनके मत से वे असहाय थे। यद्यपि मुस्लिमों और ईसाईयों में भी जातियां हैं, परन्तु उसको हिन्दुओं के जातिवाद के बराबर ठहराना संकुचित मनोवृत्ति दर्शाएगा। हिन्दुओं की तुलना में मुस्लिमों और ईसाईयों में जाति प्रणाली के अंदर एक बहुत बड़ी भिन्नता है। प्रथम यह ध्यान देने योग्य है कि यद्यपि ईसाईयों और मुस्लिमों में जातिवाद है तथापि, कोई यह नहीं कह सकता कि यह उनकी सामाजिक प्रणाली की मुख्य्य विषेषता है। अगर कोई पूछता है कि ''आप कौन हैं'', उत्तर होगा– ''मैं एक मुस्लिम हूं'' या ''मैं एक पारसी हूँ''। यह संतुष्ट करने के लिए पर्याप्त हैं। किसी को आगे उसकी जाति पूछने की आवश्यकता नहीं होती। परन्तु यदि किसी हिन्दू से पूछा गया कि ''आप कौन हैं?'' और वो उत्तर दे, ''मैं एक हिन्दू हूं''। तो उसके इस उत्तर से संतुष्टि नही मिलती। उससे फिर पूछा जाता है कि तुम्हारी जाति क्या है? और बिना इसका उत्तर पाए उसके सामाजिक स्तर का अंदाजा नहीं लगता। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हिन्दू धर्म में जाति का कितना अधिक महत्व है और उसकी तुलना में इस्लाम और ईसाईयों में यह एकदम नगण्य है। हिन्दुओं की तुलना में मुस्लिमों और ईसाईयों की जाति प्रणाली में एक और अंतर है। हिन्दुओं की जाति प्रणाली हिन्दू धर्म पर आधारित है जबकि इस्लाम और ईसाई धर्मो में जातियों को धर्म की स्वीकृति नहीं है। अगर हिन्दू जातिप्रथा को समाप्त करने की घोषणा करते हैं तो धर्म उनके आड़े आएगा। इसके विपरीत अगर मुस्लिम और ईसाई अपने समाज से जाति प्रथा को समाप्त करने के लिए आन्दोलन करना चाहें तो उनके धर्म इसमें आड़े नहीं आएंगे। बल्कि उनके धर्म कुछ सीमा तक इसका समर्थन करेंगे। यदि तर्क के लिए स्वीकार भी कर लें कि जातियां सब जगह हैं, तो भी यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि हिन्दू ही बने रहना चाहिए। अगर जातिप्रथा बेकार है तो भी तर्कसंगत निष्कर्ष यह निकलता है कि हम ऐसा मार्ग अपनाएं जिसकी जातिप्रथा में कुछ लचीलापन हो तथा साधारण और सुगम तरीके से जाति प्रथा काउन्मूलन किया जा सके।

कुछ हिन्दू कहते हैं, ''अकेले धर्म परिवर्तन से क्या होगा? अपना आर्थिक और शैक्षणिक स्तर सुधारने का प्रयास करो''। इस उपदेश को सुनकर संभवतः हमारे कुछ लोग चकरा जाते हैं और इस प्रश्न का उत्तर देने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं। इसलिए इसकी चर्चा करना मैं आवश्यक समझता हूं। पहला प्रश्न यह उठता है कि आपकी आर्थिक और शैक्षणिक अवस्था को कौन सुधारेगा? आप स्वयं या आपको यह तर्क देने वाले? मैं समझता हूं कि वे लोग आपसे कृत्रिम सहानुभूति दर्शाने के अतिरिक्त कुछ नहीं करेंगे; न ही उनकी तरफ से इस दिशा में किए गए प्रयास देखने

में आए हैं। इसके विपरीत, प्रत्येक हिन्दू अपनी जाति का आर्थिक स्तर सुधारने का प्रयास करता है। उसका दृष्टिकोण अपनी जाति तक ही सीमित रहता है। ब्राह्मण स्त्रियों के लिए, ब्राह्मण विद्यार्थियों को छात्रवृतियां देने के लिए और बेरोजगार ब्राह्मणों को रोजगार दिलाने के लिए। सारस्वत (ब्राह्मणों की एक जाति) भी ऐसा ही कर रहे हैं। कायस्थ और मराठे यही कर रहे हैं। हर कोई अपना और अपनी जाति का उत्थान करने में लगा है और जिन्हें कोई कार्य नहीं मिलता वे ईश्वर की दया पर निर्भर हैं। आपको अपना उत्थान स्वयं करना है, कोई भी आपकी सहायता को आगे नहीं आएगा, यह ही हमारे समाज की वर्तमान दशा है। इस स्थिति में ऐसे लोगों का उपदेष सुनने का क्या औचित्य है? आपको भ्रमित करने और आपके समय का नाश करने के अतिरिक्त ऐसे उपदेश का कोई अन्य प्रयोजन नहीं है। अगर आपको अपने आपको स्वयं सुधारना है तो हिन्दू लोगों की बकवास सुनने की कोई आवश्यकता नहीं है और न ही उन्हें आपको उपदेश देने का कोई अधिकार है। यद्यपि इतना उत्तर पर्याप्त लगे तो भी मुझे अभी कुछ और कहना है। मैं इस तर्क का खण्डन करना आवश्यक समझता हूं।

मैं कुछ हिन्दुओं के ऐसे अटपटे प्रश्न से अचम्भित होता हूं कि केवल धर्म परितर्वन से क्या होगा? आज के बहुतायत सिक्ख, मुसलमान और ईसाई पहले हिन्दू थे और उनमें बहुत संख्या में शूद्र और अछूत थे। क्या ये आलोचक यह कहना चाहते हैं कि हिन्दू धर्म को छोड़ सिक्ख और ईसाई बनने वालों ने कोई उन्नति नहीं की? मगर यह सत्य नहीं है और यदि यह स्वीकारें कि धर्म परिवर्तन से इनकी दशा में निश्चित सुधार हुआ है, तो यह तर्क कि अछूतों को धर्म परिवर्तन से कोई लाभ नहीं होगा, का कोई अर्थ नहीं है, इस पर वे लोग विचार करें। इस वक्तव्य का अप्रत्यक्ष अर्थ लगता है, ''धर्म परिवर्तन से कुछ न होने का अर्थ लगता है कि धर्म अर्थहीन है।'' यह मेरी समझ से परे है कि जब धर्म अर्थहीन है, इससे कोई लाभ या हानि नहीं है तो वे अछूतों को हिन्दू धर्म में ही बने रहने का तर्क क्यों देते हैं? यदि उनको धर्म में कोई उपयुक्तता नहीं दिखती तो वे इस अनावश्यक तर्क में क्यों पडते हैं कि कौन से धर्म को अपनाया जाए और कौन से धर्म को छोड़ा जाए? वे हिन्दू जो पूछते हैं कि केवल धर्म परिवर्तन से क्या होगा, उन पर ऐसा ही एक प्रश्न दागा जा सकता है– केवल स्वराज से क्या प्राप्त किया जा सकता है। यदि यह सत्य है कि भारत के लोग अछूतों को चाहते हैं, आर्थिक और शैक्षणिक उन्नति की आवश्यकता अनुभव करते हैं तो स्वराज का क्या लाभ है। यदि केवल स्वराज से देश को लाभ मिलने वाला है तो निश्चय ही धर्म परिवर्तन से अछूतों को लाभ मिलेगा। इस समस्या पर गहन मंत्रणा के पश्चात हर कोई स्वीकार करेगा कि धर्म परिवर्तन अछूतों के लिए वैसे ही आवश्यक है जैसे स्वराज्य भारत के लिए। धर्म परिवर्तन अछूतों के लिए उतना ही महत्वपूर्ण है

जितना कि स्वराज्य भारत के लिए। धर्म परिवर्तन और स्वराज्य का अन्तिम उद्देश्य एक ही है। इन दोनों के अन्तिम लक्ष्य में तनिक भी अन्तर नहीं है। यह अन्तिम उद्देश्य स्वतंत्रता प्राप्त करने का है। यदि मानवता के जीवन के लिए स्वतंत्रता आवश्यक है तो अछूतों के लिए धर्म परिवर्तन, जो उनको पूर्ण मुक्ति दिलाएगा, किसी भी काल्पनिक विस्तार से धर्म परिवर्तन को निरर्थक नहीं ठहराया जा सकता।

सर्वप्रथम क्या प्रगति या परिवर्तन?

मैं यह चर्चा करना आवश्यक समझता हूं कि पहले आर्थिक प्रगति की जाए या धर्म परिवर्तन? आर्थिक प्रगति को प्राथमिकता देने के पक्ष से मैं सहमत नहीं हूं। धर्म परिवर्तन या आर्थिक प्रगति में से किस को प्राथमिकता दी जाए, यह वैसा ही नीरस विषय है, जैसा कि राजनैतिक सुधार या सामाजिक सुधार में से प्राथमिकता के लिए एक का चयन करना। समाज के विकास और उन्नति के लिए कई उपाय प्रायोगिक होते हैं और प्रत्येक का अपना महत्व होता है। इन उपायों का प्रयोग करने के लिए कोई निश्चित क्रम नहीं बनाया जा सकता। यदि कोई धर्म परिवर्तन और आर्थिक सुधार में से प्राथमिकता जानने का आग्रह करे, तो मैं धर्म परिवर्तन की उपयुक्तता को ज्यादा महत्व दूंगा। मैं यह समझने में असमर्थ हूं कि जब तक आप पर अछूत होने का कलंक हैं तब तक आप आर्थिक प्रगति कैसे कर सकते हैं? अगर आप एक दुकान खोलें और लोगों को मालूम हो कि दुकानदार एक अछूत हैं तो कोई भी आपसे कुछ नहीं खरीदेगा। अगर आप सेवा के लिए अछूत प्रार्थी हैं तो आपके अछूत होने का पता होने से आपको सेवा में नहीं लिया जाएगा। अगर आपमं से कोई ज़मीन खरीदना चाहे और बेचने वाले को आपके अछूत होने का ज्ञान हो जाए तो कोई आपको जमीन नहीं बेचेगा। आप आर्थिक प्रगति के लिए कोई भी तरीके अपनाओ परन्तु आपकी अस्पृश्यता के चलते आपके सभी प्रयत्न नकारात्मक हो जाऐंगे। अस्पृश्यता आपकी प्रगति के रास्ते में स्थायी रूकावट है। और जब तक आप इस रूकावट को धर्म परिवर्तन द्वारा न हटा दें; आपका मार्ग विपदा मुक्त नहीं होगा। आप में से कुछ के बच्चे किसी भी उपयुक्त स्त्रोत से पैसा लेकर शिक्षा पाने का प्रयास कर रहें हैं। इस प्रलोभनवश अछूत बने रहने और प्रगति करने का झुकाव बना लेते हैं। मैं उन नवयुवकों से यह प्रश्न पूछना चाहूंगा कि आपकी शिक्षा पूर्ति के बाद, यदि आपको उपयुक्त पद न मिले तो आप अपनी शिक्षा का क्या करेंगे? क्या कारण है कि हमारे अधिकतम शिक्षित लोग आज भी बेरोजगार हैं? मेरे विचार से अस्पृश्यता ही इस बेरोजगारी का मुख्य कारण हैं। अस्पृश्यता के कारण आपके गुणों का उचित आंकलन नहीं किया जाता। आपकी मानसिक क्षमता के सम्मान को भी अस्पृश्यता के कारण गुंजाइश नहीं है। आपकी अस्पृश्यता के कारण आपको सेना सेवा से बाहर कर दिया जाता है। आपको पुलिस विभाग में भी अस्पृश्यता के कारण नौकरी नहीं दी

जाती। अस्पृश्यता के कारण आप चपरासी की नौकरी भी नहीं पा सकते। आपकी ऊंचे पद पर पदोन्नति नहीं की जाती, क्योंकि आप अछूत हैं। अस्पृश्यता एक प्रकार का अभिशाप है। आपका पूर्ण विनाश कर दिया गया है और आपके गुणों को धूल में मिला दिया गया है। इन परिस्थितियों में, आप कितनी भी योग्यता प्राप्त कर लें, उसकी क्या उपयोगिता? यदि आप चाहते है कि निष्कपटता से आपकी योग्यता का आकलन हो, आपकी शिक्षा की आपके लिए उपयोगिता हो, आर्थिक प्रगति के द्वार आपके लिए खुलें, तो आपको अस्पृश्यता की बेड़ियों से छुटकारा पाना होगा।

धर्म परिवर्तन के विरुद्ध संदेह

अभी तक हमने आलोचकों के द्वारा धर्म परिवर्तन के तर्कों का वर्णन किया है। अब मैं धर्म परिवर्तन के समर्थकों के द्वारा व्यक्त किए गए संदेहों का स्पष्टीकरण करना चाहूंगा। सबसे पहले यह सुनने में आया है कि कुछ महार चिन्तित हैं कि उनके वतन (ग्राम सेवक के पैतृक अधिकार) का भविष्य क्या होगा? यह भी सुना है कि उच्च सवर्ण हिन्दुओं ने गांवों के महारों को धमकी दी है कि अगर उन्होंने धर्म परिवर्तन किया तो उनको ग्राम सेवक की सेवा से विमुक्त कर दिया जाएगा। आप सबको ज्ञात है कि महार वतन को समाप्त करने से मैं किंचित मात्र भी चिंतित नहीं हूं। मैं पिछले दस साल से यह कहता आया हूं कि अकेला महार वतन, महारों का दुर्भाग्य सिद्ध हुआ है और जिस दिन महार की जंजीरों से ये लोग स्वतंत्र होंगे, उस दिन इनकी स्वतंत्रता के रास्ते खुल जाएंगे। फिर भी, जो यह महार वतन चाहते हैं मैं उनको विश्वास दिलाता हूं कि उनके धर्म परिवर्तन से वतन खटाई में नहीं पड़ेगा। इस संदर्भ में, 1850 के अधिनियम को देखा जा सकता है। इस अधिनियम के अंतर्गत उत्तराधिकारी के अधिकारों और जायदाद पर उसके (वारिस के) धर्म परिवर्तन का कोई प्रभाव नहीं पड़ता। जो लोग इस संदर्भित कानून को अनुपयुक्त समझते हैं, वे नागर जिले की परिस्थितियों को ध्यान से समझें। महार जाति के अनेक लोग इस जिले में ईसाई बन गए हैं और कुछ स्थानों पर एक ही परिवार में ईसाई भी हैं और महार भी। परन्तु धर्म परिवर्तित ईसाईयों के वतन अधिकार समाप्त नहीं हुए। इसकी पुष्टि आप नगर के महरों से कर सकते हैं। अतः धर्म परिवर्तन से किसी को वतन के समाप्त होने का भय नहीं करना चाहिए।

दूसरा संदेह राजनैतिक अधिकारों के बारे में हैं। कुछ लोगों के मन में शंका है कि अगर वे धर्म परिवर्तन करते हैं तो उनके सुरखोपायों का क्या होगा। कोई यह न सोचे कि अछूतों के द्वारा प्राप्त किए गए राजनैतिक संरक्षण के महत्व को मैं नहीं समझता। अछूतों के लिए यह राजनैतिक अधिकार पाने के लिए जितने प्रयास मैंने

किए और जितने कष्ट झेले, वैसा किसी और ने नहीं झेला। परन्तु मैं अनुभव करता हूं कि केवल राजनैतिक अधिकारों का मोहताज हो जाना उचित नहीं हैं। ये राजनैतिक संरक्षण जन्म जन्मातर के लिए नहीं दिए गए। यह कभी तो समाप्त होगें ही। अंग्रेज सरकार ने इस संरक्षण की सीमा 20 साल निर्धारित की थी। यद्यपि पूना सन्धि में ऐसी कोई समय सीमा निर्धारित नहीं की गई है फिर भी यह हमेशा–हमेशा के लिए रहने वाला नहीं। जो इन राजनैतिक संरक्षणों पर आश्रित रहना चाहते हैं, उनको यह अवश्य विचार करना चाहिए कि जब यह संरक्षण ले लिए जाएंगे तब क्या होगा। उस दिन हमारे राजनैतिक अधिकार समाप्त हो जाएंगे और हमें अपनी सामाजिक शक्ति का आश्रय लेना होगा। मैंने आपसे पहले ही कहा है कि सामाजिक शक्ति की हमारे अन्दर कमी है। इसलिए, मैंने आपको शुरू में ही सिद्ध कर दिया है कि यह शक्ति धर्म परिवर्तन के बिना प्राप्त नहीं की जा सकती। हमें केवल वर्तमान की चिन्ता नहीं होनी चाहिए। और अस्थायी लाभों के प्रलोभन से हमारे कष्ट बढ़ना निश्चित है। इन परिस्थितियों में, हमें स्थायी लाभों के बारे में सोचना आवश्यक है। मेरे विचार से धर्म परिवर्तन ही अनादि और अनन्त सुख का मार्ग है। इस प्रयोजन के लिए यदि हमें राजनैतिक अधिकारों की बलि चढ़ानी पड़े है तो हमें संकोच नहीं करना चाहिए। राजनैतिक संरक्षणों को धर्म परिवर्तन से कोई हानि नहीं होती। यह मेरी समझ से परे है कि राजनैतिक संरक्षण धर्म परिवर्तन से खटाई में क्यों पड़ेंगे। आप जहां भी जाएंगे आपके राजनैतिक अधिकार और संरक्षण आपके साथ रहेंगे। इस बारे में मुझे कोई संदेह नहीं है। अगर आप मुस्लिम बनते है तो आपको मुसलमानों के राजनैतिक अधिकार मिलेंगे, यदि आप ईसाई बनते है तो आपको ईसाईयों के राजनैतिक अधिकार मिलेंगे, यदि आप सिक्ख बनते हैं तो आपको सिक्खों के राजनैतिक अधिकार मिलेंगे। राजनैतिक अधिकार जनसंख्या पर आधारित है। किसी भी समाज के राजनैतिक संरक्षण उनकी जनसंख्या बढ़ने से और बढ़ जाएंगे। किसी को यह गलत धारणा न रहे कि यदि हम हिन्दू समाज को छोड़ते है तो निर्धारित की गई 15 सीटें हिन्दुओं को वापस चले जाएंगी। यदि हम मुस्लिम बनते हैं तो हमारी 15 सीटें मुसलमानों के आरक्षित स्थानों के साथ जुड़ जाएगी। इसी प्रकार, यदि हम ईसाई बनते हैं तो हमारी सीटें ईसाईयों के आरक्षित स्थानों में जुड़ जाएंगी। संक्षेप में, हमारे राजनैतिक अधिकार हमारे साथ ही रहेंगे। अतः ये डर किसी के मन में न रहे। बल्कि आप यह ध्यानपूर्वक सोंचे की अगर हम हिन्दू रहते हैं और धर्म परिवर्तन नहीं करते, तो क्या हमारे अधिकार सुरक्षित रहेंगे? कल्पना करें कि अगर हिन्दू एक अधिनियम पास कर कानून बनवाए कि अस्पृश्यता पर प्रतिबन्ध लगा दिया जाए। छुआछूत का पालन करने वाले को दण्डित किया जायेगा। तब वे आपसे पूछ सकते हैं कि विधि द्वारा अस्पृश्यता हटा दी गई है और अब आप अछूत नहीं है। आप केवल गरीब और पिछड़े

हुए हैं और दूसरी कई जातियां भी पिछड़ी हुई है। इन पिछड़ी जातियों के लिए हमने कोई राजनैतिक संरक्षण नहीं दिया है। तब आपको संरक्षण क्यों दिया जाए? आप गहन सोच के लिए मजबूर हो जाओगे। आपके इन प्रश्नों का क्या उत्तर होगा। मुस्लिम और ईसाईयों के लिए इसका उत्तर देना आसान रहेगा। वे कहेंगे "हमें राजनैतिक संरक्षण तथा अधिकार गरीबी, निरक्षरता या पिछड़ेपन के आधार पर नहीं दिये गये थे। परन्तु इसलिए दिए गए थे कि हमारा धर्म अलग है, हमारा समाज अलग है इत्यादि। और राजनैतिक अधिकारों में हमारा भाग अवश्य मिलना चाहिए और जब तक हमारा धर्म अलग है ये अधिकार मिलते रहने चाहिए।" यह उनका उपयुक्त उत्तर होगा। जब तक आप हिन्दू धर्म के अन्तर्गत रह रहे हैं तथा हिन्दू समाज में रह रहे हैं तब आप यह तर्क जब तक नहीं दे पाएंगे कि राजनैतिक संरक्षण का आपका अधिकार इसलिए बनता है कि आपका समाज अलग है। जिस भी दिन आप हिन्दू दासता से मुक्ति पाने के लिए धर्म परिवर्तन करके हिन्दू समाज से स्वतंत्र हो जाते हैं तो उसी दिन से आप यह तर्क दे पाओगे, अन्यथा नहीं। और जब तक आप स्वतंत्र निर्णय नहीं लेतेतब तक आप राजनैतिक संरक्षण तथा राजनैतिक अधिकारों का दावा नहीं कर सकते और आपके संरक्षण अधिकारों के स्थायित्व तथा सुरक्षा का संकट बना रहेगा, मेरे विचार से यह अज्ञानतावश होगा। इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो यह कहा जा सकता है कि धर्म परिवर्तन कोई बाधा नहीं है बल्कि राजनैतिक संरक्षण को शक्तिशाली बनाने का एक मार्ग है।

यदि आप हिन्दू धर्म में ही बने रहते हो तो आप अपने राजनैतिक अधिकार खो बैठोगे। यदि आप अपना राजनैतिक संरक्षण नहीं खोना चाहते तो धर्म परिवर्तन करो। केवल धर्म परिवर्तन से ही ये अधिकार स्थायी होंगे।

निष्कर्ष

मैं अपना नर्णय ले चुका हूं। मेरा धर्म परिवर्तन निश्चित है। मेरा धर्म परिवर्तन किसी भौतिक लाभ के लिए नहीं है। ऐसा कुछ नहीं है जो कि मैं अछूत रहकर प्राप्त नहीं कर सकता। मेरा धर्म परिवर्तन केवल आध्यात्मिकता पर आधारित है। हिन्दू धर्म मेरे प्रष्नों पर खरा नहीं उतरता। हिन्दू धर्म का मेरे आत्मसम्मान के संग मेल नहीं बैठता। परन्तु आपके लिए आध्यात्म तथा भौतिक लाभ के लिए धर्म परिवर्तन आवश्यक हैं। कुछ लोग धर्म परिवर्तन से भौतिक लाभ पाने के विचार पर मजाक बनाकर हंसते हैं। मैं ऐसे लोगों को मूर्ख पुकारने में जरा भी नहीं हिचकिचाता हूं। एक धर्म जो कि उपदेश देता है कि मृत्यु के बाद आत्मा का क्या होगा या क्या नहीं होगा केवल धनवानों के लिए उपयोगी हो सकता है। वे धनवान संभवतः अपने खाली समय में इस तरह के धर्म के बारे में सोचकर अपना मनोरंजन कर सकते हैं। यह पूर्णतया प्राकृतिक है कि वे जो अपने जीवनकाल में पूरी खुशियां पा चुके हैं, संभवतः इस तरह के धर्म को

वास्तविक धर्म मानें जो कि मुख्यतौर पर उनको मृत्यु के बाद प्राप्त होने वाली खुशियों के बारे में बताता है। लेकिन उनको इससे क्या, जो धर्म विशेष में रहते–रहते जीवन समाप्त होने पर धूल में मिल गए, जिनको जीवन की मूलभूत आवश्यकताऐं जैसे कि रोटी और कपड़े को मना किया गया तथा उनसे मानव जैसा व्यवहार भी नहीं किया गया। क्या इन लोगों से धर्म के नाम पर आप भौतिक आवश्यकताओं का विचार न कर केवल बन्द आंखों से आकाश की तरफ देखते रहने की आशा रखते हैं? गरीबी के लिए इन अमीरों तथा निठ्ठले लोगों के वेदान्त की क्या उपयोगिता है?

धर्म व्यक्ति के लिए हैं

मैं विशेषतया आपको बताता हूं कि व्यक्ति धर्म के लिए नहीं है न कि धर्म व्यक्ति के लिए। मानव बनने के लिए स्वयं में परिवर्तन लाओ। संगठित होने के लिए स्वयं में परिवर्तन लाओ। शक्ति पाने के लिए स्वयं में परिवर्तन लाओ। एकता लाने के लिए स्वयं में परिवर्तन लाओ। स्वतंत्रता पाने के लिए स्वयं में परिवर्तन लाओ। घरेलू जीवन खुशहाल बनाने के लिए स्वयं में परिवर्तन लाओ।

उस धर्म में आप क्या बने रहना चाहते है जो कि आपके साथ मानव की तरह व्यवहार नहीं करता ? उस धर्म में आप क्यों बने रहना चाहते हैं जो आपको शिक्षा प्राप्ति की आज्ञा नहीं देता? उस धर्म में आप क्यों बने रहना चाहते हैं जो आपको मंदिरों में प्रवेश की मनाही है। उस धर्म में क्या आप क्यों बने रहना चाहते है जो आपको पानी के लिए रोकता है? उस धर्म में आप क्यों बने रहना चाहते है जो आपको नौकरी पाने में बाधा डालता है? उस धर्म में क्या आप क्यों बने रहना चाहते है जो आपको प्रत्येक स्तर पर अपमानित करता है? एक धर्म जो मानव और मानव के अधिकारों के बीच के सम्बन्ध को रोकता है, धर्म न होकर मात्र बल प्रदर्शन है। एक धर्म जो आदमी को आदमी नहीं समझता, धर्म न होकर एक बीमारी है। एक धर्म जो जानवरों को छूने की आज्ञा देता हैं, परन्तु मानव को छूने से मना करता है, धर्म न होकर एक निंदनीय मजाक है। एक धर्म जो एक वर्ग शिक्षा से रोकता है, धन संचय को मना करता है, शस्त्र धारण करने को रोकता है एक धर्म न होकर मानव जीवन के साथ उपहास है। एक धर्म जो निरक्षर से निरक्षर बने रहने के लिए और गरीब से गरीब बने रहने के लिए, जोर डालता है धर्म न होकर एक दण्ड है।

मैंने यहां अपने सर्वोत्तम व ज्ञान से विस्तार से धर्म परिवर्तन से उठने वाली सभी सम्भावित समस्याओं का विश्लेषण करने की कोशिश की है। यह भाषण शायद लम्बा हो चुका है, लेकिन मैं फैसला ले चुका था कि इस विषय पर शुरू से विस्तार से कहूं। यह मेरे लिए आवश्यक था कि विरोधियों द्वारा धर्म परिवर्तन के बारे में

सब बिन्दुओं के उत्तर दूं। मेरा मत है कि धर्म परिवर्तन की घोषणा के महत्व को समझे बिना धर्म परिवर्तन नहीं होना चाहिए और अन्ततः मैं इस समस्या पर विस्तार से विचार करूंगा ताकि किसी को भी इसके बारे शंका न रह जाए। मैं कह नहीं सकता कि कहां तक आप मेरे विचारों से सहमत होंगे लेकिन मेरी आशा है कि आप इस पर गम्भीरता से चिन्तन करें। मेरा विश्वास है कि भीड़ को प्रसन्न करना तथा लोकप्रिय बन जाना एक सामान्य मनुष्य के लिए अच्छा है, परन्तु एक नेता के लिए नहीं। मैं मानता हूं कि नेता वह है जो बिना डर या समर्थन, बिना दोषारोपण करते हुए लोगों को उनके लिए अच्छे और बुरे का ज्ञान देता है। यह मेरा कर्त्तव्य है कि मैं आपको बताऊं कि आपके लिए क्या अच्छा है चाहे यह आपको न भाये। मुझे अपना कर्तव्य निभाना है और अब मैंने इसे निभा दिया है। अब आप फैसला लें और अपने उत्तरदायित्व को निभायें। मैंने धर्म परिवर्तन की समस्या को दो भागों में विभाजित किया है। या तो हिन्दू धर्म छोड़े या इसमें बने रहें, समस्या का पहला भाग है। अगर हिन्दू धर्म सदैव के लिए परित्याग करते हैं, कौन सा दूसरा धर्म अपनाना चाहिए या कोई नया धर्म अपनाना चाहिए यह समस्या का दूसरा भाग है। आज मुझे समस्या के पहले भाग पर फैसला लेना है। जब तक हम पहले भाग का फैसला न कर लें दूसरे के बारे में चर्चा करना व्यर्थ है। हमें पहले बिन्दु पर फैसला लेना आवश्यक है। मेरे लिए फैसले के लिए दूसरा मौका देना सम्भव नहीं होगा। आप इस सभा में क्या निर्णय लेते हैं इसके अनुसार मुझे भविष्य की रूपरेखा तैयार करनी होगी। अगर आप धर्म परिवर्तन के विरूद्ध फैसला लेते हैं तो यह अध्याय हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगा। तब मुझे स्वयं के लिए करना है वह करूंगा। अगर आप धर्म परिवर्तन के पक्ष में फैसला लेते हैं तो आपको मुझे वादा देना होगा कि भारी मात्रा में संगठित हों हम धर्म परिवर्तन करें। अगर फैसला धर्म परिवर्तन के पक्ष में लेना है और लोग व्यक्तिगत तौर पर किसी धर्म को पसंद करते हैं और अकेले या परिवार में अपनाते हैं तो मैं आपके धर्म परिवर्तन में हस्तक्षेप नहीं करूंगा। मैं आशा करता हूं कि आप सब मुझसे जुड़ें हैं। जो कोई धर्म आप स्वीकार करते हैं, मैं पूरी तरह से उस धर्म में लोगों की अच्छाई के लिए प्रयास तथा सेवा करने के लिए तैयार हूं। भावनाओं में बहकर मेरा अनुसरण न करें क्योंकि मैंने ऐसा कहा है। आप इसकी स्वीकृति तभी दें, जब आप इससे आश्वस्त हों। मुझे बिल्कुल भी अफसोस नहीं होगा, अगर आप मुझसे न जुड़ने का फैसला लेते हैं। बल्कि मुझे कर्त्तव्यों के दायित्व की मुक्ति से राहत मिलेगी। आपको यह बात स्मरण रहे कि यह एक गम्भीर स्थिति और अवसर हैं। आपका आज का फैसला आने वाली पीढ़ियों के लिए सुनहरा भविष्य होगा। अगर आप स्वतंत्र होने का फैसला करते हैं तो आगे की पीढ़ियों का भविष्य पूर्णतः स्वतंत्र होगा। अगर आप दास बने रहने का फैसला लेते हैं, तो आपकी पीढ़ियों का भविष्य

भी दासता का होगा। अन्ततः आपके लिए यह कठिन काम है।

स्वयं को प्रज्ज्वलित करो

यह विचार करते हुए कि इस अवसर पर मैं आपको क्या संदेश दूं, मुझे भगवान बुद्ध का संदेश जो उन्होंने अपने भिक्षु संघ को अपने महापरिनिर्वाण से ठीक पहले भेजा था का स्मरण किया। इसे महापरिनिब्बान सुता में उद्धश्त किया है।

एक बार भगवान बीमारी से स्वास्थ्य लाभ के बाद पेड़ के नीचे अपने आसन पर आराम कर रहे थे। उनका शिष्य पूज्यनीय आनन्द भगवान बुद्ध के पास गया और उनका अभिवादन कर उनके समीप बैठ गया और कहा कि ''मैंने भगवान को बीमारी में और प्रसन्नता में देख लिया है। परन्तु भगवान की वर्तमान बीमारी से मेरा शरीर सीसे की भांति भारी हो गया है, मेरे मस्तिष्क में शांति नहीं है। मैं धम्म पर ध्यान नहीं लगा पा रहा हूं, लेकिन मुझे सांत्वना तथा संतुष्टि की अनुभूति हो रही है कि संघ को संदेश दिए बिना भगवान परिनिर्वाण नहीं पा सकेंगे और नहीं पाएंगे।

इस पर भगवान ने इस प्रकार उत्तर दिया ''प्रिय आनन्द संघ मुझे से क्या आशा करता है? आनन्द, मैंने बिना कुछ छिपाए दिल खोलकर धम्म का उपदेश दिया। तथागत ने कुछ भी छिपाकर नहीं रखा जैसे कुछ दूसरे शिक्षक छिपाया करते हैं। प्रिय आनन्द। तथागत भिक्षु संघ को और क्या बता सकते हैं। आनन्द, सूर्य के समान स्वयं प्रज्वलित हो जाओ। जिस तरह धरती प्रकाश के लिए सूर्य पर निर्भर रहती है दूसरों पर आश्रित न रहो। स्वयं पर विश्वास करो, दूसरों पर निर्भर न रहो। सत्यवादी बनो, सदैव सत्य की शरण लो और किसी के आगे आत्मसमर्पण न करो।

मुझे भी बुद्ध के शब्दों को धारण करना हैं। ''स्वयं का मार्गदर्शक बनो। अपने स्वयं के तर्क की शरण लो। दूसरों के उपदेश को सुनो दूसरों के सामने न झुको। सत्यवादी बनो। सत्य की शरण लो। कभी भी किसी के सामने आत्मसमर्पण न करो। अगर आप इस अवसर पर भगवान बुद्ध के इन संदेशों को स्मरण रखते हैं तो मुझे विश्वास है कि आपका फैसला कभी गलत नहीं होगा।[1]

● ● ●

[1] जनता, 27 जून, 1936
(वसंत मून तथा संपादकों द्वारा अनूदित)

30

...महारों और मांगों के बीच कोई भेद–भाव नहीं होगा

चुनावों के लिए उनकी पार्टी में शामिल होने पर उन्हें आरक्षण दिलाने का वादा।

बंबई प्रेसीडेंसी मांग सम्मेलन मंगलवार 2 जून, 1936 को नैगाम, दादर में आयोजित हुआ, इस सत्र में मांग समुदाय के लगभग 5,000 सदस्यों और प्रसीडेंसी के विभिन्न जिलों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

सर्वसम्मति से पारित मुख्य संकल्प यह था कि उपचार स्वतंत्रता और समानता प्राप्त करने के लिए मांग समुदाय के पास धर्म परिवर्तन के अतिरिक्त और कोई उपचार नहीं है। इस संकल्प में यह घोषणा भी की गई कि मांग समुदाय को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर में पूरा विश्वास है और धर्म परिवर्तन के उनके अभियान में यह समुदाय सामूहिक रूप से उनके साथ है। समुदाय की स्थिति को सुधारने से संबंधित अन्य संकल्पों को भी सर्वसम्मति से स्वीकार कर लिया गया।

विशेष आमंत्रण पर उपस्थित डॉ. अम्बेडकर ने लगभग एक घंटे तक सम्मेलन को संबोधित किया। प्रारंभ में ही उन्होंने उल्लेख किया कि मांग समुदाय द्वारा धर्म परिवर्तन के विषय पर उनके निर्णय की घोषणा करने के पश्चात ही उन्होंने इस समय को भाषण देने के लिए चुना है क्योंकि विषेष रूप से वह यह नहीं चाहते थे कि वह उनके निर्णय को थोड़ा सा भी प्रभावित करें। उन्होंने कहा कि जाति रूपी बुराई स्वयं दलित वर्गों के बीच भी विद्यमान है।

हिंदूवाद पर दोषारोपण

उन्होंने कहा कि इस बुराई के लिए दलित वर्ग जिम्मेदार नहीं है। हिंदूवाद इसके लिए दोषी है। मांग समुदाय जाति व्यवस्था के दुष्प्रभावों से बाहर निकलना चाहता था इसीलिए वह इस धर्म से बाहर आने को मजबूर था। उन्होंने मांग समुदाय को आश्वासन दिया कि यदि वे महार समुदाय के साथ आना चाहें तो उन्हें महार समुदाय का ही सदस्य माना जाएगा जोकि बंबई प्रेसीडेंसी प्रांत में दलित वर्गों का

एक बहुसंख्यक समुदाय है तथा महारों और मांगों के बीच कोई भेद–भाव न होगा। इसके अतिरिक्त उन्होंने मांग समुदाय को यह भी आश्वासन दिया कि महार, बंबई प्रेसीडेंसी प्रांत में दलित वर्गों के लिए आबंटित 15 सीटों में से उनके आरक्षण की गारंटी देने के लिए तैयार हैं, बशर्ते कि वे पार्टी की शपथों का पालन करने के लिए तैयार हों।

अपने भाषण को समाप्त करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने श्रोताओं से कहा कि दलित वर्गों के सामने उनके द्वारा रखा गया धर्म परिवर्तन रूपी उपचार दलित वर्गों को उनके युगों से चले आ रहे ह्रास से ऊपर उठने की अपने आपमें एक व्यापक योजना है। – ए. पी.''[1]

● ● ●

[1] द बांबे क्रॉनिकल, 5 जून, 1936

31

आपको अपने शर्मनाक व्यवसाय को छोड़ देना चाहिए

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर द्वारा मंगलवार, 16 जून, 1936 की रात को दामोदर ठाकरसे हाल, बंबई में हुई एक बैठक में दलित वर्गों के कुछ निश्चित उपवर्गों के बीच चल रही बुराइयों, रीतियों पुराने रीतियों को समाप्त करने की जोशीली अपील की गई।

इस बैठक में देवदासी, पोटराजे, भूते, अराधी और जोगतिनी संप्रदायों के पुरुष और महिलाएं भारी संख्या में उपस्थित हुए और इसका आयोजन येवाला में प्रारंभ किए गए सामूहिक धर्मांतरण अभियान को समर्थन देने के लिए किया गया था।

पुरुषों और महिलाओं, दोनों में से, अनेक वक्ताओं द्वारा जनसमूह को सामाजिक स्वतंत्रता की दिशा में एक कदम के रूप में धर्म परिवर्तन की आवश्यकता पर संबोधित कर चुकने के पश्चात, डॉ. अम्बेडकर ने विशेष रूप से महिलाओं, जिनमें अधिकांशतः कमारीपुरा से आईं थीं, से एक जोशीली अपील की।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

''आप हमारे साथ धर्म परिवर्तन कर रहे हों अथवा नहीं, इस बात का मेरे लिए बहुत अधिक महत्व नहीं है। लेकिन मैं आग्रह करता हूं यदि आप हमारे साथ आना चाहते हैं तो आपको अपना शर्मनाक जीवन छोड़ना ही होगा। कमारीपुरा की महार महिलाएं, समुदाय के लिए शर्म है। जब तक आप अपनी जीवनशैली बदलने के लिए तैयार नहीं होते, हमें आपसे कुछ लेना—देना नहीं है, और हम आपके किसी काम के नहीं हैं।

''आपके लिए केवल दो रास्ते हैंः या तो आप वहीं रहें जहां आप हैं और तिरस्कृत होती रहें तथा सबसे बची रहें, या फिर आप अपना शर्मनाक व्यवसाय छोड़ दें और हमारे साथ आ जाएं।

आप मुझसे पूछेंगी कि आप अपनी जीविकोपार्जन कैसे करेंगी। मैं आपको इस संबंध में कुछ बताने नहीं जा रहा हूं। इसके सैकड़ों तरीके हैं। लेकिन मैं आग्रह करता हूं कि आप यह निम्नकोटि का जीवन छोड़ दें। आपको अन्य वर्गों की महिलाओं के समान ही विवाह करके सामान्य घरेलू जीवन व्यतीत करना चाहिए और उन स्थितियों में नहीं रहना चाहिए जो अपरिहार्य रूप से आपको वेश्यावृति में खींच ले जाती हैं।''[1]

●●●

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 17 जून, 1936

32

किसी षड्यंत्र का शिकार न बनें

यूरोप जाने से पहले डॉ. बी. आर अम्बेडकर ने रविवार 8 नवंबर, 1936 को प्रातः 9 बजे 'समता सैनिक दल' की एक आम बैठक बुलाई। यह बैठक दामोदर हाल, परेल, बंबई में आयोजित की गई और इसकी अध्यक्षता डॉ. अम्बेडकर ने की।[1]

बैठक को संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा,

"मैं कल कुछ तात्कालिक प्रकृति के बहुत महत्वपूर्ण कार्य के संबंध में यूरोप जा रहा हूं। मेरी अनुपस्थिति में आपको यह भारी जिम्मेदारी संभालनी होगी। आपको ये पता ही होगा कि नए संविधान के अनुसार विधान सभा में दलित वर्गों के लिए पंद्रह सीटें आरक्षित की गई हैं। विधान सभा के लिए चुनाव अगले वर्ष फरवरी में आयोजित किए जाएंगे। हमको ये पंद्रह सीटें प्रांत के विभिन्न जिलों में आबंटित की गई हैं। मैंने इन सीटों के लिए चुनाव लड़ने के वास्ते इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी से उम्मीदवारों को नामित किया है। आने वाले चुनाव लड़ने के लिए मैंने और मेरे साथियों ने इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी को गठित करने को क्यों चुना? यही वह प्रश्न है जिस पर मैं इस बैठक में चर्चा करने जा रहा हूं। भारत में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस जैसी सगठित और मजबूत पार्टी के होते हुए एक नई पार्टी बनाने की क्या आवश्यकता थी, यह एक ऐसा तर्क संगत प्रश्न है जिसे अनेक व्यक्ति पूछना चाहेंगे। इसका उत्तर बहुत सीधा सा है।

कांग्रेस का मुख्य उद्देश्य स्वतंत्रता प्राप्त करना है। मेरे साथी और मैं भी स्वतंत्रता प्राप्त करना चाहते हैं लेकिन स्वतंत्रता प्राप्त करना इतना साधारण और आसान कार्य नहीं है। यहां तक कि महात्मा गांधी द्वारा विकसित किए गए 'सत्याग्रह' के हथियार के भी बहुत प्रभावी होने की संभावना नहीं है। असहयोग और सविनय अवज्ञा के साथ भी स्वतंत्रता प्राप्त कर पाना संभव नहीं है। यह हमारी क्षमता से निश्चित रूप से परे है। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी लोग इसी ढंग से सोच रहे हैं। यदि यह इतना कठिन है, तो फिर स्वतंत्रता प्राप्त करने के ऐसे निरर्थक स्वप्न देखने का क्या मतलब है। जब तक हममें वास्तविक स्वतंत्रता प्राप्त करने की शक्ति और क्षमता नहीं होगी, तब तक हमें हमारा उद्देश्य प्राप्त करने के लिए भलीभांति परखी हुई विधियों का अनुसरण करना ही बुद्धिमत्तापूर्ण और लाभकारी होगा। मैं समझता हूं कि यही सही दृष्टिकोण है।

[1] जनता : 5 दिसंबर, 1936

भारत अभी भी एक राष्ट्र नहीं बन पाया है। यह देश लगभग 4000 जातियों में बंटा हुआ है। इसके अतिरिक्त जातिवाद, प्रांतवाद, धार्मिक मतभेद और असंख्य अन्य मतभेद और झगड़ों जैसी बुराइयां हैं जोकि देश को बांट रही हैं। इन विभाजनकारी शक्तियों के रहते इस बात का विश्वास हो पाना कठिन है कि भारत कभी भी संगठित हो पाएगा। हिंदुओं, मुसलमानों और ईसाइयों का कोई साझा लक्ष्य नहीं है। यह बात मानी जा सकती है कि वर्तमान स्थिति में ब्रिटिश राज समाप्ति पर आ गया है, लेकिन क्या ऐसे लोग जो एक राष्ट्र में विश्वास नहीं करते हैं और धार्मिक रूप से उन्मादी हैं तथा जाति के प्रति जागरूक हैं राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए एक–दूसरे के विरुद्ध लड़ते नहीं रहेंगे?

वास्तविक और सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त करने के लिए वास्तविक शक्ति की अनुपस्थिति में स्वतंत्रता के सपने देखना भी नुकसानदेह होगा।

वहीं दूसरी ओर हमारे और कांग्रेस के दषष्टिकोण में एक निश्चित अंतर है। कांग्रेस संवैधानिक सुधारो को पसंद नहीं करती है। वह सुधारों के खिलाफ है। विधान सभा में पहुंचने के पश्चात वह सुधारों पर अंकुश लगा सकती है। लेकिन, इस बात को ध्यान में न रखते हुए कि ये सुधार हमारी महात्वाकांक्षाओं और मांगों के अनुरूप नहीं है, हमने इन पर कार्य करने और इस अवसर को विधान सभाओं में हमें दिए गए अधिकारों से और अधिक अधिकार प्राप्त करने के लिए उपयोग में लाना पसंद किया है। यह वह समय नहीं है जबकि विधान सभा का उपयोग चालों और शरारतों के किसी खेल के मैदान के रूप में किया जाए।

आज कांग्रेस एक मिश्रित भीड़ की तस्वीर को प्रस्तुत करती है। कांग्रेस में निचले दर्जे के कुली, गरीब श्रमिक, किसान, छोटे–मोटे व्यावसायी, दुकानदारों से लेकर जमीनों के मालिक, सूदखोर, व्यापारी, मध्यमवर्गीय व्यक्ति, पूंजीपति और शोषणकर्ता पाए जाते हैं। संक्षेप में कांग्रेस में सभी प्रकार के परस्पर विरोधी हितों वाले व्यक्ति हैं। जो व्यक्ति गरीबों के खून पर तरक्की करते हैं, क्या वे कभी भी उत्पीड़ितों के मित्र हो सकते हैं? कांग्रेस संपन्न व्यक्तियों के हाथों का खिलौना है। भला वे गरीब खेतिहरों, किसानों और कामगारों की मदद कैसे कर सकते हैं?

कांग्रेस किसानों और कामगारों की पार्टी नहीं है। कांग्रेस पूंजीपतियों की संरक्षक है। कांग्रेस के लिए कामकाजी वर्गों और आम आदमी के हितों की सुरक्षा करना और उन्हें बचाए रखना बहुत कठिन है।

इसके विपरीत हमारा संगठन – इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी समाज के कमजोर वर्गों की सुरक्षा के लिए तत्पर है।

कांग्रेस की तुलना में हमारी पार्टी के लिए किसानों और कामकाजी वर्गों के हितों की सुरक्षा करना और उन्हें बचाए रखना आसान होगा।

हमारी पार्टी का मुख्य उद्देश्य अस्पृश्यों, कामकाजी वर्गों, गरीबों और वंचित व्यक्तियों के हितों के लिए लड़ना है। अपने घोषित सिद्धांतों और नीतियों से समझौता किए बिना हम चुनावों को जीतने के लिए अन्य पार्टियों के साथ गठबंधन करेंगे।

अनेक बार यह प्रश्न पूछा जाता है कि मैंने अस्पृश्यों के हितों के मामलों को एक तरफ करते हुए अन्य व्यक्तियों के साथ कार्य करना क्यों चुना है। इस संबंध में मैं यह कहना चाहूंगा कि प्रस्तावित विधान सभा में नए संविधान के अनुसार चुने जाने वाले 175 सदस्य होंगे। इन 175 प्रतिनिधियों में से 15 अस्पृश्यों में से होंगे। इन 15 सदस्यों के लिए प्रभावशाली ढंग से कार्य कर पाना संभव नहीं है। इसीलिए हमारी सहायता के लिए बड़ी संख्या में व्यक्तियों का होना बहुत आवश्यक है। वे समान विचारों और सिद्धांतों वाले मित्र होने चाहिए। ऐसे गैर– अस्पृश्य, जिन्होंने अपने स्वयं के हितों का बलिदान करते हुए हमारे लिए हमारे साथ मिलकर लड़ाई लड़ी है और निष्ठा के साथ हमारी सहायता की है, उन्हें चुनाव लड़ने के लिए हमारी पार्टी (आईएलपी) के उम्मीदवार के रूप में हमारे द्वारा अपनाया जाना चाहिए। और इसलिए इस समय हमें अपना समय में व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए। अपनी पार्टी का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए हमें चुगली, छोटी–मोटी लड़ाइयों, व्यर्थ के क्रियाकलापों और विचार–विमर्शों को एकतरफ रख देना चाहिए। यदि आप सही ढंग से पार्टी के सिद्धांतों और इसकी भावना का अनुसरण करते हैं और इसे सफल करने के लिए निष्ठापूर्वक कार्य करते हैं तो मैं जो कुछ भी अपने साथियों के लिए प्राप्त करने में सक्षम हो पाया हूं वह आगे और भी सुदृढ़ होता जाएगा।

यदि मैं विधान सभा चुनावों में सफल नहीं होता हूं तो यह कोई बहुत बड़ी हानि नहीं होगी। लेकिन कुछ भी हो आपको 'जी' वार्ड से श्री कलोखे को अपने उम्मीदवार के रूप में जिताना है। यह हमारे लिए प्रतिष्ठा का प्रश्न है।

इस समय मांग और महारों के बीच भदे–भाव न करें। जातिगत संकीर्ण सोच को भी कोई महत्व न दें। हम सब एक हैं और एकता की इस सच्ची भावना को हमें हमेशा अपने दिमाग में रखना है।

अब मैं एक अन्य महत्वपूर्ण मामले पर बोलने जा रहा हूं। मैंने अपने उम्मीदवारों में से अधिकांश महार समुदाय से लिए हैं और अन्य जातियों से अधिक उम्मीदवार नहीं लिए हैं। अगर स्पष्ट शब्दों में कहा जाए तो इस समय ऐसा करने के कारणों के संबंध में विस्तार से जानने की कोशिश करना बुद्धिमत्तापूर्ण न होगा।

लेकिन जिन्होंने तथाकथित नेशनलिस्ट हरिजन पार्टी की स्थापना की है, उन्होंने मेरे विरुद्ध यह आरोप लगाया है और इस मुद्दे को तूल दिया है। इस आरोप का खंडन किया जाना है और उन्हें एक उपयुक्त जवाब भी दिया जाना है। मैंने इन तथाकथित नेशनलिस्ट 'हरिजनों' के संगठन के लिए एक नाम चुना है। मैं उन्हें 'ले भग्गू' उठाइगीर अथवा सामान उठाकर भागने वाले चोर कहता हूं।

मैंने विशेष रूप से किसी के चमार जाति का सदस्य होने के कारण उसे पार्टी से निकाला अथवा अलग नहीं किया है। वे जो भी सोचना चाहते हैं वैसा सोचने के लिए स्वतंत्र हैं। इस बात से मुझ पर कोई बहुत अधिक प्रभाव नहीं पड़ता है। इन 'हरिजनों' को आने वाले विधान सभा चुनाव में उम्मीदवार के रूप में न चुनने के कारणों में मुख्यतः इन लोगों की 'उठाने और भाग जाने' की आदत थी जो उन्हें शामिल न किए जाने की उत्तरदायी है। वे भीख मांगने के लिए भिखारियों की तरह कहीं भी जा सकते हैं। उनके मन में सिद्धांतों, पार्टी के अनुशासन और विचारधाराओं के लिए कोई सम्मान नहीं है। 'छीनना', 'अपने कब्जे में करना' और 'ले भागना' के सिद्धांत के साथ वे जैसे भी अपनी जीवनचर्या चला सकते हैं वही उनका एकमात्र सिद्धांत है।

हमने महाड सत्याग्रह प्रारंभ किया था। हमने आत्मसम्मान और आत्मनिर्भरता के लिए यह आंदोलन प्रारंभ किया था। हमने नासिक में एक और संघर्ष भी प्रारंभ किया था। बहुत पहले की बात नहीं है, पूना समझौते पर हस्ताक्षर किए जाने के पहले, जिसने हमारे जीवन को असमंजस में डाल दिया था, हमने अपने अधिकारों और राजनैतिक सुरक्षा के लिए गांधी के विरुद्ध लड़ाई भी लड़ी थी। ये तथाकथित 'राष्ट्रवादी हरिजन' आराम से हमारे दुश्मनों के शिविरों में जा बैठे। अब यदि ये धोखेबाज हमारी सफलता, जिसके लिए उन्होंने न तो कोई संघर्ष किया और न ही हमारे साथ कोई सहयोग किया, में हिस्सा चाहते हैं तो हमें ऐसे लोगों के प्रति अब दया क्यों दिखानी चाहिए? मैं ऐसे लोगों की आलोचना की कोई परवाह नहीं करता जिन्होंने चमगादड़ों के समान जीवन बिताने को चुना है। यही नहीं, पूना समझौते के पहले जब गांधीजी ने अपने जीवन को जोखिम में डाल दिया था, उस समय यही लोग थे जो गांधीजी के पक्ष के समर्थन में उठ खड़े हुए और यह घोषित किया कि वे गांधीजी के जीवन को बचाने के लिए दलित वर्गों के लिए सीटों का कोई आरक्षण नहीं चाहते। इसके पश्चात इन लोगों को उन सीटों में हिस्सा मांगने का क्या हक है जो हमने अपने संघर्ष के माध्यम से जीती हैं। इन तथाकथित राष्ट्रीय हरिजनों के मुख्य नेता श्री नारायण काजरोलकर एक दिन डॉ. सावरकर की श्रेणी में बैठे हुए पाए जाएंगे। श्री पी. बालू, श्री बल्लभभाई पटेल जैसे 'देशभक्तों' के शिविर में एक सीट के लिए संघर्ष करते हुए मिलेंगे।

ऐसी स्थिति में इस 'हरिजन' संगठन की क्या स्थिति होगी। मैं इसको अपने लिए आवश्यक अथवा उचित नहीं समझता हूं कि मैं आज इस संबंध में आपसे कुछ कहूं। क्या किसी ने भविष्य में इस प्रकार की उठने वाली स्थिति के संबंध में कोई प्रकाश डालने का प्रयास किया है? अब तक हमारे संघर्ष में सहयोग करने वाले और हमारी सहायता करने वाले एकमात्र व्यक्ति श्री शिवतरकर मास्टर हैं। वो चमार जाति में जन्म लेने वाले एक प्रमुख नेता हैं। दुर्भाग्य से उन्हें अभी तक चुनाव लड़ने के लिए नगर समिति से अनुमति नहीं मिली है। इसलिए उन्हें हमारी पार्टी के उम्मीदवार के रूप में नामित करना संभव नहीं है।

मैं समझता हूं कि विधान सभा में प्रवेश लेने के बजाय बाहर से काम करना ज्यादा बेहतर है। धर्म परिवर्तन का प्रश्न भी ज्वलंत प्रश्न बना हुआ है।

इसके बावजूद अपने लोगों की इच्छाओं का सम्मान करते हुए मैंने इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के एक उम्मीदवार के रूप में विधान सभा में प्रवेश करने का निर्णय किया है। मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि हमारे इस निर्णय के कारण कांग्रेस हमारे रास्ते में बाधाएं उत्पन्न करने के सारे प्रयास करेगी। वास्तव में मुझे विधान सभा से बाहर रखने के उद्देश्य के साथ उन्होंने आज से ही अपने प्रयास प्रारंभ कर दिए हैं। इसलिए हममें से प्रत्येक को सतर्क एवं संगठित रहना होगा और अनुशासित ढंग से कार्य करना जारी रखना होगा। मुझे इस बार आपके सभी वोट चाहिए। यह न सोचिए कि विधान सभा के लिए चुने जाने के लिए मैं अपने सिद्धांतों का बलिदान करने जा रहा हूं।

आपको यह स्पष्ट तौर पर समझ लेना चाहिए और अपने मन में रखना चाहिए कि आपकी सहायता करने वाला कोई नहीं है। मैं आपको सलाह देना चाहूंगा कि आप किसी भी षड्यंत्र का शिकार न बनें। ऐसे समय पर आपको स्वार्थपरता, लालच और संकीर्ण मानसिकता को छोड़ना होगा। कुछ लोग जिन्हें पार्टी के उम्मीदवारों की सूची में स्थान दे पाना संभव नहीं हो सका है, उन्होंने आसानी से अपने पछतावे और निराशा में पार्टी से विघटन और अलग होने का रास्ता चुन लिया है। आपको अपने दिमाग में यह बात रखनी चाहिए कि वह वृक्ष जोकि हमें आश्रय, ठंडक और तरोताजा करने वाली छाया, आराम और सुरक्षा देता है, उसे पोषित और संरक्षित किए जाने की आवश्यकता है। मुझे विश्वास है कि आप कभी किसी भी प्रकार से इसकी शाखाओं को नष्ट करने का प्रयास नहीं करेंगे।

मुझे इस बात में संदेह है कि ऐसे सभी लोगों को जिनका नेतृत्व मुख्यतः स्वार्थ पूर्ण उद्देश्यों द्वारा किया जा रहा है और जिन्होंने हमारे उद्देश्य को नुकसान

पहुंचाने का रास्ता चुना है, कोई लाभ होगा। मैं समझता हूं कि उन्हें कोई भी लाभ नहीं होगा। ये लोग ऐसे व्यक्ति हैं जो अपनी कुल्हाड़ी अपने पैर पर दे मारते हैं।

कुछ समय के लिए अन्य सभी क्रियाकलापों को एक ओर रखते हुए मैंने अपने सहयोगियों की सहायता और सहयोग से इस कार्यक्रम को तैयार किया है और मैं इसे आपके सामने रखता हूं। मुझे आशा है कि समता सैनिक दल के आप सभी सदस्य अनुशासित और तत्परतापूर्ण ढंग से इसकी सफलता के लिए प्रयास करेंगे।

हमें बहुत ही मजबूत और शक्तिशाली दुश्मनों का सामना करना है। इसलिए बंबई शहर में समता सैनिकों की कम से कम 2000 की संख्या शक्ति होनी चाहिए। श्रृद्धा, समर्पण और एकता सहित पर्याप्त जनशक्ति के साथ मेरे लिए किसी भी स्थिति, वह चाहे कितनी भी गंभीर हो, से निकल पाना कोई कठिन काम न होगा। कांग्रेस और अन्य संगठन जो हमारे उद्देश्य के प्रति आक्रामक हैं वे मेरे चुनाव के रास्ते में अनेक बाधाएं डाने का प्रयास कर रहे हैं। मुझे यह पूर्ण विश्वास है कि हमारे समुदाय के सभी सदस्य अपने बहुमूल्य वोट मेरे पक्ष में डालेंगे और मेरे वार्ड में रहने वाला कोई भी सदस्य ऐसा नहीं होगा जो अपने मत का उपयोग न करे। यह केवल तभी पूरा हो सकता है जब समता सैनिक दल इस कार्य को अपने हाथों में ले ले।

मैं इस बात के प्रति आश्वस्त हूं कि मेरी अनुपस्थिति में समता सैनिक दल का प्रत्येक सदस्य इस महत्वपूर्ण कार्य को उत्साह और समर्पण के साथ करेगा। मैंने इस उद्देश्य के लिए एक समिति को नियुक्त किया है। मैं आश्वस्त हूं कि इस समिति की सहायता से आप इस कार्य को पूरा करने में सफल हो सकेंगे।'

● ● ●

33

हम अपने दुखों को जारी नहीं रख सकते

बंबई में कामगार मैदान परेल में इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के तत्वावधान में 30 मई, 1937 को एक बड़ी बैठक का आयोजन किया गया। इस बैठक का आयोजन विशेष रूप से उन प्रतिनिधियों को बधाई देने के लिए किया गया था, जो कार्यकारी परिषद के चुनाव में चुने गए थे। डॉ. पी. जे. सोलंकी ने इस बैठक की अध्यक्षता की। इस बैठक के लिए लगभग 15000 लोग एकत्र हुए जिनमें लगभग 1200 महिलाएं थीं। समता सैनिक दल की विभिन्न इकाइयों को इस बैठक की व्यवस्था के लिए विशेष रूप से बुलाया गया था।[1]

''इस बैठक में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने अपने विचारों को दोहराया और नए संविधान, जो दलित वर्गों के सर्वोत्तम हितों के अनुरूप हो, के लिए कार्य करने के संबंध में अपने दृढ़ निश्चय को व्यक्त किया। कांग्रेस पार्टी से खेल खेलने और अवरोध को समाप्त करने की अपील करते हुए उन्होंने कांग्रेस पार्टी को चेतावनी दी और कहाः ''हम उस समय तक अपने दुखों को जारी नहीं रहने दे सकते जब तक कि कांग्रेस के साम्राज्यवाद के खिलाफ तथाकथित लड़ाई समाप्त नहीं हो जाती''। अपने भाषण में उन्होंने जवाहर लाल नेहरू जैसे कांग्रेसी नेताओं द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण की निंदा की, जिन्होंने इन सीटों पर चुनाव लड़ने के लिए दलित वर्ग से चुने गए कुछ नौकरों को उम्मीदवार बनाया था। उन्होंने इस दृष्टिकोण के संबंध में एक मामले के रूप में नेहरू के हरी नामक नौकर का संदर्भ दिया। उन्होंने अंतरिम मंत्रिमंडल में कार्यभार क्यों नहीं संभाला, इसका जवाब देते हुए उन्होंने कहा कि ऐसे किसी मंत्रिपरिषद् में पद को स्वीकार करना किसी काम का नहीं था जिसका विधान सभा में कोई बहुमत न हो और जिसके बहुत दिन तक रहने की कोई संभावना न हो'' ।[2]

● ● ●

---

[1] जनता, 12 जून, 1937

[2] कीर, पृष्ठ 293

34

दलित वर्ग से कोई भी मंत्री नहीं है

"31 जुलाई, 1937 को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर एक व्यावसायिक दौरे पर धूलिया गए थे। चालीसगांव स्टेशन पर दलित वर्गों द्वारा उनका भव्य स्वागत किया गया। सुबह 8 बजे धूलिया पहुंचने पर जोरदार प्रशंसात्मक स्वागत और एक नए नारे – "अम्बेडकर कौन है?" "अम्बेडकर हमारा राजा है!" के साथ उनका स्वागत किया गया। इसके पश्चात डॉ. अम्बेडकर को एक जुलूस में यात्री बंगला ले जाया गया। न्यायालय का कार्य पूरा हो जाने के पश्चात दोपहर में उन्हें हरिजन सेवक संघ के बर्वे द्वारा एक चाय पार्टी दी गई।

शाम को डॉ. अम्बेडकर ने विजयानंद थियेटर में एक बैठक को संबोधित किया।

अपने भाषण में उन्होंने कहा कि दिमाग में रखने वाली मुख्य बात यह है कि ब्रिटिश शासक जो अछूतों के प्रति उदासीन थे, के स्थान पर अब ऐसे नेता आ गए हैं जो एक ऐसी पार्टी से संबंध रखते हैं जो दलित वर्गों की सामाजिक दमनकर्ता है। उन्होंने आगे कहा कि वे ऐसे दिन थे जब संघ संगठित था और अछूतों के दृष्टिकोण से सावधानी बरतता था। उन्होंने आगे यह उल्लेख किया कि किस प्रकार से कांग्रेस द्वारा बनाए गए मंत्रिमंडलों के माध्यम से ब्राह्मणवाद भारत में पनप रहा है। उन्होंने टिप्पणी की कि कांग्रेस के सभी मंत्रिमंडल का नेतृत्व ब्राह्मणों के हाथ में है और कोई भी मंत्री दलित वर्ग का नहीं है।"[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 294

35

हिंदू धर्म के भगवानों की पूजा न करें

1938 की संख्या 11

ओरिएंटल ट्रांसलेटर्स आफिस,

सेक्रेटेरिएट,

बंबई, 5 जनवरी, 1938

ज्ञापन

अधोहस्ताक्षरी, सचिव, भारत सरकार, गृह विभाग (राजनीतिक) को शुभकानाएं देता है और साथ में मराठी पुस्तक निरोप्या, भाग XXII, संख्या 6 (नवंबर, 1937) भी संलग्न करता है जिसमें पृष्ठ संख्या 135–138 पर संपादकीय टिप्पणी में एक महत्वपूर्ण मामला दिया गया है।

2. निरोप्या का मुद्रण और प्रकाशन इग्जामिनर प्रिंटिंग प्रेस, दलाल स्ट्रीट, फोर्ट, बंबई में आर्कबिशप–बिशप आफ पूना द्वारा किया जाता है। इग्जामिनर प्रिंटिंग प्रेस के कीपर की उद्घोषणा जे. एम. सेरेश एस. जे. के नाम से दिनांक 23 जनवरी, 1937 को की गई है। इस पुस्तक को प्रेस से जारी करने की तारीख 1 नवंबर, 1937 है।

3. पृष्ठ संख्या 135 से 138 तक पर दी गई संपादकीय टिप्पणी का पूरा अनुवाद एतद्द्वारा संलग्न किया जाता है।

(हस्ताक्षरित)

ओरिएंटल ट्रांसलेटर टू दि गवर्नमेंट,

डीसीपी

(हस्ताक्षरित)

अधीक्षक, एसबीसीआईडी

धर्मांतरण की आवश्यकता

माह नवंबर 1937 के लिए निरोप्या, भाग XXII, संख्या 6 में प्रकाशित होने वाले ''डॉ. अम्बेडकर आनी धर्मांतारची आवश्यकता'' (अर्थात डॉ. अम्बेडकर और धर्मांतरण की आवश्यकता) शीर्षक वाली संपादकीय टिप्पणी का पूरा अनुवाद।

(इस पूरे अनुवाद के दौरान कोष्ठकों में आने वाले हिस्से मूल पाठ में नहीं आते हैं केवल उन स्थितियों को छोड़कर जहां कि हाशिए में ऐसा अन्यथा उल्लेख किया गया हो),

साप्ताहिक समाचार–पत्र जनता से ऐसा ज्ञात हुआ है कि डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में 28 अगस्त, 1937 को म्युनिसिपल हाल, बांद्रा में दलित वर्गों की एक बड़ी सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया और उसमें निम्नलिखित संकल्प पारित किया गयाः–

''जैसाकि बंबई प्रेसीडेंसी महार सम्मेलन में संकल्प किया गया था हमारे भाइयों और बहनों को हिंदू धार्मिक त्योहारों, हिंदूवाद की धार्मिक रीतियों जैसे शपथ इत्यादि, और धार्मिक प्रक्रियाओं जैसे व्रत का पालन नहीं करना चाहिए।''

इस अवसर पर अनेक भाषणों के संपन्न हो जाने के पश्चात डॉ. अंबेडकर बोलने के लिए खड़े हुए।

उन्होंने कहाः ''हमारी सभा विशेष रूप से आपको बंबई महा प्रांत महार सम्मेलन द्वारा धर्मांतरण के संबंध में पारित किए गए संकल्पों को याद दिलाने के लिए बुलाई गई है। इसलिए यदि किसी को धर्मांतरण के संबंध में कोई प्रश्न पूछना है तो वह निश्चित रूप से पूछ सकता है।'' जब किसी भी व्यक्ति ने कोई प्रश्न नहीं पूछा तो डॉ. अम्बेडकर ने अपना भाषण प्रारंभ किया।

उन्होंने कहाः

''प्रिय भाइयों और बहनों,

मैं इस सभा में शामिल नहीं हो रहा था; लेकिन मुझे पता चला कि कुछ ऐसे व्यक्ति हैं जो अपनी पुरानी परंपराओं से जुड़े हुए हैं और 'महार सम्मेलन' द्वारा पारित किए गए धर्मांतरण संबंधी संकल्प को पूर्णतः नहीं अपना रहे हैं। इसलिए मैं ऐसे व्यक्तियों के संदेह दूर करने के लिए यहां आया हूं। मैं पहले भी (इस विषय पर) अपने विचार व्यक्त कर चुका हूं। वस्तुतः आपको उनके संबंध में अपने दिमाग

में कोई संदेह नहीं पनपने देना चाहिए। वर्ष 1935 में आयोजित बंबई महा प्रांत महार सम्मेलन, महार समुदाय के इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में लिखे जाने के उपयुक्त है। इसलिए ऐसे किसी सम्मेलन द्वारा पारित किए गए संकल्पों को वस्तुतः महार समुदाय द्वारा समग्र रूप से माना जाना चाहिए और महार समुदाय के अधिसंख्य सदस्यों को इन संकल्पों के लिए कार्य करना चाहिए।

हिंदू धर्म के देवताओं की पूजा नहीं की जानी चाहिए

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, ''हमें ऐसे सभी धार्मिक त्योहार और दिवस (मनाने) छोड़ देने चाहिए जो हम हिंदू धर्म के अनुसार मनाते रहे हैं। हमको इस बात पर विचार करना चाहिए कि क्या हिंदू धर्म के अनुसार किए जाने वाली रीतियां धर्म और नैतिकता के दृष्टिकोण से उचित हैं। कुछ रीतियां आत्यंतिक अश्लीलता से पूर्ण है। उदाहरण के लिए अनेक व्यक्ति सोमवार को (भगवान) शंकर के नाम पर व्रत रखते हैं और अनेक प्रकार से भगवान शंकर की पिंडी (लिंग) को पूजते हैं। लेकिन क्या किसी ने इस बात पर विचार किया है कि शंकर की पिंडी है क्या? ये पुरुष और महिला के मिलन के प्रतीक के अतिरिक्त और कुछ नहीं है। क्या हमें इस प्रकार के किसी अभद्र प्रतीक की प्रशंसा करनी चाहिए? यदि पुरुष और महिला सड़कों पर कुत्तों के समान अभद्र व्यवहार में शामिल हो जाएं, तो क्या हमें उन्हें फूलों के साथ पूजना चाहिए अथवा जूतों के साथ? तो क्या हमें पार्वती (और) शंकर के इसी प्रकार के कार्य के प्रतीक अर्थात भगवान की अभद्रता की पूजा करनी चाहिए?''

''गणपति के साथ भी कुछ ऐसा ही है।'' डॉ. अंबेडकर ने आगे कहाः ''गण ापति की कहानी कुछ इस प्रकार है कि एक बार पार्वती नग्न रूप में स्नान कर रही थीं, उस समय शंकर कहीं और गए हुए थे। तब कोई उनके कार्य में व्यवधान न डॉले, इसलिए पार्वती ने अपने शरीर के मैल को खुरचा और उसमें से गणपति यानी रक्षक का निर्माण किया। अब इस स्थिति में शरीर के मैल से बने इस देवता को क्या भगवान माना जाना चाहिए? भगवान को साफ और पवित्र छवि वाला अवतार होना चाहिए, लेकिन हिंदू धर्म में जैसाकि मैं अभी आपको बता रहा हूं भगवान बहुत विचित्र प्रकार के हैं। इसलिए मेरा ईमानदारी के साथ यह मानना है कि उनकी पूजा नहीं की जानी चाहिए।''

तीसरे, डॉ. अम्बेडकर ने दत्तात्रेय की कहानी का संदर्भ लिया, ''नारद तीन देवताओं ब्रह्मा, विष्णु और महेश की पत्नियों को यह बताया करता या कि महर्षि अत्रि की पत्नी अनुसूइया बहुत ही पतिव्रता पत्नी थी। वे इस बात को सहन नहीं कर सकीं कि किसी महिला को उनसे अधिक पतिव्रता माना जाए। इसलिए इन तीनों पत्नियों ने अपने–अपने पतियों से अनुसूइया के पातिव्रत्य को भंग करने के

लिए कहा और उन तीनों नायकों ने अपनी–अपनी पत्नियों की बात सुनी और ऐसा करने के लिए राजी हो गए। ये तीनों व्यक्ति अनुसूइया के घर गए, उसके पति को किसी बहाने कहीं और भेज दिया और अनुसूइया के साथ रहने लगे। इस स्थिति में उसने एक पुत्र को जन्म दिया और चूंकि उस बच्चे के पिता को लेकर संदेह था इसलिए उसके तीन सिर लगा दिए गए ताकि इन तीनों (भगवानों) पर बराबर–बराबर जिम्मेदारी आए और यही दत्तात्रेय का अवतार है।''

धर्मांतरण का (के पक्ष में) आंदोलन वापस नहीं लिया जाना है

अपने भाषण की समाप्ति पर डॉ. अंबेडकर ने कहा, ''अनेक लोगों का यह मानना है कि धर्मांतरण की लहर अब शांत हो चुकी है। लेकिन ऐसा नहीं है। धर्मांतरण तो होना ही है। अपने मस्तिष्क में इस बात को अच्छी तरह से बैठा लीजिए कि मैंने यह आंदोलन छोड़ा नहीं है। अनेक हिंदुओं ने मुझसे कहा है कि 'धर्मांतरण संबंधी आपके आंदोलन के परिणामस्वरूप हमारी आंखे खुल गई हैं। अब चूंकि हम लोग जाग चुके हैं अतः हमें आपकी तरफ अपने कर्त्तव्य में असफल नहीं होना चाहिए; जिससे कि आपको धर्मांतरण संबंधी अपने आंदोलन को वापस लेना पड़े। लेकिन मैंने अब तक जो अनेक कारण बताए हैं उनके चलते मेरी इस आंदोलन को वापस लेने की मंशा नहीं है। इस मामले पर पूरी तरह से विचार करें और अपनाए जाने वाले नए (अन्य) धर्म को अच्छी तरह से जांचपरख कर (जैसाकि सोने के मामले में उसे तपाया और जांचा जाता है) ही अपनाया जाए। मुझे आशा है कि इसके पश्चात महार समुदाय के सभी सदस्य उसी प्रकार से कार्य करेंगे जैसाकि महार समुदाय के सम्मेलन में निर्णय किया गया था।'[1]

● ● ●

---

[1] स्टेशन डायरी का सार भोइवाड़ा पुलिस स्टेशन, बृहस्पतिवार, दिनांक 27 मई, 1937, 12–10 प्रातः
डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का यह भाषण और संकल्प, जनता, दिनांक 4 सितम्बर, 1937 के अंक में प्रकाशित किए गए थे – संपादक

36

साम्यवादियों ने मजदूरों का शोषण किया है

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने सितंबर, 1937 की शुरुआत में मासुर में दलित वर्गों के एक जिला स्तरीय सम्मेलन की अध्यक्षता की।

अपने भाषण के दौरान उन्होंने श्रोताओं को बताया कि उनका यह दृढ़ विचार है कि गांधीजी वो व्यक्ति नहीं थे जिन्होंने कामकाजी वर्गों और गरीबों के हितों को ध्यान में रखा हो। अगर कांग्रेस कोई क्रांतिकारी संगठन होता तो वे इसमें शामिल हो जाते। लेकिन उनका विश्वास था कि यह क्रांतिकारी संगठन नहीं है। कांग्रेस में सामाजिक और आर्थिक समानता के आदर्शों का दावा करने के लिए पर्याप्त साहस नहीं था जिससे कि आम आदमी अपने आपको आराम और स्वतंत्रता के साथ अपनी पसंद के अनुसार विकसित कर सकता। उन्होंने कहा कि ऐसा तब तक संभव नहीं है जब तक कि उत्पादन के साधनों पर अपने निजी स्वार्थों के चलते कुछ व्यक्तियों का नियंत्रण जारी है। उन्होंने कहा कि गांधीवाद के अनुसार किसान को दो प्राकृतिक बैलों के साथ तीसरे बैल के रूप में हल के साथ उपयोग में लाया जाएगा।

साम्यवादियों द्वारा चलाए जा रहे श्रमिक आंदोलन के संबंध में उन्होंने कहा कि उनके द्वारा इस आंदोलन में शामिल होने की कोई संभावना नहीं है। उन्होंने यह घोषणा की कि वे निश्चित तौर पर साम्यवादियों के एक दुश्मन हैं, क्योंकि उन्होंने अपने राजनैतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए श्रमिकों का शोषण किया है।'[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 295–296

37

शीर्षकों के विरुद्ध सतर्क रहें

''30 दिसंबर, 1937 को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने दलित वर्गों के शोलापुर जिला सम्मेलन की अध्यक्षता की। कुर्दुवाड़ी स्टेशन पर प्रातःकाल उनका उत्साहपूर्ण ढंग से स्वागत किया गया। रास्ते में डॉ. अम्बेडकर थोड़ी देर के लिए रुके और करकम गांव में मातंग समाज के सामने एक छोटा सा भाषण दिया।

उन्होंने उनको कांग्रेस के विरुद्ध सतर्क रहने की सलाह दी जिसने उनके अनुसार उनके शोषकों, दमनकर्ताओं और खून चूसने वालों से साठगांठ करके बनी पार्टी है और जो सफेद वेशभूषा और टोपी के आवरण के अंदर गरीबों के कल्याण के नाम पर लोगों को लूट रही है'' ।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 297

38

आत्मसम्मान और आत्मरक्षा आंदोलन के पास खोने के लिए कुछ नहीं है किंतु पाने के लिए सब कुछ है

शोलापुर जिले के दौरे के समय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर 31 दिसंबर, 1937 को दोपहर में पंढरपुर पहुंचे। इसके पश्चात उन्हें एक जुलूस में यात्री बंगला ले जाया गया। पंढरपुर नगरपालिका के अध्यक्ष उनसे बंगले में आकर मिले और उसके पश्चात दोनों ही सम्मेलन के लिए गए जो म्युनिसिपल धर्मशाला में आयोजित किया गया था। आसपास और दूरदराज के क्षेत्रों के व्यक्ति अपने महान नेताओं को सुनने के लिए एकत्र हुए। 1000 से अधिक महिलाएं भी वहां उपस्थित थीं।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि इस समय तीन समस्याएं हमारे सामने हैं। पहली यह कि क्या उन्हें कभी भी हिंदू समाज में समान स्थिति प्राप्त होगी; दूसरी क्या उन्हें कभी भी राष्ट्रीय समृद्धि में समान हिस्सा मिलेगा; और तीसरी कि आत्मसम्मान, आत्मरक्षा आंदोलन का भविष्य क्या होगा? पहली के संबंध में उन्होंने कहा ऐसा तब तक संभव नहीं है जब तक कि जातिप्रथा विद्यमान है। दूसरी के संबंध में उन्होंने पूंजीपतियों द्वारा शासित कांग्रेस से मिले व्यवहार पर कड़ा असंतोष व्यक्त किया। उन्होंने कहा जब तक कांग्रेस पूंजीपतियों के हाथों में है तब तक वे अपनी आर्थिक स्थिति की बेहतरी के लिए वर्तमान सरकार पर भरोसा नहीं कर सकते। उन्होंने आगे कहा कि इसीलिए पूंजीपतियों, जो उनके शोषण के लिए आतुर हैं, के विरुद्ध एक संयुक्त मोर्चा बनाया जाना आवश्यक है। उन्होंने उनको बताया कि आर्थिक स्वतंत्रता को प्राप्त करने के लिए अब सही समय आ चुका है। तीसरी के संबंध में उन्होंने कहा कि उन्हें एक बात याद रखनी चाहिए कि उनके पास खोने को कुछ भी नहीं है और इस प्रयास से पाने के लिए सब कुछ है। उन्हें केवल अपने मन से मृत्यु के भय को भगाना होगा।

इस सम्मेलन ने अपने नेता द्वारा सभा में लाए गए महार वतन विधेयक का पूर्णरूप से समर्थन किया।

इसके पश्चात डॉ. अम्बेडकर को म्युनिसिपल हाल ले जाया गया। सदस्यों ने प्रसन्नतापूर्वक उनका स्वागत किया। अध्यक्ष ने इस अवसर पर एक भावभीना भाषण दिया और अतिथि को माला पहनाई। डॉ. अम्बेडकर ने उनकी भावनाओं का सम्मान किया और उन सभी को धन्यवाद दिया।''[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 297–298

39

ईसाई राजनीतिक रूप से पीछे छूट गए हैं

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने शोलापुर में 1 जनवरी, 1938 को ओजस्वी भाषण दिया। स्थानीय लोग ईसाई धर्म पर उनके विचारों को सुनने के लिए उत्सुक थे। इसलिए उन्होंने पूज्य गंगाधर जाधव की अध्यक्षता में ईसाइयों की सभा को संबोधित किया।''

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा कि जबसे उन्होंने हिंदू धर्म को कसौटी पर कसने के अपने संकल्प की घोषणा की है, उस दिन से वे एक सौदे की वस्तु अथवा हास्य का स्रोत बन चुके हैं। उन्होंने महाराष्ट्र के सुविख्यात नाटककार आचार्य पी. के. अत्रे द्वारा लिखी गई वंदे मातरम के हास्य रूपांतरण का संदर्भ लिया जिन्होंने कि अपने नाटक में धर्मांतरण के विचार का मजाक उड़ाया था। फिर भी उन्होंने कहा कि वे अपने संकल्प के प्रति दृढ़ हैं। तुलनात्मक धर्म के अपने अध्ययन के आधार पर उन्होंने कहा कि केवल दो व्यक्तित्व ही उनको प्रभावित कर सके, वे थे बुद्ध और ईसा मसीह। उन्होंने आगे कहा कि वे एक ऐसा धर्म चाहते हैं जो लोगों को इस संबंध में निर्देशित करे कि उन्हें एक–दूसरे के साथ कैसा व्यवहार करना चाहिए साथ ही जो समानता, भ्रातृत्व और स्वतंत्रता के दृष्टिकोण से दूसरों तथा भगवान के प्रति व्यक्ति के कर्त्तव्यों का निर्धारण करे।

उन्होंने ईसाइयों को बताया कि दक्षिण भारत में उनके सहधर्मी गिरिजाघरों में जाति व्यवस्था को अभी भी मान रहे हैं। इसके अतिरिक्त, वे राजनीतिक रूप से पीछे रह गए हैं। यदि महार बच्चे ईसाई बन जाते हैं तो वे अपनी छात्रवृत्ति खो बैठते हैं। इस प्रकार उनके ईसाई बनने में कोई आर्थिक लाभ नहीं है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने कहा कि एक समुदाय के रूप में भारतीय ईसाइयों ने कभी भी सामाजिक अन्याय को दूर करने के लिए लड़ाई नहीं लड़ी है।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 299–300

40

अछूतों के उत्थान के लिए कार्य करें

मांग समुदाय सम्मेलन का चौथा सत्र 1 जनवरी, 1938 को शोलापुर में आयोजित किया गया।

सभा को संबोधित करते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा कि अछूतों के उत्थान का उनका कार्य केवल महारों तक सीमित नहीं है बल्कि यह सभी दलित वर्गों के लिए है। उन्होंने उनके लिए छात्रावास खोले हैं और मांगों और चम्मारों के लिए सरकारी विभाग में पद प्राप्त किए हैं। लगभग 2,500 व्यक्ति इस सभा में उपस्थित थे।[1]

● ● ●

[1] बांबे सीक्रेट एब्सट्रेक्ट, 8 जनवरी, 1938

41

लोकतंत्र में ऐसे सभी लोगों को सम्मान के साथ सुना जाना चाहिए जो सुनने लायक हैं

पंढरपुर से डॉ. बी. आर. अम्बेडकर मातंग सम्मेलन को संबोधित करने के लिए शोलापुर गए। उनके वहां पहुंचने पर भगवत चित्रा मंदिर में 4 जनवरी, 1938 को प्रातःकाल शोलापुर नगरपालिका द्वारा उनका नागरिक अभिनंदन किया गया। नागरिक अभिनंदन राव बहादुर डॉ. वी. वी. मुले द्वारा पढ़ा और प्रस्तुत किया गया जिन्होंने नगरपालिका के अध्यक्ष के रूप में शोलापुर में अछूतों के हितों के संबंध में सहायता की थी। जवाब में डॉ. अम्बेडकर ने एक बहुत महत्वपूर्ण भाषण दिया जिसमें उन्होंने संसदीय लोकतंत्र की कार्यप्रणाली पर अपने विचार व्यक्त किए।

उन्होंने कहा। :–

''इस देश में जो राजनीतिक स्थिति बनी है उसके चलते व्यक्तियों में केवल एक राजनीतिक पार्टी अर्थात कांग्रेस के प्रति श्रृद्धा रखने की आदत विकसित हो गई है।''

उन्होंने आगे कहा, ''मैं सभी प्रकार की स्थितियों और दावों के संबंध में लोकतंत्र को आदर्श व्यवस्था मानने वालों में नहीं हूं; और भारत की आज की स्थितियों को ध्यान में रखते हुए लोकतंत्र सरकार चलाने की सबसे अनुपयुक्त प्रणाली है। किसी भी कीमत पर, भले ही कुछ समय के लिए, भारत को किसी बौद्धिक तानाशाह के मजबूत हाथों की आवश्यकता है।''[1]

उन्होंने कहा, ''इस देश में लोकतंत्र है लेकिन यह एक ऐसा लोकतंत्र है जिसने अपनी बुद्धिमत्ता का उपयोग करना छोड़ दिया है। इसने अपने आपको केवल एक और एकमात्र संगठन से बांध रखा है। यह इस संगठन के कष्यों अथवा विचारों का निर्णय करने के लिए तैयार नहीं है। मैं इसे सबसे बड़ी दुर्भावना, एक रोग और एक बीमारी मानता हूं। इसने हमारे लोगों को प्रभावित किया है। वे नशे की हालत में हैं।'' उन्होंने आगे कहा ''दुर्भाग्य से भारतीय व्यक्ति ऐसे पारंपरिक व्यक्ति हैं जिनमें विश्वास अधिक है और बुद्धि कम। कोई भी व्यक्ति जो सामान्य से हटकर कुछ अलग करता है, कुछ ऐसा जो अन्य देशों में विचित्र और उसे करने वाले को पागल कहा जाता हो, उसे इस देश में महात्मा या योगी कहते हैं। और लोग उसका अनुसरण

उसी प्रकार से करते हैं जैसे कि भेड़ें, गड़रिए के पीछे चलती हैं....

''मुझे विश्वास है कि यदि ऐसा ही जारी रहा तो यह देश राजनीतिक प्रगति से कोई भी लाभ प्राप्त नहीं कर सकेगा जो इसने इस अधिनियम के अंतर्गत प्राप्त किया है। डॉ. अम्बेडकर ने जोर देते हुए कहा, ''लोकतंत्र को यह समझ लेना चाहिए कि इसकी सुरक्षा इसी बात में निहित है कि किसी विशेष समस्या के समाधान के संबंध में एक से अधिक मत हों, और लोगों को उनके विचारों के साथ सहायता प्रस्तुत करने के लिए तत्पर होने के वास्ते लोकतंत्र को ऐसे व्यक्तियों को सम्मानपूर्वक ढंग से सुनना सीख लेना चाहिए जो कि सुने जाने योग्य है।''[2]

भाषण को समाप्त करते हुए उन्होंने कहा, ''मुझे इस बात की खुशी है कि शोलापुर नगरपालिका ने मुझे, जो किसी ऐसे संगठन से संबंध नहीं रखता है जो देश में एकमात्र संगठन होने का दावा करता हो और जिसे सभी लोग वर्तमान में मान्यता देने के पक्ष में हों, नागरिक अभिनंदन प्रदान करके एक उदाहरण प्रस्तुत किया है।''[3]

● ● ●

---

*कीर और भारिल ने 4 जनवरी, 1938 के टाइम्स ऑफ इंडिया से इस भाषण के सार लिए हैं। कीर ने इस समारोह की तारीख 4 जनवरी, 1938 बताई है जबकि भारिल ने 1938 । पर 8 तथा 15 जनवरी और 5 फरवरी, 1938 के जनता और मांग समुदाय सम्मेलन की रिपोर्ट को पढ़ने में यह पता चलता है कि डॉ. अम्बेडकर उपरोक्त समारोह में 1 जनवरी, 1938 में उपस्थित हुए थे – संपादक।

[1] कीर, पृष्ठ 298–299 इन्होंने भी 4 जनवरी, 1938 के टाइम्स ऑफ इंडिया का संदर्भ लिया।

[2] टाइम्स ऑफ इंडिया, 4 जनवरी, 1938, पुनर्मुद्रित भारितल्ल पृष्ठ 190–191

[3] कीर, पृष्ठ 299

42

किसानों और कामगारों को अपनी गरीबी के कारणों से ऊपर विचार करना चाहिए

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने 10 जनवरी, 1938 को बंबई में काउंसिल हाल तक किसानों के एक जुलूस का नेतृत्व किया। थाना, कोलाबा, रत्नागिरी, सतारा और नासिक जैसे दूरदराज के जिलों से किसान ट्रेनों और स्टीमरों में बंबई आए। फटे कपडें पहने, कंधों पर कंबल और बंडलों, और हाथों में सामान के साथ वे अपने दुखों को आवाज देने के लिए बंबई आए। उनके धूप से जले हुए चेहरे एक विशेष प्रकार के उत्साह से चमक रहे थे। उन्होंने जुलूसों के रूप में तीन दिशाओं से काउंसिल हाल की ओर मार्च कियाः एक परेल की ओर से, दूसरे अलक्जांड्रा गोदी की ओर से और तीसरे चौपाटी की ओर से। पुलिस के घेरे में वे लोग निर्धारित मार्गों पर धीरे–धीरे चले। महत्वपूर्ण स्थानों पर पुलिस दल तैनात किए गए थे। प्रदर्शनकारियों के पास खोटती प्रणाली मुर्दाबाद, ''डॉ. अम्बेडकर के विधेयक का समर्थन करें'' जैसे नारे लिखे हुए पोस्टर थे। प्रदर्शनकारी दोपहर में 1.30 बजे विक्टोरिया टर्मिनस के पास स्पेलेनेड मैदान पहुंचे। वहां पर पुलिस अधिकारियों ने प्रदर्शनकारियों को रोक दिया और 20 नेताओं को मुख्यमंत्री जिन्हें तब प्रीमियर कहा जाना था, से बातचीत करने की अनुमति दी। डॉ. अम्बेडकर के नेतृत्व में पारूलेकर, एस. सी. जोशी, डी. डब्ल्यू. राउत, इंदुलाल यागनिक और ए. वी. चित्रे प्रीमियर से मिले।

प्रतिनिधियों द्वारा प्रस्तुत की गई पहली मांग कृषि मजदूरों के लिए मजदूरी के न्यूनतम मानक लागू करनी की थी। दूसरी मांग यह थी कि किराए के सभी बकाया माफ कर दिए जाएं क्योंकि राजस्व के बकाया भी माफ किए जा चुके हैं। उन्होंने आग्रह किया कि खोटती प्रणाली और इनामदार प्रणाली को मुआवजे के साथ अथवा बिना, समाप्त करने के लिए तत्काल कानून बनाया जाना चाहिए; और भू–स्वामीवाद जोकि आर्थिक रूप से फिजूलखर्ची है और सामाजिक रूप से निरंकुशता, उसे भी समाप्त होना चाहिए। अंतिम मांग छोटे जोतधारकों द्वारा भुगतान की जाने वाली सिंचाई दरों में 50 प्रतिशत की कमी करना था। प्रीमियर ने प्रतिनिधियों को यह बताया कि प्रत्येक समस्या पर मंत्रिमंडल अपने हिसाब से कार्य कर रहा है।

नेतागण एस्पेलेनेड मैदान लौटे और वहां उन्होंने एक विशाल सभा को

संबोधित किया। डॉ. अम्बेडकर ने एक बहुत जोरदार भाषण दिया। "उन्होंने कहा कि साम्यवाद पर उनके द्वारा पढ़ी गई पुस्तकों की संख्या सभी साम्यवादी नेताओं द्वारा कुल मिलाकर पढ़ी गई पुस्तकों की संख्या से कहीं ज्यादा है।' *लेकिन उनका यह विचार था कि साम्यवादी कभी भी प्रश्न के व्यावहारिक पक्ष की ओर ध्यान नहीं देते। उन्होंने टिप्पणी की कि दुनिया में केवल दो वर्ग हैं – वे जिनके पास कुछ है और वे जिनके पास कुछ नहीं है, धनी और गरीब, शोषक और शोषित। तीसरा वर्ग अर्थात मध्यम वर्ग बहुत छोटा है। इसलिए उन्होंने किसानों और कामगारों को उनकी गरीबी के कारणों के ऊपर विचार करने को कहा और उन्हें यह बताया कि वे शोषकों की अमीरी के नीचे दबे हुए हैं। उनके लिए एकमात्र रास्ता जातिपात का ध्यान रखे बिना एक सैनिक मोर्चा संगठित करना और विधायिका के लिए उनको चुनना है जो उनके वास्तविक प्रतिनिधि हैं। यदि वे ऐसा करते हैं तो उनके पास रहने को घर तथा वस्त्र होंगे और वे जो राष्ट्र के लिए भोजन और समृद्धि उत्पादित करते हैं, भूख से नहीं मरेंगे।"[1]

● ● ●

[1] जनता, 15 जनवरी, 1938

[2] कीर, पृष्ठ 300–301

43

दलित वर्गों के हितों की रक्षा करें

''बंबई विधानसभा में उनके चुनाव पर श्री प्रभाकर जनार्दन रोहाम, एमएलए को बधाई देने के लिए 15 जनवरी, 1938 को कामगार मैदान में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में अहमदनगर जिला दलित वर्ग सेवा संघ के तत्वावधान के अंतर्गत एक सार्वजनिक सभा का आयोजन किया गया। उक्त सभा में श्री रोहाम का स्वागत एक भाषण और 201 रुपए से किया गया। इस सभा में लगभग 500 व्यक्ति उपस्थित थे।

एकत्र लोगों को डॉ. अम्बेडकर, भाऊ साहब गायकवाड़ और शिंदे मास्टर ने मराठी में संबोधित किया।

उन्होंने कहा कि श्री रोहाम इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के टिकट पर विधानसभा के चुनाव में सफल हुए हैं जिसका कारण अहमदनगर जिले के दलित वर्गों का ठोस समर्थन है और अब उनसे दलित वर्गों के हितों की रक्षा करने की आशा की जाती है। अंत में उन्होंने बैठक में उपस्थित होने के लिए श्रोतागणों को धन्यवाद दिया।

यह बैठक लगभग रात 10.30 बजे शुरू हुई और शांतिपूर्वक लगभग रात 11.30 बजे समाप्त हुई।''[1]

● ● ●

[1] स्रोत सामग्री, खंड 1 पृष्ठ 163

44

ट्रेड यूनियनों को अपने हितों की रक्षा के लिए राजनीति में प्रवेश करना चाहिए

'ग्रेट इंडियन पेनिनसुला' (जीआईपी) रेलवे के 'अछूत' कामगारों का एक सम्मेलन 12 और 13 फरवरी, 1938 को मनमाड़ में हुआ। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने इस सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए अपनी सहमति दी और तदनुसार जीआईपी रेलवे की सभी शाखाओं के बीच एक सूचनापरक हैंडबिल परिचालित किया गया।

इस सम्मेलन की योजना छुआछूत की परिपाटी के कारण रेलवे में 'अछूत' कामगारों के साथ पेश आ रही समस्याओं पर चर्चा करने के लिए बनाई गई थी। साथ ही इस आशय की योजना भी बनाई गई थी कि इस तथ्य के बावजूद कि भारत में रेलवे सबसे संपन्न और मजबूत संगठन है, इन हरिजनों और उनके परिवारों की दयनीय स्थिति पर विचार किया जाए।

सम्मेलन को सफल बनाने के लिए मनमाड़, भुसावल, कल्याण, इगतपुरी, नंदगांव, दाउंद, शोलापुर, थाणे और मुंबई के कामगारों ने डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के साथ इस मुद्दे पर पूर्व में चर्चा कर ली थी। इस संबंध में दिल्ली, इलाहाबाद, लखनऊ, कानपुर, जबलपुर, रायपुर आदि की सकारात्मक प्रतिक्रिया रही।

इस सम्मेलन को अत्यंत सफल बनाने के लिए एक अपील की गई। श्री आर. आर. पवार जोकि 'अछूत' रेलवे कामगारों के बीच अत्यंत लोकप्रिय थे, इस सम्मेलन के महासचिव थे।

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर और श्री आर. आर. पवार, महासचिव 'दलित कामगार सम्मेलन' मनमाड़ के बीच के पत्राचार से ऐसा पता चलता है कि किन्हीं अपरिहार्य कारणों से डॉ. बी. आर. अम्बेडकर 29 और 30 जनवरी, 1938 को इस सम्मेलन में भाग नहीं ले सकते थे और इसकी बजाय उन्होंने इस सम्मेलन के लिए 12 और 13 फरवरी, 1938 (शनिवार और रविवार) की तारीखें सुझाईं। यह पत्राचार सम्मेलन के हैंडबिल में शामिल किया गया।

मनमाड़ रेलवे स्टेशन के निकट श्री इब्राहिम ताजभाई सेठ के खुले मैदान में सम्मेलन के लिए एक बड़ा पंडाल लगाया गया और उसे 'दलित–कामगार नगर' का नाम दिया गया।

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर उन दोनों दिन मनमाड़ में रुके। इस दौरान उन्होंने सताना और काजी संगावी का दौरा किया।

शनिवार 12 फरवरी को एक 'युवा सम्मेलन' का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता* डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने की। इस सम्मेलन में 'इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी' के भावी कार्यक्रमों और सभी क्षेत्रों में इनके जोरदार कार्यान्वयन पर विचार–विमर्श किया गया।

युवा सम्मेलन की भांति ही श्रीमती मैना बाई शामराव भोले, जो पुणे की एक कामगार थीं, की अध्यक्षता में रविवार 13 फरवरी को शाम को तीन बजे एक 'अछूत महिला सम्मेलन' का आयोजन किया गया। इस सम्मेलन की स्वागत समिति की अध्यक्षा के रूप में श्रीमती वेनु बाई रविकांत जादव का चुनाव किया गया। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने इन महिलाओं को आंदोलन के बारे में संबोधित किया तथा उनका मार्गदर्शन किया।

इन दोनों दिनों के दौरान विभिन्न मनोरंजन कार्यक्रम आयोजित किए गए। इस सम्मेलन के लिए चालीस गांव से एक बैंड विशेष रूप से बुलाया गया। पंडाल में लाउडस्पीकर लगाए गए। सम्मेलन को अत्यधिक सफल बनाने के लिए श्री आर. आर. पवार, श्री. बंकर, श्री आहिरे, श्री खरे, श्री संसारे, श्री पाटिल, श्री सारोदे, श्री मोरे, श्री पगारे, श्री तेलुरे आदि ने अत्यधिक मेहनत की।

इस मौके पर 'जनता' साप्ताहिक और 'इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी' के लिए सम्मेलन परिसर में अलग–अलग कार्यालय स्थापित किए गए, जिससे कि इन आंदोलनों से संबंधित जानकारी के साथ–साथ 'जनता' के लिए वार्षिक चंदा तथा 'इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी' का सदस्यता शुल्क इकट्ठा किया जा सके।

सम्मेलन

12 और 13 फरवरी, 1938 को यह सम्मेलन सफलतापूर्वक आयोजित किया गया। 'दलित कामगार नगर' की अच्छी सजावट की गई। लगभग बीस हजार

---

*युवा सम्मेलन में दिया गया भाषण पृष्ठ 193 पर उपलब्ध है – संपादक

प्रतिनिधियों के बैठने की व्यवस्था की गई। अध्यक्ष तथा अन्य कार्यकर्ताओं के लिए एक अलग मंच तैयार किया गया। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के फूलों से सजे एक विशाल चित्र के साथ विभिन्न कामगारों के फोटो लिए गए। महिलाओं, स्वागत समिति की सदस्यों और विशेष आमंत्रितों के लिए विशेष इंतजाम किए गए। शनिवार की शाम को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर का 'दलित कामगार नगर' में स्वागत किया गया और इस अवसर पर जब तक उन्होंने मंच पर स्थान ग्रहण नहीं कर लिया बैंड पर 'लांगलिव डॉ. बाबा साहेब अंबेडकर' 'वर्कर्स विक्ट्री' आदि नारे लगाए गए।

शुरू में कुछ युवकों और युवतियों ने कुछ गीत गाए। इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए श्री शंकरराव साल्वे ने बहुत मेहनत की। श्री पी. एन. बंकर ने अपना स्वागत भाषण पढ़ा। श्री रामचंद्र पवार ने प्रतिनिधियों और आमंत्रितों का स्वागत किया। इस अवसर पर उन्होंने महाड के सूबेदार विश्राम गंगाराम सवादकर और भाई अनंतराव चित्रे द्वारा विशेष रूप से भेजे गए विभिन्न संदेश पढ़े।

शनिवार 12 फरवरी, 1938 को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को इस सम्मेलन का अध्यक्ष चुना गया। अध्यक्ष के रूप में उनके चुनाव का श्रोताओं ने जोरदार तालियां बजाकर स्वागत किया। अध्यक्ष का स्थान ग्रहण करने और माल्यार्पण के बाद डॉ. अम्बेडकर ने एक आरंभिक भाषण दिया।

दूसरे दिन अर्थात रविवार 13 फरवरी, 1938 को किंचित देरी के साथ सम्मेलन का नियमित कार्य शुरू किया गया। 'दलित कामगार नगर' में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर का भाषण सुनने के लिए सूर्य की अत्यधिक गर्मी के बावजूद बहुत सारी भीड़ इकट्ठा हुई थी। श्रोताओं द्वारा जबरदस्त तालियों के बीच वे अपना भाषण देने के लिए खड़े हुए।[1]

अपने भाषण में डॉ. अंबेडकर ने कहा,

'मित्रों! यह ऐसे दलित वर्गों का सम्मेलन है जो जीआईपी* रेलवे में रेल कर्मचारी के रूप में काम कर रहे हैं। इससे पूर्व दलित वर्ग इस प्रांत में और साथ ही भारत के अन्य प्रांतों में आयोजित अनेक सम्मेलनों में और अनेक अवसरों पर मिले हैं। एक दृष्टि से यह पहला सम्मेलन नहीं है। लेकिन दूसरी दृष्टि से यह अपने किस्म का पहला सम्मेलन है। दलित वर्गों ने अभी तक मुख्यतः सामाजिक शिकायतों के निवारण के लिए विरोध प्रकट किया है। उन्होंने अपनी आर्थिक शिकायतों के

---

[1] जनता, 8 मई, 25 दिसंबर, 1937 और 22 जनवरी, 5 फरवरी, 1938

* ग्रेट इंडियन पेनिनसुला रेलवे

निवारण के लिए कोई शुरूआत नहीं की है। यह पहला मौका है जब वे अपनी आर्थिक शिकायतों पर विचार करने के लिए मिल रहे हैं। अभी तक वे केवल परियाह के रूप में मिलते थे। आज आप लोग कामगारों के रूप में मिल रहे हैं। मैं यह कहने के लिए तैयार नहीं हूं कि अपनी सामाजिक शिकायतों पर बल देने के हमारे प्रयासों पर ध्यान केन्द्रित करना गलत रहा है। और लोग कुछ भी कहें हमारी शिकायतें मौजूद हैं जिनके भार के कारण स्वयं हमारा पुरुषत्व ही पिस गया है। हम यह भी नहीं कह सकते कि हमारे विरोध का कोई फल प्राप्त नहीं हुआ। यह सच है कि हम छुआछूत को दूर करने में सफल नहीं हो सके। यह सच है कि हम कुछ अत्यधिक बुनियादी अधिकारों को जिसके लिए सभी व्यक्ति हकदार हैं, दिलाने में सफल नहीं हो सके। लेकिन यह भी सच है कि हमारा आन्दोलन इन अर्थों में सफल रहा है कि हमें अपनी राजनीतिक शक्ति प्राप्त हुई है। जिसके पास शक्ति है उसके पास स्वतंत्रता है, यह एक ऐसा अभिमत है जिसका कोई भी खंडन नहीं कर सकता। शक्ति एकमात्र ऐसा साधन है जिसके माध्यम से व्यक्ति स्वतंत्रता प्राप्त कर सकता है और सभी अवरोधों से मुक्ति पा सकता है और राजनैतिक शक्ति में एक ऐसी क्षमता मौजूद है जो, यदि धार्मिक अथवा आर्थिक शक्ति जितनी बड़ी नहीं है फिर भी काफी वास्तविक और कारगर है। खेद है कि दलित वर्गों को इस नए संविधान के अधीन जो राजनैतिक शक्ति प्राप्त हुई है वह हमारे शत्रुओं के तंत्रों तथा स्वयं हमारे लोगों के बीच लालची और लंपट व्यक्तियों की स्वार्थपरकता के कारण गंवा दी गई है। जिस शक्ति के पीछे कोई संगठन नहीं होता, जिस शक्ति के पीछे कोई चेतना नहीं होती, वह कोई शक्ति नहीं होती। मैं उम्मीद करता हूं कि एक दिन जो बहुत दूर नहीं है दलित वर्ग संगठित हो जाएंगे, उन्हें जो शक्ति प्राप्त हुई उसके बारे में जागरूक हो जाएंगे और वे उसे अपना सामाजिक उत्थान प्राप्त करने के लिए समझदारी से और प्रभावी रूप से प्रयोग करना शुरू कर देंगे।

हालांकि मैं यह कहने को तैयार नहीं हूं कि हमारे प्रयास गलत दिशा में रहे हैं, किंतु मैं यह स्वीकार करता हूं कि हमने जो आर्थिक समस्याएं हमारे सामने पेश आती हैं, बहुत लंबे समय से उन पर उतना महत्व नहीं दिया है जितना कि हम अपनी सामाजिक समस्याओं पर देते रहे हैं और इसलिए मैं इस बात से खुश हूं कि आज हम हरिजनों की तरह नहीं बल्कि कामगारों की तरह मिल रहे हैं। यह एक नया रास्ता है और मैं उन लोगों को बधाई देता हूं जिन्होंने उन पर चर्चा करने के लिए यह मौका उपलब्ध कराया है।

तथापि, ऐसे कुछ लोग हैं जिन्होंने इन प्रयासों में एक अशुभ लक्ष्य पाया

है और इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए मेरी आलोचना की है। मैं इस तरह की आलोचना की बिल्कुल परवाह नहीं करता, यदि ये आलोचना श्रमिक नेताओं की तरफ से नहीं होती। उनकी शिकायत का मुख्य मुद्दा यह प्रतीत होता है कि दलित वर्ग के कामगारों का यह सम्मेलन आयोजित करके हम मजदूरों के बीच फूट डाल रहे हैं।

मेरे विचार से हमारे देश में कामगारों को दो शत्रुओं से निपटना पड़ता है। ये दो शत्रु हैं ब्राह्मणवाद तथा पूंजीवाद। हमारे आलोचकों की आपत्ति अंशतः इस कारण उठती है कि ये आलोचक ब्राह्मणवाद को एक ऐसे शत्रु के रूप में न मानने की भूल करते हैं जिसके साथ कामगारों को निपटना पड़ता है। जब मैं यह कहता हूं कि ब्राह्मणवाद एक ऐसा शत्रु है जिसके साथ निपटना जरूरी है तो मैं चाहता हूं कि मेरी बात को गलत न समझा जाए। ब्राह्मणवाद से मेरा आशय एक समुदाय के रूप में ब्राह्मणों की शक्ति, विशेषाधिकारों और हितों से नहीं है। मैं इस शब्द का प्रयोग इन अर्थों में नहीं कर रहा हूं। ब्राह्मणवाद से मेरा आशय स्वतंत्रता, समानता और मित्रता की भावना को नकारने से है। इन अर्थों में इस तरह की भावनाएं सभी वर्गों में है और वे केवल ब्राह्मणों तक सीमित नहीं है, हालांकि उनका मूल स्रोत ब्राह्मण ही हैं। यह ब्राह्मणवाद जोकि सर्वत्र फैला हुआ है और जो सभी वर्गों के विचारों और कृत्यों को विनियमित करता है, एक अकाट्य तथ्य है। साथ ही यह भी एक अकाट्य सच्चाई है कि यह ब्राह्मणवाद कुछेक वर्गों को विशेषाधिकारपूर्ण स्थिति प्रदान करता है। यह ब्राह्मणवाद कतिपय अन्य वर्गों को समानता के अवसर से भी वंचित करता है। ब्राह्मणवाद के प्रभाव केवल सामाजिक अधिकारों, जैसे सामूहिक भोज तथा अंतर्जातीय विवाह तक सीमित नहीं हैं। यदि ऐसा होता तो किसी को बुरा नहीं लगता। लेकिन ऐसा नहीं है। यह सामाजिक अधिकारों से हटकर नागरिक अधिकारों तक फैला हुआ है। पब्लिक स्कूलों, सार्वजनिक कूपों, सार्वजनिक वाहनों तथा सार्वजनिक रेस्तरां का प्रयोग नागरिक अधिकारों का मामला है। ऐसी प्रत्येक वस्तु जो सार्वजनिक प्रयोग के लिए है अथवा जिसका रखरखाव सरकारी निधि में से किया जाता है, प्रत्येक नागरिक के लिए उपलब्ध होनी चाहिए। लेकिन आज लाखों ऐसे लोग हैं जिन्हें इन नागरिक अधिकारों से वंचित रखा गया है। क्या इस संबंध में कोई संदेह कर सकता है कि यह सब ब्राह्मणवाद का प्रभाव है जिसे हजारों वर्षों से देश के भीतर खुला छोड़ दिया गया है और जो आज भी बिजली के तार की तरह काम कर रहा है? ब्राह्मणवाद इतना सर्वव्यापी है कि वह आर्थिक अवसरों के क्षेत्र तक को प्रभावित कर सकता है। दलित वर्ग के कामगार को लीजिए और उसके अवसरों की तुलना एक ऐसे कामगार के साथ कीजिए जो दलित वर्गों का नहीं है। रोजगार प्राप्त करने के लिए उसके पास कौन से अवसर हैं? नौकरी की

सुरक्षा अथवा उसमें पदोन्नति पाने के लिए उसके पास कौन सी संभावना है। यह एक अभिशाप है कि दलित वर्ग का कामगार इस कारण कई उप–व्यवसायों से वंचित है क्योंकि वह एक अछूत है। कपास उद्योग इसका एक अभिशप्त उदाहरण है। मैं यह नहीं जानता कि भारत के अन्य भागों में क्या होता है। लेकिन मैं यह जानता हूं कि बंबई प्रेसीडेंसी में दलित वर्गों के लिए बंबई और अहमदाबाद––दोनों जगह कपास मिलों में बुनाई विभाग वर्जित है। वे केवल कताई विभाग में काम कर सकते हैं। कताई विभाग एक ऐसा विभाग है जिसमें सबसे कम पगार मिलती है। बुनाई विभाग से उन्हें वर्जित रखे जाने का कारण यह है कि वे अछूत हैं और इस कारण सवर्ण हिंदू कामगार उनके साथ काम करने में आपत्ति उठाते हैं, हालांकि उन्हें मुसलमानों के साथ काम करने में कोई परहेज नहीं होता।

रेलवे का उदाहरण लीजिए। रेलवे में दलित वर्ग के कामगार की क्या स्थिति है। इस बात से कोई इंकार नहीं कर सकता कि उसका भाग्य एक गैंगमैन के रूप में काम करने तक है। हर रोज, सारे जीवन भर वह एक गैंगमैन के रूप में कार्य करता है जिसमें उन्नति की कोई संभावना नहीं होती। उच्चतर श्रेणी का कोई ऐसा पद नहीं होता जिस पर वह जा सके। बहुत ही विरल मामलों में ही उसे पोर्टर (कुली) के रूप में रखा जाता है। यह इस कारण है क्योंकि एक पोर्टर के रूप में भी उसे स्टेशन मास्टर के परिवार में अपने नियमित कर्तव्यों के एक अंग के रूप में घरेलू नौकर की तरह काम करना होता है। एक दलित वर्ग का कामगार स्टेशन मास्टर के लिए, जो आमतौर पर उच्च जाति का हिंदू होता है, अनुपयोगी रहता है क्योंकि वह, यदि पार्टर अछूत हो तो, अपने घरेलू कामकाज के लिए पोर्टर की सेवाओं का लाभ नहीं उठा सकता। इसलिए वह आमतौर पर पोर्टर के रूप में किसी दलित वर्ग के व्यक्ति को नियुक्त करने से कतराता है। रेलवे में क्लर्कों की नियुक्ति के लिए कोई अर्हक परीक्षा नहीं है और इन पदों पर अक्सर गैर–मैट्रिक लोगों की नियुक्ति कर ली जाती है। रेलवे में भारतीय ईसाइयों, एंग्लो इंडियनों और सवर्ण हिंदुओं में से सैकड़ों गैर–मैट्रिक क्लर्कों के रूप में भर्ती किए जाते हैं। लेकिन दलित वर्ग के जो लड़के गैर–मैट्रिक होते हैं और जिनकी संख्या सैकड़ों में होती है, उन्हें इरादतन वंचित रखा जाता है और शायद ही कभी किसी को मौका मिलता हो। रेलवे वर्कशाप में भी यही स्थिति है। बहुत ही विरल मामलों में दलित वर्ग के किसी व्यक्ति को मैकेनिक क्लास के रूप में रोजगार पर रखा जाता है। शायद ही कोई ऐसा दलित व्यक्ति होता हो जिसे मिस्त्री का पद धारण करने का मौका मिलता हो। उसे वर्कशाप में फोरमैन और यहां तक कि चार्जमैन भी कभी बनने नहीं दिया जाता। वह केवल कुली होता है और कुली बना रहता है। रेलवे में दलित वर्ग के

कामगारों की स्थिति ऐसी ही है।

जिन उपव्यवसायों में उसे काम करने का मौका लगता है, उनमें उसे सबसे निचले ग्रेड पर रखा जाता है। उसे शक्ति अथवा अधिकारों के किसी भी पद से वंचित रखा जाता है। केवल यही नहीं कि उसे सबसे निचले ग्रेड पर रखा जाता है बल्कि उसके सेवानिवृत्त होने तक वह उसी ग्रेड में बना रहता है। उसके लिए प्रोन्नति का कोई मौका नहीं होता। उसके लिए कोई जीवनवृत्ति नहीं होती और अक्सर पदोन्नति का कोई मौका नहीं होता। उसके साथ ऐसा तब होता है जब कोई मंदी की स्थिति नहीं होती। मंदी के दौरान सबसे पहले उसे नौकरी से निकाला जाता है और गरमबाजारी के दौरान उसे सबसे आखिर में नौकरी पर रखा जाता है।

जिन आलोचकों ने मुझ पर और आप पर अहितकारी मंशा का दोष लगाया है मैं उनसे दो प्रश्न पूछना चाहूंगा। ये दो बहुत सीधे से प्रश्न हैं——क्या ये वास्तविक शिकायतें नहीं हैं? दूसरे, यदि ये वास्तविक शिकायतें हैं तो क्या जो लोग इनसे पीड़ित हैं उन्हें इन शिकायतों के निवारण के लिए एकजुट नहीं होना चाहिए? यदि इन दोनों प्रश्नों का उत्तर हां में है तो मैं यह नहीं समझता कि कोई भी ईमानदार आदमी कोई और उत्तर कैसे दे सकता है? इसका अर्थ हुआ कि हमारी कोशिश सर्वथा उचित है। जो श्रमिक नेता हमारे ऊपर दोषारोपण कर रहे हैं, वे निश्चय ही किसी भ्रांति की जकड़ में है। उन्होंने कार्ल मार्क्स में यह पढ़ा है कि केवल दो वर्ग हो सकते हैं, मालिक और कामगार तथा मार्क्स को पढ़ लेने के बाद वे सीधे यह मानकर चलते हैं कि भारत में केवल मालिक और कामगार हैं और इसके बाद वे पूंजीवाद को ध्वस्त करने के अपने मिशन में चल पड़ते हैं। इस संबंध में निश्चय ही दो गलतियां हैं। पहली गलती उस वास्तविक सोचने में है जोकि मात्र संभव या आदर्श है। मार्क्स ने एक सिद्धांत के रूप में यह कभी नहीं कहा कि किसी भी समाज में स्पष्टतः दो वर्ग अर्थात मालिक और कामगार हैं। सच तो यह है कि इस तरह का कथन गलत है और इसलिए इसे ऐसी बुनियाद के रूप में मान लेना खतरनाक है जिसके ऊपर कोई सक्रिय प्रचार किया जा सकता है जिसमें सफलता प्राप्त हो सके। यह मानना भी उतना ही गलत होगा कि कोई आर्थिक व्यक्ति अथवा विवेकपूर्ण व्यक्ति अथवा जिम्मेदार व्यक्ति एक ऐसी सच्चाई है जो सभी वर्गों में मौजूद है। जब कभी अर्थशास्त्री आर्थिक व्यक्ति को एक बुनियादी तथ्य के रूप में रखता है तो वह सदैव सचेत रहने की बात कहता है——कि आर्थिक व्यक्ति केवल तभी मौजूद है जबकि अन्य बातें समान हैं। श्रमिक नेता अन्य बातें बराबर होने को भूल गए हैं। यह मानना गलत होगा कि यहां तक यूरोप में, मार्क्स ने जो कहा वह सच है। 'क्या जर्मनी में कोई व्यक्ति गरीब और उत्पीड़ित है? क्या फ्रांस में कोई लुटा हुआ

तथा बर्बाद दस्तकार हैं? वहां वे एक ही जाति, एक ही देश, एक ही प्रजाति, एक ही अतीत, एक ही वर्तमान और एक ही भविष्य के साथ जुड़े हुए हैं। उन्हें संगठित होने दें'। यह एक ऐसा उद्देश्य है जिसे मार्क्स के समय से बराबर दिया जाता रहा है। क्या जर्मनी के गरीब और उत्पीड़ित व्यक्ति फ्रांस के लुटे हुए और बर्बाद दस्तकार के साथ संगठित हुआ है? 100 वर्षों के बाद भी उन्हें संगठित होना नहीं आया और अपनी अंतिम लड़ाई में वे मुक्त प्रतिबद्ध और निष्ठुर विरोधियों की तरह लड़े थे। भारत के मामले में इस तरह की बात निश्चय ही दोषपूर्ण होगी। भारत में एक सुस्पष्ट विभाजन मौजूद नहीं है। यह कि सभी मजदूर एक हैं, एक ही वर्ग का हिस्सा हैं एक ऐसा आदर्श है जिसे प्राप्त किया जाना है और इसे सच मानना सबसे बड़ी गलती है। मजदूरों की श्रेणियों को हम कैसे समेकित कर सकते हैं? मजदूरों के बीच हम एकता कैसे ला सकते हैं? हम यह काम मजदूरों के एक वर्ग को मजदूरों के दूसरे वर्ग को दबाने की अनुमति देकर नहीं कर सकते। यह काम हम उत्पीड़ित वर्ग को संगठित होने से रोककर नहीं कर सकते। हम यह काम मजदूरों के उस क्षुद्र वर्ग को, उसके साथ हो रहे अन्याय के विरुद्ध संघर्ष करने से रोक कर नहीं कर सकते। एकता लाने का वास्तविक तरीका यह है कि उन कारणों का उन्मूलन किया जाए जो एक कामगार को जाति और धर्म के आधार पर दूसरे कामगार का विरोधी बनाते हैं। एकता लाने का असली तरीका यह है कि कामगार को यह बताया जाए कि जो अधिकार वह दूसरे कामगारों को देने को तैयार नहीं हैं उन अधिकारों का दावा करना उसके लिए गलत है। एकता लाने का असली तरीका यह है कि जो कामगार इस तरह का भेदभाव करता है जिस कारण अनावश्यक भेदभाव पनपता है वह सिद्धांत रूप में गलत है तथा कामगारों की एकता के लिए भयावह है। दूसरे शब्दों में यदि हम श्रमिकों की श्रेणियों को संगठित करना चाहते हैं तो हमें कामगारों के बीच ब्राह्मणवाद को–असमानता की इस भावना का उन्मूलन करना है लेकिन ऐसा मजदूर नेता कौन है जिसने कामगारों के बीच इस दिशा में काम किया हो? मैंने मजदूर नेताओं को पूंजीवाद के विरुद्ध भड़काऊ तरीके से बोलते हुए सुना है। लेकिन मैंने किसी भी मजदूर नेता को कामगारों के बीच ब्राह्मणवाद के विरुद्ध बोलते हुए नहीं सुना। दूसरे शब्दों में इस मामले में उनकी चुप्पी सर्वथा सुस्पष्ट है। क्या उनकी यह चुप्पी इस विश्वास पर आधारित है कि कामगारों के संगठन और एकता के साथ ब्राह्मणवाद का कोई लेना–देना नहीं है, वे इस तथ्य को स्वीकार नहीं करते कि श्रमिकों के बीच विघटन के बीच ब्राह्मणवाद का बहुत गहरा संबंध है अथवा क्या यह मात्र अवसरवाद है जो श्रमिकों का नेतृत्व प्राप्त करने और ऐसी कोई बात न कहने में विश्वास रखता हो, जो कामगारों की भावना को ठेस पहुंचाती हो। मैं इस बात का पता लगाने के लिए रुकना नहीं चाहूंगा। लेकिन मैं यह अवश्य कहूंगा कि यदि श्रमिकों के संगठन के पीछे ब्राह्मणवाद को मूल कारण माना जाता

है तो कामगारों के बीच से इसके उन्मूलन की दिशा में गंभीर प्रयास किए जाने चाहिए। मात्र अनदेखी करके अथवा चुप्पी साधकार इस संक्रमण से मुक्ति मिलने वाली नहीं है। यह जरूरी है कि इसका पीछा किया जाए, इसको उखाड़ फेंका जाए और इसका उन्मूलन किया जाए। केवल ऐसा होने के बाद ही कामगारों के बीच एकता बनी रह सकती है।

जब तक ब्राह्मणवाद एक जीवित शक्ति के रूप में बना रहेगा और जब तक लोग इस कारण इससे चिपके रहेंगे कि यह एक वर्ग को विशेषाधिकार देता है और दूसरे के लिए बाधाएं प्रस्तुत करता है, मैं समझता हूं कि तब तक उन लोगों के लिए जो इन बाधाओं में जकड़े हुए हैं, अपने आपको संगठित करने की जरूरत रहेगी। यदि वे आपस में संगठित होते हैं तो क्या नुकसान है? मैं शिकायत की गंभीरता स्वीकार करता यदि इस तरह के संगठन का निर्माण नियोक्ताओं द्वारा किया गया होता। यह उस स्थिति में सिद्ध किया जा सकता था कि हम नियोक्ताओं के साधन हैं, कि हम उनके हाथों में खेल रहे हैं, कि हम श्रमिकों के बीच फूट डालने के विशिष्ट प्रयोजन से अलग से संगठित हो रहे हैं तो उस स्थिति में इस सम्मेलन को निंदित करने का पर्याप्त औचित्य होता। निश्चय ही इस तरह के आचरण को धोखेबाजी कहा जा सकता था। लेकिन क्या कोई व्यक्ति यह कह सकता है कि हमारी यह कार्रवाई नियोक्ताओं का काम है और यह कि हम यहां नियोक्ताओं की मदद करने और मजदूरों को नष्ट करने के लिए आए हैं? मैं अपने आलोचकों को ऐसा करने के लिए चुनौती देता हूं।

इसलिए यह सम्मेलन आयोजित करने के लिए किसी तरह की शर्मसारी अथवा कोई माफी मांगने की जरूरत नहीं है। सम्मेलन आयोजित करने के कारण और उद्देश्य पर्याप्त रूप से इसका औचित्य सिद्ध करते हैं। दलित वर्गों में केवल एक अथवा दो व्यक्ति हैं जिन्होंने इस सम्मेलन को नामंजूर किया है। यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है। इनमें से कुछ दूसरों के साधन और किराए के टट्टू हैं, कुछ भ्रमित हैं। दलित वर्ग अपने आपमें इतने कमजोर हैं और एकता शब्द में विशेष रूप से इतना आकर्षण है क्योंकि प्रभावी प्रचारकों के होठों से निकलकर आया हैं। अतः इस बात पर कोई आश्चर्य नहीं होता कि उनके साथ धोखा हुआ है लेकिन इस तरह के लोग यह भूल जाते हैं कि ऐसे पक्षकारों के बीच जिनकी भावनाएं और प्रवृत्तियां हर दृष्टि से एक–दूसरे के विरुद्ध हैं और जहां एक पक्ष ऐसे अधिकारों और हितों का दावा करता है जोकि दूसरों के हितों के प्रतिकूल है, पक्षकारों के बीच वास्तविक एकता कभी नहीं हो सकती। इस तरह के लोगों के बीच एकता कमजोर और उत्पीड़ित पक्ष के बीच धोखे से बढ़कर कुछ नहीं हो सकती। ऐसा हर निष्ठावान व्यक्ति जो इस तरह के

धोखे का परित्याग करता है, इन धोखेबाजों द्वारा इसी तरह निंदित है जैसेकि कोई व्यक्ति विभाजन के बीज बोता है। निश्चय ही विभाजन। हां यह विभाजन हो सकता है, लेकिन ऐसा विभाजन जिसमें एक वास्तविक अंतर और एक वास्तविक विरोध मौजूद हैं। यह विरोध मुख्यतः इसलिए पैदा होता है क्योंकि मजदूरों का एक वर्ग मजदूरों के दूसरे वर्ग अर्थात उत्पीड़ित वर्गों के विरुद्ध निहित अधिकारों का दावा करता है। कोई भी व्यक्ति भेदभाव पैदा नहीं करना चाहता। हमारा प्रयास इस भेदभाव को पहचानना और इस भेदभाव को हमारे प्रति अन्याय करने से रोक देना है।

इस बात का कोई सवाल नहीं है कि यदि आप अपनी शिकायतें दूर करना चाहते हैं तो आपको अवश्य ही संगठित होना चाहिए। अगला सवाल यह है कि आपके संगठन का क्या प्रयोजन है। इस संबंध में कोई शंका नहीं है कि आपको व्यापारिक प्रयोजनों के लिए संगठित होना है। सवाल यह है कि क्या आपको स्वयं अपना कोई अलग संघ बनाना चाहिए अथवा आपको किसी भी मौजूदा संघ के साथ जुड़ जाना चाहिए। इससे पहले कि आप अपनी कार्ययोजना के बारे में कोई निर्णय लें यह एक ऐसा सवाल है जिस पर आपको गंभीरता से विचार करना चाहिए।

भारत में ट्रेड यूनियनवाद एक खस्ता हालत में है। ट्रेड यूनियनों के मुख्य उद्देश्य की पूरी तरह अनदेखी की गई है। ट्रेड यूनियनवाद का मुख्य उद्देश्य है कामगार श्रेणी के जीवन स्तर को गिरने से बचाया जाए। यूरोप में एक सामान्य व्यक्ति में सुख सुविधाओं के सुस्थापित स्तर, जीवन की उस शैली से चिपके रहने की सुस्पष्ट प्रवृत्ति दिखाई देती है, जिसका वह अपने जन्म और प्रशिक्षण के कारण आदी हो गया है। इस तरह के स्तर में किसी भी गिरावट की दिशा में किसी भी प्रयास का वह पूरी दृढ़ता के साथ विरोध करेगा। यह एक अभिशाप है कि भारतीय कामगार में इस तरह का निश्चय नहीं दिखाई देता। वह केवल जीवित रहने की चिंता में पड़ा रहता है। उसके भीतर जीने की कोई इच्छा नहीं होती और जैसाकि मिल ने कहा है ''जहां लोगों में इस तरह की गिरावट के विरुद्ध एक दृढ़ निश्चयात्मक विरोध नहीं है, सुख सुविधाओं के एक सुस्थापित स्तर को बनाए रखने का निश्चय नहीं है – वहां, यहां तक कि, प्रगतिशील देश में भी सबसे गरीब तबके के हालात इतने निचले स्तर तक गिर जाते है जिसे वह सहन करना स्वीकार कर लेते हैं''। यदि कोई ऐसा देश है जहां ट्रेड यूनियनवाद एक वास्तविक जरूरत है तो मेरी राय में ऐसा देश भारत है। लेकिन जैसा मैंने कहा कि भारत में ट्रेड यूनियनवाद गतिहीन और बदबूदार तालाब बन गया है। यह सर्वथा इस कारण है कि ट्रेड यूनियनवाद के नेतागण या तो कायर हैं, स्वार्थी हैं अथवा भ्रमित हैं। कुछ ऐसे मजदूर नेता हैं जोकि आराम कुर्सी पर बैठने वाले दार्शनिक अथवा राजनीतिज्ञ हैं जिन्होंने अपना काम केवल कागजों पर वक्तव्य

जारी करने तक सीमित रखा हुआ है। कामगारों को संगठित करना, उन्हें शिक्षित करना तथा विरोध करने में उनकी सहायता करना ऐसे नेताओं की ड्यूटी का अंग नहीं है। वे केवल कामगारों का प्रतिनिधित्व करने और उनकी तरफ से आवाज उठाने तक प्रयासरत रहते हैं लेकिन उनसे कोई सीधा संपर्क बनाने से बचे रहते हैं। मजदूर नेताओं की एक दूसरी श्रेणी उनकी है जिनका एकमात्र प्रयोजन यूनियनों की स्थापना करना है ताकि उन्हें अपने लिए सचिव, अध्यक्ष अथवा चेयरमैन के रूप में पदासीन होने के लिए मौका मिल सके। अपने आपको उन स्थानों में बनाए रखने के उद्देश्य से वे अपनी यूनियनों को अलग और प्रतिद्वंदी सत्ताओं के रूप में रखते हैं। इस आशय की विस्मित करने वाली और शर्मनाक स्थिति देखने को मिलती है जबकि विभिन्न यूनियनों के बीच का संघर्ष कामगारों और मालिकों के बीच जो संघर्ष मौजूद हैं, यदि कोई हैं तो, उससे अधिक भयावह होता है और यह सब किसी अन्य प्रयोजन के लिए नहीं बल्कि कतिपय लोगों द्वारा यूनियनों पर कब्जा जमाने के लिए होता है जिनकी आकांक्षा अपने लिए एक नेता का स्थान ढूंढ़ने की होती है। मजदूर नेताओं का एक तीसरा वर्ग मुख्यतः साम्यवादियों का होता है। वे काफी सार्थक हो सकते हैं लेकिन मुझे यह कहने में संकोच नहीं है कि वे व्यक्तियों का एक भ्रमित निकाय है और मैं इसी क्रम में आगे यह भी कहना चाहूंगा कि कामगारों का जितना विनाश इन लोगों ने किया है उतना किसी और ने नहीं। यदि आज कामगारों की कमर पूरी तरह टूटी हुई है, यदि मालिकों का हाथ ऊपर बना हुआ है, यदि आज यूनियनवाद ईश्वर का शाप बना हुआ है तो यह मूलतः शक्तियों के दुरूपयोग का परिणाम है। साम्यवादियों ने एक समय ट्रेड यूनियनों पर यह शक्ति प्राप्त कर ली थी। उनका उद्देश्य कामगारों के बीच असंतोष पैदा करना है जैसे कि असंतोष की पहले कोई कमी थी। उनका यह मानना है कि कामगारों का असंतुष्ट निकाय एक क्रांति पैदा कर देगा तथा श्रमजीवियों का राज्य स्थापित हो जाएगा। इसलिए असंतोष पैदा करने के उद्देश्य से उन्होंने विघटन पैदा करने के लिए एक व्यवस्थित अभियान शुरू कर दिया। उन्होंने लोगों से जो हड़तालें कराईं इसके अलावा कोई अर्थ या अन्य परिणाम नहीं हो सकता कि उनकी ओर से यह विघटन पैदा करने की एक सोची–समझी कोशिश थी। एक सफल क्रांति के लिए यही काफी नहीं है कि असंतोष हो; इसके लिए राजनैतिक और सामाजिक अधिकार के औचित्य, जरूरत और महत्व को लेकर एक मजबूत और सुदृढ़ विश्वास की जरूरत है। यहां तक कि क्रांतिकारी मार्क्स भी उन हड़तालों की पूजा नहीं करेगा जैसा कि क्रांतिकारी श्रमिक संघवादियों द्वारा काफी पुराने समय में किया गया था। क्रांतिकारी मार्क्सवादियों द्वारा हड़ताल को कभी भी 'क्रांतिकारी प्रक्रिया' नहीं माना गया, बल्कि इसे एक ऐसा अत्यंत गंभीर उपाय समझा गया जिसका प्रयोग सभी प्रयासों के असफल प्रमाणित होने के बाद अंतिम हथियार के रूप में किया जाएगा। लेकिन साम्यवादियों

ने इस सबकी अनदेखी कर दी है और उन्होंने कामगारों के बीच असंतोष पैदा करने के लिए हड़तालों को एक दैवीय साधन मान लिया है। ऐसे साम्यवादी अधिक असंतोष पैदा कर सके हैं अथवा नहीं लेकिन उन्होंने निश्चय ही मूल ट्रेड यूनियन संगठनों जोकि उनकी शक्ति और ताकत का साधन होती थी, को नष्ट कर दिया है और अब वे वस्तुतः सड़कों पर आ गए हैं और सभी प्रकार के पूंजीवादी संगठनों का आश्रय ले रह हैं। इस तरह के बुद्धिहीन क्रियाकलाप से और किस बात की अपेक्षा की जा सकती थी। साम्यवादी इस तरह का आग लगाऊ व्यक्ति होता है जो एक व्यापक अग्निकांड उत्तेजित करने की अपनी इच्छा तो रखता है लेकिन स्वयं अपने मकान की रक्षा करने का कोई ध्यान नहीं रख पाता है।

फलतः अब ऐसी कोई यूनियन नहीं है जिनका कामगार आश्रय ले सकते हों। मैं उस रुग्णता की बात नहीं करने जा रहा जो बंबई के कपड़ा कामगारों के बीच बनी हुई है। इसके बारे में जितना कम कहा जाए उतना ही अच्छा है। लेकिन जीआईपी रेलवे कामगारों में मौजूदा स्थिति पर विचार किया जा सकता है। 1920 में जीआईपी रेलवे स्टाफ यूनियन संगठित की गई थी। 1922–24 के वर्षों के दौरान यह यूनियन निष्क्रिय थी। 1925 में इसे पुनर्जीवित किया गया। 1927 में जीआईपी रेलवेमेन यूनियन के नाम से एक नई प्रतिद्वंदी यूनियन स्थापित की गई। 1931 में रेलवे कामगार यूनियन के नाम से दोनों यूनियनें एक–दूसरे के साथ मिला दी गईं। 1932 में यह यूनियन विखंडित हो गई और रेलवे लेबर यूनियन के नाम से एक नई यूनियन स्थापित की गई। 1935 में पुरानी जीआईपी स्टाफ यूनियन पुनर्जीवित की गई और उसने एक नए निकाय के रूप में काम करना शुरू कर दिया। आज की तारीख में यह एक मान्यताप्राप्त यूनियन है और उन यूनियनों के बीच एक गहरा विरोध और प्रतिद्वंदिता है जोकि रेलवे कामगारों के हितों के लिए खुलकर प्रयास करती हैं। यह सारा विरोध श्रमिक नेताओं के बीच साम्यवादी और गैर–साम्यवादी समूहों के मध्य नेतृत्व की प्रतिद्वंद्विता का परिणाम है। इसी प्रकार की प्रतिद्वंद्विता ने केन्द्रीय संगठन में बिखराव पैदा किया है। आल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस के नाम से श्रमिकों का एक केन्द्रीय संगठन 1919 में स्थापित किया गया था। सभी यूनियनों को 1929 तक इस कांग्रेस में शामिल कर दिया गया। 1929 में नागपुर में एक बिखराव आया और जिन यूनियनों ने साम्यवादी वर्ग का नेतृत्व स्वीकार नहीं किया था वे अलग हो गईं और उन्होंने नेशनल ट्रेड यूनियन फेडरेशन के नाम से एक अलग निकाय की स्थापना की। इन दो निकायों के बीच एक गहरे विरोध की स्थिति बनी हुई है। 1931 और 1932 में इन दो प्रतिद्वंदी निकायों के बीच एकता लाने की दिशा में कोशिश की गई, लेकिन ये कोशिशें असफल रहीं। इसी से मिलता–जुलता प्रयास अभी विचाराधीन है। इस सबसे कितना भला होगा, इसके बारे में मैं कुछ नहीं कह सकता। ऐसी परिस्थितियों

में मेरे लिए आपको कोई राय देना कठिन है। यदि आप कोई अलग यूनियन बनाते हैं तो इसमें कोई बुराई नहीं है बशर्ते कि आपके पास यूनियन को चलाने के लिए लोग मौजूद हों। यह एक बहुत बड़ी शर्त है। यदि कोई यूनियन आगे बढ़ना चाहती है तो उसे काम करना होगा और कोई भी यूनियन तब तक काम नहीं कर सकती जब तक कि वह प्रभावी कार्मिकों की सेवाएं उपलब्ध न कर सके। क्या आप ऐसे लोग जुटा सकते हैं जो यूनियन चला सकें? यदि हां तो आप स्वयं अपनी यूनियन स्थापित कर लीजिए। सच तो यह है कि यदि आप ऐसा करेंगे तो बेहतर होगा। एक अलग यूनियन स्थापित करने में कोई बुराई नहीं है क्योंकि अलग यूनियनों का परिणाम जरूरी नहीं है कि अलगाववाद अथवा कमजोरी में हो। आपकी अलग यूनियन सदैव श्रमिकों के किसी केन्द्रीय संगठन के साथ जो प्रयोजन की एकता और कार्य की एकता प्रदान कर सकता है के साथ संबद्ध की जा सकती है। यदि आप स्वयं अपनी एक अलग यूनियन का संगठन नहीं कर सकते तो आप मौजूदा यूनियनों में से किसी एक के साथ जुड़ सकते हैं। लेकिन आपको इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि यूनियन आपका प्रयोग अपने प्रयोजनों के लिए न करे। ऐसा होने का बड़ा खतरा मौजूद है। बंबई में ऐसा हुआ है जहां हड़तालें अनिवार्यतः बुनकरों के हितों में वापिस ले ली गई हैं और कताई करने वालों का प्रयोग बुनकरों के हितों का समर्थन करने के लिए किया गया है। इस स्थिति से बचने के लिए आपको दो शर्तों का अवश्य आग्रह करना चाहिए। पहली बात तो यह कि आपको यूनियन की कार्यकारी समिति में एक विशेष प्रतिनिधि के लिए आग्रह करना चाहिए, जिससे आपकी विशेष समस्याओं को यूनियन का ध्यान और समर्थन प्राप्त होगा। दूसरे आपको इस बात का आग्रह अवश्य करना चाहिए कि यूनियन में आपके अंशदान का कुछ हिस्सा यदि जरूरी हो तो आपकी शिकायतों का विरोध करने के लिए आबंटित कर दिया जाए। यदि आप स्वयं अपना कोई अलग यूनियन बनाने का निर्णय नहीं लेते तो ये ऐसी दो अनिवार्य शर्तें हैं, जिनके आधार पर आपको सभी कामगारों की सामान्य यूनियन के साथ जुड़ना चाहिए।

इस बात का कोई सवाल नहीं है कि आपको यूनियन की स्थापना व्यापारिक प्रयोजनों के लिए करनी है। लेकिन इतना ही काफी नहीं है। आपको राजनैतिक प्रयोजनों के लिए भी संगठित होना है। अनुभव यह बताता है कि ट्रेड यूनियनवाद अपने आपमें मालिकों के विरुद्ध लड़ाई में श्रमिकों की मदद नहीं कर सकता। ट्रेड यूनियनों को राजनीति में प्रवेश करना चाहिए या नहीं, यह एक ऐसा प्रश्न है जिसके बारे में दो अलग राय नहीं हो सकती।

ट्रेड यूनियनों को राजनीति में अवश्य प्रवेश करना चाहिए, क्योंकि राजनीतिक शक्ति के बिना वे शुद्ध रूप से ट्रेड यूनियन के हितों की रक्षा नहीं कर सकते।

यहां तक कि मानक दर, सामान्य दिवस, सामान्य नियम, न्यूनतम निर्वाह मजदूरी, सामूहिक सौदेबाजी जैसे सुधार प्राप्त करने के प्रयोजन के लिए भी। ये ऐसे प्रयोजन हैं जोकि केवल यूनियन संगठित करने से प्राप्त नहीं किए जा सकते। कानून की शक्ति द्वारा यूनियनों की शक्ति का सुदृढ़ीकरण किया जाना जरूरी है। यह तब तक नहीं हो सकता जब तक कि आप केवल यही नहीं कि अपने आपको यूनियनों के रूप में संगठित करें, बल्कि देश की राजनीति में भी अपनी भूमिका का निर्वाह करने की शुरूआत करें।

शुद्ध रूप से ट्रेड यूनियन के हितों की रक्षा करना मात्र इस बात का कारण नहीं हो सकता कि ट्रेड यूनियनों को राजनीति में क्यों प्रवेश करना चाहिए। अपना ध्यान ट्रेड यूनियनवाद की ओर बांधे रखने का अर्थ यह है, कि आप तात्कालिक कार्य को अंतिम लक्ष्य मानने की गलती कर रहे हैं। यह मानकर चलना पड़ेगा कि दूसरों के लिए दासता एक भाग्य है जिससे कि श्रमिक वर्ग अपना बचाव नहीं कर सकते। इसके विपरीत आपका उद्देश्य मजदूरीजन्य दासता की इस प्रणाली की जगह एक ऐसी प्रणाली स्थापित करना होना चाहिए जो स्वतंत्रता, समानता और मित्रता के सिद्धांतों को स्वीकार करे। इसका आशय यह हुआ कि समाज का इस तरह का पुनर्निर्माण करना श्रमिक वर्ग की एक प्रमुख चिंता है। लेकिन श्रमिक वर्ग इस आदर्श की पूर्ति कैसे कर सकता है? राजनैतिक शक्ति का प्रभावी प्रयोग निश्चय ही इस उद्देश्य की पूर्ति का एक सशक्त साधन है। उन्हें ऐसी राजनैतिक शक्ति क्यों नहीं प्राप्त करनी चाहिए, जो उनके पास है। ट्रेड यूनियनों द्वारा राजनीति के परित्याग का अर्थ यह नहीं है कि व्यक्तियों के रूप में कामगार राजनीति में रुचि नहीं लेंगे। इसके विपरीत उनमें से कई राजनैतिक बैठकों में भाग लेंगे, चुनाव के दौरान किसी एक अथवा अन्य उम्मीदवार को मत देंगे, जल्दी–जल्दी किसी एक अथवा दूसरे राजनैतिक दल का अंग बनेंगे। ट्रेड यूनियनों के लिए, 'कोई राजनीति नहीं' का अर्थ यह नहीं है कि कामगारों के लिए, जोकि यूनियन के सदस्य हैं 'कोई राजनीति नहीं' – यह आदर्श वाक्य केवल राजनीति के संगठित रूपों पर लागू होगा। ऐसी परिस्थिति में प्रत्येक अलग–अलग कामगार निजी रूप से राजनीति के साथ जितना चाहे उतना जुड़ सकता है। जिस तरह की राजनीति के साथ चाहे उसके साथ जुड़ सकता है, लेकिन जब वह अपने साथी कर्मचारियों के साथ संगठित होता है तो उसे संगठन में प्रवेश करते ही राजनीति का त्याग करना होता है। स्वभावतः राजनीतिक दृष्टि से अपने आपको इस तरह परिणत किए जाने के बाद, अपने वर्ग जोकि उसकी मूल शक्ति अर्थात संगठन का निर्माण करता है, के हितों के प्रयोग से इंकार करने से कामगार निश्चय ही पूंजीवादी दल की संगठित शक्ति का शिकार

बन जाएगा। जैसा कि आप शायद जानते होंगे कि दो प्रतिद्वंदी निकाय जो श्रमिकों के हित में बात करने के अधिकार का दावा करते हैं, यानी ट्रेड यूनियन कांग्रेस और ट्रेड यूनियन फेडरेशन ने अपने आपको एक निकाय के रूप में शामिल हो जाने का निर्णय लिया है। एकता लाने के लिए प्रत्येक ने आधा–आधा प्रयास किया है। ट्रेड यूनियन कांग्रेस ने ट्रेड यूनियन फेडरेशन का विधान अपना लिया है और ट्रेड यूनियन फेडरेशन अपना नाम त्यागने को सहमत हो गया है। मैं समझता हूं कि इस एकता की एक शर्त यह है कि यह संगठन शुद्ध रूप से एक ट्रेड यूनियन संगठन है। इसमें राजनीति का कोई दखल नहीं होगा। जब मैंने यह बात सुनी तो मुझे आश्चर्य हुआ कि क्या ये लोग वस्तुतः यह समझते हैं कि वह क्या कह रहे हैं। बड़े दुख की बात है कि कामगार अत्यधिक अन्याय सहन कर रहे हैं जो उन्हें मुख्यतः इसलिए भोगना पड़ रहा है कि उन्होंने इसके कारण का उन्मूलन करने की अपनी कमान का प्रयोग करने की अनदेखी कर दी है। मेरा आशय राजनैतिक शक्ति के प्रयोग से है। मैं यह नहीं समझ पा रहा हूं कि यह कैसी ट्रेड यूनियन एकता है यदि वह संयुक्त राजनैतिक कार्रवाई के लिए नहीं है। पदावली में इस आशय का कुछ अर्थ है जिसके अनुसार किसी ऐसे बिंदु पर मतभेद रखने को सहमति व्यक्त की गई है जिसके संबंध में मतभेद इतना कम अथवा नगण्य है कि इससे अन्य महत्वपूर्ण और प्रमुख बिंदुओं के बारे में सहमति पर कोई प्रतिकूल असर नहीं पड़ता। लेकिन ऐसी एकता का कोई अर्थ नहीं है जिसमें जिस बिंदु पर लोग मतभेद रखने को सहमत हों वह उतना बड़ा हो कि छोटे तथा मामूली बिंदुओं पर सहमति किसी भी रूप में किसी महत्व की न हो। दूसरे लोगों का विचार कुछ भी हो सकता है, पर मैं इतना अवश्य कहूंगा कि यदि संगठित श्रमिक वर्ग राजनीति से दूर रहने का निर्णय लेता है तो उनके श्रमिकों का भविष्य अंधकार में डूब गया है। किसी भी मूल्य पर हमें यह अवश्य महसूस करना चाहिए कि अभी तक के हमारे प्रयास सामाजिक सुधार के अकेले चैनल की तरफ निदेशित थे और यह कि हम यह बात भूल गए थे अथवा आंशिक रूप से ध्यान में रखे थे कि हमारे लिए अपने प्रयासों को आर्थिक सुधार के चैनल की तरफ निदेशित करने की जरूरत है। हमें यह अवश्य महसूस करना चाहिए कि ऐसी सभी बुराइयां जिन्हें हम झेलते हैं, उनका उद्‌गम एक ही है––अर्थात जो लोग हमारे ऊपर सामाजिक और आर्थिक प्रभुता बनाए रखते हैं, उन्होंने राजनैतिक शक्ति अपने हाथो में ले ली है जोकि वस्तुतः श्रमिक वर्गों की होनी चाहिए।

राजनीति में प्रवेश करने का अर्थ है एक दल का निर्माण करना। किसी दल के समर्थन के बिना राजनीति निरर्थक होती है। अनेक राजनीतिज्ञ ऐसे हैं जो स्वतंत्र रहना पसंद करते हैं, जो अपने अकेले हल को चलाते हैं। मैं सदैव ऐसे राजनीतिज्ञ

के बारे में सशंकित रहता हूं जो स्वतंत्र बनना चाहता है। यदि कोई राजनीतिज्ञ इतना स्वतंत्र है कि वह किसी के साथ भी नहीं जुड़ सकता, तो वह किसी भी व्यवहारिक प्रयोजन के लिए बेकार है। वह कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकता। उसका अकेला हल घास का एक तिनका भी पैदा नहीं कर सकता। लेकिन अनेक ऐसे राजनीतिज्ञ, जो स्वतंत्र बनना चाहते हैं वे स्वतंत्रता की इच्छा इसलिए नहीं करते कि उनकी बौद्धिक निष्ठा इस तरह की मांग करती है। उन्हें स्वतंत्रता इसलिए चाहिए कि वे यह चाहते हैं कि वे सबसे बड़े बोली लगाने वाले के लिए उपलब्ध रहें। यही कारण है कि वे दल के अनुशासन की पाबंदियों से मुक्त रहना चाहते हैं। किसी भी स्थिति में राजनीति में स्वतंत्रता का मार्ग अपनाने वाले अनेक राजनीतिज्ञों के संबंध में मेरा अनुभव यही रहा है। दल के बिना कोई भी राजनीति वास्तविक एवं प्रभावी नहीं हो सकती।

प्रश्न यह उठता है कि आपको कौन से दल के साथ जुड़ना चाहिए? आपके सामने अनेक विकल्प रहते हैं। कांग्रेस पार्टी है। क्या आपको कांग्रेस के साथ जुड़ना चाहिए? क्या इससे श्रमिकों के हितों की पूर्ति में मदद मिलेगी? मुझे यह कहने में कोई संकोच नहीं होता कि राजनीति में श्रमिक वर्ग को कांग्रेस से स्वतंत्र एक अलग संगठन प्राप्त होना चाहिए। मैं जानता हूं कि मजदूर नेताओं का एक वर्ग इसका विरोधी है। कांग्रेस समाजवादियों के प्रतिनिधियों का एक दल है जो यह चाहता है कि श्रमिक वर्ग अपने आपको समाजवाद की पूर्ति के लिए संगठित हो, लेकिन इस तरह का संगठन अनिवार्यतः कांग्रेस के भीतर होना चाहिए। एक अन्य वर्ग है जो श्री राय के प्रतिनिधित्व में अपने आपको साम्यवादी कहता है और जो कांग्रेस के भीतर या बाहर भारत में श्रमिक वर्ग द्वारा या किसी अन्य वर्ग द्वारा किसी एक स्वतंत्र संगठन के विरुद्ध है। मैं इनमें से किसी भी समूह के साथ पूरी तरह से असहमत हूं। श्री राय मेरी तरह कई लोगों के लिए एक पहेली होंगे। एक साम्यवादी और श्रमिकों के लिए एक स्वतंत्र राजनैतिक संगठन के विरोधी। उनकी बातों में कितना विरोध है? एक ऐसा दृष्टिकोण जो कब्र में लेटे हुए लेनिन को भी हिला देगा। इस तरह के विचित्र दृष्टिकोण के लिए जो एकमात्र युक्तियुक्त औचित्य प्रस्तुत किया जा सकता है, उसके अनुसार श्री राय साम्राज्यवाद के विनाश को भारतीय राजनीति का प्रथम और अंतिम उद्देश्य मानते हैं। श्री राय द्वारा जिस दृष्टिकोण का प्रचार किया जा रहा है उसका कोई भी अन्य अर्थ नहीं निकल सकता। यह दृष्टिकोण उस स्थिति में सही होता यदि यह प्रमाणित किया जा सकता कि साम्राज्यवाद की समाप्ति के साथ भारत से पूंजीवाद के सभी अवशेष लुप्त हो जाएंगे। लेकिन यह बात समझने में बहुत अधिक बुद्धि की जरूरत नहीं है कि यदि अंग्रेज लोग बाहर से चले जाते हैं तो

जमींदार, मिल मालिक, साहूकार भारत में बने रहेंगे और लोगों का खून चूसते रहेंगे और साम्राज्यवाद के समाप्त होने के बाद भी श्रमिक वर्ग को इन हितों के लिए पहले की भांति ही लड़ना होगा। यदि ऐसी बात है तो श्रमिक वर्ग को अपने आपको अभी से संगठित क्यों नहीं हो जाना चाहिए। उसे अपना संगठन विकसित होने का इंतजार क्यों करना चाहिए? मुझे इसका कोई उत्तर नहीं सूझता। कांग्रेस समाजवादी स्पष्टतः ऐसा महसूस करते हैं कि श्रमिक वर्ग को पूंजीवाद के विरुद्ध उतना ही लड़ना है जितना कि साम्राज्यवाद के विरुद्ध और इसलिए वे इस बात से सहमत हैं कि श्रमिक वर्ग को अवश्य ही संगठित होना चाहिए। लेकिन उन्होंने एक शर्त रखी है कि कोई भी श्रमिक संगठन कांग्रेस के भीतर होना चाहिए। कांग्रेस और श्रमिक वर्ग के बीच इस तरह के अनिवार्य गठबंधन के गुण अथवा जरूरत की बात मेरी समझ में नहीं आती। कांग्रेस समाजवादी का उद्देश्य समाजवाद लाना है, उनका कहना यही है। कांग्रेस की दक्षिणपंथी विंग को रूपांतरित करके वे किस तरह यह सब करने की आशा करते हैं। कांग्रेस से बाहर न जाने के लिए वे यही स्पष्टीकरण देते हैं। मानवीय प्रकृति की अत्यधिक अनभिज्ञता के इससे अधिक दयनीय मामले की कल्पना नहीं की जा सकती। यदि समाजवाद लाना उद्देश्य है तो इसे लाने के लिए जनमानस के बीच इसके लिए उपदेश दिए जाने चाहिए और उन्हें इस प्रयोजन के लिए संगठित किया जाना चाहिए। जनता को लुभाने से समाजवाद आने वाला नहीं है। यह तथ्य कि कांग्रेस दक्षिणपंथी स्कंध समाजवाद की मामूली खुराक से अधिक समाजवाद को सहन नहीं करेगा एक ऐसी सच्चाई है जो दिन प्रतिदिन उभरती आ रही है। पिछले साल पंडित नेहरू ने समाजवाद के पक्ष में एक व्यापक अभियान शुरू किया था। गरीब आदमी को आदेश देने के लिए बुलाया गया और एक शरारती बच्चे की तरह उसे वापिस उसके कमरे में भेज दिया गया। उसे रोटी और पानी पर रखा गया और उसे नीचे तभी लाया गया जब सही व्यवहार करने को राजी हो गया। पंडितजी ने अब अपनी यह बात पूरी तरह वापस ले ली है और अब वह देश के वातावरण के इतने अधिक अनुकूल बन गए हैं कि वे लाल झंडे को लेकर जिसे वे फहराया करते थे, आलोचना करते हैं। लेकिन जो कांग्रेस के दक्षिणी विंग के लिए अभिशाप है। बिहार में कांग्रेस के दक्षिण विंग ने हथियार डाल दिए हैं। किसानों के नेता स्वामी सहजानंद ने कांग्रेस छोड़ दी है और उनके सहकर्मी श्री जयप्रकाश नारायण कांग्रेस छोड़ने वाले हैं। मुझे यह बताया गया है कि एआईसीसी की बंबई में हुई अंतिम बैठक में कांग्रेस समाजवादियों पर दक्षिण विंग ने कांग्रेस के मंच से समाजवाद का उपदेश देने की अनुशासनहीनता का आरोप लगाया और उनकी मामूली निंदा करके मामला खत्म कर दिया जैसा दाण्डिक प्रक्रिया संहिता में प्रथम अपराधियों के लिए किया जाता है। कांग्रेस समाजवादियों की राजनीति की असारता यही है।

भारतीय राजनीति साम्राज्यवाद के विरुद्ध अपनी प्रतिक्रिया से आच्छादित हो गई है। श्रमिक वर्ग को अपने वास्तविक शत्रु अर्थात निहित स्वार्थों को भूलने के लिए कहा गया है। रायवादी और कांग्रेस समाजवादी——दोनों विचारों की भ्रांति के कारण इस दलदल में फंसे हुए हैं। यहां तक कि यदि साम्राज्यवाद के साथ एक साझा शत्रु के रूप में निपटा जाना है तो भी इसका अर्थ यह नहीं है कि सभी वर्गों को अपने वर्गहित भुला देना चाहिए और किसी एक संगठन के साथ जुड़ जाना चाहिए। विभिन्न वर्ग संगठनों द्वारा साम्राज्यवाद के विरुद्ध, एक साझा मोर्चा बनाकर लड़ा जा सकता था। इस प्रयोजन के लिए सभी संगठनों को भंग करना जरूरी नहीं है। संगठनों को मिलाना जरूरी नहीं है। साझा मोर्चा काफी है। मुझे इस बात का दुख है कि कई लोग यह महसूस नहीं करते कि कांग्रेस का दक्षिणपंथी विंग केवल श्रमिकों के एक अलग और स्वतंत्र संगठन को रोकने के एक बहाने के रूप में साम्राज्यवाद का प्रयोग कर रहा है और मैं आपको इस गलती में न पड़ने के लिए चेता रहा हूं। यह जरूरी है कि राजनीति वर्ग चेतना पर आधारित हो। जो राजनीति वर्ग चेतना पर आधारित नहीं है, वह पाखंड है।

इसलिए आपको अवश्य ही किसी ऐसे राजनीतिक दल के साथ जुड़ना चाहिए जो वर्ग हितों तथा वर्ग चेतना पर आधारित हो। यदि इस कसौटी को लागू किया जाए तो मुझे इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के अलावा कोई ऐसा अन्य दल दिखाई नहीं देता, जिसके साथ आप अपने हितों को नुकसान पहुंचाए बिना जुड़ सकते हैं। यह एकमात्र ऐसा दल है जिसका सुस्पष्ट कार्यक्रम है, जो कामगारों के हितों को पहला और सर्वोच्च स्थान देता है, जिसकी एक सुनिश्चित कार्ययोजना है जो अपने कार्यक्रम को आगे बढ़ाने के लिए सभी संवैधानिक साधनों के प्रयोग का प्रस्ताव करता है और जो तब तक असंवैधानिक साधनों का आश्रय नहीं लेगा जब तक कि उसे ऐसा करने के लिए मजबूर न किया गया हो, जो वर्ग संघर्ष से बचने का इच्छुक है लेकिन जो वर्ग संगठन के सिद्धांत को त्यागने को तैयार नहीं है। यह सच है कि इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी अपनी शैशवावस्था में है और वह केवल बंबई प्रांत तक सीमित है। लेकिन यह इसके विरुद्ध कोई दलील नहीं है। प्रत्येक दल एक अवस्था में अपने शैशवकाल में होता है। प्रश्न यह नहीं है कि कोई दल कितना पुराना है। प्रश्न यह है कि उसके कौन से सिद्धांत हैं, वह किसका समर्थन करता है, उसकी क्षमताएं कौन सी हैं। इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के घोषणा–पत्र को पढ़ने वाला कोई भी व्यक्ति यह समझ जाएगा कि इसके सिद्धांत क्या हैं और वह किसका समर्थन करता है। यह एकदम साफ है कि इस दल की विशाल क्षमताएं हैं। यह दल कोई बंद निगम नहीं है। यह सबके लिए खुला हुआ है, चाहे उसकी जाति तथा पंथ कोई भी हो।

इसके पास एक कार्यक्रम है। जो हालांकि दलित वर्गों की कुछेक विशेष जरूरतों पर बल देता है लेकिन वह इतना व्यापक है कि सभी श्रमिक वर्गों की जरूरतें उसमें शामिल हैं। इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की उन्नति के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों में से एक कठिनाई राजनैतिक नहीं बल्कि सामाजिक है। यह तथ्य कि इसके अधःस्तर अथवा केन्द्र में दलित वर्ग शामिल हैं, एकमात्र ऐसा कारण है जो दल की उन्नति और विस्तार के मार्ग में बाधा है। निचले वर्ग के लोगों जैसे कि दलित वर्गों के साथ न जुड़ने की आम भावना ने सवर्ण हिंदू कार्यकर्ता को आईएलपी के साथ जुड़ने से रोका है और मुझे यह कहने में दुख होता है कि ऐसे कई लोग जो इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की उन्नति के विरोधी हैं इस भावना का लाभ उठा रहे हैं और अज्ञानी तथा भ्रांत लोगों को इस पार्टी के साथ जुड़ने के लिए हतोत्साहित कर रहे हैं। लेकिन मेरा विश्वास है कि इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की सीधी और निष्ठापूर्ण राजनीति सभी श्रमिक वर्गों को अपने घेरे में लाने के लिए एक सशक्त चुंबक की तरह काम करेगी और हिंदू सामाजिक प्रणाली से पैदा होने वाली विनाशकारी शक्ति को प्रतिसंतुलित करेगी। इस पार्टी ने थाना, कोलाबा और रत्नागिरी——इन तीन जिलों में अपने आपको पहले ही स्थापित कर लिया है तथा किसानों और कामगारों के बीच अपना स्थान बना लिया है। यह पार्टी प्रांत के अन्य भागों में भी आगे बढ़ रही है। यह पार्टी सीपी और बरार प्रांत में काम कर रही है और मुझे आशा है कि भारत के बाकी प्रांतों में भी यह अपना स्थान बना लेगी। इसलिए इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी एक मात्र ऐसी पार्टी है, जो श्रमिक वर्गों के समर्थन का औचित्य प्रमाणित करती है।

श्रम संगठन में दलित, भारत में आमतौर पर श्रमिकों की अगुवाई कर सकते हैं। इंग्लैंड में चार्टिस्ट आंदोलन के एक छात्र श्री गैमेज ने सही कहा है कि इस बात को लेकर शंका की जा सकती है कि सामाजिक उद्गम के बिना लोगों के बीच क्या कभी भी इतना विशाल राजनैतिक अभियान देखा गया था। मानव जाति का मुख्य लौकिक आकर्षण सामाजिक आनंद के साधन की प्राप्ति है। उनके अधिकार में इन साधनों को सुरक्षित करने और फिर राजनैतिक पृथक्करण के लिए उन्हें बहुत कम चिंता रहती है। बड़े सामाजिक कुकृत्य की मौजूदगी जनमानस को राजनैतिक अधिकारों के मूल्य की शिक्षा देती है। आपके कुकृत्य बड़े हैं, आपके कुकृत्य वास्तविक हैं। इसलिए आपकी राजनीति वास्तविक और सही हो सकती है। यदि आप यह महसूस कर लें तो वास्तविक राजनैतिक संगठन के मामले में आप भारत में सभी श्रमिक वर्गों के लिए प्रकाश स्तंभ की भांति होंगे। एक अन्य सेवा है जो आप आम श्रमिक वर्ग के लिए उपलब्ध करा सकते हैं। आपके पास विधायिका में प्रतिनिधित्व का एक आश्वस्त कोटा है। ऐसा लगता है कि कुछ मजदूर नेता आम श्रमिकों के लिए उस लाभ को महसूस

नहीं कर पाते जो प्रतिनिधित्व का आश्वस्त कोटा प्रदान करता है। चुनाव जुआ होते हैं। चुनाव की कोई भी प्रणाली विधायिका में सामान्य तरीके से किसी भी दल को कोई प्रतिनिधित्व की आश्वस्त मात्रा प्राप्त नहीं करा सकती। इसके साथ–साथ कोई भी चुनाव प्रणाली मतदाताओं के किसी निकाय को संख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व प्रदान नहीं कर सकती। इंग्लैंड में चुनावों का इतिहास यह बताएगा कि विभिन्न दलों के लिए चुनावों के परिणाम किस कदर आश्चर्यजनक और विनाशकारी रहे हैं। अक्सर मतदाताओं की अल्पसंख्या अधिकांश सीटें प्राप्त कर लेती है। आश्वस्त कोटा की हमारी प्रणाली में इस तरह की विनाशकारी स्थितियों से बचाव रहता है। और जहां तक दलित वर्गों के प्रतिनिधित्व के आश्वस्त कोटे का संबंध है, यह केवल दलित वर्ग के लिए ही नहीं बल्कि समूचे श्रमिक वर्ग के लिए एक लाभकारी स्थिति है। प्रतिनिधित्व से आश्वस्त होने के कारण दलित वर्ग राजनैतिक संगठन के लिए अपने प्रयासों में अन्य श्रमिक वर्गों को अत्यधिक समर्थन प्रदान कर सकते हैं, यदि वे इस समर्थन का लाभ उठाने की फिक्र करते हों। श्रमिक वर्ग को राजनैतिक प्रतिनिधित्व दिलाने में आम श्रमिक वर्ग के लिए दलित वर्गों का समर्थन कितना महत्वपूर्ण हो सकता है, यह बात पिछले चुनावों से प्रमाणित हो गई थी। दलित वर्ग बंबई विधानसभा में सवर्ण हिंदुओं के तीन प्रतिनिधियों को जोकि आईएलपी टिकट पर खड़े हुए थे निर्वाचित कराने में सफल हो गई थी और उसने अनेक अन्य उम्मीदवारों की मदद की, जो इसके टिकट पर खड़े नहीं हुए थे, लेकिन जिन्हें दल ने मंजूरी प्रदान की थी। जो लोग हमारे प्रयासों से लाभान्वित होना चाहते हैं, वे ऐसा कर सकते हैं। लेकिन सच्चाई यह है कि दलित वर्ग अपने आपमें इस देश की राजनीति में बहुत बड़ी भूमिका निभा सकते हैं और यह एक ऐसा भाग है जोकि स्वयं उनके लिए और आमतौर पर श्रमिक वर्गों के लिए अत्यंत सहायक हो सकता है।

तथापि, यह सब कुछ इस बात पर निर्भर करता है कि आप कितनी अच्छी तरह और कितनी तेजी के साथ अपने आपको संगठित करते हैं। मैंने आपको यह बताया है कि आपको क्यों संगठित होना चाहिए और संगठन द्वारा आप क्या कर सकते हैं। अब मैं यह बताते हुए अपना वक्तव्य समाप्त करता हूं कि अपने संगठन की शुरूआत करें और तब तक इंतजार करें जब तक कि इसे प्राप्त नहीं कर लेते। आपने मुझे इस सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए कहा जिस सम्मान के लिए मैं आपका धन्यवाद देता हूं और मैं आपकी पूरी सफलता की कामना करता हूं'।[1]

●●●

[1] भारत भूषण प्रिंटिंग प्रेस, 57, विसेंट रोड, दादर, बंबई–14 में प्रकाशित पुस्तिका

45

चरित्रहीन और विनम्रताहीन शिक्षित व्यक्ति जानवर से अधिक खतरनाक होता है

बंबई प्रांत दलित वर्ग युवा सम्मेलन, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में 12 फरवरी, 1938 को रात 8 बजे जीआईपी रेलवे दलित वर्ग कामगार सम्मेलन के लिए निर्मित विशाल पंडाल में, आयोजित किया गया। स्वागत समिति के अध्यक्ष श्री मुरलीधर पगारे द्वारा स्वागत भाषण[1] के बाद डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने अत्यंत शिक्षाप्रद, प्रेरणात्मक और रोमांचक वक्तव्य दिया।

उन्होंने कहा :–

जीवन में एक नियम जो उन्हें दिमाग में रखना चाहिए, वह यह है कि उन्हें एक उत्तम आदर्श को बनाए रखना चाहिए। इसी क्रम में उन्होंने कहा कि राष्ट्रीय प्रगति अथवा आत्मविकास – व्यक्ति का आदर्श कोई भी हो, उसे उस आदर्श तक पहुंचने के लिए धैर्य के साथ प्रयास करते रहना चाहिए। उन्होंने कहा कि दुनिया में सभी बड़ी बातें धैर्यपूर्ण परिश्रम और मेहनत तथा दुख–तकलीफ के सहारे प्राप्त होती हैं। आगे चलकर उन्होंने यह कहा कि मनुष्य को अपना ध्यान और अपनी शक्ति अपने लक्ष्य पर केन्द्रित करनी चाहिए। मनुष्य को जीवित रहने के लिए खाना खाना चाहिए और समाज के कल्याण के लिए जीना और काम करना चाहिए।

इसके बाद शिक्षा की समस्या पर चर्चा करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि शिक्षा एक तलवार है और एक दोहरी धार वाला हथियार होने के कारण इसे चलाना खतरनाक है। चरित्रहीन और विनम्रताहीन शिक्षित व्यक्ति एक जानवर से अधिक खतरनाक होता है। उन्होंने कहा कि यदि उसकी शिक्षा गरीब आदमी के कल्याण के प्रतिकूल है तो ऐसा शिक्षित व्यक्ति समाज के लिए अभिशाप है। ऐसे शिक्षित व्यक्ति को दुत्कारें'। उन्होंने बलपूर्वक कहा कि 'चरित्र शिक्षा से अधिक महत्वपूर्ण है। मुझे यह कहते हुए दुख होता है कि युवा लोग धर्म के प्रति उदासीन होते जा रहे हैं। धर्म कोई अफीम नहीं है, जैसा कि कुछ लोग मानते हैं। मेरे भीतर जो भी अच्छी बातें हैं अथवा समाज को मेरी शिक्षा से जो भी लाभ प्राप्त हुआ है, उस सबके लिए मैं अपने भीतर की धार्मिक भावनाओं को श्रेय देता हूं। मैं धर्म की कामना करता हूं लेकिन मैं धर्म के नाम पर पाखंड नहीं चाहता'। सम्मेलन अत्यधिक सफल रहा। इससे यह पता चला कि मौका मिलने पर दलित वर्ग के नेता भी जनसाधारण को संगठित कर सकते हैं।[2]

●●●

[1] जनता : 26 फरवरी, 1938

[2] कीर, पृष्ठ 305

46

अछूतों को स्वयं प्रयास करने होंगे

'सोमवंशी हितकारक समाज, और तड़वाड़ी, मझगांव के अछूत निवासियों के तत्वावधान में 19 मार्च, 1938 को एक सार्वजनिक बैठक आयोजित की गई जिसका उद्देश्य इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के नेता – डॉ. बी. आर. अम्बेडकर तथा डॉ. पी. जी. सोलंकी को एक मानपत्र और एक थैली प्रदान करना था। आर. के. टटनिस, संपादक, विविध वृत्त ने बैठक की अध्यक्षता की। उन्होंने तथा एम. एन. तलपाड़े, एच. टी. गायकवाड़ और बी. आर. अम्बेडकर ने मराठी में वक्तव्य दिए। लगभग 100 महिलाओं सहित लगभग 500 अछूतों ने इस बैठक में भाग लिया।

अपने वक्तव्यों के दौरान अध्यक्ष श्री एम. एन. तालपाड़े और एस. टी. गायकवाड़ ने अछूतों के हितों के लिए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर और डॉ. पी. जी. सोलंकी द्वारा उपलब्ध कराई गई सेवाओं की याद दिलाई। इसके बाद अध्यक्ष द्वारा डॉ. अम्बेडकर को एक मानपत्र और एक थैली प्रदान कि गई। डॉ. पी. जी. सोलंकी उपस्थित नहीं थे, यह बताया गया कि वे बीमार हैं।

मानपत्र का उत्तर देते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा कि अछूत लोगों को अपने उत्थान के लिए किसी अन्य व्यक्ति अथवा संगठन की सहायता के बिना स्वयं प्रयास करने होंगे। हालांकि कांग्रेस संगठन ने उनके हितों की सहायता करने का दावा किया था, लेकिन उसने कुछ भी नहीं किया। यही नहीं बल्कि ऐसे संगठनों ने ठीक उल्टा काम किया। इसका प्रमाण इस रूप में मिला कि मध्य प्रांतों में एक अछूत कन्या के साथ बलात्कार के जघन्य अपराध के लिए एक मुसलमान को दी गई सजा कम कर दी गई। इसके बाद उन्होंने बंबई में अछूतों के लिए एक हाल की जरूरत पर बल दिया और श्रोताओं से इस प्रयोजन के लिए चंदा देने की अपील की। उन्होंने बताया कि उनके लिए बिरला अथवा बजाज जैसे लोगों से मिलकर अपेक्षित राशि इकट्ठा करना बहुत आसान है। लेकिन वे ऐसा करना और अनावश्यक रूप से उन्हें महत्ता प्रदान करना नहीं चाहते। इसके बाद उन्होंने कहा कि उन्हें जो थैली भेट की गई है, उसकी राशि इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की निधियों का अंग बन जाएगी।

समारोह रात्रि लगभग 10.30 बजे प्रारम्भ हुआ और रात के लगभग 12.30 बजे शांतिपूर्वक समाप्त हो गया।

ह. / –
अधीक्षक एस.बी.,
सीआईडी
22 मार्च, 1938[1]

[1] स्रोत सामग्री खंड 1, पृष्ठ 170–171

47

शानदार जीवन जिएं

"डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने 14 मई, 1938 को रत्नागिरी जिले में कनकावली में कोंकण पंचमहल महार सम्मेलन को संबोधित किया। लगभग 1500 व्यक्तियों ने इस सम्मेलन में भाग लिया। उन्होंने महारों की दयनीय स्थिति की भर्त्सना की और उन्हें एक शानदार जीवन जीने तथा अपने कानूनी अधिकारों जैसे सार्वजनिक कुओं तथा धर्मशाला, शिक्षा आदि का पूरा लाभ उठाने की सलाह दी। उन्होंने लोगों को इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी से जुड़ने की सलाह दी क्योंकि कांग्रेस ने दलित वर्गों के लिए ऐसा कुछ नहीं किया था जो उसने उन ब्राह्मणों और व्यापारियों के लिए किया जोकि उनकी गरीबी के लिए जिम्मेदार थे। उन्होंने कहा कि वे भारत से ब्रिटिश साम्राज्यवादियों को निष्कासित करने के इतने इच्छुक नहीं थे जितना कि वे कांग्रेस से संपन्न लोगों को निकालने के इच्छुक थे। अंत में उन्होंने खोती प्रणाली, दासता उन्मूलन विधेयक का समर्थन करने का आग्रह किया।

अन्य बातों के साथ–साथ एक प्रस्ताव पारित किया गया जिसमें महार वतन विधेयक और खोती प्रणाली उन्मूलन विधेयक का समर्थन किया गया जिसे प्रस्तुत विधानसभा में डॉ. अंबेडकर द्वारा प्रस्तुत किया गया था।

ह./–

अधीक्षक, एस.बी., सीआईडी

30 मई, 1938[1]

[1] दि बांबे सीक्रेट एब्सेट्रेक्ट, 21 मई, 1938

48

सरकार ने दलित वर्गों की चिंता नहीं की

"डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने प्रेम भाई हाल, अहमदाबाद में 22/23 अक्तूबर, 1938 को, वहां रूककर एक बैठक को संबोधित किया।

"उन्होंने स्वीकार किया कि राजनीति में वे गांधी के विरोधी हैं। इसका कारण यह था कि उन्हें गांधी में कोई विश्वास नहीं था। उन्हें इस बात का भरोसा नहीं था कि गांधी दलित वर्गों के लिए कोई भी अच्छा काम करेंगे। उन्होंने कहा यदि गांधी ईमानदार थे तो वे बंबई और सीपी के मंत्रियों से अपने मंत्रालयों में दलित वर्गों के प्रतिनिधियों को शामिल करने के लिए क्यों नहीं कहते। उन्होंने दृढ़तापूर्वक कहा कि बंबई की कांग्रेस सरकार न तो भू–राजस्व घटा रही थी और न अमीर लोगों पर कर लगाने को तैयार थी। पिछली सरकार ने खेती के लिए दलित वर्गों को परती भूमि मंजूर करने, पुलिस सेवाओं में दलित वर्गों की भर्ती करने तथा सरकारी विभागों में दलित वर्गों के लिए किंचित आरक्षण किए जाने की सिफारिश की थी। लेकिन कांग्रेस सरकार ने उनकी कोई चिंता नहीं की।[1]

●●●

[1] कीर, पृष्ठ 311–312

49

विदेशी साम्राज्यवाद के साझा दुश्मन से लड़ने के लिए संयुक्त राजनैतिक संगठन की जरूरत

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने रविवार 25 दिसंबर, 1938 को दोपहर बाद अखिल भारतीय किसान सभा के अध्यक्ष स्वामी सहजानंद का स्वागत किया जिसमें अनेक श्रमिक नेता, अतिवादी और पत्रकार भी आमंत्रित किए गए थे।

अपने वक्तव्य ने डॉ. अम्बेडकर ने निम्नानुसार घोषणा कीः ''मैं लिखित रूप में यह देने को तैयार हूं कि इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी और इसके प्रवक्ता के रूप में मैं इंडियन नेशनल कांग्रेस के साथ किसी भी ऐसे संघर्ष में जुड़ जाऊंगा जो वह फेडरेशन के विरुद्ध लड़ाई करने के लिए शुरू करेगी।

''मैं यह बात लिखकर देने को तैयार हूं कि यदि कांग्रेस के मंत्री फेडरेशन के विरोध में अपने पदों से त्यागपत्र दे देंगे तो, प्रशासनिक तंत्र चलाने के लिए इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी खाली पदों पर नहीं बैठेगी और वह अपनी सारी शक्ति और प्रभाव का प्रयोग दूसरों को रोकने के वास्ते करेगी।''

मैं पूरी तरह महसूस करता हूं कि हम भारत में सबसे ज्यादा भूखे जीव हैं। हम सबसे अधिक उत्पीड़ित, गरीब, दलित लोग हैं। हम इस तरह के अन्याय से ग्रस्त हैं जो किसी भी अन्य वर्ग को नहीं भोगना पड़ता। लेकिन इस घड़ी हम उच्चतर वर्गों से अपने मतभेदों को अलग रख देंगे। हम अपनी वर्गगत मांगों पर बल देना स्थगित कर देंगे और कांग्रेस के साथ जुड़ जाएंगे यदि वह साम्राज्यवाद के विरुद्ध लड़ने का फैसला करे।

यह घोषणा स्वामी सहजानंद की इस टिप्पणी के साथ शुरू हुई कि सभी व्यक्तियों को कांग्रेस के साथ जुड़ जाना चाहिए।

उनका यह मानना था कि कांग्रेस एक साम्राज्यवाद विरोधी संगठन है और उसके पास साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष की परंपराएं हैं जिनका दावा कोई अन्य दल नहीं कर सकता, यह भी उसके नाम और उसके उद्देश्यों से देशभर में फैले लाखों करोड़ों कामगार और किसान परिचित थे और कोई भी अन्य राजनैतिक संगठन विख्यात नहीं था। अतः जनमानस की वर्गगत चेतना का निर्माण करके इसे इसके मौजूदा नेताओं से बचाया जा सकता है।

''मैं इस देश के लोगों के सभी वर्गों के एक संयुक्त राजनैतिक संगठन की जरूरत समझता हूं ताकि वे विदेशी साम्राज्यवाद के रूप में अपने साझा शत्रु के विरुद्ध लड़ सकें। एक साझा शत्रु के विरुद्ध लड़ाई होने की स्थिति में मैं सभी राजनैतिक संगठनों के अस्थायी समापन का समर्थन करूंगा। यदि भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस इस तरह का संघर्ष शुरू करे तो मैं इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी का समापन करना और अपनी शक्तियां प्रसन्नतापूर्वक कांग्रेस के सुपुर्द करूंगा।'' उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा– ''लेकिन आज की स्थिति क्या है? कांग्रेस किसी साम्राज्यवाद विरोधी संघर्ष में प्रवृत्त नहीं है। यह संवैधानिक तंत्र का प्रयोग पूंजीवादियों के हितों तथा अन्य निहित स्वार्थों को आगे बढ़ाने के लिए कर रही है, यह कामगारों और किसानों के हितों की बलि देकर उनका उत्थान कर रही है।

''इसके प्रशासनिक क्रियाकलापों का गुणगान किया गया है लेकिन जनता द्वारा नहीं बल्कि स्वयं साम्राज्यवाद द्वारा जिसके विरुद्ध संघर्ष करने की कांग्रेस से अपेक्षा की जाती है।''

''अपने वर्ग हितों को आगे बढ़ाने के लिए कांग्रेस ने जो खंडित शक्तियां प्राप्त की हैं जब वह उनका लाभ उठाने में व्यस्त हैं तो अपने हितों की रक्षा करने के लिए और कांग्रेस तथा अन्य मंत्रिमंडलों द्वारा हमारे अधिकारों और स्वतंत्रताओं के हनन का विरोध करने के लिए स्वयं अपना वर्ग संगठन स्थापित करना, स्पष्ट रूप से, हमारा दायित्व बन जाता है। ऐसी स्थिति में कांग्रेस के साथ जुड़ना हमारे लिए आत्महत्या करने की तरह होगा।''

''ऐसा प्रतीत होता है कि स्वामी सहजानंद की मुख्य धारणा यह थी कि कांग्रेस की मौजूदा नीति के लिए उसका गलत नेतृत्व जिम्मेदार था, यह कि मौजूदा नेतृत्व को अपदस्थ करके तथा जनसाधारण के नेताओं को पदासीन करके नीति को बदला जा सकता है और उन्हें अभी तक अपदस्थ नहीं किया गया क्योंकि जनसाधारण में वर्ग चेतना नहीं थी।

आज की तारीख में हमारा मुख्य कार्य जनसाधारण के बीच वर्ग चेतना उत्पन्न करना है और उसके बाद मौजूदा नेतृत्व स्वतः धराशायी हो जाएगा।

''डॉ. अम्बेडकर ने कहा– ''यहां तक कि यदि हम कांग्रेस पर काबू पा लेते हैं तो भी एक अलग संगठन की स्थापना करने के लिए मौजूदा नेतृत्व पर कोई रोक नहीं है और इस प्रकार कांग्रेस पर काबू पाने का मुख्य प्रयोजन जिसका अर्थ समूचे देश में एक राजनैतिक संगठन रखना है, पराजित हो जाता है।''

इन सब आपत्तियों के जवाब में स्वामीजी ने कहा कि कांग्रेस ने जनसाधारण में जागृति पैदा की थी और अकेली कांग्रेस थी जिसके ऊपर वे अपना भरोसा और

विश्वास रख सकते थे।'' उन्होंने कहा ''कि इस राष्ट्र को पहले विदेशी शासन से मुक्त किया जाना है और इस प्रयोजन के लिए सभी उपलब्ध बलों को एकजुट हो जाना चाहिए तथा अपने पूर्व अनुभवों और परंपराओं के साथ कांग्रेस यह काम करने के लिए सर्वोत्तम है।''

इस मौके पर इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के नेता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने ऊपर उद्धृत वक्तव्य दिया कि वे और उनका दल ऐसे किसी भी आंदोलन में कांग्रेस का साथ देने को तैयार थे जो वह फेडरेशन अथवा साम्राज्यवाद को खत्म करने के लिए शुरू करे, यह कि उनका दल कांग्रेस द्वारा पद खाली करने पर मंत्रिमंडल में पद स्वीकार नहीं करेगा तथा संविधान के समर्थन के लिए अन्य को मंत्रालयी कार्यालयों का प्रयोग करने से रोकेगा।

स्वामी सहजानंद इस घोषणा से अत्यधिक प्रभावित हुए और उन्होंने कहा कि कांग्रेस के मौजूदा नेता चाहे कुछ भी कहें अथवा कुछ भी करें, साम्राज्यवाद के विरुद्ध संघर्ष दूर नहीं है।''[1]

●●●

[1] बांबे क्रानिकल, 27 दिसंबर, 1938
प्रेस रिपोर्ट में स्वागत स्थल का कोई उल्लेख नहीं है – संपादक।

50

अपनी शिकायतें मेरे पास भेजें

''मकरानपुर, जिला पूर्वी खानदेश में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में 30 दिसंबर, 1938 को एक सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें औरंगाबाद जिले से आए लगभग 200 व्यक्तियों ने भाग लिया। सम्मेलन यहां इसलिए आयोजित किया गया क्योंकि अनुमति न मिलने के कारण वह निजाम शासन–क्षेत्र में आयोजित नहीं किया जा सका और यह सम्मेलन अपनी किस्म का पहला सम्मेलन था। राज्य में अछूतों के प्रति मुसलमानों के रवैये की निंदा की गई। डॉ. अम्बेडकर जो मुख्य वक्ता थे, उन्होंने अपने श्रोताओं से कहा कि वे अपनी शिकायतों की एक सूची उनके पास भेजें और उन्हें राज्य में एक इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की स्थापना करनी चाहिए।

इसके अलावा निम्न प्रस्ताव पारित किए गए:

1. महारों को वतन भूमि प्रदान करना।
2. अछूतों के लिए सीटों का आरक्षण।
3. प्रतिवर्ष 14 अप्रैल को 'डॉ. अंबेडकर दिवस' मनाना।
4. डॉ. अम्बेडकर के इस आशय की घोषणा का समर्थन करना कि हिंदू धर्म को त्याग दिया जाए क्योंकि अछूत लोग हिंदू महासभा, आर्य समाज अथवा कांग्रेस पर विश्वास नहीं करते ।''[1]

● ● ●

---

[1] बांबे सीक्रेट एब्सट्रेक्स, 14 जनवरी, 1939

51

उत्तम चरित्र के व्यक्ति बनें

श्रमिक हड़ताल के संबंध में सरकारी जांच समिति ने पिछले वर्ष 7 नवंबर के बाद से जो अपनी बैठकें शुरू की, उनमें पहली बार समिति के समक्ष प्रस्तुत प्रमाण की प्रकृति के बारे में इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के नेता डॉ. बी. आर. अंबेडकर ने एक सीधा प्रहार किया। यह मौका पार्टी की स्वयंसेवक कोर की वार्षिक परेड का था, जिसका आयोजन रविवार दिनांक 8 जनवरी, 1939 को सवेरे कामगार मैदान में किया गया। उसमें बढ़िया कपड़े पहने हुए 2500 से अधिक स्वयंसेवकों ने भाग लिया तथा पार्टी के 20000 सदस्यों और अनुयायियों की भीड़ ने समारोह देखा।

इस मौके पर डॉ. अंबेडकर ने कहा,

''जो प्रमाण समिति के समक्ष प्रस्तुत किए जा रहे हैं इस समय मैं उनके ब्यौरों की चर्चा नहीं करूंगा क्योंकि समिति की बैठकें अभी भी हो रही हैं और क्रियाविधि 'निर्णयाधीन' है। लेकिन मुझे दुनिया के सामने इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की स्वयंसेवक कोर, जिसके विरुद्ध समिति के समक्ष गवाहों द्वारा दिन प्रतिदिन गलत और द्वेषपूर्ण आरोप लगाए जा रहे हैं, उसकी प्रकृति और परंपराएं अवश्य प्रस्तुत करनी है।

''मैं केवल दो घटनाओं का उल्लेख करूंगा जबकि स्वयंसेवक कोर की केवल उसके मित्रों और हितैषियों द्वारा ही नहीं, बल्कि कांग्रेस के नेताओं द्वारा भूरि–भूरि प्रशंसा की गई थी।''

स्वयंसेवकों के प्रति माननीय श्री खेर और सरदार पटेल द्वारा की गई प्रशंसाओं का उल्लेख करने के बाद डॉ. अम्बेडकर ने कहा:

''इसके अलावा हमारे अधिकांश स्वयंसेवकों और पुरुषों ने अनेक वर्षों तक सेना में काम किया है। ये लोग गैर–कानूनी दुर्व्यवहार करने वाले निम्न वर्ग के लोग नहीं हैं जोकि गुंडागर्दी या बदमाशी में प्रवृत्त हों। ये लोग अपनी जिम्मेदारियां महसूस करते हैं और अनुशासनबद्ध व्यवहार में विश्वास करते हैं। क्या ये लोग ऐसे हैं जो इस प्रकार के शर्मनाक क्रियाकलापों में प्रवृत्त होंगे कि गवाहों द्वारा उन पर आरोप लगाए गए हैं?''

तभी सीधे स्वयंसेवकों को संबोधित करते हुए डॉ. अंबेडकर ने कहा:

''यह स्वयंसेवक कोर दलित वर्गों द्वारा मानव अधिकारों के आग्रह के लिए शुरू किए गए संघर्ष के दौरान अस्तित्व में आई थी जिसकी चरम परिणति महाड सत्याग्रह के रूप में हुई।

''इस कर्तव्य के समुचित निर्वाह के लिए आपको उत्तम चरित्र का व्यक्ति बनना होगा जिसकी तरफ बाकी समाज मानवता के आदर्शों के रूप में देखेगा।''

''आपको यह अवश्य याद रखना है कि आप भीड़ या जत्था नहीं हैं। आप एक बटालियन हों। और इन दोनों के बीच का अंतर एकदम स्पष्ट है। आपके जैसे मुट्ठी भर सुप्रशिक्षित और अनुशासनबद्ध व्यक्ति हजारों की भीड़ पर काबू पाने में समर्थ हैं। 'आपके और एक साधारण भीड़ के बीच' के अंतर का सार यही है।''

''डॉ. अम्बेडकर ने अन्य युवाओं से कोर में शामिल होने और इसकी क्षमता बढ़ाने की जोरदार अपील की और इसके साथ अपने वक्तव्य का समापन किया।

स्वयंसेवक कोर के जनरल आफिसर कमांडिंग की तरफ से श्री डी. वी. प्रधान ने यह आशा व्यक्त की कि वे भारत में अन्य प्रांतों में भी इसी तरीके से शाखाएं खोलेंगे जिस तरह से कि उन्होंने बंबई प्रांत के विभिन्न भागों में शाखाएं खोली हैं।[1]

● ● ●

---

[1] बांबे क्रानिकल, 10 जनवरी, 1939

52

भारत के राजनैतिक विकास का लक्ष्य क्या है?

डॉ. अम्बेडकर ने फेडरेशन की निंदा की

''इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी बंबई के नेता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने रविवार दिनांक 29 जनवरी, 1939 की रात को पूना में गोखले स्कूल आफ इकोनामिक्स में 3 घंटे तक चले अपने भाषण के दौरान फेडरल स्कीम की एक सुविचारित प्रस्तुति की।

पहली बात तो यह कि फेडरल स्कीम देश को स्वतंत्रता की ओर ले जाने से बहुत अलग, यहां तक कि उसे डोमीनियन दर्जा दिलाने के मार्ग तक को स्थायी रूप से बंद कर देगी।

डॉ. अम्बेडकर यह चाहते थे कि केवल ब्रिटिश भारतीय प्रांतों की फेडरेशन हो।

जहां तक राज्यों का संबंध है छोटे–छोटे राज्यों के शासकों को पेंशन दे दी जानी चाहिए और बड़े राज्यों के शासकों को कतिपय शर्तों के अधीन कार्य करने की अनुमति दी जानी चाहिए।

उनके अनुसार फेडरल स्कीम ने स्वतंत्र व्यक्ति और गरीब व्यक्ति को जो राष्ट्रीय नीति के सर्वाधिक महत्वपूर्ण अंग होते हैं, को पूरी तरह भुला दिया था।

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर द्वारा दिए गए वक्तव्य का सार निम्नानुसार हैः

''फेडरेशन के वास्तविक स्वरूप की एक स्पष्ट तस्वीर प्रस्तुत करने के उद्देश्य से डॉ. अम्बेडकर ने इस फेडरेशन की अन्य फेडरेशनों के साथ तुलना की और उन्होंने यह तुलना आगे वर्णित तीन महत्वपूर्ण प्रश्नों के संदर्भ में की। अर्थात (i) फेडरेशनों के यूनिट कौन से हैं, (ii) फेडरेशन के साथ इन यूनिटों का क्या संबंध है, ;पपपद्ध उन व्यक्तियों का क्या संबंध है जिन्हें फेडरेशन की प्रभुसत्ता के अधीन लाया जाता है।

इस संबंध में उन्होंने यह संप्रेक्षित किया की ''........फेडरेशन साझा नागरिकता

सहित एक साझापूर्ण इकाई नहीं है। फेडरेशन एक संग्रह है, कानून में जिसका आशय विदेशी राज्यों से है। फेडरेशन वस्तुतः एक कंफेडरेशन है। इसकी जो विशिष्टताएं और विशेषताएं हैं वे कंफेडरेशन की हैं। यदि लोग इसे फेडरेशन कहने का आग्रह करते हैं तो यह केवल फेडरेशनों के बीच मात्र एक विरूप ही नहीं है बल्कि यह फेडरेशनों के बीच भी एक विरूपता है।''

फिर डॉ. अंबेडकर ने उन आधारों की जांच की जिनके बल पर स्कीम की स्वीकृति के पक्ष में आग्रह किया गया था, अर्थात –

(i) यह भारत के संगठित होने में सहायता करती है।

(ii) यह ब्रिटिश भारत को भारतीय भारत को प्रभावित करने और भारतीय भारत में प्रचलित एकतंत्र को धीरे–धीरे मौजूदा ब्रिटिश भारत में व्याप्त लोकतंत्र में बदलने में समर्थ बनाती है।

(iii) इस स्कीम में वह शामिल है जिसे जिम्मेदार सरकार कहा जाता है।

जहां तक (i) का संबंध है उन्होंने कहा कि व्याख्यपित शब्द भारतीय भारत के अधीन जो कुछ शामिल था वह फेडरेशन के अधीन लाया गया। अधिनियम की अनुसूची के साथ खंड 6(i) के पढ़ने पर प्रत्येक राज्य के लिए फेडरेशन में शामिल होने की छूट नहीं थी जिसके फलस्वरूप 498 राज्य अभी भी फेडरेशन से बाहर बने हुए हैं और वह कभी भी फेडरेशन का हिस्सा नहीं बन सकते। डॉ. अम्बेडकर ने पूछा कि ये राज्य फेडरेशन से अलग क्यों रखे गए हैं, उनकी क्या स्थिति और नियति है।

(iv) के बारे में चर्चा करते हुए डॉ. अम्बेडकर इस निष्कर्ष पर पहुंचे कि राज्य विधि द्वारा ऐसी स्थिति में रखे गए थे कि वे ब्रिटिश भारत के कामकाज पर नियंत्रण रख सकें और उसी विधि द्वारा ब्रिटिश भारत को राज्यों के ऊपर कोई प्रभाव डॉलने के अयोग्य बना दिया गया। उनकी राय में फेडरल स्कीम से कोई सहायता नहीं मिली, निश्चय ही इस कारण ब्रिटिश भारत ऐसी प्रक्रियाओं को गति देने से बाधित हो गया, जिनके फलस्वरूप भारतीय राज्यों का लोकतंत्रीकरण हो पाता।

दूसरी तरफ इसने ब्रिटिश भारत के भारतीय राज्यों में लोकतंत्र को नष्ट करने में मदद की।

जहां तक (iii) का संबंध है उन्होंने कहा कि जिम्मेदारी का विस्तार रक्षा

और विदेशी मामलों तक नहीं जाता और यह कि प्रांतों में द्विशासन प्रणाली की तुलना में फेडरेशन में जिम्मेदारी की स्कीम, कम जिम्मेदारी पैदा करने के लिए तैयार की गई थी। डॉ. अम्बेडकर ने कहा ''आप फेडरल स्कीम पर किसी भी दृष्टि से नजर डालें और उत्तरदायित्व से संबंधित प्रावधानों का किसी भी ढंग से विश्लेषण करें, आप यह देखेंगे कि वहां पर वास्तविक उत्तरदायित्व है ही नहीं।

'फेडरल स्कीम के शाप' का हवाला देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने उसकी चर्चा की जिसे वे संविधान की सबसे बड़ी कमी मानते हैं। उन्होंने कहा कि ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं है जिसने यह नहीं देखा हो कि स्कीम में दोष ही दोष हैं।

आगे चलकर उन्होंने यह कहा ''मतभेद तभी उत्पन्न होता है जब यह प्रश्न पूछा जाता है कि हम इस संबंध में क्या करेंगे। इस प्रश्न का उत्तर टाला जा सकता है लेकिन उससे बचा नहीं जा सकता। प्रश्न यह है कि हम किन पक्षों की बाबत संविधान को संशोधित करना चाहेंगे?'' डॉ. अम्बेडकर ने अपने वक्तव्य में श्री सत्यमूर्ति द्वारा जारी किए गए इस आशय के वक्तव्य को शुरूआती बिंदु बनाया कि फेडरल संविधान में संसद को कौन से न्यूनतम परिवर्तन तत्काल करने चाहिए जिससे कि वे कांग्रेस के लिए स्वीकार्य हों। ''डॉ. अम्बेडकर ने पूछा कि क्या ये परिवर्तन फेडरल स्कीम को नामंजूर करने के मौजूदा रवैये को उसकी स्वीकृति में बदलने के लिए काफी होंगे?

उनके विचार से फेडरल स्कीम को लेकर की गई आपत्तियां तनिक भी दूर नहीं की जाएंगी यहां तक कि यदि ब्रिटिश संसद श्री सत्यमूर्ति द्वारा की गई सभी मांगों को मंजूर करने को तत्पर हो। उनके अनुसार मूल प्रश्न यह था कि क्या फेडरल स्कीम इस तरह से विकसित होने में सक्षम है कि अंततः भारत अपना लक्ष्य प्राप्त कर लेगा। इसी दृष्टिकोण को ध्यान में रखते हुए उन्होंने कहा कि स्कीम की जांच अवश्य की जानी चाहिए। डॉ. अम्बेडकर ने पूछा कि ''भारत के राजनैतिक विकास का लक्ष्य क्या है?''

डॉ. अम्बेडकर के अनुसार फेडरल संविधान के अधीन डोमीनियन दर्जा असंभव है क्योंकि संविधान स्थिर और कठोर है और यहां तक कि संसद के पास भी फेडरल स्कीम को पूरी तरह नष्ट किए बिना फेडरल संविधान में परिवर्तन करने का कोई अधिकार नहीं है।

इस तर्क का उल्लेख करते हुए कि संविधान ने स्वायत्त प्रांतों का सृजन किया था और इसलिए कुछ बाध्यकारी बल अवश्य प्रदान किया जाना चाहिए। वे

इस बात से सहमत थे कि इस केन्द्रीय सरकार की स्थापना अनिवार्य है और यह कि उसके बिना स्वायत्तता निरंकुशता का रूप ले लेगी। लेकिन उन्होंने यह सोचा कि यदि वह संपूर्ण भारत के लिए केन्द्रीय सरकार की स्थापना का औचित्य सिद्ध करने का प्रयास करता है तो वह अपने सीमा क्षेत्र से आगे जाता है। उनके मतानुसार स्वायत्त प्रांतों के सृजन के लिए अखिल भारत के वास्ते केन्द्रीय सरकार के सृजन की जरूरत नहीं है, जरूरत केवल इस बात की है कि ब्रिटिश भारत के लिए केन्द्रीय सरकार का स्वरूप संघीय होगा। उन्होंने पूछा कि राज्यों को लाना क्यों जरूरी है? उन्होंने बताया कि भारत सरकार अधिनियम, 1935 ने दो अलग–अलग फेडरेशनों की स्थापना की थी–अखिल भारतीय फेडरेशन के साथ ब्रिटिश भारत प्रांतों की फेडरेशन। उनकी विधायी तथा वित्तीय शक्तियों अथवा उनके अलग–अलग संगठन में कोई अंतर नहीं है। उनमें केवल एक बड़ा अंतर था।

जब केवल ब्रिटिश इंडिया फेडरेशन थी केन्द्र पर कोई जिम्मेदारी नहीं थी। अतः जब तक अखिल भारत फेडरेशन न हो केन्द्र पर कोई जिम्मेदारी नहीं होनी चाहिए। इसका अर्थ यह हुआ कि राज्यों का प्रवेश ब्रिटिश इंडिया को उत्तरदायित्व प्रदान करने से पहले की एक शर्त थी। उन्होंने पूछा राज्यों का प्रवेश इतना जरूरी क्यों था? उनका उत्तर था ''दो टूक तरीके से कहा जाए तो उद्देश्य यह है कि राजकुमारों का प्रयोग शाही हितों का समर्थन करने और ब्रिटिश भारत में लोकतंत्र की बढ़ती हुई लहर को दबाने के लिए किया जाए।'' उनके सामने कोई और स्पष्टीकरण नहीं था। डॉ. अम्बेडकर ने कहा ''फेडरेशन के प्रवेश के लिए कितना मूल्य चुकाया गया है?''

केवल यही नहीं कि ब्रिटिश भारत केन्द्र में वह जिम्मेदारी प्राप्त नहीं कर सका है जोकि राजकुमारों के लिए फेडरेशन आसान बनाने के उद्देश्य से उनके द्वारा किए गए त्याग के समतुल्य, हो बल्कि वह अपने अधिकार में और राजकुमारों से निरपेक्ष रूप से डोमीनियन दर्जे के लिए अपना दावा भी खो चुका है।

फेडरेशन के दो हिस्सों में से ब्रिटिश भारत प्रगतिशील भाग है जबकि राज्य अप्रगतिशील हिस्सा हैं। इसलिए प्रगतिशील भाग को अप्रगतिशील के रथ के साथ बांधा जाना चाहिए और मार्ग तथा नियति को अप्रगतिशील हिस्से पर निर्भर करना चाहिए, जोकि फेडरेशन का सबसे दुखद पक्ष है।

अंत में डॉ. अम्बेडकर ने फेडरेशन की बाबत विभिन्न दृष्टियों से विचार किया, राजकुमारों की दृष्टि से, हिंदुओं की दृष्टि से, और मुसलमानों की दृष्टि से। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार राजकुमारों के हित दोहरे थे। वे प्रभुता से बचना चाहते

थे और वे अपने आपको फेडरेशन के प्राधिकार के अधीन अधिक नहीं लाना चाहते थे।

फेडरेशन पर दृष्टि डालते हुए राजकुमारों ने उनके सामने दो सवाल रखे... यह फेडरेशन किस प्रकार उन्हें प्रभुता के अत्याचार से बचा सकेगी और दूसरा यह कि यह स्कीम उन्हें आंतरिक सरकार की उनकी शक्तियों की प्रभुसत्ता को किस सीमा तक वंचित करेगी? डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''वे पहले प्रस्ताव में अधिक प्राप्त करना चाहते हैं और दूसरे के अधीन कम देना चाहते हैं।

इस संबंध में डॉ. अम्बडेकर ने आग्रहपूर्वक यह कहा कि उपर्युक्त के अलावा अन्य ऐसे मुद्दे हैं जिन्हें अपनी बात अवश्य कहनी चाहिए। उन्होंने उल्लेख किया कि स्वतंत्र और गरीब व्यक्ति का दृष्टिकोण यह है। लगता है कि फेडरेशन ने उनका कोई ध्यान नहीं रखा, फिर भी ये ऐसे लोग हैं जो सबसे अधिक जुड़े हुए हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा ''यदि यह फेडरेशन अस्तित्व में आती है तो स्वतंत्र व्यक्ति के लिए एक स्थायी संकट होगा और गरीब आदमी के लिए एक बाधा होगी।

अपने वक्तव्य का समापन करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा इस विषय की विशालता के कारण उनका वक्तव्य लंबा हो गया है। उन्हें यह भी कहा गया था कि वे वक्तव्य को छोटा न करें। और इस प्रसंग में उन्हें उन दिनों की याद दिलाई गई थी जबकि भारत के लोगों का नेतृत्व रानाडे, तिलक, आगरकर, गोखले, दादा भाई, फिरोजशाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बैनर्जी जैसे लोगों के हाथ में था। ये सब भारतीय राजनीतिक गगन में उल्लेखनीय व्यक्ति थे, अच्छी वेशभूषा में और सुविज्ञ राजनीतिज्ञों का यह एक ऐसा समूह था जो अध्ययन और अनुभव पर भरोसा करता था।

आज उनका स्थान जिन्होंने ग्रहण किया है........ आवाज आई।''[1]

● ● ●

[1] बांबे क्रानिकल, 31 जनवरी, 1939

53

गांधी किसी भी रूप में फेडरेशन को स्वीकार करने को राजी थे

इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के नेता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने 12 फरवरी, 1939 को बीजापुर में आयोजित बीजापुर जिला हरिजन सम्मेलन की अध्यक्षता करते हुए कहा,

''मैं फेडरेशन के मुद्दे पर श्री बोस के प्रति श्री गांधी का विरोध समझने में असमर्थ हूं। इसे दो ढंग से अर्थान्वित किया जा सकता है: या तो गांधी ने बिना किसी शर्त के फेडरेशन स्वीकार करने का मन बना लिया होगा अथवा उन्हें अहिंसा और सत्याग्रह के अपने शस्त्र पर शंका रही होगी। ऐसा लगता है कि वे फेडरेशन को किसी भी रूप में स्वीकार करने को राज़ी थे।''

उन्होंने फेडरेशन की जोरदार आलोचना की, क्योंकि उनका यह मानना था कि इससे कभी भी स्थितियों में सुधार नहीं होगा बल्कि इसके विपरीत इसके कारण भारत में गड़बड़ी और स्थिति ज्यादा खराब हो जाएगी। उन्होंने कहा कि वे इसे पूरी तरह सिद्ध कर सकते हैं कि कांग्रेस में, जो अब पूरी तरह एक गुट के हाथों में चली गई थी कोई ईमानदारी बची नहीं रह गई है। उन्हें विश्वास था कि वे चाहते तो गांधी की चाटुकारिता करके कांग्रेस में एक अनूठा स्थान प्राप्त कर सकते थे। वे भलीभांति यह जानते थे कि कांग्रेस की मौजूदा नीति उन्हें, कभी भी पूर्ण स्वराज तक नहीं ले जा सकेगी और इस कारण उनके मन में कांग्रेस से जुड़ने की कोई बात नहीं थी। उन्होंने पिछले विधानसभा चुनावों से कुछ ही दिन पहले एक अलग पार्टी शुरू की थी और इसे इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी का नाम दिया था। तभी से यह पार्टी मजबूत बनती जा रही है। उनका बीजापुर आने का मुख्य उद्देश्य यह था कि यहां पर पार्टी की एक शाखा खोली जाए।[1]

● ● ●

---

[1] टाइम्स ऑफ इंडिया, 15 फरवरी, 1939

54

अपने बच्चों को भयावह जीवन से बचाएं

इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के नेता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने रविवार दिनांक 26 फरवरी, 1939 की शाम को चेंबूर, बंबई में आयोजित 'कचरापट्टी' कामगारों की एक बैठक में जिसमें उन्हें पार्टी के मुख्यालय के भवन का निर्माण करने के लिए निधि के वास्ते कामगारों की ओर से अंशदान के रूप में 1001 रुपए का पर्स दिया गया।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि लगभग पिछले एक दशक के दौरान दलित वर्गों की सामाजिक और मनोवैज्ञानिक सोच में उल्लेखनीय बदलाव आया है।

उन्होंने सीधे श्रोताओं को संबोधित करते हुए उन्होंने कहा,

''आपकी नियति के अनुसार आपको बंबई के 13 लाख लोगों की गंदगी और कूड़े कचरे को संभालना है। आपका समूचा जीवन इसी गंदगी में बीत जाता है।

''लेकिन यहां उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति को यह देखना है कि कम से कम आपके बच्चे इस भयावह जिंदगी से बचे रहें, कि वे आपकी तुलना में अधिक शिक्षित हों और नियति के अनुसार जिस तरह की जिंदगी आपने बिताई है उसकी तुलना में वे अधिक प्रसन्न, आरामदेह और सभ्य जीवन बिताएं।

डॉ. अम्बेडकर ने उन सभी को धन्यवाद दिया, जिन्होंने इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की भवन निर्माण निधि में अंशदान दिया था और यह आशा व्यक्त की कि कामकाजी श्रेणी के अन्य सभी केन्द्र चेंबूर द्वारा निर्देषित नेतृत्व का अनुसरण करेंगे और पार्टी को यथा शीघ्र भवन का निर्माण शुरू करने में समर्थ बनाएंगे।

डॉ. अम्बेडकर से पूर्व जिन वक्ताओं ने वक्तव्य दिए, वे इस प्रकार हैंः श्री जी. एम. जाधव, प्रिंसिपल डोंडे, श्री गायकवाड़, बंबई विधानसभा में नासिक से दलित वर्ग के प्रतिनिधि, डॉ. देवरुखकर। श्री डी. वी. प्रधान ने अध्यक्षता की।[1]

● ● ●

---

[1] बांबे क्रानिकल, 28 फरवरी, 1939

55

मैंने किसी एक विशिष्ट वर्ग के लाभ के लिए नहीं, बल्कि पूरे समुदाय के लाभ के लिए काम किया*

आर. एम. भट्ट हाई स्कूल, परेल, बंबई में रविवार 2 जुलाई, 1939 को आयोजित रोहीदास शिक्षण समाज की बैठक को संबोधित करते हुए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा कि –

''वे दलित वर्गों के बीच उप–जातियों के उन्मूलन के पक्ष में थे और वे निष्ठापूर्वक इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए काम करते रहे। आगे उन्होंने यह कहा कि विवाह का प्रश्न ऐसा नहीं है जो ताकत के बल पर सुलझाया जा सके। उन्होंने कहा कि ऐसा नहीं है कि कोई महार लड़की और चमार लड़का अथवा मांग लड़के की इस तरह जबरदस्ती शादी कर दी जाए जैसे कि जादू की छड़ी घुमाकर की जाती है। जिन पुरुषों ने इस तरह के विवाह करने का साहस किया है, उनको प्रोत्साहित करने का काम उनका है। राजनैतिक समस्या पर चर्चा करते हुए उन्होंने कहा कि कांग्रेस के नेता दलित वर्ग के कुछ नेताओं को चालाकी से उनके दल के विरुद्ध प्रोत्साहित करके दलित वर्गों के बीच फूट डालने में लगे हुए हैं। उन्होंने उनसे अनुरोध किया कि वे कांग्रेस के झूठे प्रचार के चक्कर में न आएं। उन्होंने कहा कि कांग्रेस के नेता हरिजन नेताओं को खुश करने में लगे हुए, हैं क्योंकि वे कांग्रेस के शिविर में शामिल नहीं थे। उन्होंने कहा कि यह सच है कि आईएलपी को प्रमुख समर्थन महारों से प्राप्त हो रहा है। उन्होंने स्पष्ट किया कि इसमें उनकी कोई गलती नहीं है कि दलित वर्गों में महारों की बहुलता है।''' तथापि अपनी समापन टिप्पणी में उन्होंने यह कहा कि इन भेदपूर्ण भावनाओं से मुक्ति पाने का एकमात्र तरीका यह है कि किसी दूसरे धर्म को अपना लिया जाए।''[1]

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के वक्तव्य में अतिरिक्त आयाम भी थे जो ''दि टाइम्स आफ इंडिया'' द्वारा प्रस्तुत किए गए। ये आयाम निम्नानुसार थेः संपादक

''यह एक दुख की बात है कि दलित वर्गों के विभिन्न प्रवर्गों के बीच मतभेद

---

*दि जनता : 8 जुलाई, 1939

[1] कीर ,पृष्ठ 323–324

बना हुआ है। लेकिन उन्होंने जो काम किया था वह किसी विशिष्ट प्रवर्ग के लाभ के लिए नहीं बल्कि समूचे समुदाय के लाभ के लिए था। उन्होंने अपने विकास कार्य में कभी भी किसी वर्गीय अथवा क्षेत्रीय विचारों को तरजीह नहीं दी थी।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि चमार समुदाय जोकि इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी से अलग बना हुआ है, ऐसा समझता है कि कांग्रेस उनकी स्थिति में सुधार ला देगी, लेकिन उनका यह भरोसा गलत है। उन्होंने विभिन्न वर्गों के बीच एकता के लिए अपील की।

अध्यक्ष श्री एम. बी. डोंडे ने कहा कि सरकार द्वारा इस समय इस समुदाय को जो छात्रवृत्ति दी जा रही हैं, वे अपर्याप्त हैं अतः उन्हें और अधिक प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए।

इस आशय के प्रस्ताव पारित किए गए कि प्रत्येक जिले में इस समुदाय के लिए एक निःशुल्क बोर्डिंग स्कूल होना चाहिए और सरकार को इस आशय का अनुरोध किया जाए कि जो बालक और बालिकाएं हाल की परीक्षा में फेल हो गए हैं उन्हें तीन महीने के बाद पुनः परीक्षा में बैठने की अनुमति दी जाए।

निम्न सदस्यों को कार्यकर्ताओं के रूप में चुना गया : श्री के. आर. पावेकर (अध्यक्ष), श्री बी. जे. देवरूकर तथा श्री बी. जी. वागमारे (सचिव) तथा 40 अन्य सदस्य, कार्यकारिणी समिति में रखे गए।''[2]

● ● ●

[2] दि टाइम्स ऑफ इंडिया, 5 जुलाई, 1939

56

करों का उपयोग किसानों के हित में किया जाना चाहिए

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को नासिक में स्थित हंसराज पी. ठाकरसे कालेज के अधिकारियों द्वारा जुलाई, 1939 में एक चाय पार्टी में आमंत्रित किया गया। इस समारोह में डॉ. अम्बेडकर के सामने जो प्रश्न लिखित रूप में प्रस्तुत किए गए उनके, उत्तर में उन्होंने कहाः–

''सरकार करों के रूप में जो पैसा जुटा रही है उसका प्रयोग किसानों के ऋण चुकाने, गरीबी के विरुद्ध लड़ने और शिक्षा प्रदान करने के लिए किया जाना चाहिए; लेकिन यदि मद्यनिषेध को इन तात्कालिक समस्याओं के चलते प्राथमिकता या वरीयता प्रदान की जाती है तो यह काम नहीं हो सकता। जब उनसे यह पूछा गया कि क्या वे भारत के विभाजन के प्रसंग में सर सिकंदर हयात खान द्वारा प्रायोजित क्षेत्रीय स्कीम से सहमत हैं, तो उन्होंने कहा कि वे 7 क्षेत्रों के बात से सहमत नहीं हैं और उन्हें इस बात का संदेह है कि यह कार्रवाई पाकिस्तान की स्थापना की दिशा में एक कदम है। जहां तक ब्रिटिश शासन का प्रश्न है, उन्होंने कहा कि अन्य सभी दोषों अथवा अयोग्यताओं के अलावा उन्होंने भारतीयों को दो लाभ पहुंचाएं हैं। एक साझा केन्द्रीय सरकार और विभिन्न धर्मों के अनुयायियों के बीच इस आशय की भावना कि वे एक ही सरकार के अंग हैं।''[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 324

57

महार वतन एक हृदयहीन शोषण है

'महार और मांग वतनदारों' की विभिन्न शिकायतों के निवारण के लिए समूचे बंबई प्रांत में सत्याग्रह आंदोलन और आम हड़ताल की संभावना देखने के लिए डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में अहमदनगर* में सप्ताहांत में वतनदारों का एक सम्मेलन आयोजित किया गया।

विधानसभा के इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के लगभग सभी सदस्य उस सम्मेलन में मौजूद थे।

ग्राम अधिकारियों की संस्था के उद्‌गम का उल्लेख करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा–

मराठा शासन के दौरान 12 अलग–अलग अधिकारी होते थे, जैसे पटेल, कुलकर्णी, देसाई, *न्हावी* (नाई), *सुतार* (बढ़ई), मुसलमान, आदि जिन्हें विशिष्ट कर्तव्य सौंपे जाते थे और जिनके निष्पादन के लिए उन्हें राजस्वमुक्त भूमि प्रदान की जाती थी।

''अंग्रेजों के आगमन के साथ *वतन* भूमियों के माध्यम से भुगतान करने की प्रणाली महारों को छोड़कर सभी मामलों में समाप्त कर दी गई थी। उनके स्थान पर नियमित वेतन पाने वाले लोग नियुक्त किए गए थे।

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा– ''पुरानी प्रणाली की समाप्ति की प्रक्रिया के बारे में दिलचस्प बात यह है कि सैकड़ों मामलों में *भूतपूर्व पटेल, कुलकर्णी, तलाती* आदि हालांकि अपने औपचारिक ड्यूटी से मुक्त हो गए थे लेकिन उन्हें अपनी जमीनें रखने की अनुमति दी गई और उनकी वतन भूमियों को लेकर मालगुजारी में जो वृद्धि की गई थी वह मात्र नाममात्र की थी। इस प्रकार आज की तारीख में सरकार इन ग्राम अधिकारियों के उत्तराधिकारियों को लाखों रुपए का भुगतान कर रही है जबकि उन्हें किसी भी ग्राम ड्यूटी का निर्वाह नहीं करना होता।

---

* 23 दिसंबर, 1939 के जनता में प्रकाशित हरे गांव, तालुका कोपरगांव, जिला अहमदनगरमें 16 दिसंबर, 1939 की सम्मेलन – रिपोर्ट

पर महार वतनदारों की नियति पूर्ववत थी और प्रायः प्रत्येक *महार* एक *वतनदार* है। अंग्रेजों ने उनका वंशानुगत पद को समाप्त नहीं किया। *महार* लोग पहले की तरह अपनी ड्यूटी निभाते रहे लेकिन 'जूडी' के नाम से उनका रियायती भू–राजस्व बढ़ा दिया गया।

अनुचित कर

इस मामले की सरकार द्वारा जांच की गई और 1874 में पारित एक अधिनियम में यह कहा गया कि वतन भूमियां न तो हस्तांतरित की जा सकती हैं और न उन पर भार में तब तक कोई वृद्धि की जा सकती है, जब तक कि वैसा करना स्वयं महार वतनदारों क हित में न हों। इसके बावजूद कांग्रेस सरकार ने जो दलित वर्गों के हितों की पूर्ति करने का दावा करती है और जिसके पास राजस्व बढ़ाने के बहुत सारे मौजूद हैं, उसने अतिरिक्त राजस्व प्राप्त करने क लिए गरीबी में सबस अधिक जकड़े हुए इन वर्गों पर प्रहार किया है।

अध्यक्ष ने कहा कि एसा करना ''केवल अनुचित और न्याय विरूद्ध ही नहीं है बलिक यह मौजूदा कानून का उल्लंघन है जो आज भी सविधि में मौजूद है यह गैर–कानूनी और असंवैधनिक भी है। और जब तक सरकार अपनी भूल महसूस नहीं करती और आदेश को रद्द नहीं करती महार वतनदार, अधिकारियों के विरूद्ध एक क्रांति की घोषणा करने और अपने ग्राम सुधारने कार्य करने से इंकार करने को विवश हो जाएंगे।

अध्यक्ष हड़बड़ी में किसी कार्रवाई क पक्ष में नहीं थे। वे चाहते थे कि मामले को सुधारने के लिए अधिकारियों को समय दिया जाए और सीधी कार्रवाई करने से पूर्व उन्होंने छः महीने का नोटिस देने का सुझाव रखा। उन्होंने कहा, ''हम इस मामले में इतने गंभर क्यों हैं? यह इस कारण है कि कांग्रेस सरकार द्वारा अतिरिक्त भात डाले बिना भी महार वतन प्रणाली एक हृदयहीन शोषण है।''

''एक अन्य बहुत बड़ी समस्या है जो कि हजारों महारों के सामने पेश आ रही है। इस प्रांत में ऐसे असंख्य गांव है जहां महारों का यहां तक कि वतन भूमि अथवा किसी अन्य प्रकार के भुगतान के बिना उन्हें सौंपे गए सभी कार्य करने होते हैं। सच्चाई तो यह है कि यह बंधुआ तथा मुफ्त मजदूरी स कम नहीं है। इसका अंत किया जाना जरूरी है।''

इन तथा अन्य शिकायतों के संबंध में उन्होंने यह प्रस्ताव रखा कि गवर्नर के पास एक प्रतिनिधिमंडल भेजा जाना चाहिए जो उनके सामने सभी तथ्य रखेगा और उनका निवारण प्राप्त करेगा।

इसके बाद काँग्रेस पर चर्चा करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''यह एक अच्छी बात है कि काँग्रेस ने इतनी जल्दी अपना असली रूप प्रकट कर दिया है और उसने पूर्ण स्वराज्य प्राप्त करने तक, जबकि स्थिति में सुधार लाना अत्यंत कठिन हो सकता था, इंजजार नहीं किया।

''हम अब इस शिक्षा को भूलने वाले नहीं है। हम काँग्रेस जितन मजबूत नहीं है। हमारी संख्या भी उतनी नहीं है। लेकिन हम सामाजिक जीवन के इस सिद्धांत को मानते हैं कि यदि हमें खाने के लिए सूखी रोटी से अधिक कुछ नहीं प्राप्त होता है, तो हमें उस रोटी को अपने साथियों क साथ बांटकर खाना चाहिए। काँग्रेस सूखी रोटी के फिराक में नहीं है। उस पूरी दावत चाहिए और वह पूरी दावत का आनंद स्वयं लेना चाहती है। वह दूसरों का भूखा रखना चाहती है।'' उन्होंन कहा, ''यह ठीक है कि हम उनके हाथों स थालियां नहीं छीन सकते। लेकिन हम एक काम तो कर सकते हैं कि एक मुट्ठी धूल भर लें और जब वे दावत खा रहे हों तो उन पर फेंक दें।''[1]

● ● ●

1. दि बांबे क्रानिकल, 19 दिसम्बर, 1939

58

सरकार ने दलित वर्गों के लिए कुछ नहीं किया है

''यह सम्मेलन डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में सतारा जिले में अनकलखोप गांव में 24 दिसंबर, 1939 को आयोजित किया गया और इस सम्मेलन में 2000 व्यक्तियों ने भाग लिया। वक्ताओं ने दलित वर्गों के लिए डॉ. अम्बेडकर ने जो काम किया, उसके लिए उनकी प्रशंसा की और यह अनुरोध किया कि उन्हें समर्थन दिया जाना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि कांग्रेस सरकार ने दलित वर्गों के कुछ काम नहीं किया बल्कि इसके विपरीत *इनामी* तथा महार की भूमियों पर राजस्व शुल्क बढ़ा दिया था। *महारों* से अपेक्षित ग्राम कार्य की मात्रा की कोई सीमा होनी चाहिए और महारों को समुचित रूप से पारिश्रमिक दिया जाना चाहिए। जब तक ये सब शिकायतें छः महीने के भीतर दूर नहीं कर दी जाती, महारों को कार्य बंद करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।''[1]

● ● ●

[1] दि बांबे सीक्रेट एब्सट्रैक्स, 6 जनवरी, 1940

59

छुआछूत के पाप की जिम्मेदारी हिंदुओं पर है

''डॉ. अम्बेडकर के स्वागत में बेलगाम स्थित बेलगाम नगरपालिका द्वारा 26 दिसंबर, 1939 को मानपत्र प्रदान भेंट किया गया।''

मानपत्र का उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि छुआछूत के लिए और कोई नहीं बल्कि केवल सवर्ण हिंदू जिम्मेदार हैं और वे हरिजनों के उद्धार के लिए काम करके छुआछूत को समाप्त करने का प्रयास कर रहे हैं। हरिजनों की समस्या के समाधान का प्रश्न *स्वराज* प्राप्त करने से भी कहीं अधिक तात्कालिक है।''[1]

●●●

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 27 दिसम्बर, 1939

60

सेना में अपनी पूर्व स्थिति पुनः प्राप्त करें

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने 28 जनवरी, 1940 को रत्नागिरि का दौरा किया जहां उनका सैनिक दर्जे वाली 'महार सेना' के नए भर्ती हुए सैनिकों द्वारा स्वागत किया गया। इस अवसर पर उन्होंने सवर्ण कुनबियों और साथ ही अस्पृष्य जाति के सिपाहियों दोनों के सामने एक संक्षिप्त वक्तव्य दिया।[1]

डॉ. अम्बेडकर द्वारा कुनबियों और महारो दोनों से आगे आने और सेना का अंग बनने की अपील की गई। यह अपील उस समय की गई जब हाल में भर्ती हुए अनेक महार सैनिक एक नेता के रूप में डॉ. अम्बेडकर को अपना सम्मान प्रकट करने के लिए एक समूह के रूप में पिछली शाम वहां आए थे।

डॉ. अम्बेडकर ने उनके सेना में दाखिल होने के निर्णय की प्रशंसा की। उन्होंने बताया कि जातिगत पूर्वग्रहों के कारण उनके लिए सेना की नियुक्ति बंद थी हालांकि उन्होंने पूर्व में उत्तम सेवा प्रदान की है। एक समय ऐसा था जब बंबई सेना का 3/4 हिस्सा महारों का था और उन्होंने अंग्रेजों की तरफ से अनेक बड़ी–बड़ी लड़ाइयां लड़ी थीं जिनमें से कोरेगांव का प्रसिद्ध युद्ध शामिल है। तब पेशवा की हार हुई थी और अंग्रेजों ने अपनी प्रधानता स्थापित की थी।

उन्होंने कहा, 1857 के गदर के बाद अन्य वर्गों ने सेना में प्रवेश कर लिया। उनके पूर्वाग्रहों का आदर किया जाना था और इस कारण महारों की भर्ती रुक गई। अब नए भर्ती हुए सैनिकों पर सेना में अपनी पुरानी स्थिति पुनः प्राप्त करने की जिम्मेदारी बन जाती है।[2]

● ● ●

---

*जनता के अनुसार तारीख 28 जनवरी, 1940 है जबकि अखबारों की रिपोर्ट में तारीख 29 दिखलाई गई थी–संपादक

[1] जनता, 10 फरवरी, 1940

[2] दि टाइम्स ऑफ इंडिया, 31 जनवरी, 1940

61

भारत सरकार अधिनियम और पूना समझौते के अधीन रक्षोपाय अपर्याप्त हैं

श्री एस. सी. जोशी की अध्यक्षता में रविवार 4 फरवरी, 1940 को मझ गांव में 40000 से अधिक पुरुषों और महिलाओं की एक रैली निकाली गई।

यह रैली डॉ. अम्बेडकर के निवास स्थान से शुरू करके 5 मील लंबे जुलूस की चरम परिणति थी जिसका उद्देश्य इंडिपेंडेंट पार्टी की कोलाबा जिला शाखा के अध्यक्ष श्री सुरेन्द्रनाथ टिपणिस का सम्मान करना था। वे तीन महीने का कारावास भुगतकर शनिवार सबेरे थाना जेल से रिहा हुए थे। उन्हें यह कारावास खोती पद्धति की समाप्ति की हिमायत करने के लिए दिए गए एक वक्तव्य के कारण दिया गया था।

दल के अधिकांश जिला नेता और विधानसभा के दलीय सदस्य ने साथ स्वयंसेवक कोर ने भी इस जुलूस में भाग लिया जो नौकरी पेशा वर्ग की भीड़ भरी बस्तियों में से होकर नारों और तालियों के साथ गुजरा था।

रैली को संबोधित करते हुए इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के नेता डॉ. अम्बेडकर ने कहा :—

''भारत सरकार अधिनियम और पूना समझौते के अधीन प्रदान किए गए रक्षोपाय दलित वर्गों के हितों की रक्षा के लिए पूरी तरह अपर्याप्त पाए गए हैं, अतः इन वर्गों को जल्दी ही ठोस प्रस्ताव और एक स्पष्ट और व्यापक प्रकृति की शर्तें जिनके ऊपर प्रशासन के साथ उनका भावी सहयोग संभव हो सकेगा, तैयार करने की तरफ अपना ध्यान देना होगा।''[1]

●●●

[1] दि बांबे क्रानिकल, 6 फरवरी, 1940

62

हिंदू समाज को अपने युगों पुराने ढांचे को भंग करके आधुनिक नीति पर संगठित होना होगा

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने अछूतों के लिए स्वतंत्रता दिवस के रूप में 19 मार्च की घोषणा की। 1927 की यही वह तारीख थी जबकि महाड में अछूतों की एक एतिहासिक बैठक हुई थी जहां डॉ. अम्बेडकर ने लोकतंत्र के तीन सिद्धांतों अर्थात स्वतंत्रता, समानता और मित्रता की घोषणा की थी। उसकी स्मृति में इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी की तरफ से 19 मार्च को महाड में 'अछूतों का स्वतंत्रता दिवस' नामक एक विशेष समारोह का आयोजन किया गया। इस मौके पर एक विशेष हैंडबिल प्रकाशित किया गया। तदनुसार दलित वर्गों ने 19 मार्च, 1940 को ही अपना स्वतंत्रता दिवस मान लिया।[1]

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने महाड़ में 10000 लोगों की रैली को संबोधित किया। अपने वक्तव्य में उन्होंने निम्न विचार व्यक्त किएः

''भारतीयों के लिए अपना समूचा ध्यान देश की राजनैतिक स्वतंत्रता के प्रति केन्द्रित करना और सबसे अधिक महत्वपूर्ण सामाजिक तथा आर्थिक समस्याओं को भुला देना सर्वथा गलत है। उन्होंने कहा कि समय आ गया है जब हिंदू समाज को अपनी युगों पुराने ढांचे को भंग करके आधुनिक नीति पर संगठित होना चाहिए।'' रात के समय महाड नगरपालिका द्वारा डॉ. अम्बेडकर के स्वागत में एक मानपत्र भी प्रस्तुत किया गया।[2]

● ● ●

---

[1] जनता, 23 और 30 मार्च, 1940

[2] कीर, पृष्ठ 231

63

गांधी के प्रयास अपर्याप्त हैं

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में टडवाल (डोकी) शोलापुर जिले में 23 फरवरी, 1941 को *महार तथा मांग वतनदारों* का एक सम्मेलन आयोजित किया गया जिसमें लगभग 3000 व्यक्तियों ने भाग लिया।

मुख्य वक्ता के रूप में डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि हरिजनों की स्थिति में सुधार सुनिश्चित करने के लिए गांधी के प्रयास अपर्याप्त हैं। पर उन्होंने हरिजनों के साथ व्यवहार को लेकर मैसूर और बड़ौदा राज्यों के प्रशासन की तारीफ की। लेकिन यह भी कहा कि हैदराबाद राज्य में हरिजनों के लिए विस्तारित सुविधाएं जरूरी हैं। डॉ. अम्बेडकर ने अपने भवन निर्माण निधि के लिए भी अंशदान की अपील की। तब 761 रुपए का एक पर्स प्रस्तुत किया गया।[1]

● ● ●

[1] बांबे सीक्रेट एब्सट्रैक्स, 8 मार्च, 1941

64

श्रम साध्य प्रयासों के बिना हमारी सामाजिक स्थिति और भी बदतर हो जाएगी

"थाना में दलित वर्ग के छात्रों के छात्रावास की आर्थिक स्थिति पर विचार करने के लिए कल रात अर्थात 28 मार्च, 1941 को भट्ट हाई स्कूल हाल, बंबई में दलित वर्गों की एक सार्वजनिक बैठक आयोजित की गई। उसमें *पंचायतों* के अनेक विख्यात सदस्यों की उपस्थिति में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर द्वारा शहर में महार समुदाय की *पंचायतों* के कामकाज पर कठोर प्रहार किया गया।

उन्होंने कहा कि ये *पंचायतें,* समुदाय पर सभी तरह के और विभिन्न आधारों पर चंदा वसूली कर रही हैं। इस तरह से प्राप्त अधिकांश पैसा पहले शराब के दौरों पर खर्च किया जाता था। लेकिन अब जबकि शहर में मद्यनिषेध लागू हो गया है, यह पैसा *बताशे* खाने और मिठाइयां बांटने पर खर्च किया जाता है।

डॉ. अम्बेडकर ने समुदाय के बड़े लोगों और वरिष्ठ सदस्यों से पूछा कि, आप लोगों को क्या हो गया है ''जो बच्चों की तरह व्यवहार करने लगे हैं और जनता के पैसे से खरीदी गई मिठाइयां खाना चाहते हैं जबकि जीवन संघर्ष में समुदाय को अन्य समुदायों की तुलना में बढ़ती हुई प्रतिस्पर्द्धा का मुकाबला करना होता है। जब तक हम इन बचकाना क्रियाकलापों का त्याग नहीं करेंगे और सामाजिक तथा शैक्षिक उन्नति के लिए गंभीर काम नहीं करेंगे, हमारी स्थिति आज की तुलना में और भी बदतर हो सकती है।''

डॉ. अम्बेडकर ने दलित वर्गों के सामने उन्नत भारतीय समुदायों को उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने कहा कि उन्नत समुदायों का बीच सदैव कई लोग ऐसे होते हैं जो अपने समुदायों में अपने आपको पूर्णतः और जीवनपर्यंत शैक्षिक तथा अन्य सामाजिक संस्थानों के प्रति समर्पित रखते हैं और इसके लिए वे किसी पुरस्कार और यहां तक कि प्रशंसा प्राप्त करने की आशा भी नहीं रखते।

उन्होंने कहा कि दलित वर्गों के शिक्षित युवकों के बीच स्थानीय बोर्डों, नगरपालिकाओं में सीट प्राप्त करने अथवा मिलते–जुलते स्थान पाने की प्रवृत्ति रहती है और उन्हें यदि ये सब नहीं मिल पाते – और सभी को ऐसी सीटें मिलना संभव भी नहीं हो पाता, तब उस स्थिति में वे सार्वजनिक कार्य के प्रति अपनी सारी

दिलचस्पी खत्म कर देते हैं और समुदाय के भाग्य को लेकर पूरी तरह उदासीन हो जाते हैं।

उन्होंने आगे कहा, ''कुछ अन्य ऐसे होते हैं जो अपने सार्वजनिक कार्य में इतने अस्थिर होते हैं कि वे कुछ समय के लिए किसी एक प्रकार के काम में लग जाते हैं, बाद में किसी और काम में तथा उसके बाद तीसरे काम में प्रवृत्त हो जाते हैं, और जिस–जिस संस्थान के साथ वे जुड़े थे उसे बदतर की स्थिति में छोड़ देते हैं।''[1]

● ● ●

[1] दि बांबे क्रानिकल, 29 मार्च,, 1941

65

आप यह नहीं समझ पाए हैं कि आपके भीतर कितनी जबरदस्त शक्ति है

कॉवासजी जहांगीर हाल, बंबई में, बांबे म्यूनिसिपल कामगार यूनियन की 13 जुलाई, 1941 को हुई वार्षिक आम बैठक में अपने अध्यक्षीय भाषण के दौरान डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने शहर में जिस तरह से कुछेक श्रमिक संघों ने व्यवहार किया था, उसे लेकर कठोर आपत्ति व्यक्त की। इस बैठक में नगरपालिका के स्वास्थ्य, जल निकासी तथा अन्य सैनीटरी विभागों से 1000 से अधिक पुरुषों और महिलाओं ने भाग लिया था और उन्हें यह बताया गया था कि वे किस तरह मात्र संगठित एकता के बल पर, अधिक त्याग दिए बिना भी अपनी मनचाही हर वस्तु प्राप्त कर सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि शहर में कुछेक संघों, विशेष रूप से टेक्सटाइल यूनियनों के नेताओं ने अपने लोगों से पिछले 14 वर्षों के दौरान अनेक हड़तालें करवाई थीं लेकिन उनमें से कोई भी एक उनकी किसी भी मांग को पूरा कराने में सफल नहीं हो सका। सच तो यह है कि इन हड़तालों के फलस्वरूप, हड़ताल की अवधियों के दौरान बेरोजगारी और छंटनी तथा हड़ताल के बाद बर्खास्तगी के चलते कामगारों के दुख और दुर्दशा और ज्यादा बढ़ गई थी।

इस तरह के क्रियाकलापों के फलस्वरूप कामगारों को संगठित करने की बजाय उन्हें असंगठित और उनके संघों को विखंडित कर दिया गया था।

दूसरी तरफ म्यूनिसिपल कामगार संघ अधिकारियों के साथ बातचीत द्वारा अपनी अनेक शिकायतों का निवारण करने में सफल रहा था।

दलित नेता ने कहा, ''लगता है कि आपको इस बात की समझ नहीं है कि आपके हाथों में कितनी जबरदस्त ताकत है। आप केवल काम करना बंद करके एक सप्ताह में ऐसी खलबली और विनाश पैदा कर सकते हैं जो हिंदू मुस्लिम दंगे तीन महीने में नहीं कर सकते। अधिकारी लोग इस बात को जानते हैं और इसलिए वे आपकी साझा मांगों को किसी अन्य स्थान की बजाय अधिक आसानी से स्वीकार कर लेंगे। निश्चय ही मैं शहर में इस तरह की खलबली फैलाने की इच्छा नहीं रखता और मैं इस तरह की स्थिति से बचने के लिए तब तक ऐसे सभी संभव प्रयास करूंगा जब तक कि अधिकारी हमारी मांगे पूरी न कर लें। मेरा यही कहना है कि

आपको संघ के रूप में संगठित हो जाना चाहिए और प्रबंध समिति आपके सक्षम और ओजस्वी नेताओं के साथ जुड़कर यह तथ्य बाकी सारा काम निपटा देगा।

इसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने एकता के फलस्वरूप देश के राजनैतिक जीवन में दलित वर्गों द्वारा प्राप्त स्थिति का उल्लेख किया कि यह वर्ग जिसका 10 वर्ष पहले कोई राजनैतिक दर्जा नहीं था उसे आज एकता के कारण कांग्रेस और लीग के समतुल्य दर्जा प्राप्त हो गया है।

अंत में, उन्होंने आम दलित वर्गों से अपने आपको विधानसभा की मतदाता सूची में शामिल कराने को कहा।

इस संबंध में उन्होंने याद दिलाया कि विधानसभा के पिछले चुनावों में जिस निर्वाचन क्षेत्र से चुनाव लड़ा था (उत्तर बंबई) उसमें केवल 8000 हरिजन थे जबकि 48000 सवर्ण हिंदू मतदाता थे और उन्होंने प्रायः ऐसा सोच लिया था कि ऐसे निर्वाचन क्षेत्र से खड़े होकर उन्होंने अपनी गर्दन में फांसी का फंदा लगा लिया है। तथापि दलित वर्गों के मतदाता मतदान केन्द्र तक पहुंचे और उसके बाद चुनाव के मामले में जो प्राप्ति हुई वह एक चमत्कार था।

संघ के महासचिव डॉ. डी. वी. प्रधान ने प्रारंभ में वार्षिक रिपोर्ट पढ़कर सुनाई, जिसमें उस वर्ष के दौरान चहुमुखी प्रगति पाई गई।

महंगाई भत्ते में एक रुपए की वृद्धि की मांग और इस भत्ते को ऐसे सभी कामगारों के मामले में लागू करना जिनका वेतन 75 रुपए प्रतिमाह तक था; निगम द्वारा म्यूनिसिपल श्रमिकों की आवासीय और रहन–सहन की स्थितियों पर रिपोर्ट करने के लिए निगम द्वारा गठित समिति से अपनी रिपोर्ट जल्दी प्रस्तुत करने के लिए कहना; तथा संघ के संविधान में कुछेक मामूली परिवर्तन करना – उपर्युक्त आशय के प्रस्ताव प्रस्तुत किए गए और महासभा ने उन्हें मंजूरी प्रदान की। प्रस्तावों के मामले में बोलने वालों में शामिल थेः सर्वश्री एम. ची. डोंडे, एम. कावली तथा जी. एम. जाधव।

श्री डी. वी. प्रधान के प्रस्ताव पर एक नई प्रबंध समिति का चयन किया गया जिसमें डॉ. अम्बेडकर अध्यक्ष के रूप में और मेसर्स एम. वी. डोंडे और एस. बी. केनी उपाध्यक्ष चुने गए। इसके बाद श्री एम. बी. जाधव सहायक सचिव ने स्पष्ट किया कि किस प्रकार कामगारों के बीच संप्रदायवाद का अनुचित लाभ उठाया जा रहा था और किस प्रकार गुजराती दलित वर्ग के कामगार जैसे भंगी आदि ने अपने आपको संघ से अलग कर लिया था हालांकि उन्हें सभी लाभ जैसे मजदूरी में वृद्धि इत्यादि प्राप्त हो रहे थे, जोकि संघ के क्रियाकलापों के स्वरूप प्राप्त हुए थे।''[1]

● ● ●

[1] दि बांबे क्रानिकल, 15 जुलाई, 1941

66

वतनदारी : महारों के लिए एक अभिशाप

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने सिन्नार, नासिक जिले में 16 अगस्त, 1941 को आयोजित एक बैठक की अध्यक्षता की, जिसमें लगभग 4000 व्यक्तियों ने भाग लिया। डॉ. अंबेडकर ने कहा कि दिसंबर, 1939 में हुए हरेगांव सम्मेलन के एक निर्णय के अनुसार बंबई के महामहिम गवर्नर को एक अभ्यावेदन प्रस्तुत किया गया था, लेकिन उसका कोई प्रभाव नहीं हुआ। उन्होंने कहा कि महारों और मांगों को अन्य वतनदारों के बराबर का व्यवहार प्राप्त नहीं हुआ था और उनकी वतन भूमियों पर जूडी कर बढ़ा दिया गया था। इसलिए उन्होंने महारों और मांगों को यह सलाह दी कि वे बढ़े हुए कर की वसूली का विरोध करें और किसी भी स्थिति में अपनी भूमियों का कब्जा न त्यागें।[1]

तथापि इस विषय पर डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के वक्तव्य के अन्य आयाम भी थे जिन्हें बाम्बे क्रॉनिकल की रिपोर्ट में बताया गाया था। ये आयाम इस प्रकार थे। ''महाराष्ट्र के महार, मांग तथा वेथिया वतनदारों को उनके अधिकार में पूरी शक्ति से वतन भूमियों पर लगाए गए अतिरिक्त भू–राजस्व की वसूली का विरोध करने के लिए दिए गए जोरदार वक्तव्य डॉ. बी. आर. अम्बेडकर की अध्यक्षता में पिछली रात आयोजित की गई वतनदारों की विशाल बैठक में दिए गए।

कर की वसूली का विरोध करने का निर्णय उनके लिए एक तर्कपूर्ण परिणाम था।

अपने अध्यक्षीय भाषण के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने कहा ''अपने समूचे सरकारी सार्वजनिक जीवन के दौरान, मैं भारत में सतत रूप से अंग्रेजी सरकार के प्रति वफादार रहा हूं।''

''मैं अंग्रेजों के प्रति इसलिए वफादार रहा हूं क्योंकि सभी तरफ से शत्रुओं से घिरे हुए दलित वर्ग के लिए एक ही समय में सभी मोर्चों पर लड़ना संभव नहीं था। इसलिए मैंने सवर्ण हिंदुओं की 2000 वर्ष पुरानी यातना और उत्पीड़न के विरुद्ध और सबसे बढ़कर दलित वर्गों के लिए सामाजिक समानता प्राप्त करने के लिए लड़ने का निर्णय लिया।

---

1. दि बांबे सीक्रेट एब्सेट्रेक्ट, 23 अगस्त, 1941

''मैंने पिछले कई वर्षों से हिंदू समाज और उसकी असंख्य बुराइयों पर कठोर और कटु प्रहार किए हैं लेकिन मैं आपको यह विश्वास दिलाना चाहता हूं कि अंग्रेजों के विरुद्ध मेरा प्रहार हिंदुओं पर किए गए प्रहार की तुलना में 100 गुना अधिक कठोर, अधिक कटु, अधिक घातक होगा यदि मेरे अपने लोगों को उत्पीड़ित करके और उनसे अंतिम सूखी हड्डी छीनकर जिसके सहारे वे अपना निम्नतम जीवन बिता सकते हैं यानी अंग्रेजों के प्रति मेरी निष्ठा का अनुचित लाभ उठाया जाता है।

मैं अंग्रेज शासकों को यह बताना चाहता हूं कि इस प्रांत में उनका शासन हमारी वजह से है, ये महार टुकड़ियां थीं जिन्होंने पेशवा शासन का ध्वंस किया था और इस प्रांत में अंग्रेजी राज्य की स्थापना की थी।

महारों ने अंग्रेजों के लिए महाराष्ट्र पर विजय पाई थी। उन्हें अपनी सेवाओं के लिए क्या मिला? कुछ नहीं।

वतनदारी महारों के लिए एक अभिशाप बन गई है। यह उन्हें अनंत गरीबी के साथ बांधे रखती है। इससे उनका आत्मसम्मान नष्ट हो जाता है। यह उन्हें निचले स्तर का बनाए रखती है।

हमें कुल मिलाकर यह कहना है कि ''हमें आपकी वतनदारी नहीं चाहिए। हमें अपनी सेवा से मुक्त कर दें। हमारी भूमियों पर पूरा भू–राजस्व लगाएं और लोगों को मासिक वेतन के आधार पर लगाएं जैसाकि आपने अन्य ग्रामसेवाओं के लिए किया है।

इन 20 वर्षों के दौरान मेरी यही मांग रही है। इसके बदले में हमें क्या मिलता है? सेवाओं से मुक्ति दिलाए जाने से बहुत अलग, वतनदारों पर अतिरिक्त जिम्मेदारियां डाल दी जाती हैं और उन पर अतिरिक्त 'जूडी' लगाया जाता है।

यह एक ऐसी बुराई है जिसे मैं कभी भी सहन नहीं करूंगा। मैं अंग्रेज अधिकारियों को चुनौती देता हूं कि वे जितना बुरा कर सकते हैं, करें।

मैं उन्हें बताता हूं और अंतिम तौर पर बताता हूं कि उन्हें हमसे अतिरिक्त जूडी के रूप में एक पैसा भी नहीं मिलेगा। जो कुछ बुरे से बुरा वो कर सकते हैं, करें।

जहां तक आप वतनदारों का संबंध है मेरे दिशानिर्देश बिल्कुल साफ हैं। आपको अतिरिक्त ड्यूटी के भुगतान का विरोध करना है चाहे उसका परिणाम कुछ भी हो। यदि वे आपके घरेलू सामान या आपके पशुओं की कुर्की कर लेते हैं तो आपको अपने सामान और पशुओं को ले जाने से रोकने के लिए सब कुछ करना चाहिए।

परिणाम कुछ भी हो हम देखेंगे कि सरकार ढीली पड़ेगी। हमें अपने निर्णय से वापस नहीं मुड़ना है, अपने निर्णय को कार्यरूप देने में तनिक भी लड़खड़ाना नहीं हैं।

अध्यक्षीय भाषण के बाद दो प्रस्ताव पारित किए गए जिनमें से एक महार वतनदारी के प्रश्न पर डॉ. अम्बेडकर द्वारा राज्यपाल को भेजे गए ज्ञापन* के समर्थन में था और दूसरे में वतनदारों से अपनी ताकत के भीतर सभी साधनों से अतिरिक्त 'जूडी' की वसूली को रोकने के लिए कहा गया था। प्रस्तावों पर बोलने वाले लोग इस प्रकार थेः सर्वश्री आर. आर. भोले, बी. एच. वाराड़े, जे. एस. एंडले, पी. जे. रोहम, डी. जी. जाधव, बी. के. गायकवाड़ तथा ए. वी. चित्रे – ये सभी क्रमशः पूना, बेलगाम, शोलापुर, अहमदनगर, खानदेश, नासिक और कोलाबा जिले का प्रतिनिधित्व करने वाले बंबई विधानसभा के सदस्य थे।

इनमें से प्रत्येक ने अपने–अपने जिले के महारों के लिए किसी भी ऐसे आंदोलन के वास्ते जिसकी शुरूआत नासिक जिला कर सकता है और यदि अधिकारी समय रहते न माने तो अपने–अपने जिलों में सत्याग्रह शुरू करने की स्थिति में अधिकतम संभव सहयोग की पेशकश की।

अपने अंतिम वक्तव्य में डॉ. अंबेडकर ने आंदोलन शुरू करने के लिए वास्तविक तिथि को लेकर कुछेक पूर्व वक्ताओं द्वारा कही गई बात में सुधार किया।

''डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''यदि कुर्की कल आ जाती है तो आपका विरोध कल शुरू होना चाहिए। इंतजार करने की कोई जरूरत नहीं है, अनुदेश प्राप्त करने का कोई प्रश्न नहीं है।''

''जैसे ही इस कर की वसूली शुरू की जाए तभी नेइसका विरोध किया जाना चाहिए। इसलिए वतनदारों को अपने दिमाग में यह दृढ़ निश्चय लेकर लौटना चाहिए कि अतिरिक्त कर की वसूली का सबसे पहले कदम का और बाद में प्रत्येक कदम पर विरोध किया जाएगा।[1]

● ● ●

*देखें ज्ञापन पृष्ठ 308, 338 इस खंड का भाग 1 – संपादक

[1] दि बांबे क्रानिकल, 19 अगस्त, 1941

67

जबरदस्त बदलाव

"बुधवार दिनांक 20 अगस्त, 1941' को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने दादर के निकट कसरवाड़ी में पिछले कुछ वर्षों में आए जबरदस्त बदलाव तथा नगरपालिका द्वारा बस्ती में हरिजन क्वार्टरों में उल्लेखनीय सुधार का उस समय जिक्र किया जब बस्ती के निवासियों द्वारा उन्हें एक थैली भेंट की गई। जिसका उद्देश्य इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी के मुख्यालय का निर्माण करना था, जिसके लिए 40000 रुपए मूल्य की भूमि पहले ही पट्टे पर ली जा चुकी थी।

थैली भेंट करने वाले श्री उपशम ने कहा कि यह चौथा मौका है जब वह निर्माण निधि के लिए यह थैली प्रस्तुत कर रहे हैं।

म्यूनिसिपल कामगार यूनियन के महासचिव डॉ. डी. वी. प्रधान जिन्होंने अध्यक्षता की थी, यह कहा कि उन्हें इस तथ्य का उल्लेख करते हुए दुख हो रहा है कि दलित वर्गों का गुजराती समूह यूनियन के प्राप्त क्रियाकलापों से प्राप्त पूरे लाभ उठा रहा है पर वह यूनियन के क्रियाकलापों के बोझ को बांटने को तैयार नहीं है।

उन्होंने यह भी घोषणा की कि म्यूनिसिपल कामगार महंगाई भत्ते के लिए अपनी मांग के समर्थन में 7 सितंबर को ऐक जुलूस का आयोजन करेंगे।[1]

● ● ●

' समाचार–पत्र की तारीख जो '20' दी गई है, वह हो सकता है गलत छप गई हो–संपादक

[1] दि बांबे क्रानिकल, 20 अगस्त, 1941

68

शिक्षित व्यक्तियों को सेना में शामिल होना चाहिए

''महार समुदाय के तत्वावधान में 'महार बटालियन' पर डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने 24 सितंबर, 1941 को रात के लगभग 9.15 पर आर. एम. भट्ट हाई स्कूल, परेल में एक सार्वजनिक भाषण दिया। लगभग 500 महारों ने इस बैठक में भाग लिया।''

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि यह बैठक इसलिए आयोजित की गई है कि उनके समुदाय के शिक्षित लोगों को सेना में भर्ती होने के लिए प्रोत्साहित किया जाए। भारत सरकार ने उन्हें यह वायदा किया था कि पिछले महायुद्ध में 111, महार बटालियन द्वारा दर्शाई गई जबरदस्त बहादुरी के कारण एक महार बटालियन स्थापित की जाएगी। उन्होंने यह भी कहा कि उपर्युक्त बटालियन इसलिए खत्म कर दी गई थी कि उस बटालियन के अधिकारी जो अधिकतर उच्च जाति के हिंदू और मुसलमान थे उन्होंने यह शिकायत की थी कि सिपाही सैनिक कार्य के लिए निरर्थक थे। वक्ता ने कहा कि इसी कारण उन्होंने सरकार से महार बटालियन में महार अधिकारी नियुक्त करने का आग्रह किया था। इसलिए उन्होंने श्रोताओं से आमतौर पर तथा विशेष रूप से उनसे जो शिक्षित थे, सेना में भर्ती होने का अनुरोध किया।

उनका भाषण रात को लगभग 10 बजे समाप्त हुआ।''[1]

इस विषय पर डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के भाषण में अतिरिक्त आयाम भी थे जिन्हें 'टाइम्स आफ इंडिया' द्वारा रिपोर्ट किया गया था। ये आयाम इस प्रकार थे:

''डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि इस तथ्य के बावजूद कि स्थानीय सरकार द्वारा प्रांत के नासिक, खानदेश तथा अन्य जिलों में कार्यान्वित 'वतनदार' प्रणाली के कारण उनके साथ कठोर व्यवहार किया गया था, पर यह ऐसा समय नहीं था जबकि महार अपना सहयोग रोक लें। पिछले युद्ध के बाद महार बटालियन का विघटन कर दिया गया था और जो महार सेना में भर्ती हुए थे, उनके लिए कोई व्यवस्था नहीं की गई। हाल ही में उन्होंने सरकार को एक अभ्यावेदन भेजा था कि महार बटालियन

[1] बी.एस.ए., 25 दिसंबर, 1941

स्थायी रूप से रखी जाए। समुदाय के हितों को जो सफलता प्राप्त हुई है उसका श्रेय बंबई के राज्यपाल और वायसराय को जाता है।

डॉ. अम्बेडकर ने इसी क्रम में आगे कहा कि अनेक महार कालेजों में पढ़ाई कर रहे हैं। उन्होंने उनसे अपनी पढ़ाई छोड़ने और सेना में भर्ती होने और अपने आपको सम्राट या वायसराय कमीशनों के लिए अर्हक होने की अपील की। सामान्य व्यक्ति बहुत बड़ी संख्या में पहले ही सेना में भर्ती हो चुके हैं तथा अधिकारी वर्ग के लिए शिक्षित महारों की कमी बनी हुई है। उन्होंने यह विश्वास व्यक्त किया कि समुदाय के शिक्षित युवक भर्ती होने के लिए तत्काल आगे आएंगे।[2]

●●●

[2] दि टाइम्स ऑफ इंडिया, 26 दिसंबर, 1941

69

मैं अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राण अर्पित कर दूंगा

''फरवरी, 1942 के मध्य में वागले हाल बंबई में स्प्रिंग व्याख्यान श्रृंखला पर चर्चा हुई थी। थाट्स आन पाकिस्तान पर चर्चा के लिए तीन दिन आरक्षित बसंत थे। चर्चा के समय डॉ. अम्बेडकर मौजूद थे। बैठक की अध्यक्षता आचार्य एम. वी. डोंडे ने की। डोंडे के सुस्पष्ट अनुरोध पर उनके मित्र, सहकर्मी तथा प्रांत में एक विख्यात शिक्षाविद् डॉ. अम्बेडकर चर्चा का उत्तर देने के लिए खड़े हुए।''

उन्होंने कहा वे अपने शब्दों का उन लोगों के लिए अपव्यय नहीं करेंगे जो यह मानते हैं कि पाकिस्तान एक विवादयोग्य विषय ही नहीं है। यदि ऐसा सोचा जाता है कि इस तरह की मांग अनुचित है तो उनके लिए पाकिस्तान का आगमन एक भयंकर स्थिति बन जाती। उन्होंने कहा कि लोगों को इतिहास भूलने के लिए कहना गलत है। इसी क्रम में उन्होंने यह कहा, ''वे इतिहास की रचना नहीं कर सकते, इतिहास को कौन भूले। भारतीय सेना में मुसलमानों की प्रबलता कम करने और सेना को सुरक्षित रखने के लिए विरोधी तत्वों से मुक्ति पाना बुद्धिमानी है। हम अपनी भूमि की रक्षा करेंगे। इस गलत धारणा में न रहें कि पाकिस्तान अपने मुस्लिम शासन को सारे भारतवर्ष में फैला सकेगा। हिंदू उसे धूल चटा देंगे। मैं यह स्वीकार करता हूं कि सवर्ण हिंदुओं के साथ कुछ मुद्दों पर मेरा झगड़ा है लेकिन मैं आपके समक्ष यह वायदा करता हूं कि मैं अपनी मातृभूमि की रक्षा के लिए अपने प्राण अर्पित कर दूंगा।'' इस पर जोरदार तालियों से उनके कथन की सराहना की गई।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 340—341

70

आपका उद्धार स्वयं आपके हाथों होना चाहिए

पुस्तकों से भरी हुई दीर्घा, जिसमें डॉ. बी. आर. अम्बेडकर पूरे रविवार अर्थात 26 अप्रैल, 1942 को व्यस्त रहे थे और अपने नए धमाके के लिए सामग्री इकट्ठा कर रहे थे, इस विषय पर धमाकेदार सामग्री के साथ उस दीर्घा से निकलते ही उन्होंने कहा कि ''हिंदुओं ने हमारे साथ क्या किया है''? और इसके साथ ही वे बमों अथवा सहयोग पर चर्चा करने के लिए शाम के समय कामगार मैदान बंबई चले गए।

यह मौका उनकी स्वर्ण जयंती समारोह का था, जिसमें एक थैली भेंट करने के लिए बहुत भारी भीड़ इकट्ठी हुई थी मानो कोई मेला आयोजित किया गया हो। लेकिन यह भीड़ 10000 कंठों से गूंजते हुए जयघोष करती वापस गई।

पहले उन्होंने घोषणा की कि ''मैं अपने जन्म दिन पर अब और कोई समारोह नहीं चाहता''।

बाद में डॉ. अम्बेडकर की सुखद शांत आवाज एक गूंज में बदल गई जब उन्होंने दहाड़ते हुए कहा'' अंग्रेज सरकार ने हमें अत्यंत अविश्वसनीय तरीके से अपमानित किया है। क्रिप्स के प्रस्ताव अंग्रेजों के कठिन दौर में कांग्रेस और लीग को रिझाने और दलित वर्गों की बलि लेने के लिए थे। कांग्रेस और लीग की मांगें पारस्परिक दृष्टि से तथा बलपूर्वक विरोधी थीं और अंग्रेजों ने दोनों की मांगें स्वीकार करके दोनों द्वारा पूर्ण अस्वीकृति सुनिश्चित कर ली थी। इसके लिए ईश्वर को धन्यवाद दिया जाना चाहिए।

''इससे दलित वर्गों को एक विनाश से बचा लिया गया है। लेकिन यह बुराई अपना सिर फिर खड़ा कर सकती है। यदि अगली बार ऐसा होता है तो आपको कार्रवाई करने के लिए तैयार रहना होगा। मैं यह नहीं बता सकता कि यह कार्रवाई संवैधानिक अथवा असंवैधानिक, हिंसात्मक अथवा अहिंसात्मक, शांतिपूर्ण अथवा क्षुब्धकारी——किस प्रकार की होगी।

कांग्रेस के लिए पेशकश

इसके बाद संवैधानिक परिपाटी के अनुयायी ने ऐसा संकेत दिया कि उनकी अगली जयंती शायद क्रांतिकारी रूप में मनाई जाएगी।

उन्होंने घोषणा की, ''आपको संविधान सभा का दोबारा सामना करना पड़ सकता है। उस स्थिति में आपका स्थान संविधान सभा के भीतर नहीं होगा। आपको वहां कोई स्थान नहीं मिलेगा। उस समय आपका न्यायसंगत स्थान आपका अपना मुख्यालय होगा, जिसमें आप बमों का निर्माण कर रहे होंगे। जी हां, मेरा मतलब बमों से है। इसके संबंध में कोई भ्रांति नहीं होनी चाहिए। हम लोग कई अन्य लोगों की तुलना में हैंडग्रेनेड को अच्छी तरह संभाल सकते हैं।

कांग्रेस जिसके विरुद्ध वे 20 वर्ष से लड़ रहे हैं उसके लिए उन्होंने एक अच्छी पेशकश की, ''आप स्वराज के लिए लड़ रहे हैं। मैं आपके साथ लड़ने को तैयार हूं। और मैं आपको यह विश्वास दिलाता हूं कि मैं आपसे बेहतर लड़ाई लड़ सकता हूं। मेरी केवल एक शर्त है। मुझे बताएं स्वराज में मेरे को क्या हिस्सा मिलेगा। यदि आप मुझे यह नहीं बताना चाहते और मेरी पीठ पीछे अंग्रेजों के साथ मेल–मिलाप करते हैं तो मुझे आप दोनों की कोई परवाह नहीं है।

उपस्थित श्रोताओं के साथ डॉ. अम्बेडकर ने वैसे ही बात की जैसे कोई पिता अपने बच्चों के साथ करता है। उन्होंने पिछले 23 वर्षों की अवधि से जुड़ी हुई कहानियों और घटनाओं का उल्लेख किया। वह अतीत का स्मरण करने की मनःस्थिति में थे, कोल्हापुर में उन्होंने जिस पहली सार्वजनिक बैठक को संबोधित किया था उसके घटनाक्रम का उल्लेख किया, जहां उन्हें स्वयं अपने लोगों से, जो घृणित परिपाटियों को मूल्यवान विरासत, उत्पीड़न को जन्मसिद्ध अधिकार मानते थे, का विरोध सहना पड़ा था।

और जैसे–जैसे डॉ. अम्बेडकर ने इन परिपाटियों के ब्यौरों का वर्णन किया तो मंच के निकट बैठी हुई रुचिपूर्ण परिधानों से सुसज्जित युवतियां अपनी झुर्रियों भरी बड़ी उम्र की माताओं पर हंसने लगी। और माताएं उन बातों को याद करके शर्मसार होने लगीं जिन्हें उन्होंने इतने लंबे वर्षों तक व्यवहार में लिया था और जिन्हें अब इतनी अनिच्छा से त्यागना पड़ा था। उन्होंने कहा–

''आज आप उन सभी बुराइयों से मुक्त हो चुके हैं। प्रातःकाल की सफेद बर्फ की तरह से आप अब अंधविश्वासों में लिप्त उच्च जातियों के पुरुषों और महिलाओं के समक्ष उपस्थित हैंः जो जाति के मराठा और भंडारी हैं सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से आपसे मीलों पिछड़े हुए हैं।

''जब मैंने अपने सार्वजनिक जीवन की शुरूआत की और उसके बहुत देर बाद तक मैं ऐसा सोचता था कि अच्छा हो अथवा बुरा हम हिंदू समाज के एक अंग हैं।

''मैं बहुत लंबे समय तक यह सोचता था कि हम हिंदू समाज को उसकी बुराइयों से मुक्त कर सकते हैं और समानता के आधार पर दलित वर्गों को उसमें शामिल कर सकते हैं। इसी उद्‌देश्य से *महार चावदार टैंक सत्याग्रह तथा नासिक मंदिर प्रवेश सत्याग्रह प्रेरित हुए*। इसी उद्‌देश्य को लेकर हमने *मनु स्मृति* जला दी और बड़े पैमाने पर जनेऊ संस्कार किए। पर अनुभव ने मुझे बढ़िया सिखाया है। आज की तारीख में मैं इस बात से पूरी तरह आश्वस्त हूं कि दलित वर्गों के लिए हिंदुओं के बीच समानता जैसी कोई बात नहीं हो सकती, क्योंकि हिंदुत्व की बुनियाद असमानता पर टिकी है।

''हम अब हिंदू समाज का अंग बनने के इच्छुक नहीं हैं।

''तो हमें क्या करना चाहिए? इस संबंध में हम उचित समय पर निर्णय लेंगे। इस घड़ी तो मैं केवल यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि हम किसी भी स्थिति में हिंदू समाज का अंग नहीं बन सकते। हम इस देश को चलाने में सरकार के भागीदार बनना चाहते हैं। हम राजनैतिक अधिकारों का बंटवारा चाहते हैं। हमारे राजनैतिक अधिकारों को हिंदुओं से अलग सुस्पष्ट मान्यता मिलनी चाहिए।

''यदि हिंदू लोग उन अधिकारों को मानने के लिए तैयार हों, तो देश की स्वतंत्रता के लिए साझा संघर्ष में मैं उनका साथ देने को तैयार हूं।''

डॉ. अम्बेडकर वीरपूजक नहीं हैं और वे यह भी नहीं चाहते कि उनके अनुयायी ऐसा करें क्योंकि वे वीरपूजा की बुराइयों और देश के भीतर वीरपूजा ने जो तबाही पैदा की है उसको लेकर पूरी तरह सचेत हैं।

शांतिपूर्वक किंतु आग्रहपूर्ण शैली में डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, ''आप लगभग पिछले 15 वर्ष से मेरा जन्म दिन मनाते आए हैं। मैंने कभी उनमें भाग नहीं लिया। मैं सदैव उसका विरोधी रहा हूं। अब आपने मेरी स्वर्ण जयंती मनाई है; इसे ही काफी समझ लीजिए। अब आगे और कोई समारोह न मनाएं।

''कारण, नेताओं के लिए अत्यधिक सम्मान लोगों के बीच आत्मविश्वास कम कर देता है, नेताविहीन होने, कठिन घड़ी में अथवा बेईमान नेताओं से घिरे होने पर वे लाचार हो जाते हैं।

''डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''हिंदू समाज की गिरावट और इसकी गिरी हुई स्थिति के बने रहने का एक बड़ा कारण कष्ष्ण का इस आशय का आदेश है कि जब कभी दुविधा पेश हो तो उन्हें अपने आपको निराशा की संशय दलदल से बचने के लिए उनके अवतार की तलाश करनी चाहिए। इसी बात ने कठिनाई के समय

हिंदू समुदाय को असहाय बना दिया है।

''मैं यह नहीं चाहता कि आप इस तरह की विनाशकारी शिक्षा ग्रहण करें। मैं यह नहीं चाहता कि आप अपने उद्धार के लिए किसी एक व्यक्तित्व पर निर्भर हों। आपका उद्धार आपके अपने प्रयासों के माध्यम से आपके अपने हाथों से होना चाहिए।''[1]

'अंत में डॉ. अम्बेडकर ने अंग्रेज सरकार और साथ ही हिंदुओं के लिए एक चेतावनी दी। उन्होंने कहा– ''अंग्रेज सरकार को यह याद रखना चाहिए कि शक्ति के अंतरण के समय दलित वर्गों को उपयुक्त गारंटी दी जाए। यदि वे ऐसा नहीं करते तो दलित वर्ग उनके पास जितनी भी शक्ति है उसके बल पर अंग्रेजों से लड़ेंगे। यदि हिंदू लोग दलित वर्गों को समुचित गारंटी प्रदान करते हैं, तो वे उनके साथ कंधे से कंधा मिलाकर युद्ध लड़ेंगे। अन्यथा उनके साथ कोई समझौता नहीं हो पाएगा।

डॉ. अम्बेडकर के 50वें जन्मदिन को मनाने के प्रयोजन से गठित जुबली समिति ने कामगार मैदान में उनके अनुयायियों द्वारा आयोजित एक विशाल बैठक में उसी शाम उन्हें 580 रुपए की थैली भेंट की। तब डॉ. एम. वी. डोंडे, म्यूनिसिपल कार्पोरेटर ने अध्यक्षता की।''[2]

●●●

---

[1] बांबे सेंटीनल (बांबे), 28 अप्रैल, 1942

[2] दि बांबे क्रानिकल, 27 अप्रैल, 1942

71

मेरे घर के दरवाजे मित्रों के लिए हमेशा खुले रहेंगे

2 जुलाई, 1942 को जारी राजकीय घोषणा के अनुसार डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को भारत के वायसराय की कार्यकारी परिषद में शामिल किया गया।

''डॉ. बी. आर. अम्बेडकर राष्ट्रीय सुरक्षा परिषद की एक बैठक में उपस्थिति होने के लिए 5 जुलाई, 1942 को तत्काल दिल्ली चले गए और 11 जुलाई को बंबई वापस लौटे।

लौटने पर डॉ. अम्बेडकर ने अपने मित्रों और प्रशंसकों द्वारा रेडियो क्लब, बंबई में दिए गए एक रात्रि भोज में भाग लिया। इस अवसर पर बोलते हुए आचार्य एम. वी. डोंडे ने बीते हुए उन धैर्य भरे वर्षों का जिक्र किया जिसमें वे उनके साथ रहे थे, और आशा की हमारा यह नेता अपने लोगों की दासता को समाप्त करेगा और भारत के श्रमिक वर्गों की स्थितियों में सुधार लाने में सफल होगा।

उत्तर में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहा कि, ''उनका जन्म गरीबों में हुआ था, उनका पालन–पोषण उन्हीं के बीच हुआ था वे उन्हीं के बीच रहे थे, भीगे फर्श पर चिथड़ों में वे उन्हीं की तरह सोए थे और अपने लोगों के दुख को बांटा था। उन्होंने अपने मित्रों और शेष विश्व से यह वादा किया कि वे अपने दृष्टिकोण को पूर्णतः अपरिवर्तित रखेंगे और आगे कहा कि नई दिल्ली में उनके घर के दरवाजे उनके मित्रों के लिए हमेशा खुले रहेंगे।''[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 347–349

72

समाज के निम्नतम वर्ग का संघर्ष कामगार वर्गों के सभी लोगों की सहायता करेगा

''12 जुलाई, 1942 को इंडिपेंडेंट लेबर पार्टी और बंबई म्यूनिसिपल कामगार यूनियन ने अपने नेता डॉ. बी. आर. अंबेडकर को बधाई देने के लिए एक सभा का आयोजन किया।

वहाँ उन्होंने श्रमिकों को बताया कि हालांकि कार्यपालिका का मुख्य कार्य देश की सुरक्षा करना है, तथापि वे क्या पूर्ण कर सकेंगे यह पूरी तरह से परिषद में उनके मित्रों पर निर्भर करेगा।

कोंकण जिले और राज्यों के किसानों द्वारा आर. एम. भट्ट हाई स्कूल, बंबई में आयोजित एक अन्य बैठक में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने यह घोषणा की कि वे इस लड़ाई में कभी भी आत्मसमर्पण नहीं करेंगे, वे भारत के कामगार वर्गों के हितों की रक्षा करने और उन्हें आगे बढ़ाने के लिए लड़ते रहेंगे। लेकिन उन्होंने कहा कि वे प्रत्येक छोटे से छोटे मतभेद के मुद्दे पर अपने त्यागपत्र से मंत्रिमंडल के अपने साथियों को धमकी नहीं देंगे।

अपने ऊपर लगाए गए एक आरोप, कि दलित वर्गों के लिए एक पृथक संगठन सामान्य रूप से श्रमिक वर्ग की हितों और एकता के लिए पूर्वग्रह भरा होगा, का उत्तर देते हुए उन्होंने टिप्पणी की कि समाज के निम्नतम स्तर के लिए किया जाने वाला संघर्ष श्रमिक वर्ग के सभी उपवर्ग की बेहतरी में सहायता करेगा क्योंकि जब किसी संरचना की नींव का सबसे निचला पत्थर हिलाया जाता है तो, जो ऊपर की स्थितियों में होते हैं उनका हिलना अवश्यंभावी होता है। उन्होंने उल्लेख किया कि हिंदू जाति के श्रमिकों ने दलित वर्गों के श्रमिकों के विरुद्ध अपने पूर्वग्रह को समाप्त नहीं किया है।

समारोह की अध्यक्षता करने वाले अनंतराव चित्रे ने डॉ. अम्बेडकर से अपने प्रभाव और श्रमिक आंदोलन के क्रियाकलाप के क्षेत्र को बढ़ाने का आग्रह किया ताकि गैर दलित वर्ग के श्रमिक वर्गों को भी शामिल किया जा सके और भारत के समस्त मेहनतकश लोगों को उनका नेतृत्व मिल सके।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 349

73

जब नींव का सबसे निचला पत्थर हटाया जाता है, तो ऊपरवाले भी हिलने लगते हैं

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने पिछली रात* को भट्ट हाई स्कूल, बंबई में रत्नागिरी और कोलाबा जिलों के किसानों और दलित वर्ग के सदस्यों द्वारा आयोजित बैठक में दिए गए बधाई संबंधी भाषणों के उत्तर में कहा,

''मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मैं इस लड़ाई में आत्मसमर्पण नहीं करूंगा, मैं कार्यपालिका परिषद में भारत के कामगार वर्ग के हितों की रक्षा करने और उन्हें आगे बढ़ाने के लिए लड़ता रहूंगा। आप इस संबंध में मुझ पर निर्भर हो सकते हैं। मैं यह भी स्पष्ट करना चाहता हूं कि मैं अपनी जेब में अपना त्यागपत्र तैयार रखने और प्रत्येक छोटे से छोटे मतभेद के बिंदु पर अपने सहयोगियों के चेहरों पर इसे लहराने जैसा बचपना भी नहीं करूंगा।''

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, ''मैं इस बात को लेकर उत्सुक हूं कि दलित वर्ग आंदोलन को अन्य समुदायों के कामगार वर्गों के साथ एक साझा मोर्चा बनाना चाहिए।

''इसी उद्देश्य के साथ मैं पूरे दस वर्ष तक गैर–ब्राह्मण दल से चिपका रहा। इस आशा में कि कभी न कभी यह महान गैर ब्राह्मण समुदाय के मेहनतकश लोगों की स्वतंत्रता का संघर्ष अपने महान अभियान में पूर्ण ऊंचाई तक पहुंचेगा।

पार्टी में लोकतंत्र के महान सिद्धांत के बीज हैं। दुर्भाग्य से इसके नेताओं ने अपने कर्तव्यों और दायित्वों के महत्व को नहीं समझा और सरकार और कांग्रेस के संरक्षण के दोहरे प्रभाव के अंतर्गत इसको टुकड़ों में टूट जाने दिया।

अगर वे अभी भी इस मामले में कुछ करते हैं तो मैं उनका स्वागत करूंगा। मैं बिल्कुल इस बात का आग्रह नहीं करूंगा कि गैर ब्राह्मण श्रमिक व्यक्ति हमारी

---

*दिनांक 16 जुलाई, 1942 के बी.एस.ए. और 21 जुलाई, 1942 के बांबे क्रानिकल के अनुसार यह बैठक 15 जुलाई, 1942 को आयोजित की गई थी। बांबे सेटिनल की '14' जुलाई स्रोत सामग्री में गलती से पुनः मुद्रित हो गई – संपादक।

पार्टी में शामिल हों। यदि वे चाहते हैं तो उन्हें अपनी पार्टी बनाने दिया जाए; लेकिन हम ब्राह्मणों, पूंजीपतियों, भू–स्वामियों और अन्य शोषक वर्गों के विरुद्ध अपने साझे संघर्ष में एक साझा मोर्चा निश्चित तौर पर बना सकते हैं। पार्टी को तोड़कर गैर ब्राह्मणों ने एक तरह से राजनैतिक आत्महत्या कर ली है।

''जहां तक मेरा संबंध है मैं ऐसी किसी आत्मघाती नीति का अनुसरण करने का इच्छुक नहीं हूं। दलित वर्गों का अपना राजनैतिक संगठन जारी रहेगा।

''कुछ लोग यह शिकायत करते हैं कि दलित वर्गों की एक पष्थक पार्टी का संगठन सामान्य रूप से कार्यकारी वर्गों के हितों को नुकसान पहुंचाएगा।

यह ऐसा कुछ नहीं करेगा। बल्कि इसके विपरीत श्रमिक वर्ग के निम्नतम स्तर से संघठित हमारे संघर्ष का कामगार वर्ग की अन्य सभी श्रेणियों के मेल में सहायक सिद्ध होना तय है।

यदि किसी संरचना में इसके सबसे निचले पत्थर को उसके स्थान से हटाया जाता है तो ऊपर के बाकी पत्थरों का भी अपने स्थान से हिलना तय है। वहीं दूसरी ओर हिंदू जाति का कोई श्रमिक संगठन हिंदुओं की सहायता करेगा यह तय नहीं है।

इसके विपरीत यदि उसको सही दिशा में मार्गदर्शन नहीं मिला तो यह दलित वर्गों के लिए हानिकारक भी सिद्ध हो सकता है। हिंदू जाति का कोई संगठन दलित वर्ग के श्रमिकों के अधिकारों के महत्व को नहीं पहचानता। यह उनके अधिकारों को रौंद भी सकता है जैसाकि विगत में अनेक मामलों में हो चुका है।

एक उदाहरण मेरे इस नजरिए को सिद्ध करने के लिए पर्याप्त होगा। 1929 में बांबे टेक्सटाइल्स मिल में एक लंबी हड़ताल हुई। हड़ताल के दौरान मैंने हड़ताल के नेताओं से हिंदू जाति द्वारा मिलकर कुछ विभागों में कार्य कर रहे दलित वर्गों के व्यक्तियों पर से प्रतिबंध हटाने के लिए कुछ करने को कहा। श्रमिक नेताओं ने इस संबंध में एक सीधा–साधा संकल्प जारी करने और इसे फासेट समिति को अग्रेषित करने के अतिरिक्त महीनों तक मेरे सुझाव पर कोई कार्रवाई नहीं की। पुनश्च, समिति ने भी इस मामले में कोई कार्रवाई नहीं की।

वहीं दूसरी ओर खोती उन्मूलन संबंधी आंदोलन हमारे द्वारा शुरू किया गया। प्रारंभ में यह अभियान दलित वर्गों के हितों के लिए शुरू किया गया था लेकिन यह स्वतः खोती भूमियों पर हिंदू जाति के कार्यकर्ताओं के लिए सहायक सिद्ध हुआ। इस प्रकार के उदाहरण ''अनंतकाल'' तक सामने आ सकते हैं।

"मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूं कि हमारा वर्गीय आंदोलन अन्य वर्गों के लिए हानिकारक नहीं है। इसके अतिरिक्त हम श्रमिकों के अन्य वर्गों के साझे हितों के लिए हमेशा तैयार हैं।"

श्री ए. वी. चित्रे ने अपनी अध्यक्षीय टिप्पणी में डॉ. अम्बेडकर से अपने नियंत्रण में श्रमिक आंदोलन के क्रियाकलापों के क्षेत्र को बढ़ाने की आवश्यकता संबंधी आग्रह किया ताकि गैर–दलित वर्गों को भी शामिल किया जा सके। उन्होंने कहा कि वह "डॉ. अम्बेडकर को केवल दलित वर्गों के नेता के रूप में नहीं बल्कि भारत के समस्त मेहनतकश लोगों के नेता के रूप में देखना चाहते हैं।

अन्य वक्ताओं में मेसर्स सुरेन्द्रनाथ टिपणिस, नारायण नागु पाटिल, देवराव नाइक, वादवलकर और गायकवाड़ भी शामिल थे।

● ● ●

[1] दि बांबे सेटिनल, 14 जुलाई, 1942

74

यदि लोकतंत्र समाप्त होता है तो यह हमारा विनाश होगा

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन के तीसरे सत्र में निर्वाचित अध्यक्ष, राव बहादुर एन. शिवराज, एमएलए केन्द्रीय धारा सभा और डॉ. बी. आर. अम्बेडकर 18 जुलाई, 1942 को प्रातः 9 बजे नागपुर पहुंचे। रेलवे स्टेशन पर उनका स्वागत, समिति के अध्यक्ष और सदस्यों द्वारा स्वागत किया गया। स्वागत समिति के लगभग सभी सदस्य और प्रतिनिधि भी प्लेटफार्म पर मौजूद थे और उन्होंने ''अंबेडकर जिंदाबाद'' के नारों के बीच निर्वाचित अध्यक्ष और डॉ. बी. आर. अम्बेडकर का हार्दिक स्वागत किया। निर्वाचित अध्यक्ष और डॉ. अंबेडकर को मालाओं से लाद दिया गया। इसके पश्चात एक जुलूस की शक्ल में माननीय अतिथियों को रेलवे स्टेशन के सामने लान में ले जाया गया जहां 50000 से अधिक लोग डॉ. अम्बेडकर और निर्वाचित अध्यक्ष की झलक पाने के लिए एकत्र हुए थे। लान पर उनके पहुंचते ही उनका स्वागत हर्ष और ''अम्बेडकर की जय'' के कान फाड़ देने वाले नारों के साथ किया गया। लान के साथ प्रांतीय समता सैनिक दल के 5000 वर्दीधारी सैनिकों द्वारा गार्ड आफ आनर दिया गया। सैनिक दल के बैंड ने उपयुक्त धुनें बजाईं। गार्ड आफ आनर का निरीक्षण करने के पश्चात निर्वाचित अध्यक्ष और डॉ. बी. आर. अंबेडकर को एक जुलूस के रूप में कांफ्रेंस पंडाल ले जाया गया, जिनके पीछे समता सैनिक दल का एक मील लंबा दल चल रहा था जो अपने बैंड लिए हुए था और उनके पीछे सम्मेलन के लिए आए आगंतुक और प्रतिनिधि हजारों की संख्या में चल रहे थे। इस जुलूस को नागपुर की जनता बहुत दिनों तक याद रखेगी, क्योंकि ऐसा पहले कभी नहीं देखा गया था।

मार्ग में विजय के प्रतीक तोरण खड़े किए गए थे और उनके नाम ''अम्बेडकर गेट'', ''हरदास गेट'', ''कल्लू अहीरे गेट'', ''रमाबाई अम्बेडकर गेट'' इत्यादि रखे गए थे। मोहन पार्क होटल जहां निर्वाचित अध्यक्ष और डॉ. अम्बेडकर को अन्य प्रतिनिधियों के साथ ठहराया गया था, के सामने सैनिकों ने सड़क के दोनों ओर पंक्तियां बनाईं और लाठियों का आर्क बना दिया जिसके नीचे से माननीय नेता गुजरे। नागपुर में 18 जुलाई से 20 जुलाई, 1942 तक तीन सम्मेलन आयोजित हुए वे थे :–

(1) अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन, जिसकी अध्यक्षता राव बहादुर एन. शिवराज, बी.ए., बी.एल., एमएलए (केन्द्र) ने की;

(2) दलित वर्ग महिला सम्मेलन, जिसकी अध्यक्षता अमरावती की श्रीमती डोंगरे ने की; और

(3) समता सैनिक दल सम्मेलन, जिसकी अध्यक्षता श्री गोपाल सिंह, एमबीई, एमएलए (पंजाब) द्वारा की गई।

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन तीन बातों के लिए उल्लेखनीय था। यह पुरुषों और महिलाओं की रिकार्ड उपस्थिति के कारण उल्लेखनीय था। इस सत्र में कम से कम 75000 लोग उपस्थित थे, जिनमें कम से कम 20000 महिलाएं थीं। इसके अतिरिक्त इसमें भारत के लगभग सभी प्रांतों के दलित वर्गों के प्रतिनिधि आए थे।

इस सम्मेलन में पारित संकल्प वह दूसरी बात थी जिसके लिए यह सम्मेलन सदैव स्मरणीय रहेगा। इन संकल्पों में पहली बार दलित वर्गों की राजनीतिक मांगों का स्पष्ट और सकारात्मक उद्घोष हुआ। जो कोई भी इनको पढ़ता उसे इस बात का कोई संदेह न रहता कि अछूतों की राजनैतिक मांगें क्या हैं। जैसा कुछ समाचार–पत्रों के संवाददाताओं ने कहा कि इस सम्मेलन द्वारा पारित संकल्पों ने, मांगों के स्वरूप और उनके शब्दों की सुनिश्चितता दोनों ने ही, दलित वर्गों का पाकिस्तान बना दिया है।

तीसरी बात जिसके लिए यह सम्मेलन स्मरणीय रहेगा वह है अखिल भारतीय संगठन स्थापित करने के लिए इस सम्मेलन द्वारा जारी किया गया संकल्प, जिसे अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिसंघ कहा जाएगा। यह संगठन, जो भारत के दलित वर्गों के एकमात्र प्रवक्ता के रूप में कार्य करेगा, और इस सम्मेलन ने जो एक निश्चित निर्णय लिया है कि अन्य सभी छोटे और प्रांतीय संगठनों को इस एक संगठन में मिला दिया जाएगा उसकी भारत के विभिन्न प्रांतों में प्रांतीय शाखाएं होंगी।

इस सम्मेलन द्वारा पूरे किए गए कार्य के दृष्टिकोण से इस संबंध में कोई संदेह नहीं है कि इस सम्मेलन ने दलित वर्गों के लिए एक नया दृष्टिकोण प्रस्तुत किया है और अछूतों के आंदोलन को एक नई दिशा दी है।

स्वागत समिति की कार्रवाइयों के इस रिकार्ड में अन्य दोनों सम्मेलनों की कार्यवाही को भी शामिल करने का निर्णय भी लिया गया, जो इस मुख्य राजनीतिक सम्मेलन के एक भाग के रूप में इसी पंडाल में आयोजित किए गए थे और जो संपूर्ण भारत में अछूतों में रुचि और जोश जागृत करेंगे। इससे वे इस बात का अनुभव करेंगे कि किस प्रकार से स्वैच्छिक संगठन और महिला संगठन सामाजिक और राजनीतिक दोनों मामलों में अछूतों के जीवन को मजबूत करने के लिए प्रगामी रूप से अपना प्रभाव महसूस करा रहे हैं।

● ● ●

नागपुर में आयोजित अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन

18 और 19 जुलाई, 1942

पहले दिन की कार्यवाही

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन का तीसरा सत्र नागपुर में मोहन पार्क में विशेष रूप से तैयार किए गए एक बहुत बड़े पंडाल में 18 जुलाई, 1942 को अपराह्न 3.30 बजे राव बहादुर एन. शिवराज, एमएलए (केन्द्र) की अध्यक्षता में प्रारंभ हुआ। इस सम्मेलन में संपूर्ण भारत से प्रतिनिधि और 60000 से ज्यादा आगंतुक जिनमें विशिष्ट आगंतुक तथा लगभग 20000 महिला आंगतुक भी शामिल थीं, उपस्थित हुए। महिला आगंतुकों की भारी संख्या इस सम्मेलन की एक दर्शनीय विशेषता थी।

निर्वाचित अध्यक्ष और डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को स्वागत समिति के अध्यक्ष द्वारा उनकी सीटों पर पहुंचाया गया। निर्वाचित अध्यक्ष, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर और अन्य प्रतिनिधियों द्वारा अपने आसन ग्रहण कर लेने के पश्चात स्वागत गीतों के गायन के साथ कार्यवाहियां प्रारंभ हुईं।

स्वागत गीतों के गायन के पश्चात श्री जी. टी. मेशराम, अध्यक्ष, स्वागत समिति ने भाषण दिया।

एच. एल. कोसारे ने महासचिव की ओर से रिपोर्ट को पढ़ने के पश्चात कहा, ''हमें पूरे भारत से सहानुभूति के संदेश प्राप्त हुए हैं। इन सभी को पढ़ने में बहुत समय लगेगा। इसलिए मैं केवल उनके नाम पढ़ता हूं जिनसे संदेश प्राप्त हुए हैं।''

बंगाल	1.	श्री यू. एन. एडबोर, एम.ए.बी.एल., एम.एल.ए.
	2.	श्री ए. माजी, एम.एल.ए.
	3.	श्री बी. बी. मंडल, बी. एल., एम.एल.ए.
	4.	माननीय श्री एन. बर्मन, मंत्री
मद्रास	1.	राव साहब वी. जे. मुन्निस्वामी पिल्लई, एम.एल.ए.
	2.	श्री ई. कन्नन, एम.एल.ए.
	3.	श्री आर. वीरियन, कोयम्बटूर
	4.	स्वामी सहजानंद, एम.एल.ए. चिदंबरम
बम्बई	1.	श्री एस. एन. माने, बैरिस्टर–एट–ला, बेलगांव

2. पूना डिप्रेस्ड क्लास कालेज के छात्र
3. श्री सावंत, एम.एल.ए., सतारा जिला
4. बलभीम संघ, धूलिया
5. समतावादी दलित मंडल, धूलिया
6. श्री एस. एम. दिखाले, पूना
7. श्री आर. एस. सालुंके, भोर स्टेट दलित प्रजा
8. श्री आर. जी. खंडाले, दौंड
9. श्री टी. एस. धूतरे, थाना
10. राझा–बांबे
11. दि साउथ इंडियन आदिद्रविड़ यूथ लीग
12. दि तिरुनेलवाडी जिला 5 बी. आदि द्रविड़ कांफ्रेंस
13. श्री एम. जी. पारमेर, बी.ए, डी.पी.ए., एफ.आर.सी.एस., बीजापुर (एन.जी.)
14. श्री रामजी भाई भानाभाई, अहमदाबाद
15. श्री सोमाभाई सुंदरजी, अहमदाबाद
16. श्री साधु प्रेमदास, अहमदाबाद
17. श्री आत्माराम इच्यारामम सोलंकी, अहमदाबाद
18. श्री एस. पी. चौहान मेघवाल, इंडिपेंडेंट लीग (बम्बई)

पंजाब
1. श्री भगत हंसराज, एमएलए
2. श्री सुखलाल, लाहौर
3. श्री आर. एल. भोनोडिया, लाहौर

उत्तर प्रदेश
1. श्री रामचंद्र, इलाहाबाद
2. राय बहादुर, हरिप्रसाद टमटा, अल्मोड़ा
3. श्री राधे लाल व्यास, बरेली
4. श्री गंगाराम जी. धानुक, इटावा

हैदराबाद
1. श्री बी. एस. मोरे, औरंगाबाद

श्री जी. टी. मेशराम ने कहा कि श्री डी. जी. जाधव, बी.ए., एलएल.बी., एमएलए, जलगांव, ईस्ट खानदेश (बंबई) अब हमारे निर्वाचित अध्यक्ष से अध्यक्षीय आसन ग्रहण करने को कहेंगे।

तदनुसार डी. जी. जाधव, आर. एल. बिस्वास, बी.ए., बी.एल., एमएलए (बंगाल), राय साहेब शामलाल, पूर्व एमएलसी (इलाहाबाद), उत्तर प्रदेश; के. एच. शेंद्रे, बी.ए., एलएल.बी, नागपुर, (मध्य प्रांत); गोपाल सिंह, एमबीई, एमएलए; पंजाब सरकार के संसदीय सचिव, कुर्मियाह, बी.ए., बी.एल., एमएलए (मद्रास, आंध्र); ए. डी. राय, एमएलसी (बंगाल) और पी. एन. राजभोज, पूना (बम्बई) ने इस संकल्प को प्रस्तावित, अनुमोदित और समर्थित किया। इसके पश्चात जी. टी. मेशराम ने कहा, ''अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन के तीसरे सत्र के निर्वाचित अध्यक्ष राव बहादुर एन. शिवराज के द्वारा अध्यक्ष का आसन ग्रहण करने संबंधी इस संकल्प को इस सम्मेलन में हर प्रकार से विधिवत प्रस्तुत, नियमपूर्वक अनुमोदित और समर्थित किया गया है। अब मैं इस पर मतदान कराता हूं। वे जो इसके पक्ष में हैं अपने हाथ उठाकर अपना समर्थन को दर्शाएंगे। (सभी ने हाथ उठा दिया)। यदि कोई विरुद्ध है तो वह अपना हाथ उठाकर अपना अनुमोदन को दर्शाएगा। कोई विरोध नहीं है, अतः संकल्प सर्वसम्मति रूप से पारित हो गया है। अब मैं राव बहादुर एन. शिवराज से अध्यक्ष पद ग्रहण करने का अनुरोध करता हूं। राव बहादुर एन. शिवराज ने हर्ष ध्वनि के बीच अध्यक्ष की कुर्सी संभाली और स्वागत समिति के अध्यक्ष द्वारा उनको हार पहनाया गया।''

इसके पश्चात राव बहादुर एन. शिवराज हर्ष ध्वनि के बीच सम्मेलन को संबोधित करने को उठे।

अपने अध्यक्षीय भाषण की समाप्ति होने के पश्चात राव बहादुर एन. शिवराज ने घोषणा की, विषय समिति की बैठक मोहन पार्क होटल के हाल में प्रातः 9 बजे होगी। सभी प्रतिनिधि जो यहां आए हैं, वे विषय समिति गठित करेंगे। आज डॉ. अम्बेडकर को सुनने की आपकी बड़ी इच्छा को ध्यान में रखते हुए मैं डॉ. अम्बेडकर से विषय समिति की बैठक के पूर्व आपको संबोधित करने के लिए अनुरोध करता हूं। स्वागत समिति के अध्यक्ष इस बात को आपको मराठी भाषा में स्पष्ट करेंगे।

तब श्री जी. टी. मेशराम ने कहा, अध्यक्ष की इच्छा के अनुसार मुझे यह घोषित करने में अत्यंत प्रसन्नता हो रही है कि हमारे महान नेता डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने रात भर की यात्रा और अपने खराब गले के बावजूद आज पहले अंग्रेजी और फिर मराठी में बोलने के लिए अपनी सहमति दे दी है। आपको यह जान लेना चाहिए कि पिछली रात जहां कहीं भी उनकी ट्रेन रुकती थी, हमारे लोग भारी संख्या में उनके स्वागत के लिए पहुंच जाते थे इसलिए वे रास्ते में बिल्कुल सो नहीं सके। आपको बिल्कुल शांति रखनी होगी ताकि उनके गले पर अधिक दबाव न पड़े।

इसके बाद डॉ. बी. आर. अम्बेडकर जब बोलने के लिए खड़े हुए तो करतल ध्वनि से देर तक उनका उत्साहवर्द्धन किया गया।

डॉ. अम्बेडकर का भाषण

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने कहाः

अध्यक्ष महोदय, देवियो और सज्जनो,

इस सम्मेलन में किसी के सामने आने वाली पहली और प्रारंभिक समस्या भाषा की है। इस बड़ी सभा में अधिकांश व्यक्ति मराठी बोलने वाले क्षेत्रों से आए हैं, जिन्हें इस सम्मेलन की कार्यवाही को समझाने के लिए मराठी में बोलना आवश्यक है। इस सम्मेलन में भारी संख्या में आए मराठी बोलने वाले श्रोताओं के अतिरिक्त अन्य भाषा बोलने वाले प्रांतों से आए हुए अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि भी मौजूद हैं। हमारे बीच में अन्य प्रांतों से आए हुए अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि हैं। मैं देखता हूं कि कुछ बंगाल से, बिहार से, मद्रास से, आंध्र से, पंजाब से और अनेक अन्य स्थानों से आए हुए लोग यहां उपस्थित हैं। यह स्वभाविक है कि यदि उन्हें हमारी कार्यवाहियों के बारे में बताना है तो अंग्रेजी में बोलना आवश्यक है। इस कठिनाई से बचने के लिए मैंने दो बार बोलने का निर्णय लिया है – एक बार अंग्रेजी में और फिर मराठी में जिससे कि दोनों वर्गों के लोग यह जान सके कि मैं क्या कहना चाहता हूं। आज मैं अंग्रेजी में बोलने का प्रस्ताव रखता हूं। कल मैं आपको मराठी में भाषण दूंगा।

मैं आपको यह बताना चाहूंगा कि किस प्रकार से यह सम्मेलन आयोजित करने का विचार उत्पन्न हुआ। जैसाकि आपको याद होगा पिछली अप्रैल में मुझे सर स्ट्रैफर्ड क्रिप्स से मिलने के लिए दिल्ली बुलाया गया था जोकि हिज मेजेस्टी सरकार के एक एजेंट के रूप में संवैधानिक परिवर्तनों के प्रस्ताव के साथ भारत आए थे और जिन्हें उन प्रस्तावों को स्वीकार करने के लिए भारत में विभिन्न राजनैतिक दलों से बातचीत करने का दायित्व सौंपा गया था। दिल्ली जाने के पहले मैंने विचार–विमर्श के लिए भारत के विभिन्न प्रांतों में अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधियों को दिल्ली आमंत्रित किया था। जब मैंने उनको सर स्ट्रैफर्ड क्रिप्स के साथ हुई मेरी बातचीत के परिणाम बताए तो हम सभी ने यह महसूस किया कि सर स्ट्रैफर्ड क्रिप्स अपने साथ अनुसूचित जातियों के हितों के लिए एक खतरनाक कार्यक्रम लाए थे। मैंने क्रिप्स प्रस्तावों पर अपने दृष्टिकोण प्रेस को व्यक्त किए थे जोकि, मैं आशा करता हूं, आप सभी ने पढ़े होंगे। लेकिन ऐसा महसूस किया गया कि सारे भारत से अनुसूचित जातियों की ओर से एक साझा और संयुक्त कार्रवाई की बहुत आवश्यकता थी –

और केवल साझी कार्यवाहियां ही हमको आसन्न राजनीतिक विनाश से बचा सकती थीं। यह सम्मेलन संपूर्ण भारत की अनुसूचित जातियों द्वारा उनके प्रतिनिधियों, जोकि दिल्ली में मिले थे, के माध्यम से व्यक्त की गई इच्छा का परिणाम है और इसीलिए इसको समस्त भारत के अनुसूचित वर्गों का समर्थन प्राप्त है। यही कारण है कि यहां पर हमारे बीच पूरे भारत की अनुसूचित जातियों के प्रतिनिधि उपस्थित हैं। यह सम्मेलन कहां आयोजित किया जाए इस बात को लेकर विभिन्न प्रांतों में बहुत प्रतिद्वंद्विता थी। बंगाल, पंजाब, यूपी, सीपी और बंबई सब इस सम्मेलन को आयोजित करने का श्रेय लेना चाहते थे। अंत में सभी इस सम्मेलन के आयोजन का श्रेय मध्य प्रांत को देने के लिए सहमत हो गए हैं। तथापि, वे सब एक शर्त पर अड़े रहे अर्थात मैं इस सम्मेलन की अध्यक्षता करूं फिर यह चाहे जहां आयोजित किया जाए। सबकी इच्छाओं का सम्मान करते हुए मैंने अध्यक्षता करने के प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया। यह सम्मेलन उसी योजना के अनुसार आयोजित किया जा रहा है। मैं इस बात के प्रति आश्वस्त हूं कि हमने इतना बड़ा और इतना सफल सम्मेलन पहले कभी नहीं किया, और मैं यह भी विश्वास दिलाता हूं कि हम सभी केन्द्रीय प्रांत के अपने मित्रों के कृतज्ञ हैं। यह उन्हीं का उत्साह है, यह उन्हीं का प्रयास है जिसने कि इस सम्मेलन को सफल बनाया है। मूल योजना से केवल एक परिवर्तन यहां पर हुआ है जो अध्यक्षता में परिवर्तन है। मेरे स्थान पर हमारे मित्र राव बहादुर एन. शिवराज इस सम्मेलन की अध्यक्षता कर रहे हैं। जिस समय मैंने अध्यक्षता करने के लिए अपनी सहमति दी थी मैं एक राजनीतिज्ञ की स्वतंत्रता सहित एक स्वतंत्र व्यक्ति था और इस सम्मेलन की अध्यक्षता कर सकता था और अपने विचार व्यक्त कर सकता था। उस समय पद की सीमाएं नहीं थीं। लेकिन इसके पहले सम्मेलन का आयोजन हो सकता एक घोषणा हुई और मुझको वायसराय की कार्यकारी परिषद का एक सदस्य नियुक्त किया गया। इससे मुझ पर पद की सीमाएं आ गईं और मैंने सोचा कि ऐसे दूसरे व्यक्ति को चुना जाना बेहतर होगा जोकि स्वतंत्रता और प्राधिकार के साथ अनुसूचित जातियों के लिए बोल सके। राव बहादुर एन. शिवराज स्वतंत्रता के साथ बोल सकते हैं, और मुझे कोई संदेह नहीं है कि वे प्राधिकार के साथ बोल सकते हैं। वे हमारे लोगों के लिए बहुत समय से मेहनत कर रहे हैं। केन्द्रीय विधायिका में वे हमारे लोगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। शिक्षा के दषष्टिकोण से बहुत कम लोग ऐसे हैं जो उनके समान योग्य हैं। वे मद्रास विश्वविद्यालय से बी.ए., बी.एल. हैं। वे एक सक्रिय वकील हैं और दस वर्ष से भी अधिक समय तक मद्रास में विधि विषय के प्रोफेसर रहे हैं। वास्तव में इस सम्मेलन की अध्यक्षता करने के लिए उनसे बेहतर व्यक्ति चुना नहीं जा सकता था, और मैं वास्तव में बहुत प्रसन्न हूं कि उन्हें मेरा स्थान लेने के लिए चुना गया है।

इन दिनों मैं भारत सरकार का एक सदस्य हूं ऐसे में आपको हमारे आंदोलन को चलाने और इसे प्रभावी बनाने का उत्तरदायित्व निभाना पड़ेगा, ताकि यह उन परिणामों को प्राप्त कर सके जिन्हें प्राप्त करने की हम सबको आशा है। मैं आपकी सहायता करूंगा, मैं आपको सलाह दूंगा लेकिन मैं इसमें भाग नहीं ले सकूंगा, इस तथ्य को आप सभी को दिमाग में रखना होगा। इसलिए यह बहुत आवश्यक है कि जिम्मेदारी को दूसरों को सौंपने से पहले मैं अपने उस लेखे–जोखे को प्रस्तुत करूं जो मैंने अछूतों के इस आंदोलन के नेतृत्व के रूप में किया है और जो पिछले 20 वर्ष के दौरान मुझसे जुड़ा रहा है और मेरे तत्वावधान में नहीं तो मेरे मार्गदर्शन में चलता रहा है। मेरे लिए ऐसा करना इस वजह से आवश्यक है कि जिसके ऊपर यह उत्तरदायित्व आएगा उसे यह जानना चाहिए कि इस देश के अन्य समुदायों की तुलना में अनुसूचित जातियों की स्थिति क्या है, उनकी स्वतंत्रता के लिए क्या किया गया है और क्या किया जाना शेष है।

यह बहुत संतोष की बात है कि अछूतों ने सभी दिशाओं में बहुत प्रगति की है। मैं उनमें से केवल तीन बातों का विशेष उल्लेख करना चाहूंगा। उन्होंने राजनीतिक जारूगकता प्राप्त कर ली है जिसे भारत में कुछ समुदाय ही प्राप्त कर पाए हैं। दूसरे, उन्होंने शिक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति की है। तीसरे, वे देश के संस्थानों और लोक सेवाओं में स्थान प्राप्त कर रहे हैं।

अछूतों की आधुनिक पीढ़ी उनके द्वारा की गई प्रगति की महत्ता का अनुभव करने की स्थिति में नहीं है। सीधी सी बात है वे यह नहीं जानते हैं कि जब 20 वर्ष पहले यह आंदोलन प्रारंभ हुआ था तो स्थितियां क्या थीं। मुझे अच्छी तरह से याद है जब मैं इंग्लैंड से बैरिस्टर–एट–ला के रूप में लौटा था और बंबई में पहली बैठक में भाषण दिया था। बैठक के आयोजकों के अतिरिक्त वहां श्रोताओं में कोई भी सदस्य नहीं था–कुछ व्यक्ति दरवाजों पर बैठे बीड़ी सिगरेट पी रहे थे और कुछ अन्य कोनों में आपस में बातें कर रहे थे। किसी को भी इस बैठक में उपस्थित होने का विचार नहीं आया। अब अंतर को देखिए। यहां पर आज करीब 75000 श्रोता हैं। 20 वर्ष पहले की स्थिति की तुलना में शिक्षा ने अच्छी प्रगति की है। केवल पूना में 50 लड़के कालेजों में पढ़ रहे हैं। कुल मिलाकर लगभग 500 अछूत ऐसे हैं जिन्होंने विभिन्न विश्वविद्यालयों से स्नातक पाठ्यक्रम पूरा किया है। कुछ डाक्टर हैं। कुछ बैरिस्टर बन गए हैं। हमारे भाइयों में से अनेक नगरपालिकाओं जिला और स्थानीय बोर्डों के सदस्य हैं। वर्षों पहले हमारे बच्चों को शिक्षा नहीं दी जाती थी। वर्षों पहले प्रदूषण का कारण समझकर अछूतों को स्थानीय बोर्डों और नगरपालिकाओं का सदस्य बनने की अनुमति नहीं थी। अब यह सब बदल चुका है। लोक सेवा में हमारी प्रगति इतनी

त्वरित नहीं रही है जैसाकि हम चाहते हैं। कुछ जगहों पर अछूत अपना स्थान बना चुके हैं। मैं यहां पर पुलिस और सेना का उल्लेख करना चाहूंगा। पुलिस विभाग उनके लिए बंद था और किसी कांस्टेबल का पद भी अछूतों के लिए खाली नहीं था। कम से कम कुछ प्रांतों में यह स्थिति बदल चुकी है। अब हमारे लोगों को पुलिस सेवा में भर्ती किया जाता है। मैं सेना का भी उल्लेख करना चाहूंगा। वर्ष 1892 तक महार सेना में हर जगह थे और महारों की सेनाएं थीं। 1892 के पश्चात सेना में महारों की भर्ती रोक दी गई। वर्ष 1914 के महायुद्ध के दौरान सेना में महारों की भर्ती पुनः शुरू की गई और महारों की एक बटालियन बनाई गई। पिछले युद्ध के पश्चात यह बटालियन पुनः भंग कर दी गई। तथापि अब हमारी रेजीमेंट फिर से बनाई जा रही है। हमारे युवकों को कमीशन प्राप्त हो रहा है और हमारे 5 अथवा 6 युवकों ने किंग्स कमीशन प्राप्त किया है और वे सेना में जिम्मेदारी और सम्मान के पदों पर हैं। सबसे अधिक प्रगति हमारी महिलाओं के बीच हुई है। यहां पर आप देख सकते हैं 20000 से 25000 महिलाएं इस सम्मेलन में उपस्थित हैं। उनकी वेशभूषा को देखें, उनके तरीकों को देखें, उनके बोलने के ढंग को देखें। क्या कोई यह कह सकता है कि वे अछूत महिलाएं हैं। हमारी महिलाओं द्वारा की गई प्रगति सबसे अधिक आश्चर्यजनक और हमारे आंदोलन को उत्साहित करने वाली विशेषता है और यह निश्चित तौर पर हमारी सर्वाधिक भावाविभूत कर देने वाली विशेषता है।

यह प्रगति का ऐसा लेखाजोखा है जिस पर हम सभी को गर्व हो सकता है। यह एक ऐसी प्रगति है जिसके लिए हमें किसी को धन्यवाद नहीं देना है। यह हिंदुओं की दया का परिणाम नहीं है। यह एक ऐसी उपलब्धि है जोकि पूर्णतः हमारी अपनी मेहनत का परिणाम है। प्रश्न यह है कि हम इस प्रगति को कैसे बनाए रखें। ये एक ऐसा प्रश्न है जिसे हमें कभी भी अपने आपसे पूछना नहीं भूलना चाहिए। समुदायों की प्रतिस्पर्धा में प्रगति शक्ति का परिणाम होती है। यह शक्ति आर्थिक हो सकती है, सामाजिक हो सकती है अथवा राजनीतिक हो सकती है। क्या हमने अपनी प्रगति को बनाए रखने की शक्ति है? क्या हममें आर्थिक शक्ति है? मुझे पूरा विश्वास है कि हममें नहीं है। हम दलितों का एक वर्ग हैं। क्या हमारे पास सामाजिक शक्ति है? मैं आश्वस्त हूं कि हमारे पास नहीं है। हम मानवता का विकृत भाग हैं। इसलिए एकमात्र वस्तु जिस पर हम अपनी निरंतर प्रगति के लिए निर्भर रह सकते हैं वह हैं राजनीतिक शक्ति प्राप्त करना। मुझे इस बात में कोई संदेह नहीं है कि हमारे उद्ध ार का एकमात्र रास्ता यही है और यह कि इसके बिना हम समाप्त हो जाएंगे। यही वह प्रश्न है जिस पर हम सबको सारा ध्यान केन्द्रित करना चाहिए। यह हमारे लिए जीवन और मृत्यु का प्रश्न है। राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के मामले में हमारी

संभावनाएं क्या हैं? यह बेहतर होगा यदि मैं उन शक्तियों का ब्यौरा दूं जो हमारी सहायता कर रही हैं और उन शक्तियों का भी जो हमारे विरुद्ध कार्य कर रही हैं। ऐसी शक्तियों की जानकारी से आप अपनी नीतियां बनाने और अपने समर्थन को धीरे–धीरे आगे बढ़ाने के संबंध में बेहतर ढंग से सक्षम हो सकेंगे।

मैं आपको इस बात से बताना प्रारंभ करता हूं कि मेरी राजनीति का प्रमुख आधार क्या है। हो सकता है कि आप इससे परिचित हों लेकिन इसे दोबारा बताना अच्छा रहेगा। मेरी राजनीति का आधार इस प्रस्ताव में निहित है कि अछूत हिंदुओं के कोई उपशीर्ष अथवा उप–वर्ग नहीं हैं, वे भारत के राष्ट्रीय जीवन में एक पृथक और अलग तत्व और उतने ही अलग और पृथक जितने कि मुसलमान हैं और भारत के मुसलमानों के समान ही अछूतों को भी भारत के हिंदुओं की तुलना में पृथक राजनीतिक अधिकारों का हक है। यही मेरी राजनीति का मुख्य बिंदु है। कोई भी व्यक्ति जो इस बात को अपने दिमाग में रखेगा वह मुझे अथवा मेरी राजनीति को गलत नहीं समझेगा। अपनी राजनीति का मूल आधार बताने के पश्चात मैं उन शक्तियों के बारे में या विरोध में ब्यौरा दूंगा जो हमारे पृथक राजनीतिक अधिकारों के दावे के संबध में हमारे पक्ष में या विरोध में कार्य कर रही हैं। शुरूआत गोलमेल सम्मेलन से करते हैं। गोलमेज सम्मेलन एक बहुत बड़ी बात थी, और वहां जो कुछ भी हुआ उन सब बातों का ब्यौरा देकर आपको परेशान नहीं करना चाहता। मैं केवल इस बात तक ही सीमित रहूंगा कि वहां अछूतों के संबंध में क्या हुआ। वहां मेरे और श्री गांधी के बीच में एक बहस हुई। श्री गांधी ने कहा कि अछूत हिंदुओं का एक उप–वर्ग हैं, परिणामतः यदि ब्रिटिश लोगों के हाथ से कोई शक्ति निकलनी है तो वह हिंदुओं के पास अविभाजित रूप से आनी चाहिए जिन पर अछूतों के हितों की देखभाल करने के लिए विश्वास किया जा सकता था। मेरे द्वारा प्रस्तुत की गई स्थिति पूर्णतः भिन्न थी; मैंने कहा कि अछूत देश के जीवन में एक पृथक और अलग तत्व हैं। हिंदू जोकि हमारे परंपरागत शत्रु हैं उन पर विश्वास नहीं किया जा सकता और राजनैतिक शक्ति को उनके के उत्थान के लिए उपयोग करना तो दूर की बात है बल्कि वे इसका उपयोग अपने लाभ के लिए करेंगे और ऐसा ही था। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक था कि अछूतों और हिंदुओं के बीच राजनैतिक विभाजन होना चाहिए ताकि अछूतों को राजनीतिक शक्ति उनके हाथों में प्राप्त हो जाए जिसका उपयोग वे अपने कल्याण के लिए कर सकें अथवा जिसका उपयोग वे अपने आपको हिंदुओं की निरंकुशता और दमन से बचाने के लिए कर सकें। मैं उस बात को विस्तार से नहीं बताना चाहता कि महात्मा अथवा अन्य हिंदुओं ने हमारे दावे को परास्त करने के लिए क्या किया। यह कहना पर्याप्त है कि गोलमेज सम्मेलन में अछूत जीत गए और महात्मा हार गया। सांप्रदायिक पंचाट इसी बहस

का परिणाम था। इसका बड़ा लाभ इस तथ्य में निहित है कि अछूतों को भारत के राष्ट्रीय जीवन में महत्व मिला और पृथक राजनीतिक अधिकारों का दावा करने की हकदारी भी मिली। सांप्रदायिक पंचाट का यही महत्व है।

श्री गांधी ने प्रारंभ में इस सांप्रदायिक पंचाट को स्वीकार नहीं किया। उन्होंने आमरण अनशन प्रारंभ कर दिया ताकि वे एक निर्णीत मुद्दे को पुनः उलझाने के लिए ब्रिटिश सरकार को बाध्य कर सकें। अपने अनशन में भी वह उसी तरीके से असफल हुए जैसे कि वे गोलमेज सम्मेलन में हुए थे, जहां पर वे अछूतों के हिंदुओं से अलग एक पृथक तत्व के रूप में माने जाने और पृथक राजनीतिक महत्व प्राप्त करने के दावे को परास्त कर पाने में सफल नहीं हो पाए थे। पूना समझौत में जो उनके अनशन का परिणाम था, उनको वह बात माननी पड़ी जो मैंने गोलमेज सम्मेलन में सामने रखी थी।

पहले दौर में विजय अछूतों की हुई। लड़ाई के शुरू हो जाने और भारतीय राजनीति में कांग्रेस द्वारा एक खास स्थिति प्राप्त कर लेने के बावजूद हमारी स्थिति सुदृढ़ रहीं। वास्तव में वायसराय द्वारा 8 अगस्त, 1940 को की गई घोषणा के द्वारा हमारे दावे को मजबूती प्राप्त हुई, जिसमें यह स्पष्ट किया गया था कि भारत के राष्ट्रीय जीवन में मुसलमान और अछूत पृथक और अलग तत्व हैं और यह से ब्रिटिश सरकार ऐसे किसी संविधान को लागू नहीं करेगी जिसमें मुसलमानों और दलित वर्गों का समर्थन प्राप्त न हो।

मैंने अब तक अपनी स्थिति की मजबूती के बारे में बताया है। अब मैं उन शक्तियों के बारे में बताऊंगा जिनकी मंशा हमारी स्थिति को कमजोर करने की है। गांधी और गांधीवाद वह विषाक्त तथ्य है जो हमारी स्थिति को कमजोर करने के लिए कार्य कर रहा है। पूना समझौते पर हस्ताक्षर करके मैंने श्री गांधी की जान बचाने में सहायता की। लेकिन श्री गांधी ने पूना समझौते को एक ऐसे सज्जन व्यक्ति के रूप में स्वीकार नहीं किया था जो किसी समझौते पर अपने वचन का सम्मान करने के लिए हस्ताक्षर करता हो, बल्कि एक ऐसे चतुर व्यक्ति के रूप में हस्ताक्षर किए थे जो किसी कठिनाई से निकलने का रास्ता ढूंढ़ रहा हो। मैं आपको याद दिलाना चाहता हूं कि श्री गांधी ने उन्हें मृत्यु से बचाने के बावजूद पूना समझौते अछूतों में निर्धारित सिद्धांत को कभी सच्ची और ईमानदार स्वीकृति नहीं दी। वे हरिजनों के पृथक राजनैतिक महत्व संबंधी दावे के एक प्रबल प्रतिद्वंदी बने रहे और तब से उन्होंने हमारे दावे के विरोध और हमारी स्थिति को कम करने के लिए प्रत्येक संभव कार्य किया। मैं चाहता हूं कि आप अपने मन में यह बात बैठा लें कि श्री गांधी

हमारे सबसे बड़े विरोधी हैं। पर्याप्त औचित्य होने के बावजूद भी मैं शत्रु शब्द का उपयोग करना पसंद नहीं करता हूं। हममें से कुछ लोग ऐसे हैं जो उनकी कृत्रिम बातों में फंस गए हैं। लेकिन मैं आपको इस बात से आगाह करना चाहूंगा कि यदि आप इस तथ्य पर ध्यान देना भूल जाते हैं कि उन प्रतिकूल शक्तियों, जो आपके पक्ष को कमजोर कर रही हों और जिनके विरुद्व आपको राजनीतिक स्वतंत्रता का अपना युद्व जीतने के लिए ध्यान संकेन्द्रित करना है, में सर्वाधिक अजेय शक्ति गांधी हैं, तो आप सबसे बड़ी गलती कर रहे हैं।

दूसरा कारक जिसने कि आपकी स्थिति को कमजोर किया है निश्चित तौर पर हिज मेजेस्टी की सरकार के दृष्टिकोण में परिवर्तन है। 8 अगस्त, 1940 की घोषणा तक हिजमेजेस्टी की सरकार का दृष्टिकोण यह था कि अछूत विशेष और पृथक तत्व हैं और वे इतने महत्वपूर्ण तत्व हैं कि संविधान में किसी भी परिवर्त,न जो वांछित हों को करने के लिए उनकी सहमति जरूरी है। लेकिन स्ट्रैफर्ड के साथ भेजे गए हिज मेजेस्टी की सरकार के प्रस्तावों में हिज मेजेस्टी की सरकार ने अपना रुख बिल्कुल पलट दिया है। क्योंकि सर स्ट्रैफर्ड क्रिप्स ने बिना किसी शर्म अथवा पश्चाताप के यह घोषणा की कि क्रिप्स प्रस्तावों में शामिल संवैधानिक परिवर्तनों को प्रभावी बनाने के लिए हिंदुओं और मुसलमानों की सहमति पर्याप्त थी; और यह कि हरिजनों की सहमति आवश्यक नहीं थी। सीधे शब्दों में अछूतों को भारत के राष्ट्रीय जीवन में महत्वपूर्ण तत्व के रूप में नहीं माना जाता है। यह किसी की भी समझ से बाहर की बात है कि किस प्रकार से कुछ महीनों में ही 60 से 70 मिलियन अछूत महत्वपूर्ण तत्व नहीं रह गए। हिजमेजेस्टी सरकार ने इस प्रकार से एक पूर्ण पलटी मारी है। यह अछूतों के साथ बड़ा धोखा है। हिजमेजेस्टी सरकार के इस अन्यायपूर्ण और अभद्र कार्य का कारण चाहे कुछ भी हो और आपकी भावनाएं कितनी भी मजबूत क्यों न हों, इस तथ्य को पहचाना जाना चाहिए कि यह हमारी लड़ाई में सबसे बड़ा धोखा है। किसी प्रतिकूल चरित्र की एक तीसरी परिस्थिति भी है, जिसकी ओर मैं आपका ध्यान अवश्य दिलाना चाहूंगा। एक समय था जब भारत में विभिन्न अल्पसंख्यक समुदायों के बीच हित समुदाय पर आधारित एकता की भावना थी, जिनमें मुसलमान समुदाय एक प्रमुख समुदाय था। यह एकता अब समाप्त हो चुकी है। ऐसा मुख्य रूप से मुस्लिम लीग द्वारा मुसलमान समुदाय के दृष्टिकोण में लाए गए परिवर्तन के कारण हुआ है। वर्ष 1937 के चुनाव के पश्चात जब श्री जिन्ना ने मुस्लिम लीग को पुनर्जीवित किया था तो वह इस विचारधारा के साथ प्रारंभ हुई थी कि मुसलमान अल्पसंख्यक हैं, और एक अल्पसंख्यक समुदाय के रूप में उन्हें अपनी सहायता और अस्तित्व के लिए अन्य अल्पसंख्यक समुदायों की शक्ति की आवश्यकता थी। पारस्परिक शक्ति की योजना में मुस्लिम लीग का विश्वास इतना दृढ़ था कि मुस्लिम

लीग ने अन्य अल्पसंख्यक समुदायों के हितों पर ध्यान देना प्रारंभ किया और उनके दावों की सहायता के लिए शपथ भरे संकल्प पारित किए और वह न केवल मुसलमान हितों की वकालत करने वाले के रूप में सामने आई बल्कि वह भारत की अन्य सभी अन्य अल्पसंख्यक समुदायों की विजेता रूप में सामने आई। लीग का यह दृष्टिकोण निःसंदेह अछूतों के लिए बहुत बड़ी सहायता था क्योंकि अछूतों का दृष्टिकोण हमेशा से भारत के मुसलमानों के साथ रहा। लेकिन लीग का दृष्टिकोण पूरी तरह से बदल चुका है। पाकिस्तान संबंधी संकल्प के पारित हो जाने के बाद से मुस्लिम लीग ने मुसलमानों को एक समुदाय मानना बंद कर दिया है। यह मानती है कि मुसलमान एक राष्ट्र हैं। यही सब कुछ नहीं बल्कि मुस्लिम लीग यह भी विश्वास करती है कि उसे अन्य समुदायों से कुछ लेना–देना नहीं है, और यह कि उसे न केवल हिंदू समुदाय, बल्कि किसी अन्य अल्पसंख्यक समुदाय से भी लेना–देना नहीं है। मुस्लिम लीग का संयोजन साधारण सा है। यह बिना किसी विशेषता अथवा विभेद के मुसलमानों का एक संयोजन है, जोकि अन्य सभी गैर–मुसलमानों के विरुद्ध है। लीग के दृष्टिकोण में इस परिवर्तन से अछूतों पर बहुत गंभीर प्रभाव पड़े हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि उन्होंने एक साथी खो दिया। लेकिन इसका अर्थ एक साथी को खोने से कहीं और अधिक हो सकता है। मुस्लिम लीग ने न केवल गैर–मुसलमानों के विरुद्ध मुसलमानों का एक नया और भिन्न प्रकार का संयोजन स्थापित किया है, बल्कि इसने मूल्यों का एक नया समीकरण भी स्थापित किया है। यह समीकरण एक सीधा सा समीकरण है। ये कहता है कि मुसलमान उनकी संख्या चाहे कुछ भी हो वे गैर–मुसलमानों के समान है और इसलिए किसी भी राजनीतिक व्यवस्था में मुसलमानों को 50 प्रतिशत की हिस्सेदारी मिलनी चाहिए। इस समीकरण को कोई भी सहमति नहीं दे सकता। यह न केवल अंकगणित के विरुद्ध है; यह अछूतों सहित अन्य सभी गैर–मुसलमानों के हितों के विरुद्ध है। मुस्लिम लीग के इस राजनैतिक दृष्टिकोण के इन परिवर्तनों के संदर्भ में यह कहा जा सकता है कि अछूतों ने न केवल एक साथी खो दिया है, बल्कि उन्होंने एक दोस्त भी खो दिया है, क्योंकि यदि लीग सभी बातों में 50 प्रतिशत प्रतिनिधित्व की मांग पर अड़ी रहती है तो इस बात में कोई संदेह नहीं है कि मुसलमान और अछूत आमने–सामने आ जाएंगे।

अभी तक मैंने आपको यह बताया है कि भारतीय राजनीति में हमारी क्या स्थिति थी और कौन सी शक्तियां हमें हमारी इस स्थिति को नीचे कर रही हैं। अब मैं आपको वह बात बताता हूं जोकि मेरे अनुसार आपकी राजनीतिक मांगें होनी चाहिए। यह बहुत आवश्यक है कि आप उनको स्पष्ट शब्दों में तैयार करें। इससे हमारी स्थिति स्पष्ट होगी। हमारे लोग जानेंगे कि हम क्या चाहते हैं। हमारे विरोधियों को हमारी मांगों का पता चलेगा।

सर्वप्रथम आपको इस बात पर जोर देना चाहिए कि आपको भारत के राष्ट्रीय जीवन में एक स्वतंत्र और पथ्थक तत्व के रूप में पहचाना जाए। यह सिद्धांत, कि वे केवल हिंदुओं का एक उप–वर्ग हैं, से पूरी शक्ति के साथ लड़ा जाना चाहिए। अछूतों को हिंदुओं से अलग एक अलग तत्व के रूप में पहचान दिलाने में असफलता उनको दलित ही रखेगी जिससे उनका दमन और ह्रास होगा। अगली मांग के रूप में आप यह प्रस्ताव सामने रखें कि अछूतों की शिक्षा के लिए प्रत्येक प्रांत के बजट में वार्षिक रूप से एक राशि अलग रखी जाए, इस बात का संविधान में प्रावधान किया जाए। आप न केवल प्राथमिक शिक्षा बल्कि उच्च शिक्षा के लिए भी ऐसी राशि की मांग कर सकते हैं। इस अवस्था में हमारे लिए प्राथमिक शिक्षा की तुलना में उच्च शिक्षा अधिक महत्वपूर्ण है। नेतृत्व के दृष्टिकोण से उच्च प्रशासनिक पदों को बनाने संबंधी दृष्टिकोण से अछूतों को उच्च शिक्षा दिया जाना एक बहुत बड़ी आवश्यकता है। तीसरे, आपको यह मांग करनी चाहिए कि लोक सेवाओं में पदों की एक निश्चित संख्या अछूत प्रजा के लिए न्यूनतम योग्यता के नियम के आधार पर आरक्षित की जाएं। यह बहुत आवश्यक है। हमें दुख गलत प्रशासन के कारण उठाने पड़ते हैं न कि गलत कानूनों के कारण। प्रशासन खराब है क्योंकि यह हिंदू जाति के हाथों में है जो अपने सामाजिक पूर्वग्रहों को प्रशासन में ले आते हैं और अछूतों को किसी न किसी कारण से लगातार समान लाभ के सिद्धांत के आधार पर लाभ देने से मना करते हैं जोकि उनकी हकदारी है। अच्छे कानूनों से भी तब तक कुछ नहीं हो सकता है जब तक कि प्रशासन भी अच्छा न हो और आपको अच्छा प्रशासन तभी मिलेगा जब अछूतों से संबंधित व्यक्ति उसमें होंगे और उच्च प्रशासनिक पदों को संभालेंगे जहां से वे इस बात की निगरानी कर सकेंगे कि किस प्रकार अन्य हिंदू सिविल सेवक अछूतों से व्यवहार कर रहे हैं और वे उन्हें रोक सकेंगे, नियंत्रित कर सकेंगे और गलत कार्य करने से बाधित कर सकेंगे। तथापि, खाली आरक्षण मांगना ही पर्याप्त नहीं है। यह आग्रह करना आवश्यक है कि इस प्रकार का आरक्षण एक निर्धारित समय के भीतर लागू किया जाए। यह आरक्षण से कहीं ज्यादा आवश्यक है, क्योंकि जब तक आप कोई अवधि निर्धारित नहीं करते हैं, आरक्षण नहीं आएगा। इसे किसी न किसी आधार और सामान्य लेकिन अंतहीन आधार कि कोई उपयुक्त उम्मीदवार नहीं मिला, के आधार पर बचने की कोशिश की जाएगी। हम सभी जानते हैं कि यदि कोई हिंदू, नियुक्ति प्राधिकारी है तो उसे अछूतों में से कोई भी उम्मीदवार उपयुक्त नहीं मिलेगा। चौथे, आपको केन्द्रीय और प्रांतीय कार्यपालिकाओं में अछूतों के लिए प्रतिनिधित्व प्राप्त करने पर आग्रह करना चाहिए। ये मुख्य स्थितियां हैं। इन स्थितियों पर रहने वालों के पास वह शक्ति होती है जो घटनाओं के क्रम को निर्देशित कर सके। केवल वे ही ऐसी किसी गड़बड़ी,

जिसकी कि आशंका हो, को नियंत्रित कर सकते हैं और केवल वे ही सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक मामलों में नए स्वागतयोग्य परिवर्तन लागू कर सकते हैं। अछूतों को इस बात का आग्रह करना चाहिए कि उनके प्रतिनिधियों को इन प्रमुख स्थितियों में रखा जाए। इस बार इसे किसी समझ अथवा परंपरा के ऊपर नहीं छोड़ना है। हिंदुओं पर उनकी जबान का पक्का होने का विश्वास नहीं किया जा सकता। आपको यह निश्चित तौर पर देखना होगा कि इस संबंध में कोई प्रावधान संविधान का हिस्सा बनाया जाए।

इसके पश्चात अंतिम मांग आती है जिस पर अछूतों को अवश्य बल देना चाहिए। यह अंतिम अवश्य है लेकिन किसी भी प्रकार से महत्व में कम नहीं है। वास्तव में मुझे तो विश्वास है कि यह सबसे महत्वपूर्ण मांग है जो मेरे अनुसार अन्य सभी मांगों से बढ़कर है। मेरा आशय अछूतों की नई बस्तियों की परियोजना का है जोकि हिंदू गांवों से अलग और स्वतंत्र हों। अछूतों इतने हजारों वर्ष से हिंदुओं के गुलाम और दास क्यों रहे हैं? मेरी समझ से इसका उत्तर हिंदू गांवों के विचित्र संगठन में निहित है। आप देखेंगे कि पूरे भारत में लगभग 7 लाख हिंदू गांव फैले हुए हैं और प्रत्येक हिंदू गांव से जुड़ी हुई अछूतों की एक छोटी सी बस्ती है। अछूतों की यह बस्ती आमतौर पर जनसंख्या की दृष्टि से उस हिंदू गांव, जिससे कि यह जुड़ी हुई है, से तुलनात्मक रूप से बहुत छोटी है। दूसरे, अछूतों की यह बस्ती आर्थिक रूप से संसाधनहीन है और इसमें सुधार के कोई अवसर भी नहीं है। यह बस्ती अपरिहार्य रूप से भूमिहीन आबादी की होती है। अछूत होने के नाते यह कुछ भी बेच नहीं सकती, क्योंकि कोई भी किसी अछूत से कुछ नहीं खरीदेगा। यह पूर्ण रूप से ऐसी आबादी है, जो निराश्रय और अपनी आजीविका के लिए हिंदू गांव पर आश्रित है। यह अपना जीवनयापन भोजन मांगकर अथवा थोड़ी सी मजदूरी पर अपना श्रम देकर करती है। आप अच्छी तरह से यह समझ सकते हैं कि ऐसी किसी स्थापना में अछूत इतनी शताब्दियों से खराब स्थिति में क्यों रहे। हिंदू गांव की तुलना में अछूत किसी प्रकार का प्रतिरोध नहीं कर सकते। संख्या में वे कम और आर्थिक दृष्टिकोण से गरीब हैं। यदि यह गांव प्रणाली अपनी वर्तमान रूप में जारी रहती है तो अछूत कभी भी स्वतंत्रता नहीं प्राप्त कर पाएंगे चाहे वह सामाजिक हो, अथवा आर्थिक और कभी भी हीनता की उस भावना से नहीं निकल पाएंगे जो उन्होंने अपनी सामाजिक और आर्थिक निर्भरता की अवस्था के परिणामस्वरूप पाई है। इसलिए इस गांव प्रणाली को तोड़ना ही होगा। यदि अछूत वास्तव में अपने आपको हिंदुओं के प्रभुत्व से मुक्त कराना चाहते हैं जो उन्होंने उस गांव प्रणाली के माध्यम से बना रखा है तो यही एकमात्र रास्ता है जो उनके लिए खुला है। मेरा सुझाव है कि आपको संविधान में अछूतों के लिए स्वतंत्र और विशिष्ट नए गांवों को बनाने के लिए व्यवस्था किए जाने

पर बल देना चाहिए, वह भी लोक लागत पर केन्द्रीय सरकार द्वारा किया जाए। ऐसी बहुत सी कषषियोग्य भूमि है जो सरकार की संपत्ति है और उस पर किसी का अधिकार नहीं है। अछूतों के नए गांव की स्कीम को अमलीजामा पहनाने के प्रयोजन से इसको आरक्षित किया जा सकता है। सरकार निजी स्वामियों से बाहर की खाली भूमि खरीद सकती है और इसे इस प्रयोजन के लिए उपयोग में ला सकती है। हरिजनों को उनकी वर्तमान बस्तियों से हटाकर इन नए गांव में ले जाने और वहां पर उन्हें स्वतंत्र किसानों के रूप में बसाने का कार्य कठिन नहीं होगा। इस कार्य में समय लग सकता है। लेकिन इससे कोई अन्तर नहीं पड़ता। यह इतना महत्वपूर्ण है कि हमें संविधान के माध्यम से इस स्कीम को बनाने पर जोर देना चाहिए और इसे केन्द्रीय सरकार का एक दायित्व बना दिया जाना चाहिए।

एक अन्य भी मुद्दा है जिसके विषय में मुझे आपसे कुछ बातें कहनी हैं। भारत के अछूतों के प्रवक्ता के रूप में कार्य करने के वास्ते एक केन्द्रीय अखिल भारतीय राजनीतिक संगठन बनाए जाने की आवश्यकता है। हम अपने राजनीतिक क्रियाकलापों को अपने प्रांतीय संगठनों के माध्यम से चला रहे हैं। मैंने पाया कि प्रातों में भी राजनीतिक संगठनों की भरमार है। कोई भी महत्वाकांक्षी व्यक्ति जो अपने आपको अध्यक्ष अथवा सचिव के रूप में देखना चाहता है, वह एक संगठन बना लेता है जिसमें वह स्वयं अध्यक्ष अथवा सचिव बन जाता है। उसे एक पत्र छपवाने से अधिक कुछ भी करने की आवश्यकता नहीं होती है जिस पर कि संगठन का नाम होता है और उसका नाम अध्यक्ष अथवा सचिव के रूप में होता है। यह अव्यवस्था की स्थिति है, जिस पर आपको तत्काल रोक लगानी होगी। ऐसा करने का केवल एक रास्ता है। और वह एक अखिल भारतीय संगठन स्थापित करना है जिसकी प्रांतीय शाखाएं हों और सभी मौजूदा संगठनों को समाप्त कर दिया जाए। यह आपको आवश्यक शक्ति प्रदान करेगा और आपको इस ढंग से कार्य करने में सक्षम करेगा जो आपको एक संयुक्त मोर्चा बनाने में सहायता करे। मैं आशा करता हूं कि आप इस मामले में तत्काल सही कदम उठाएंगे।

मैंने अछूतों की समस्या के संबंध में जो कुछ सोचा और अनुभव किया वह आपको बता दिया है और अब मैं आशा करता हूं कि आप उस पर अच्छी तरह से विचार करेंगे।

संभवतः अंत में मुझे युद्ध के प्रति अपने दषष्टिकोण का संदर्भ लेना चाहिए। प्रारंभ से ही हमने युद्ध संबंधी प्रयासों में सहायता की है। मुझे यह विश्वास है कि हम इसे अपना समर्थन देना जारी रखेंगे। हमारी अपनी राजनीतिक मांगें हैं जिन्हें हम पूरा करने पर बल देंगे। लेकिन हमने अपनी मांगों के पूरा हुए बिना ही बिना किसी

पूर्व शर्त के युद्ध प्रयासों को अपना समर्थन दे दिया है। ऐसा नहीं है कि हम अपनी मांगों के पूरा होने के महत्व को युद्ध की सफल समाप्ति से कम महत्वपूर्ण मानते हैं। हमने युद्ध को अपने समर्थन के लिए कोई शर्तें नहीं रखीं हैं क्योंकि हम यह मानते हैं कि युद्ध की सफलता से हमें अपनी राजनीतिक मांगों को पूरा करने में बेहतर ढंग से सहायता मिलेगी न कि युद्ध हारने से यह लड़ाई लोकतंत्र और, तनाशाही के बीच की है। ऐसी तानाशाही नहीं जो बौद्धिक हो, बल्कि एक ऐसी तानाशाही जो सबसे जंगली प्रकार की है, जो किन्हीं नैतिक विचारों पर नहीं बल्कि जातीय आक्रोश पर आधारित है। यदि किसी तानाशाही को समाप्त किए जाने की आवश्यकता है, तो यह विषाक्त नाजी तानाशाही है। इस देश के सभी राजनैतिक उतार–चढ़ाव के बीच, किसी के द्वारा अनुभव की जा सकने वाली भविष्य की अनिश्चितताओं के बीच इस बात की संभावना है कि हम इस नाजीवाद को भूल जाएं जोकि जीतने की स्थिति में हमारे लिए किस प्रकार का संकट बनने जा रहा है। महत्व इस बात का है कि इसका जातीय आधार भारतीयों के लिए एक निश्चित खतरा है। यदि यह इस स्थिति के संबंध में सही दृष्टिकोण है तो मुझको ऐसा लगता है कि हम सभी को यह देखने का एक बहुत भारी दायित्व मिला है कि मानवीय संबंधों के शासकीय सिद्धांतों के रूप में लोकतंत्र कहीं इस पृथ्वी से समाप्त न हो जाए। यदि हमको इसमें विश्वास है तो हमें इसके लिए सही और वफादार दोनों ही होना होगा। हमें केवल लोकतंत्र में अपने विश्वास को सुदृढ़ ही नहीं करना है, बल्कि हमको यह देखने का भी संकल्प करना है कि हमारे द्वारा जो कुछ भी किया जाता है, अथवा नहीं किया जाता है, वह स्वतंत्रता, समानता और भाई–चारे के सिद्धांतों को उखाड़ने के लिए लोकतंत्र के शत्रुओं की सहायता न करे। इस मुद्दे पर मुझे आशा है कि आप सभी लोग मेरे साथ सहमत हैं और यदि आप मुझसे सहमत हैं तो आइए हम सब लोग कुछ ऐसा करें जिससे लोकतांत्रिक सभ्यता के आधार पर हम अन्य लोकतांत्रिक देशों के साथ चल सकें। यदि लोकतंत्र जीवित रहता है तो हम निश्चित तौर पर इससे फल प्राप्त करेंगे। यदि लोकतंत्र समाप्त हो जाता है तो यह हमारा विनाश होगा। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता।

इस अवसर पर मेरे पास आपसे कहने के लिए और कुछ नहीं है। मैं अपने आप को आपके बीच में पाकर प्रसन्न हूं। मुझे भविष्य में आपकी सेवा करके प्रसन्नता होगी, जैसा कि मैंने विगत में भी किया है। यदि हम सभी लोग साथ मिलकर कार्य करेंगे और साथ मिलकर प्रयास करेंगे तो हम असफल नहीं होंगे, क्योंकि हम न्याय के लिए लड़ रहे हैं और मानवता के लिए लड़ रहे हैं।

राव बहादुर एन. शिवराज, अध्यक्ष ने सत्र को अगली सुबह 10 बजे तक स्थगित घोषित कर दिया और जैसे कि पहले ही घोषणा की जा चुकी थी, विषय समिति की बैठक उसी रात 9 बजे मोहन पार्क होटल के हाल में हुई।

विषय समिति की बैठक, 18 जुलाई, 1942

तीसरे अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन की विषय समिति जिसमें सभी प्रतिनिधि शामिल थे, की बैठक मोहन पार्क होटल के हाल में रात 9 बजे हुई जिसमें अध्यक्ष राव बहादुर एन. शिवराज ने अध्यक्ष पद संभाला और संकल्पों के मसौदे पर विचार–विमर्श किया गया। चार घंटे तक चले सत्र के पश्चात विषय समिति ने सर्वसम्मति रूप से सम्मेलन के खुले सत्र में प्रस्तुत किए जाने वाले संकल्पों पर सहमति व्यक्त की।

खुला सत्र दूसरा दिन

19 जुलाई, 1942

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन का तीसरा सत्र राव बहादुर एन. शिवराज की अध्यक्षता में प्रातः 10 बजे पुनः प्रारंभ हुआ।

सम्मेलन के अनेक सदस्यों द्वारा विशेष रूप से लिखे गए गीतों के गायन के साथ कार्यवाही प्रारंभ हुई।

राव बहादुर एन. शिवराज ने कहा,

देवियो और सज्जनो,

''मैं इस बात की घोषणा करना चाहता हूं कि विषय समिति इस सम्मेलन में पांच संकल्प प्रस्तुत करने के लिए राजी हो गई है। I से लेकर IV तक संकल्पों को एक प्रस्ताव के रूप में पहले लाया जाएगा और इसके पश्चात संकल्प V लाया जाएगा। अब मैं पहले चार संकल्प प्रस्तुत करने के लिए श्री बी. के. गायकवाड़, विधायक, नासिक (बंबई) को आमंत्रित करता हूं।''

संकल्प प्रस्तुत करते समय श्री वी. के. गायकवाड़ ने कहा, श्रीमान अध्यक्ष महोदय, देवियो और सज्जनो मुझसे जिन संकल्पों को प्रस्तुत करने के लिए कहा गया है वे निम्नानुसार हैं:

संकल्प सं. I: क्रिप्स प्रस्ताव अस्वीकार्य है

यह सम्मेलन इस बात की घोषणा करता है कि संवैधानिक परिवर्तनों के संबंध में सर स्ट्रैफ्फोर्ड क्रिप्स के माध्यम से भेजे गए हिज मेजेस्टी की सरकार के प्रस्ताव अनुसूचित जातियों को पूर्णतया अस्वीकार्य हैं। इस सम्मेलन का विचार है कि ये प्रस्ताव, अनुसूचित जातियों के हितों के प्रति विश्वासघात और हिज मेजेस्टी सरकार की ओर से महामहिम वायसराय द्वारा दिए गए इस आश्वासन, कि अनुसूचित जातियों की सहमति के बिना बनाया गया कोई भी संविधान उन पर थोपा नहीं जाएगा, से मुकरने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

क्रिप्स प्रस्तावों का विरोध

यह सम्मेलन हिज मेजेस्टी सरकार द्वारा कांग्रेस की इस मांग कि नया संविधान, संविधान सभा के द्वारा बनाया जाए, तथा नई भारतीय राष्ट्रीय सरकार और ग्रेट ब्रिटेन की हिज मेजेस्टी की सरकार के बीच एक संधि के माध्यम से अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा करने के प्रस्ताव के विरुद्ध कड़े शब्दों में अपना विरोध दर्ज करता है।

संकल्प सं. II: संविधान की मांग

यह सम्मेलन घोषणा करता है कि कोई भी संविधान अनुसूचित जातियों को स्वीकार्य न होगा जब तक कि,

(1) इसे अनुसूचित जातियों की स्वीकषति प्राप्त न हो,

(2) इसमें इस बात के महत्व को स्वीकार न किया गया हो कि अनुसूचित जातियां भारत के राष्ट्रीय जीवन का एक विशेष, पृथक और महत्वपूर्ण तत्व हैं, और

(3) इसमें ऐसे प्रावधान न हों जो नए संविधान के अंतर्गत अनुसूचित जातियों को सुरक्षा की वास्तविक भावना का अनुभव कराएं और जो निम्नलिखित संकल्पों में निर्धारित किए गए हैं।

संकल्प सं. III: नए संविधान के प्रावधान

अनुसूचित जातियों में सुरक्षा की यह भावना सषजित करने के लिए यह सम्मेलन नए संविधान में निम्नलिखित प्रावधान किए जाने की मांग करता है।

अनुसूचित जाति की उन्नति के लिए प्रांतीय बजटों में प्रावधान

(1) यह कि, प्रत्येक प्रांतीय सरकार के बजट में अनुसूचित जातियों के

बच्चों में प्राथमिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए करार द्वारा निर्धारित एक वार्षिक राशि तथा उनमें आधुनिक शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए एक अन्य वार्षिक राशि को अलग रखा जाना चाहिए और ऐसी राशियों को प्रांत के राजस्व में पहला प्रभार घोषित किया जाना चाहिए।

कार्यकारी सरकार में प्रतिनिधित्व

(2) यह कि, कानून द्वारा ऐसा प्रावधान किया जाना चाहिए कि अनुसूचित जातियों का केन्द्रीय और प्रांतीय सभी सरकारों में प्रतिनिधित्व सुनिश्चित हो सके, जिसके अनुपात का निर्धारण उनकी संख्या, उनकी आवश्यकताओं और उनके महत्व के आधार पर किया जाएगा।

लोक सेवाओं में प्रतिनिधित्व

(3) यह कि, लोक सेवाओं में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित करने का प्रावधान कानून द्वारा किया जाना चाहिए, जिसके अनुपात का निर्धारण उनकी संख्या, उनकी आवश्यकताओं और उनके महत्व के आधार पर किया जाएगा। यह सम्मेलन इस बात का आग्रह करता है कि न्यायिक, पुलिस और राजस्व जैसी सुरक्षा सेवाओं के मामले में यह प्रावधान किया जाना चाहिए कि अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारित अनुपात को न्यूनतम योग्यता के नियम के अधीन दस वर्ष की अवधि के भीतर पूरा कर लिया जाना चाहिए।

सभी विधायिकाओं और स्थानीय निकायों में कानून द्वारा प्रतिनिधित्व

(4) यह कि, अनुसूचित जातियों को उनकी संख्या, आवश्यकताओं और महत्व के अनुसार सभी विधायिकाओं और स्थानीय निकायों में प्रतिनिधित्व की गारंटी के लिए कानून द्वारा प्रावधान किया जाना चाहिए।

पृथक निर्वाचन क्षेत्र

(5) यह कि, कानून द्वारा प्रावधान किया जाना चाहिए जिसके द्वारा सभी विधायिकाओं और स्थानीय निकायों में अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व पृथक निर्वाचन क्षेत्रों की विधि के माध्यम से किया जाना चाहिए।

लोक सेवा आयोगों में प्रतिनिधित्व

(6) यह कि, केन्द्रीय और प्रांतीय, सभी लोक सेवा आयोगों में अनुसूचति जातियों के प्रतिनिधित्व के लिए कानून द्वारा प्रावधान किया जाना चाहिए।

संकल्प सं. IV: ग्राम प्रणाली में परिवर्तन

यह कि, जब तक अनुसूचित जातियां आजीविका के किसी स्रोत के बिना और

हिंदुओं की तुलना में कम संख्या में गांव के बाहर रहती रहेंगी तब तक वे अस्पृश्य रहेंगी तथा स्वतंत्र और पूर्ण जीवन का आनंद न उठा सकेंगी। अनुसूचित जातियों को हिंदू जाति की निरंकुशता और दमन से बचाने, उन्हें उनका पूर्ण पुरुषत्व विकसित करने में सक्षम बनाने, उन्हें आर्थिक और सामाजिक सुरक्षा देने के साथ–साथ अस्पृश्यता के उन्मूलन का मार्ग प्रशस्त करने के लिए लंबे और तर्कसंगत विचार–विमर्श करने के पश्चात यह सम्मेलन इस निष्कर्ष पर पहुंचा है कि भारत में इस समय विद्यमान ग्राम प्रणाली, जो ऐसी सभी बुराइयों का मूल है जिनके चलते अनुसूचित जातियां कई शताब्दियों से हिंदुओं के हाथों शोषित हो रही हैं, में आमूल परिवर्तन किया जाना चाहिए। इन परिवर्तनों की आवश्यकता को महसूस करते हुए इस सम्मेलन का यह मानना है कि सरकार की प्रणाली में संवैधानिक परिवर्तनों के साथ–साथ इस समय विद्यमान ग्राम प्रणाली में नीचे दिए गए परिवर्तन किए जाने चाहिएः

पृथक गांव

(1) संविधान में अनुसूचित जातियों को उनके वर्तमान निवास स्थान से स्थानांतरित करके पष्थक अनुसूचित जाति गांव स्थापित किए जाने की व्यवस्था होनी चाहिए जो हिंदू गांवों से दूर और स्वतंत्र हों।

अधिवास आयोग

(2) नए गांवों में अनुसूचित जातियों के आवास के लिए संविधान में अधिवास आयोग की स्थापना के लिए व्यवस्था की जानी चाहिए।

अनुसूचित जातियों के लिए भूमि

(3) ऐसी सभी सरकारी भूमि, जो कृषियोग्य है और किसी के कब्जे में नहीं है, अनुसूचित जातियों की नई बस्तियां बसाने के लिए इस प्रयोजन के लिए गठित आयोग को सौंप दी जानी चाहिए।

केन्द्रीय सरकार प्रतिवर्ष न्यूनतम पांच करोड़ रुपए उपलब्ध कराए

(5) संविधान में इस बात की व्यवस्था होनी चाहिए कि केन्द्रीय सरकार प्रतिवर्ष अधिवास आयोग को न्यूनतम पांच करोड़ रुपए की राशि उपलब्ध कराएगी ताकि वह इस संबंध में अपने कर्तव्यों का निर्वहन कर सके।

श्रीमान अध्यक्ष महोदय ये संकल्प वास्तव में हमारे आंदोलन का मुख्य सहारा है। इनमें शब्दचयन इतने स्पष्ट रूप से किया गया है कि आपसे इनकी सिफारिश करने के लिए मुझे कोई लंबा चौड़ा भाषण देने की आवश्यकता नहीं है। पहले संकल्प में सरकार द्वारा क्रिप्स प्रस्तावों की घोषणा करने की निंदा की गई है जोकि अनुसूचित जातियों के हितों के लिए हानिकारक हैं। संकल्प II, III और

IV में वे व्यवस्थाएं दी गई हैं जिन्हें अनुसूचित जातियों के आर्थिक और सामाजिक कल्याण के लिए भावी संविधान में शामिल किया जाना नितांत जरूरी है। हमें हिंदू जाति के लुभावने आश्वासनों पर कोई विश्वास नहीं है। ऐसे लोगों पर भला कौन विश्वास कर सकता है जो पूना समझौते की स्याही सूखने से पहले ही उसके विरुद्ध हो गए थे? यदि भारत के लाखों दलित वर्गों का भाग्य ऐसे समुदायों के हाथों सौंप दिया जाता है जो अनुसूचित जातियों द्वारा अब तक की गई प्रगति को रोकने के इच्छुक हैं, तो वह दुनिया के इतिहास का सबसे काला दिन होगा। ये संकल्प हमारे महाधिकार पत्र हैं और दलित वर्गों के प्रत्येक सदस्य को इनमें निर्धारित किए गए उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए अपने जीवन का त्याग तक करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए। आज भी हमारे लोगों के साथ गांवों में गुलामों जैसा व्यवहार किया जा रहा है और यदि हमारा भाग्य हिंदू जाति के हाथों में सौंप दिया जाता है तो हम इस बात की कल्पना आसानी से कर सकते हैं कि हमारा भाग्य क्या होगा। इसलिए, यह हमारे समुदाय के प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य है कि वह इन संकल्पों का समर्थन करे। इन शब्दों के साथ ही मैं इन संकल्पों की आपके द्वारा स्वीकृति के लिए जोरदार सिफारिश करता हूं।

राव बहादुर एन. शिवराज ने इलाहाबाद के श्री राय साहब शामलाल से संकल्प का अनुमोदन करने को कहा।

राय साहब शामलाल ने कहा,

श्रीमान अध्यक्ष महोदय, देवियो और सज्जनो,

मुझे नासिक के अपने मित्र श्री बी. के. गायकवाड़ द्वारा प्रस्तुत किए गए संकल्प का अनुमोदन करने में अत्यधिक प्रसन्नता हो रही है। मैं पिछले लगभग तीन दशकों से दलित वर्गों का सामाजिक कार्यकर्ता रहा हूं। अपने चरम लक्ष्यों और उद्देश्यों का कोई अधिकृत कार्यक्रम न होना हमारी सबसे बड़ी कमी रही है। इस कमी को अब अभी प्रस्तुत संकल्पों द्वारा दूर किया जाएगा। जब दिल्ली में क्रिप्स प्रस्तावों का खुलासा हुआ था तो डॉ. अम्बेडकर ने बिना कोई समय व्यर्थ गवाएँ पूरे भारत की अनुसूचित जातियों के दिल्ली स्थित नेताओं को आमंत्रित किया था। वहां बैठक के पश्चात हमने सर्वसम्मति से प्रस्तावों को अस्वीकार करने का निर्णय लिया था, जो कि पूर्णतः एकपक्षीय और दलित वर्गों को अत्यधिक क्षति पहुंचाने के लिए तैयार किए गए थे। मेरी समझ से एक लंबा चौड़ा भाषण देकर आपको यह समझाना कि हमारी कमियां क्या हैं और हम किन कमजोरियों से परेशान हैं, अनावश्यक है। हममें से प्रत्येक रोज उनका सामना करता है और यहां उनका उल्लेख करना अनावश्यक

माना जाएगा। यह संकल्प हमारी वर्तमान पीढ़ी और आने वाली पीढ़ियों के भले के लिए है इसलिए इसे सर्वसम्मति से स्वीकृति दी जानी चाहिए। मैं इस सम्मेलन को, इस उद्देश्य को पूरा करने में अपने प्रांत के हार्दिक समर्थन का विश्वास दिलाता हूं। इन कुछ शब्दों के साथ मैं इस संकल्प का समर्थन करता हूं और आपकी स्वीकृति के लिए इसकी सिफारिश करता हूं।

इस संकल्प का निम्नलिखित प्रतिनिधियों ने समर्थन किया:

(1) श्री गोपाल सिंह, एम.बी.ई., एम.एल.ए. (पंजाब)

(2) श्री एन. एन. दास, एम.ए., बी.एल. (कलकत्ता)

(3) श्री आर. आर. भोले, बी.ए., एल.एलबी., एम.एलए., (पूना, बंबई)

(4) श्री ए. डी. राय, बी.ए., एम.एल.सी., (जेस्सोर, बंगाल)

(5) श्री पी. एम. पटानी, (अहमदाबाद, गुजरात)

(6) श्री मांगीलाल (राजपूताना)

(7) श्री एच. ए. कोसारे, बी.ए. (नागपुर)

(8) श्री बी. एच. वराले, एम.एल.ए. (कर्नाटक, बंबई)

संकल्पों के प्रस्तावित और विधिवत समर्थित होने पर अध्यक्ष ने उन पर मतदान कराया। चूंकि किसी ने भी इन संकल्पों का विरोध नहीं किया, अतः उन्होंने इन संकल्पों को सर्वसम्मति से पारित घोषित किया।

इसके पश्चात अध्यक्ष, राव बहादुर एन. शिवराज ने संकल्प का दूसरा भाग अर्थात संकल्प का खंड V प्रस्तुत करने के लिए श्री डी. जी. जाधव ,बी. ए., एल.एलबी, एम.एलए., जलगांव (बंबई) को आमंत्रित किया।

संकल्प – श्री डी. जी. जाधव

श्री डी. जी. जाधव ने संकल्प को प्रस्तुत करते हुए कहा,

''श्रीमान अध्यक्ष महोदय, प्रतिनिधि बंधुओं, देवियो और सज्जनो, वह संकल्प, जिसको प्रस्तुत करने का गौरव मुझे प्राप्त हुआ है, निम्नानुसार है:

संकल्प V: अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिसंघ की स्थापना

इस सम्मेलन का विचार है कि अनुसूचित जातियों के राजनैतिक आंदोलन

को चलाने के लिए एक केन्द्रीय राजनैतिक संगठन की स्थापना का सही समय आ गया है। इसलिए, यह सम्मेलन भारत की अनुसूचित जातियों के केन्द्रीय राजनैतिक संगठन के रूप में अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिसंघ की स्थापना का संकल्प करता है तथा अनुसूचित जातियों के सभी स्थानीय राजनैतिक संगठनों से इस केन्द्रीय संगठन में अपना विलय करने और इसके माध्यम से कार्य करने की अपील करता है। इस प्रयोजन के निष्पादन के लिए यह सम्मेलन अखिल भारतीय अनुसूचित जाति परिसंघ का संविधान बनाने के लिए अध्यक्ष महोदय को एक समिति बनाने के लिए प्राधिकृत करता है, जिसके अध्यक्ष वह स्वयं होंगे। यह समिति अपनी रिपोर्ट एक अंतरिम परिषद को प्रस्तुत करेगी जिसमें निम्नलिखित सदस्य होंगे जिनका अनुमोदन प्राप्त होने पर यह संविधान लागू हो जाएगाः

बंगालः	श्री आर. एल. बिस्वास
	श्री ए. डी. राय
	श्री आर. एस. धूसिया
	श्री बी. सी. मण्डल
बंबईः	श्री डी. जी. जाधव
	श्री पी. एन. राजभोज
	श्री बी. के. गायकवाड़
पंजाबः	श्री गोपाल सिंह
	श्री सेठ किसनदास
सेंट्रल प्राविन्सेज (सी.पी.) और बरारः	श्री आर. वी. कावाड़े
	श्री के. एच. शेन्द्रे
	श्री एच. एल. कोसारे
संयुक्त प्रांतः	राय साहब शामलाल
	राय साहब रामसहाय
	डॉ. नंदलाल जायसवाल
	श्री बद्रीप्रसाद बाल्मीकि
	बाबू तिलकचन्द कुरील

देवियो और सज्जनो, मुझे पूरी उम्मीद है कि यह संकल्प, जिसको मैं आपके द्वारा स्वीकार किए जाने की सिफारिश कर रहा हूं, आप सभी को पसंद आएगा और इसे आपका सर्वसम्मति से समर्थन प्राप्त होगा। किसी को भी यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि एकता में शक्ति होती है, इसका महत्व तो स्वतः स्पष्ट है। यह सामूहिक दबाव बनाने का समय है और जब तक हम एक संगठन के अंतर्गत अपनी पूरी शक्ति नहीं लगाते हैं तब तक हम अन्य बड़े समुदायों द्वारा किए जा रहे आक्रमणों का प्रतिकार करने की आशा नहीं कर सकते हैं। हम सब यह जानते हैं कि हिंदू जाति कांग्रेस के अंतर्गत और मुसलमान अपनी लीग के अंतर्गत बहुत शक्तिशाली ढंग से संगठित हैं। इन तथ्यों को जानते हुए भी, यदि हम एक परिसंघ के अंतर्गत संयुक्त नहीं होते हैं, तो हमारे विरोधी हमारी इस फूट का लाभ उठाएंगे और हमारे ही एक भाग को दूसरे से लड़वाएंगे। इस प्रकार, जब हम छोटे–छोटे झगड़ों में आपस में उलझे होंगे तो दुनिया को यह बताया जाएगा कि दलित वर्गों की पृथक अस्तित्व जैसी कोई बात ही नहीं है। हमारे पास अपने विरोधियों से लड़ने का कोई अवसर न होगा और इस प्रकार हमारी फूट हमारे पतन का कारण बनेगी। कोई भी इस बात का आसानी के साथ अनुमान लगा सकता है कि आने वाले समय में सबसे खराब अयोग्यताएं हमारा इंतजार कर रही हैं, अतः क्या हमें हिंदू जाति के भले के लिए अपने घुटने टेक देने चाहिए?

इस संकल्प की मांग है कि सभी प्रांतीय संगठनों को एक केन्द्रीय संगठन के अंतर्गत मिलकर कार्य करना चाहिए। युद्ध के समय युद्धरत देशों की राजनैतिक पार्टियां अपने अस्तित्व को भूलकर साझे शत्रु का सामना करने के लिए मिलकर कार्य करती हैं। हमें समय रहते यह जान लेना चाहिए कि हमारी लड़ाई हमारे अस्तित्व की लड़ाई से किसी भी मायने में कम नहीं है। मुझे इस बात का पूर्ण विश्वास है हममें से प्रत्येक व्यक्ति गुलाम की तरह जीने की अपेक्षा मर जाना पसंद करेगा। तो क्यों नहीं, इस पुरानी कहावत का अनुसरण करिए कि छोटी रोकथाम बड़े उपचार की तुलना में कहीं बेहतर है। अत्यधिक विलंब होने के पहले ही संगठित हो जाइए और अपनी ओर देख रही बुराइयों को रोकिए। यदि बुराइयों ने आप पर कब्जा जमा लिया, तो उनका उपचार संभव न हो पाएगा। यह संभव है कि हममें से कुछ लोगों को एक नेतृत्व के अंतर्गत कार्य करने में अपने महत्व की कमी प्रतीत हो लेकिन मैं ये आप पर छोड़ता हूं कि क्या कुछ व्यक्तियों के महत्व की कमी लाखों व्यक्तियों को होने वाली हानि से बड़ी है। मैं आपसे न केवल सर्वसम्मति से इस संकल्प को स्वीकार करने की अपील करता हूं बल्कि यह आग्रह भी करता हूं कि बिना समय व्यर्थ किए विभिन्न स्थानीय संगठनों को एक केन्द्रीय नेतृत्व के अंतर्गत ले आएं। मेरे कहने का तात्पर्य यह नहीं है कि कुछ ऐसे महत्वपूर्ण संगठन हैं जो हमारे साथ नहीं

है बल्कि मैं जो मैं कह रहा हूं उसका तात्पर्य यह है कि कोई भी संगठन, भले ही वह महत्वपूर्ण न हो, हमारे संगठन से अलग नहीं रहना चाहिए। इन कुछ शब्दों के साथ मैं आपकी स्वीकृति के लिए इस संकल्प की सिफारिश करता हूं।

इसके पश्चात राव बहादुर एन. शिवराज ने संकल्प का अनुमोदन करने के लिए राय साहब एन. सी. घूसिया, बंगाल को आमंत्रित किया।

तदनुसार राय साहब एन. सी. धूसिया ने संकल्प का अनुमोदन किया।

अनंतर निम्नलिखित ने इस संकल्प का समर्थन कियाः

(1) श्री पी. एन. राजभोज, पूना (बंबई)

(2) श्री मांगीलाल (राजपुताना)

(3) श्री बी. सी. मण्डल, बी.ए. (कलकत्ता)

(4) श्री बद्रीप्रसाद वाल्मीकि, इलाहाबाद (उत्तर प्रदेश)

(5) श्री पी. एल. के. तालिब, एम.ए., एलएल.बी. (लखनऊ, उत्तर प्रदेश)

(6) श्री पी. जे. रोहम, एम.एल.ए., अहमदनगर (बंबई)।

राव बहादुर एन. शिवराज ने कहा, ''चूंकि संकल्प संख्या V को प्रस्तावित, विधिवत अनुमोदित और समर्थित किया जा चुका है, अब मैं इस पर आपके मत आमंत्रित करता हूं। वे सभी व्यक्ति जो इस संकल्प के पक्ष में हैं अपनी सहमति दर्शाने के लिए अपने हाथ उठाएं (सभी लोग अपने हाथ उठाए प्रतीत हुए)। ऐसे सभी व्यक्ति जो इस संकल्प के विरुद्ध हैं अपने अननुमोदन को दर्शाने के लिए अपने हाथ उठाएं। मुझे कोई भी इस संकल्प के विरुद्ध नहीं मिला है। मैं इस संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित करता हूं।''

डॉ. अमबेडकर द्वारा समापन भाषण

राव बहादुर एन. शिवराज ने इसके पश्चात डॉ. अम्बेडकर द्वारा किए गए वायदे के अनुसार उनसे भाषण देने का अनुरोध किया।

डॉ. अम्बेडकर इस बार मराठी में बोले, उन्होंने कहाः

मित्रों, पिछले दस वर्ष के दौरान राजनैतिक आंदोलन ने बहुत प्रगति की है। फिर भी मैं इस बात के प्रति पूर्णतः आश्वस्त हूं कि जहां तक अछूतों का सवाल है, आपके द्वारा आज पारित संकल्प एक नए युग का सूत्रपात है। जैसा कि आप

जानते हैं मैं कल से अपने नए पद का कार्यभार संभालने जा रहा हूं। इसलिए पिछले बीस वर्ष के दौरान मेरे द्वारा किए गए कार्यों का ब्यौरा आपको देना मैं अपना कर्तव्य मानता हूं। (यहां पर डॉ. अम्बेडकर ने दलित वर्गों द्वारा पिछले बीस वर्ष के दौरान की गई राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक प्रगति का ब्यौरा मराठी भाषा में पुनः प्रस्तुत किया।)

मैं आपको बताना चाहता हूं कि मुसलमानों और अछूतों की स्थिति में पर्याप्त अंतर है हालांकि दोनों को ही अल्पसंख्यक माना जाता है। हमारे समुदाय की तुलना में मुसलमान समुदाय बहुत संपन्न हैं। अंग्रेजों के आने से पहले तक वे इस देश के शासक थे। इस प्रकार विगत में उनकी स्थिति श्रेष्ठ रही है और उनके द्वारा की गई प्रगति निश्चित तौर पर हमसे बहुत अधिक है। शताब्दियों से हमारा शोषण होता रहा है। हमारी आर्थिक स्थिति निर्धनता की पराकाष्ठा की द्योतक है। हम केवल जनसंख्या के आधार पर मुसलमानों से अपनी तुलना नहीं कर सकते हैं। हमें प्रारम्भ से ही केवल अपने प्रयासों पर भरोसा करते हुए अपने लिए कार्य करना होगा। हमें अपने समुदाय को ऊंचा उठाना होगा। मेरी नई नियुक्ति के कारण अब इस कार्य को करने का दायित्व और लोगों पर आ गया है। मुझे पद से कोई प्यार नहीं है मैं बिल्कुल ठीक हूं जैसाकि मैं पहले था। मैं नहीं समझता हूं कि ''माननीय डॉ. अम्बेडकर'' और साधारण ''डॉ. अम्बेडकर'' में कोई अंतर है। अपनी नियुक्ति के संबंध में जो बात मैं। सर्वाधिक महत्वपूर्ण मानता हूं वह यह है कि अब एक परंपरा स्थापित हो गई है कि की कार्यकारिणी परिषद में दलित वर्गों के प्रतिनिधि के लिए एक स्थान होगा। ब्राह्मणवाद के लिए यह एक प्राणघातक धक्का है। इसी बात में मेरी नियुक्ति का महत्व निहित है। इस प्रकार की किसी परंपरा का होना किसी भी प्रकार से ब्राह्मणवाद के हित में नहीं था। इसको मैं अछूतों के लिए एक महान विजय मानता हूं।

बहुत से लोग ऐसे हैं जिनका व्यवहार मेरे प्रति ठीक नहीं है। मैं स्वभाव से अकेला रहने वाला और अपना समय पढ़ने में बिताने वाला व्यक्ति हूं। अनेक लोग मेरे इस स्वभाव को इस बात का संकेत समझते हैं कि मैं लोगों से उचित रूप से व्यवहार नहीं करता हूं और उन्हें अनदेखा करता हूं। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि मेरा कभी भी किसी का अपमान करने का उद्देश्य नहीं रहा है। मेरा समय सीमित है। मुझे बहुत से कार्य करने हैं और मेरे पास कोई सहायक नहीं है।

अनेक हिंदू मुझे अपने शत्रु के रूप में देखते हैं। वे शिकायत करते हैं कि मैं उनकी भावनाओं को आहत करने के लिए कठोर वचनों का प्रयोग करता हूं। मैं जानता हूं कि मैं हृदय से दयालु हूं और यहां तक कि ब्राह्मणों में भी मेरे अनेक

मित्र हैं। लेकिन एक दयालु हृदय वाले व्यक्ति को भी सच तो बोलना ही पड़ता है। जब वह अपने निकट संबंधियों के साथ कुत्तों से भी खराब व्यवहार होता हुआ तथा उनकी भावी प्रगति को हर प्रकार से अवरुद्ध देखता है तो किस प्रकार से वे मुझसे उनके प्रति दयापूर्ण व्यवहार की आशा कर सकते हैं जैसेकि उन्होंने कुछ किया ही न हो। मैं अपनी भावनाओं को दबाने का और अपने विरोधियों के साथ सम्मानपूर्ण व्यवहार करने का प्रयास करता हूं लेकिन अपराधबोध वाले वे लोग इससे चिढ़ते हैं, हालांकि मेरा अपने विरोधियों के प्रति व्यवहार कभी भी दयापूर्ण न रहा हो, ऐसा नहीं है।

निश्चित तौर पर मेरा विचार है कि देश के राजनीतिक अधिकारों को हिंदुओं, मुसलमानों और दलित वर्गों के बीच बांटा जाना चाहिए। दलित वर्गों को कानून के माध्यम से हिंदुओं और मुसलमानों के साथ देश की सरकार में उचित हिस्सा मिलना चाहिए। भविष्य का संविधान केवल उसी स्थिति में काम कर सकता है यदि वह इन तीन स्तंभों पर आधारित हो। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए आप सबको एक झंडे के नीचे एक साथ आना होगा और केवल एक ही संगठन बनाना होगा। यदि हम अभी तक संविधान में वह स्थिति नहीं प्राप्त कर पाए हैं जोकि हमारा हक है तो इसका कारण यह है कि हम संगठित नहीं हैं। यदि आप सभी एकता के सूत्र में बंध जाएंगे और एक संगठन के अंतर्गत कार्य करेंगे तो मुझे कोई संदेह नहीं है कि आप उस स्थिति तक जरूर पहुंचेंगे जिसके आप हकदार हैं।

कांग्रेस एक बड़ा संगठन है और इसका प्रभाव दूर–दूर तक फैला हुआ है। स्वाभाविक रूप से यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि ऐसा क्यों है, और हमारा संगठन इतना फैला हुआ क्यों नहीं है। दो बातें कांग्रेस के पक्ष में हैं। भारत का पूरा प्रेस कांग्रेस के पीछे है। इसको पूर्ण प्रचार मिलता है। हमें राष्ट्रवादी हिंदू प्रेस से कोई प्रचार नहीं मिल सकता। दूसरे, कांग्रेस के पास धन है। आपको याद होगा कि कांग्रेस ने एक करोड़ रुपए की निधि एकत्र की थी। यह बड़ी निधि ही इसकी सफलता का रहस्य है। लेकिन अपने समुदाय से संबंधित कार्य के लिए मैंने कभी भी निधि के लिए नहीं कहा। हमने जो भी प्रगति और संगठन प्राप्त किया है वह हमने निधि की सहायता के बिना ही किया है। तथापि, मैं आपको बताना चाहूंगा कि अपने संगठन को खड़ा करने के लिए निधि एकत्र करना बहुत आवश्यक है और निधि के बिना हमारा समुदाय आगे बढ़ने में तथा पहले से ही सुसंगठित अन्य समुदायों के साथ कदम से कदम मिलाकर चलने में सफल नहीं होगा।

सार्वजनिक जीवन में गलतियां होती हैं, लेकिन हमें इनसे हतोत्साहित नहीं होना चाहिए। केवल गलतियों के माध्यम से ही हम अपनी कमजोरियों का पता लगा

सकते हैं और उन्हें सुधार कर सकते हैं।

पूरे भारत के लिए एक संगठन बनाने संबंधी आपके आज के निर्णय से मैं बहुत प्रसन्न हूं। अब आपको प्रत्येक प्रांत में इसकी शाखाएं स्थापित करनी होंगी और आपको यह सुनिश्चित करना होगा कि सभी मौजूदा संगठन इसी एक अखिल भारतीय परिसंघ में विलय हो जाएं।

यह मेरी बहुत बड़ी इच्छा है कि हमारे संगठन के भवन न केवल प्रत्येक प्रांत बल्कि प्रत्येक नगर में हों जोकि कार्यालय और क्रियाकलाप के केन्द्र के रूप में कार्य करें। कल रात मैं श्री दशरथ पाटिल, जोकि बेला (नागपुर) से हैं, से बात कर रहा था। मैंने उनसे नागपुर में जमीन खरीदकर हमारे संगठन का भवन खड़ा करने के लिए कहा। आप यह कार्य बीस से पचीस हजार रुपए में कर सकते हैं। यदि आप ऐसा करेंगे और नागपुर में ऐसे किसी भवन की नींव का पत्थर रखने के लिए मुझे आमंत्रित करेंगे तो मुझे आपका आमंत्रण स्वीकार करने में बहुत अधिक प्रसन्नता होगी। (इस अवसर पर श्री सीताराम हदके ने भानखेड़ा बस्ती, नागपुर की ओर से 250 रुपए भेंट किए।) डॉ. अम्बेडकर ने यह राशि स्वीकार की और इसको भवन निधि में लगाने के लिए श्री दशरथ पाटिल को दे दिया।

श्री आर. वी. कवाडे, महासचिव ने धन्यवाद व्यक्त किया। इसके पश्चात अध्यक्ष ने सत्र की समाप्ति की घोषणा की।[1]

● ● ●

---

[1] रिपोर्ट ऑफ डिप्रेस्ड क्लासेज कांफ्रेंस, नागपुर अधिवेशन, जुलाई, 1942

75

शिक्षित, आंदोलित, संगठित होकर, विश्वास रखें और आशा न छोड़ें

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन 18 से 20 जुलाई, 1942 को नागपुर में आयोजित किया गया। इस अवसर पर स्वागत समिति के अध्यक्ष और सदस्यों ने 20 जुलाई, 1942 को डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को मानपत्र प्रस्तुत किया। और उस मानपत्र के संबंध में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के उत्तर का मसौदा नीचे प्रस्तुत है: —संपादक।

माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर

एम.ए., पीएच.डी., डी.एससी., जे.पी., बैरिस्टर—एट—ला

सदस्य, महामहिम वायसराय की कार्यकारी परिषद

को प्रस्तुत संबोधन

हमारे सबसे प्रिय बाबा साहेब,

हम, नागपुर में तीसरे अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन की स्वागत समिति के अध्यक्ष और सदस्य आपके द्वारा 50 वर्ष की आयु पूरी करने के अवसर पर भारत के लाखों दलितों के हितों के संबंध में आपके लंबे, स्थायी और अथक उत्साह और कार्य के संबंध में अपनी कृतज्ञ प्रशंसा के प्रतीक के रूप में बहुत ही सम्मानपूर्वक आपको यह मानपत्र प्रस्तुत करते हैं।

संयोग से यह वर्ष भारत के दलित वर्गों के इतिहास में सर्वाधिक महत्वपूर्ण वर्ष है क्योंकि आपने अपनी आयु के 50 वर्ष पूरे किए हैं और अपने कार्य का क्षेत्र सक्रिय राजनीति से बदलकर कार्यपालिका में कर लिया है। आपके जीवन का इतिहास यदि कुछ है तो और कुछ नहीं बल्कि लाखों उत्पीड़ितों की प्रगति और एक व्यक्ति का त्याग है। आप हमारे लिए केवल एक व्यक्ति नहीं, बल्कि एक पूरी संस्था हैं। आप हमारे एकमात्र मार्गदर्शक, मित्र और दार्शनिक; नहीं, आप तो दलित वर्गों के एकमात्र मसीहा हैं। हमारे वर्गों के उन्नयन के लिए उचित और न्यायोचित कार्यों में आपके निरंतर और सतत प्रयास वास्तव में इन सभी लाभों, जो हमने अब तक प्राप्त किए हैं, के माध्यम हैं।

आपने, जो एक उभरते हुए वकील जिनका भविष्य बहुत व्यापक था, अपना सब कुछ दांव पर लगाते हुए परेशान और उत्पीड़ित लोगों को राहत दिलाने के लिए पूरे हृदय से अपने आपको संघर्ष में झोंक दिया। ऐसा करने में आप इस बात का अनुभव करने के लिए नहीं रुके कि आप अपने भविष्य के ग्राहकों, अर्थात अगड़े वर्गों का विरोध दलित वर्गों के हितों की लड़ाई के लिए जो तथाकथित हिंदू जाति के विरुद्ध लड़ाई है, का विरोध कर रहे हैं। उस समय किसी ने भी यह अनुमान नहीं किया था कि आपके प्रयास दो दशकों के छोटे समय में दलित वर्गों के अधिकारों की मान्यता रूपी परिणामों के रूप में देश की सर्वोच्च कार्यपालिका में एक स्थान पर एक हस्ती की तरह सामने आएंगे।

रेलवे स्टेशन नागपुर से सम्मेलन के पंडाल तक का जुलूस और सम्मेलन सत्र में लोगों की भारी उपस्थिति इस बात का प्रमाण है कि हमारे समुदाय के लोग आपका किस सीमा तक आदर करते हैं। यह स्वतः उद्गार हमारे वर्गों का आपके द्वारा किए गए कार्यों के संबंध में आपके लिए उनके समर्पण को दर्शाता है। आप हमारे लिए सृष्टिकर्ता से बढ़कर हैं। हमको सृष्टिकर्ता द्वारा एक तलविहीन गड्ढे में फेंक दिया गया था, लेकिन उसके विपरीत आपने हमको इसमें से निकालने के लिए सब कुछ किया।

हमें इतिहास में ऐसा कोई भी नहीं मिलता है जो दिल और दिमाग से आपकी बराबरी कर सके, जो केवल हमारे वर्गों की सेवा के मामले में आपके जितना उदार हो, हमारे लिए अपनी जेब हमेशा खुली रखता हो और अपना पूरा जीवन और ऊर्जा हमारे हित को समर्पित करता हो। हम अपने हृदय के उद्गारों को शब्दों में नहीं व्यक्त कर सकते और अपनी भावनाओं का प्रकटीकरण नहीं कर सकते। यह कहना इस बात के लिए पर्याप्त होगा कि यदि पृथ्वी पर कोई जीवित भगवान है तो वह आपके रूप में प्रकट हुआ है। हम पुनः आपको अपना हार्दिक आभार प्रस्तुत करते हैं और आपके लंबे जीवन की कामना करते हैं, ताकि इस पृथ्वी पर आपका मिशन पूरा हो सके।

हम हैं, आपके सर्वाधिक कृतज्ञ और समर्पित अनुयायी,

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन की स्वागत समिति के अध्यक्ष और सदस्य

नागपुर,

20 जुलाई, 1942

इस मानपत्र का जवाब देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहाः

"देवियों और सज्जनों, मैं इस मानपत्र के लिए आपका धन्यवाद करता हूं।

मुझे आश्चर्य है कि इस प्रकार का कोई मानपत्र क्या आवश्यक था। टोस्टों और मानपत्रों का उनके पीछे एक विचित्र इतिहास रहा है, किसी भी कीमत पर टोस्ट का तो रहा ही है। अंग्रेजी समाज में राजा के स्वास्थ्य के लिए शराब पीने का समारोह सिविल वार के बाद और पुनर्स्थापना की अवधि के दौरान आया। मूल रूप से यह एक बाध्यकारी मामला था और उन अंग्रेजी रेजीमेंटों के खिलाफ बलपूर्वक लागू किया जाता था जो राजा के विरुद्ध विद्रोह करते थे। यह नए राजा के प्रति वफादारी को लागू करने के लिए किया जाता था और उनको राजा के स्वास्थ्य के लिए पीने के वास्ते बाध्य किया जाता था। अब राजा के स्वास्थ्य के लिए पीना एक सर्वव्यापी प्रक्रिया बन गई है और कोई भी इसके उद्‌गम के बारे में चिंता नहीं करता है। इसका उद्‌गम, जैसाकि मैंने आपको बताया अपने आपको सिद्ध करने के लिए संदेहजनक वफादारी को बाध्य करने की इच्छा में निहित था। मैं जानता हूं आपकी वफादारी संदेहजनक नहीं है और मुझे ये सोचना चाहिए था कि इस प्रकार के मानपत्र द्वारा ऐसी कृपा करना अनावश्यक था। अब क्योंकि आप मुझसे इसे स्वीकार करने का आग्रह कर रहे हैं, तो मैं आपके द्वारा मेरे प्रति दर्शाए गए प्यार और लगाव की भावनाओं के प्रतीक के रूप में इसका स्वागत करता हूं। यह मेरे द्वारा अछूतों के लिए किए गए कार्यों के संबंध में आपकी प्रशंसा का प्रतीक है। यह मानपत्र इस बात को सिद्ध करता है कि मैंने भारतीय राजनीति को भारत में अछूतों के नाम पर स्वीकार किया है। हमारा आदर्श इस बात के लिए महत्व प्राप्त करना है कि हमें हिंदुओं और मुस्लिमों के साथ इस देश में सरकार चलाने के लिए सम्माननीय भागीदार माना जाए – ऐसे सहभागी जोकि सम्माननीय और समान शर्तों पर हों। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि में उन आदर्शों को प्राप्त करने के लिए प्रयास करूंगा जो हमने अपने लिए निर्धारित किए हैं।

आपको मुझसे इस संबंध में आश्वासन प्राप्त करने की कोई आवश्यकता नहीं है कि मैं इस आदर्श के लिए लड़ाई लडूंगा। इस संबंध में मुझे आपके आश्वासन की अधिक आवश्यकता है। आपने मुझे अपने प्यार और लगाव का आश्वासन दिया है। यह अनावश्यक था। मैं दूसरी प्रकार का आश्वासन चाहता हूं। यह आश्वासन शक्ति, एकता और दृढ़ निश्चय का है जोकि हमारे अधिकारों, हमारे अधिकारों संबंधी लड़ाई के लिए हो और तब तक वापस न माना जाए जब तक हम अपने अधिकारों को जीत न लें। मैं अपना कार्य करने का वादा करता हूं। न्याय हमारी ओर है और

मुझे अपनी लड़ाई हारने का कोई कारण नजर नहीं आता। यह लड़ाई मेरे लिए एक आनंद का मामला है। यह लड़ाई पूर्ण रूप से आध्यात्मिक है। इसमें कुछ भी भौतिक अथवा सांसारिक नहीं है। हमारे लिए यह लड़ाई संपदा अथवा शक्ति के लिए नहीं है। यह लड़ाई स्वतंत्रता के लिए है। यह लड़ाई मानवीय व्यक्तित्व के सुधार के लिए है जो कि हिंदू सामाजिक प्रणाली द्वारा दबाई और छिन्न–भिन्न की गई है और ऐसे ही दबाई और छिन्न–भिन्न की जाती रहेगी। यदि इस राजनीतिक संघर्ष में हिंदू जीत जाते हैं और हम हार जाते हैं, तो आपके लिए मेरी अंतिम सलाह ये है कि शिक्षित हों, आंदोलित हों और संगठित हों, अपने आपमें विश्वास रखें और आशा कभी न छोड़ें। मैं हमेशा आपके साथ रहूंगा, जैसा कि मैं जानता हूं आप हमेशा मेरे साथ रहेंगे।''[1]

● ● ●

[1] रिपोर्ट ऑफ डिप्रेस्ड क्लासेज कांफ्रेंस, नागपुर अधिवेशन, जुलाई, 1942

76

समुदाय की प्रगति का मूल्यांकन महिलाओं की प्रगति के आधार पर किया जाता है

अखिल भारतीय दलित वर्ग महिला सम्मेलन

दूसरा सत्र

नागपुर

20 जुलाई, 1942

कार्यवृत्त

अखिल भारतीय दलित वर्ग महिला सम्मेलन का दूसरा सत्र 20 जुलाई, 1942 को प्रातः 10 बजे मोहन पार्क, नागपुर में विशेष रूप से तैयार किए गए पंडाल में 75000 से अधिक श्रोताओं की उपस्थिति में प्रारंभ हुआ। महिला प्रतिनिधियों और आगंतुकों की संख्या लगभग 25000 थी। मंच पर माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सहित प्रतिष्ठित नेतागण विराजमान थे।

स्वागत गीतों के गायन के पश्चात् श्रीमती कीर्तिबाई पाटिल, अध्यक्ष, स्वागत समिति ने अपना भाषण दिया।

इसके पश्चात् श्रीमती नीरजाबाई पाटिल, महासचिव ने अपनी रिपोर्ट पढ़ी।

श्रीमती जयबाई चौधरी ने श्रीमती सुलोचनाबाई डोंगरे के नाम का प्रस्ताव अखिल भारतीय दलित वर्ग महिला सम्मेलन के इस द्वितीय सत्र के अध्यक्ष के रूप में किया।

श्रीमती राधाबाई कांबले ने इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया और तदनुसार श्रीमती सुलोचनाबाई डोंगरे ने अध्यक्ष पद ग्रहण किया और अपना भाषण दिया।

उन्होंने कहा,

''प्रतिनिधि बहनो, आपकी इच्छा पर हमारे नेता माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर आज इस सम्मेलन में आपको संबोधित करने के लिए सहमत हो गए हैं। समता सैनिक दल का एक और सम्मेलन भी आज इसी पंडाल में आयोजित किया जाना है। इसलिए मैं प्रस्ताव करती हूं कि विषय समिति द्वारा बनाए गए संकल्पों को

सम्मेलन के इस खुले सत्र में लंबे–लंबे भाषणों के बिना प्रस्तुत किया जाए, ताकि कार्यवाहियां कम समय में पूरी की जा सकें।

अब मैं अध्यक्ष पद से पहला संकल्प प्रस्तुत करती हूं जो निम्नानुसार हैः–

संकल्प संख्या 1

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन को समर्थनः

1. यह कि ये सम्मेलन नागपुर में 19 जुलाई, 1942 को आयोजित तीसरे ''अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन'' में पारित सभी संकल्पों का हार्दिक समर्थन करता है।

अब मैं इस संकल्प पर मतदान कराती हूं। क्योंकि कोई विरोध नहीं है, मैं इस संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित करती हूं।

इसके पश्चात् अध्यक्ष ने सुश्री प्रभावती बाई रामटैक ने संकल्प संख्या 2 और 3 प्रस्तुत करने के लिए कहा।

सुश्री प्रभावती रामटैक ने कहा, ''अध्यक्ष, प्रतिनिधियो, और मित्रो,

''मैं उन संकल्पों को पढ़ूंगी जोकि मुझे पढ़ने के लिए दिए गए हैंः

संकल्प संख्या 2

तलाक का कानूनः

यह कि यह सम्मेलन यह संकल्प करता है कि महिलाओं द्वारा उनके पति को तलाक दिए जाने के अधिकार को कानून द्वारा मान्यता प्रदान की जाए, और इसको सफल बनाने के लिए यह सम्मेलन सरकार से और समाज के नेताओं से कानून में आवश्यक परिवर्तन करने का अनुरोध करता है।

संकल्प संख्या 3

बहुविवाहः

यह कि यह सम्मेलन हमारे समाज में विद्यमान बहुविवाह के विचार से घृणा करता है क्योंकि यह महिलाओं के प्रति अन्याय है और इसलिए सरकार से इस कुरीति को रोकने अथवा रूपांतरित करने के लिए कानून में आवश्यक संशोधन अथवा परिवर्तन करने के लिए अनुरोध करता है।

ये संकल्प दीर्घकालीन मांगों का प्रतिनिधित्व करते हैं। हम प्रत्येक मंच से

इनको दोहरा रहे हैं। उनके लिए मेरे भाषण की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं आपके द्वारा उन्हें स्वीकार किए जाने की सिफारिश करती हूं।''

अध्यक्ष श्रीमती डोंगरे ने सुश्री भीमाबाई बाडगे से इन संकल्पों को अनुमोदित करने का आह्वान किया। तदनुसार उन्होंने इन संकल्पों का अनुमोदन किया। क्योंकि उनका कोई विरोध नहीं हुआ अध्यक्ष ने उनको सर्वसम्मति से पारित घोषित किया।

अध्यक्ष ने संकल्प संख्या 4 को प्रस्तुत करने का आह्वान किया जोकि श्रीमती राधाबाई कांबले द्वारा प्रस्तुत किया गया।

श्रीमती राधाबाई कांबले ने कहा, ''अध्यक्ष एवं प्रतिनिधि बहनो, मैं आपसे सर्वसम्मत स्वीकृति के लिए निम्नलिखित संकल्प प्रस्तुत करती हूं।

संकल्प संख्या 4

आर्थिक स्थितिः

यह कि यह सम्मेलन प्रस्ताव करता है कि मिलों, बीड़ी फैक्टरियों, नगरपालिकाओं और रेलवे में महिला कामगारों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने के लिए उनके अधिकारों को निम्नानुसार मान्यता प्रदान की जाएः–

(क) यह कि वे अन्य कर्मचारियों के मामले के अनुसार, वे भी एक वर्ष में 21 दिनों के आकस्मिक अवकाश और कम से कम एक माह के अवकाश की हकदार हैं।

(ख) यह कि ड्यूटी अथवा कार्य के समय इन कामगारों को दुर्घटनावश होने वाली मृत्यु, अथवा चोट के मामले में इनको अथवा इनके बच्चों को पर्याप्त मुआवजा दिया जाए।

(ग) यह कि उनके द्वारा 20 वर्ष कार्य करने की अवधि पूरी करने के पश्चात उनको कम से कम 15 रुपए की पेंशन प्रदान की जाए, और यह सम्मेलन सरकार तथा महामहिम वायसराय की कार्यकारी परिषद के श्रम सदस्य से यह अनुरोध करता है कि इन शिकायतों को दूर करने के लिए कानून द्वारा आवश्यक प्रावधान किए जाएं।''

श्रीमती जयबाई चौधरी ने संकल्प का अनुमोदन किया।

श्रीमती जयबाई चौधरी ने कहा,

अध्यक्ष एवं प्रतिनिधि बहनो,

मैं हृदय से इस संकल्प का अनुमोदन करती हूं। हममें से लगभग सभी श्रमिक हैं और यह बहुत आवश्यक है कि इस संकल्प में उल्लिखित प्रावधान करने के लिए कानून में संशोधन किया जाना चाहिए। इन प्रावधानों की अनुपस्थिति में अनेक श्रमिक परिवार कठिनाइयों का सामना कर रहे हैं। मैं आपके द्वारा सर्वसम्मति से इस संकल्प को पारित किए जाने की सिफारिश करती हूं।

अध्यक्ष ने इस संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित कर दिया। इसके पश्चात् अध्यक्ष ने सुश्री मंजुला कानफाडे से संकल्प संख्या 5 को प्रस्तुत करने के लिए कहा।

सुश्री मंजुला कानफाडे ने सर्वसम्मत स्वीकृति के लिए संकल्प संख्या 5 प्रस्तुत किया।

संकल्प संख्या 5

शिक्षाः

(क) यह कि इस सम्मेलन का विचार है कि दलित वर्गों में महिलाओं की शिक्षा का प्रतिशत बहुत कम है और यह कि उनमें शिक्षा का प्रसार बढ़ाने के लिए यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध करता है कि प्रत्येक प्रांत में प्रांतीय सरकार को अपने खर्च पर कम से कम 50 दलित वर्ग की छात्राओं के छात्रावास चलाने चाहिए।

(ख) यह कि यह सम्मेलन सरकार से अनुरोध और अपील करता है कि दलित वर्गों की अत्यंत निर्धनता, जो उन्हें स्कूलों और कालेजों में माध्यमिक और उच्च शिक्षा प्राप्त करना असंभव बनाती है, को देखते हुए प्रत्येक प्रांतीय सरकार को दलित वर्गों के ऐसे विद्यार्थियों को निःशुल्कता और छात्रवृत्ति देनी चाहिए जो माध्यमिक और कालेज शिक्षा लेने के लिए इच्छुक हों।

(ग) यह कि दलित वर्गों की महिलाओं में आम निरक्षरता को ध्यान में रखते हुए यह सम्मेलन देश की सभी प्रांतीय सरकारों से अनुरोध करता है कि वे कानून के माध्यम से उनमें अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा के लिए तत्काल उपाय करें और उन्हें लागू करे।

इस संकल्प को किसी भाषण की आवश्यकता नहीं है और मैं इसे आपकी सर्वसम्मत स्वीकृति के लिए संस्तुत करती हूं।

सुश्री लतिका गजभिए ने संकल्प का अनुमोदन किया।

इस संकल्प को निम्नलिखित के द्वारा भी समर्थित किया गयाः

(i) सुश्री सुलोचना नाइक (अमरावती)

(ii) सुश्री विरेन्द्रभाई तीर्थांकर (नागपुर)

(iii) सुश्री चंद्रभागा पाटिल (गोंदिया)

(iv) सुश्री कौशल्या नंदेश्वर (नागपुर)

अध्यक्ष ने इस संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित किया।

श्रीमती राधाभाई कांबले ने संकल्प संख्या 6 प्रस्तुत किया।

संकल्प संख्या 6

मिलों में महिला पर्यवेक्षकों की नियुक्ति के लिए कानूनः

यह कि अनेक मिलों में देखा गया है कि महिला कामगारों के कार्य के पर्यवेक्षण के लिए पुरुष पर्यवेक्षक नियुक्त किए जाते हैं। अनेक स्थानों पर इसके कारण अत्यधिक अवांछित परिणाम सामने आते हैं। इसलिए यह सम्मेलन केन्द्रीय सरकार से अनुरोध करता है कि वह उनके स्थान पर महिला पर्यवेक्षकों को नियुक्त करने के लिए कानून में आवश्यक प्रावधान करे।

श्रीमती इंदिराबाई पाटिल ने इस संकल्प का अनुमोदन किया।

यह संकल्प सर्वसम्मति से पारित हुआ।

अध्यक्ष श्रीमती डोंगरे ने संकल्प संख्या 7 और 8 को अध्यक्ष पद से प्रस्तुत किया।

संकल्प संख्या 7

विधायिकाओं में दलित वर्ग की महिलाओं का प्रतिनिधित्वः

यह कि केन्द्रीय और प्रांतीय विधायिकाओं में ली जाने वाली महिला प्रतिनिधियों के समान यह सम्मेलन इस बात का अनुभव करता है कि दलित वर्गों की महिलाओं की प्रगति और उन्नयन के लिए सभी विधायिकाओं और अन्य प्रतिनिधिक निकायों में उनके लिए स्थान आरक्षित किए जाएं।

अब मैं इस संकल्प पर मतदान कराती हूं। जो इसके पक्ष में हैं वे अपने हाथ उठाकर अपनी सहमति को दर्शाएं। (सभी अपने हाथों को उठाए हुए प्रतीत होते हैं)। वे जो इसके विरुद्ध हैं अपने हाथ उठाकर अपने विरोध को दर्शाएं। मुझे कोई विरोध दिखाई नहीं देता। मैं संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित करती हूं।

संकल्प संख्या 8

अखिल भारतीय दलित वर्ग महिला परिसंघः

यह कि यह सम्मेलन संकल्प करता है कि अखिल भारतीय अनुसूचित जाति महिला परिसंघ की स्थापना की जाए और इसके संचालन के लिए निधि बनाई जाए।

मैं इस संकल्प पर मतदान करवाती हूं। जो इसके पक्ष में हैं अपने हाथ उठाकर अपनी सहमति को दर्शाएं। (सभी अपने हाथों को उठाए हुए प्रतीत होते हैं)। वे जो इसके विरुद्ध हैं अपने हाथ उठाकर अपने अननुमोदन को दर्शाएं। मुझे कोई विरोध दिखाई नहीं देता। मैं संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित करती हूं।

इसके पश्चात् श्रीमती डोंगरे ने माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर से इस सम्मेलन को संबोधित करने का अनुरोध किया।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा भाषण

महिलाओं के सम्मेलन को संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहाः—

मुझे इस अवसर पर आपको संबोधित करने में बहुत प्रसन्नता हो रही है। किसी ऐसे व्यक्ति के लिए जो दलित वर्गों की प्रगति में रुचि रखता हो, महिलाओं की इस भीड़ को देखने से बढ़कर प्रसन्नता का कोई और अवसर नहीं हो सकता। आज से 10 वर्ष पहले ऐसा सोचा ही नहीं जा सकता था कि आप लोग लगभग 20000 से 25000 तक की मजबूत संख्या में इस प्रकार एकत्र होंगी। मैं महिलाओं के संगठन में बहुत विश्वास रखता हूं। मैं जानता हूं कि यदि उनकी समझ में आ जाए तो वे समाज की स्थिति को सुधारने के लिए बहुत कुछ कर सकती हैं। सामाजिक बुराइयों को दूर करने के लिए उन्होंने महान सेवाएं प्रस्तुत की हैं। मैं इसको अपने अनुभवों के आधार पर परखता हूं। जबसे मैंने दलित वर्गों के बीच में कार्य करना प्रारंभ किया है मैंने इसको हमेशा एक मुद्दा बनाया है कि पुरुषों के साथ महिलाएं भी कार्य करें। इसीलिए आप देखते होंगे कि हमारे सम्मेलन हमेशा से मिश्रित सम्मेलन होते हैं। मैं किसी समुदाय की प्रगति का मूल्यांकन महिलाओं द्वारा की गई प्रगति

से करता हूं, और जब मैं ऐसी सभा को देखता हूं तो मुझे विश्वास और प्रसन्नता दोनों ही होती हैं कि हमने प्रगति की है। मैं आपको कुछ बातें बताना चाहूंगा जोकि मैं समझता हूं कि आपको अपने मस्तिष्क में रखनी चाहिए।

साथ रहना सीखें; सभी बुराइयों से दूर रहें। अपने बच्चों को शिक्षा दें। उनमें महत्वाकांक्षा पैदा करें। उनके मस्तिष्क में यह बात भरें कि उन्हें महान बनना है। उनके मन से सभी प्रकार की हीन भावनाओं को निकाल दें। विवाह करने की जल्दी न करें; विवाह एक जिम्मेदारी है। आपको इसे अपने बच्चों पर नहीं थोपना चाहिए जब तक कि वे विवाह से उत्पन्न होने वाले दायित्वों को पूरा करने में वित्तीय रूप से सक्षम न हो जाएं। जो विवाह करेंगे उन्हें अपने मस्तिष्क में यह बात रखनी चाहिए कि अधिक बच्चे उत्पन्न करना एक अपराध है। अभिभावकों का सबसे बड़ा कर्तव्य इसमें निहित है कि वे प्रत्येक बच्चे को उसके माता–पिता से बेहतर शुरुआत दें। सबसे बढ़कर विवाह करने वाली प्रत्येक लड़की को उसके पति के साथ खड़ा होने दें, उसे पति का मित्र होने का दावा करने दें और उसके समान होने का दावा करने दें, और उसकी दासी होने से इंकार करने दें। मुझे विश्वास है कि यदि आप इस सलाह का अनुसरण करेंगे तो आप अपने लिए और दलित वर्गों के लिए सम्मान और गौरव लेकर आएंगे।

श्रीमती कीर्तिबाई पाटिल, अध्यक्ष, स्वागत समिति ने धन्यवाद दिया। इसके पश्चात् अध्यक्ष ने सत्र को समाप्त घोषित किया।[1]

●●●

[1] रिपोर्ट ऑफ डिप्रेस्ड क्लासेज कांफ्रेंस, नागपुर सत्र जुलाई, 1942

77

मैं अहिंसा और दब्बूपन के बीच अंतर करता हूं
समता सैनिक दल सम्मेलन

(दलित वर्ग स्वैच्छिक कार्यकर्ता कोर का सम्मेलन)

पहला सत्र – 1942

नागपुर

20 जुलाई, 1942

समता सैनिक दल का सम्मेलन 70000 से अधिक श्रोताओं की उपस्थिति में मोहन पार्क, नागपुर में 20 जुलाई, 1942 को विशेष रूप से तैयार किए गए पंडाल में 12.30 बजे अपराह्न को प्रारंभ हुआ। मंच पर माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर सहित प्रतिष्ठित नेता विराजमान थे।

निर्वाचित अध्यक्ष को स्वागत समिति के अध्यक्ष द्वारा उनकी कुर्सी तक ले जाया गया। निर्वाचित अध्यक्ष और अन्य प्रतिनिधियों द्वारा स्थान ग्रहण कर लेने के पश्चात् स्वागत गीतों के गायन के साथ कार्यवाही प्रारंभ हुई।

श्री ए. एल. कोसारे, बी.ए., अध्यक्ष, स्वागत समिति ने अपना भाषण दिया।

इसके पश्चात् श्री आर. आर. पाटिल, महासचिव ने अपनी रिपोर्ट पढ़ी।

श्री ए. एल. कोसारे ने श्री एम. एम. ससालेकर, महासचिव, समता सैनिक दल, बंबई को निर्वाचित अध्यक्ष, श्री गोपाल सिंह, एमएलए (पंजाब) से स्थान ग्रहण करने का अनुरोध करने को कहा।

तदनुसार श्री एम. एम. ससालेकर ने संकल्प प्रस्तुत किया।

श्री आर. आर. पाटिल, महासचिव, समता सैनिक दल ने प्रस्ताव का अनुमोदन किया।

श्री ए. एल. कोसारे, अध्यक्ष, स्वागत समिति ने घोषित किया कि चूंकि कोई विरोध नहीं हुआ है इसलिए मैं इस प्रस्ताव को सर्वसम्मति से पारित घोषित करता हूं। अब मैं श्री गोपाल सिंह से पद ग्रहण करने का अनुरोध करता हूं।

सरदार गोपाल सिंह ने अध्यक्ष पद ग्रहण किया और अपना अध्यक्षीय भाषण दिया।

श्री गोपाल सिंह (अध्यक्ष) ने श्री यू. एल. कारंदीकर, बंबई से पहला संकल्प प्रस्तुत करने को कहा।

श्री यू. एल. करांदीकर ने कहा,

श्रीमान अध्यक्ष महोदय मुझे दिया गया संकल्प इस प्रकार हैः—

संकल्प संख्या 1

अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन का समर्थन करे :

(क) यह कि अखिल भारतीय समता सैनिक दल सम्मेलन, अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन में पारित संकल्पों का हार्दिक समर्थन करता है, और सभी संभव तरीकों अर्थात् भौतिक आर्थिक और नैतिक रूप से उक्त संकल्पों के प्रावधानों को क्रियान्वित करने के दृढ़ निश्चय की घोषणा करना है।

दल की शाखाएंः

(ख) यह कि यह सम्मेलन समता सैनिक दल के प्रशंसकों और समर्थकों से प्रत्येक प्रांत और प्रांतों के प्रमुख नगरों में समता सैनिक दल की शाखाओं को स्थापित करने का अनुरोध और अपील करता है।

संविधानः

(ग) यह कि यह सम्मेलन संकल्प करता है कि अखिल भारतीय समता सैनिक दल के लिए एक संविधान बनाया जाए और इस प्रयोजन के लिए निम्नलिखित सज्जनों की एक समिति का गठन किया जाए। इस समिति द्वारा बनाए गए संविधान को मध्य प्रांत, बेरार और बंबई प्रांतों के समता सैनिक दल के पदाधिकारियों की संयुक्त उप—समिति को प्रस्तुत किया जाए जिनके अनुमोदन पर यह लागू हो जाएगा।

(1) श्री एम. एम. ससालेकर, बंबई

(2) श्री एस. बी. जाधव

(3) श्री आर. आर. पाटिल, नागपुर

(4) श्री ए. एल. कोसारे, बी.ए., नागपुर

(5) श्री पी. एल. के. तालिब, पीएच. डी., लखनऊ

यह संकल्प बहुत स्पष्ट है और इसके लिए किसी भाषण की आवश्यकता नहीं है। मैं आपके द्वारा सर्वसम्मत स्वीकृति के लिए इसकी सिफारिश करता हूं।

श्री एम. एम. ससालेकर ने इसका अनुमोदन किया।

इस संकल्प को निम्नलिखित सज्जनों द्वारा समर्थित किया गयाः

(1) श्री पी. जे. रोहाम, एमएलए (बंबई)

(2) श्री परमार (सिंध)

(3) श्री पी. एल. के. तालिब, एम.ए., एलएल. बी., पीएच. डी. (लखनऊ)

(4) श्री डी. जी. जाधव, बी.ए., एलएल.बी., एमएलए (जलगांव)

(5) श्री बी. के. गायकवाड़, एमएलए (नासिक)

श्री गोपाल सिंह, अध्यक्ष ने कहा चूंकि इसका कोई विरोध नहीं है, अतः मैं इस संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित करता हूं।*

अध्यक्ष ने दूसरा संकल्प प्रस्तुत करने के लिए श्री एस. बी. जाधव को आमंत्रित किया।

तदनुसार श्री एस. बी. जाधव ने सर्वसम्मत स्वीकृति के लिए संकल्प प्रस्तुत किया।

संकल्प संख्या 2

फासिस्ट आक्रामकता के विरुद्ध संयुक्त मोर्चाः

2. यह कि भारत को फासिस्ट आक्रामकता से तत्काल खतरा है और जर्मन तथा जापानी सेनाओं द्वारा हमारी मातृभूमि पर आक्रमण सन्निकट है। इस गंभीर घड़ी में राष्ट्र के सामने सबसे मुख्य कार्य तत्काल फासिस्ट विरोधी आक्रामकता तैयार करना है। यह सम्मेलन इसलिए भारत के लोगों से तत्काल इस प्रकार का संयुक्त मोर्चा बनाने का आह्वान करता है।

श्री एस. वी. गायकवाड़ ने संकल्प का अनुमोदन किया।

श्री गोपाल सिंह, अध्यक्ष ने संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित किया।

---

* परिशिष्ट II पर समता सैनिक दल का संविधान देखें।

संकल्प संख्या 3

अगला सत्रः

अध्यक्ष ने अध्यक्ष पद से निम्नलिखित संकल्प प्रस्तुत किया।

3. यह कि यह संकल्प किया जाता है कि दूसरे अखिल भारतीय समता सैनिक दल सम्मेलन का स्थान पंजाब में होगा जब वहां अखिल भारतीय दलित वर्ग सम्मेलन आयोजित किया जाएगा।

कोई विरोध नहीं। मैं इस संकल्प को सर्वसम्मति से पारित घोषित करता हूं।

अब मैं माननीय डॉ. बी. आर. अम्बेडकर से सम्मेलन को संबोधित करने का अनुरोध करता हूं।

जब माननीय डॉ. अम्बेडकर बोलने के लिए खड़े हुए तो उनका जोरदार अभिनंदन किया गया।

डॉ. अम्बेडकर द्वारा भाषण

समता सैनिक दल को डॉ. अम्बेडकर द्वारा दिए गए भाषण का सार निम्नानुसार हैः

मैं मध्य प्रांत में स्वैच्छिक सैनिकों के इस विशाल संगठन को देखकर बहुत प्रसन्न हूं। ये स्वैच्छिक सैनिक दल सर्वप्रथम वर्ष 1926 में बंबई में प्रारंभ किया गया था। समता सैनिक दल हमारे सामान्य आंदोलन का एक अविभाज्य हिस्सा है। वास्तव में यह एक शक्तिशाली साधन है। हमारे आंदोलन के लक्ष्य और उद्देश्य पूर्ण रूप से परिवर्तित हो चुके हैं। एक ऐसा समय था जब हमारा उद्देश्य अपने लोगों के लिए हिंदू समाज में समानता का स्थान प्राप्त करना था। आज हम भारत के राष्ट्रीय जीवन में एक विशिष्ट और पृथक तत्व के रूप में हिंदुओं के साथ समानता चाहते हैं। हमारे आंदोलन के उद्देश्यों और लक्ष्यों में परिवर्तन के साथ–साथ समता सैनिक दल के लक्ष्य और उद्देश्य भी बदल गए हैं। जिस बात ने इस स्वैच्छिक संगठन के गठन के लिए प्रेरित किया वह थी हमारे आंदोलन का मुख्य उद्देश्य अर्थात् हिंदुओं के साथ सामाजिक समानता के लिए दलित वर्गों के बीच मांग को प्रेषित करना। जैसा कि इसके नाम से स्पष्ट होता है इस संगठन की स्थापना दलित वर्गों के लिए हिंदू समाज में एक समानता का स्थान पाने के दृष्टिकोण से हिंदू समाज के पुनर्गठन के लिए की गई थी। आज इसका उद्देश्य हिंदुओं से बिल्कुल पृथक

होकर हिंदुओं के साथ समानता प्राप्त करना है। हम धर्म के संबंध में अलग होकर इसे प्राप्त करने की आशा करते हैं। हमें कई चरणों से गुजरना होगा। हमें अपने संघर्ष की शुरुआत राजनैतिक पृथकता मांगकर राजनीतिक समानता की मांग के साथ शुरू करनी होगी। यह सबसे कठिन कार्य था क्योंकि दलित वर्ग ऐसा कोई सुरक्षित मंच नहीं पा सके थे जहां से अपनी राजनीतिक मांगों को हवा दे सकें। एक ऐसा भी समय था जब यह बिल्कुल असंभव था। कांग्रेस संगठन इतना प्रभावी हो चुका था कि बंबई शहर में वह किसी और पार्टी को राजनैतिक बैठक भी नहीं करने देता था। कांग्रेस के स्वयंसेवक आकर ऐसी बैठकों को समाप्त कर दिया करते थे। किसी में भी कोई सभा करने का साहस नहीं था। इस संकट से निपटने के लिए हमने स्वयंसेवकों के मूल कर्तव्यों में एक नया कार्य जोड़ दिया और वो था राजनीति में भाग लेना तथा हमारे मंच को कांग्रेस स्वयंसेवकों के क्रियाकलापों से होने वाले व्यवधान को रोकना और उसकी सुरक्षा करना। यह कांग्रेस के स्वयंसेवकों से निपटने का सबसे प्रभावी तरीका था। मुझे बंबई में हुई घटना अच्छी तरह से याद है जब मैं पहले गोलमेज सम्मेलन के लिए जा रहा था। कांग्रेस ने बंबई में, जहां मैं रह रहा था, दलित वर्गों के नाम पर एक आम सभा की, उनका उद्देश्य गोलमेज सम्मेलन में मेरे जाने की निंदा करना था और यह घोषित करना था कि मैं दलित वर्गों का सही प्रतिनिधि नहीं हूं। मैंने इस सभा के आयोजकों को बता दिया कि मैं किसी भी पारित किए जाने वाले संकल्प के विरुद्व नहीं हूं बशर्ते कि यह बैठक दलित वर्गों की हो और उनकी बैठक दलित वर्गों की बैठक नहीं थी। उन्होंने अपनी पूर्व–निर्धारित कार्रवाई को रोकने से मना कर दिया। शाम को यह बैठक आयोजित की गई। हमारे स्वयंसेवक समूह में आए और उन्होंने कांग्रेस के स्वयंसेवकों को पछाड़ते हुए इस बैठक पर कब्जा कर लिया। कांग्रेस के लोग कुर्सी, मेज और घंटी आदि छोड़कर अपनी जान बचाकर भाग गए। उन चीजों को हमारे कार्यकर्ता एक ट्राफी के रूप में ले आए। हमारी स्वयंसेवक सेना बंबई में सबसे मजबूत है। कोई भी हमारे स्वैच्छिक कार्यकर्ताओं को चुनौती देने की हिम्मत नहीं करता। यदि हम किसी के द्वारा परेशान हुए बिना अपने राजनैतिक क्रियाकलापों को कर लेते हैं तो इसका कारण हमारे स्वैच्छिक संगठन की शक्ति है। हम इनके बहुत ही कृतज्ञ हैं।

आपने बंबई से यह विचार प्राप्त किया होगा। लेकिन मैं देखता हूं कि आपने, अपने संगठन की विशालता में बंबई को भी बहुत पीछे छोड़ दिया है। इस संबंध में मैं आपकी प्रशंसा करता हूं। बंबई को आपके स्तर पर आने के लिए अपने आपको जगाना होगा। मैं स्पष्ट रूप से उस स्वैच्छिक कार्यकर्ता संगठन की आवश्यकता पर विश्वास रखता हूं। उसे केवल बनाए रखना ही नहीं है बल्कि उसे प्रत्येक प्रांत में प्रारंभ किया जाना चाहिए और इसका इतना विस्तार किया जाना चाहिए कि दलित

वर्गों का प्रत्येक युवक इसका सदस्य हो।

कुछ लोग ऐसे हैं जो ऐसे स्वैच्छिक संगठनों पर आपत्ति करते हैं। वे अहिंसा में विश्वास रखते हैं और वे ऐसे संगठनों और शक्ति प्रदर्शन पर आपत्ति करते हैं। मैं स्वयं भी अहिंसा में विश्वास करता हूं। लेकिन मैं अहिंसा और दब्बूपन में भेद करता हूं। दब्बूपन कमजोरी है और वह कमजोरी जो अपने आप स्वेच्छा से अपने ऊपर लाद ली जाए, कोई गुण नहीं है। किसी उपनिषद में एक मेमने की कहानी है जो भगवान के पास गया और एक शिकायत दर्ज कराई कि वह सभी प्राणियों का पिता है और इसलिए सभी प्राणी आपस में भाईबंधु हुए। मेमने ने कहा कि इन सब बातों के होते हुए भी प्रत्येक प्राणी सभी प्रकार के भाईचारे को भूलकर उसके जीवन को खतरे में डाल रहा है। मेमने ने भगवान से पूछा कि आप इसको कैसे स्पष्ट करोगे? भगवान ने बहुत ही उपदेशात्मक उत्तर दिया। भगवान ने कहा कि तुम इतने दब्बू दिखाई देते हो कि मुझे भी तुम्हें खाने की इच्छा होती है। हम भी इस कहानी के मेमने के समान हैं और इसीलिए सभी हमको समाप्त करने की धमकी देते हैं। मुझे इस बात का पूरा भरोसा है कि स्वतः लादी गई कमजोरी के रूप में दब्बूपन कोई गुण नहीं है। मैं अहिंसा में विश्वास रखता हूं लेकिन महान संत तुकाराम के द्वारा दी हुई परिभाषा के अनुसार। अहिंसा में दो बातें होती हैं: (1) सभी प्राणियों के लिए प्यार और दया, और (2) सभी गलत काम करने वालों का विनाश। अहिंसा की इस परिभाषा का दूसरा भाग अक्सर अनदेखा कर दिया जाता है और चूंकि यह अनदेखा हो जाता है इसलिए अहिंसा का सिद्धांत इतना हास्यास्पद हो जाता है। अहिंसा के सिद्धांत में सभी गलत कार्य करने वालों को समाप्त करना मुख्य तत्व है। इसके बिना अहिंसा एक खोखला आवरण है। अब यह एक सकारात्मक दायित्व नहीं रह गया है। जब तक हमें किसी का भी नुकसान करने की मंशा नहीं होगी और जब तक हम अपने आपको गलत कार्य करने वालों के विनाश तक सीमित रखेंगे तब तक कोई भी हमें हमारी शक्ति बढ़ाने से रोक नहीं सकता। विवेकपूर्ण शक्ति हमारा आदर्श है। आपको किसी आलोचना से डरने की आवश्यकता नहीं है। किसी को भी अवांछित क्षति न पहुंचाएं और जिसको सहायता की आवश्यकता हो उस प्रत्येक व्यक्ति की सहायता करें और इस प्रकार आप हमारे लोगों की महान सेवा करेंगे। अब से आपका मुख्य क्रियाकलाप हमारे राजनैतिक जीवन को बनाए रखना है। ऐसे अन्य और भी क्षेत्र हैं जहां आप अपने क्रियाकलाप बढ़ा सकते हो। नगरों में यह अक्सर सुनने में आता है कि महिलाओं का कुछ दुष्टों द्वारा अपहरण कर लिया जाता है। गांवों में अक्सर यह सुना जाता है कि हिंदू जाति के लोग हमारे लोगों पर निरंकुशता का प्रयोग करते हैं। ये ऐसे मामले हैं जिनके विरुद्ध आपको

अपने प्रयास करने चाहिए। ये ऐसे गंभीर मामले हैं जिनमें केवल आपके जैसा कोई संगठन ही सहायता कर सकता है।

मुझे प्रसन्नता है कि आप लोगों ने सभी दलित वर्ग स्वयंसेवक सेनाओं का अखिल भारतीय सम्मेलन आयोजित करने का संकल्प पारित किया है। यह एक प्रसन्नता देने वाला विचार है जो यदि फलीभूत हुआ तो इसका बहुत अच्छा परिणाम होगा। मैं आपकी सफलता की कामना करता हूं। मैं आपको और आपके अध्यक्ष को मुझे कुछ बोलने की अनुमति देने के लिए धन्यवाद देता हूं।

श्री एस. वी. रामटेके ने धन्यवाद व्यक्त किया। इसके पश्चात् अध्यक्ष ने सत्र को समाप्त घोषित कर दिया।[1]

● ● ●

[1] रिपोर्ट ऑफ डिप्रेस्ड क्लासेज कांफ्रेंस, नागपुर सत्र, जुलाई, 1942

78

मैं आपके साथ रहूंगा

बंबई, मंगलवार

डॉ. बी. आर. अम्बेडकर, सदस्य, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने अपने सम्मान में नेशनल सीमेंस यूनियन के अध्यक्ष और सदस्यों द्वारा ताजमहल होटल में 21 जुलाई, 1942 मंगलवार की शाम को दी गई चाय पार्टी में बोलते हुए यह आश्वासन दिया कि वह इस देश में कामकाजी वर्ग के जीवन स्तर को सुधारने के लिए अपने सर्वोत्तम प्रयास करेंगे।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उन्होंने जिस सरकार में कार्यभार ग्रहण किया था वह सैद्धांतिक तौर पर युद्ध में सहायता के प्रयोजन के लिए गठित की गई थी और इस सरकार को केवल इस बात के लिए पुनर्गठित सरकार नहीं मान लिया जाना चाहिए कि इसके पास देश के आर्थिक और सामाजिक जीवन की पुनर्संरचना संबंधी एक कार्यक्रम है।

भारतीय मछुआरों की स्थिति का संदर्भ लेते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि भारतीय मछुआरे भारत की कामगार आबादी का सबसे महत्वपूर्ण भाग होने जा रहे हैं। बहुत बड़े समुद्री तट के कारण भारत की सबसे बड़ी आवश्यकता एक नौसेना की है और भारत की नौसेना और भारतीय व्यापारिक जहाजों में भारतीय मछुआरों की स्थिति वास्तव में बहुत बड़ी बात होगी।

नेशनल सीमेंस यूनियन के श्री ए. एच. मिर्जा और खान साहिब एम. ई. सेरांग ने भारतीय मछुआरों की मैनिंगस्केल का न होना, आम बोर्ड शिप्स पर काम के घंटों का निर्धारण और प्राकृतिक कारणों से मृत्यु को प्राप्त होने वाले मछुआरों के लिए क्षतिपूर्ति संबंधी प्रावधान के अभाव जैसी कुछ परेशानियों का संदर्भ दिया। उन्होंने इस युद्ध में 20000 भारतीय मछुआरों द्वारा दी गई सेवाओं का संदर्भ दिया और आग्रह किया कि अंतर्राष्ट्रीय समुद्रवर्ती सम्मेलन 1936 के निष्कर्षों का अनुसमर्थन किया जाए।

इस बैठक में सर सुल्तान चिनाय, श्री आस्कर एच. ब्राउन, चीफ प्रेसीडेंसी मजिस्ट्रेट, श्री आर. माथालोन, डॉ. एवं श्रीमती जे. ए. कोलाको, डॉ. एम. आर. ए. बेग, बंबई के शेरिफ और नौवहन कंपनियों के पदाधिकारी उपस्थित थे।''[1]

●●●

[1] द बांबे क्रानिकल, 22 जुलाई, 1942

79

मैं देश की आजादी की अपनी इच्छा के लिए किसी के आगे नहीं झुकता

22 जुलाई, 1942 की पिछली रात डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने, भट्ट हाई स्कूल सभागार, बम्बई में, आयोजित समता सैनिक दल स्वागत समारोह के अपने भाषण में, कहा था–

''सभी देशभक्त भारतीयों का, चाहे वे किसी भी राजनीतिक दल के हों, यह कर्तव्य है कि वे इस समय अपने देश में नागरिक अवज्ञा आंदोलन चलाने और इस प्रकार अराजकता एवं अव्यवस्था फैलाने के कांग्रेस के प्रयास का अपनी पूरी ताकत और संसाधनों से प्रतिरोध करें, क्योंकि इससे निःसंदेह इस देश की पराधीनता में मदद मिलेगी और उसे बढ़ावा भी मिलेगा।

''हमने पिछले नागरिक अवज्ञा आंदोलन में मात्र इस कारण हस्तक्षेप नहीं किया था, क्योंकि उस समय स्थिति पूरी तरह भिन्न थी।

''आज आक्रामक जापान ठीक भारत की दहलीज पर खड़ा है। मिस्र और रूस की सीमाओं पर भी स्थिति ज्यादा बेहतर नहीं है।

''मुझे लेशमात्र संदेह नहीं है कि ऐसे मौके पर नागरिक अवज्ञा आंदोलन शुरू करना सीधे दुश्मन के खेल में शिरकत करना होगा। हम कांग्रेस को या किसी भी अन्य को यह खेल नहीं खेलने देंगे। यह भारत के साथ विश्वासघात का खेल है।

''मैं इस देश की आजादी की अपनी इच्छा के लिए किसी के भी आगे नहीं झुकता। लेकिन मैं इस देश पर जापानी शासन लाने में मदद करने के लिए अंग्रेजों को निकालना नहीं चाहता।''

''हो सकता है, कांग्रेस कार्य समिति का संकल्प सिर्फ झूठ हो। यदि ऐसा है तो इस विषय में कुछ करने की जरूरत नहीं है। किंतु यदि इस धमकी को वास्तव में व्यावहारिक रूप दिया गया, तो समता सैनिक दल का कर्तव्य होगा कि वह कांग्रेस का दिमाग ठीक करने तथा शहर में अराजकता एवं अव्यवस्था को रोकने के लिए अपने संगठन का इस्तेमाल करे।''

डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण का समापन करते हुए कहा–

''दिल्ली जाने से पहले एक वक्तव्य जारी करके मैं अपनी नीति को स्पष्ट करूंगा जिसका अनुसरण स्वतंत्र लेबर पार्टी और अन्य संबद्ध संगठनों को इस विषय में करना होगा। मैं चाहता हूँ कि आप लोग उस वक्तव्य को पढ़ें और उसमें दी गई हिदायतों को कार्यरूप देने के लिए उसके भावार्थ को समझें।''[1]

● ● ●

[1] द बंबई क्रानिकल, 23 जुलाई, 1942

80

मैं चाहता हूं शासन की लगाम आपके हाथ में हो

23 अगस्त, 1942 को दोपहर बाद 'दलित वर्ग कल्याण संघ' दिल्ली द्वारा आपके सम्मान में आयोजित समारोह में बोलते हुए, भारत सरकार के श्रम सदस्य डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने भारत के संवैधानिक लक्ष्य के परिप्रेक्ष्य में अपने समाज के भविष्य के बारे में एक महत्वपूर्ण वक्तव्य दिया–

उन्होंने कहा,

''मैं दलित वर्गों को भारत में अन्य समुदायों के साथ बराबरी के स्तर पर रखना चाहता हूं। मैं यह नहीं चाहता कि आप लोग दूसरे समुदायों की सेवा करते रहें बल्कि शासन की लगाम मैं आपके हाथ में सौंपना चाहता हूं। आप लोगों को मुसलमानों के साथ समानता के आधार पर देश की राजनीतिक सत्ता में भागीदार बनना चाहिए।

''शासन की सत्ता और प्राधिकार में भागीदारी और उसका बंटवारा करने के दलित वर्गों के अधिकार को ब्रिटिश सरकार ने माना था।

''सन् 1940 से दलित वर्गों की स्थिति में गिरावट आई है। पहले, क्रिप्स प्रस्तावों में अन्य बातों के साथ–साथ, कांग्रेस और मुस्लिम लीग के साथ समझौते की बात कही गई थी, अतः जब तक यह समझौता नहीं होगा तब तक दलित वर्गों का कोई महत्व नहीं है। ''डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की थी, ''मेरी मान्यता है कि दलित वर्ग के साथ यह बहुत बड़ा धोखा है।''

उन्होंने आगे कहा कि क्रिप्स मिशन के असफल होने से भारत और विदेशों में जन साधारण केवल कांग्रेस और मुस्लिम लीग के साथ समझौता करने की बात करते हैं। कांग्रेस मुस्लिम लीग के साथ एक समझौते पर पहुंचने की कोशिश कर रही है, लेकिन उसने दलित वर्गों के साथ समझौता करने की कभी कोशिश नहीं की, तथा गांधी जी ने अपनी गिरफ्तारी से पहले घोषित कर दिया था कि वह दलित वर्ग को एक अलग पक्ष नहीं मानते। उन्होंने आगे कहा, ''इसलिए देश के राजनीतिक जीवन में अपनी स्थिति को हासिल करना आवश्यक हो गया है; वह स्थिति होगी पूर्ण

समता और संप्रभुता की। जब तक हम यह स्थिति प्राप्त नहीं करेंगे; हमें चापलूसी और दासता की पुरानी स्थिति में धकेला जाता रहेगा।''

इससे पहले, डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की थी कि ''उन्हें किसी पद का मोह नहीं है, और यदि उन्होंने देखा कि उनके समाज की नियति बेहतर करने के उनके प्रयास सफल नहीं हुए हैं, तो पुनः वे अपना पूर्ववत् काम करने को विवश होंगे।''[1]

बहरहाल, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर के भाषण में उस विषय के और भी आयाम थे जिसे 'द इंडियन स्टेट्स' ने रिपोर्ट किया था। वे आयाम थेः

डॉ. अम्बेडकर ने अपने समाज की ओर से चलाए गए अपने आंदोलन का हवाला दिया। उन्होंने कहा कि 'गोलमेज सम्मेलन' में उन्होंने दावा किया था कि दलित वर्ग हिंदुओं के उपवर्ग नहीं हैं बल्कि उनकी अपनी महत्वपूर्ण पृथक पहचान है। उनके दावे पर महात्मा गांधी ने विवाद किया था, जो अंततः उस द्वंद्व में हार गए थे।

साम्प्रदायिक अवार्ड दलित वर्ग को पृथक पहचान देने वाला अधिकार–पत्र था। अतः गांधी जी ने उपवास करके दूसरी बार इस प्रश्न को उठाया था। तब पूना समझौता हुआ और उसमें भी वह अपने समाज की अलग पहचान कायम रखने में पुनः सफल रहे।

तीसरी महत्वपूर्ण घटना ब्रिटिश सरकार के अगस्त प्रस्ताव की थी, जिसमें यह स्पष्ट कहा गया था कि ब्रिटिश सरकार को भारत के लिए कोई भी संविधान, दलित वर्ग की सम्मति और सहमति के बिना, स्वीकार्य नहीं होगा।[2]

●●●

---

[1] दि बंबई क्रानिकल, 24 अगस्त, 1942

[2] दि इंडिया स्टेट्स, 12 सितंबर, 1942

81

वर्तमान अव्यवस्था से केवल भारतीयों का अहित

जब 3 नवम्बर, 1942 की सुबह भारत सरकार के श्रम सदस्य डॉ. बी.आर. अम्बेडकर फ्रंटियर मेल से बम्बई पहुंचे तो वहाँ एक विशाल भीड़ ने जिसमें ज्यादातर दलित वर्ग के सदस्य थे, बम्बई सेंट्रल स्टेशन को वास्तव में घेर लिया था।

माल्यार्पण समारोह संपन्न होने के पश्चात् डॉ. अम्बेडकर दादर स्थित अपने निवास पर चले गए, जहां एक दूसरा जनसमूह उनके आगमन की प्रतीक्षा कर रहा था।

समझा जाता है कि डॉ. अम्बेडकर 10 नवम्बर को महाड़ के लिए रवाना हो जाएंगे और वहां से तीन दिन बाद लौटेंगे।[1]

''8 नवम्बर, 1942 अर्थात् रविवार की शाम कामगार मैदान परेल; बम्बई में अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के तत्वावधान में आयोजित एक सार्वजनिक सभा को संबोधित करते हुए भारत सरकार के श्रम सदस्य माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने भारत में वर्तमान नागरिक अवज्ञा आंदोलन शुरू करने के लिए गांधी जी और कांग्रेस को दोषी माना था और उसके बारे में उन्होंने कहा था कि विशेषतः सर स्णफर्ड क्रिप्स की पेशकश की दृष्टि से इसका किंचित भी औचित्य नहीं है। वर्तमान अव्यवस्था से, जो भाड़े के लोगों द्वारा की गई है, ब्रिटिश सरकार या अंग्रेजों को कोई नुकसान या क्षति नहीं होगी बल्कि स्वयं भारतीयों का अहित होगा। देश के विशाल और महत्वपूर्ण वर्ग इस आंदोलन के पक्ष में नहीं हैं और उन्हें कोई शक नहीं है कि यह विफल होगा।

जहां तक दलित वर्गों का संबंध है, उन्होंने आंदोलन में कोई भाग नहीं लिया था और वे ले भी नहीं सकते थे। कांग्रेस के नेता मुस्लिमों को राजी करने के लिए बहुत आतुर थे। उन्होंने समझौता करने के लिए मुस्लिम नेताओं से अनेकों बार संपर्क किया था; उन्होंने देश के भावी संविधान में उचित स्थान की दलित वर्ग की मांग की अब तक उपेक्षा की है। कांग्रेस मुसलमानों को साथ लेना चाहती थी क्योंकि मुस्लिम ताकतवर और संगठित थे। दलित वर्ग की उपेक्षा की गई थी क्योंकि वे पर्याप्त

---

[1] दि बंबई क्रानिकल, 4 नवंबर, 1942

मजबूत और सुसंगठित नहीं थे। डॉ. अम्बेडकर ने उनसे आग्रह किया कि वे अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के माध्यम से संगठित होकर एवं अपनी स्वयंसेवी सेना को सबल बनाकर स्वयं को भी राजनीति दृष्टि से मजबूत बनाएं। उन्होंने उन्हें सलाह दी थी कि वे वर्तमान राजनीतिक आंदोलन से स्वयं को दूर रखें।

फेडरेशन के अध्यक्ष राव बहादुर एन. शिवराज, ने सभा की अध्यक्षता की। उन्होंने वायसराय की कार्य परिषद के सदस्य के रूप में डॉ. अम्बेडकर द्वारा किए गए कुछ कार्यों का उल्लेख किया। उन्होंने यह तथ्य भी प्रकट किया कि वह अमेरिका स्थित पेसिफिक रिलेशन्स कौंसिल के भारतीय शिष्टमंडल के सदस्य चुने गए हैं और शीघ्र ही अमेरिका के लिए रवाना होंगे।

डॉ. अम्बेडकर को सभा समाप्ति के बाद, फूलमालाओं से लाद दिया गया।[2]

● ● ●

[2] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 9 नवंबर, 1942

82

गैर–ब्राह्मण दल की पुनः स्थापना हो

'माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार आज 12 जनवरी, 1943 को सुबह बम्बई पहुंचे। आशा है वह बम्बई में एक सप्ताह ठहरेंगे– ए.पी.।[1]

17 जनवरी, 1943 (रविवार) को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने आर.एम. भट्ट हाईस्कूल, परेल, बम्बई में मराठा और संबद्ध समुदायों की ओर से, अपने सम्मान में दी गई पार्टी में बोलते हुए विचार प्रकट किया कि भारत में सच्चा लोकतंत्र गैर–ब्राह्मण पार्टी के हाथों में ही सुरक्षित रह सकता है। उन्होंने खेद व्यक्त किया कि गैर–ब्राह्मण पार्टी जो मद्रास और बम्बई प्रांतों में सत्ता में थी, अब विभिन्न कारणों से टूट गई है और उन्होंने आशा प्रकट की कि अतीत की गलतियों से सबक लेकर विभिन्न वर्गों में जो छोटे–मोटे मतभेद हैं, उन्हें मिटाकर वह पुनः एकजुट और मजबूत ताकत के रूप में उभरकर सामने आए।

किसी भी दल की सफलता के लिए उन्होंने तीन चीजें आवश्यक बताई– नेता, अच्छा संगठन और स्पष्ट तथा निश्चित उद्देश्य और कार्यक्रम। शर्म की बात है कि गैर–ब्राह्मण पार्टी के कुछ सदस्यों ने इसे छोड़ दिया है और वे कांग्रेस में शामिल हो गए हैं। लेकिन अब उन्हें अपनी भूल पर पछतावा है। यह समुदाय विशेष के लोगों के लिए ही नहीं बल्कि भारत में लोकतंत्र के हित में भी आवश्यक है कि गैर –ब्राह्मण पार्टी दोबारा संगठित हो और ताकतवर पार्टी बनकर उभरे।

राव बहादुर आर.एस. असावले जिन्होंने सभा की अध्यक्षता की थी और राव बहादुर एस.के. बोलने, जिन्होंने सभा को संबोधित किया तथा मराठाओं और अन्य संबद्ध समुदायों में एकता की महत्ता पर बल दिया तथा उनके और डॉ. अम्बेडकर की पार्टी के बीच सहयोग का आग्रह किया।[2]

● ● ●

---

[1] दि बम्बई क्रानिकल, 13 जनवरी, 1943

[2] दि टाइम्स ऑफ इंडिया, 18 जनवरी, 1943

83

थलसेना, नौसेना और वायुसेना में भर्ती हों

17 जनवरी, 1943 की शाम को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने श्री एस.ए. उपशम तथा श्री शिन्दे के बम्बई में नगरपालिका विद्यालय के पर्यवेक्षक नियुक्त किए जाने पर उन्हें बधाई देने के लिए नमगाम में आयोजित दलित वर्ग की एक सभा को संबोधित किया।

डॉ. अम्बेडकर ने अपने समाज के सदस्यों से जोर देकर आग्रह किया कि वे सेना, नौसेना और वायुसेना में भर्ती होने के अवसरों का पूरा फायदा उठाएं।[1]

● ● ●

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 18 जनवरी, 143

84

गांधी और जिन्ना को अवकाश ग्रहण कर लेना चाहिए

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, वायसराय कार्य परिषद, फ्रंटियर मेल से दिनांक 2 मई, 1943 को बम्बई पहुंचे। डॉ. अम्बेडकर को 7 और 8 मई को श्रमिकों, मिल मालिकों और सरकार के प्रतिनिधियों के एक सम्मेलन की अध्यक्षता करनी थी।[1]

इस बात को दृढ़ता से कहते हुए कि श्री गांधी तथा कांग्रेस आलाकमान ने नितांत राजनीतिक दिवालियापन प्रदर्शित किया है, माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर श्रम सदस्य, भारत सरकार ने 9 मई, 1943 (रविवार) को नमगाम, बम्बई में अनुसूचित वर्गों के तत्वावधान में आयोजित एक विशाल जनसभा में तर्क दिया कि श्री गांधी को सक्रिय राजनीति से अवकाश ग्रहण कर लेना चाहिए। उन्होंने आगे कहा कि आल इंडिया मुस्लिम लीग के अध्यक्ष श्री जिन्ना, जिन्होंने एक अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर लिया है, को भी संयास ले लेना चाहिए, उन्होंने जोर देकर कहा कि जब तक ये दोनों नेता गद्दी नहीं छोड़ेंगे, तब तक भारतीय राजनीति को वर्तमान दलदल से ऊपर उठाने की कोई आशा नहीं की जा सकती। इसके बाद ही भारतीय राजनीति से यह आशा की जा सकती है कि वह ऐसे मार्ग पर चले, जो देश को प्रगति के रास्ते पर ले जाने में सहायक हो।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि श्री गांधी आज तक पैदा होने वाले सभी नेताओं में सबसे भाग्यशाली राजनेता हैं। वह भाग्यशाली हैं, क्योंकि उन्हें सक्रिय राजनीति के लिए आवश्यक सब चीजें कहने मात्र से सुलभ हो जाती हैं, जबकि दूसरे राजनेताओं को उन्हें जुटाने में अपनी आधी जिन्दगी लगानी पड़ती है। श्री गांधी के पास दोनों शक्तियां भरपूर हैं– जन शक्ति और धन शक्ति, जबकि स्वर्गीय श्री तिलक, श्री रानाडे और श्री गोखले के पास धन शक्ति कभी नहीं थी और जन शक्ति के लिए उन्हें अपनी पूरी जिन्दगी बितानी पड़ी।

इस परिप्रेक्ष्य में, पिछले 25 वर्षों का श्री गांधी का राजनीतिक जीवन असफलताओं से भरा पड़ा है। गोखले और रानाडे की शांत राजनीति की तुलना में

[1] द संडे क्रानिकल, 2 मई, 1943

गांधी जी की राजनीति निःसंदेह बहुत उत्तेजक रही है। लेकिन एक चीज बिल्कुल निश्चित है कि गोखले और रानाडे की राजनीति और कार्यशैली देश को बंटवारे की वर्तमान दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति में कभी नहीं ले जाती। श्री गांधी की राजनीति के कारण यह त्रासदी पैदा हुई। डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि स्वराज पाने और इस एकमात्र प्रश्न पर चर्चा करने के अलावा इस सफर के अंत में हमें पूरी तरह जिन भिन्न समस्याओं का सामना करना पड़ रहा है गोखले और रानाडे संभवतः उन्हें उत्पन्न नहीं होने देते।

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा कि 'भारत के लोग गांधी जी और कांग्रेस आला कमान में अंधविश्वास रखते हैं। वे आलोचनापरक गुण को पूरी तरह खो चुके हैं और उनमें कभी भी इतना साहस नहीं रहा कि वे गांधी जी को बता सकें कि वह कहां गलत हैं।'

क्रिप्स प्रस्तावों पर कांग्रेस की अस्वीकृति का हवाला देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि प्रस्तावों के बारे में चाहे जो भी कहा गया हो, जहां तक भविष्य का संबंध है, क्रिप्स प्रस्तावों ने कांग्रेस को शतप्रतिशत वह व्यवस्था दी जो वह चाहती थी। उन प्रस्तावों में संविधान का प्रारूप तय करने के लिए एक संविधान सभा की व्यवस्था है और उस सभा को यह भी विकल्प दिया है कि वह डोमिनियन प्रास्थिति अपना ले या स्वाधीनता ले ले। तत्काल शासन के बारे में प्रस्तावों में इतनी विस्तृत व्यवस्था दी गई थी जितनी युद्धजनित परिस्थितियों में हो सकती थी। रक्षा एकमात्र ऐसा विषय था, जिसे आरक्षित रखा गया और शेष विषय हस्तांतरित कर दिए गए।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा, ''राजनीति का नौसिखिया भी समझ लेता कि एक तरफ 15 सदस्य और दूसरी तरफ केवल रक्षा सदस्य तो यह संघर्ष रक्षा सदस्य के लिए, एक अत्यंत असमान द्वंद्व होता। इसके अलावा, कोइ्र भी समझदार आदमी वर्तमान प्रस्तावों के बजाय, भविष्य विषयक प्रस्तावों की अधिक परवाह करता। यदि भविष्य विषयक प्रस्ताव राष्ट्र को पूर्ण प्राधिकार देते तो कोई भी समझदार आदमी उन्हें इसलिए अस्वीकार नहीं करता कि उनमें कुछ कमी है, जो प्रत्यक्ष वर्तमान के संबंध में है। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि रक्षा ही स्वतंत्रता हासिल करने का एकमात्र उपाय है।

अनूसूचित जाति के लोगों से अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन में शामिल हाने की अपील करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि जिस स्थिति में वे हैं, उसी में रखे जाने पर इन्हें अपने हितों की रक्षा के लिए अपने आपको संगठित करना होगा। जब भारत के नये संविधान का प्रारूप तैयार किया जाए, तो उन्हें राजनीतिक

अधिकारों की अपनी लड़ाई लड़ने के लिए स्वयं को तैयार करना चाहिए। उन्होंने कहा, ''हमने जो पक्ष रखा है, यह है कि संविधान त्रिपक्षीय हो। यह ऐसा संविधान हो जो देश में राष्ट्रीय जीवन में स्वतंत्र, स्वाधीन और महत्वपूर्ण तत्वों द्वारा नियंत्रित हो और कार्यान्वित हो। हम यह नहीं चाहते कि हिंदू और मुसलमान, अनुसूचित जातियों को असहाय छोड़कर, स्वयं राजनीतिक प्रगति के लिए समझौता करने की दिशा में अग्रसर हों। इसलिए हम एक एकल संगठन बनाना चाहते हैं, जैसे अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन, जो पूरे देश में दलित वर्ग की इस विशिष्ट राजनीतिक महत्वाकांक्षा को पूरा करने में एक अकेली जीवंत संस्था के रूप में काम करे।''

तकनीकी प्रशिक्षण के महत्व पर जोर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि कोई भी राष्ट्र 'औजार युक्त कारीगर' के बिना तरक्की नहीं कर सकता। इसके अलावा, तकनीकी प्रशिक्षण का देश के औद्योगिक विकास में उज्ज्वल भविष्य है।[1]

● ● ●

1 द टाइम्स ऑफ इडिया, 10 मई, 1943

85

युद्धोत्तरकाल में गरीबी सहन नहीं की जाएगी

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 10 मई, 1943 (सोमवार) को दोपहर बाद महाराष्ट्र चैम्बर्स ऑफ कॉमर्स के सदस्यों को सम्बोधित करते हुए कहा कि, 'युद्धोत्तर काल में गरीबी सहन नहीं की जाएगी' हालांकि वह यह भविष्यवाणी नहीं कर सकते थे कि भविष्य में क्या स्थिति होगी, फिर भी उन्हें पक्का विश्वास था कि हालात इतने आमूल चूल बदल जाएंगे कि युद्धोत्तरकाल में गरीब लोग एक सुसंस्कृत और सभ्य जीवन जी पाएंगे। उनके अनुसार स्थायी शांति की समस्या तीन तत्वों के सफल समाधान पर निर्भर है – साम्राज्यवाद, रंग–भेद, और गरीबी। उन्होंने कहा कि साम्राज्यवाद अब एक घिसापिटा शब्द बन गया है। रंग–भेद का प्रश्न उनके अनुसार, उतना ही महत्वपूर्ण है जितना साम्राज्यवाद का प्रश्न, उससे इस ढंग से जूझना और सुलझाना होगा कि भविष्य में मानव जाति की शांति भंग न हो।

डॉ. अम्बेडकर को महाराष्ट्र चैम्बर ऑफ कॉमर्स के अध्यक्ष श्री एम.एल. दहानुकर द्वारा सोमवार शाम ताज महल होटल में चाय पर आमंत्रित किया गया।[1]

● ● ●

[1] दि बम्बई क्रानिकल, 11 मई, 1943

86

स्वराज श्रमिकों के हाथों में आ सकता है

10 मई, 1943 (सोमवार) की शाम इंडियन फेडरेशन ऑफ लेबर की बम्बई प्रेजिडेन्सी कमेटी द्वारा अपने सम्मान में दी गई चाय पार्टी में माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने भारत में वर्तमान श्रमिक आंदोलन की नितांत खोखली और सतही स्थिति की निंदा की।

मणिबेन कारा ने डॉ. अम्बेडकर का स्वागत किया और कहा कि खेद की बात है कि श्रमिक आंदोलन में फूट पड़ गई है। उन्होंने श्रम सदस्य के पद की बागडोर संभालने के बाद थोड़े ही समय में डॉ. अम्बेडकर द्वारा किए गए सुधारवादी कार्यों की सराहना की।

प्रत्युत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने वहां उपस्थित श्रमिक नेताओं को सलाह दी कि वे अपने मतभेद भुलाकर पूंजीवाद के खिलाफ एक संगठित मोर्चा बनाएं।

डॉ. अम्बेडकर ने ब्रिटेन में श्रमिक आंदोलन की प्रगति का हवाला दिया और बताया कि उसने, हमेशा से प्रभावी टोरियों से सत्ता हथिया कर शासन की बागडोर दो बार कैसे कब्जे में ले लिया था।

यह भारतीय श्रमिक आंदोलन के लिए उस जैसी चेष्टा करने का एक उदाहरण था।

उन्होंने आग्रह किया कि ब्रिटिश लेबर पार्टी के मॉडल पर इस देश में 'यूनाइटेड लेबर पार्टी' बनाने की जरूरत है।

अंत में, डॉ. अम्बेडकर ने यह भी कहा कि यदि इंगलैंड में लोकतंत्र असफल रहा तो इसका कारण यह था कि वहां की सत्ता, टोरियों के हाथ में थी। अतः महत्व इस बात का है कि स्वराज किनके हाथ में होना चाहिए।

उन्होंने भारत में श्रमिक नेताओं को उद्वेलित किया कि वे यह देखें, कि जब इस देश में स्वराज आए तो वह भारतीय श्रमिकों के हाथ में हो।[1]

---

[1] द बम्बई क्रानिकल, 11 मई, 1943

87

अधिकारों का उपयोग करने योग्य बनो

अनुसूचित जाति फेडरेशन ने 5 दिसम्बर, 1943 को शाम के समय गोकुलदास पास्ता रोड, दादर के निकट एक मैदान में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सदस्य, वायसराय कार्य परिषद का स्वागत किया। श्री वी.वी. जाधव ने स्वागत समारोह की अध्यक्षता की।

पिछड़े वर्ग के अनेक संगठनों ने फूलमालाएं पहनाकर डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का स्वागत किया।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने स्वागत सम्मान का उत्तर देते हुए वायसराय की कार्य–परिषद के सदस्य के रूप में अपने क्रियाकलाप की एवं उन प्रयासों की झलक प्रस्तुत की, जो उन्होंने अनुसूचित जातियों के लिए हिंदुओं और मुसलमानों के साथ बराबरी की स्थिति प्राप्त करने लिए तथा विधानमंडलों में और अधिक सीटें प्राप्त करने के लिए किए थे। उन्होंने यह भी बताया कि वह अनुसूचित जातियों के उत्थान के लिए सरकार से तीन लाख रुपए की धनराशि उपलब्ध करने में कामयाब रहे हैं।

उन्होंने सभा के श्रोताओं को बड़ी संख्या में फेडरेशन में शामिल होने के लिए प्रेरित किया, क्योंकि वही संस्था उनके राजनीतिक अधिकारों के लिए लड़ सकती है। उन्होंने उनसे कहा कि वे शिक्षित हों, सामान्य भलाई के लिए संगठित हों, और मांगे जाने वाले अधिकारों का उपयोग करने की योग्यता प्राप्त करें।[1]

● ● ●

[1] द बम्बई क्रानिकल, 6 दिसंबर, 1943

88

अनुसूचित जातियों को हिंदुत्व त्यागना चाहिए

31 जनवरी, 1944 को कानपुर में आयोजित अनुसूचित जाति सम्मेलन में प्रस्ताव पारित होने के पश्चात्, तीन अनुसूचित जाति संगठनों के स्वागत भाषणों का उत्तर देते हुए, डॉ. अम्बेडकर ने भावी भारत में अपने समाज की भूमिका का उल्लेख किया और युवकों से फेडरेशन के लिए संगठनात्मक शक्ति लगाकर पाबंदियों को मिटाने की अपील की ताकि कोई पार्टी यहां तक कि ब्रिटिश सरकार भी, भारत के संवैधानिक विकास की भावी योजना में उनके महत्व को नकारने का साहस न कर सके।

डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की– ''हम संकल्प करें कि, भविष्य के स्वतंत्र भारत में हम शासन करने वाली कौम होंगे। हम पराधीनता की भूमिका जारी रखने और ऐसी स्थिति स्वीकार करने से इंकार करते हैं, जिसमें हमें दास माना जाए न कि मालिक।''

उन्होंने दावा किया कि यदि जब भी भारत में स्वराज सरकार बने तो भारत में तीन पक्ष– हिंदू, मुस्लिम और अनुसूचित जातियां, राजनीतिक सत्ता में हिस्सेदार हों।

उन्होंने उस दिन की कल्पना की जब 30 रुपए प्रतिमास की न्यूनतम मजदूरी का प्रावधान, श्रमिकों के लिए मकान तथा गरीबो को बीमे के रूप में वृद्धावस्था पेंशन की गारंटी देना संभव होगा।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि जो लोग मुझसे कांग्रेस में शामिल होने के लिए कहते हैं, उन आलोचकों को मेरा आसान जवाब है– ''मैं भारत में अनुसूचित जातियों की स्वतंत्रता को अधिक महत्वपूर्ण मानता हूं। ये जातियां 2000 वर्षों से यातना और दमन की शिकार रही हैं।'' इसलिए वे देश के लिए स्वराज के बजाय अपने समाज के उत्थान के लिए काम करना पसंद करते थे।

डॉ. अम्बेडकर ने लोगों से कहा कि वे 2000 वर्षों के लम्बे समय से कष्ट भोगने वाले कारणों के बारे में सोचें। उन्होंने बताया कि हिंदू धर्म इसका मुख्य कारण है। पूरे विश्व में सभी धर्मों में केवल हिंदू धर्म ऐसा है, जो जातिगत भेदभाव और अस्पृश्यता

को मानता है। सवर्ण जाति के हिंदुओं द्वारा अनुसूचित जातियों पर किए गए समस्त अन्यायों के लिए यही एक आवरण, एक आड़ है। उन्होंने खेदपूर्वक कहा कि आज भी स्थिति यही है कि गांवों में, वे आत्म–सम्मान के साथ नहीं जी सकते।

इसलिए उन्होंने अपना दृढ़संकल्प पुनः दोहराया कि वे हिंदू धर्म का परित्याग करें और अब आगे अपमान बर्दाश्त न करें।

उन्हें सबसे अधिक जो बात खलती थी वह यह थी कि उनके समाज के लोग आज भी अपमान की स्थिति को स्वीकार करते हैं, क्योंकि सवर्ण हिंदू लोग उन पर बराबर हावी रहते हैं। उन्होंने लोगों को प्रेरित किया कि वे अपनी शक्ति पर भरोसा रखें, इस धारणा को मिटा दें कि वे किसी भी दूसरे समुदाय से किसी भी तरह हीन हैं।

इसके आगे डॉ. अम्बेडकर ने इस बात पर जोर दिया कि उनके राजनीतिक संगठन, अनुसूचित जाति फेडरेशन के पीछे संगठनात्मक बल द्वारा दंड–विधान बनाने की जरूरत है। उनहोंने कहा कि ब्रिटिश सरकार मुसलमानों के पक्ष में विचार करने के लिए सदैव तैयार है। यदि कांग्रेस नेता जेल से रिहा होने के बाद, पाकिस्तान के बारे में मुस्लिमों के साथ किसी व्यवस्था या 50–50 के आधार पर समझौता कर लेते हैं, तो अनुसूचित जातियों की स्थिति क्या होगी? यदि उन्हें राजनीतिक सत्ता में भागीदार बनना है तो उन्हें एक ठोस इकाई के रूप में संगठित होना होगा, तभी वे देश के भावी शासन में अपने उचित अधिकारों की लड़ाई में सफल हो सकेंगे।

स्त्रियों के योगदान के महत्व पर बल देते हुए उन्होंने विचार प्रकट किया कि उनका आंदोलन तब तक सफल नहीं हो सकता जब तक कि उनकी स्त्रियां इसमें तेजी लाने में सक्रिय होकर मदद नहीं करेंगी। इसके बाद एक वक्ता ने कहा कि उन्होंने सम्मेलन का संदेश फैलाने के लिए प्रत्येक गाँव और शहर में स्वयंसेवी कोर बनाने और संदेश को शहरों से 200 मील की दूरी तक के गाँवों में ले जाने को सबसे अधिक महत्व दिया है। उन्होंने जोर देकर कहा कि जब वे दूसरों से अस्पृश्यता मिटाने की मांग करते हैं तो उन्हें अनुसूचित जातियों में आंतरिक भेदभाव को मिटाने के अपने उत्तरदायित्व को समझना होगा।

सम्मेलन का समापन करते हुए श्री शिवराज ने, डॉ. अम्बेडकर द्वारा अपने सम्मान के लिए की गई सेवाओं की प्रशंसा में लगाए गए नारों के बीच, उस दो दिवसीय सत्र की समाप्ति की घोषणा की।[1]

● ● ●

[1] द फ्री प्रेस जर्नल, 1 फरवरी, 1944

89

अनुसूचित जातियों के समक्ष प्रश्न है–'अभी या कभी नहीं'

26 अगस्त, 1944 की रात को कलकत्ता में कई अनुसूचित जाति संगठनों द्वारा प्रस्तुत अभिनन्दन भाषण का उत्तर देते हुए, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, वायसराय कार्यकारी परिषद ने कहा– अनुसूचित जातियों के समक्ष प्रश्न है 'अभी या कभी नहीं'।

डॉ. अम्बेडकर ने स्पष्ट किया कि भारतीय संविधान के अनुसार, भारत एक 'डोमिनियन' बन जाएगा। डोमिनियन में निहित मूलभूत तत्वों में से एक तत्व यह है कि उसके पश्चात् भारतीय संविधान के निर्माण में महामहिम सम्राट को हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं होगा। इसलिए, जो भी कमियाँ अनुसूचित जातियों के लिए हो सकती हैं, उन्हें यदि पूरा नहीं किया गया, तो उन्हें भारत में अपनी राजनीतिक मांग सफलतापूर्वक पेश करने का अवसर कभी नहीं मिलेगा। इसलिए प्रश्न है– 'अभी या कभी नहीं'। कारण, उन्होंने महसूस किया था कि, उनकी विजय निकट है और वह अब केवल एकता चाहते थे।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि गांधी जी का पूरा जीवन, उनकी राजनीतिक गतिधियां और राजनीतिक रणनीति, अल्पसंख्यकों की मांगों की अनदेखी की ओर इंगित करती हैं। नागरिक अवज्ञा आंदोलन, नमक कानून तोड़ना आदि ये सारे तमाशे'' जो गांधी जी कर रहे थे, इनका दूसरा कोई प्रयोजन नहीं था। अब गांधी जी समझ गए हैं कि अल्पसंख्यकों की मांगों की अनदेखी करना संभव नहीं है और यह भी कि उन्हें सिखों और मुसलमानों के साथ संधि करनी होगी। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा, लेकिन अनुसूचित जाति समुदाय की मांगों को मानने की उनमें कोई इच्छा नहीं। अनुसूचित जाति के लोग कमजोर हैं, लेकिन विधाता ने हमेशा उनकी मदद की है। ''आप भली प्रकार कल्पना कर सकते हैं यदि क्रिप्स मिशन कामयाब हो जाता तो कितनी विपदा आती। मैं हर रोज ईश्वर का धन्यवाद करता हूं कि वह मिशन विफल रहा।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि, वायसराय ने गांधी जी के साथ हाल के पत्र व्यवहार में यह मूलभूत शर्त रखी थी कि ब्रिटिश से भारतीय लोगों के हाथ में सत्ता हस्तांतरण के लिए हिंदुओं और मुसलमानों के बीच समझौते मात्र से काम नहीं

चलेगा। समझौता त्रिपक्षीय होना चाहिए। इस प्रकार राजनीतिक सत्ता के हस्तांतरण के लिए 'अनुसूचित जातियों के समुदाय से समझौता' एक पूर्व शर्त बना ली गई थी। उन्हें इस प्रकार की घोषणा के लिए बहुत कृतज्ञ होना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि यदि हिंदू महासभा अनुसूचित जातियों की उचित मांगें मानने को तैयार हो, तो वह निश्चय ही 'महासभा' में शामिल हो जाएंगे। यदि कांग्रेस उनकी मांगें मानने को तैयार हो तो उन्हें कांग्रेस में शामिल हाने में भी कोई संकोच नहीं होगा।

लेकिन प्रश्न यह है कि क्या ये संगठन अनुसूचित जातियों के मित्र हैं या शत्रु![1]

● ● ●

[1] द बंबई क्रानिकल, 28 अगस्त, 1944

90

दलित वर्ग हिंदू समाज का अंग नहीं है

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, सदस्य, वायसराय कार्यकारी–परिषद 20 सितंबर, 1944 को दोपहर बाद मद्रास एक्सप्रेस द्वारा बम्बई से हैदराबाद जा रहे हैं। कई दलित वर्ग के नेता भी उनके साथ जाएंगे।

ज्ञात हुआ है कि हैदराबाद में एक दिन रुकने के बाद डॉ. अम्बेडकर मद्रास के लिए रवाना हो जाएंगे। वहां जाकर वह भारत के भावी संविधान के अंतर्गत दलित वर्गों की स्थिति पर एक बहुत महत्वपूर्ण उद्घोषणा करेंगे।

माना जाता है कि वह उद्घोषणा गांधी–जिन्ना वार्ता के परिणामों पर आधारित होगी।[1]

जब डॉ. बी.आर. अम्बेडकर दक्षिण भारत के दौरे पर थे तो 20 सितंबर 1944 को पहली बार निज़ाम के हैदराबाद प्रान्त में गए थे। नामपल्ली और सिकन्दराबाद में उनका भव्य तथा भावपूर्ण स्वागत हुआ। डॉ. अम्बेडकर जब बेगमपेठ रेलवे स्टेशन पर पहुंचे, तो श्री जे. एच. सुबय्या, अध्यक्ष, अनुसूचित जाति फेडरेशन, हैदराबाद प्रांत, श्रीमती सुबय्या, श्रीमती राजमणी देवी तथा श्री माद्रे ने उनका स्वागत किया।

अनुसूचित जाति फेडरेशन, हैदराबाद के स्त्री–पुरुषों द्वारा उत्साहपूर्ण स्वागत किए जाने के कारण उनका यह दौरा स्मरणीय बन गया। महिला स्वयंसेवकों द्वारा डॉ. अम्बेडकर को दिया गया सम्मान इतना भव्य था कि वायसराय को भी ऐसा सम्मान कभी प्राप्त नहीं हो सका थ। सारा वातावरण ''अम्बेडकर जिन्दाबाद'' के नारों से गूंज उठा था। सबसे पहले डॉ. अम्बेडकर को एक जुलूस में सिकन्दराबाद रेलवे स्टेशन से 'पांच बंधु सेवा हाल' और फिर एक विशाल पंडाल में ले जाया गया जहां समारोह संपन्न हुआ। इस मौके पर स्वागत समिति के प्रमुख, प्रेम कुमार ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का स्वागत किया और अनुसूचित जाति फेडरेशन की ओर से श्री जे.एच. सुबय्या ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को मानपत्र भेंट किया।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर करतल ध्वनि के बीच बोलने के लिए खड़े हुए। वह

---

[1] द बंबई क्रानिकल, 20 सितंबर, 1944

[2] कांबले, बी.सी. समग्र अम्बेडकर चरित्र (मराठी) जिल्द 17, पृष्ठ 66–67

हिंदी में 45 मिनट बोले। उन्होंने अपने प्रभावकारी भाषण से श्रोताओं को मंत्रमुग्ध कर दिया। उनकी भाषा ने लोगों के दिलों को छू लिया। उन्होंने सभी उपस्थित जनों से अपील की कि वे सब अनुसूचित जाति फेडरेशन के ध्वज तले संगठित हों।[2]

धमकी मिलने पर भी अडिग डॉ. अम्बेडकर ने कहा, यदि अनुसूचित जातियों के लोगों के साथ उचित व्यवहार नहीं हुआ और उनके अधिकारों तथा विशेषाधिकारों को उचित मान्यता नहीं मिली, तो जरूरत पड़ने पर वे लोग अपने प्राणों की बलि देकर भी अपनी लड़ाई लड़ेंगे। डॉ. अम्बेडकर ने साफ कहा कि यदि राजनीतिक सत्ता किसी की होगी तो वे तीन पक्ष होंगे—हिंदू, मुस्लिम और अनुसूचित जातियाँ। उन्होंने दृढ़ता से कहा कि कोई भी उन्हें उनकी आधिकारिक स्थिति से वंचित नहीं कर सकता।

दूसरे गोलमेज सम्मेलन का स्मरण करते हुए, डॉ. अम्बेडकर ने विचार प्रकट किया कि गांधी को प्रथम गोलमेज सम्मेलन के समय विभिन्न पार्टियों की रणनीति और युक्तियों की कोई जानकारी नहीं थी। अतः वह इस बात के लिए चिंतित थे कि उन्हें गांधी को भावी स्थिति के बारे में चेतावनी दे देनी चाहिए। डॉ. अम्बेडकर ने कहा, इस विषय पर वह फेडरल स्ट्रक्चर उप समिति के समक्ष पहली बार बोले ताकि वह सारी स्थिति का खुलासा कर सकें। उनके कुछ समय बाद गांधी जी बोले, ''मेरा दिल डॉ. अम्बेडकर के साथ है, लेकिन मेरा मस्तिष्क उनके साथ नहीं है।'' अगली प्रातः सम्मेलन की कार्यवाही प्रारंभ होने से पहले उन्होंने गांधी जी के सामने कुछ प्रश्न रखे। वे प्रश्न ही उनके बीच झगड़े का कारण बने। उन्होंने गांधी जी के समक्ष सवाल उठाए – क्या गांधी को इस कथन के समर्थन में कांग्रेस से कोई आज्ञा मिली है कि वे नामांकन द्वारा भारतीय राजाओं के प्रतिनिधित्व का स्वागत करेंगे, और क्या कांग्रेस अप्रत्यक्ष निर्वाचन के विरुद्ध नहीं है जिसके लिए गांधी ने कहा था कि उन्हें कोई आपत्ति नहीं है, और क्या 'होमरूल बिल' कांग्रेस द्वारा इसी कारण नामंजूर नहीं किया गया था। श्री गांधी ने इन प्रश्नों का उत्तर देने से इंकार कर दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, ''इन सब बातों के द्वारा मैं इस मुद्दे को सामने लाना चाहता हूं कि यदि भारत को झुकना पड़ा है तो वह मेरे कारण नहीं, अनुसूचित जातियों के कारण नहीं, बल्कि वह श्री गांधी और श्री श्रीनिवास शास्त्री तथा दूसरे लोगों के कारण हुआ है। डॉ. अम्बेडकर ने आगे विचार प्रकट किया—

''ज्यादा बेहतर होगा कि सवर्ण हिंदू इस बात को समझ लें कि अनुसूचित जातियां भारत के राष्ट्रीय जीवन में एक पृथक तत्व हैं। हम उनसे पूरी तरह सहमत हैं कि इस देश को आजादी मिलनी चाहिए। लेकिन जो भी नई सरकार अर्थात्

स्वराज सरकार आए वह ऐसी सरकार हो जिसमें हिंदू, मुस्लिम और अनुसूचित जातियाँ सभी संप्रभुता के वारिस हों।

...........ऐसा प्रतीत होता है कि श्री गांधी की नीति, जो देश की सबसे बड़ी पार्टी कांग्रेस से ताकत ग्रहण करती है, ब्रिटिश सरकार को सूचित करना और अनुसूचित जातियों की मांगें मंजूर कराये बिना, उसे अपनी बात मनवाने के लिए बाध्य करना है। अल्पसंख्यकों की समस्या उठने के समय से, श्री गांधी का अपने राजनीतिक जीवन में संपूर्ण उद्देश्य केवल एक रहा है और वह है अनुसूचित जातियों की उपेक्षा करना, उन्हें अनदेखा करना। इस विषय में श्री गांधी की युक्तियों का मुझे बहुत दुखद अनुभव रहा है।''

डॉ. अम्बेडकर ने बताया कि गोलमेज सम्मेलन में गांधी ने उन्हें अलग–थलग करने, उनके प्रयासों के हर प्रकार के समर्थन को काटने की कोशिश की । हर बार गांधी नाकाम रहे, किंतु आखिर में उन्होंने एक युक्ति अपनाई। मुझे यह कहते हुए अफसोस है कि कोई भी ईमानदार आदमी उसका इस्तेमाल नहीं करेगा। उन्होंने मुसलमानों से संपर्क किया और उन्हें बताया कि वह श्री जिन्ना के 14 बिंदुओं को मानने के लिए तैयार हैं बशर्ते कि मुस्लिम इन गंदे कुत्तों, अछूतों का समर्थन न करने के लिए राजी हो जाएं।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उनके पास एक समझौता है जो गोलमेज सम्मेलन में गांधी और मुस्लिमों के बीच तैयार हुआ था। सौभाग्यवश, मुस्लिमों में कुछ शर्म बाकी थी और उन्होंने गांधी का समर्थन नहीं किया।[3]

बहरहाल, डॉ. अम्बेडकर के मानपत्र में और भी बहुत सी बातें थीं जो टाइम्स ऑफ इंडिया में प्रकाशित हुई थीं। वे प्रश्न निम्न प्रकार थे। (सम्पादक)

''वह ब्रिटिश सरकार को यह स्पष्ट बताना चाहते थे कि वास्तविक राष्ट्रीय सरकार वह होगी जो हिंदुओं, मुस्लिमों और अनुसूचित वर्गों से मिलकर बनेगी। दलित वर्ग हिंदू समाज के अंग नहीं हैं बल्कि उनका एक अलग राष्ट्र है। दलित वर्ग अपने उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु आंदोलन करने और लड़ाई लड़ने के लिए तेयार हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने अपने समाज के लोगों को चेतावनी दी कि उनके रास्ते में भारी अड़चनें हैं। श्री गांधी और हिंदुओं ने सरकार में पर्याप्त भागीदारी की मुस्लिमों की मांगें मान हैं, जबकि दलित वर्ग द्वारा रखी गई उसी प्रकार की मांग उन्होंने स्वीकार नहीं की।

[3] हैदराबाद बुलेटिन, 20 सितंबर, 1944 पुनर्मुद्रित, मारिल्ल चन्द्र, पृष्ठ 63–65

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने घोषणा की कि दलित वर्ग भारत की आजादी की चाह में किसी अन्य समाज से पीछे नहीं हैं, लेकिन उन्हें देश की स्वाधीनता के साथ–साथ अपने समाज की स्वाधीनता चाहिए।

हैदराबाद राज्य अनुसूचित जाति फेडरेशन द्वारा डॉ. अम्बेडकर को भेंट किए गए मानपत्र में गांधी–जिन्ना वार्ता का उल्लेख किया गया था। उसमें कहा गया था कि कोई भी आपसी समझौता या करार, चाहे खुलेआम हो या गुप्त रूप से, तब तक दलित वर्गों पर लागू नहीं होगा जब कि उनके विश्वासपात्र नेता डॉ. अम्बेडकर का समर्थन उसे नहीं मिलेगा।[4]

● ● ●

[4] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 22 सिंतबर, 1944

91

मैं राष्ट्रवाद का विरोधी नहीं हूं, किन्तु.......

मद्रास नगर निगम ने 22 सितंबर, 1944 (शुक्रवार) को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार का नागरिक अभिनंदन करने का निश्चय किया था। समारोह रिपन भवन में आयोजित किया गया।

मुख्य अतिथि का स्वागत, महापौर, आयुक्त और पार्षदों द्वारा किया गया। उसमें विशाल जनसमूह ने भाग लिया। कांग्रेस प्रमुख पार्टी के सदस्य उसमें जानबूझकर अनुपस्थित रहे।

अभिनन्दन पत्र का वाचन महापौर डॉ. सय्यद निजामतुल्लाह द्वारा किया गया और एक सुंदर चांदी की मंजूषा में भेंट किया गया। डॉ. अम्बेडकर का पुष्पमाला पहनाकर स्वागत किया गया और उपस्थित पार्षदों से परिचय कराया गया।[1]

अपने अभिनन्दन के उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने कहाः

''इस देश का शासक वर्ग ब्राह्मण समाज है। 1937 के चुनावों में सात प्रांतों में ब्राह्मण प्रधानमंत्री बने और कुल मंत्रियों में आधे मंत्री, ब्राह्मण थे। यदि राष्ट्रीय सरकार बनी और यदि वह शासक वर्ग के हाथ में चली गई तो क्या आप लोग वास्तव में यह सोचते हैं कि वह सरकार ,वर्तमान भारत सरकार से, जिसकी इतनी अधिक आलोचना होती है, बेहतर काम करेगी?

''आपका अपने शहर में अभिनन्दन पत्र भेंट करने का फैसला करने का विचार बहुत कृपापूर्ण रहा। मैं मद्रास का निवासी नहीं हूं, और मैंने नागरिक जीवन में कोई भूमिका अदा नहीं की है, इसलिए आपके इस सम्मान पर मेरा कोई अधिकार नहीं है। फिर भी आपने मुझे यह मानपत्र भेंट करने का फैसला किया, मैं हृदय से कृतज्ञ महसूस करता हूं क्योंकि यह एक ऐसी चीज है जिस पर मैं कोई हक नहीं जता सकता। क्या मैं इस तथ्य का हवाला दे सकता हूं और किसी विवाद या आलोचना की भावना के बिना ऐसा कर रहा हूं, क्योंकि मैंने समाचार–पत्रों में पढ़ा है कि मेरे इस अभिनन्दन पर आम सहमति नहीं थी और कुछ लोगों की इस पर असहमति थी (हंसी)? मैं इसका उल्लेख इसलिए कर रहा हूं क्योंकि मैं यह महसूस

1 खैरमोड़े, खंड 9, पृष्ठ 337

करता हूं कि मुझे इस अभिनन्दन का स्वागत उससे भी अधिक करना चाहिए, जो मैं तब करता जब अभिनन्दन सर्वसम्मति से होता। जो काम हम सर्वसम्मति से करते हैं उसमें से ज्यादातर या तो औपचारिक होते हैं या ऐसे कृत्य होते हं जो 'सभ्यता के पारम्परिक असत्य वचनों' से अधिक कुछ नहीं होते। हम हर रोज ऐसा करते हैं, जिसका कोई अर्थ नहीं होता (करतल ध्वनि)। जो भी हो यह इस बात का संकेत है कि इसमें परस्पर सहयोग की भावना थी, जो मुझे अभिनन्दन पत्र भेंट करने के लिए सच्ची और साग्रह थी।

''मेरे विश्वविद्यालयी कैरियर, शिक्षक, वकील और बम्बई विधान परिषद के सदस्य के नाते मेरे कार्यों का उल्लेख ऐसे शब्दों में किया, जो मेरे विचार में कुछ फिजूल बातें हैं। आइए, मैं आपको आश्वस्त कर दूं कि मैं इतना विचारशून्य नहीं हूं, जो यह मान लूं कि आपने जो कुछ कहा, मैं वास्तव में उसका अधिकारी था। मैं कहना यह चाहता हूं कि जिस भाषा का आपने इस्तेमाल किया है, वह उस महान सहानुभूति को इंगित करती है जो आपके मन में उस लक्ष्य के प्रति है जिसके लिए मैंने इतने लंबे समय तक श्रम किया है और, जो कुछ आपने कहा है, वह वास्तव में मेरे अपने व्यक्तित्व के बजाय उस लक्ष्य के समर्थन में है।

''गंदी बस्तियों की सफाई, कामकाजी वर्गों के बच्चों के लिए भोजन के संबंध में मद्रास निगम के कार्यों का हवाला दिया गया। यदि मैं वह सब गिनाऊं जो भारत सरकार ने इस संबंध में किया है, तो यह उपयुक्त नहीं होगा। फिर भी केवल उस आलोचना का जवाब देने के लिए जो कभी—कभी भारत सरकार के खिलाफ की जाती है कि वह एक धीमी मशीन है और धीरे—धीरे चलती है, मैं यह कहना चाहूंगा कि पिछले कुछ वर्षों में भारत सरकार एक आदर्श निकाय नहीं रही है। वह कुछ अत्यंत आवश्यक सुधारों को कार्यरूप देने के लिए समय का इंतजार करती रही है, जिसे करने के लिए प्रत्येक सरकार बाध्य होती है। किंतु मैं एक ऐसे महान कार्य की चर्चा करना चाहता हूं जो भारत सरकार ने पिछले कुछ वर्षों में कामकाजी जनता के लिए किया है। मैं तकनीकी प्रशिक्षण योजना का हवाला दूंगा जिससे 60,000 लोगों को अकुशल से कुशल बनाया गया है। पूरे भारत में 300—400 प्रशिक्षण केंद्र खोले गए हैं और हमें आशा है तथा हमारी आकांक्षा है कि तकनीकी प्रशिक्षण योजना, जिसकी स्थापना हमने की है, युद्ध समाप्ति पर बंद नहीं होगी। वह देश में शिक्षा व्यवस्था का एक स्थायी अंग होगी। इस संस्था के द्वारा श्रमजीवी वर्ग के बच्चों को, जिन्हें विश्वविद्यालय स्तर की शिक्षा प्राप्त करने का मौका नहीं मिलता है, उन्हें बेहतर कौशल पाने का मौका मिल सकता है और इस प्रकार न कमाने की सामर्थ्य बढ़ सकती है (करतल ध्वनि)। ऐसे कई विधान हैं जो सरकार ने

युद्धकाल में बनाए हैं। उदाहरण के लिए, औद्योगिक विवादों में अनिवार्य मध्यस्थता का प्रावधान है। अब तक भारत सरकार को कामगारों के रोजगार के निबंधन और शर्तें विहित करने का कोई प्राधिकार नहीं था। यह हर व्यक्ति का निजी मामला था। यह रोजगार की मजदूरी और शर्तें तय करने के लिए कामगार और नियोजक के बीच निजी करार से अधिक कुछ नहीं था। आज हमारे यहां कानून है जिसके अनुसार, यदि भारत सरकार को संतोष हो जाता है कि रोजगार के निबंधन और शर्तें संतोषजनक नहीं हैं, तो वह ऐसे नियम और शर्तें अधिरोपित कर सकती हैं, जिन्हें वह ठीक और उचित समझे। हालांकि यह विधान, युद्ध की देन है, फिर भी आशा है यह युद्ध के बाद भी समाप्त नहीं होगा और यह इस देश में विधि व्यवस्था का स्थायी अंग होगा (करतल ध्वनि)। जो कुछ हमने किया है हम जानते हैं वह वास्तव में कम है। लेकिन मैं चाहता हूं कि जनता यह समझ ले कि भारत सरकार कानून के मामले में बहुत संतोषप्रद स्थिति में नहीं है।

''पहले तो, अधिकांश श्रम कानून लिखित हैं, इस पर प्रांतों का प्राधिकार और न्याय क्षेत्र है इसलिए प्रांत ही श्रम विधान बना सकते हैं। भारत सरकार को यह प्राधिकार, विधान की समवर्ती सूची से मिला है। आप सब जानते हैं कि हालांकि भारत सरकार को श्रम विधान पारित करने के लिए समवर्ती अधिकार दिया गया है फिर भी भारत शासन अधिनियम में एक निश्चित प्रावधान (उपबन्ध) है कि चाहे विधान प्रांतीय प्राधिकार से लाया गया हो अथवा केंद्रीय विधायिका के समवर्ती अधिकार क्षेत्र से, श्रम विधान का प्रशासन पूरी तरह प्रांतीय सरकार के हाथ में है। परिणामस्वरूप.......... जब भारत सरकार सोचती है कि वह विधायन की समवर्ती शक्तियों के माध्यम से विधान बनाए तो ऐसा करने से पहले उसे प्रांतीय सरकारों से परामर्श करना होता है। आखिरकार जब विधान पारित हो जाता है तो उसका कार्यान्वयन प्रांतीय सरकार को करना होता है। इसलिए जब तक भारत सरकार प्रांतीय की पूर्व सम्मति न ले ले, तब तक उन विधानों को पारित करने का कोई उपयोग नहीं है, जिन पर प्रशासनिक निकाय दृष्टिपात करने को तैयार नहीं है। ये हैं हमारी कठिनाइयां। लेकिन मैं कहूंगा और आश्वासन दूंगा कि सरकार पत्थर का दिल नहीं रखती। वह तेज गति से काम करती है और श्रमिक मामलों में पुनर्गठन की सोच रही है। (तालियां)

''बहुत से लोग भारत सरकार की आलोचना करते हैं और मुझे आश्चर्य होता है कि क्या ऐसा करना ठीक है? हो सकता है, भारत सरकार ने ज्यादा न किया हो, लेकिन क्या इससे अंतर पड़ता है? मेरे विचार में भी ऐसा प्रतीत होता है, लेकिन ऐसा नहीं है। आखिरकार, सवाल यह है, क्या नई भारत सरकार ने कुछ

किया है या वह नहीं करेगी। मेरे विचार में, हम जिसे राष्ट्रीय सरकार कहते हैं वह इससे ज्यादा अच्छा काम करेगी मैं विनम्रतापूर्वक कहना चाहता हूं कि हम जिस प्रश्न के बारे में सोच रहे हैं, यह प्रश्न उससे कहीं अधिक महत्वपूर्ण है। बहस की खातिर, मैं यह मानने के लिए पूर्ण रूप से तैयार हूं कि वर्तमान भारत सरकार को एक केयरटेकर (कार्यवाहक) सरकार माना जाए। हम एक नई सरकार की ओर देख रहे हैं, और मुझे जो सवाल चिंतित करता है वह यह है कि क्या वह राष्ट्रीय सरकार इससे बेहतर काम करेगी। मुझे भी कुछ आशंका है। हम सब यह कह रहे हैं कि हमें एक बार सत्ता, बालिग मताधिकार मिल जाए, हम सब बुराइयों का खात्मा कर देंगे, उनका सफाया कर देंगे, हरेक को राह पर ले आएंगे, ताकि वे मनुष्य की भांति सीधे खड़े होकर चल सकें। मुझे घोर शंकाएं हैं। मैंने यूरोपीय सरकार के इतिहास का काफी अध्ययन किया है और मैं उन लोगों में से हूं जिन्हें इस अभिकथन के बारे में कतई भ्रांति नहीं है जो कभी–कभी किया जाता है कि एक बार बालिग मताधिकार पर आधारित संसदीय सरकार स्थापित हो जाए, तो सारी मानव बुराइयां समाप्त हो जाएंगी। इतिहास में इस प्रकार की विचारधारा के लिए कोई आधार नहीं है, जो इसे समर्थन दे। ऐसा कुछ नहीं है। मुझे ऐसा लगता है कि हम कुछ मोह भंगों से ग्रस्त हैं अथवा स्वयं मिथ्या प्रश्न पूछ रहे हैं। यह कहना ठीक है कि आपको बालिग मताधिकार मिले या नहीं अथवा लोकतांत्रिक सरकार हो या कोई अन्य सरकार हो, हर देश में, हर समाज में दो वर्ग होते हैं– शासक वर्ग और शासित वर्ग। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि वे प्रत्यक्ष हो अथा किसी प्रकार के आवरण में रहें। होता यही है, चाहे आपको बालिग मताधिकार मिल जाए या किसी भी प्रकार की शांति या चुनाव मिल जाएं। शासक वर्ग शासन करने के लिए चुना जाता है, शासित वर्ग को कभी मौका नहीं मिलता। क्या मैं काल्पनिक बात कर रहा हूं? मैं ऐसा नहीं सोचता। मैं जो कहता हूं उसका एक आधार होता है।

''आइए, 1937 के चुनावों के परिणामों को देखें। हमारे पास व्यपक मताधिकार था, चुनाव परिणाम और वास्तविक वोटें थीं। सात कांग्रेस प्रांतों में क्या हुआ? मैं उसके बारे में बोलना नहीं चाहता। उस समय मैंने जो कुछ कहा था, वह सच निकला ओर वह सत्य यह था कि देश में इससे फर्क नहीं पड़ता कि आप क्या करते हैं, राज तो ब्राह्मण समाज ही करेगा (हंसी), यह बात सामने आ गई। शेष कुछ नहीं हुआ। सात प्रांतों में, ब्राह्मण प्रधानमंत्री बनें। कुल मंत्रियों में से आधे मंत्री ब्राह्मण थे। मैं यह सब आलोचना की खातिर नहीं कह रहा हूं, मैं केवल तथ्य बता रहा हूं। यदि चुनावों से कुछ साबित हुआ, तो बस इतना साबित हुआ कि इस देश के दिल में एक ही समाज है, जिसे शासक वर्ग बनना है। वह शासक वर्ग के

रूप में सामने आया है। मेरे विचार में, मुझे यह सवाल नहीं उठाना चाहिए कि, क्या हर देश स्वशासन के लिए हकदार नहीं है, बल्कि हमें यह पूछना चाहिए कि क्या किसी देश में शासक वर्ग में उत्तरदायित्व की भावना है ताकि उस देश की सरकार, उस समाज को सौंपी जा सके। हम इस बात को भूल गए हैं कि शासन करने के अधिकार का फैसला वास्तव में शासक वर्ग में उत्तरदायित्व के प्रकाश में तय होना चाहिए। आखिरकार, यदि शासक वर्ग को शासन करना है, तो सवाल यह है कि उस शासक वर्ग का दृष्टिकोण क्या है, विचारधारा क्या है, उसे किसमें विश्वास है। यदि आपका शासक वर्ग ऐसा है जो इस बात में विश्वास रखता है, जिसे आप श्रेणीबद्ध असमानता समझते हें, जो उस दूसरे के ऊपर आसीन है जिसे असमानता में विश्वास नहीं है, और बल्कि उसे इस बात में विश्वास है कि वह आदमी आदमी नहीं है, उसे स्पर्श न किया जाए और यह कि अमुक वर्ग ही शिक्षा और संपत्ति के लिए हकदार है, दूसरे नहीं। दूसरे केवल सेवा करने के लिए ही पैदा होते हैं और वे सेवा करते–करते मर जाते हैं। यही वह सवाल हैं, जो मैं पूछता हूं। यदि राष्ट्रीय सरकार बनी और यदि वह शासक वर्ग के हाथ में चली गई, तो क्या आप वाकई में सोचते हैं कि राष्ट्र की सरकार वर्तमान, भारत सरकार से बेहतर काम करेगी?

मैं राष्ट्रीय सरकार का विरोधी नहीं हूं, मैं स्वराज का विरोधी नहीं हूं। मैं स्वाधीनता का विरोधी नहीं हूं। यदि मुझे यह आश्वासन दिया जाए कि मुझे स्वाधीनता, शिक्षा और कल्याण सुलभ होंगे, जिनका राष्ट्र से वायदा किया गया है तो मैं निश्चय ही स्वाधीनता के लिए, राष्ट्रवाद के लिए, स्वतंत्रता के लिए लडुंगा (हर्षध्वनि और करतल ध्वनि)। लेकिन यदि इन लंबी–लंबी बातों, वृहत विचारधारा के बाद कुछ और नहीं हुआ तो हम इसे 'एक टांग पर नाचना' कहेंगे यदि वह शासक वर्ग तक ही सीमित रहता है। और यदि राजनीतिक सत्ता का उपयोग उस वर्ग को सबल बनाने के लिए किया जाता है, तथा दूसरों को उनके अधिकारों से वंचित किया जाता है, तो हो सकता है वर्तमान भारत सरकार की उतनी आलोचना न हो, जितनी अब हो रही है। (जोरदार करतल ध्वनि).............'' ।[1*]

● ● ●

---

[1] द लिबरेटर 24.9.1944, भारत सरकार द्वारा किए गए सुधारों के बारे में डॉ. अम्बेडकर का नागरिक उद्बोधन

* उद्बोधन में 'लिबरेटर' की टिप्पणियों के लिए देखिए– परिशिष्ट–III

92

एकता का महत्व सर्वोपरि है

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 23 सितंबर 1944 को श्री पी. बालासुब्रमण्य, संपादक, 'संडे आब्जरवर' द्वारा कन्नेमरा होटल, मद्रास में दी गई लंच पार्टी के दौरान भाषण दिया।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा–

''जहां तक मैं अध्ययन कर पाया हूं, गैर–ब्राह्मण पार्टी का जन्म भारत के इतिहास में एक घटना मानी गई है। बहुत से लोग तो यह भी नहीं समझ पाए थे कि गैर–ब्राह्मण पार्टी का मूलभूत आधार साम्प्रदायिक पहलू नहीं है जैसाकि 'गैर–ब्राह्मण' शब्द से इंगित होता है। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि गैर–ब्राह्मण पार्टी को कौन चलाता है – चाहे वह तथाकथित मध्यवर्ती वर्ग हो जो एक ओर ब्राह्मणों तथा दूसरी ओर अछूतों के मध्य है। यदि वह पार्टी लोकतंत्रात्मक पार्टी नहीं है, तो वह पार्टी कुछ नहीं है। इसलिए जो भी लोग लोकतंत्र में विश्वास रखते हैं, उन्हें पार्टी के हितों और भाग्य की बड़ी चिंता रही। गैर–ब्राह्मण पार्टी का संगठन इस देश के इतिहास में एक घटना थी। इसका पतन भी वैसी ही घटना थी, जिसे नितांत अफसोस के साथ याद किया जाएगा। 1937 के चुनावों में इस पार्टी का बुरा हाल क्यों हुआ, यह प्रश्न पार्टी के नेताओं को अपने आपसे पूछना चाहिए। आखिर, मद्रास में चुनाव से पहले दरअसल 24 वर्ष तक गैर–ब्राह्मण पार्टी का शासन रहा था। पार्टी ने क्या गलती की कि लंबे समय तक सत्तारूढ़ रहने के बावजूद वह ताश के पत्तों की तरह टूटकर धराशायी हो गई? ऐसा क्या हुआ कि अधिकांश गैर–ब्राह्मणों में यह पार्टी इतनी अलोकप्रिय हो गई? मेरे मतानुसार दो बातें इस पतन के लिए जिम्मेदार हैं। प्रथम, वे यह ठीक–ठीक नहीं समझ पाए कि उनके ब्राह्मण वर्ग से क्या मतभेद हैं। यद्यपि वे ब्राह्मणों की तीव्र आलोचना करते रहते थे, फिर भी क्या उनमें से कोई भी कह सकता है कि वे मतभेद सैद्धांतिक थे? उनमें कितना ब्राह्मणत्व था? वे नवाब थे और स्वयं को दूसरी श्रेणी के ब्राह्मण मानते थे। ब्राह्मणत्व को छोड़ने के बजाए उनमें यह भावना थी कि यही आदर्श हैं जहां पर उन्हें पहुंचना चाहिए। ब्राह्मणों के खिलाफ उनका क्रोध यह था कि वे (ब्राह्मण) उन्हें केवल द्वितीय श्रेणी का मानते हैं।

''कोई पार्टी ऐसी स्थिति में अपनी जड़ें कैसे जमा सकती है जब उसके अनुयायियों को यह स्पष्ट ज्ञात न हो कि वह पार्टी जिसके वे सदस्य हैं और उस पार्टी के बीच, जिसका विरोध करने के लिए उनसे कहा गया है, सैद्धांतिक मतभेद क्या हैं। इसलिए पार्टी के पतन का एक कारण था, ब्राह्मण वर्ग और गैर–ब्राह्मणों के बीच सिद्धांतों में भेद का कारण निरूपित न कर पाना। पार्टी के पतन का

दूसरा कारण यह था कि उसके पास बहुत संकीर्ण राजनीतिक कार्यक्रम थे। पार्टी के विपक्षी, पार्टी को नौकरी ढूंढने वालों की पार्टी कहते थे। 'हिंदू' में प्रायः इसी शब्द का इस्तेमाल हुआ है। मैं इस आलोचना को अधिक महत्व नहीं देता, क्योंकि यदि हम नौकरी की तलाश में थे तो दूसरे पक्ष के लोग भी हमसे पीछे नहीं थे। गैर–ब्राह्मण पार्टी के राजनीतिक कार्यक्रम में एक दोष यह रहा कि पार्टी ने अपने नौजवानों के लिए कुछ नौकरियां पाने को अपना प्रधान उद्‌देश्य बना लिया था। वह पूरी तरह विधिसम्मत था। लेकिन क्या गैर–ब्राह्मण युवाओं ने, जिनके लिए पार्टी ने सार्वजनिक सेवाओं में नौकरी पाने के लिए 20 वर्ष तक संघर्ष किया था, नौकरियों में अपना वेतन पाने के बाद पार्टी को याद किया? पार्टी 20 वर्ष तक सत्तारूढ़ रही। वह गांवों में रहने वाले 90% गैर–ब्राह्मणों को भूल गई, जो गरीबी में जीवनयापन कर रहे थे, और सूदखोरों के जाल में फंसते जा रहे थे।

''मैंने इस कालावधि में बने कानूनों को देखा है और भूमि सुधार विषयक एकमात्र विधान को छोड़कर गैर–ब्राह्मण पार्टी ने किसानों और पट्‌टेदारों की कभी चिंता नहीं की। हुआ यह कि ''कांग्रेसी लोगों ने इससे चुपचाप अपनी ताकत बढ़ा ली।''

''मुझे इन घटनाओं से बहुत कष्ट हुआ है। मैं एक बात पर जोर देना चाहता हूं कि पार्टी ही वह चीज है, जो उन्हें बचा पाएगी। पार्टी को अच्छा नेता चाहिए, पार्टी को संगठन चाहिए, पार्टी को राजनीतिक मंच चाहिए।

अब हम नेतओं के बारे में ज्यादा आलोचनात्मक विचार करें। हम कांग्रेस पर दृष्टिपात करें। महात्मा गांधी को नेता के रूप में किसी भी अन्य देश में कौन स्वीकार करता? वह एक ऐसा आदमी है जिसके पास न तो संकल्पना है, न ज्ञान और न निर्णय है वह ऐसा आदमी है जो सार्वजनिक जीवन में जीवन–पर्यन्त विफल रहा। जब गाधी जी कोई अच्छी नीति लाते थे और भारत कामयाब होने के करीब होता था, तो वह कोई महत्वपूर्ण अवसर नहीं होता था। जब श्री जिन्ना ने अपना पाकिस्तान मुद्‌दा उठाया तो 2–3 वर्ष बाद गांधी जी ने इसे पाप बताया और उसे अनसुना कर दिया। अंततोगत्वा, स्पष्टवादिता सामने आई। गांजी जी भयभीत हो गए। अब वह उलटफेर करने के लिए जूझ रहे थे। फिर भी वह इस देश में नेता बने रहे, क्योंकि कांग्रेस ने अपने नेता को कसौटी पर नहीं कसा।

आइए, श्री जिन्ना के पक्ष पर बात करें। वह एक निरंकुश नेता बने। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा, कि लीग ही उनका सर्वस्व तमाशा था। लेकिन मुसलमान, सही रूप में उनमें आस्था रखते थे। कांग्रेस जानती थी कि गांधी जी पर लगाया गया कोई भी आरोप संगठन को बिखेर देगा। इसलिए उसने वह सब काफी झेला, जो लोकतंत्र से असंगत था। इसलिए मैं गैर–ब्राह्मणों से कहूंगा 'एकता का महत्व सर्वोपरि है। इससे सबक सीखो, कहीं ज्यादा देर न हो जाए'।''

● ● ●

93

मैं भारत के देश भक्तों से बहुत आगे था.........

24 सितंबर, 1944 (रविवार) को मैमोरियल हाल, पार्क टाउन, मद्रास में, राव बहादुर एन. शिवराज के सभापतित्व में अछूतों की एक सभा आयोजित की गई। उसमें डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का स्वागत जोरदार करतल ध्वनि से किया गया। उस सभा में (1) मद्रास आदिद्रविड़ वर्कर्स एसोसियेशन, (2) साउथ इंडियन बुद्धिस्ट एसोसियेशन, (3) नागरिक और सैनिक स्टेशन बंगलोर के अनुसूचित जातियों के फेडरेशन, (4) मद्रास अनुसूचित जाति छात्र संघ और (5) आंध्र प्रांतीय अनुसूचित जाति कल्याण संध और अन्य संस्थाओं ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को अभिनन्दन–पत्र भेंट किए। इस मौके पर एक युवक ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को भगवान बुद्ध की एक सुंदर प्रमिा भेंट की। वह प्रतिमा उसने स्वयं बनाई थी।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने भेंट किए गए अभिनन्दन पत्रों के उत्तर में कहा–

"मैं यह कहना चाहता हूं कि इसी मद्रास शहर में, मैंने इस शहर के एक बहुत प्रतिष्ठित नागरिक की दो टिप्पणियां सुनीं जो मेरे लिए बहुत असम्मानजनक थीं अर्थात राइट ऑनरेबल यू.एस. श्री निवास शास्त्री द्वारा हाल में दिए गए एक भाषण के मौके पर, जब श्री शास्त्री का मन पाकिस्तान के इस मुद्दे से व्याकुल नहीं था और जब वह गांधी जी जो अकेले किसी भी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में भारत का प्रतिनिधित्व पूरी तरह कर सकते हैं, को भारत की आत्मा का साक्षात् रूप मानते थे। तब श्री शास्त्री ने कहा था कि चाहे जो भी हो, भारत की जनता को यह ध्यान रखने की बहुत अधिक सावधानी बरतनी चाहिए कि किसी भी परिस्थिति में मुझे किसी भी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में कोई स्थान न मिले। उन वृद्ध पूज्य राजनेता से इस प्रकार की भाषा सुनकर मुझे थोड़ा आश्चर्य हुआ। मैं यह पता लगाने के लिए अपने दिल को टटोल रहा था कि क्या वास्तव में मेरा अपना संपूर्ण सार्वजनिक जीवन, जो मैं यह मानने को तैयार हूं कि वह इतना विशाल नहीं है, जितना राइट ऑनरेबल शास्त्री का रहा है, क्या इतना शानदार है, जितना उनका क्या अपने सार्वजनिक जीवन के अल्पकाल में मैंने ऐसा कुछ हेय किया है कि भारत मुझे किसी अंतरराष्ट्रीय सभा में आसीन देखकर लज्जित होगा? मैं कोई अपशब्द बोलना नहीं चाहता था, क्योंकि

1 खैरमोड़े (जिल्द) पृष्ठ 356

मैं बहुत आसानी से कह सकता था कि राइट ऑनरेबल शास्त्री ब्रिटिश शासन के पालतू कुत्ते रहे हैं। इस पूरे काल में वह ब्रिटिश सरकार की शरण में रहे हैं और यदि उन्होंने भारत में या विदेश में कोई कुख्याति और महानता हासिल की है तो वह मुख्यतः इस कारण कि ब्रिटिश सरकार ने प्रसन्न होकर उन्हें जमूरा (शो बॉय) बनाया था। मैं यह कहना नहीं चाहता कि जो कुछ शास्त्री जी ने कहा है, वह वास्तव में जर्जरित साख पर बैठे बूढ़े कौए की कांव–कांव है।

''ज्यादातर कांग्रेसी क्या कह रहे हैं? कहा गया है कि अनुसूचित जातियां देश के व्यापक हितों के प्रतिकूल रही हैं। मैं कहना चाहूंगा कि मैं इस देश के महानतम व्यक्तियों के सान्निध्य में बैठा हूं। वे हैं– गांधी जी, राइट ऑनरेबल शास्त्री, सर तेज बहादुर सप्रू, और मैं भारत में अनेकों लोक नेताओं को गिना सकता हूं जो निःसंदेह भारत की राजनीति में प्रथम स्थान और पंक्ति में विराजमान हैं। मैंने उन्हें वह सब करते देखा है जो एक राष्ट्रवादी से करने की आशा की जा सकती है, और मुझे विश्वास है, केवल विश्वास नहीं बल्कि मुझे गर्व है, कि जब भी गोलमेज सम्मेलन में कोई सार्वजनिक मसला उठा, तो मैं उन सज्जनों से बहुत आगे रहा, जो भारत के देशभक्त माने जाते हैं। (करतल ध्वनि)

गोलमेज सम्मेलन में श्री गांधी के कृत्य

यहां एकत्रित ज्यादातर लोगों को यह ज्ञात नहीं है कि गांधी जी ने गोलमेज सम्मेलन में क्या किया था। आप सभी सोचते हैं कि हमने वहॉ गौरवपूर्ण भूमिका निभाई है। क्या यह सच है? गांधी जी ने क्या किया? आप सब जानते हैं कि 1931 में जब श्री गांधी ने गोलमेज सम्मेलन में भाग लिया था, तो उन्हें आदेश दिया गया था कि वह स्वाधीनता की मांग करें और भारत स्वाधीनता से कम कोई चीज स्वीकार न करे। यह एक ऐसी बात थी जो निःसंदेह , भारत के अनेक महान राजनेताओं के प्रस्तुत करने की ताकत से परे थी। उन्होंने क्या किया? मुझे खेद के साथ कहना पड़ रहा है और मेरे विचार में इस तथ्य की दृष्टि से कि मुझ पर गोलमेज सम्मेलन में हमेशा एक 'ब्लेक लेग' (धोखेबाज) की भूमिका अदा करने का अभियोग लगाया गया है। मुझे एक कहानी बतानी होगी। जो मैं आप लोगों को बताने वाला हूं उसे सुनकर आपको आश्चर्य होगा। वह वृद्ध, प्यारा–सा आदमी जब गोलमेज सम्मेलन में भाग लेने के लिए स्वाधीनता से कम कुछ न मांगने की आज्ञा लेकर गया था तो उसने क्या किया था? उसने सर सेमुअल होर, तत्कालीन विदेश मंत्री से कहा था कि वह इस प्रक्रम पर, प्रांतीय स्वायत्तता, एक अत्यंत असाधारण चीज से संतुष्ट होने के लिए पूरी तरह तैयार हैं। दूसरी ओर, हम जो कांग्रेस में नहीं हैं, उनका कहना था कि 1931 में, भारत डोमिनियन प्रास्थिति के लिए सक्षम या तैयार है या

नहीं, भारत के लोग हर हालत में केंद्र में कुछ न कुछ उत्तरदायित्व दिए जाने के लिए आग्रह करेंगे। भारत के लोग कभी भी मात्र प्रांतीय स्वायत्तता से संतुष्ट होने के लिए राजी नहीं होंगे, बल्कि वे चाहेंगे कि उन्हें केंद्र में कोई उत्तरदायित्व सौंपा जाए। हमें उस वृद्ध सज्जन से इससे बहुत आगे जाने की आशा थी, क्योंकि उसकी आज्ञा थी स्वाधीनता। अजीब बात है, दुर्भाग्यवश और देश के लिए घातक, उस वृद्ध सज्जन को इतना सिखाया–पढ़या गया था कि उसे इस बात के लिए राजी कर लिया गया था कि 1931 की परिस्थितियों में, वह साइमन कमीशन की सिफारिशों से संतुष्ट हैं और उन्हें मानने के लिए तैयार हैं। सज्जनो! स्थिति किसने संभाली? तत्कालीन विदेश मंत्री सर सेमुअल होर और कन्जरवेटिव पार्टी जो सत्ता में थी, गोलमेज सम्मेलन को बंद करने के लिए आतुर थी। बड़ी बात यह थी, कि हमने एक ़त्रिपक्षीय आयोग नियुक्त किया था जिसमें पार्लियामेंट की तीन पार्टियों अर्थात लिबरल, लेबर और कन्जर्वेटिव पार्टियों के प्रतिनिधि थे। सर सेमुअल होर इस बात को सम्मान की बात मानते थे कि पार्लियामेंट को साइमन कमीशन की सिफरिशों के पक्ष में रहना ्चाहिए और उसकी सिफारिशों से आगे नहीं जाना चाहिए। गांधी जी का दृष्टिकोण ईश्वर प्रेषित हस्तक्षेप था। सर सेमुअल होर का यह तर्क कि यदि श्री गांधी भारत का सबसे महान आदमी नहीं है, तो उनसे महान कौन है? सप्रू कौन है, डॉ. अम्बेडकर कौन हैं? जिन्ना कौन है? यदि श्री गांधी प्रांतीय स्वायत्तता से संतुष्ट हैं, तो सारा खेल बंद कर देना चाहिए और सम्मेलन समाप्त कर दिया जाना चाहिए तथा पार्लियामेंट को साइमन कमीशन की सिफारिशों के अनुरूप एक विधेयक बनाने में गर्व महसूस होना चाहिए। मैं उन लोगों में से एक था, जिन्होंने इस प्रकार के प्रस्ताव का विरोध किया था। हमने कहा था कि हम ऐसा कभी नहीं कर सकते और उसमें पक्षकार नहीं बन सकते। हमने इतना विक्षोभ उत्पन्न किया कि ब्रिटिश कैबिनेट को एक छोटी सी कैबिनेट समिति इस बात पर साक्ष्य लेने के लिए नियुक्त करनी पड़ी कि गोलमेज सम्मेलन के प्रतिनिधियों की वास्तविक भावना क्या है। मामले के परीक्षण के लिए अभ्यावेदन आमंत्रित किए गए और मैं उन धैर्यवान व्यक्तियों में से एक था, जिनसे कैबिनेट समिति के समक्ष साक्ष्य पेश करने के लिए कहा गया था। उस समिति के अध्यक्ष थे, लार्ड चांसलर तथा उसके अन्य दो सदस्य थे – प्रधानमंत्री और सचिव। मैं यह कहना चाहता हूं और मुझे इस बात पर गर्व है कि मैं उन लोगों में से एक था जिन्होंने कैबिनेट समिति को बताया था कि दलित वर्ग भी पार्लियामेंट का पीछे हटना सहन नहीं करेंगे। मैंने जो भूमिका निभाई, उसके बारे में क्या कोई कह सकता है कि वह नगण्य थी? क्या यह कहा जा सकता है कि अनुसूचित जातियां, केन्द्र में उत्तरदायित्व के विरोध में थीं। आइए आपके सामने एक दूसरा उदाहरण पेश करूँ। हमारे देश में अनेक देशी रियासतें हैं बल्कि वस्तुतः

हमारी 1/3 जनता देशी राजाओं के राज में रहती हैं, जहां कोई कानून व्यवस्था नहीं है, जहां हर चीज राजा के निजी प्राधिकार और मनमर्जी से होती है। गोलमेज सम्मेलन में लिए गए फैसलों में से एक फैसला यह था कि देशी रियासतों को अखिल भारतीय परिसंघ के संधटकों में से एक संघटक के रूप में शामिल किया जाना चाहिए। बड़ा मसला यह था कि क्या देशी रियासतों प्रतिनिधि स्वयं जनता द्वारा निर्वाचित होने चाहिए अथवा वे राजाओं द्वारा नामित होने चाहिए। यह एक बड़ा मसला था जिस पर बहुत दिनों तक एक लंबा विवाद चलता रहा। संभवतः आपमें से कुछ लोगों की यह धारणा हो कि इस तरह के मुद्दे पर जो महत्वपूर्ण है, जो इतना मार्मिक है, और मैं कहना चाहूंगा जो श्री गांधी को, उनके अनुरूप, इतना प्रिय है, श्री गांधी का क्या दृष्टिकोण होगा? आपको यह सुनकर आश्चर्य होगा कि श्री गांधी स्वयं उन राजाओं के पास चलकर गए थे और सम्मेलन में रियासतों के प्रतिनिधियों को नामित किया गया था। मैं अकेला व्यक्ति था – गोलमेज सम्मेलन का अकेला सदस्य जिसने इस मुद्दे पर शुरू से लेकर अंत तक लड़ाई लड़ी (करतल ध्वनि)। यहां तक कि राइट ऑनरेबल शास्त्री भी – मैं आपको इस वृद्ध आदमी के बारे मे बहुत मजाकिया कहानियां सुनाऊंगा (आवाजें आई – हम सुनकर प्रसन्न होंगे) हम सब फेडरेशन के खिलाफ थे। शुरू से अंत तक मैं इस बात पर सर्वथा कायम रहा कि ब्रिटिश इंडिया की राजनीति को भारतीय रियासतों की राजनीति में न मिलाएं। ब्रिटिश भारत खासकर 150 से भी अधिक वर्षों से देशी भारत से पृथक रही है। बेशक, हमारी नियति एक ही है। फिर भी तथ्य यही है कि ब्रिटिश भारत में हमने एक भिन्न मार्ग पर यात्रा की है। देशी रियासतें एक भिन्न मार्ग पर चल रही हैं। हमें एक भिन्न प्रकार की राजनीति अर्थात् शिक्षा प्राप्त है जो उन्हें प्राप्त नहीं है।

देशी रियासतों की समस्या

हमें विभिन्न राजनीतिक परम्पराएँ विरासत में मिली हैं, और इसीलिए मैं हमेशा इस बात का आग्रह करता रहा कि ब्रिटिश भारत को देशी रियासतों के साथ मिलाकर उसकी नियति को जटिल बनाने के बजाय ब्रिटिश भारत को राजनीतिक उद्धार के मार्ग पर चलने दिया जाए। राइट ऑनरेबल शास्त्री हमारे 'सहकर्मी' थे, या 'षड्यंत्रकारी'? हम केवल तीन थे – सर चिंतामणि, श्रीनिवास शास्त्री और मैं, जो दिल से ब्रिटिश भारत से जुड़े हुए थे। हम उन्हें (शास्त्री को) एक शानदार आदमी होने के नाते चैम्पियन मानते थे जो मेरे जैसे युवक से कहीं अधिक सम्मानित व्यक्ति थे। समापन सत्र में उनके भाषण से एक दिन पहले, मैं और चिंतामणि उन्हें यह जानने के लिए लंच पर ले गए थे कि क्या उनके मन में अब भी कड़वाहट है। हमने पाया कि हां, ऐसा है। जब राइट ऑनरेबल शास्त्री 3.00 बजे बोलने वाले थे तो हम जर्मी स्ट्रीट

से किंग जेम्स पैलेस पैदल चलकर गए थे। मेरे दोस्तो, उन्होंने वहां क्या कहा? वह उठे और बोले, ''प्रिय प्रधान मंत्री, मैं चैम्पियन हूं।'' मेरा और चिंतामणि का दिल बहुत मजबूत था, अन्यथा हम दिल का दौरा पड़ने से मर गए होते। श्री शास्त्री ने कहा कि वह फेडरेशन के पक्ष में हैं, और मेरे पीछे पड़े रहे और मुझे बताते रहे कि मैं पक्का देशभक्त हूं और मैं हमारी योजना को उलट रहा हूं, और हम लोग शांत क्यों नहीं होते? यदि श्री गांधी निष्ठावान हैं और यदि देशी रियासतों के लोगों का हित उन्हें ज्यादा प्यारा है तो आवश्यक है कि उन्हें देशी राजाओं कि निजी शासन के अत्याचार और उत्पीड़न से बाहर निकाला जाए। वह पहले आदमी थे जिन्हें यह कहना चाहिए था कि प्रतिनिधित्व, चुनाव द्वारा होना चाहिए। श्री गांधी ने इसके बजाय यह कहा कि वह इस बात के पक्षधर हैं कि देशी रजवाड़ों के राजा अपने प्रतिनिधियों को नामित करें। मैं आप लोगों को एक बात बता दूं। एक चीज है। मैं जानता हूं श्री गांधी राजनीति के बारे में बहुत कम जानते हैं (हंसी)। मैं दोष निकालने की भावना से नहीं कह रहा हूं, मैं उनके ऊपर कोई निर्णय नहीं दे रहा हूं और न ही सस्ती तालियां बटोरने के लिए बोल रहा हूं। लेकिन मैं जानता हूं, यह सत्य है। हुआ यह था कि प्रथम गोलमेज सम्मेलन में मैं उपस्थित था। श्री गांधी को यह ज्ञात नहीं था कि मुझे बहुत–सी बातें और अड़चनें मालूम हैं। मैं जानता था कि विभिन्न पार्टियां क्या–क्या रणनीतियां और युक्तियां अपना रहीं है और मुझे बड़ी चिंता थी कि श्री गांधी के मुंह खोलने से पहले उन्हें झूठों की वास्तविकता के बारे में चेतावनी दे दी जाए, ताकि वह जान सकें कि वह क्या कहें और क्या न कहें। जब श्री गांधी दूसरे गोलमेज सम्मेलन में आए थे, तो मैं भी परिसंघीय संरचना समिति (फेडरल स्ट्रक्चर कमेटी) का सदस्य था। बेशक, अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधि होने के नाते मुझे अध्यक्ष लार्ड चांसलर की बगल में प्रथम स्थान नहीं मिल सका था (हर्ष ध्वनि)। व्यक्तियों के नामों के क्रम के अनुसार मैं कहीं आखिर में बैइा था। स्पष्ट है, श्री गांधी जब पहले दिन आए थे तो हमारे समझ चर्चा के लिए एक कार्यसूची रखी गई थी। मैं इस तथ्य से बहुत चिंतित था कि राजनीति में श्री गांधी के अपरिपक्व ज्ञान को ध्यान में रखते हुए तथा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि वह प्रथम गोलमेज सम्मेलन में उपस्थित नहीं थे, मैं सबसे पहले बोलने के एक मौके के लिए लालायित था, ताकि मैं सारी स्थिति का खुलासा कर सकूं और श्री गांधी को भी जानकारी हो जाए कि स्थिति क्या है।

डॉ. अम्बेडकर ने यहां वह कहानी सुनाई कि कैसे उन्होंने लार्ड चांसलर को अपने ज्वर से पीड़ित होने के बारे में बताया था और लार्ड चांसलर से सबसे पहले बोलने की इजाजत ले ली थी। लार्ड चांसलर ने श्री गांधी से पूछा, क्या आपको कोई आपत्ति है? ''श्री गांधी ने उदारता की खातिर कहा, ''नहीं''। मैं, करीब डेढ़ घंटा बोला और संभवतः वह भाषण उस देश में, मेरे द्वारा दिए गए भाषणों में सबसे लंबा भाषण

था। भाषण देने के बाद और मिथ्या क्षमा याचना करने के बाद मैं वहाँ, कुछ देर तक रहा और फिर सम्मेलन छोड़कर चला गया। पूरे लंदन में मैं ही अकेला व्यक्ति था जो शाम तक यह जानने के लिए बैठा इंतजार करता रहा कि गांधी जी ने क्या बोला है। ठीक आधी रात के समय, सम्मेलन की कार्यवाहियों की रिपोर्ट मेरे पास पहुंची। जब मैंने डाकिये द्वारा दिया गया पैकेट खोला तो मैंने गांधी के भाषण का पहला ही वाक्य देखा जिसमें लिखा था, ''मेरा दिल डॉ. अम्बेडकर के साथ है, लेकिन मेरा दिमाग उनके साथ नहीं है।'' उन्होंने उस हर चीज का विरोध किया जो, मैंने अपने भाषण में सुझायी थी। मैं बहुत क्रोधित था और वास्तव में मुझे बुखार हो गया। हालांकि सुबह के समय मुझे बुखार नहीं था (शर्म, शर्म के चीत्कार)। मैं अगले दिन प्रातः सम्मेलन में गया। श्री गांधी और दूसरे लोग वहां उपस्थित थे। जैसे ही कार्यवाही का शुभारंभ हुआ, मैंने बीच में लार्ड चांसलर से कहा कि कार्यवाही प्रारंभ होने से पहले मुझे श्री गांधी से कुछ सवाल पूछने की इजाजत दी जाए। मेरे और श्री गांधी के बीच झगड़े का यही कारण रहा है। मैंने श्री गांधी से तीन सवाल पूछे। पहला सवाल था, क्या उन्हें इस कथन के समर्थन में कांग्रेस से प्राधिकार मिला है कि वह नामांकन द्वारा देशी राजाओं के प्रतिनिधित्व का स्वागत करेंगे और क्या इस विषय पर कांग्रेस में कभी विचार–विमर्श हुआ है, क्या कांग्रेस ने कोई संकल्प पारित किए हैं तथा क्या वह कुछ करने के लिए अधिकृत हैं। दूसरा प्रश्न अप्रत्यक्ष चुनाव के बारे में था – कन्जर्वेटिव पार्टी अप्रत्यक्ष चुनाव करवाने को तत्पर थीं। लेकिन हम सब इससे असहमत थे। मैंने गांधी जी से पूछा क्या यह बात नहीं है कि अप्रत्यक्ष चुनाव का यह सिद्धांत श्रीमती एनी बीसेन्ट द्वारा तैयार किए गए स्वराज विधेयक में लाया गया था, जिसे कांग्रेस द्वारा इसी कारण अस्वीकार कर दिया गया था। अगला सवाल मुझे इस समय याद नहीं है। लार्ड चांसलर ने श्री गांधी से मुखातिब होकर पूछा–आपका क्या जवाब है? श्री गांधी ने कोई भी जवाब देने से इंकार कर दिया।

यदि अतीत को बेच दिया गया है, यदि भारत को नीचा देखना पड़ा है तो मेरे कारण नहीं, अनुसूचित जातियों के कारण नहीं, यह श्री गांधी के कारण हुआ। श्री शास्त्री और अन्य लोगों के कारण हुआ है।

आयरलैंड जैसी स्थिति

आइए, आयरलैंड की स्थिति की चर्चा करें और यह बताएँ कि देश की एकता की दिशा में 1916 में अंतिम प्रयास कैसे हुआ था। उन्होंने दक्षिणी आयरिश कैथोलिक का प्रतिनिधित्व करने वाले श्री रेडमंड और आयरिश नेता सर एडवर्ड कारसन के बीच हुई बातचीत का और उस उत्तर का हवाला दिया जो कारसन ने रेडमंड को

तब दिया था जब रेडमंड ने कारसन से पूछा था कि वह जैसे चाहे रक्षोपाय मांग लें। उनका उत्तर था – ''आपके रखोपायों को लानत, क्योंकि मैं आपके द्वारा शासित होना नहीं चाहता हूं।'' मैं अपने हिंदू बंधुओं को बताना चाहता हूं कि भारत में हमारे पास श्री कारसन का दृष्टिकोण अपनाने के हजारों बहाने हैं। हम हिंदुओं को यह बताने के लिए न्याय से बंधे हैं कि, ''आपके रक्षोपायों को लानत, हम आपका शासन नहीं चाहते।'' लेकिन क्या हमने ऐसा कहा था? या हमने ऐसा कहा है? नहीं, हमने ऐसा नहीं कहा है, हालांकि हमारे पास ऐसा कहने का हर अधिकार और हर औचित्य है। हमने अपनी भूमिका अधिक विनम्र होकर निभाई है। हमने कहा है, ''यदि आप वैसा होम रूल (स्वराज) चाहते हैं जैसा हिंदू महासभा के अध्यक्ष ने कहा है, तो वह होम रूप से अधिक कुछ नहीं होगा।''फिर भी हमारा दिल बहुत बड़ा है, क्योंकि हम संपूर्ण देश के हित को समझते हैं। हमने कहा कि आप होम रूल चाहते हैं तो आप ले लें हम आपका समर्थन करेंगे। एक छोटी सी हमारी शर्त है जिस पर हम कायम हैं और वह शर्त है; हमें उचित रक्षोपाय दे दें। यह दृष्टिकोण कारसन द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से कहीं ज्यादा उत्तम है।

मैं श्री शास्त्री, श्री गांधी या किसी कांग्रेसी राजनेता से यह पूछना चाहूंगा कि क्या यह दृष्टिकोण देशभक्तिपूर्ण नहीं है? क्या यह श्रेष्ठ मानसिकता नहीं है अथवा क्या यह उदारतापूर्ण नहीं है? हम ब्राह्मणों के शासन को कैसे भुला रहे हैं जिसमें 2000 वर्षों से हम इस आशा में कष्ट भोग रहे हैं कि यदि हमें रक्षोपाय दिए गए तो हम देश में अन्य उदारवादी तत्वों की मदद से एक ऐसी व्यवस्था स्थापित कर लेंगे जिसमें यह देश तरक्की करके पूर्ण पौरुष और राष्ट्रवाद ग्रहण कर लेगा। क्या आप इससे अधिक उदारता और अधिक उत्कृष्ट भावना की आशा करते हैं, जो हमने इस सब राजनीतिक संवाद में प्रदर्शित की है। इसलिए मैं अपने हिंदू बंधुओं को यह बताना चाहूंगा कि बेहतर होगा कि वे अपनी मानसिकता बदलें और उन बलिदानों को जो हम दे सकते हैं, उन जोखिमों को ध्यान में रखें जो हम उठाने को तैयार हैं। आइए, हम समझौता करें और इस मसले को सुलझाएं। मैं इस पर सहमति के लिए बिल्कुल इच्छुक हूं और तैयार हूं। लेकिन दुर्भाग्यवश, मुझे हिंदू समुदाय की ओर से समुचित प्रतिक्रिया नहीं मिली है। जब भी हमने अपना सर उठाया, उन्होंने हर बार तिरस्कार किया।

मुझे याद है कि जब 1932 में अनुसूचित जातियों का सवाल उठा था और उसे उसी स्तर पर रखा गया था जिस पर मुस्लिमों के सवाल को रखा गया था और जब कभी वयस्क मताधिकार समिति ने विभिन्न प्रांतों में अनुसूचित जातियों के लोगों की संख्या का पता लगाने का प्रयास किया तो मैंने देखा समस्त हिंदुओं, उदार

एवं कट्टर विशाल ह्दय सभी ने एक साथ साजिश करके उस समिति को बताया कि हमारे देश में दलित या अनुसूचित वर्ग जैसी कोई चीज नहीं है (शर्म, शर्म के नारे), उत्तर प्रदेश, बिहार, पंजाब और दूसरे स्थानों पर भी यही बात दुहराई गई। क्यों? जवाब बहुत आसान है। हमारे हिंदू बंधु यह समझ गए कि महामहित सम्राट की सरकार ने विधायिका में अनुसूचित वर्गों को पृथक प्रतिनिधित्व देने का फैसला किया है और यह कि प्रतिनिधित्व की मात्रा अनुसूचित जातियों पर निर्भर करेगी, और चूंकि ये महामहिम सम्राट की सरकार की परियोजना को विफल नहीं कर सके, तो उन्होंने यह कहकर कि कोई अनुसूचित जातियां नहीं हैं, इस परियोजना को विफल करने के लिए भूमिगत तरीके अपनाने शुरू कर दिए। इस प्रकार की रणनीति, एक घटिया रणनीति हिंदुओं द्वारा 1932 में अपनाई गई थी। आज मैं देखता हूं कि हिंदू एक अन्य प्रकार की रणनीति अपना रहे हैं।

गांधी – वेवेल पत्राचार

मैंने सभी का ध्यान गांधी – वेवेल पत्राचार, विशेषकर 15 जुलाई, 1944 के एक पत्र की ओर आकृष्ट किया। वह पत्र अत्यंत महत्वपूर्ण और आलोचनात्मक था। वायसराय ने उस पत्र में लिखा था कि जब महामहिम सम्राट की सरकार भारत को युद्ध की समाप्ति पर स्वतंत्रता प्रदान करने के लिए तैयार है, तब महामहिम सम्राट की सरकार ने एक बात का आग्रह किया था कि ऐसा संविधान अस्तित्व में आएगा जिस पर उन सबकी सहमति होगी जो भारत के राष्ट्रीय जीवन में महत्वपूर्ण संघटक कहे जाते हैं। वायसराय ने भी इसमें योगदान दिया और उन्होंने खासतौर पर बताया कि महत्वपूर्ण संघटक कौन–कौन हैं। हमारे लिए सौभाग्य से और हमारे हिंदू बंधुओं के लिए दुर्भाग्य से, मैंने बताया कि अनुसूचित जातियां भारत के राष्ट्रीय जीवन में एक महत्वपूर्ण संघटक हैं। (करतल ध्वनि)

अनुसूचित जातियों के लिए पृथक प्रतिनिधित्व

मैंने प्रेस के कुछ वर्गों में छपे विवाद का भी हवाला दिया कि वायसराय का यह कथन नया है और यह उन प्रस्तावों से अलग है, जो महामहिम सम्राट की सरकार की ओर से सर स्टेफर्ड क्रिप्स द्वारा प्रस्तुत किए गए थे। इसी बात ने मुझे खिन्न कर दिया था और मैं मिथ्या और द्वेषपूर्ण प्रचार को नहीं समझ सका था। मैंने हिंदू पत्रकारों और संपादकों से अंततः कहा कि वे स्वयं उन बातों से सर्वथा परिचित रहें जो वे करते हैं, इस तथ्य को जानें और फिर जो चाहे आलोचना शुरू करें। मुझे यह बताने की जरूरत नहीं है कि साइमन कमीशन ने अनुसूचित जातियों को पृथक प्रतिनिधित्व देने की जरूरत पर बल दिया है। क्या कोई कह सकता

है कि अनुसूचित जातियां पृथक और महत्वपूर्ण संघटक नहीं हैं? महामहिम सम्राट की सरकार के गोलमेज सम्मेलन में उन्हें पृथक प्रतिनिधित्व के क्या कारण थे? वे हिंदुओं के उपशीर्ष अथवा एक शाखा, या एक उप समुदाय नहीं रहे हैं। महामहिम सम्राट की सरकार ने उन्हें पृथक प्रतिनिधित्व क्यों दिया? उन्हें पृथक प्रतिनिधित्व इसलिए दिया, क्योंकि वे (महामहिम सम्राट की सरकार) इस बात को मानते थे कि वे पृथक संघटक हैं। इसके बाद जे.पी.सी. रिपोर्ट आई। यह सब पुाना इतिहास है। तदुपरांत काफी कुछ हुआ।

मैं अपने हिंदू बंधुओं से यह कहना चाहूंगा कि बेहतर यही होगा कि वे इस ख्याल को छोड़ दें और स्वयं यह समझ लें कि यह भला है या बुरा, पर अनुसूचित जातियां भारत के राष्ट्रीय जीवन में एक पृथक तत्व हैं। मैं सुस्पष्ट शब्दों में और निश्चित ढंग से उन्हें बताना चाहता हूं, कि वे इस बाबत कोई गलती न करें।

जिन्ना – गांधी वार्ता

मुझे मुख्य समस्या के बारे में और कुछ नहीं कहना है। लोग मुझसे पूछते हैं कि मैं श्री जिन्ना और श्री गांधी के बीच जारी वार्ता के बारे में कुछ क्यों नहीं बोलता। मैं वास्तव में नहीं जानता कि कोई इस वार्ता के बारे में कुछ कह सकता है। वह वार्ता इतनी लंबी चली कि कोई भी यह अंदाजा नहीं लगा सकता कि इन दो वृद्ध और प्रिय सज्जनों के बीच क्या चल रहा है, अथवा क्या वार्ता में जीवन्तता है। लेकिन मैं एक बात कहना चाहूंगा। मैं इस बातचीत पर ध्यान नहीं देता और मैं आपको कुछ कारण बताऊँगा। साम्प्रदायिक समस्या अधिकांशतः हिंदू–मुस्लिम समस्या नहीं है। साम्प्रदायिक समस्या एक बड़ी समस्या है। यह ऐसी समस्या है जहां केवल मुसलमान ही नहीं बल्कि ईसाई, अनुसूचित जातियां और संभवतः अन्य अल्पसंख्यक भी इसमें शामिल हैं। परिणामस्वरूप, इस प्रकार के मामलों में, सबसे समझदार, सुरक्षित और सबसे सच्चा रास्ता यह होगा कि विभिन्न अल्पसंख्यकों के सब प्रतिनिधि एकत्र होकर बैठें, अपना–अपना पक्ष–कथन पेश करें, ताकि प्रत्येक पक्ष यह जान सके कि दूसरा पक्ष क्या कह रहा है और इस प्रकार सभी दूसरों के अधिकारों का उचित आदर करते हुए आपस में परामर्श करें और एक फैसले पर पहुंचे, जो सभी को मान्य हो। इन पंथगत समझौतों और व्यवस्थाओं से दुर्गंध आती है, बास आती है। यह व्यवस्था मुझे उन दो लोगों के बीच एक सौदे जैसी लगती है, जिन्होंने तीसरे आदमी को लूटने का और अपनी स्थिति को बेहतर बनाने का निश्चय किया है। मुझे मालूम नहीं है श्री जिन्ना श्री गांधी से क्या मांग रहे हैं। मैं नहीं जानता गांधी जी श्री जिन्ना को क्या देने को तैयार हैं। लेकिन मैं इस बात से

बहुत परेशान हूं कि यदि गांधी जी श्री जिना को उनके हक से ज्यादा कुछ देते हैं तो वह अधिक चीज मेरे हिस्से की होगी जो दूसरे के पास चली जाएगी। इसलिए आप भली प्रकार समझ सकते हैं कि मैं उनकी वार्ता के बारे में इतना क्यों चिंतित हूं। श्री गांधी की सबसे महत्वपूर्ण नीति है कि इस देश में सबसे बड़ी पार्टी की मदद प्राप्त करके कांग्रेस के लिए किसी भी तरह शक्ति हासिल की जाए। और ब्रिटिश सरकार को दबाकर, अनुसूचित जातियों की मांग मंजूर करने के लिए राजी हुए बिना, उसे शर्तें मानने को बाध्य किया जाए।

श्री गांधी ने साम्प्रदायिक समस्या के समय से अपने पूरे सार्वजनिक जीवन में केवल एक चीज की है और वह है अनुसूचित जातियों की उपेक्षा (शर्म, शर्म के नारे) उनसे बचने के लिए और उन्हें हां के तहां छोड़ने के लिए। इस संबंध में मैंने श्री गांधी की चालों के अपने दुःखद अनुभव का हवाला दिया। गोलमेज सम्मेलन में श्री गांधी ने मुझे अलग–थलग करने की कोशिश की थी। मैं हिटलर की भाषा का इस्तेमाल नहीं करने जा रहा हूं कि वह मुझे घेर रहे थे (हर्ष ध्वनि) जो एक बेहतर शब्द है। हालांकि उन्होंने मुझे अकेला कर दिया था और वह हर प्रकार की सहायता ठुकरा दी थी जो अनुसूचित जातियों की ओर से मैंने पेश की थी। वह लंबे अर्से तक नाकाम रहे और अन्ततोगत्वा उन्होंने ऐसे हथियार का इस्तेमाल किया जिसे, मुझे अफसोस के साथ कहना पड़ रहा है, कोई भी ईमानदार आदमी इस्तेमाल नहीं करता। वह मुसलमानों के पास गए और उन्होंने श्री जिन्ना को बताया कि वह उनकी 14 मांगें मानने को तैयार हैं। केवल एक मुद्दे पर रियायत ली। श्री जिन्ना को बताया गया कि वह अछूतों के इस गंदे कुत्ते की बात न मानें। मेरे पास एक दस्तावेज है जो गोलमेज सम्मेलन के समय मुस्लिम लीग और श्री गांधी के बीच बनाया गया था। मैं बिना अधिकार के नहीं बोल रहा हूं। हमारा सौभाग्य है कि मुस्लिमों में लज्जा और पश्चाताप की कुछ भावना थी। मुझे आशा है और विश्वास है कि उन्होंने (श्री गांधी ने) श्री जिन्ना से अपनी मुलाकात के मौके पर इसकी कोशिश नहीं की थी।

आप लोग समझ लें, हमारा उद्देश्य क्या है! हमारा उद्देश्य और आकांक्षा एक शासक समुदाय जाति की है। आप सब लोग इस बात को मन में बैठा लें और आप लोग अपने घरों की दीवारों पर लिख दें ताकि आप रोजाना यह याद रख सकें कि हमारी आकांक्षाएं और हमारा लक्ष्य कोई मामूली स्वरूप का लक्ष्य नहीं है। यह अब तक के हमारे लक्ष्यों में से सबसे बड़ा लक्ष्य है। देखना यह है कि हमें एक शासक जाति के रूप में माना जाए। यदि आप यह महसूस करते हैं तो आप मानेंगे कि इसे कार्यरूप देने के लिए हमें कितने भारी प्रयास करने होंगे। मात्र शब्दों से काम नहीं बनेगा, मात्र संकल्पों से लक्ष्य पूरा नहीं होगा। हो सकता है श्री गांधी इसे झांसापट्टी

मानकर दरकिनार कर दें। हमें श्री गांधी और महामहिम सम्राट की सरकार दोनों के सामने सिद्ध करना होगा और मैं दोहराता हूं; इस महामहिम सम्राट की सरकार से भी हमारा अभिप्राय है बिजनेस अर्थात् प्रयोजन (सुनो, सुनो)। पूरी तरह उद्देश्य की बात और महामहिम सम्राट से अपने उद्देश्य की मांग करेंगे। हम किसी को संकोच नहीं करने देंगे। जब महामहिम सम्राट की सरकार कोई वचन देती है तो हम आशा करेंगे कि महामहिम सम्राट की सरकार उस वचन का सम्मान करे। महामहिम सम्राट की सरकार की सद्–इच्छा पर निर्भर रहने का कोई लाभ नहीं है और न ही स्वयं अच्छाई पर निर्भर रहने का कोई फायदा है। हमें अपनी सामर्थ्य बढ़ानी होगी। हमें दूसरे लक्ष्यों को एक तरफ हटाना होगा।

एक ध्वज तले आइए

''कदाचित मेरे इस शहर में आने पर यहाँ अनुसूचित जातियों में जोश की तीव्र लहर दिखाई दे रही है। आप स्थानीय रीति से और स्थानीय भावना से अपनी स्थानीय गतिविधियों को चलाकर कभी सबल नहीं बन सकते। आप सबको एक ध्वज के नीचे, एक संगठन और एक राजनीतिक दल में एकत्र होना सीखना होगा तथा ऐसा करके दुनिया को दिखाना होगा कि आप लोग अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन नाम से ज्ञात एक संगठन के अधीन एकसूत्र में बंधे हुए हैं। मैं आयोजकों को अपने स्वागत करे लिए धन्यवाद देता हूं।

सभा में से कुछ लोगों ने आग्रह किया है कि मेरा भाषण तमिल में अनुवादित किया जाए। उन्हें आश्वस्त किया गया है कि भाषण का तमिल अनुवाद छापा जाएगा और निःशुल्क बांटा जाएगा।''

इसके बाद सभा 'डॉ. अम्बेडकर अमर रहें' के नारे के साथ विसर्जित हुई।[1]

●●●

[1] द मेल, 26 सितंबर, 1944

94

भारत का इतिहास बौद्ध धर्म और ब्राह्मण—धर्म के संघर्ष के अलावा अन्य कुछ नहीं है

मद्रास में ठहरने के दौरान डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को कई संस्थाओं ने भाषण के लिए आमंत्रित किया था। मद्रास रैशनल सोसाइटी भी ऐसी ही एक संस्था थी। उसने 'रैशनलिज्म इन इंडिया' पर डॉ. अम्बेडकर का भाषण, रविवार 24 सितंबर, 1944 को प्रभात टाकीज, ब्रॉडवे, मद्रास में पूर्व मंत्री रामनाथन की अध्यक्षता में आयोजित किया गया। इस मौके पर साऊ एम.एम. मुथु ने डॉ. अम्बेडकर का स्वागत किया।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने कहा —

''भारत में 'रैशनलिज्म' अर्थात तार्किकता का विषय निःसंदेह भारतीयों के लिए बड़ी रुचि का विषय है और इसका ठोस प्रभाव पड़ा है। इसलिए जहां तक हिंदू समाज और सामाजिक जीवन का संबंध है, यह विषय पूरी तरह उपेक्षित रहा है। भारतीय इतिहास के बारे में अनेकानेक मिथ्या धारणाएं हैं, जिन्हें उन लोगों को खरीदने के लिए प्रचारित किया गया है जो साहित्य जगत में बहुत बड़े आधिकारिक विद्वान हैं। भारतीय इतिहास के अत्यंत पारंगत लेखकों का कहना है कि भारत में कोई राजनीतिज्ञ है ही नहीं और समस्त प्राचीन भारतीय लेखक स्वयं दर्शन, धर्म, आध्यात्म से सरोकार रखते थे और उन्होंने राजनीति की कभी चिंता ही नहीं की। यह कहा गया है कि प्राचीन भारत के लोग कभी भी इतिहासवेत्ता या राजनीतिज्ञ वर्ग के नहीं रहे हैं। आज तक भी यही राय कायम है। यह भी कहा गया है कि भारत का कोई इतिहास नहीं रहा है, हालांकि भारतीय जीवन और समाज एक पुराने कठोर सांचे में आगे बढ़ा है, वह एक बार स्थिर हो गया और उसी तरह चलता रहा। परिणामस्वरूप, भारत के इतिहास —कारों को कुछ नहीं करना होता है, बल्कि यही बताना होता है कि वह कठोर सांचा क्या है। यह भी कहा गया है कि, कुछ देशों के बारे में यह भी कहा जा सकता है कि उन्होंने पिछली राजनीतिक क्रांति की रूपरेखा को बदलने के उद्देश्य से कुछ विशेष और राजनीतिक क्रांतियां की हैं।

''मैं केवल एक राजनेता रहा हूं और मैं साहित्य का या इतिहास का या दर्शन का गंभीर विद्यार्थी होने का दावा नहीं कर सकता। लेकिन मैंने प्राचीन

1 खैरमोड़े खंड 9, पृष्ठ 376

इतिहास के अध्ययन के लिए अपना कुछ समय निकाला है और मैं अनेक विद्वानों द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों से प्रतिकूल निष्कर्षों पर पहुंचा हूं। अपने अध्ययन से मुझे ज्ञात हुआ कि प्राचीन भारतीयों में राजनीतिज्ञों की एक परंपरा थी जो इतिहास में उल्लिखित है। यों प्राचीन अतीत में किसी भी देश में ऐसी क्रांति नहीं हुई, जिसने समाज के आचार–नियमों, शासन और दर्शन को प्रभावित किया हो और जिन पर भारतीयों का विशेषाधिकार सिद्ध हो सके। संभवतः भारत एक ऐसा देश रहा है जिसने तार्किकता का उपदेश दिया है और वह भी ऐसा, जो विश्व ने पहले कभी नहीं देखा। भारत एक क्रांति भूमि भी रही है, और इसकी तुलना में फ्रांस की क्रांति केवल 'बागाटैला' कही जाएगी, इसके अधिक कुछ नहीं।

ब्राह्मण धर्म और बौद्ध धर्म में अंतर

मेरे निर्णय के अनुसार, भारतीय इतिहास के छात्रों को एक बात ध्यान में राखना आवश्यक है और वह बात ऐसी है, जिसे उन इतिहासकारों ने हमेशा उपेक्षित किया है, जिन्होंने भारत के इतिहास पर लिखा है। यह एक मूल बात है और जब तक उसे ध्यान में नहीं रखा जाएगा, तब तक कोई भी भारत के इतिहास को समझ नहीं सकता। मूल तत्व यह है कि प्राचीन भारत में बौद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म (सनातन धर्म) के बीच बड़ा संघर्ष रहा है। यदि इस बड़े संघर्ष को इसमें से निकाल दिया जाए, तो भारत का इतिहास कुछ नहीं बचेगा। यह एक संघर्ष भी नहीं था जैसा कि दर्शनशास्त्र के प्रोफेसरों ने बार–बार कहा है, बल्कि किसी पंथ के बारे में झगड़ा था। यह विचारधारा की क्रांति नहीं थी, बल्कि राजनीतिक और सामाजिक दर्शन की क्रांति थी। बौद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म में झगड़ा एक ही मुद्दे पर था और वह मुद्दा था – 'सत्य क्या है'? या 'किसे सत्य माना जा सकता है'? तार्किकता इसी प्रश्न की पृष्ठभूमि पर प्रकाश डालती है। सत्य क्या है, इसके बारे में बुद्ध ने जो उत्तर दिया था वह उससे मूलतः भिन्न था जो ब्राह्मणों ने दिया था। बुद्ध ने कहा था कि सत्य ऐसी चीज है जिसकी साक्षी दस इंद्रियों में से कोई भी इंद्रिय हो सकती है। सत्य के बारे में ब्राह्मणों की विचारधारा यह थी कि यह ऐसी कोई चीज है जिसे वेदों द्वारा घोषित किया गया है (हंसी की लहर)। उन्हें कोई गलती नहीं करनी चाहिए बल्कि ब्राह्मण धर्म का यही सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत है। बौद्ध क्रांतिकारी थे और ब्राह्मण क्रांति विरोधी। बौद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म में यही अंतर था। प्राचीन काल से ही ब्राह्मण यह आग्रह करते थे कि वेद समस्त सामाजिक और धार्मिक सिद्धांतों के निर्णायक समादेश माने जाएं। यह बात समझना कठिन है। लेकिन मुझे आश्चर्य है कि प्राचीन ब्राह्मणों जैसे चालाक लोगों ने ऐसे ग्रंथों को इतना असीम पावन और प्रमाण बनाने का आग्रह किया है। इन ग्रंथों में मूर्खता के सिवाय कुछ नहीं है।

वेदों में जालसाजी

वेदों के कुछ पहलुओं का विवेचन करते हुए और कुछ दृष्टांतों का उल्लेख करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उनमें कुछ अंश जालसाजी के हैं और उनका समावेश बाद के काल में किया गया है। उन्होंने ऐसा इसलिए किया है क्योंकि वे अपनी विचारधारा के लिए एक प्रकार की धार्मिक स्वीकृति चाहते थे। उनके विचार में यह एक कारण था कि ब्राह्मणों ने सामाजिक सिद्धांतों के प्रति इतनी अयथार्थवादी दृष्टि अपनाने का आग्रह किया था। बौद्ध धर्म और ब्राह्मण धर्म के बीच का संघर्ष सर्वोच्चता के लिए था। जब बौद्ध धर्म लुप्त हुआ तो वह विस्मयकारी ढंग से लुप्त हो गया। विश्व के इतिहास में, बुद्ध स्वतंत्रता, समता, बंधुत्व का संदेश देने वाले प्रथम व्यक्ति थे। वे लोग इसलिए अदृश्य हो गए, क्योंकि प्रति–क्रांति ने उस क्रांति को पराभूत कर दिया। वे तार्किकता की भावना भी खो चुके थे, और यही कारण था कि संपूर्ण हिंदू समाज नितांत अंधविश्वास, मूर्ति पूजा और सभी प्रकार के कदाचारों से ग्रस्त हो गया था। उनका पालन धर्म के नाम पर किया जाता था। बुद्ध की सत्य के प्रति तार्किक विचारधारा विलुप्त हो गई। आज वे प्रति–क्रांतिकारियों के चंगुल में हैं। प्रति–कांतिकारियों के धर्मग्रंथ भगवद् गीता और मनुस्मृति हैं।

आज की त्रासदी यह है कि राजनीति में अतार्किक विचारधारा प्रवेश कर गई है। राजनेता हर देश में कसौटी पर हैं। लेकिन भारत में इसका समाधान क्या है? श्री गांधी कभी कसौटी पर नहीं रहे। क्या वह वास्तव में कसौटी पर खरे हैं? नहीं। यदि वह कोई बात कहते हैं, तो हर कोई उसे इस प्रकार स्वीकार करता है मानों वह बात वेदों में से हो। यदि वह विरोध में कुछ कहें तो भी हमें वह बात माननी होगी। दो वर्ष पहले, श्री गांधी ने कहा था पाकिस्तान का विचार नापाक है क्योंकि कांग्रेसियों ने कहा, वह नापाक है। मैंने भी पाकिस्तान पर एक किताब लिखी है। मुझे कहा गया था कि मेरी बुद्धि मुस्लिम लीग के पास बंधक रखी है और वह नापाक काम कर रही है आदि आदि। हाज श्री गांधी कहते हैं पाकिस्तान नापाक नहीं है। अतार्किकता का यह एक उदाहरण मात्र है, जो हमारे सामाजिक और बौद्धिक चिंतन में ही नहीं, राजनीतिक चिंतन में भी घर कर गया है।

मुझे विश्वास है कि यदि हमने अतिशीघ्र कुछ नहीं किया तो हम इस देश के लिए एक बड़ी आफत खड़ कर देंगे......।''[1]

● ● ●

[1] द लिबरेटर मद्रास, 25.9.1944

95
गांधी प्रांतीय स्वायत्तता से संतुष्ट थे

24 सितंबर, 1944 को डॉ. अम्बेडकर ने शिवराज मैमोरियल हाल, मद्रास[1] में अपने भाषण में श्रीनिवास शास्त्री और गांधी जी की कटु आलोचना की।

उन्होंने कहा –

''.....अपने हाल के कुछ भाषणों में राइट ऑनरेबल वी.एस. श्रीनिवासन शास्त्री ने कहा है कि वह गांधी जी को भारत की आत्मा का साकार रूप मानते हैं और यह कि किसी भी अंतरराष्ट्रीय मंच पर भारत का प्रतिनिधित्व गांधी जी को करना चाहिए तथा बड़ी सावधानी से यह ध्यान रखा जाए कि किसी भी परिस्थिति में उसके (डॉ. अम्बेडकर) जैसे व्यक्तियों को किसी भी भावी अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में कोई जगह न मिले।

''.....मैं यह पता लगाने के लिए अपना दिल टटोल रहा था कि क्या वास्तव में मैंने अपने पूरे सार्वजनिक जीवन में, जो मैं मानता हूं इतना विशाल नहीं है जितना माननीय श्रीनिवास शास्त्री का है और न ही इतना शानदार है जितना उनका है, अपने जनसेवा के अल्पकाल में कुछ इतना घटिया काम कर दिया है कि भारत मुझे अंतरराष्ट्रीय सभा में आसीन देखकर लज्जित हो जाएगा। मैं गाली गलौज की भाषा बोलना नहीं चाहता, क्योंकि मैं आसानी से कह सकता था कि राइट ऑनरेबल शास्त्री ब्रिटिश सरकार का 'पालतू कुत्ता' है। इस पूरे समय वह ब्रिटिश शासन की गोद में बैठे रहे, और यदि उन्होंने भारत में या भारत के बाहर कोई कुख्याति और महानता हासिल की है, तो वह मुख्यतः इस कारण कि ब्रिटिश सरकार ने प्रसन्न होकर उन्हें 'जमूरा' बनाकर रखा है। मैं यह नहीं कहना चाहता कि जो कुछ श्री शास्त्री ने कहा है, वह वास्तव में जर्जरित टहनी वाले पेड़ पर बैठे बूढ़े कौए की कांव–कांव है ... ''....श्री श्रीनिवासन शास्त्री ने जो कुछ कहा वह संभवतः उसी का प्रतीक है, जो ज्यादातर कांग्रेसी कह रहे थे और वह यह था कि जब तक अनुसूचित जातियां उनके नेतृत्व में हैं तब तक वे देश के व्यापक हित के प्रतिकूल रहेंगी। ज्यादातर लोग नहीं जानते कि गांधी जी ने गोलमेज सम्मेलन में क्या किया था। वे सब सोचते हैं कि उनकी भूमिका शानदार रही। महात्मा गांधी स्वाधीनता मांगने का प्रस्ताव लेकर सम्मेलन में गए थे। वह एक ऐसी चीज थी जो भारत में बहुत से गंभीर राजनेताओं की मांग के परे थी। लेकिन गांधी जी ने क्या किया? इस मध्ययुगीन वृद्ध सज्जन ने, जो स्वाधीनता से कम किसी बात पर राजी न होने का प्रस्ताव लेकर सम्मेलन में गए थे, सर सेमुअल होर से कहा था कि वह प्रांतीय स्वायत्तता स्वीकार करने के लिए बिल्कुल तैयार हैं। (शर्म–शर्म के नारे)''।

●●●

1 खैरमोड़े खंड 9, पृष्ठ 384

2 द मेल, मद्रास, 26 सितंबर, 1944

96

हम इस देश के भाग्य–विधाता हैं

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, 28 सितम्बर, 1944 (मंगलवार) को दोपहर बाद, अनुसूचित जाति फेडरेशन के महासचिव पी.एन. राजभोज तथा वी. रामकृष्ण, ए.सी. एम. श्रम विभाग के साथ राजमहेन्द्री पहुंचे। नगरपालिका की ओर से डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का म्यूजियम सभागार में नागरिक अभिनन्दन किया गया। सोमिना कामेश्वर राव, नगरपालिका अध्यक्ष और के व्यंकटाद्रि नगरपालिका आयुक्त ने डॉ. अम्बेडकर का स्वागत किया।[1]

नागरिक अभिनन्दन का उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा –

''आज हम एक अत्यंत दुःखद समाचार की छाया में मिल रहे हैं। रिपोर्ट छपी है कि श्री गांधी और श्री जिन्ना के बीच वार्ता असफल रही है। हम कभी भी दोनों को एक साथ नहीं ला पाए। हम कभी भी अपने मतभेदों को दूर नहीं कर पाए और समझौता नहीं कर पाए, ताकि आगे बढ़ सकें। अत्यंत नाजुक मौके पर हमेशा कुछ न कुछ हो जाता है। ओल्ड टेस्टामेंट में कहीं लिखा है – 'जिस राष्ट्र ने अपनी दूरदृष्टि खो दिया, वह नष्ट हो जाएगा।' श्री गांधी में मैंने जो कमियां देखी हैं उनमें से एक कमी यह है कि उनमें दूरदर्शिता का पूर्ण अभाव है। मुझे आश्चर्य है कि कांग्रेस के संस्थापक इस पाकिस्तान के बारे में क्या सोचेंगे। यह देखने की दृष्टि से कि निःसंदेह, धीरे–धीरे; स्वराज हासिल करने के लिए, जो लोग पहली बार 1885 में मिल थे उन्होंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि आंदोलन ऐसी रीति से, ऐसी भावना से आगे जाएगा कि जिस समय भारत अपने लक्ष्य पर पहुंचने वाला होगा ठीक उसी समय भारत को दो टुकड़ों में बांट दिया जाएगा। हमें बताया गया था कि वे वृद्ध व्यक्ति, जिन्होंने कांग्रेस को शुरू किया है, अत्यधिक धीमे हैं। वे केवल आराम कुर्सी के चिंतक हैं और वे कुछ नहीं कर रहे हैं, केवल वायसराय को पत्र भेज रहे हैं। यह कहा गया था कि वे तरीके भारत के लिए उपयुक्त नहीं हैं। परिणाम यह हुआ कि श्री गांधी के नेतृत्व में अत्यंत सक्रिय आंदोलन शुरू किया गया। वह जन आंदोलन था। रोशनी और दूरदृष्टि के सिवाय हमारे पास सब कुछ था। श्री गांधी काफी हद तक अब्राहम लिंकन जैसे थे। दासता के सवाल पर अब्राहम लिंकन

1 खैरमोड़े जिल्द 9, पृष्ठ 394

ने जा रवैया अपनाया था, वही बहुत कुछ, भारत में, अल्पसंख्यकों की समस्या के बारे में गांधी जी द्वारा अपनाया गया था। अब्राहम लिंकन पूरी भावना के साथ यूनियन के पक्ष में थे। वह दास प्रथा के रक्षा थे, फिर भी दासता से मुक्ति की घोषणा अब्राहम लिंकन द्वारा सन् 1863 में की गई। वह ऐसा करने के लिए आजाद थे ताकि वह उत्तरी सेनाओं के लिए नीग्रों की मदद प्राप्त कर सकें। श्री गांधी का रवैया भी बिल्कुल वैसा ही प्रतीत होता है। वह हमेशा कहते हैं – 'मैं स्वतंत्रता चाहता हूँ लेकिन मैं चतुर्वर्णाश्रम धर्म चाहता हूं।' श्री गांधी के नाकामयाब होने का एक कारण उनका यही रवैया है। मुझे आशा और विश्वास है कि श्री गांधी इस भूल को समझने में समर्थ होंगे।

''देश के लिए स्वाधीनता हर कोई चाहता है। लेकिन वे यह नहीं समझ पाए कि राजनीति में समता की श्रेणीबद्ध व्यवस्था है। वे अल्पसंख्यकों के लिए समता और स्वतंत्रता तथा आजादी चाहते हैं। जो भारतीय अल्पसंख्यकों के रक्षोपायों की व्यवस्था पर आपत्ति करता है, वह देश का मित्र नहीं है और वह लोकतांत्रिक नहीं है। वह देश का शत्रु है। क्या मैं पुनः यह कह सकता हू कि इस देश के सामने यह संभवतः एक सुनहरा मौका है। अनेक मित्र हैं, जो यह मानते हैं कि चूंकि ब्रिटिश सरकार ने युद्ध के बाद भारत की स्थिति की कोई स्पष्ट घोषणा नहीं की है इसलिए उन्हें भावी घटनाक्रम के बारे में आशंका है। वे युद्ध के बाद भारत के भविष्य के बारे में कोई चिंता महसूस नहीं करते। वे यह नहीं मानते कि इस देश की नियति, ब्रिटिाश साम्राज्य में एक आदमी पर, चाहे वह कितना ही महान हो, निर्भर करेगी। हम इस देश के भाग्य विधाता हैं। सब कुछ इस पर निर्भर करता है कि हम अपने में कितनी एकता ला सकते हैं। यदि हम अपने आंतरिक मामलों को व्यवस्थित कर सकते हैं, अपने झगड़ों को इस प्रकार निपटा सकते हैं कि हम एक ऐसा संविधान बनाएं, जिस पर उन सबके हस्ताक्षर हों, जो देश में विभिन्न वर्गों और समुदायों के प्रतिनिधि हैं। हम लोगों के एक और एकमात्र प्रतिनिधि के रूप में श्री गांधी को प्रधानमंत्री अथवा किसी भी व्यक्ति के पास भेज सकते हैं। यह इस पर निर्भर करता है कि श्री गांधी के विचार क्या होंगे.....।''[1]

●●●

1 द हिंदू, 2 अक्तूबर, 1944

97

विद्यार्थी यह देखें कि उपाधि से सकारात्मक ज्ञान भी मिले

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने मंगलवार 2 जनवरी, 1945* को दोपहर बाद स्टूडेंट्स हाल, कलकत्ता, में आयोजित अनुसूचित जातियों के छात्रों की एक सभा को संबोधित करते हुए मत व्यक्त किया कि वर्तमान पीढ़ी के छात्रों की शैक्षिक उपलब्धियों में काफी गिरावट आई है। सेंटपॉल कालेज के प्रो. जे.सी. मंडल ने समारोह की अध्यक्षता की।

अपने भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने आल इंडिया स्टूडेंट्स फेडरेशन को अपना निशाना बनाया और छात्रों से कहा कि वे उससे अलग हो जाएं और अनुसूचित जातियों का एक अखिल भारतीय संगठन बनाएँ।

उन्होंने कहा अखिल भारतीय छात्र फेडरेशन एक सुविख्यात संगठन है। उसकी गतिविधियों के बारे में आप लोगों ने प्रायः पढ़ा होगा। कुछ कारणों से मुस्लिम छात्रों का भी एक पृथक संगठन बना है। कारण उन्हें मालूम नहीं हैं, लेकिन मुस्लिम छात्रों ने अपना निजी संगठन शुरू करना जरूरी समझा है।

उनकी टिप्पणी थी कि उनमें से बहुत से छात्रों को संभवतः मालूम नहीं है कि राजनीति उनका सामान्य क्षेत्र नहीं है। उसे इसमें घसीटा गया है। जिस क्षेत्र में उन्हें आनंद आता है, जिस क्षेत्र में वह अपना कार्यकाल समाप्त होने के बाद लौटना चाहते हैं, वह है शिक्षा का क्षेत्र। वह अर्थशास्त्र और कानून के प्रोफेसर रहे हैं। इसलिए यदि उन्होंने छात्र जगत के अपने अंतरंग अनुभव के आधार पर आल इंडिया स्टूडेंट्स फेडरेशन के बारे में कोई तीखी टिप्पणी कर दी हो तो वे क्षमा चाहते हैं।

डॉ. अम्बेडकर को यह कहने में कोई संकोच नहीं था, कि भारत में शिक्षा के स्तर में फिलहाल बहुत गिरावट आई है। इन विश्वविद्यालयों के प्रथम बैच की तुलना उन छात्रों से करते हुए जिनसे वह अपने प्रोफेसर कैरियर में मिले थे, उन्हें यह कहने में कोई संकोच नहीं था कि छात्र जगत की शैक्षिक उपलब्धियों में उल्लेखनीय गिरावट आई है। इस विषय में, न्यायमूर्ति रानाडे, बाल गंगाधर तिलक, गोखले, सर सुरेन्द्र नाथ और सर शिवस्वामी अय्यर के नामों का जिक्र करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा, "यदि मैं यह कहूं कि इस पीढ़ी मे तुम में से कोई भी उन लोगों के घुटनों तक नहीं पहुंच

* तिथि का स्रोत, जनता, 6 जनवरी, 1945

पाएगा, तो मैं नहीं समझता कि मुझे विद्रोही या बहुत कठोर माना जाएगा।''

यह बताने के बाद कि पहले की अपेक्षा आज कल सरकार शिक्षा पर ज्यादा खर्च कर रही है। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि इस गिरावट का एक कारण है कि छात्र पढ़ाई से ज्यादा राजनीति में रूचि लेते हैं। उनके अनुसार, उनकी शिक्षा का अभिशाप यही है। वह कुछ राजनेताओं की राय से असहमत थे कि राजनीति छात्रों की गतिविधियों का विधि सम्मत लक्ष्य है।

अखिल भारतीय विद्यार्थी फेडरेशन की गतिविधियों की आलोचना करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि फेडरेशन की वे सब परिचर्चाएं, जिन पर प्रेस में बहुत महत्व देकर छपा है या फेडरेशन जो यह सब कर रहा है वह कांग्रेस के संकल्पों को घिसे पिटे तरीके से समर्थित करना ही है। उन्हें उनकी चर्चाओं में कोई मौलिकता दिखाई नहीं पड़ी।

अनुसूचित जातियों के छात्र क्या करें? इस बारे में अपने सुझाव देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उनकी सलाह है कि वे एक अलग संगठन बना लें, क्योंकि वह चाहते थे कि वे अपने आपको राजनीति से दूर रखें। उन्होंने कहा था कि यह आवश्यक है कि वे स्वयं को अखिल भारतीय विद्यार्थी फेडरेशन से अलग कर लें और उन समस्याओं से ताल्लुक रखें, जो छात्रों की जिन्दगी से संबंध रखती हैं। वह चाहते थे कि छात्र स्वयं उन समस्याओं से सरोकार रखें, जो उनकी पढ़ाई के दौरान उनके सामने आती हैं। इस संबंध में उन्होंने कहा कि उन्होंने सुना है कि एक प्राइवेट कालेज में अनुसूचित जातियों की आर्थिक या सामाजिक कठिनाइयों को ध्यान में नहीं रखा गया। उनके दाखिले के लिए कोई विशेष व्यवस्था नहीं की गई और छात्रवृत्ति के विषय में भी कोई विशेष व्यवस्था नहीं की गई। उनकी टिप्पणी थी, 'सभी छात्रों के साथ, चाहे गरीब हों या अमीर, राजा हो या रंक, एक–सा बर्ताव किया जाए।'

यदि अनुसूचित जातियों के विद्यार्थियों का कोई अखिल भारतीय संगठन होता, और उसने उनकी कठिनाइयों के आवश्यक आंकड़े संगृहित कर लिए होते तो वे देश में सरकार को या शासक तत्वों को मजबूर कर देते कि वे उन्हें इस विषय में विचार करने देने की अनुमति के लिए सम्यक् प्रावधान करें। डॉ. अम्बेडकर ने छात्रों को सलाह दी कि वे केवल डिग्रियां हासिल न करें बल्कि यह भी देखें कि डिग्री के साथ–साथ कुछ ठोस ज्ञान या उपलब्धि भी उन्हें प्राप्त हो, उनकी अर्हताएं ऐसी हों जिन्हें वे उत्कृष्ट कहें। वे शिक्षा को एक गंभीर विषय मानें न कि हल्की फुल्की मौज–मस्ती।

विद्यार्थियों से एक अखिल भारतीय संगठन बनाने की मांग दुहराते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उनमें अभी राष्ट्रीय स्तर की जागरूकता नहीं आई है। अभी तक वे प्रादेशिक जिन्दगी जी रहे हैं।[1]

● ● ●

[1] द पीपुल्स हेराल्ड, 10 जनवरी, 1945.

98

देश के लाखों गरीबों के लिए सम्पन्नता की व्यवस्था की नींव रखिए

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 3 जनवरी, 1945 को बंगाल सचिवालय, कलकत्ता में आयोजित सम्मेलन में व्याख्यान दिया।

उन्होंने कहा –

''भारत सरकार एक ऐसी नीति बनाना चाहती है जिसके अन्तर्गत देश के जल संसाधनों का प्रयोग, प्रत्येक प्राणी के सर्वोत्तम लाभ के लिए हो और उनका प्रयोग उन प्रयोजनों के लिए हो, जो दूसरे देशों में होता है। भारत सरकार के ध्यान में संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रभावी 'टेनेसी घाटी योजना' है। वह उस योजना का अध्ययन कर रही है और वह यह महसूस करती है कि यदि प्रांत अपना सहयोग प्रदान करें और प्रांतीय अड़चनों को हटाने के लिए सहमत हों जिनके कारण उनकी तरक्की और समृद्धि अवरुद्ध होती रही है, तो भारत में उसके अनुरूप कुछ किया जा सकता है।

''देश के जल मार्गों का सर्वोत्तम उपयोग करने के प्रारंभिक उपाय के तौर पर भारत सरकार ने 'केंद्रीय तकनीकी पावर बोर्ड' नामक एक 'केंद्रीय संगठन बनाया है तथा केंद्रीय जल मार्ग सिंचाई और नौवहन आयोग' बनाने की सोच रही है।

इन दो संगठनों की स्थापना प्रांतों को यह सलाह देने के लिए की गई थी कि वे अपने जल संसाधनों का सर्वोत्तम प्रयोग कैसे करें और सिंचाई से भिन्न प्रयोजन को पूरा करने के लिए कोई परियोजना कैसे बनाई जाए। उस दिशा में दामोदर घाटी प्रथम परियोजना है। यह बहुउद्‌देशीय परियोजना होगी। इसका उद्‌देश्य दामोदर में बाढ़ की रोकथाम करना ही नहीं, अपितु इसका उद्‌देश्य सिंचाई, नौवहन और विद्युतजनन (बिजली बनाना) भी होगा। दामोदर घाटी परियोजना पूरी होने के बाद जो प्राधिकरण इसका प्रभारी होगा वह कमोवेश टेनेसी घाटी योजना के अनुरूप होगा। यह एक सहकारी उपक्रम होगा जिसमें केंद्र तथा बंगाल और बिहार प्रांत भागीदार होंगे। आशा है कि सम्मेलन समस्त वर्गगत दृष्टिकोणों को दरकिनार करके सर्वोत्तम समाधान पर सहमत होने का संकल्प लेकर अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर होगा तथा जलमार्गों के बारे में एक नई नीति के शुभारंभ का मार्ग खोलेगा और देश के लाखों गरीबों के लिए संपन्नता की सत्ता की नींव रखेगा।

भारत सरकार पूरी परियोजना को एक आकार, स्वरूप देने और उसे जीवंत करने के लिए आतुर है और उसे इस बात की भी चिंता है कि यह सब करने में समय न गंवाया जाए।

● ● ●

99

आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में समाचार–पत्र सुशासन का मूल आधार है

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर सदस्य, वायसराय कार्यकारी परिषद ने बुधवार, 3 जनवरी, 1945 को अपराह्न, 1–2 सीताराम धोष स्ट्रीट कलकत्ता में, जो अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन का कार्यालय है, उक्त फेडरेशन के साप्ताहिक मुख पत्र 'पीपुल्स हेराल्ड' का लोकार्पण किया। फेडरेशन की ओर से माननीय श्री जे.एन. मंडल और श्री आर.एल. विश्वास ने डॉ. अम्बेडकर का स्वागत किया।

माननीय श्री जे.एन. मंडल, अध्यक्ष बंगाल प्रांतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन ने डॉ. अम्बेडकर का स्वागत करते हुए कहा कि उनका संपूर्ण जीवन अनुसूचित जातियों के लिए ही समर्पित नहीं है बल्कि भारत के अन्य शोषित जनसाधारण के लिए भी समर्पित है। उन्हें विश्वास है कि अनुसूचित जातियों और शोषित जनसाधारण का उद्धार डॉ. अम्बेडकर के क्रियाकलाप, मार्गदर्शन और नेतृत्व में ही हो पाएगा।

इससे पहले श्री रसिक लाल विश्वास ने अपने भाषण में कहा था कि इस समय 'पीपुल्स हेराल्ड' साप्ताहिक के प्रकाशन का कारण स्पष्ट है। इस युद्ध के फलस्वरूप शीघ्र ही उदित होने वाले नये भारत में हिंदू समाज मुख्य संघटक होगा और इस हिंदू संघटक में अनुसूचित जातियाँ भी कोई नगण्य नहीं होंगी। उन्होंने आगे कहा कि इन जातियों की कुछ विशिष्टताएँ, रूढ़ियाँ, अधिकार और प्रथाएं हैं, जिनके कारण वे हिंदुओं के अन्य वर्गों से बाहर हैं। अतः अनुसूचित जातियाँ यह मांग रखने की हकदार हैं कि इन विशिष्टताओं का सम्मान किया जाए तथा उन्हें, शिक्षा, नियुक्तियों और उन सब सुविधाओं में जो कोई भी राज्य अपने नागरिकों को प्रदान करे, उचित स्थान मिलना चाहिए। उन्होंने आगे कहा, 'इसलिए यह अखबार अनुसूचित जातियों के अखिल भारतीय मुखपत्र के रूप में निकाला गया है और यह अखबार उनकी भावनाओं और उनकी विधिसम्मत आकांक्षाओं, उनकी शिकायतों और उनकी मांगों को एवं भारत की वर्तमान समस्याओं पर तथा भावी भारतीय राज्य की रचना पर उनके विचारों को भी प्रकाश में लाएगा।''

अपने भाषण के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के भविष्य

का जिक्र किया और कहा कि महात्मा गाँधी के निधन के पश्चात् उसके टुकड़े हो जाएंगे, क्योंकि वे यह नहीं सोच पाते कि कुछ सौ जमींदार या पूंजीपति और कुछ गुमराह श्रमिक नेता मिलकर एक पार्टी चला सकते हैं। जहाँ तक अंग्रेजों के साथ लड़ाई का संबंध है, वे सभी एक हो सकते हैं, लेकिन जब अंग्रेज चले जाएंगे, शून्य पैदा हो जाएगा। जब वे गद्दी पर बैठ जाएंगे और अपनी सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति को पुनः परखेंगे तो क्या जमींदार और किसान तथा पूंजीपति एवं श्रमिक कांग्रेस मे एक दूसरे के साथ रहने के लिए राजी होंगे? इसलिए स्वराज मिलते ही कांग्रेस टुकड़ों में बिखर जाएगी।

उन्होंने दृढ़ता से कहा, लेकिन अनुसूचित जातियाँ हमेशा बनी रहेंगी, यह एक शाश्वत पार्टी है, क्योंकि वे कुछ मूलभूत सिद्धांतों पर जीते हैं। यह कहना कोरी बकवास है कि वे दाल–रोटी के लिए लड़ रहे हैं, वे स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के सिद्धांतों के लिए लड़ रहे हैं, जिनका इस देश में पालन होना है। उनके सिद्धांत जिस समिति लक्ष्य में सिमटे हैं, वह है उनकी दृष्टि और वह है, अनुसूचित जातियों का लक्ष्य। उनका लक्ष्य ऐसा सिद्धांत है, जिससे भारत का ही नहीं, विश्व का भी पुनर्निर्माण होगा।

उन्होंने कहा ''व्यक्तिगत तौर पर मैं नहीं समझता कि भारत में कोई काम ऐसा है जो अनुसूचित जातियों के उत्थान से अधिक श्रेष्ठ हो। कांग्रेस में मेरे अनेक मित्र हैं, जो मेरी तरह मेरी राजनीति को भी नापसंद करते हैं। वे मुझसे कहते हैं कि यदि मैं कांग्रेस के अंदर से ही देश के व्यापक हित में काम करूँ, तो मैं एक दिन कांग्रेस का अध्यक्ष बन सकता हूँ। उनकी अपीलों ने मुझे कभी नहीं ललचाया। मैंने हमेशा यह महसूस किया है कि चूंकि मेरा जन्म इन वर्गों में हुआ है इसलिए मेरा यह कर्तव्य है कि मैं पहले उनके लिए कुछ करूँ। मैंने यह भी महसूस किया है और मेरे विचार में काफी आश्वस्त होकर, कि यदि मैं या दूसरे लोग, जिनमें अनुसूचित जातियों के लक्ष्य को पूरा करने की सामर्थ्य है, दूसरी सेवा के लिए और दूसरे लक्ष्य के लिए उस लक्ष्य को छोड़ देंगे तो इस लक्ष्य को हाथ में लेने के लिए कोई अन्य आगे नहीं आएंगे और वह ध्येय उसी जीर्ण अवस्था में पड़ा रहेगा, जिसमें यह पिछले दो हजार वर्षों से पड़ा है। लेकिन यह केवल एक सीमित दृष्टि है। मैं इस लक्ष्य से इसलिए जुड़ा हूँ क्योंकि मैं इसे एक श्रेष्ठ लक्ष्य मानता हूँ। हिंदुओं का लक्ष्य क्या है? कांग्रेस का लक्ष्य क्या है? राष्ट्रीय स्वतंत्रता का मसला क्या है? जहाँ तक हिंदुओं के उद्देश्य का संबंध है यह परजीवी वर्ग का उद्देश्य है। यह वर्ग इस देश के दबे–कुचले लाखों लोगों के खून, पसीने पर जीता है।'' डॉ. अम्बेडकर ने पूछा– ''क्या कोई आदमी, जिसने राजनीतिक और नैतिक विचारधारा को समझा है और यह मानने लगा है कि विश्व की मुक्ति तब तक नहीं होगी जब तक कि हर

समाज में, विश्व का आर्थिक और सामाजिक संगठन स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व पर आधारित न होगा, अनुसूचित जातियों के लक्ष्य को छोड़ने के लिए, बल्कि हिंदुओं के लक्ष्य को पूरा करने के लिए, कभी सहमत हो सकता है?''

डॉ. अम्बेडकर ने आगे बोलते हुए कहा, ''इसके पश्चात् देश की आजादी के लक्ष्य पर आइए। दुर्बल को सताने का, ताकतवर से छुटकारा और संपूर्ण इंसान बनने का मौका पाने की दुर्बल की आजादी में बहुत बड़ा अंतर है। मैं अपने उन हिंदू देशभक्तों से, जो आजादी, आदि मुद्दों की बकवास करते हैं, पूछना चाहूँगा कि वे इस आजादी का क्या फायदा उठाने वाले हैं? यदि सामाजिक आजादी यथावत रहेगी, यदि वैसी मानसिकता बनी रहेगी, यदि अंग्रेजों से मिलने वाली आजादी का उपयोग वे दलित और सताये हुए वर्गों को दबाने के लिए करने वाले हैं तो उसके लिए कोई क्यों लड़ाई लड़े, यह मेरी समझ में नहीं आता। दूसरी ओर, यदि आप हमारे लक्ष्य को देखें तो हम जिस सिद्धांत के लिए लड़ रहे हैं आप देखेंगे, यह उस सीमित वर्ग पर आकर टिका है जो हमारी दृष्टि में है।

''आधुनिक लोकतांत्रिक व्यवस्था में समाचारपत्र सुशासन का मूल आधार है। यह लोगों को शिक्षित करने का एक साधन है। इसलिए भारत में हम अनुसूचित जातियों के लोग सबसे अधिक अभागे हैं, जिसकी कोई तुलना नहीं की जा सकती और हम भी चिंतित हैं कि वे उससे मुक्त हो जाएं। लेकिन हम तब तक सफल नहीं हो सकते जब तक कि 8 करोड़ अस्पृश्य लोग राजनीतिक तौर पर शिक्षित न होंगे''

उन्होंने आगे कहा था, ''यदि यह अखबार विभिन्न विधानमंडलों में हमारे विधायकों के आचरण का समाचार छापने के लिए इसमें कुछ जगह दे सके और लोगों को बता सके, कि उन्होंने ऐसा क्यों किया है और क्यों नहीं किया है तो मेरे मन में कोई संकोच नहीं है कि हमारे विधायकों के आचरण में बड़ा सुधार आएगा और वर्तमान अव्यवस्था बंद हो जाएगी, जो हमारे समाज को बदनामी दिलाने के लिए काफी है। इसलिए मैं इस अखबार से आशा करता हूँ कि यह उन लोगों के शुद्धीकरण करने का एक महान दस्तावेज बने, जो अपने राजनीतिक जीवन में भटक गए हैं।''

इसके बाद डॉ. अम्बेडकर ने एक मराठी समाचार पत्र का जिक्र किया, जिसने 1937 में उनके चुनाव अभियान को बढ़ाया था। उन्होंने उस अखबार को सलाह दी कि वह अपने वोटरों को शिक्षित ही न करे बल्कि यह भी देखे कि जो लोग मतदाताओं द्वारा चुने जाएं वे वोटरों के साथ खड़े हों और अपने कर्तव्यों का

ठीक से पालन करें तथा बुरा बर्ताव न करें।

अनुसूचित जातियों के नेताओं और कार्यकर्ताओं की उस विशाल सभा में समारोह की अध्यक्षता करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि इस समारोह ने उन्हें अपनी आत्मा को पूरी तरह भार मुक्त करने का एक मौका दिया है, क्योंकि यह एक ऐसा अवसर है जिसमें भाग लेने की उनकी सर्वोपरि इच्छा थी। 'पीपुल्स हेराल्ड' के लिए भारत के अनुसूचित जाति के लोगों की दिशा में निरंतर आगे बढ़ने की कामना करते हुए तथा अपने लोगों की सेवा में भूमिका अदा करने के उद्देश्य से आबद्ध इस पेपर की बहुत महत्वपूर्ण भूमिका के बारे में बोलते हुए, उन्होंने कहा कि इस प्रकार के राजनीतिक मुखपत्र की महत्ता कभी भी कम नहीं आंकी जा सकती। इस अवसर पर उन्होंने यह भी बताया कि कदाचित यह ज्यादा लोगों को ज्ञात नहीं है कि उन्होंने स्वयं बम्बई में एक साप्ताहिक मुखपत्र का संपादन अनवरत 16 वर्षों से भी अधिक समय तक किया था। उस पेपर का कितना विलक्षण प्रभाव पड़ा वह स्वयं बम्बई से विधानसभा के आगामी चुनावों में दिखाई दिया था, जहां वह एक सामान्य निर्वाचन क्षेत्र में सभी समुदायों के मतों से चुने गए थे और उन्होंने प्रतिद्वंद्वी कांग्रेस उम्मीदवार को भारी बहुमत से हराया था। उस पेपर ने उनकी सफलता में महत्वपूर्ण राजनीतिक असर डाला था। इसलिए उन्होंने पीपुल्स हेराल्ड की शीघ्र सफलता की कामना की और आशा प्रकट की कि अनुसूचित जाति का हर सदस्य इस पेपर को अपना निजी पेपर मानेगा।

अनुसूचित जातियों के उद्देश्य को पूरा करने की जिम्मेदारी को अपने ऊपर लेने के लिए अखबार के सम्पादक श्री पी.सी. डे को बधाई देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा, कि उन्होंने देखा है कि देश में अनेक लोग अनुसूचित जातियों के उत्थान के कार्य को सफाई का और गंदा काम मानते हैं।

हिंदू महासभा की आलोचना करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उन्हें यह कहने में कोई संकोच नहीं है कि उनका लक्ष्य परजीवी लोगों का लक्ष्य है जो श्रमिकों की कमाई और इस देश के लाखों दबे–कुचले लोगों के श्रम पर जिन्दा रहते हैं। दुनिया की मुक्ति तब तक नहीं हो सकती, जब तक कि दुनिया के तथा अन्य समाजों के आर्थिक और सामाजिक संगठन स्वतंत्रता, समता और बंधुत्व के सिद्धांतों पर आधारित न हों।[1]

● ● ●

[1] द पीपुल्स हेराल्ड, 10 जनवरी, 1945.

100

अनुसूचित जातियों को संगठित होना चाहिए

माननीय डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने बम्बई में एक जनसभा को संबोधित करते हुए इस बात पर जोर दिया कि अनुसूचित जातियों के सदस्यों को संगठित होना चाहिए और देश में अन्य प्रमुख समुदायों के साथ सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक समता प्राप्त करने के लिए अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के ध्वज तले एकजुट हो जाना चाहिए।*

डॉ. अम्बेडकर ने वायसराय की कार्य परिषद में शामिल होने के बाद समाज की भलाई के लिए किए गए कार्यों की व्याख्या की। वह प्रसन्न थे कि सरकार ने अनुसूचित जातियों के सदस्यों के लिए कुछ प्रतिशत पद आरक्षित करने की सहमति दे दी है। वह समाज के हितों का प्रतिनिधित्व करने के लिए केंद्रीय विधानमंडल में दो और सीटें लेने में सफल रहे। सरकार, समाज के छात्रों को विदेश में पढ़ाई करने में समर्थ बनाने के लिए 3 लाख रुपए का वार्षिक अनुदान देने के लिए भी राजी हो गई है। अपनी जाति को वर्तमान स्थिति से ऊपर उठाने के लिए अभी बहुत कुछ करना बाकी है, लेकिन यह इस पर निर्भर करता है कि जाति कितनी एकजुट होकर अपनी मांगे रखती है।

श्रम सदस्य ने श्रोताओं से कहा कि कार्यकारी परिषद की सदस्यता स्वीकार करने में उनका मुख्य उद्देश्य समाज की अधिक से अधिक भलाई करना है। वस्तुतः वायसराय से अपनी पहली मुलाकात में ही उन्होंने एक ज्ञापन पेश कर दिया था जिसमें दलित वर्ग की कुछ व्यथाएं और मांगें रखी गई थीं। उन्हें खुशी थी कि ज्यादातर मांगे मान ली गईं और वास्तव में, कुछ मांगों के संबंध में, वह कह सकते थे कि अनुसूचित जातियों ने मुस्लिम समुदाय के साथ बराबरी का दर्जा हासिल कर लिया है।[1]

● ● ●

* संबोधन की तिथि वर्णित नहीं है – संपादक

[1] द पीपुल्स हेराल्ड, 7 अप्रैल, 1945.

101

आदिम जनजातियों के लिए एक कानूनी आयोग होना चाहिए

अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन का दूसरा सम्मलेन 5 और 6 मई, 1945 को मुंबई में हुआ था। यह सम्मेलन आठ करोड़ अछूतों की समस्याओं को समझने के लिए ऐसे समय महत्वपूर्ण था, जब राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर भारी मात्रा में गतिविधियां चल रही थीं। पूरे भारत से लगभग 1,000 प्रतिनिधियों ने इस सम्मेलन में भाग लिया था। इनमें से लगभग 500 प्रतिनिधि अकेले नागपुर से आए थे, जिनमें 50 से अधिक स्त्रियां थीं, जबकि लगभग 200 प्रतिनिधि गुजरात से आए थे। इन प्रतिनिधियों के ठहरने का इंतजाम परेल में नगरपालिका विद्यालय में किया गया था।

यह सम्मेलन परेल के एक विशाल मैदान, 'नरेपार्क' में आयोजित किया गया था जिसका नाम साध्वी रामाबाई अम्बेडकर नगर रख दिया गया। मैदान लोगों से खचाखच भरा था। हालांकि एक रुपए प्रति व्यक्ति टिकट रखा गया था, फिर भी 50,000 से अधिक लोग उसमें आए थे, जिसमें से 5,000 से अधिक महिलाएं थीं, जिन्होंने खुले अधिवेशन में भाग लिया था। उस समय लगभग दो से ढाई लाख अछूत परिवार मुंबई में रहते थे और इन परिवारों में से कम से कम 50 प्रतिशत परिवारों से कम से कम एक व्यक्ति ने इस सम्मेलन में भाग लिया था, जिनमें से बहुत से वृद्धजन थे, बहुतों की गोद में छोटे बच्चे भी थे।

शुरू में सम्मेलन अप्रैल, 1945 के अंतिम सप्ताह में केवल मुंबई अनुसूचित जाति फेडरेशन के लिए रखा गया था, लेकिन जब श्री एस.बी. जाधव, सचिव, मुंबई अनुसूचित जाति फेडरेशन, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर से मिलने दिल्ली गए तो उन्होंने इस सम्मेलन का स्वरूप बदलने की सलाह दी और कहा कि इसे मुंबई तक सीमित रखने के बजाए, अखिल भारतीय स्तर का बनाया जाए। सभी 20 समिति सदस्यों ने परिश्रम किया और थोड़े ही समय में इसकी सदस्यता 6,000 से बढ़कर 20,000 हो गई।

सम्मेलन 5 मई, 1945 अर्थात् शनिवार की शाम शुरू हुआ था। मैदान के एक कोने में एक विशाल मंच तैयार किया गया था। इस मंच के मध्य में गौतमबुद्ध का एक विशाल चित्र, सुसज्जित वंदनवार के साथ लगाया गया था, क्योंकि अछूत लोग

बुद्ध को इस देश के विद्यमान सामाजिक मतभेद का प्रथम निवारक मानते थे।

विभिन्न भाषाओं में अनेक स्वागत गीत गाए गए। फेडरेशन के महासचिव, श्री पी.एन. राजभोज ने पिछले वर्ष की प्रगति रिपोर्ट पेश की। स्वागत समिति के महासचिव, श्री एस.बी. जाधव ने सम्मेलन के लिए भेजे गए संदेश पढ़े। इन संदेश भेजने वालों में श्री सी.डी. देशमुख, आई.सी.एस., गवर्नर, भारतीय रिजर्व बैंक; डॉ. अल्बेन डिसूजा, महापौर, बुंबई; श्री मोदक, नगर इंजीनियर, सर रूस्तम मसानी, नेशनल वार फ्रंट; श्री मदान, आई.सी.एस.; श्री टोंटन, आई.सी.एस., मुंबई के गवर्नर के सलाहकार; सर कावसजी जहांगीर, श्री बाला साहेब खेर, पूर्व मुख्य सचिव, मुंबई क्षेत्र; श्री शेखिया, पूर्व मंत्री असम; श्री के.ए.पी. विश्वनाथन, मद्रास जस्टिस पार्टी, कानपुर के श्री प्राणदत्त; मुंबई बार के श्री वैलंकर; बड़ौदा से माने और श्री मणिलाल परमार आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।

इस अवसर पर अनेक सम्मेलन आयोजित किए गए थे, जैसे श्रीमती मीनमबाई शिवराज के सभापतित्व में 'महिला सम्मेलन', ''मुंबई म्युनिसिपल वकर्स फेडरेशन'', श्री प्यारेलाल तालिब की अध्यक्षता में 'छात्र फेडरेशन', 'समता सैनिक दल सम्मेलन', जो जे.एस. सुब्बया की अध्यक्षता में आयोजित किया गया था। इन सम्मेलनों में विभिन्न प्रतिनिधियों ने सवर्णों द्वारा उन पर किए गए अत्याचारों की प्रकृति बताई।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का ऐतिहासिक भाषण रविवार अर्थात् 6 मई 1945 को हुआ जिसके लिए लगभग डेढ़ लाख लोग उपस्थित थे।[1]

(डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने इस सम्मेलन के लिए जो भाषण तैयार किया था वह 'कम्युनल डैड लॉक एंड वे टू सॉल्व इट' शीर्षक से छापा गया था। हम उस भाषण का एक अंश यहाँ दे रहे हैं –संपादक)

अपने भाषण में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने आदिवासी जनजातियों के उत्थान के लिए जो स्कीम बताई थी, वह इस प्रकार है :–

''यह स्पष्ट है कि मेरे प्रस्तावों में आदिवासी जनजातियों को नहीं लिया गया है, हालांकि वे सिखों, एंग्लों इंडियन, भारतीय ईसाईयों और पारसियों से संख्या में अधिक है। मैंने उन्हें अपनी स्कीम से क्यों अलग रखा? मैं इसका कारण बताना चाहूंगा। आदिवासी जनजातियों ने अपने राजनीतिक अवसरों का सर्वोत्तम प्रयोग करने के लिए कोई राजनीतिक दृष्टि अभी तक विकसित नहीं की है और वे आसानी से

[1] भूषण का पाठ डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर राइटिंगस एंड स्पीचेज़ खंड 1 में, पृष्ठ 355–379 पर प्रकाशित है

बहुसंख्यक या अल्पसंख्यक के हाथ का खिलौना बन सकते हैं और ऐसा करके वे अपना कोई भला किए बिना संतुलन बिगाड़ सकते हैं। उनके विकास के वर्तमान स्तर पर मुझे ऐसा लगता है कि इन पिछड़े समुदायों के लिए उचित यही होगा कि एक कानूनी आयोग की स्थापना की जाए, जो बहिष्कृत क्षेत्रों का प्रशासन उसी आधार पर करे, जैसा दक्षिण अफ्रीकी संविधान के मामले में किया गया था। प्रत्येक प्रांत को जिसमें यह बहिष्कृत क्षेत्र स्थित है, इन क्षेत्रों के प्रशासन के लिए एक निश्चित राशि का वार्षिक अंशदान देने के लिए बाध्य किया जाए।''[2]

बंबई के एक प्रख्यात कांग्रेसी नेता और हरिजन सेवक संघ के महासचिव, ए.वी. ठक्कर ने जो गांधी जी से घनिष्ठ रूप से संबद्ध थे, साम्प्रदायिक समझौते के प्रस्ताव की आलोचना की, जिसकी परिकल्पना डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के भाषण में की गई थी। आलोचना का उनका पत्र तारीख 17 मई, 1945 के टाइम्स ऑफ इंडिया के अंक में प्रकाशित किया गया था।

● ● ●

[2] डा. बाबसाहेब अम्बेडकर, लेख तथा भाषण, खंड 1, पृष्ठ 375

ए.बी. ठक्कर को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का पत्रोत्तर

सेवा में,

संपादक,

टाइम्स ऑफ इंडिया

महोदय,

क्या आप कृपया मुझे श्री ठक्कर के पत्र का उत्तर देने के लिए अपने अखबार में जगह देंगे, जो टाइम्स ऑफ इंडिया के आज के अंक में छपा है, जिसमें उन्होंने साम्प्रदायिक समझौते के मेरे प्रस्तावों की आलोचना की है। श्री ठक्कर ने आदिवासी जनजातियों की ओर से डंडा उठा लिया है और मुझ पर अभियोग लगाया है कि मैंने अपना प्रस्ताव पेश करने में इन जनजातियों की मांग की पूर्णतया अवहेलना की है। श्री ठक्कर ने मुझे 'उत्पीड़ितों और दलितों का साहसी चैम्पियन' बताकर अपनी आलोचना को एक मुद्दा देना चाहा है। मैं श्री ठक्कर को बता दूं कि मैंने दुखी इनसानों का सार्वभौमिक नेता होने का दावा कभी भी नहीं किया है। मेरी अल्प शक्ति के लिए अछूतों की समस्या बहुत बड़ी है और यदि मैं इन अछूतों को उसके चंगुल से और श्री गांधी के चंगुल से बचाने में सफल हो सका, तो मैं बहुत प्रसन्न होऊंगा।

मैं यह नहीं कहता कि दूसरे लक्ष्य इतने श्रेष्ठ नहीं हैं, लेकिन यह जानते हुए कि जिन्दगी छोटी है, कोई एक लक्ष्य को ही पूरा कर सकता हूं और मैंने अछूतों की सेवा से अधिक कुछ करने की कभी महत्त्वाकांक्षा नहीं की है। ये अछूत, जैसा कि श्री ठक्कर का कहना है, आदिवासी जनजातियों द्वारा भी तुच्छ समझे जाते हैं। खेद की बात यह है कि श्री ठक्कर को मेरे भाषण से ऐसे उद्धरणों के आधार पर आलोचना करनी चाहिए थी, जो अखबारों में छपे हैं। यदि उन्होंने मेरे भाषण का पूरा पाठ पढ़ा होता तो वह समझ जाते कि आदिवासी जनजातियों के लक्ष्य को छोड़ने के बजाय मैंने वह किया, जो मेरे विश्वास के अनुसार बेहतर था और उनके संरक्षण के लिए ज्यादा प्रभावी प्रस्ताव था। मेरे इस प्रस्ताव को विस्तारपूर्वक देने के लिए यहाँ जगह नहीं है और श्री ठक्कर मुझ पर पक्षपात और ओछेपन का इल्जाम लगाने के लिए प्रेस में जाने से पहले आदिवासी जनजातियों के मेरे प्रस्ताव पर विचार करते तो अच्छा होता।

मैंने विधानमंडल में सीट वितरण की योजना में आदिवासी जनजातियों

को क्यों शामिल नहीं किया, इसका कारण उनके प्रति मेरा विद्वेष नहीं है, बल्कि पूर्णतः मेरे इस विश्वास का कारण है कि इर आदिवासी जनजातियों में अभी तक वह राजनीतिक सामर्थ्य नहीं है जो अपनी निजी भलाई के लि राजनीतिक सत्ता का प्रयोग करने के लिए आवश्यक है। मैं श्री ठक्कर से यह पूछना चाहूंगा कि क्या इन आदिवासी जनजातियों और दूसरों के लिए पेशेवर सामाजिक सेवक के अपने कैरियर के दौरान उन्होंने उनके शिक्षा के स्तर को उठाने के लि कुछ किया है ताकि उन्हें अपनी निजी अवस्था ज्ञात हो सके, सर्वोच्च हिंदू के स्तर तक उठने की महत्त्वाकांक्षा हो सके तथा वे उस साध्य के साधन के रूप में राजनीतिक सत्ता का प्रयोग करने की स्थिति में हो सकें? मेरे विचार में, श्री ठक्कर के कार्य के बारे में यह अत्यंत दुखद टिप्पणी है कि इन 20 वर्षों में वह आदिवासी जनजातियों में से एक भी स्नातक तैयार नहीं कर पाए।

दूसरे, मैं चाहूंगा कि श्री ठक्कर मुझे बताएं कि ऐसा क्या हुआ कि उन्होंने विधानमंडल में आदिवासियों के प्रतिनिधित्व को बढ़ाने की बात अचानक सोची है? भारत शासन अधिनियम, 1935 में आदिवासी जनजातियों को दिया गया प्रतिनिधित्व उनकी जनसंख्या की तुलना में प्रायः नगण्य है। क्या श्री ठक्कर ने भारत शासन अधिनियम द्वारा कायम की गई इस असमानता के खिलाफ अपनी आवाज़ उठाई? श्री ठक्कर को सप्रू समिति के प्रस्तावों के विरुद्ध क्या कहना है संभवतः श्री ठक्कर को उनके खिलाफ इतना द्वेष नहीं है, जितना मेरे खिलाफ है।

और तीसरे, यदि श्री ठक्कर चाहते हैं कि आदिवासी जनजातियों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में प्रतिनिधित्व मिले, बल्कि यह कि उन्हें महत्व भी दिया जाना चाहिए, तो वह जान लें कि यह तभी हो सकता है जब मुस्लिमों का प्रतिनिधित्व घटाया जाएगा। क्या श्री ठक्कर आदिवासियों के लिए मुस्लिमों के साथ लड़ने के लिए तैयार हैं? श्री ठक्कर अछूतों के प्रतिनिधित्व को कम करके उनके प्रति अपने प्रेम को सिद्ध नहीं करते हैं। श्री ठक्कर अछूतों जैसी कमजोर जाति के खिलाफ अपनी तलवार उठाकर नायक सिद्ध नहीं होते हैं, जिसने अतीत में अपने उचित हिस्से का प्रतिनिधित्व भी प्राप्त नहीं किया है। यदि वह मुस्लिमों को प्राप्त महत्व में से कुछ हासिल करने के लिए लड़ाई लड़ें, तो वे अपने आपको आदिवासियों का हितैषी और उनके नायक सिद्ध कर पाएंगे।[1]

— डॉ. बी.आर. अम्बेडकर

बम्बई, 17 मई, 1945

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 18 मई, 1945

102

भारत की स्वतंत्रता का लक्ष्य निर्विवाद है

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने तारीख 20 मई, 1945 (रविवार) को बम्बई स्थित 'कैफे मॉडल' में मित्रों के एक समूह द्वारा अपने सम्मान में दी गई पार्टी में बोलते हुए कहा था, ''साम्प्रदायिक मसले के सिवाय भारत में विभिन्न पार्टियों में कोई विवाद नहीं है।'' उन्होंने कहा कि भारतीय राजनीतिक प्रगति अर्थात् स्वतंत्रता के अंतिम लक्ष्य के बारे में पार्टियों में कोई मतभेद नहीं है।

वर्तमान स्थिति का विवेचन करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा था कि इसका सारांश एक प्रश्न में दिया जा सकता है। ; ''क्या बहुसंख्यक का शासन उचित है?'' उनका विचार था कि यह गलत है। यह सोचना गलत है कि राज्य की जरूरतें सर्वोपरि हैं, न कि व्यक्तियों की। क्योंकि यह कहना फासिस्ट अर्थात् नाजी विचारधारा के समान है। उन्होंने आगे कहा कि व्यक्ति का संरक्षण राज्य का मूलभूत सरोकार है और व्यक्ति का उत्पीड़न सहन नहीं किया जा सकता।

इसके बाद उन्होंने कहा कि बहुसंख्यकों को राजनीतिक बहुसंख्यक और साम्प्रदायिक बहुसंख्यक के रूप में वर्गीकृत कर सकते हैं। राजनीतिक बहुसंख्यक हमेशा बदलते रहते हैं। इस प्रकार का बहुसंख्यक सह्य है, किंतु उन्होंने कहा कि 'जन्मजात बहुसंख्यक' सह्य नहीं है। उन्होंने आगे कहा कि इस समस्या के निपटारे के लिए उन्हें 'मात्र बहुसंख्यक' के सिद्धांत से अलग होना होगा। यदि ऐसा कर दिया गया तो उनके सामने जो समस्या है उसका समाधान मिल जाएगा।

इस सवाल के बारे में कि क्या डोमिनियन स्थिति स्वीकार की जाए या स्वाधीनता, डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि यह प्रश्न कोई विवाद का प्रश्न नहीं है। उनका विचार था कि डोमिनियन स्थिति, स्वाधीनता तक पहुंचने का पहला कदम है। व्यक्तिगत तौर पर वह मानते थे कि डोमिनियन स्थिति स्वीकार करना भारत के लिए बेहतर होगा। उन्होंने कहा कि ऐसी स्वतंत्रता लेने का क्या फायदा जिसे वे कायम न रख सकें। उन्होंने कहा कि भारतीयों को दृढ़संकल्प इस बात के लिए उतना नहीं करना चाहिए कि वे अपने आपको ब्रिटिश राज से मुक्त कर ले बल्कि उन्हें स्वतंत्रता प्राप्त करने के बाद उसे कायम रखने के योग्य होना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि स्वतंत्र भारत को इन दो महत्वपूर्ण सवालों से

जूझना होगा – औद्योगीकरण और रक्षा। उन्हें बहुत संदेह था कि भारत के पास एक समय में दोनों दिशाओं में आगे बढ़ने के लिए आवश्यक संसाधन हैं, अतः उन्होंने कहा कि डोमिनियन स्थिति में ब्रिटेन पर कोई बाध्यता अधिरोपित नहीं होती, और अंतरराष्ट्रीय विधि के अनुसार इससे पूर्ण संप्रभुता अभिप्रेत है।

युद्धोत्तर काल में श्रमिकों के कल्याण के लिए सरकार द्वारा किए गए कार्यों का उल्लेख करते हुए उन्होंने कहा कि एक 'सामाजिक सुरक्षा तथ्य–अन्वेषी समिति*, नियुक्त की गई थी और उससे अगले अगस्त तक रिपोर्ट देने के लिए कहा गया था। उसके बाद समिति के निष्कर्षों पर विचार करने के लिए विशेषज्ञ नियुक्त किए जाएंगे।

श्री जी.एन. सहस्रबुद्धि ने धन्यवाद प्रस्ताव पेश किया।[1]

● ● ●

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 21 मई, 1945

* सोशल सिक्योरिटी फैक्ट फाइंडिग कमेटी

103

मनुष्य को राजनीतिक दृष्टि से जागरूक बनाने के लिए सुविचारित प्रयत्न कीजिए

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने 3 अक्तूबर, 1945, बुधवार की रात को पूना में अपने भाषण में, आरोप लगाया था कि, ''कांग्रेस देश की वर्तमान समस्याओं में से अनेक का समाधान करने की दिशा में आगे बढ़ने में केवल इस कारण नाकाम रही है क्योंकि उसके नेताओं ने अज्ञानी रहना पसंद किया और राजनीतिक अध्ययन करने से इंकार कर दिया।

यह अवसर था, पूना में 'डॉ. अम्बेडकर स्कूल ऑफ पालिटिक्स' का उद्घाटन समारोह जिसमें राजनीति में रुचि रखने वाले अनुसूचित जातियों के छात्र सदस्य हैं। उसमें डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि इस देश में राजनीति के क्षेत्र में श्री गांधी के आगमन से पहले दो मुख्य राजनीतिक विचारधाराएं प्रचलित थीं। पहली विचारधारा का नेतृत्व श्री रानाडे और श्री गोखले करते थे, जिसे उदारवादी विचारधारा कहा जाता था। दूसरी विचारधारा का नेतृत्व बंगाल के क्रांतिकारियां द्वारा किया गया था। उनके बारे में महत्वपूर्ण बात यह थी कि दोनों विचारधाराएं 'सुस्पष्ट और विवेकपूर्ण' थीं।'' उदारवादी विचारधारा की सदस्यता की योग्यताएं इतनी ऊंची थीं कि मूर्ख और विवेकहीन उस संगठन में प्रवेश नहीं पा सकते थे। उनका मानदंड अध्ययन और ज्ञान था। वही लोग उनके मंच की महत्वाकांक्षा कर सकते थे, जो राजनीति के महारथी थे।

क्रांतिकारी विचारधारा का मानदंड भी उच्च था। ऐसा कोई आदमी उसका सदस्य नहीं बन सकता था, जो अपने प्राण न्यौछावर करने के लिए तैयार न हों। डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि श्री गांधी का संगठन मूर्खों और विवेकहीनों दोनों के लिए खोल दिया गया था। अध्ययन और ज्ञान की पोषित परंपरा कांग्रेस संगठन को उपयुक्त नहीं लगती थी। इससे देश के सार्वजनिक जीवन में अनेक दुःखद घटनाएं घटीं और कांग्रेस किसी भी बड़ी समस्या का समाधान करने में समर्थ नहीं रही। साम्प्रदायिक प्रश्न एक ऐसा ही प्रश्न था।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि अस्तित्व की लड़ाई में कोई भी संस्था या समाज, जो समय और परिस्थितियों के अनुसार अपनी विचारधारा में तालमेल करने के लिए तैयार नहीं हो, जीवित नहीं रह सकता।

यह भी सच है कि एक समाज जिसने पवित्र माने गए विचारों को विरासत में प्राप्त किया था, समायोजन करने की स्थिति में नहीं था। अंततोगत्वा ऐसे समाज विलुप्त हो गए। डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि उनका अपना पंथ या विचारधारा स्थापित करने का कोई प्रस्ताव नहीं है। यदि ऐसी कोई विचारधारा उनके निधन के बाद स्थापित हुई तो उन्हें अफसोस होगा।

राजनीतिक पंथ के निर्माण से उत्पन्न त्रासदियों की उन्हें जानकारी थी। वह महाराष्ट्र में राजनीति के गंभीर छात्र थे और वह यह देखकर आश्चर्यचकित रह गए कि जब नई समस्याएं सामने आईं तो लोग कैसे समितियों में मिले और उन्होंने अपनी कल्पना का प्रयोग किया। स्पष्ट सोचा और वह अनुमान लगाने की कोशिश की, जो श्री तिलक वैसी परिस्थितियों में करते। जिन लोगों का बहुत पहले निधन हो चुका है, उनकी प्रेरणा पर हमेशा निर्भर रहना अस्थिर अस्तित्व जैसा है।

उन्होंने छात्रों से अपील की कि वे तभी उनका अनुसरण करें जब वे इस बात से संतुष्ट हों कि वे ठीक थे। बहरहाल डॉ. अम्बेडकर का उस संस्था के उद्देश्य पर प्रभाव था जिसमें राजनीति का अध्ययन विहित किया गया था। वह उन लोगों से असहमत थे जो यह मानते थे कि मनुष्य राजनीतिक प्राणी है पर उन्होंने माना कि मनुष्य को राजनीतिक दृष्टि से जागरूक करने के लिए अत्यंत सुविचारित प्रयत्न करना होगा।[1]

● ● ●

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 4 अक्तूबर, 1945

104

अगस्त, 1942 में सरकार की कार्रवाई न्यायोचित थी

30 नवंबर, 1945* को अहमदाबाद नगरपालिका द्वारा दिए गए अभिनंदन का उत्तर देते हुए डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने टिप्पणी की थी कि अगस्त, 1942 में सरकार द्वारा की गई कठोर कार्रवाई न्यायोचित थी अन्यथा भारत में जापानी और जर्मन घुस आते। भारत छोड़ो आंदोलन का सरकार द्वारा दमन किए जाने के इस औचित्य से लोगों की भावनाएं भड़क उठीं और उनके पिछले पूर्वाग्रह और भी बढ़ गए। यह उस असीम दूरी का मुख्य कारण था जिसने दलित वर्गों को, स्वतंत्रता संग्राम के वर्षों के दौरान बाकी लोगों से अलग कर दिया था।[1]

● ● ●

* जनता, 1 और 8 दिसंबर, 1945.

[1] कुबेर, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, पृष्ठ 58.

105

गांधी जी का इन्कार

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने दलित वर्ग फेडरेशन और म्युनिसिपल वकर्स फेडरेशन, शोलापुर द्वारा 16 जनवरी, 1946 को दिए गए अभिनंदन का उत्तर देते हुए बम्बई में गांधी–जिन्ना वार्ता श्रृंखला का उल्लेख किया और कहा कि कोई छह महीने पहले उन्होंने महात्मा गांधी को पत्र लिखा था। लेकिन गांधी जी ने यह कहकर उन्हें मिलने से इन्कार कर दिया था कि उनके दृष्टिकोणों में कुछ भी एक जैसा नहीं है। (ए.पी.)[1]

●●●

[1] दि बांबे क्रानिकल, 17 जनवरी, 1946

106

अनुसूचित जातियों की मांगें एक निष्पक्ष अंतरराष्ट्रीय न्यायाधिकरण के पास भेजी जाएं

17 फरवरी, 1946 को बम्बई के नरेपार्क में जब डॉ. अम्बेडकर चुनाव अभियान का उद्घाटन करने के लिए खड़े हुए तो 70,000 स्त्री–पुरुषों के समूह ने उनका जोरदार अभिनंदन किया।

उस सभा में डॉ. अम्बेडकर को 17,000 रुपए की राशि अभियान के लिए भेंट की गई थी। फेडरेशन की बम्बई शाखा के अध्यक्ष श्री जी.एम. जाधव ने घोषणा की कि अभियान के लिए हमारा लक्ष्य 50,000/– रुपए था, और अब यह मई तक पूरा हो जाएगा।

अभियान के उद्घाटन समरोह से पहले डॉ. अम्बेडकर द्वारा अनुसूचित जातियों का ध्वज फहराया गया। डॉ. अम्बेडकर के सम्मान हेतु अनुसूचित जाति के स्वयंसेवकों द्वारा गार्ड ऑफ ऑनर पेश किया गया। विशाल जन–समूह के बावजूद पूरे समारोह में पूरी व्यवस्था बनी रही। डॉ. अम्बेडकर के भाषण के बीच–बीच में जोरदार जय–जयकार हुआ।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने नरेपार्क, बम्बई में अनुसूचित जाति फेडरेशन के चुनाव अभियान का उद्घाटन करते हुए कहा, यदि कांग्रेस ''यह महसूस करती है कि अनुसूचित जातियों की मांगें अनुचित हैं तो यह मामला एक निष्पक्ष अंतरराष्ट्रीय न्यायाधिकरण के पास भेज दिया जाए और वह उस फैसले का अनुपालन करेंगे। उन्होंने कहा कि स्वराज में जिसके लिए कांग्रेस शोर मचा रही है, हिंदू लोग राष्ट्र पर प्रभुत्व कायम करके अंग्रेजों का स्थान ले लेंगे।

''पिछले कुछ दिनों में कांग्रेसियों के भाषण से यह धारणा पैदा हुई है कि यदि केंद्र में राष्ट्रीय सरकार बनी तो खाद्य समस्या हल हो जाएगी।'' डॉ. अम्बेडकर ने इस कथन को ठीक बताया साथ ही कहा कि कांग्रेसी कोई जादू नहीं कर देंगे। खाद्य स्थिति को ठीक करने की ये सब बातें कोरी बकवास है।

डॉ. अम्बेडकर ने अनुसूचित जाति आंदोलन को मजबूत बनाने की आवश्यकता पर जोर देते हुए कहा कि कांग्रेस स्वराज के लिए शोर मचा रही है, लेकिन अनुसूचित जातियाँ निश्चित समझ लें कि जिस स्वराज की कांग्रेस मांग कर रही है, वह अंग्रेजों की जगह हिंदुओं के ही प्रभुत्व में होगा। अनुसूचित जातियां ऐसा न होने दें। वे देखें

कि उन्हें उनके सब अधिकार प्राप्त हों, ताकि स्वतंत्र भारत में वे भी स्वतंत्र रहें।

उन्होंने कहा कि अनुसूचित जातियां मुसलमानों की तरह देश के बँटवारे की मांग नहीं कर रही हैं। वे तो केवल एक निष्पक्ष व्यवस्था चाहती हैं। वे सदियों से प्रताड़ित रही हैं, लेकिन अब वे शोषित होने से इंकार करती हैं।

वे तो बस समान राजनीतिक अधिकार चाहते हैं न कि संरक्षण। यदि कांग्रेस समझती है कि उनकी मांगें उचित नहीं हैं तो इस मामले को एक निष्पक्ष अंतरराष्ट्रीय न्यायाधिकरण को भेज दिया जाए। वह ऐसे न्यायाधिकरण के निर्णय का पालन करने के लिए प्रस्तुत हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा कि वे अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिए हर बलिदान देने को तैयार है। कांग्रेस या कोई अन्य राजनीतिक संगठन उन्हें डराने की कोशिश न करे। बम्बई में विधानसभा के आरंभिक चुनावों के दौरान एक अनुसूचित जाति का मतदाता मारा गया था। डॉ. अम्बेडकर ने उसकी मृत्यु का उत्तरदायित्व कांग्रेस पर डाला और उस मारे गए मतदाता की अंतिम यात्रा पर पुलिस लाठी चार्ज की निन्दा की।

डॉ. अम्बेडकर ने विचार प्रकट किया कि कांग्रेस देश में संपूर्ण राजनीतिक क्षेत्र पर प्रभुत्व रखने को अडिग है और इस प्रयास में वह घूस देने के लिए भी प्रयासरत है। कांग्रेस ने अलग–अलग व्यक्तियों को संरक्षण दिया है, लेकिन अनुसूचित जाति फेडरेशन जैसे संगठनों की जड़ें काटी हैं।

लेकिन अब फेडरेशन ऐसे प्रयत्नों का विरोध करने के लिए काफी मजबूत है और वह अधिकाधिक मजबूत होती जा रही है। जब तक उसके राजनीतिक अधिकारों को मंजूर नहीं किया जाएगा, तब तक उन्हें हिंदुओं से कोई लेना–देना नहीं है।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि पिछले कुछ दिनों में कांग्रेसियों के भाषणों से यह धारणा बनी है कि यदि केंद्र में राष्ट्रीय सरकार बनी तो खाद्य समस्या हल हो जाएगी। ठीक है, लेकिन कांग्रेसी कोई जादू नहीं कर सकते। खाद्य स्थिति को ठीक करने की ये सब बातें खोखली बातें हैं, मानों कार्यकारी परिषद के कुछ सदस्यों की जगह हिंदुओं को लेना ही आवश्यक है।

उन्होंने कहा कि कांग्रेस 'बांटो और राज करो' की नीति अपनाने के लिए ब्रिटिश सरकार पर इल्जाम लगाती है। निश्चित रूप से यही वह खेल था जो कांग्रेस ने पिछले आम चुनाव में अनुसूचित जाति फेडरेशन की बात कुछ सफलता के साथ खेला था। उन्हें कोई संदेह नहीं है कि आगामी चुनाव में भी वह पुनः अपनी चाले चलेगी। लेकिन अनुसूचित जातियां उसकी शिकार नहीं बनेंगी।

उन्होंने आगे कहा कि अनुसूचित जातियाँ चुनाव के समय संगठनों के मामले में कांग्रेस से प्रतिस्पर्धा करने की आशा नहीं कर सकतीं, क्योंकि उसे पूंजीपतियों का वरदहस्त प्राप्त है। मतदान केंद्रों तक मतदाताओं को ले जाने के लिए कारें उपलब्ध नहीं कराई जा सकतीं। हमें पक्का विश्वास है कि प्रत्येक अनुसूचित जाति का मतदाता मतदान केंद्र पर चलकर जाएगा और अपने मताधिकार का प्रयोग करेगा और इस प्रकार दुनिया को दिखा देगा कि वे फेडरेशन का साथ मजबूती से देख रहे हैं। फेडरेशन की ताकत प्रारंभिक चुनावों में प्रचुर मात्रा में साबित हुई है। उसमें फेडरेशन के समर्थकों ने कांग्रेसी समर्थकों को पीछे छोड़ दिया था। उसके परिणामों को देखते हुए, यदि कांग्रेसय लोकतंत्र के अपने पेशे के प्रति सच्ची थी, तो उसे मुकाबले से अलग हो जाना चाहिए था।

चुनाव अभियान के लिए भेंट की गई धनराशि का हवाला देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि यद्यपि यह राशि बहुत मामूली है फिर भी वह इससे जरा भी चिंतित नहीं हैं, क्योंकि यह अभियान 'साफ, सच्चा और निष्कपट होगा'। कांग्रेसी नेता विशाल धनराशि एकत्र कर रहे हैं क्योंकि वे वोट खरीदने की कोशिश करेंगे।

इससे पहले श्री बी.के. गायकवाड ने जन–समूह को संबोधित करते हुए कहा था कि श्री गांधी ने अनुसूचित जातियों के लिए कुछ नहीं किया है। उन्होंने मद्रास में श्री गांधी के हाल के भाषण की आलोचना की, जिसमें उन्होंने कहा था कि अनुसूचित जातियां सरकार की ओर देखती हैं, क्योंकि वे राय बहादुर बन सकते हैं या अच्छी नौकरियां पा सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर सतारा और बेलगाम जिले में अपने चुनाव दौरे से रविवार प्रातः वापस आए थे और सोमवार शाम को बम्बई से दिल्ली के लिए जाने वाले थे।[1]

बहरहाल, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के भाषण में उस विषय के बारे में कुछ अतिरिक्त प्रसंग थे, जो 'द फ्री प्रेस जर्नल' में छपे थे। वे प्रसंग इस प्रकार थे :–

''हमें हिंदुओं में कोई विश्वास नहीं है। उन्होंने हमारे साथ पिछले दो हजार वर्षों में अत्यंत घटिया और अपमानजनक ढंग से बर्ताव किया है और हम अपने आपको संगठित करने की स्थिति में है। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर, श्रम सदस्य, भारत सरकार ने उस शाम नरेपार्क में अनुसूचित जातियों की एक विशाल जनसभा को संबोधित करते हुए आगे कहा था कि हम उस चीज को प्राप्त करने में कोई कसर नहीं छोडेंगे जो हमें बहुत पहले मिल जानी चाहिए थी।

उन्होंने घोषणा की थी कि 'स्वराज' और राष्ट्रीय सरकार का मतलब है केवल 'हिंदू राज'' जिसे वे अब और ज्यादा सहन नहीं कर सकते। इसलिए उन्होंने अंग्रेजों को भारत छोड़ने से पहले अधिकारों के वितरण की मांग की।''[2]

● ● ●

1 जय भीम, 5 मार्च, 1946

2 फ्री प्रेस, जर्नल, 18 फरवरी, 1946

107

दलित वर्ग की उपेक्षा

दिनांक 12 मार्च, 1946 को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने मद्रास में एक भाषण दिया था। उसमें उन्होंने प्रथम गोलमेज सम्मेलन से लेकर तब तक दलित वर्गों के अधिकारों की बेहतरी के लिए अपने द्वारा किए गए प्रयासों की रूप–रेखा प्रस्तुत की और उन्हें निष्फल करने के लिए कांग्रेस पर इल्जाम लगाया।

कांग्रेस ने अपनी पूरी शक्ति दलित वर्गों की उपेक्षा करने में केंद्रीभूत की है। उन्होंने मुस्लिमों से सम्पर्क किया और अछूतों को दरकिनार करने की एक योजना बनाई। श्री गांधी मुस्लमों के चौदह सूत्री कार्यक्रम के लिए इस शर्त पर राजी हुए कि वे अनुसूचित जातियों का समर्थन नहीं करेंगे। लेकिन मुस्लिमों में मानवता की उत्कृष्ट भावना का आभार माना कि उन्होंने इस पेशकश को नामंजूर कर दिया और इस प्रकार अछूतों को अलग–थलग करने के लिए राजी नहीं हुए।[1]

● ● ●

---

* भाषण की तारीख कोई दूसरी हो सकती है, क्योंकि भाषण की तारीख और जय भीम का अंक एक ही प्रतीत होते हैं –संपादक।

[1] जय भीम, मद्रास, 12 मार्च, 1946, ''कांग्रेस अछूतों को दरकिनार करने का प्रयत्न करती है।''

108

अनुसूचित जातियों को जहाँ का तहाँ छोड़ दिया गया

अनुसूचित जाति फेडरेशन के तत्वधान में आयोजित एक अधिवेशन में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने इस बात पर गहरा खेद व्यक्त किया कि ब्रिटिश कैबिनेट प्रतिनिधि मंडल ने उनके साथ जिस तरह का बर्ताव किया है, वह भारत की अनुसूचित जातियों के लक्ष्य पर डाला गया एटमबम है। श्री जे.एन. मंडल, मंत्री, बंगाल सरकार ने अधिवेशन की अध्यक्षता की।

डॉ. अम्बेडकर ने इस बात पर आश्चर्य प्रकट किया कि देश की अनुसूचित जातियों को अंतरिम सरकार में केवल एक सीट आबंटित की गई है, जब कि उनकी संख्या छह करोड़ है। दूसरे समुदायों को भी एक–एक सीट आबंटित की गई है, जबकि उनकी संख्या 20 या 40 लाख से अधिक नहीं है।

डॉ. अम्बेडकर ने यह घोषणा करते हुए कि बिहार और बम्बई के अनुसूचित जाति के लोगों ने ही इस देश में शासन स्थापित करने में अंग्रेजों की मदद की थी, आगे कहा कि भारत में केवल हिंदुओं और मुस्लिमों ने ही पिछले 150 वर्षों में ब्रिटिश राज का अच्छा फल भोगा है, जब कि अनुसूचित जातियों को वहीं छोड़ दिया गया जहां वे शुरू में थे। उन्हें कुंओं पर नहीं चढ़ने दिया जाता, मंदिरों, धर्मशालाओं, कार्यालयों और कचहरियों में नहीं जाने दिया जाता। उन्होंने आगे कहा कि कैबिनेट मिशन की कार्रवाई ने उनका रास्ता अलग बना दिया है।

डॉ. अम्बेडकर ने श्रोताओं को चेतावनी दी कि जब तक कि आगामी संघर्ष में उनके पास राजनीतिक शक्ति नहीं होगी, भारत की अनुसूचित जातियां बर्बाद हो जाएंगी। वे अन्य समुदाय उन्हें कुचल डालेंगे, जिनके पास जबर्दस्त ताकत है और उनके साथ 'पैरिया श्वानों' जैसा व्यवहार करने के अभ्यस्त हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने प्रांतीय विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों के सदस्यों से अपील की कि वे अपना भाग्य बनाने और उस दिशा में कूंच करने के बारे में इस परीक्षा की घड़ी में अपने कर्तव्यों के बारे में सोचें।

अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के सचिव श्री पी.एन. राजभोज ने भी सभा को संबोधित किया।[1]

● ● ●

[1] जय भीम, 13 अगस्त, 1946

तारीख और स्थान नहीं लिखा है – संपादक।

109

मैं अपने लोगों के साथ इस देश के प्रति भी निष्ठावान हूँ

अनुसूचित जातियों के उद्धारक डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की 55वीं जयंती पूरी दिल्ली में बड़े आनंद और उत्साह के हर्षपूर्ण वातावरण में मनाई गई। चूंकि दिल्ली में सार्वजनिक सभाओं पर प्रतिबंध है, इसलिए इस वर्ष यह समारोह मनाने के लिए सार्वजनिक सभा का आयोजन छोड़ दिया गया किंतु अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के महासचिव द्वारा जारी निर्देश के अनुसार फेडरेशन के झंडे सभी महत्वपूर्ण कालोनियों में फहराये गए। अंतरिम सरकार के विधि सदस्य माननीय श्री जे.एन. मंडल के निवास पर भी झंडा फहराया गया। डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर की लंबी आयु के लिए प्रार्थनाएं भी की गईं और अनुसूचित जाति के सभी घरों को रात में रोशनी से सजाया गया।

14 अप्रैल, 1947 की सुबह 1001 रुपए की एक थैली बाबा साहेब को दिल्ली अनुसूचित जाति कल्याण संघ (करोलबाग शाखा) की ओर से भेंट की गई। अनुसूचित जाति फेडरेशन के कुछ सदस्यों द्वारा भी एक अन्य थैली भेंट की गई।

अपने स्वागत सम्मान का उत्तर देते हुए बाबा साहेब ने निम्नलिखित विचार प्रकट किए :–

''यदि मैं आज बम्बई में होता तो अपने लोगों द्वारा घेर लिया जाता। भारी भीड़ से बचने के लिए 13 तारीख को यहां पर जानबूझकर आया क्योंकि मैं शांति और प्रशांति चाहता हूँ।

''एक दृष्टिकोण से जयंतियां मनाना बहत अच्छा नहीं है क्योकि आप जानते हैं कि मनुष्य नश्वर है और एक दिन वह चल बसेगा। ये जन्मदिन यह याद दिलाते हैं कि मनुष्य के जीवन से काफी दिन कम हो गए हैं। निःसंदेह किसी को इन कटौतियों पर खेद नहीं होना चाहिए, क्योंकि यह स्वाभाविक है कि मनुष्य अपना जीवन बिताये किंतु यदि मनुष्य का जीवन किसी सार्वजनिक उद्देश्य के लिए समर्पित है तो वह कुछ विचारणीय बात हो जाती है।

''इस स्थिति पर दृष्टिपात करें। मैं निःसंदेह यह देखकर बहुत खुश हूं कि पूरे भारत में अनुसूचित जातियां अपनी दुर्बलताओं के प्रति इतनी सजग हो गई हैं

और इतनी संगठित हुई हैं और अपने जीवन की पूर्णता प्राप्त करने के लिए इतनी कृतसंकल्प हैं कि किसी को भविष्य के लिए निराश होने की जरूरत नहीं है। जो कुछ मैंने एक दिन वायसराय से कहा था, वह मुझे आपको बताने में कोई परहेज नहीं है। मैंने निष्पक्ष कहा था—'यदि आप मुझे नहीं बुलाते तो मैं आपसे मिलने नहीं आता। मुझे अंग्रेजों के पीछे भागने की कोई इच्छा नहीं है।' एक समय था जब अंग्रेजों ने अनुसूचित जातियों के कल्याण का ध्यान रखने का उत्तरदायित्व लिया था। मैंने सोचा था कि उस उत्तरदायित्व को कार्यरूप देने के लिए वे कोई विशेष कदम उठाएंगे। यदि अंग्रेज जा रहे हैं तो मुझे कोई दिक्कत नहीं है, लेकिन वे ऐस रक्षोपायों को सुनिश्चित करने के लिए कोई विशेष कदम उठाए बिना जा रहे हैं जैसे हम संविधान में चाहते हैं। यह फैसला करना उनका काम है कि क्या उनकी कार्रवाई ठीक है या नहीं, यह मेरा काम नहीं है। सैकड़ों बार मुझे उन्हें मनाना पड़ा कि उन्हें अछूतों के कल्याण के लिए कुछ करना चाहिए। मैंने कहा था मुझे पक्का विश्वास है कि छह करोड़ अछूतों का भाग्य मात्र इस लिए बंद नहीं हो जाएगा कि अंग्रेज अपना कर्तव्य पूरा करने से इंकार करते हैं। मेरे मन में कोई संदेह नहीं है कि छह करोड़ अछूत बिना किसी सहायता और बिना किसी ताकत के वह सब हासिल कर लेंगे, जो वे चाहते हैं, भले ही 'श्रम्र सरकार' उन्हें उनके उचित अधिकार देना नहीं चाहती।

"निश्चय ही आज हम वे पुराने लोग नहीं हैं, जो दूसरों के पीछे चलते थे, जिनमें कोई जागरूकता नहीं थी और न कोई संगठन था। इस देश में हर कोई जानता है कि अब हम एकदम भिन्न लोग हैं। इसलिए हमें और अधिक सामर्थ्य और ताकत पैदा करनी होगी। कांग्रेस और मुस्लिम लीग दोनों हमारा समर्थन प्राप्त करना चाहती हैं और उसके लिए उन्होंने शर्तें रखी हैं। यदि हम इतने सुसंगठित नहीं होते तो ऐसा कभी नहीं होता और मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि दुर्भाग्यवश हमारे मुद्दे को जून, 1948 तक भारत छोड़ने की अंग्रेजों की घोषणा से गहरा धक्का पहुँचा है। मुझे कुछ नहीं पता कि क्या होने वाला है। मैंने कुछ गणना की है, लेकिन मैं फिलहाल वह घोषणा नहीं करना चाहता।

"हो सकता है अंग्रेज यहां नितांत भिन्न परिस्थितियों में रहें लेकिन भारत छोड़ने के अंग्रेजों के फैसले से जनता के सामने कुछ समस्याएं आई हैं, जिनके कारण कुछ हद तक सांविधानिक सुरक्षापायों की हमारी मांग धुँधली पड़ गई हैं मुझे आशा है कि इस मुद्दे के अंधेरे में चले जाने के बावजूद हम ऐसे राजनीतिक रक्षोपाय, जो हमारे लिए आवश्यक हैं, यदि पूरी तरह नहीं, तो कुछ बड़ी मात्रा में प्राप्त करने में कामयाब होंगे।

"मुझे आपको यह बताकर खुशी है कि मूल अधिकारों की रचना की स्थिति में हमें बहुत अधिक मात्रा में सफलता मिली है। मैंने मूल अधिकार उप—समिति के

सामने जो ज्ञापन पेश किया था, उसे समिति द्वारा स्वीकार कर लिया गया है। एक मुद्दा था जिस पर कुछ मतभेद था – वह मुद्दा प्रशासन में भेदभाव के बारे में था और सार्वजनिक सेवा के विषय में था। इस प्रकार के भेदभाव को रोकने के लिए मैंने कुछ उपाय प्रस्तावित किए हैं और मुझे विश्वास है कि मैं सफल रहूंगा। यदि ऐसा हो जाता है तो जहां तक विधानमंडल या कार्य समितियों का संबंध है, हमें संविधान से ही काफी संरक्षण प्राप्त होगा। अल्पसंख्यक उप–समिति की बैठक 17 अप्रैल को होगी और वह कुछ समय तक अपना काम करती रहेगी। मुझे अफसोस है कि अनुसूचित जातियों के दो सदस्यों ने, जो अल्पसंख्यक समिति में हैं, एक ज्ञापन भेजा है, जो अनुसूचित जातियों की व्यापक विचारधारा के प्रतिकूल है। एक ने पृथक निर्वाचक मंडल के बजाय संयुक्त निर्वाचक मंडल का प्रस्ताव रखा है। उन्होंने मतदान की वितरक प्रणाली द्वारा संयुक्त निर्वाचक मंडल का प्रस्ताव रखा है, जो राजनीति दासता से भिन्न कुछ नहीं है। (शर्म–शर्म के नारे) मैंने पूरी ताकत के साथ लड़ने का प्रस्ताव रखा है और मुझे आशा है कि मैं उप–समिति में अन्य अल्पसंख्यक समुदायों का समर्थन प्राप्त करने में कामयाब हो जाऊंगा। इस समय मैं यह बताना चाहता हूं कि क्या होने वाला है? क्या समिति बहुमत द्वारा मुद्दे का फैसला करने वाली है अथवा क्या वह बातचीत करना चाहती है। यह एक ऐसा विषय है जिसके बारे में मेरा मन स्थिर नहीं है। लेकिन यदि वे बहुमत से मुद्दे का विनिश्चय करते हैं तो मैं निश्चय ही संविधान सभा से अपने आपको पूरी तरह अलग करने के लिए कोई निश्चित कदम उठाऊंगा। (जोरदार तालियां) तब हम तय करेंगे कि निश्चित रूप से क्या करना है, जैसाकि आप जानते हैं इस राजनीतिक मामले में हमारा सरोकार दोहरी निष्ठा से है, कम से कम मेरा तो है। मैं इस देश में रहने वाले अपने लोगों के प्रति निष्ठावान हूँ और मैं कृतसंकल्प हूँ कि अब तक जो कठिनाइयां उन्होंने झेली हैं वे राजनीतिक रक्षोपायों से दूर हो जाएं। मैं इस देश के प्रति भी निष्ठावान हूँ। मुझे कोई संदेह नहीं है कि आप भी निष्ठावान हैं। हम सब यह चाहते हैं कि यह देश आजाद हो। जहां तक मेरा संबंध है मैं इस विचार से प्रेरित होकर काम करता हूं: कि आजादी प्राप्त करने में इस देश के मार्ग में कोई बड़ी अड़चनें खड़ी न हों, हालांकि जो प्रस्ताव तैयार किए गए थे उसमें कैबिनेट मिशन द्वारा हमारी उपेक्षा की गई थी। आप जानते हैं कि मैंने अनेक भाषण दिए हैं जो इस विचार से प्रेरित रहे हैं कि यह देश आसानी से आजादी प्राप्त कर ले। साथ ही मैं इस बात के लिए भी कृतसंकल्प हूँ कि इन छह करोड़ अछूतों की राजनीतिक अधिकारों के माध्यम से रक्षा नहीं की जाती है और यदि अनुसूचित जातियों के रक्षोपायों के निर्धारण के विषय में कांग्रेसियों की ओर से उचित प्रतिक्रिया नहीं मिलती है, तो यदि मैं वह कदम उठा लूँ अर्थात् मैं संविधान सभा से अपने आपको अलग कर लूँ, तो मुझे विश्वास है कि

कोई मुझ पर दोषारोपण नहीं करेगा। किंतु आपको याद होना चाहिए कि लगभग 292 सदस्यों की संविधान सभा में मैं एक अकेला अलग व्यक्ति हूँ। आपको यह भी ध्यान रखना चाहिए कि कोई महान आदमी कितना भी बुद्धिमान हो, और बहस करने तथा प्रतिवाद करने की कितनी भी सामर्थ्य रखता हो, आखिर वह है तो एक अकेला व्यक्ति। यदि शेष 291 सदस्य कारण न सुनने के लिए तर्क न सुनने के लिए बल्कि विरोध करने के लिए कृतसंकल्प हैं तो आप 292 की संविधान सभा में मेरी संभावित असहाय स्थिति को भली प्रकार समझ सकते हैं। जहां मैं केवल एक हूँ।

''आशा है कि सद्बुद्धि काम करेगी और हम अपने अंतिम लक्ष्य को प्राप्त करेंगे। हमारे लिए महत्वपूर्ण है संगठन। आप भी यह बात याद रखे कि हम अपने सतत प्रयासों से जो भी राजनीतिक अधिकार प्राप्त कर लें वे केवल एक अवधि के लिए ही होंगे। एक समय आएगा जब ये अधिकार हमारे लिए ही नहीं, बल्कि इस देश में हर आदमी के लिए समाप्त हो जाएंगे। जब ये अधिकार समाप्त हो जाएंगे तो हमें अपने संगठन, अपनी सामर्थ्य और एकता पर निर्भर रहना पड़ेगा। इसलिए हमें एकजुट रहने के लिए कृतसंकल्प होना चाहिए। (यहां बाबासाहेब ने जय भीम को भेजे गए संदेश का हवाला दिया और उसमें जो कहानी थी उसकी वर्णन किया)

''मैं आपको एक ही संदेश दे सकता हूँ और वह है कष्ट और कष्ट। कष्ट के माध्यम के सिवाय कोई दूसरा तरीका नहीं हो सकता और आप मन छोटा न करें कि कुछ गाँवों में हमारे लोगों ने कष्ट भोग है तथा भारी कष्ट भोग रहे हैं। दृढ़ संकल्प होकर हमें अपना काम करना होगा और संगठित होने का फैसला करना होगा। इस देश में दुःख का कोई डर नहीं होना चाहिए।

''आपसे यह थैली पाकर मैं बहुत खुश हूँ। अब मैं सोच रहा हूँ कि मुझे इन पैसों का क्या करना चाहिए। मैं इन दो में से एक चीज करना चाहता हूँ, एक यह है कि मुझे यह रकम किसी के पास रखनी चाहिए ताकि इसे दिल्ली में क्लब बनाने के प्रयोजन के लिए लगाया जा सके, जिसके लिए मैंने जमीन खरीदने का इंतजाम कर लिया है। हालांकि यह राशि बहुत मामूली है फिर भी हम इस प्रयोजन के लिए और राशि जुटाएंगे। दूसरी चीज यह है कि यह धनराशि उसी सोसाइटी को वापस कर दी जाए, ताकि वे इसे किसी काम में इस्तेमाल कर सकें। (सोसाइटी इसे वापस लेने के लिए राजी नहीं हुई) ठीक है, तब यह क्लब बनाने के लिए संग्रहीत निधि में दी जानी चाहिए।'' (एफ. ओ. सी.)[1]

● ● ●

[1] जय भीम, 25 मई, 1947

110

अल्पसंख्यक को हमेशा मनाना चाहिए, उस पर कभी हुक्म नहीं चलाना चाहिए

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने बम्बई में 25 सितंबर, 1947 को 'सिद्धार्थ कालेज पार्लियामेंट' का उद्घाटन किया था।

इस अवसर पर उन्होंने कहा –

''फिलहाल मेरे सामने कोई स्पष्ट कार्यक्षेत्र नहीं है। इसलिए मैं फौजी के तरीके से बोलने की सोच रहा हूँ। यह स्वाधीनता इतनी अचानक आई है कि हमें अपनी शक्तियों को याद करने का समय नहीं मिला और हमें अपनी शक्तियों को व्यवस्थित करने का भी समय नहीं मिला।

''पिछले 50 वर्षों में किए गए वायदों के बावजूद अंग्रेजों ने अनुसूचित जातियों को एक पृथक राजनीतिक सत्ता न मानकर अंत में हमें धोखा दिया है। इस काम में उन्होंने हमारी मदद नहीं की। उन्होंने मुसलमानों और सिखों की मदद की है। इस प्रक्रम पर यह देखना बहुत अजीब लगता है कि अंग्रेजों ने केवल मुसलमानों और सिखों की मदद की, न कि अनुसूचित जातियों की। हमें असहाय छोड़ दिया गया। हमें स्वयं अपनी सामर्थ्य पर निर्भर रहना होगा और जैसा कि आप जानते हैं यह सामर्थ्य भी क्रिप्स तथा शिष्टमंडल में उनके साथी मित्रों, जैसे ब्रिटिश राजनीतिक सर्वेक्षकों की नजर में विभाजित है। वे तथाकथित हरिजन पार्टी नामक पृथक संगठन के कारण यह विभाजन मानते हैं। यह सच है, और वास्तव में था, कि अनुसूचित जाति फेडरेशन अनुसूचित जातियों की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था है।

''मुझे यह कहने में प्रसन्नता है कि जब मैं इंग्लैंड में था और मैंने वहाँ विभिन्न राजनीतिक दलों के अनेक नेताओं से विचार–विमर्श किया था, तो स्थायी संसदीय मंत्रियों ने, जो भारतीय स्थिति से रोजाना संपर्क में थे, मेरे इस कथन का पूरी तरह समर्थन किया था कि अनुसूचित जाति फेडरेशन अनुसूचित जातियों की एकमात्र प्रतिनिधि संस्था है। इतना ही नहीं, क्रिप्स और उनके जैसे अनेके लोग मेरे उद्देश्य से आश्वस्त थे, किंतु इसके बावजूद ब्रिटिश प्रतिनिधि– मंडल ने हर चीज उलट दी, क्योंकि वे अपनी सुरक्षा के लिए राजनीतिक फैसला लेना चाहते थे। हालांकि इसमें कोई तथ्य नहीं था और इस प्रकार उन्होंने हमारी कीमत पर राजनीतिक फैसला

लिया। अनुसूचित जातियों की यह हानि राष्ट्रीय हरिजनों के शर्मनाक दृष्टिकोण के कारण हुई। अल्पसंख्यक उप–समिति में मैंने यह समाधान सुझाकर पृथक निर्वाचक मंडल की माँग की थी कि सफल उम्मीदवार को अंततः अपने समुदाय के 35 प्रतिशत मत प्राप्त करने चाहिए। लेकिन तभी मतदान के समय, मुस्लिम समूह के सभागार छोड़कर चले जाने से मेरे प्रस्ताव पर पक्ष और पिवक्ष में बराबर मत अर्थात 7 और 7 मत प्राप्त हुए। मैंने सलाहकार समिति में भी कोशिश की और अजीब बात यह है कि श्री मनुस्वामी पिल्लै, अध्यक्ष, मद्रास विधानसभा ने मेरे संशोधन का समर्थन किया। श्री वल्लभ भाई पटेल ने भी उसके खिलाफ मतदान नहीं किया, किंतु साधारण संविधान सभा में मेरे समर्थक श्री पिल्लै उन हस्ताक्षरकर्ताओं में से थे जिन्होंने इस प्रस्ताव का विरोध किया था। यह सब देखकर मेरे आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। व्यापक अनुसूचित जातियों के समान हित और स्थायी मुसीबत के संबंध में राष्ट्रीय हरिजनों ने यह दूसरी धूर्ततापूर्ण भूमिका अदा की। यही कारण है कि मेरे सामने फिलहाल कोई स्पष्ट कार्यक्षेत्र नहीं है।

''अब मैं आपको एक बात बता दूँ कि पृथक निर्वाचक मंडल मात्र अनुसूचित जाति फेडरेशन का एकमात्र साध्य और साधन नहीं है। हमारे साधनों के साथ पृथक निर्वाचक मंडल ठीक हैं किंतु वे अपने आप में ठीक नहीं हैं। आपको पृथक निर्वाचक मंडल तो मिल जाएगा लेकिन कोई राजनीतिक रक्षोपाय नहीं होंगे। मुझे नहीं मालूम की उनका क्या होग? मैं विधानसभा और सेवाओं में कुछ राजनीतिक रक्षोपाय आपको दिलाने में कामयाब हो सकता हूँ। मेरे प्रश्नों के फलस्वरूप शेष अल्पसंख्यक जैसे सिख, भारतीय ईसाई और मुस्लिमों को कुछ रक्षोपाय प्राप्त हैं। मैं इस माँग पर लगातार डटा रहा। इसी कारण संविधान सभा इस प्रक्रम पर मुझे नाराज करने का साहस नहीं जुटा पाई। मुझे खुशी है कि मैं सही अर्थों में अल्पसंख्यकों की सेवा कर सका।

''संभव है कि आप निराश रहे हों और मैं भी इससे बहुत खुश नहीं हूँ, तो भी हमें भविष्य मे ंअपनी भूमिका अदा करनी होगी। मैं आपको ब्रिटिश लेबर पार्टी के इतिहास के बारे में बताना चाहता हूँ। पिछले 24 वर्षों में यह पार्टी इतनी आगे बढ़ी है कि आज उसका शासन है। जब यह पार्टी पहली बार संगठित हुई थी तब वस्तुतः संसद में इसका कोई प्रतिनिधि नहीं था। इससे क्या स्पष्ट होता है? इससे पता चलता है कि चुनाव में सफलता पार्टी की विजय नहीं होती बल्कि सिद्धांत और कार्यक्रम की सफलता पार्टी की विजय होती है। मुझे कोई संदेह नहीं है कि अनुसूचित जाति फेडरेशन अपने सिद्धांतों के लिए अपनी भूमिका अदा करेगी। इसी कारण मैं बिल्कुल भी निराश नहीं हूँ। इसलिए हमें निम्नलिखित तीन बातों को ध्यान में रखना चाहिए:–

(i) अनुसूचित जाति फेडरेशन को हर हाल में अपना राजनीतिक असित्त्व

कायम रखना है। हमारे सामने गैर ब्राह्मण पार्टी का इतिहास है। कांग्रेस पार्टी के उभरने से पहले अखिल भारतीय गैर ब्राह्मण पार्टी पराकाष्ठा पर थी, लेकिन जब गैर ब्राह्मण पार्टी के नेता अपने व्यक्तिगत प्रयोजन के लिए व्यक्तिगत रूप से कांग्रेस में चले गए, तो वे मानो खरीद लिए गए और इसी प्रकार तब और अब भी कांग्रेस में उनका कोई महत्व नहीं है। हालांकि वे बहुत बड़ी संख्या में हैं, लेकिन वे शासित हैं और अलग–अलग व्यक्तियों की अपेक्षा उनकी सहायता का अधिक महत्व है;

(ii) आपके पास योग्य नेता होने चाहिए। आपके नेताओं के पास किसी भी राजनीतिक पार्टी के सर्वोच्च नेताओं के मुकाबले में साहस और योग्यता होनी चाहिए। कुशल नेताओं के बिना पार्टी शून्य होती है। 1931 में ब्रिटिश लेबर पार्टी की पराजय इसकी कारण हुई थी। भारत में गैर ब्राह्मण पार्टी को भी यही बात लागू होती है :

(iii) किसी भी पार्टी में ऐसे ईमानदार नेता जो कभी बेचे नहीं जा सकते। अत्यंत महत्वपूर्ण होते हैं। उसी तरह से पार्टी में निष्ठावान कार्यकर्ता पार्टी के विकास के लिए दूसरी महत्वपूर्ण और अनिवार्य शर्त है। अनुसूचित जाति फेडरेशन को ऐसे अनेक नेता पैदा करने होंगे, किंतु मेरे विचार में ऐसा कोई भी नहीं जिससे मैं संतुष्ट होता। एक तरह से अनुसूचित जाति फेडरेशन को चिंता नहीं करनी चाहिए, क्योंकि उनके नेता किसी भी कीमत पर कभी भी बेचे नहीं जाएंगे, लेकिन शेष लोगों का क्या होगा? वे सही स्थिति कब प्राप्त करेंगे? मेरी जरूरत पूरी करना आपका काम है। मैं आपको बार–बार बताता हूँ कि अनुसूचित जाति फेडरेशन को अपना राजनीतिक अस्तित्व कायम रखना चाहिए जो कि मेरे व्यक्तिगत हित में नहीं है बल्कि आपके लिए और मेरे लिए है।

''अंत में मैं आपको बता दूँ कि आप सिद्धार्थ कालेज द्वारा दी गई सुविधाओं का सही इस्तेमाल करें। मुझे आशा है कि केवल इसी कालेज में, मैं अनुसूचित जातियों का नेतृत्व करने के लिए उदीयमान नेता को देख पाऊँगा और वह अपनी योग्यता साबित करेगा। हर मनुष्य को दुनिया में दो लालच होते हैं– पहला धन और दूसरा पत्नी और उसके बाद बच्चे। यह स्वाभाविक ही है, किंतु हम लोग 'कुछ बच्चों' का मतलब नहीं समझते। लेकिन उनके पास यह देखने के लिए समय ही नहीं है कि अनुसूचित जातियाँ कहाँ खड़ी है। इसलिए व्यापक रुप से अनुसूचित जातियों की जरूरतों पर खरा उतरना आपका काम है। मुझे नहीं मालूम कि हमारी शक्तियों की कब जरूरत पड़ेगी, लेकिन हमें इंतजार करने और देखने के लिए चौकस रहना चाहिए।

''अब तक आपने देखा कि हमारे अधिकांश छात्रों ने राजनीतिक आंदोलन में रुचि दिखाई है, किंतु उन्हें स्पष्ट समझ नहीं है कि राजनीति का क्या अर्थ है, उसमें क्या उत्तरदायित्व है और राजनीतिक गतिविधियों को कार्यरूप देने के लिए कौन

से तरीके अपनाने चाहिए। मेरे विचार में शैक्षणिक जीवन, व्यावहारिक जीवन और राजनीति की समस्याओं से बिल्कुल भिन्न है। आपको दो बाते करनी होंगी :–

(i) अपनी बुद्धि, अपनी दृष्टि, सोच की अपनी सामर्थ्य, समस्याओं का समाधान करने की अपनी योग्यता को बढ़ाना ; और

(ii) उस सामर्थ्य, उस दृष्टि, वास्तविक समस्याओं के बारे में निर्णय लेने की योग्यता पैदा करना जिनका इस देश के लोग आज सामना कर रहे हैं।

''यह कोई एकांत कमरे में रसायन या भौतिकी प्रयोगशाला में मात्र अंडे सेने का काम नहीं है, यह इससे बहुत बड़ी चीज है। आप राजनीतिक अर्थव्यवस्था, राजनीति विज्ञान, इतिहास, वाणिज्य, व्यापार मुद्रा ये सब विषय ही नहीं सीखेंगे जो लोगों के व्यावहारिक जीवन से संबंध रखते हैं। आप उस शिक्षण, उस ज्ञान का उपयोग स्वयं अपने लिए नहीं, बल्कि इस देश के मामलों के प्रभारी राजनेताओं को भी बताएंगे कि उनके सामने समस्याओं के सही समाधान क्या हैं और वे कहाँ गलती कर रहे हैं।

''एक और चीज आपको ध्यान रखनी होगी और वह यह है कि निरंकुश शासन में जहाँ कानून डिक्टेटर की इच्छा से या संपूर्ण प्रभुत्त्व संपन्न शासक द्वारा बनाए जाते हैं, वहां बोलने की कला अनावश्यक है। कोई भी निरंकुश शासक, कोई भी पूर्ण राजा वाक्पटुता पर ध्यान नहीं देगा, क्योंकि उसकी इच्छा ही कानून है। लेकिन संसद में जहाँ कानून बनाए जाते हैं, निःसंदेह लोगों की इच्छा से बनाए जाते हैं वहाँ जो आदमी विपक्षी को जीतकर कामयाब होता है वही वह आदमी है जिसमें अपने विपक्षी को मनाने की कला है। आप अपने विपक्ष को आँखे दिखाकर सदन में बहुमत प्राप्त नहीं कर सकते। अल्पसंख्यक गुंडे लोगों को लाकर बहुसंख्यक को नहीं दबा सकते और न ही बहुसंख्यक अल्पसंख्यक के सदस्यों को आँखे दिखाकर विजय हासिल कर सकते हैं। आपको केवल बोलने की कला से अपने विपक्षी को मनाकर तर्क से उसे अपनी तरफ खींच कर, चाहे सज्जनता से या कठोरता से, लेकिन हमेशा तार्किक ढंग से और शिक्षाप्रद रुप में, मनाकर किसी प्रस्ताव को पारित कराना होगा। अतः संसदीय प्रणाली में सफलता की सबसे बड़ी योग्यता सदन को अपने पक्ष में रखने की सामर्थ्य है। अतः आपको एक गंभीर विषय में भारी योगदान देने के लिए पूरी तरह तैयार हो कर संसद में जाना चाहिए और मैं यह भी कहना चाहूंगा कि आपको सार्वजनिक रूप से बोलने की कला भी गंभीरता से सीखनी चाहिए। यह बहुत कठिन नहीं है, जैसा कि मैं आपको अपने निजी अनुभव से बता सकता हूँ। मैं कोई बड़ा वक्ता नहीं हूँ और मुझे नहीं मालूम कि कोई व्यक्ति जो भारत में उन लोगों का इतिहास लिखना चाहेगा, जिन्होंने भारतीय राजनीति में अपनी

भूमिका अदा की है, मुझे भारत के सर्वश्रेष्ठ वक्ताओं में डालकर कोई औचित्यपूर्ण कार्य करेगा। मैं उस सम्मान के योग्य नहीं हूँ। एक समय था जब मैं भी बहुत शर्मीला था और मैं इतना घबरा जाता था कि मैं सिडेनहम कालेज में प्रोफेसर का पद छोड़ने तक की सोचने लगता था। इसका केवल एक ही कारण था कि छात्र सम्भवतः मुझे नीचा दिखाएँगे। लेकिन मैं उन लोगों को आश्वस्त करना चाहता हूँ जिन्हें किसी प्रकार का भय है वह भय को त्याग दें, और भाषा पर अपना अधिकार प्राप्त करने का प्रयास करें। यह बिल्कुल भी कठिन काम नहीं है।

''स्पीकर के निर्णय का पूर्णतः निःशर्त पालन होना चाहिए। आप स्पीकर के निर्णय को कभी चुनौती न दें। यदि कोई कठिन व्यवस्था का प्रश्न है, जिस पर कोई पूर्वोदाहरण नहीं है, और वह शीघ्र अपना निर्णय नहीं दे सकता तो वह इस बारे में अपना दृष्टिकोण व्यक्त करने के लिए सदन के विभिन्न पक्षों को आमंत्रित करेगा कि किसी निर्णय का सही निर्वचन क्या है। लेकिन सभी पक्षों को सुनने के बाद जब वह निर्णय दे दे तो उस निर्णय को पवित्र मानकर स्वीकार किया जाना चाहिए, भले ही वह निर्णय कितना भी गलत हो। बीच में थोड़े समय को छोड़कर मैं 1926 से 1946 तक संसदीय संस्थाओं में रहा हूँ। मैं विभिन्न प्रकार के अच्छे और अन्य स्पीकरों को जानता हूँ, किंतु हमने निर्णय का पालन किया है। आप यह भी प्रस्ताव ला सकते हैं कि कोई स्थायी आदेश संशोधित किया जाए।

''दुर्भाग्यवश, संसद कैसे काम करती हैं, इस बारे में प्रत्यक्षा देखने का अनुभव प्राप्त करने का आपको कोई अवसर नहीं मिला है। यदि आपको पेरिस जाने का मौका मिले और वहाँ आप वास्तविक सत्र देखें या आप लंदन में हाऊस ऑफ कामन्स को देखें या अमेरिका जाएँ और वहाँ हाऊस ऑफ रिप्रेजेंटेटिव्ज़ देखें। पेरिस में आप एक विलक्षण विधान सभा देखेंगे। एक बार मैं लगातार दो तीन दिन पेरिस में निचले सदन में गया था। मैं उस महान असेम्बली का क्राफर्ड मार्केट से भेद नहीं कर सका। लोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर आ–जा रहे थें, एक कोने से दूसरे कोने में जा रहे थे, कोई व्यवस्था नहीं थी, कोई स्पीकर को सुन नहीं रहा था, बेचारे स्पीकर के पास मेज पर अंडा रखा था और एक लकड़ी का बड़ा हथौड़ा था। वह लगातार हथौड़ा मारते रहे, लेकिन किसी ने कोई ध्यान नहीं दिया। लेकिन हाऊस ऑफ कामन्स में इससे ठीक विपरीत स्थिति थी। वहाँ एक नियम है कि कोई भी सदस्य अपनी सीट पर खड़ा नहीं हो सकता जब स्पीकर खड़ा हो। हर सदस्य को बैठना होता है। जब स्पीकर खड़ा हो, तो कोई दूसरा सदस्य सीट पर खड़ा नहीं हो सकता, उसे बैठकर सुनना होगा। जब तक स्पीकर न कहे तब तक कोई भी सदस्य हाऊस ऑफ कामन्स में बोल नहीं सकता। स्पीकर पर किस व्यक्ति विशेष

को बोलने के लिए आमंत्रित करने का कोई कर्तव्य या बाध्यता नहीं है। एक उक्ति है 'स्पीकर ऐसे लोगों को बुलाता है जो उसकी दृष्टि में आने के योग्य हों' यह एक बड़ा भ्रामक वाक्यांश है– स्पीकर कोई दृष्टि अपना सकता है या जानबूझकर उसे अनदेखा कर सकता है। इसका कारण स्पष्ट है। अनेक वर्षों तक पीठासीन होने के कारण स्पीकर प्रत्येक व्यक्ति को जानता है, उसकी अच्छी बातें जानता है, उसकी बुरी बातें जानता है। जो कुछ वह करता है उसे अब उसके पारिवारिक के रुप में जाना जाता है। जो व्यक्ति टेढ़ा है और बोलता तो है लेकिन कहना कुछ नहीं, उसे वह बिरले ही बोलने की अनुमति देता है।

''आज हमारे यहाँ तथाकथित संसदीय लोकतंत्र है। आइये, इस शब्द को जानें। यह बहुत ही अकेली संस्था है। यह निरंकुश शासन या असीम शासन से भिन्न है, क्योंकि निरंकुश या असीम शासन में संसद जैसी कोई चीज नहीं होती। लोगों की इच्छाओं का कोई मूल्य नहीं होता। राजा या तानाशाह हालात का एक मात्र स्वामी होता है। वह लोगों की इच्छा का प्रतिनिधित्व करने का दावा करता है और वह अपनी स्वयं की इच्छा के अनुसार लोगों पर शासन करता है।

''एक और व्यवस्था प्रचलन में है जिसे आज सर्वहारा वर्ग का तानाशाही शासन कहा जाता है। इमारे दृष्टिकोण से दोनों में अंतर, बहुत मामूली है। निरंकुश शासन में जनसाधारण की सेवा करने की बाध्यता होती है। लेकिन मूलभूत रूप से इस प्रकार का तानाशाही शासन तात्विक रुप से पूर्ण राजतंत्र से भिन्न नहीं होता, क्योंकि इनमें से किसी में भी लोगों की कोई भूमिका नहीं होती। संसदीय लोकतंत्र इन दोनों के बीच का रास्ता है यह अत्यंत नाजुक संस्था है। इसकी विशेषताओं को बहुत ध्यानपूर्वक नोट करना चाहिए, क्योंकि विभिन्न राजनीतिक दार्शनिकों ने भिन्न–भिन्न तरीकों से इसमें किसी हिंसा का वर्णन नहीं किया है। संसदीय लोकतंत्र को विधिसम्मत शासन बताया गया है। एक समय संसदीय लोकतंत्र की यह विशेषता कि यह विधि सम्मत शासन है, निःसंदेह बहुत महत्वपूर्ण, बहुत वास्तविक थी। जब यूरोप में निरंकुश शासन समाप्त हुआ और संसदीय लोकतंत्र अस्तित्व में आया और चलने लगा तो वह पीढ़ी जिसने पूर्ण राजतंत्र से संसदीय लोकतंत्र में होने वाला यह परिवर्तन देखा था, भलीभाँति समझ सकती थी कि विधिसम्मत शासन के रुप में संसदीय लोकतंत्र का वर्णन वास्तव में बहुत यथार्थ और बहुत महत्वपूर्ण है, क्योंकि इससे पहले का शासन, निजी शासन था। शासक प्रथमतः अपनी इच्छाओं पर निर्भर होता था। दूसरे वह हमेशा अपने आपको कानून से ऊपर रखता था। कानून लोगां के लिए था स्वयं उसके लिए नहीं। विधिसम्मत शासन जो अब हमारे यहाँ है एक सुस्थापित सिद्धांत है। हम अब इसके इतने आदी हो गए हैं कि हम इसे कोई बहुत

बड़ी बात नहीं मानते लेकिन महत्वपूर्ण तथ्य अब भी यही है कि जब हम कोई विधि बनाते हैं तो विधि निर्माताओं को भी उस विधि के अधीन रखते हैं।

''किसी ने कहा भी है कि संसदीय लोकतंत्र बहुसंख्यक द्वारा लोकतंत्र है। यह सच है कि हमारे विधान में एक नियम है कि सभी परिस्थितियों का फैसला बहुमत से होगा लेकिन मैं यह कह सकता हूँ कि हम सिद्धांत के बारे में बहुत सावधान रहना होगा। यह सिद्धांत अत्यंत खतरनाक सिद्धांत है। बहुमत का नियम केवल सुविधा के कारण अपनाया गया है लेकिन ईश्वर की खातिर उस सिद्धांत को अत्यधिक भाव न दें, इससे आपको बहुत कठिनाइयाँ हो जायेंगी। एक तरह से बहुमत का नियम गलत नियम है। मैं इस पर बहस करने के लिए तैयार हूँ। आइये उदाहरण देखें। हम संविधान रचना के काम में लगे हुए हैं। मुझे सभापति के रूप में समिति का अध्यक्ष बनाया गया है। हमें अल्पसंख्यकों के मूल अधिकार की रक्षा करनी होगी। मत भूलिये कि मूल अधिकार का अर्थ है कि बहुसंख्यक को कुछ चीजें करने का अधिकार नहीं है। मूल अधिकार का यही अर्थ है। संविधान में मूल अधिकार बहुसंख्यक की कुछ करने की शक्ति पर पूर्ण प्रतिबंध लगाता है। वस्तुतः बहुमत का नियम आया तो है लेकिन यह मेरे मतानुसार एक धोखे जैसा भी है।

''यदि आप हाऊस ऑफ कामन्स की प्रक्रिया और उसके इतिहास को देखें तो आप पाएंगे कि एक वर्ष में लगभग चौदह–पंद्रह सौ में (हुआ यह था कि) हाऊस ऑफ कामन्स में एक प्रस्ताव लाया गया था :– जो सदस्य पक्ष में थे वे जाकर एक लॉबी में बैठ गए और जो उसके विपक्ष में थे वे दूसरी लॉबी में बैठे। स्पीकर ने क्लर्क से पूछा कि कितने सदस्य आईज़ लॉबी में हैं और कितने नोज़ लॉबी में हैं उन्होंने बताया कि नोज़ लॉबी में 20 हैं और आईज लॉबी में 50। स्पीकर ने उस प्रस्ताव के परिणाम की घोषणा नहीं की। उन्होंने आईज़ लॉबी से कहा कि वे नोज़ लॉबी में चले जाएँ, उन्हें मनाएँ कि वे आकर सदन में बैठे और तभी उन्होंने परिणाम की घोषणा की। इसका क्या अर्थ है, कुछ बहुत महत्वपूर्ण, कि बहुसंख्यक तब तक अपने पक्ष में फैसला नहीं करवा सकते जब तक कि स्पीकर का विश्वास न हो जाए कि यदि सक्रिय रूप से नहीं तो कम से कम असक्रिय तौर पर सही, अल्पसंख्यक सम्मति देने के लिए तैयार हैं। यही मूल प्रक्रिया थी। बाद में किसी कारण यह पद्धति अथवा बहुसंख्यक पर बाहर जाकर विपक्ष को मनाने और वापस आने तथा परिणाम सुनने के लिए मानने की बाध्यता बंद की दी गई। बरहाल, यद्यपि संसदीय लोकतंत्र द्वारा बहुमत का सिद्धांत सप्रयोजन स्वीकार किया गया था, फिर भी यह मत सोचिये कि आप जैसा चाहे अल्पसंख्यक के साथ दुर्व्यवहार कर सकते हैं अथवा उसे नुकसान पहुँचा सकते हैं। आप इसी सदन में अपने लिए बहुत बड़ी मुश्किल पैदा कर लेंगे। अल्पसंख्यक को हमेशा मनाकर चलना चाहिए, उस पर कभी हुक्म नहीं चलाना चाहिए।

'एक दूसरा राजनीतिक दर्शन था – वाल्टर बैगहॉट का दर्शन। वह संसदीय शासन को विचार–विमर्श का शासन कहते थे, जो मेरे विचार में संसदीय शासन का बिल्कुल सही वर्णन है। संसदीय शासन में पर्दे के पीछे कुछ नहीं किया जाता और न ही किन्हीं विशेष व्यक्तियों की इच्छाओं के फलस्वरूप कुछ किया जाता है। प्रत्येक विषय या तो विधेयक के रूप में या संकल्प के रूप में या किसी अन्य प्रस्ताव के रूप में सदन के समक्ष लाया जाता है।

''जब इसे सदन के सामने रखा जाता है, तब उस पर बहस की जा सकती है। बड़े दुख की बात है कि हमने तथाकथित 'एन्क्लोजर' नामक प्रस्ताव को स्वीकार करने की महान संसदीय पद्वति का अनुसरण नहीं किया है। (यहाँ स्पीकर ने संक्षेप में यह बताया कि किस प्रकार पारनेल ने ग्लैडस्टन और लार्ड नॉर्थब्रूक को 48 घंटे, 36 घंटे और 24 घंटे बनाकर तंग किया था और इसके फलस्वरूप एन्क्लोज़र की पद्वति का किस प्रकार विरोध किया गया।)

''बहरहाल, इस तथ्य के होते हुए भी कि अब सभी विधानमंडलों में ऐसा नियम है कि बहस बंद की जाए और प्रश्न पूछा जाए। चर्चा के लिए हमेशा काफी समय रहता है। ध्यान रहे कि संसद में जो चर्चा होती है, वह उस प्रश्न के फैसले के लिए ही सुसंगत नहीं होती जो उसके लिए निःसंदेह है, अपितु वह और भी व्यापक सुसंगत तथा व्यापक महत्वपूर्ण होती है। यदि बहस का स्तर ऊँचा है और अखबरों में उसकी सही रिपोर्ट छपी है तो प्रकटतः हाऊस ऑफ कामन्स में वाद–विवाद से भिन्न आम लोगों के लिए राजनीतिक शक्ति का कोई बड़ा माध्यम नहीं हो सकता।

''कहा गया है कि संसदीय शासन स्वशासन है। निःसंदेह तार्किक दृष्टि से ऐसा है, लेकिन अत्यंत महत्वपूर्ण बात, जिसे आपमें से अधिकांश याद रखेंगे, वह यह है कि देश सुशासन चाहता है और प्रश्न यह है कि आपको सुशासन कैसे मिल सकता है? यह एक बहुत महत्वपूर्ण प्रश्न है। मैं कोई सिद्धांत बघारना नहीं चाहता हूँ, मैं आपके विचार के लिए एक या दो मताभिव्यक्तियाँ रखना चाहता हूँ क्योंकि उन पर गंभीरता से विचार करने की जरूरत है। मेरे मतानुसार सुशासन क्या है? उसका कोई सिद्धांत नहीं हो सकता। विभिन्न लोग सुशासन की भिन्न–भिन्न धारणाएं प्रस्तुत कर सकते हैं। पूंजीवदी समझते हैं कि पूंजीवादी शासन प्रणाली, जहाँ न्यूनतम हस्तक्षेप है, अच्छा शासन होता है, दूसरी ओर, समाजवादियों का विचार है कि समाजवादी शासन प्रणाली श्रेष्ठ शासन है। और भी अनेक प्रकार के लोग हो सकते हैं। तथ्य यह है कि सुशासन क्या है, इसके बारे में विभिन्न प्रकार के मत हैं। हमारे जैसे बहुल समाज में जहाँ इसके सभी भिन्न–भिन्न परिणाम होते हैं, कोई सर्वोपरित उपचार संभव नहीं हो सकता।''

● ● ●

111

सार्वजनिक भाषण कला विकसित की जा सकती है

14 जनवरी, 1948 को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने धोबी तलाब रात्रि विद्यालय के वाद–विवाद प्रतियोगिता पुरस्कार वितरण समारोह को संबोधित किया। यह समरोह सिद्धार्थ कालेज के परिसर में आयोजित किया गया था।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने छात्रों से प्रभावी ढंग से कहा कि जनसभाओं में बोलने की कला अथक परिश्रम करके विकसित की जा सकती है। उन्होंने छात्रों को बताया कि महान वक्ता श्री गोपाल कृष्ण गोखले अपना प्रथम भाषण देते समय किस प्रकार घबरा गए थे, फिरोज शाह मेहता ने आइने लगे एक कमरे में अपने भाषण दोहराकर अपनी शक्ति को किस प्रकार विकसित किया था, जहाँ वह देख सकते थे कि उनके हाव–भाव किस प्रकार बदलते हैं और उनके हाथ किस प्रकार चलते हैं। उन्होंने कहा कि मेहता ने इस बात पर बड़ा ध्यान दिया था कि उनकी वेशभूषा और उनका चेहरा साफ–सुथरा और प्रभावकारी हो। उन्होंने आगे कहा कि महान वक्ता चर्चिल ने कोई भी भाषण, तैयारी के किए बिना, नहीं दिया था।[1]

● ● ●

[1] कीर, पृष्ठ 401

112

मनु अथवा याज्ञवल्क्य के दैवी कानूनों के कारण, हिंदू समाज कभी अपना सुधार नहीं कर सका

दिनांक 10 अप्रैल, 1948 को डॉ. बी.आर. अम्बडेकर ने लॉ कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय में व्याख्यान दिया।

उसने कहा —

''इस पतन का उत्तरदायित्व प्राचीन समाजों की उन असफलताओं में निहित है जिसके अंतर्गत वे अपने ढांचे में सुधार नही ला पाए। कमियों को दूर करने के बजाय उन्होंने मनु जैसे नियम—कानून निर्माताओं द्वारा बनाए कानूनों द्वारा शासित होना स्वीकार किया, जब कि कानून का असली काम समाज के दोषों को सुधारना है।

सभ्यता कभी भी एक सतत प्रक्रिया नहीं रही। ऐसे राज्य और समाज थे जो किसी समय सभ्य थे। कालांतर में कोई ऐसी घटना घटी, जिसके कारण वे समाज नष्ट हो गए। भारत के इतिहास से इसका उदाहरण दिया जा सकता है।

''इसमें कोई संदेह नहीं है, कि भारत उन देशों में था, जो प्राचीन महान सभ्यता पर गर्व कर सकता है। जिस समय यूरोपवासी प्रायः जंगली और खानाबदोश अवस्थाओं में जी रहे थे, यह देश सभ्यता के सर्वोच्च शिखर पर था। जिस समय यूरोप के लोग केवल खानाबदोश थे, इस देश में संसदीय संस्थाएँ थीं।

''आम आदमी यह समझता है कि आज हमारी संसदीय संस्थाओं ने समस्त संसदीय प्रक्रिया यूरोपीय देशों से, विशेषकर ब्रिटेन से, उधार ली है, लेकिन मैं समझता हूँ कि जो भी व्यक्ति, उदाहरण के लिए विनय—पिटक के पृष्टों का परिशीलन करेगा, वह पाएगा कि ऐसे मत के लिए कोई आधार नहीं है।

''मेज़ पार्लियामेंट्री प्रैक्टिस'' में प्रतिपादित कुछ नियम विनय—पिटक के विद्यार्थी के रूप में भारत के लोगों को ज्ञात थे। ऐसा लगता है कि लोग यह सोचते हैं कि यह प्रक्रिया कि संसद में तब तक कोई बहस नहीं हो सकती जब तक कोई प्रस्ताव पेश न किया जाए और तब तक कोई मतदान नहीं हो सकता जब तक

कोई प्रस्ताव न रखा जाए, कुछ नई प्रक्रिया है। लेकिन मैं समझता हूँ कि यह एक आम भ्रांति है। विनय–पिटक में, जिसमें भिक्खु संघ के अधिवेशनों के प्रक्रिया नियम लेखबद्ध हैं यह सुविदित नियम था कि 'नेति' प्रस्ताव के सिवाय कोई वाद–विवाद नहीं हो सकता।

''आज हम समझते हैं कि गुप्त मतदान एक ऐसी चीज है जिसे अंग्रेजों ने शुरू किया था। यह भी एक भूल है। विनय–पिटक में मतगणना के लिए एक निश्चित प्रावधान है। उसे 'सालपत्रक ग्राहक' कहते हैं। सालपत्रक (पेड़ की टहनी) को मतपत्र के रूप में इस्तेमाल किया जाता था। गुप्त मतदान की भी व्यवस्था थी, जिसके अंतर्गत भिक्खु स्वयं मतपेटी में अपना सालपत्रक डाल सकता था।

''मैं इन राजनीतिक बातों का इसलिए उल्लेख कर रहा हूँ क्योंकि अनेक इतिहासकारों का कहना है कि जहाँ उन्होंने जीवन की अन्य शाखाओं में प्रगति की, वहाँ भारत के लोग राजनीतिक दृष्टि से बहुत पिछड़े हुए थे। मैं इस विचारधारा का खंडन करता हूँ।

''मैं यह मानता हूँ कि हमने किसी न किसी कारणवश उस राजनीतिक प्रतिभा को खो दिया। हमने सभी संसदीय संस्थाओं को खो दिया और हम निरंकुश राजा की प्रजा बन गए। यहाँ सभ्यता का पतन शुरू हुआ और भारतीय समाज का, अन्य सभी समाजों की तरह, समय–समय पर पतन होता रहा।

''सिवाय उन कठिनाइयों के जो युद्ध के कारण उत्पन्न हुई हैं, ऐसा क्यों है कि आधुनिक काल में ऐसा प्रतीत होता है कि समाज, बहुत सी कठिनाइयों के बिना ही निरंतर न्रगति कर रहा है? प्राचीन समाज में ऐसा क्यों नहीं होता था?

''प्राचीन समाज और आधुनिक समाज में अंतर इस बात में है कि प्राचीन समाज में कानून बनाना जनता का कार्य नहीं था। कानून ईश्वर या कानून निर्माता द्वारा बनाया जाता था। समाज का काम उस कानून का केवल पालन करना होता था, जो या तो दैवी शक्ति द्वारा बनाया जाता था या कानून निर्माता द्वारा। यही मूल कारण था कि प्राचीन समाज में कोई सतत सभ्यता नहीं रही।

''कानून का वास्तविक काम समाज के दोषों को दूर करना है दुभाग्यवश प्राचीन समाज ने कभी भ अपने स्वयं के दोषों को ठीक करने का काम हाथ में लेने का साहस नहीं किया। इसका परिणाम यह हुआ कि वे नष्ट हो गए। हिंदू समाज के पतन का एक कारण यह भी है कि यह समाज एसे कानून द्वारा शासित होता था जो या तो मनु द्वारा बनाया गया था या याज्ञवल्क्य द्वारा। इस कानून निर्माताओं

द्वारा बनाया गया कानून दैवी कानून है। इसका परिणाम यह हुआ कि हिंदू समाज कभी भी अपने में सुधार नहीं कर पाया।

''यूरोप में कालांतर में धर्म सापेक्ष कानून की अधिकारिता को धर्मनिरपेक्ष कानू द्वारा चुनौती दी गई, जिसका परिणाम यह हुआ कि आज परिश्चम में कानून पूर्णतः धर्मनिरपेक्ष है और गिरजाधर का अधिकार क्षेत्र केवल पादरी तक सीमित है।

''दुर्भाग्यवश, महान विद्वान् प्रोफेसर मैक्समूलर सहित अनेक लेखकों ने, जिन्होंने भारत के अतीत में शोध किया है, इस धारणा को जन्म दिया कि भारतीय कानून बिल्कुल भी नहीं बदला है। यह इसी कथन के अनुरूप है, जो रूढ़िवादी पंडित कहते आए हैं। लेकिन मैंने जो अध्ययन किया है उसमें मैं यह कह सकता हूँ कि वह एक पूर्ण भ्रांति है।

''विश्व में ऐसा कोई देश नहीं है जिसमें इतनी क्रांतियाँ हुई हों, जितनी इस देश में। इस देश में यूरोपवासियों द्वारा पोप के प्राधिकार को चुनौती देने से बहुत पहले धर्मसापेक्ष विधि और धर्मनिरपेक्ष विधि में मतभेद रहा है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में धर्मनिरपेक्ष कानून की आधारशिला रखी गई। भारत में दुर्भाग्यवश धर्मनिरपेक्ष कानून पर धर्मनिरपेक्ष कानून पर धर्मसापेक्ष कानून विजयी रहा। ऐसा क्यों हुआ? मेरी राय में यह इस देश में घोर आपदाओं में से एक थी। हिंदू समाज का अप्रगतिशील स्वरूप इस धारणा के कारणा था कि कानून बदला नहीं जा सकता।

● ● ●

113

एक नेता, एक दल, एक कार्यक्रम के अनुसार संगठित हों

अनुसूचित जाति फेडरेशन का पांचवा संयुक्त प्रांत सम्मलेन 24 और 25 अप्रैल, 1948 को लखनऊ में आयोजित किया गया था।

इसी जगह पिछले वर्ष लोगों के राजनीतिक अधिकारों एवं समता को स्थापित करने के लिए अनुसूचित जाति फेडरेशन द्वारा एक आंदोलन चलाया गया था। इस आंदोलन में 2000 से अधिक दलित स्त्री–पुरुषों ने भाग लिया था। इन सबको लखनऊ में गिरफ्तार किया गया था और जेल में डाल दिया गया था। यह संयुक्त प्रांत के अछूतों द्वारा किया गया बहुत बड़ा बलिदान था। इन सब स्त्री–पुरुषों को डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर जो दलितों के उद्वारक थे को देखने और सुनने की उत्कट इच्छा थी। निम्नलिखित भाषण इन्हीं प्रयासों का परिणाम है।

उक्त सम्मेलन श्री गया प्रसाद, महासचिव, बालगोविन्द, कन्हैया लाल सोनकर, बुद्ध दास चौधरी और मेवालाल सोनकर के प्रभाव के कारण सफल हो सका, क्योकि एक लाख से भी अधिक दलित इस सम्मेलन में जमा हुए थे। अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के महासचिव, श्री पी.एन. राजभोज भी इस सम्मलेन में उपस्थित थे। श्री गोपीचंद्र पिपल, अध्यक्ष, संयुक्त प्रांत, समता सैनिक दल, श्री तिलक चंद्र कुरील, अध्यक्ष, संयुक्त प्रांत अनुसूचित जाति फेडरेशन, मुख्य आयोजक थे।

एन.पी. इस सम्मेलन की दो खास बातें थी : (1) सम्मेलन से यह साफ था कि कांग्रेस शासित राज्यों में अछूतों के दुखों का कोई अंत नहीं है, (2) अनुसूचित जाति फेडरेशन ऐसा कोई भी काम करने में संकोच नहीं करेगी, जो अछूतों की प्रगति के लिए आवश्यक है। डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर ने 25 अप्रैल, 1948 (रविवार) को उक्त सम्मलेन को संबोधित किया था।[1]

उन्होंने कहा था –

''राजनीतिक सत्ता संपूर्ण सामाजिक प्रगति की कुंजी है और अनुसूचित जातियाँ तभी अपनी मुक्ति पा सकती है, जब वे तीसरे पक्ष के रूप में संगठित होकर

---

[1] जनता, 1 मई, 1948

इस सत्ता पर कब्जा कर लें और प्रतिद्वंद्वी राजनीतिक दलों, कांग्रेस और समाजवादी, के बीच शक्ति संतुलन बना सकें।

''अनुसूचित जातियाँ कांग्रेस में शामिल होकर राजनीतिक सत्ता पर कब्जा नहीं कर सकती। यह एक बड़ा संगठन है और यदि हम कांग्रेस में शामिल हो जाएँगे तो हम सागर में केवल एक बूँद के समान होंगे। कांग्रेसियों का घमंड ऊँचा है, इसलिए हम इस संगठन में शामिल होकर अपने आपको ऊपर नहीं उठा सकते। हम कांग्रेस में शामिल होकर अपने शत्रुओं की शक्ति को ही बढ़ाएंगे।

''कांग्रेस का घर जल रहा है और हम उसमें प्रवेश करके समृद्ध नहीं हो सकते। यदि कुछ ही वर्षों में यह बर्बाद हो जाए तो भी कोई आश्चर्य नहीं होगा। समाजवादी कांग्रेस से अलग हो गए हैं, इससे निश्चय ही कांग्रेस कमजोर होगी।

''हमें अपने आपको एक तीसरे पक्ष के रूप में संगठित कर लेना चाहिए, ताकि यदि समाजवादी और कांग्रेस को पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो तो वे हमारे मतों के लिए हमारे सामने गिड़गिड़ाएँ। तब हम शक्ति संतुलन बना सकते हैं और राजनीतिक समर्थन देने के लिए उनके मामले अपनी शर्तें रख सकते हैं।

''मैं लोथियन समिति के सदस्य के रूप में 12 वर्ष पहले लखनऊ आया था। मैं यह देखकर खुश हूँ कि अब अनुसूचित जातियों में और अधिक राजनीतिक जागरूकता है। हमने उत्तर प्रदेश में सत्याग्रह किया। अपने समाज के लिए जो बलिदान दिए, मैं उसके लिए आपको बधाई देना चाहता हूँ। यह इस बात को दर्शाता है कि यदि हम अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए दृढ़संकल्प हो, तो हम किसी भी अड़चन के बावजूद इनहें प्राप्त कर लेंगे।

''कांग्रेस की सरकार में मेरे शामिल होने के कारण अनुसूचित जातियों में बहुत अधिक भ्रम का वातावरण है और मैं उस आशंका और संदेह को दूर करना चाहता हूँ। अंग्रेजों ने अपनी घोषणाओं का सम्मान नहीं किया और हिंदुओं, मुसलमानों और सिखों को ही उन समुदायों के रूप में मान्यता दी, जिन्हें सत्ता हस्तांरित की जा सकती है।

''मुझ से पूछा जाता है कि कांग्रेस के खिलाफ 25 साल लड़ने के बाद भी मैंने इस नाजुक मौके पर मौन रहना क्यों पसंद किया। आखिरकार हर समय लड़ना भी तो कोई श्रेष्ठ रणनीति नहीं है। हमें अन्य उपायों का भी सहारा लेना होता है।

''अंग्रेजों ने हमें अधर में छोड़ दिया और हमारा समाज विभाजित हो गया। हमारे लोगों में अनेक पंचमाँगी हैं। उस समय ऐसे शक्तिशाली संगठन से मतभेद

रखना हमारे हित में नहीं था।

''हमने सुलह की नीति अपनाई और बहुत कुछ सफलता भी पाई। हमने वह सब नहीं पाया जो हम चाहते थे। फिर भी हमने बहुत कुछ पाया। हमने विधानमंडलों और सेवाओं में आरक्षण प्राप्त किया है और हमारी अधिकांश माँगे स्वीकार कर ली गई हैं। पृथक, निर्वाचक मंडल की हमारी माँग नहीं मानी गई है, लेकिन हमें इसके लिए शर्मिंदा नहीं होना चाहिए, क्योंकि अन्य अल्पसंख्यक भी इस संबंध में असफल रहे हैं। यह समय कांग्रेस के साथ मतभेद रखने का समय नहीं है। हमें सुलह और सहयोग के माध्यम से अधिकाधिक पा लेना चाहिए।

''मैं केंद्रीय सरकार में शामिल हो गया हूँ : लेकिन मैं कांग्रेस का सदस्य नहीं हूँ और ऐसा कोई इरादा भी नहीं है। मुझे कांग्रेस द्वारा केंद्र सरकार में शामिल होने के लिए आमंत्रित किया गया था और मैं उसमें बिना शर्त शामिल हुआ हूँ। मैं किसी भी समय अलग हो जाऊःगा। मेरे विचार में वहाँ टिके रहना व्यर्थ है। हमारी शर्त के अनुसार यह आवश्यक है कि हमारे लोग प्रशासन तंत्र में होने चाहिए। न्यायसंगत विधान का डर नहीं है, लेकिन अच्छे कानून भी बुरी तरह प्रशासित हो सकते हैं, और यदि सरकार में ऐसे लोग हों, जो परंपरा से अनुसूचित जातियों के हितों के खिलाफ हों तो हमारे लिए कोई आशा नहीं हो सकती। बेगार के लिए कानून की कोई मंजूरी नहीं है, लेकिन यह जमींदारों का कानून है और अनुसूचित जातियों की याचिकाओं की उपेक्षा कर दी गई है, क्योंकि जो अधिकारी इन याचिकाओं को प्राप्त करते हैं। उनमें से ज्यादातर पीड़कों के रिश्तेदार हैं। यदि कुछ अनूसचित जातियों के सदस्य पदासीन होते, तो वे अपने बंधुओं को उचित संरक्षण प्रदान कर पाते।

यदि मैं कांग्रेस में शामिल होऊँगा तो मैं अपना इरादा घोषित करने के बाद ऐसा करुंगा। यदि ऐसा करना अनुसूचित जाति के हित में होगा तो मैं ऐसा करने के लिए आपको सलाह दूँगा। लेकिन जब तक मैं खुलकर आपको कांग्रेस में शामिल होने के लिए न कहूँ, तक तक इसमें शामिल नहीं होना है।

''पिछड़े वर्ग के लोग अपने अलगाव के कारण दुखी रहे, उन्हें ऊँची जातियों से राजनीतिक शक्ति कब्जाने के लि कए संयुक्त मोर्चा खोलना होगा। व्यस्क मताधिकार की प्रणाली से जनता के पास राजनीतिक शक्ति आई है और मेरी राय में यदि यू.पी. में डेढ़ करोड़ अनुसूचित जाति के लोग और एक करोड़ पिछड़े वर्ग के लोग एक सामान्य लक्ष्य पर हाथ मिला लें, तो वे विधानमंडल में अपने 50 प्रतिशत सदस्य चुन सकते हैं और राजनीतिक शक्ति हथिया सकते हैं। यदि पिछड़े वर्ग के

लोग ऊँची जातियों के खिलाफ एक पृथक मोर्चा बना लें, तो मुझे कोई आपधि नहीं होगी। दुखद बात यह है कि अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्ग अपनी शक्ति के प्रति सजग नहीं है, जिसके परिणामस्वरूप ऊँची जातियों का प्रशासन में प्रभुत्व है।

''आप लोग एक नेता, एक पार्टी और एक कार्यक्रम के अनुसार अपने आपको संगठित कीजिए। आप सब जातिगत भिन्नताएँ भुलाकर फेडरेशन के तत्वावधान में अपने आपको संगठित कीजिए।''

डॉ. अम्बेडकर का वक्तव्य

लखनऊ के उक्त भाषण में कुछ अन्य बातों को स्पष्ट करने के लिए और सविस्तार बताने के लिए डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा जारी किया गया एक वक्तव्य निम्न प्रकार है :–

''मैंने 25 अप्रैल को लखनऊ में आयोजित अनुसूचित जाति फेडरेशन के सम्मेलन में दिए गए अपने भाषण का अत्यंत विकृत रूप देखा है और मुझे एक स्थानीय दैनिक पत्र में यह पढ़कर बहुत दुख हुआ है कि मैंने अपने साथियों के बारे में कुछ कठोर टिप्पणियाँ की हैं। मैं उस गलतफहमी को दूर करना और जो कुछ मैंने लखनऊ में कहा था उसकी रूपरेखा प्रस्तुत करना आवश्यक समझता हूँ।

''मेरा भाषण तत्काल भाषण था, लेकिन मैं अपने भाषण में दिए गए बिन्दुओं का नीचे उल्लेख करता हूँ। आशय था उन बिंदुओं के माध्यम से उस आलोचना का जवाब देना, जो मेरे अपने कुछ अनुयायियों द्वारा विभिन्न आधारों पर मेरे खिलाफ की गई है :–

(1) मैं केबिनेट मिशन के प्रस्थान के समय से मौन क्यों हूँ?

(2) मैं कांग्रेस सरकार में क्यों शामिल हुआ?

(3) मैं भविष्य में क्या करना चाहता हूँ?

''बिंदु (1) के जवाब में मैंने कहा था : अनुसूचित जाति फेडरेशन ने राजनीतिक रक्षोपाय माँगे थे, जिनमें से सबसे अधिक महत्वपूर्ण पृथक निर्वाचक मंडल थे। यदि प्रारंभिक निर्वाचकों के परिणामों को कसौटी मान लिया जाए तो इसमें कोई संदेह नहीं है कि संपूर्ण अनुसूचित जातियों की यही माँग थी। ऐसा होते हुए भी हमारी माँग कैबिनेट मिशन द्वारा नामंजूर कर दी गई। यह दो कारणों से हुआ था : (i) हम मुसलमानों और सिखों की तुलना में एक कमजोर पार्टी थे और (पप) हम संगठनात्मक रूप में विभाजित थे, जिसमें अनेक पंचमाँग अर्थात् 'फिफ्थ कालमनिस्ट' थे।

''ऐसा प्रतीत होता है कि कैबिनेट मिशन के फैसले एक पृथक राजनीतिक शक्ति के रूप में अनुसूचित जातियों को समाप्त करने वाले थे और यह कि राजनीतिक रक्षोपायों के बिना अनुसूचित जातियाँ मुझे गर्त में जाती प्रतीत होती थीं। मेरे सामने पूर्ण अंधकार था। यही कारण है कि मैंने कोई वक्तव्य नहीं दिया है।

''बिंदु (2) के उत्तर में मैंने कहा था :–

''यह सही है कि मैं कांग्रेस का विरोधी और आलोचक रहा हूँ, किंतु मैं विरोध की खातिर विरोध में विश्वास नहीं रखता। जहाँ हम सहयोग द्वारा कुछ पा सकते हैं वहाँ सहयोग की भावना होनी चाहिए। मैंने सोचा कि कांग्रेस के लड़ने का कोई फायदा नहीं है, इसलिए मैंने सहयोग करने का फैसला किया और सहयोग द्वारा हमने संविधान में कुछ रक्षोपाय प्राप्त किए, जो हम अन्यथा नहीं पा सकते थे, और मैंने अपने तर्क को सिद्ध करने के लिए कुछ दृष्टांत पेश किए थे।

एन.पी. जहाँ तक कैबिनेट में शामिल होने का संबंध है, मैंने कहा था कि इसके दो कारण हैं जो मुझे यह पेशकश स्वीकार करनी पड़ी – (i) पेशकश बिना शर्त थी (ii) कोई व्यक्ति सरकार से बाहर रहने के बजाए सरकार में रहकर बेहतर ढंग से अनुसूचित जातियों के हितों को पूरा कर सकता है।

''मैंने कहा था कि अनुसूचित जातियों को उनके खिलाफ अहिताकरी कानून जाने का डर नहीं है, उन्हें कुप्रशासन का भय है। यह कुप्रशासन अनुसूचित जातियों के लोगों के प्रशासन में न होने के कारण है।

''प्रशासन अनुसूचित जातियों के प्रति सहानुभूति नहीं रखता, क्योंकि उसमें सभी सवर्ण हिंदू अधिकारी हैं जो गाँवों में उन सवर्ण हिंदुओं के पक्ष में हैं जो अनुसूचित जातियों से बेगार लेते हैं और उन पर दिन–रात अत्याचार और उत्पीड़न करते हैं। यह अत्याचार और उत्पीड़न तभी मिटाया जा सकता है, जब अनुसूचित जातियों के ज्यादा लोग सिविल सेवा में स्थान पा सकें। यह कार्य शासन से बाहर रहने के बजाए सरकार में रहकर बेहतर ढंग से किया जा सकता है।

''जहाँ तक तीसरे मुद्दे का संबंध है, मैंने कहा था कि कांग्रेस में शामिल होने का कोई फायदा नहीं है। सुरक्षा दो दलों के होने में है। सरकार की आलोचना करने के लिए विपक्ष अवश्य होना चाहिए वरना सरकार आसानी से तानाशाह हो सकती है। यह ऐसा घर है जो जल रहा है। कांग्रेस में अनेक लोग ऐसे हैं जो विपक्ष में आना चाहते हैं जिसकी आवश्यकता वे बहुत दृढ़ता से महसूस करते हैं।

''दूसरे, कांग्रेस स्वयं ही विभाजित हो रही है। समाजवादी उससे अलग हो चुके हैं। अभी कोई यह नहीं कह सकता कि वे कितनी बड़ी पार्टी बना पाएँगे, काफी

बड़ी पार्टी बनाने की संभावनाएँ हैं। यहाँ इसके बाद दो दल होंगे : (1) कांग्रेस, (2) समाजवादी। प्रश्न यह नहीं है कि हमें कांग्रेस में शामिल होना चाहिए या नहीं, प्रश्न यह है कि हमें कांग्रेस में शामिल होना चाहिए या समाजवादी पार्टी में।

''मैंने कहा था कि मेरी सलाह है कि आप एक तीसरी पार्टी बनाएं ताकि अनुसूचित जातियाँ संतुलन कायम रख सकें और इसके द्वारा वे सौदबाजी की शक्ति प्राप्त कर सकें। किसी राजनीतिक पार्टी में शामिल होने का कोई फायदा नहीं है। किसी राजनीतिक पार्टी में केवल उसके शिविर अनुयायियों के रूप में शामिल होने का कोई फायदा नहीं है। यदि वह कुछ देती है, तो वह केवल पद देती है, वह शक्ति नहीं दे सकती।

''आपके सम्मलेन ने अभी आपको सेवाओं में केवल 10 प्रतिशत आरक्षण देने के लिए पंत सरकार के खिलाफ एक निन्दा प्रस्ताव पास किया है जबकि विशुद्ध जनसंख्या के आधार पर आप लगभग 22 प्रतिशत आरक्षण के हकदार हैं। श्री पंत ने आपको पूरा आरक्षण कोटा क्यों नहीं दिया? क्योंकि यह संयुक्त प्रांत विधानसभा में उनके बहुमत के लिए है वह आप पर आश्रित नहीं हैं। ऐसा तभी हो सकता है जब आप सौदेबाजी के योग्य एक पृथक संगठन के रूप में एकजुट हो जाएँ। तभी आप 22 प्रतिशत की माँग कर सकते हैं, और उन्हें इतना आरक्षण आपको देना होगा।

''इसके बाद मैं अनुसूचित जातियों और तथाकथित पिछड़ें वर्गों में एकता के सवाल पर बोला था। ऐसा मैंने सम्मलेन में उपस्थित पिछड़ें वर्ग के नेताओं के अनुरोध पर किया था। मैंने कहा था कि यह खेद का विषय है कि ऐसे दो वर्ग, जिनकी जरूरतें एक–सी हैं, परस्पर हाथ नहीं मिलाते हैं। कारण था कि पिछड़े वर्ग अनुसूचित जातियों के साथ अपने आपको जोड़ना नहीं चाहते, क्योंकि उन्हें भय है कि ऐसे सम्मिलन से वे स्वयं अनुसूचित जातियों के स्तर तक गिर जाएँगे।

''मैंने कहा था मैं अनुसूचित जातियों और पिछड़े वर्गों के बीच परस्पर खान–पान और अंतर–विवाह स्थापित करने के लिए आतुर नहीं हूँ। वे पूरी तरह पृथक सामाजिक असितत्व बनाए रख सकते हैं। पर कोई कारण नहीं है कि वे अपनी पिछड़ी अवस्था को दूर करने के लिए एक राजनीतिक दल बनाने के लिए हाथ न मिलाएँ। मैंने संकेत दिया था कि अनुसूचित जातियों ने देश की राजनीति में अपनी भूमिका अदा करके अपनी अवस्था मे कहीं बेहतर सुधार किया है और कोई कारण नहीं है कि पिछड़े वर्गों को भी ऐसा नहीं करना चाहिए।

''मैंने कहा था कि अनुसूचित जातियाँ और पिछड़े वर्ग देश की आबादी की बहुसंख्या है। कोई कारण नहीं है कि वे इस देश पर शासन न करें। आवश्यक है

कि वे राजनीतिक शक्ति हथियाने के प्रयोजन के लिए संगठित हों और ऐसा व्यस्क मताधिकार के कारण संभव है। ऐसा लगता है कि लोगों में साहस नहीं है, क्योंकि वे इस विश्वास से अभिभूत हैं कि कांग्रेस सरकार सदा सत्ता में रहेगी। मैंने कहा था कि यह गलत धारणा है, लोकतंत्र में कोई सरकार स्थायी नहीं होती, और दो सबसे बड़े कांग्रेसजनों अर्थात् पंडित नेहरू और सरदार पटेल द्वारा बनाई गई सरकार भी नहीं। यदि आप संगठित हो जाएँ, तो आप भी शासन को हथिया सकते हैं।

''मुझे विश्वास है कि पाठक देखेंगे कि यह कहना कि मैंने कांग्रेस संगठन पर या अपने साथियों पर आक्षेप किया था, तथ्यों को तोड़ना–मरोड़ना है।''

● ● ●

114

किसी समुदाय की प्रगति हमेशा उसकी शिक्षा पर निर्भर है

15 जनवरी, 1949* को मनमाड में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को थैली भेट की गई। इस अवसर पर बोलते हुए, उन्होंने घोषणा की कि उनके लोग किसानों और मजदूरों के शासन में इस देश में वास्तविक समाजवाद स्थापित करेंगे। उन्होंने श्रोताओं से यह भी आग्रह किया कि समाज की प्रगति हमेशा इस बात पर निर्भर करती है कि वे शिक्षा के क्षेत्र में कितना आगे बढ़े हैं।[1]

● ● ●

*जनता 22 जनवरी, 1949 के अनुसार यह कार्यक्रम 16 जनवरी, 1949 (रविवार) को आयोजित किया गया था –संपादक

[1] कीर, पृष्ठ 410.

115

हिंदू कोड बिल, सिविल संहिता की दिशा में एक सही कदम था

सिद्धार्थ कालेज की छात्र–परिषद ने 11 जनवरी, 1950 (बुधवार) को एक छात्र–परिषद आयोजित की थी। संयोगवश डॉ. बी.आर. अम्बेडकर उस समय बंबई में थे। उन्हें वहाँ हिंदू कोड बिल पर विशेष रूप से चर्चा के लिए बुलाया गया। कार्यक्रम सुंदरबाई हॉल में रखा गया। हालांकि वह कार्यक्रम प्रातः 9.00 बजे शुरू होना था, फिर भी हॉल प्रातः 8.00 बजे तक पूरी तरह खचाखच भर चुका था। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को सुनने के लिए बाहर के अनेक प्रतिष्ठितजन भी उपस्थित थे। लाउडस्पीकरों की विशेष व्यवस्था की गई थी।[1]

अपने भाषण में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने कहा :–

"हिंदू कोड बिल को पूर्ण क्रांतिकारी कहना गलत होगा। उन्होंने कहा कि यह बिल प्रगति के नये तरीकों की मंजूरी तो देता है, लेकिन रूढ़िवादी रीति–रिवाजों का विरोध नहीं करता। उन्होंने आगे कहा कि भारत के एक नये गणराज्य के संविधान में एक सकारात्मक निदेश दिया गया था कि सरकार को संपूर्ण देश के फायदे के लिए एक सिविल कोड तैयार करने का यत्न करना चाहिए। उन्होंने बताया कि हिंदू कोड बिल का प्रयोजन हिंदू विधि की कुछ शाखाओं को संहिताबद्ध करना और संशोधित करना है। उसकी महत्ता पर प्रकाश डालते हुए उन्होंने कहा कि देश के एकीकरण की दृष्टि से यह लाभप्रद है कि एक ही प्रकार के कानून हिंदू समाजिक और धार्मिक जीवन में लागू होने चाहिए। उन्होंने अपने श्रोताओं से आगे कहा कि हिंदू कानूनों को इसलिए पुनरीक्षित नहीं किया जा रहा है कि हिंदू उसके पुनरुत्थान का प्रतिरोध करने के लिए कमजोर लोग हैं, बल्कि एकता की खातिर किया जा रहा है। हिंदू संहिता, सिविल संहिता की दिशा में एक सही कदम है। कानून सहज, सुबोध होने चाहिए और क्षेत्रीय अवरोधों को अनदेखा करते हुए संपूर्ण समाज पर लागू होने चाहिए। इसके अतिरिक्त कोई हिंदू समाज में से किसी को भी गोद लेने के लिए स्वतंत्र है और वह विरासत से इंकार करते हुए अपनी पुत्री के पक्ष में वसीयत कर सकता है।

जहाँ तक उस प्रामाणिक ग्रंथ का संबंध है जिसके अधीन संहिता का प्रारूप तैयार किया गया है, उन्होंने कहा कि प्रस्तावित संशोधन हिंदू शास्त्र और स्मृतियों पर आधारित है। संपत्ति दायभाग व्यवस्था से शासित होती है। पितृसवर्ण्य के अंतर्गत बालक पिता की जाति का होता है : कौटिल्य और पाराशर स्मृति द्वारा तलाक का समर्थन किया गया है। अंत में उन्होंने कहा कि संपत्ति पर, स्त्री के अधिकारों का समर्थन वृहस्पति स्मृति में भी किया गया है।[2]

---

[1] जनता, 14 जनवरी, 1950.

[2] कीर, पृष्ठ 417–418

116

हमें यह सुनिश्चित करना चाहिए कि भारत फिर से गुलाम न बने

दिनांक 11 जनवरी, 1950 को अर्थात् बुधवार की शाम नरेपार्क परेल में बंबई अनुसूचित जाति फेडरेशन की एक सभा में उस समय विशाल जन उत्साह देखा गया जब भारतीय संघ के संविधान के प्रारुपण के पीछे गतिशील शक्ति, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को एक पुस्तकाकार स्वर्ण मंजूषा भेंट की गई, जिसमें उस अत्यंत महत्वपूर्ण दस्तावेज की एक प्रति रखी थी।

वह सभा अनुसूचित जाति फेडरेशन के इतिहास में एक मील का पत्थर थी। उसमें दो लाख* से भी अधिक स्त्री–पुरुषों और बच्चों ने भाग लिया था। पार्क से लेकर मुख्य सड़क तक कंधे मिलाकर लोगों की भारी भीड़ जमा थी, जो इससे पहले कभी देखने में नहीं आई।

दलितों के विशाल जुलूस दोपहर बाद के शुरू में ही अनेक स्थानों से पार्क में एकत्र हुए। उनके हाथों में पार्टी के नीले झंडे थे और वे ऊँचे स्वर में जय–जयकार के नारे लगा रहे थे। भीड़ स्वयंसेवकों द्वारा संचालित की गई थी और विशेष अनुशासन रखा गया। जब डॉ. अम्बेडकर पाँच वर्ष बाद शहर में अपने प्रथम सार्वजनिक अभिनंदन में भाग लेने के लिए मंच पर चढ़े, तो लोगों का उत्साह देखते बनता था और अम्बेडकर की जयघोष के नारों से वातावरण गूंज उठा। कानून मंत्री को लगभग 50 मालाओं से लाद दिया गया। बाद में उनकी पत्नी डॉ. सविता अम्बेडकर भी आ गईं। सभा ने उनका भी उत्साहपूर्वक तालियाँ बजाकर स्वागत किया।

फेडरेशन द्वारा उगाहे गए चंदे से एक बहुत बड़ी सुसज्जित मंजूषा खरीदी गई थी। मंजूषा की कीमत चुकाने के बाद बचे दो हजार रुपए भी फेडरेशन के सचिव, श्री जे.जी. भटानकर द्वारा डॉ. अम्बेडकर को भेंट किए गए।

उपहार प्राप्त करने के तुरंत बाद, बोलते हुए डॉ. अम्बेडकर ने अतीत का विस्तारपूर्वक उल्लेख किया। उन्होंने कहा :–

''चूँकि हम सभी चुनावों में कांग्रेस से लड़ रहे हैं इसलिए कांग्रेसी मुझ से इतने नाराज हैं कि उनमें से कुछ तो खुलेआम कहते हैं कि वे किसी को भी संविधान

---

* जनता, 14 जनवरी, 1950

सभा में देख लेंगे लेकिन, मुझे नहीं। वास्तव में, चूँकि हमारी पार्टी की सदस्य संख्या पर्याप्त नहीं थी इसलिए मुझे संविधान सभा में बंगाल से चुनाव लड़ना पड़ा।''

''मैंने संविधान सभा में ही प्रवेश नहीं किया था बल्कि बाद में मुझे संविधान के प्रारुपण का अद्वितीय सम्मान भी सौंपा गया था। यह सम्मान मैं अपने लिए उतना नहीं मानता, जितना पार्टी के लिए। हमें अंग्रेजों और मुसलमानों की कठपुतली कहा गया था। लेकिन हमें अंग्रेजों से सौदेबाजी करनी थी, क्योंकि हम स्वतंत्र नहीं थे और अपने हितों की रक्षा करने के लिए बाध्य थे।''[1]

उन्होंने आगे कहा कि वह अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा के उद्देश्य से संविधान सभा में गए थे, न कि संविधान का प्रारूपण करने की महत्वाकांक्षा से। बहरलाल, कुछ परिस्थितियों के कारण, संविधान के प्रारूपण का उत्तरदायित्व उनके कंधों पर डाला गया और उन्हें गर्व था कि उनका नाम संविधान निर्माताओं के साथ जोड़ा गया है, क्योंकि किसी को ऐसा अद्वितीय मौका जीवन में एक बार ही मिलता है।''[2]

इसके बाद ज्यादा वैयक्तिक तौर पर बोलते हुए डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की, कुछ लोग सोचते है। कि चूँकि मैं राजधानी में हूँ, मेरा फेडरेशन के साथ संपर्क नहीं रहा है और मेरे पैरों के नीचे से जमीन खिसक रही है। लेकिन आज की जनसभा से स्पष्ट है कि मैं पहले की अपेक्षा ज्यादा मजबूत जमीन पर हूँ।

कानून मंत्री ने पूरे प्रभावकारी समारोह के दौरान अपनी गंभीर मुद्रा बनाए रखी। उन्होंने अपने और कांग्रेस के बीच कटु अतीत को याद किया, किंतु दलितों से यह जोरदार अपील की कि वे दूसरे राजनीतिक समूहों से अपने आपको अलग न रखें, बल्कि समाज की भलाई के लिए उनका सहयोग माँगे।

उन्होंने घोषणा की, 'फिलहाल राजनीतिक स्थिति स्पष्ट नहीं है और यह कहना बहुत जल्दबाजी होगी कि हम किसी पार्टी के साथ गठजोड़ करेंगे।' स्वाधीनता पूर्व उनके उद्‌गारों की तुलना में, तनाव के साथ बोलना अजीब लगता था। डॉ. अम्बेडकर ने अपने समाज को झकझोरा और कहा कि वे केवल अपने लिए न सोचें बल्कि संपूर्ण देश के लिए भी सोचें। आगे उन्होंने कहा, ''भारत को मुस्लिमों और अंग्रेजों द्वारा गुलाम बनाया गया, किंतु आज हम स्वतंत्र हैं और हम यह सुनिश्चित करने का प्रयत्न करें कि इतिहास अपने आपको न दोहराये।

[1] स्रोत सामग्री, खंड 1 पृष्ठ 358–360.

[2] कीर, पृष्ठ 418

''हालांकि हमारी कांग्रेस के साथ लंबे अर्से तक अनबन रही फिर भी वर्तमान सरकार ने अनुसूचित जातियों के लिए कुछ किया है। लोकतंत्र में कोई भी अल्पसंख्यक अपने आप अधिक प्राप्त नहीं कर सकता। हम अल्पसंख्यक हैं, और अल्पसंख्यक रहेंगे इसलिए कुछ पार्टियों का सहयोग मांगना आवश्यक है।''

इसके बाद डॉ. अम्बेडकर चुनाव के विषय पर बोले 'हम एक गरीब समाज के लोग और हमारे पास चुनाव में खर्च करने के लिए भारी रकम नहीं है इसलिए मेरा सुझाव है कि चुनाव कोष में वृद्धि करने प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति चार आने प्रति माह की दर से पार्टी के चुनाव कोष में अंशदान करे। हमें यह काम तुरंत शुरू कर देना चाहिए ताकि हम चुनाव से पहले काफी धनराशि जुटा सकें।

एन.पी. सभा समाप्त होने के बाद चार घंटे तक मध्य और उत्तरी बंबई में दलितों ने अपने–अपने घर लौटते हुए शांतिपूर्ण तरीके से सड़कों को जीवंत बना दिया, और उन्होंने डॉ. अम्बेडकर के पक्ष में खूब नारे लगाए।'[1]

बहरहाल डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के भाषण में उस विषय पर कुछ अतिरिक्त पहलू सुनाई दिए, जो बंबई क्रानिकल में छापे गए थे। वे पहलू इस प्रकार थे :–

कानून मंत्री ने कहा कि संविधन प्रारूपण समिति के अध्यक्ष के रूप में उनका चुनाव स्वयं उनके लिए ही अद्वितीय सम्मान नहीं है, बल्कि फेडरेशन को एक राजनीतिक शक्ति के रुप में भी माना गया है।

अतीत में उन्हें विषम बाधाओं से जूझना पड़ा है और बहुत सी बाधाएँ तो ऐसी थीं, जिन्होंने उन्हें अंग्रेजों और मुस्लिम लीग की कठपुतली बना दिया था। पिछले 20 वर्षों से कांग्रेस की फेडरेशन से अनवन रही है और वे इस बात के लिए पक्का इरादा रखते हैं कि फेडरेशन का कोई भी प्रतिनिधि संविधान सभा में स्थान प्राप्त न करे।

उन्होंने कभी सपने में भी नहीं सोचा था कि उन्हें देश का संविधान बनाने का उत्तरदायित्व सौंपा जाएगा। अब विपक्षी लोगों ने भी यह मान लिया है कि फेडरेशन एक राजनीतिक शक्ति है जिसे हल्के में नहीं लिया जा सकता या जिसकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

एन.पी. डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि अब तक फेडरेशन ने संकीर्ण मार्ग अपनाया है अर्थात् अपने हितों को देश के हितों से ऊपर रखा है, और उन्होंने माना कि इसके

[1] स्रोत सामग्री, खंड 1 पृष्ठ 358–360.

लिए वह भी आंशिक रूप से जिम्मेदार हैं। उन्होंने कहा चूँकि अब भारत स्वाधीन हो चुका है, इसलिए अपना दृष्टिकोण बदलने का समय आ चुका है और बेशक, अपने हितों की रक्षा करते हुए, राष्ट्रीय भलाई के लिए प्रयत्न करना है।

उन्होंने आगे कहा कि ब्रिटिश राज के दौरान फेडरेशन ने दूसरे राजनीतिक दलों से अलग रह कर स्वयं अपनी नीति का अनुसरण किया। 'आखिर हम अल्पसंख्यक हैं और अल्पसंख्यक ज्यादा शक्तिशाली राजनीतिक दल के समर्थन के बिना चुनाव में कामयाब नहीं हो सकता।' उन्होंने कहा कि इसीलिए उनके संगठन को आगामी चुनाव में कुछ दूसरे दलों का समर्थन लेना होगा। डॉ. अम्बेडकर ने श्रोताओं से जोरदार अपील की कि वे चुनाव कोष में उदारतापूर्वक योगदान करें।[1]

● ● ●

[1] द बंबई क्रोनिकल, 12 जनवरी, 1950

117

मराठा लोग राष्ट्र के प्रति अधिक निष्ठावान, अधिक कर्तव्यपरायण हैं

27 जनवरी, 1950 को नई दिल्ली के नये महाराष्ट्र भवन, महाराष्ट्रयन इंस्टीट्यूशन में गणतंत्र दिवस बहुत हर्षोल्लास के साथ मनाया गया।[1] इस मौके पर अनेक कार्यक्रम रखे गए। तब डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को इस मौके पर विशेष रुप से आमंत्रित और सम्मानित किया गया। श्री काका साहेब गाडगिल ने डॉ. बाबा. साहेब और श्रीमती अम्बेडकर का स्वागत किया। अभिनंदन का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा–

''मराठा लोग राष्ट्र के प्रति ज्यादा निष्ठावान, ज्यादा कर्तव्यपरायण हैं और वे राष्ट्र के हित में बलिदान देने के लिए हमेशा तैयार रहते हैं। उन्हें गर्व है कि दो मराठा केंद्रीय मंत्रिमंडल में हैं और रिजर्व बैंक का गवर्नर भी मराठा है''। उन्होंने अंत में कहा राजनीति में, विद्या में और बलिदान के मामलों में मराठा लोग बहुत आगे हैं''।[2]

● ● ●

---

[1] जनता, 4 फरवरी, 1950.

[2] कीर, पृष्ठ 419

118

धर्म को हर व्यक्ति विरासत से नहीं, बल्कि तार्किक ढंग से जाँचें–परखें

राजधानी नई दिल्ली, 2 मई, 1950 की रात को पूरे दक्षिण पूर्व एशिया के महान राष्ट्रीय और हित में, उस समय नाटकीय मोड़ आया जब भारत के विधि मंत्री, डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने एक विशाल जनसभा में भगवान बुद्ध की तीन सौवीं वर्षगांठ पर बोलते हुए 7 करोड़ हरिजनों से बौद्ध धर्म अपनाने की माँग की।

बाद में डॉ. अम्बेडकर ने 'भारत' के प्रतिनिधि को बताया कि वह बौद्ध धर्म अपनाने जा रहे हैं। उस सभा में श्रीमती अम्बेडकर भी उपस्थित थीं।

यह भी प्रामाणिक रूप से ज्ञात हुआ कि लगभग 15 दलित अगले दिन दिल्ली में बौद्ध धर्म धारण करेंगे। पता चला कि इसी प्रकार के निर्देश डॉ. अम्बेडकर के देशव्यापी अनुयायियों को भी भेजे गए हैं।

एक दिन पहले भगवान बुद्ध के 'परिनिर्वाण दिवस' अर्थात् त्रियेक परमेश्वर के जन्म के वास्तविक दिन, डॉ. अम्बेडकर भगवान बुद्ध को अपना सम्मान और श्रद्धांजलि प्रस्तुत करने के लिए स्थानीय 'विहार' भी गए थे।

एक उच्च बौद्ध भिक्षु के अनुसार, डॉ. अम्बेडकर ने वहाँ यह प्रार्थना की थी–

बुद्धमं शरणमं गच्छामि, घम्ममं शरणमं गच्छामि, संघमं शरणमं गच्छामि

उन्होंने बौद्ध धर्म के पाँच सिद्धांत भी स्वीकार किए, जो व्यापक रूप से विधिवत् अनुष्ठान जैसे माने जाते हैं।

बौद्ध पुनरुज्जीवन

जब डॉ. अम्बेडकर अपना भाषण दे रहे थे एक प्रथम पंक्ति के बौद्ध भिक्षु जो उस समय वहाँ उपस्थित थे ने कहा कि अब भारत स्वतंत्र हो गया है। बौद्ध धर्म पुनः स्थापित होगा। भारत में संभावित बौद्ध पुनरुज्जीवन की राजनीतिक महत्ता पर जोर देते हुए उन्होंने घोषणा की, कि भारत को अपनी स्वतंत्रता और आध्यात्मिक शक्ति की रक्षा के लिए बौद्ध धर्म की आवश्यकता पड़ेगी।

धारा–प्रवाह हिंदी में दिए गए अपने 30 मिनट के भाषण में डॉ. अम्बेडकर ने इस बात पर अधिक जोर दिया कि बौद्ध पुनरुज्जीवन भारत में शुरू हो चुका है। उन्होंने यह संकेत देकर अपने मत का समर्थन किया कि गणराज्य के राष्ट्रपति को जब ब्राह्मण धर्म में तलाशने से कुछ भी नहीं मिला, तो उन्होंने आजाद भारत के राष्ट्रध्वज पर अशोक चक्र के प्रतीक के लिए बौद्ध धर्म का सहारा लिया। डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, साथ ही बौद्ध धर्म ने भारत गणराज्य को अपना त्रिसिंह

संप्रतीक भी प्रदान किया और जिस समय गणराज्य के प्रथम राष्ट्रपति शपथ ले रहे थे उस ऐतिहासिक अवसर पर भगवान बुद्ध की प्रतिमा स्थापित की गई थी, न कि असंख्य हिंदू देवी–देवताओं में से किसी की।

उन्होंने कहा कि न राम, न कृष्ण न ही कोई भी देवता, वास्तव में भगवान बुद्ध के समतुल्य है। डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि उनसे बड़ा कोई भी संत और नायक पैदा नहीं होगा।

डॉ. अम्बेडकर ने रामायण और महाभारत में से अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए और रामचंद्र तथा भगवान कृष्ण की महानता पर सवाल खड़े किए, जिनके व्यवहार के बारे में लिखा जा चुका है। उन्होंने कहा कि हिंदू धर्म सत्य और मानव के प्रेम को धर्मान्धता के तौर पर प्रतिपादित करता है, जिसके अनुसार कोई किसी बात पर विवाद नहीं कर सकता और अपने अनुयायियों की बहुलता को यथावत कायम रखना चाहता है।

उन्होंने यह कहकर ब्राह्मणों की आलोचना की कि सम्राट के अधिकार के सिवाय सभी अधिकार उन्होंने दृढ़ता से अपने पास रखे, क्योंकि हिंदू शास्त्र के अनुसार, उन अधिकारों के धारक अर्थात् सम्राट को नरक में जाना पड़ जाता है। उन्होंने पूछा कि जिस धर्म का निरंतर तिरस्कार किया जा रहा है, उसमें करोड़ों लोग कैसे आस्था रख सकते हैं?

उन्होंने घोषणा की कि समय आ गया है जब धर्म, वस्तुओं और पशुओं की भाँति पुत्र को पिता से विरासत में न मिले, बल्कि निजी तौर पर स्वीकार करने से पहले हर व्यक्ति उसकी तार्किक ढंग से जाँच–परख करे।

डॉ. अम्बेडकर ने यह स्पष्ट किया कि समाजवादियों और साम्यवादियों की भाँति वह इस बात में विश्वास नहीं रखते कि धर्म व्यर्थ है। उन्होंने साफ शब्दों में कहा कि, 'मैं मानता हूँ मनुष्य के लिए धर्म आवश्यक है। जब धर्म समाप्त हो जाएगा, तो समाज का भी अंत हो जाएगा।' डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा, 'आखिरकार कोई भी सरकार, मानव जाति की रक्षा और उन्हें अनुशासित नहीं कर सकती है जैसा कि धर्म एवं नीति करने में समर्थ हैं।'

बर्मा के राजदूत सर मौंग गाई ने उस सभा की अध्यक्षता की और कहा था कि आज विश्व दुखी और परेशान है, बौद्ध धर्म से उसे शांति और सांत्वना मिलेगी। महाबोधि सोसाइटी के एक पदाधिकारी ने घोषणा की कि सोसाईटी इस बात से बहुत खुश है कि डॉ. अम्बेडकर हमारे साथ शामिल हो गए हैं।

डॉ. अम्बेडकर अगले दिन बंबई जाने वाले थे।[1]

●●●

[1] द भारत, 3 मई, 1950

119

नास्तिक लोगों को अष्टांगी पथ ग्रहण कर लेना चाहिए

25 मई से 6 जून, 1950 तक केंडी (श्री लंका) में वर्ल्ड फैलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट्स' का सम्मेलन आयोजित किया गया था। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने उस सम्मेलन में भाग लिया।

26 मई, 1950 को 27 देशों के प्रतिनिधि 'बौद्ध धर्म का पुनरुत्थान' विषय पर चर्चा करने के लिए 'सत्य के मंदिर' में एकत्र हुए थे। उस सम्मेलन में 'विश्व बंधुत्व' विषयक संकल्प पारित किया गया।

तत्पश्चात् डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने सम्मेलन को संबोधित किया।[1]

डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में कहा –

''मैं एक रुचिबद्ध प्रेक्षक हूँ न कि कोई प्रतिनिधि। मैं यहाँ कुछ अतिगंभीर प्रयोजनों से आया हूँ। शायद आपको मालूम हो कि भारत में ऐसे लोग हैं जो यह सोचते हैं कि समय आ गया है जब भारत में बौद्ध धर्म का पुनरुत्थान करने के प्रयास किए जा सकते हैं, मैं भी उनमें से एक हूँ। मेरे दौरे के निश्चित प्रयोजन ये हैं : पहला– बौद्ध समारोह देखना। धर्मानुष्ठान, धर्म का एक महत्वपूर्ण अंग होता है। तर्कवादी चाहे जो भी कहें, धर्मानुष्ठान धर्म में एक बहुत आवश्यक चीज है। यहाँ आकर मैंने सोचा कि मैं वह अनुष्ठान देख पाऊ, जो बौद्ध धर्म का अभिन्न अंग है।

दूसरे – मैं यह जानना चाहता हूँ कि बौद्ध धर्म का पालन अपनी पुरातन विशुद्धता में कहाँ तक किया जाता है और बौद्ध धर्म तथा बुद्ध के सिद्धांतों से असंगत आस्थाओं से युक्त अंधविश्वास पर कितनी धूल जमी हुई है।

मेरा तीसरा उद्देश्य यह पता लगाना है कि बुद्ध द्वारा स्थापित भिक्षुओं की व्यवस्था समाज की कितनी सेवा कर रही है और क्या वह व्यवस्था अपने लिए तथाकथित 'जीवन की शुद्धता' कायम रखने में लगी हुई है, अथवा क्या यह जनसाधारण की सेवा में लगी हुई है और उसे उस तरह से पूर्ण बनाने के लिए सलाह देती है और उसका निर्माण करती है जिस तरीके से बुद्ध चाहते थे। मैं यह

---

[1] दलित बंधु, 28 मई, 1950

जानने का इच्छुक हूँ कि बौद्ध धर्म किस सीमा तक एक सजीव शक्ति है अथवा क्या यह कोई ऐसी चीज है, जो इस तथ्य के कारण विद्यमान है कि इस देश के लोग पारंपरिक अर्थ में बौद्ध हुआ करते थे तथा इसे विरासत में प्राप्त करने के बाद पीढ़ी दर पीढ़ी आगे बढ़ाते रहते थे। जहाँ तक इस देश का संबंध है, क्या धर्म की गतिशीलता विद्यमान है? क्या धर्म स्थिर है, या इसमें गति है और यह गतिशील है यह पता लगाने का सबसे अच्छा तरीका अध्ययन करना और देश की नौजवान पीढ़ी की रुचि को देखना है कि किस सीमा तक वे लोग धर्म के लिए अपना समय देते हैं, किस सीमा तक धर्म में उनका विश्वास उन्हें मुक्ति प्रदान करता है (मृत्यु के बाद मोक्ष के सैद्धांतिक अर्थ में नहीं, बल्कि लौकिक जीवन में)। बौद्ध देशों को केवल समर्थन नहीं चाहिए, बल्कि धर्म का संवर्धन चाहिए और बलिदान चाहिए। केवल बुद्ध के संदेश पर व्याख्यान देने के लिए भिक्षुओं को भेजने से लोग, उनकी जीवन शैली स्वीकार नहीं कर पाएँगे।

यदि विश्व शांति से आश्वस्त होना है तो केवल भाषण से काम नहीं चलेगा। जो लोग पंथ के गुणों में विश्वास नहीं रखते, उन्हें इसे स्वीकार करने के लिए मनाया जाना चाहिए। वह प्रकट है कि जिन देशों में बौद्ध धर्म विद्यमान है, उन्हें त्याग करना चाहिए, मिशन स्थापित करना चाहिए, धन एकत्र करना चाहिए ताकि वे केवल उपदेशों का प्रसार करने के काम पर ही आगे नहीं बढ़े बल्कि स्त्री–पुरुषों को अष्टांगी मार्ग ग्रहण करने के लिए प्रेरित करें।''[1]

● ● ●

[1] 25 मई से 6 जून, 1950 तक आयोजित सीलोन सम्मेलन :
वर्ल्ड फैलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट्स के प्रथम सत्र की कार्यवाही की रिपोर्ट (बी.ई. 2494).

120

बौद्ध धर्म से लोकतंत्र और समाजवादी पद्धति का मार्ग प्रशस्त हुआ

वर्ल्ड फैलोशिप ऑफ बुद्धिस्ट्स का सम्मेलन श्री लंका में 25 मई से 6 जून, 1950 तक आयोजित हुआ था। डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने सम्मेलन में भाग लिया था।

6 जून, 1950 को कोलंबों में अंतराष्ट्रीय जनसमूह को संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा था –

''जिन लोगों ने भारत में बौद्ध धर्म के उत्थान और पतन का अध्ययन किया है, उनमें से ज्यादातर लोग यह मानेंगे कि इस विषय पर समुचित ढंग से वैसी चर्चा नहीं हुई है, जैसी होनी चाहिए थी। बौद्ध धर्म इतनी ऊँचाइयों पर कैसे पहुँचा और फिर भारत में यह कैसे विलुप्त हो गया, इसके बारे में मुझे कोई प्रामाणिक सामग्री नहीं मिल पाई है।

''किसी विषय को गहनता से जानने के लिए उसकी सुसंगत परंपराओं को ठीक और सुरुचिपूर्ण ढंग से जानना आवश्यक है। इसी प्रकार बौद्ध धर्म की महत्ता भी तब तक समझ में नहीं आएगी, जब तक इस धर्म को जन्म देने वाली वास्तविक परिस्थितियों को न समझ लिया जाए। भारत में हिंदू धर्म सामाजिक विचारधारा की नवीनतम घटना है।

''भारत के धर्म में तीन परिवर्तन हुए। सबसे पहले वैदिक धर्म माना जाता था, बाद में उसके स्थान पर ब्राह्मण धर्म आया और फिर हिंदू धर्म। बौद्ध धर्म का जन्म ब्राह्मण काल में हुआ था। इसका कारण यह था कि बौद्ध धर्म असमता, निरंकुशता और विभिन्न वर्गों में समाज के विभाजन का विरोध करता था, जिसका प्रारंभ भारत में ब्राह्मण धर्म द्वारा किया गया था।

''वैदिक धर्म का पालन करना आसान है। इसमें यज्ञ करना मुख्य पूजा है। वैदिक आर्य असंख्य देवताओं की पूजा करते थे। वे यज्ञ करके उन्हें प्रसन्न किया करते थे। इन देवताओं के लिए की जाने वाली पूजा अवश्यमेव पवित्र और सर्वोपरि होनी चाहिए। भू–संपदा के उस काल में गायें आर्यों की मुख्य संपदा थी। अतः वे

अपने देवी–देवताओं को प्रसन्न करने के लिए गायों की बलि देते थे। इस प्रकार वैदिक धर्म में हिंसा को प्रोत्सहान मिला। ब्राह्मण वैदिक यज्ञ अपनाकर ही समाज को संगठित करने में कामयाब रहे। ब्राह्मणों ने भी समाज को चार वर्गों (वर्णों) – ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में विभाजित किया। समाज का चार वर्णों में विभाजन करने से बड़ी असमताएँ पैदा हो गईं। उन लोगों का कहना था कि ब्राह्मण का जन्म ब्रह्मा के मुख से हुआ है और शूद्रों का जन्म उनके पैर से। क्या कोई यह मान सकता है कि किसी धर्म का आधारभूत सिद्धांत समाज को बांटना हो सकता है? जो भी हो, ब्राह्मण धर्म ने इसी बात को शाश्वत बनाया। दूसरी ओर समता, बौद्ध धर्म का मुख्य लक्षण है। बौद्ध धर्म सबको विचार की स्वतंत्रता और आत्मविकास की स्वतंत्रता प्रदान करता है। हिंसा त्यागना भी बौद्ध धर्म का एक अन्य अनिवार्य उपदेश है। बौद्ध धर्म ने देवताओं को मानने के लिए पशुओं की बलि या किसी प्राणी की बलि देकर मोक्ष प्राप्त करना कभी नहीं सिखाया। मैं तो यह कहूँगा कि भारत में बौद्ध धर्म का उदय उतना ही महत्वपूर्ण था, जितना फ्रांसीसी क्रांति। बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व यह सोचना भी नामुमकिन था कि शूद्र सिंहासन पर बैठ पाएँगे। भारत का इतिहास बताता है कि बौद्ध धर्म के उदय के बाद शूद्रों को सिंहासन पर आरूढ़ देखा गया है। वस्तुतः बौद्ध धर्म से ही भारत में लोकतंत्र की स्थापना और समाजवादी पद्धति का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

''यह बड़ी जटिल समस्या है कि जिस बौद्ध धर्म ने सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर लिया था, वह भारत से कैसे विलुप्त हो गया। 274 ई.पू. तक बौद्ध धर्म की अवस्था के बारे में हमें जानकारी देने के लिए बहुत अल्प सामग्री उपलब्ध है। फिर भी यह देखा गया है कि अशोक के शान काल में बौद्ध धर्म सबसे ज्यादा लोकप्रिय था। यह एक कष्टदायक तथ्य है कि इतना महान और लोकप्रिय धर्म भारत से कैसे विलुप्त हो गया।

''ऐसा प्रतीत होता है कि 185 ई.पू. जब अंतिम मौर्य सम्राट का उसके प्रधान सेनापति द्वारा कत्ल कर दिया गया, तो बौद्ध धर्म का जोरदार विरोध हुआ। अपने धर्म को बचाने के लिए ब्राह्मणों की यह एक विधिपूर्ण कार्रवाई थी लेकिन खेद की बात है कि इतिहासकारों ने उस घटना को पर्याप्त नहीं दिया। बौद्ध साहित्य का परिशीलन करते समय मैंने पाया कि बुद्ध के 90 प्रतिशत अनुयायी ब्राह्मण थे। ब्राह्मण विचार–विमर्श और बहस के लिए बुद्ध के पास आते थे और जब पराजित हो जाते थे, तब वे बुद्ध के निष्ठावान बन जाते थे और अंततः बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेते थे। बौद्ध साहित्य ऐसी घटनाओं से भरा पड़ा है। इसलिए यह कैसे हुआ कि जो बौद्ध धर्म ब्राह्मणों की बहुसंख्या के बीच फला–फूला वह बाद में स्वयं ब्राह्मणों द्वारा नष्ट कर दिया जायेगा।

''मेरी राय में इसका मुख्य कारण कुल देवी की पूजा थी। भारत में ग्राम देवी और राष्ट्र देवी की भाँति कुल देवी भी होती थीं जिनकी पूजा ब्राह्मणों के माध्यम से की जाती थी। जो पुजारी इन देवी–देवताओं की पूजा के लिए जाते थे, उन्होंने महारानियों के माध्यम से राज्य के कार्यों में हस्तक्षेप करना शुरू कर दिया था। बौद्ध धर्म अपनाने के बाद अशोक ने ये रीति–रिवाज बंद कर दिए और ऐसे देवी–देवताओं की प्रतिमाएँ हटा दीं। अशोक ने कहा था, चूँकि मैं बुद्ध में श्रद्धा रखता हूँ, जो ज्योतिपुंज हैं, इसलिए किसी अन्य देवी–देवता की पूजा करने की जरूरत नहीं है।' अशोक की इस कार्रवाई से ब्राह्मण बहुत परेशान हो गए, क्योंकि इससे उनकी आजीविका और शोषण के उनके अनुचित साधन बंद हो गए। उन्होंने इस नुकसान का बदला लेने की शपथ ली।

''ब्राह्मणों का विचार था कि मृत्यु के बाद राजा अपनी गलतियों और कमियों के कारण नरक भोगता है, इसलिए वे शासक बनने के लिए राजी नहीं होते थे बल्कि राजाओं के मुख्य सलाहकार बनना पसंद करते थे। उस नुकसान का बदला लेने के लिए जो उन्हें कुल देवी की पूजा बंद करने के कारण हुआ था, ब्राह्मणों ने केवल सलाहकार बनने का अनुमोदित लक्ष्य त्याग दिया और उन्होंने सत्ता हथियाने की कोशिश की। अपने शुभचिंतक क्षत्रियों की मदद से उन्होंने बौद्ध धर्म के खिलाफ एक संयुक्त ब्राह्मण–क्षत्रिय गठजोड़ बनाया। इस प्रकार भारतीय समाज में ब्राह्मणत्व का पुनः उत्थान बौद्ध, धर्म के पतन का एक कारण है।

''भारत में बौद्ध धर्म के पतन के लिए विदेशी आक्रमण भी जिम्मेदार हैं। यूनानियों ने बौद्ध धर्म को कोई नुकसान नहीं पहुँचाया। इस बात के निश्चित साक्ष्य विद्यमान हैं कि यूनानियों ने बौद्ध गतिविधियों के लिए वित्तीय सहायता उदारतापूर्वक दी थी। हूणों ने भारत पर आक्रमण किया और गुप्त राजाओं से पराजित होने के बाद वे भारत में रहने लगे। इससे पहले हूणों ने बौद्ध धर्म को नष्ट करने की कोशिश की थी। बौद्ध धर्म को सबसे पहले गहरा प्रहार मुस्लिम आक्रमणों से मिला। उन्होंने बुद्ध की प्रतिमाओं को नष्ट कर दिया और भिक्षुओं को मार डाला। उन्होंने महान नालंदा विश्वविद्यालय को बौद्धों का किला समझ लिया और उन्हें सैनिक समझकर असंख्य भिक्षुओं की हत्या कर डाली। जो थोड़े बहुत भिक्षु उस नरसंहार से बच गए थे, वे नेपाल, तिब्बत और चीन जैसे पड़ोसी देशों को भाग गए।

''मेरे कुछ हिंदू मित्र अक्सर पूछते हैं कि भारत में हिंदू धर्म भी मूर्ति पूजा को मानता है फिर यह कैसे बचा और बौद्ध धर्म समाप्त हो गया। मेरा जवाब है कि धर्म चाहे कोई भी हो इसे बचाने के लिए पुजारी समुदाय होना आवश्यक है। बौद्ध

भिक्षुओं के अभाव के कारण बौद्ध धर्म का पतन हुआ। बौद्ध धर्म का पुनरुत्थान करने के लिए एक दूसरा पुजारी वर्ग खड़ा करने के लिए कुछ बौद्धों ने बाद में प्रयास किए थे, किंतु उनके प्रयास असफल रहे। लेकिन हिंदू धर्म के साथ यह बात नहीं है। ब्राह्मण का बेटा जन्म से पुजारी होता है, इसलिए उनके धर्म को बचाने के लिए कोई पृथक, पुजारी समुदाय आवश्यक नहीं है। यही कारण है कि हिंदू धर्म मुस्लिम आक्रमण के बाद भी बचा रहा। इसके अलावा बौद्ध धर्म एक ऐसा धर्म है, जिसका पालन करना कठिन है जबकि हिंदू धर्म ऐसा नहीं है। इसके अतिरिक्त भारत में राजनीतिक वातावरण भी बौद्ध धर्म की प्रगति के लिए अनुकूल नहीं था।

''मैं भारत में अनेक लोगों के इस सुझाव से सहमत नहीं हूँ कि शंकराचार्य की तर्क विद्या के कारण बौद्ध धर्म समाप्त हुआ था। यह तथ्यों के प्रतिकूल है, क्योंकि बौद्ध धर्म शंकराचार्य के निधन के बाद भी कई शताब्दियों तक विद्यमान रहा। मेरी राय में शंकराचार्य भी बौद्ध थे। उनके गुरू भी बौद्ध थे। यह ठीक है कि भारत में वैष्णव धर्म और शैव धर्म के उदय के कारण बौद्ध धर्म का पतन हुआ था। ये दो ऐसे धर्म थे जिन्होंने बौद्ध धर्म की अनेक अच्छी बातों को अपना लिया था और अपने धर्म में मिला लिया था। आज हिंदू धर्म एक बहुत ही परिवर्तित रूप में विद्यमान है। पहले हिंदू धर्म हिंसा की शिक्षा देता था और हिसां करता था। अब उसने अहिंसा का पाठ पढ़ाना शुरू कर दिया है। यह तत्व बौद्ध धर्म से लिया गया है। बौद्ध धर्म भौतिक रूप से भले ही अदृश्य हो गया हो, किंतु आध्यात्मिक शक्ति के रूप में यह आज भी भारत में विद्यमान है।''[1]

● ● ●

[1] बौद्धधर्म ही मानव धर्म (मूल हिंदी में) – स्पीच ऑफ कोलंबो (श्रीलंका) 6.6.1950, पुनर्मुद्रित : डॉ. अम्बेडकर ऑन बुद्धिज्म : संपादक डी.सी. अहीर, पृष्ठ 111–114.

121

मैं अपना शेष जीवन बौद्धधर्म के पुनरुत्थान और उसके प्रसार में लगाऊँगा

भारत सरकार के विधि मंत्री डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने लोगों से बौद्धधर्म अपनाने की अपील की।

उन्होंने कहा ''वर्तमान बौद्धधर्म लगभग 2000 वर्ष पहले भी ऐसा ही था'' और अब भी बौद्धधर्म है, लेकिन मुस्लिम आक्रमण के बाद और अन्य कारणों से इसकी विशुद्धता खत्म हो गई है और इसमें कूड़ा–कड़कट मिल गया है।''

डॉ. अम्बेडकर ने 29 सितंबर, 1950 (शुक्रवार) की रात को वर्ली में बंबई के बुद्ध मंदिर में बोलते हुए इस विचार की निन्दा की कि राजनीतिक स्वाधीनता से देश की सारी बुराइयाँ खत्म हो जाएगी। उन्होंने कहा, ''जब तक विचार निर्मल न हों तब तक रोजमर्रा के जीवन में गलत काम और आचार के नियमों के प्रति पूर्ण तिस्कार बना रहेगा। जब तक आदमी को यह मालूम न हो कि आदमी के साथ कैसा बर्ताव करना है और वह आदमी–आदमी के बीच अवरोध पैदा करे तब तक भारत कभी भी समृद्ध नहीं हो सकता।

''इन सब मुसीबतों को खत्म करने के लिए भारत को निश्चय ही बौद्धधर्म अपना लेना चाहिए। बौद्धधर्म ही ऐसा धर्म है, जो नैतिक नियमों पर आधारित है और सिखाता है कि आम आदमी की भलाई और अच्छाई के लिए कैसे काम किया जाए।''

डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि वह अपना शेष जीवन भारत में बौद्धधर्म के पुनरुत्थान और प्रसार में लगाएँगे।[1]

● ● ●

---

[1] द संडे न्यूज, 1 अक्तूबर, 1950.

122

बिल का उद्देश्य, स्त्रियों की सामाजिक प्रगति का था

दिनांक 26 दिसंबर, 1950 को डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने अनुसूचित जाति फेडरेशन की बेलगाम जिला शाखा के तत्वाधान में 50,000 लोगों की एक सभा को संबोधित करते हुए कहा –

'हिंदू कोड बिल' का प्रारूप उन्होंने तैयार किया था। भारत में स्त्रियों में नैतिक साहस की कमी और चरित्र बल की कमी इस में बाधक रही थी। डॉ. अम्बेडकर ने घोषित किया कि कोई भी विख्यात स्त्री नेता हमारी स्त्रियों की सामाजिक प्रगति में वास्तविक रुचि नहीं रखती।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा 'मैंने इस बिल का प्रारूप' स्मृतियों के निर्देशों के अनुसार तैयार किया था। 'स्मृतियाँ' स्त्रियों को अनेक अधिकार प्रदान करती है। इस बिल का एकमात्र उद्देश्य स्त्रियों की सामाजिक प्रगति में कानून की बाधा को दूर करना था। स्वाधीनता धन पर निर्भर हैं और स्त्री को अपनी आजादी को कायम रखने के लिए अपने धन और अधिकारों को विशेष रूप से सुरक्षित रखना चाहिए।

डॉ. अम्बेडकर ने हिंदू कोड बिल की तुलना ऐसे दूध से की जिसमें कड़वा अम्ल मिलाकर दूषित कर दिया गया है। कुछ रूढ़िवादी लोगों और यहाँ तक स्त्रियों द्वारा भी जिन के फायदे के लिए यह बिल पेश किया गया था, लाए गए आंदोलनों का उल्लेख करते हुए उन्होंने टिप्पणी की, 'मैं हर किसी को यह चुनौती देता हूँ कि वह मुझे दिखाए कि क्या बिल की एक भी धारा 'स्मृतियों' के निर्देशों पर आधारित नहीं है।'[1]

● ● ●

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 26 दिसंबर, 1950, 'हिंदू कोड बिल का विरोध : डॉ. अम्बेडकर की आलोचना' पुनर्मुद्रित भारिल, पृष्ठ 101–102.

123

अनुसूचित जातियों को राजनीतिक अलगाव छोड़ देना चाहिए

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 12 जून, 1951 को बंबई में भाषण दिया था।

"अनुसूचित जातियों को अपने राजनीतिक अलगाव को छोड़ देना चाहिए और हमारी नई आजादी को मजबूत करने के लिए अन्य समुदायों के साथ सहयोग करना चाहिए। लेकिन ऐसे सहयोग में अनुसूचित जाति फेडरेशन का पृथक, अस्तित्व बनाए रखना चाहिए। आपको कांग्रेस के प्रति अपनी नीतियाँ पूरी तरह बदलनी होंगी। अब तक कांग्रेस के साथ हमारे संबंध विपक्षी के संबंध रहे हैं। राजनीतिक क्षेत्र में हम एक दूसरे के शत्रु रहे हैं। अब तक हम अपने दृष्टिकोण में संकीर्ण रहे हैं, क्योंकि हमारे सामने एकमात्र हित, हमारे समाज का हित रहा है। अब हमने आजादी प्राप्त कर ली है, तो हमें अपना दृष्टिकोण पूरी तरह बदल लेना चाहिए और अपनी जाति के हित की दृष्टि से दूसरों के साथ सहयोग करना चाहिए तथा अपनी नई आजादी को सुदृढ़ करने में मदद करनी चाहिए।

"यह कहना गलत है कि फेडरेशन की नींव धराशायी होने वाली है। वास्तव में हमने शक्ति प्राप्त की है और हम सुदृढ़ रूप से एकजुट हैं, लेकिन 1946 के चुनाव में फेडरेशन की बहुत बुरी पराजय हुई। मैंने देखा कि हममें से कुछ का अपनी जाति के हितों की रक्षा के लिए संविधान सभा में प्रवेश करना अनिवार्य है। तब सभी दरवाजे और खिड़कियाँ हमारे लिए बंद थीं। मुझे स्वयं भरोसा नहीं था, लेकिन फिर भी मैं बंगाल से चुनाव में खड़ा हो गया और जीत गया।

"उस समय मुझे लेश मात्र ख्याल नहीं था कि मैं समग्र राष्ट्र के लिए कुछ करूँगा। देश का संविधान बनाने की जिम्मेदारी मेरे कंधों पर डाली गई। अब मैं यह महसूस करता हूँ कि मेरे लिए और समाज के लिए यह एक स्वर्णिम मौका था। इस संविधान की रचना करके मैंने हिंदुओं को समझाया जो हमें पिछले 20 वर्ष से मुझे और मेरी पार्टी को राष्ट्र–विरोधी अपशब्द कहते रहे हैं कि वे एकदम गलत हैं। हम भी अन्य किसी की भाँति एक पक्के राष्ट्रवादी संगठन हैं।

"अब समय बदल गया है और हम हिंदू प्रभुत्व के समय से भिन्न हैं। उस

समय हमें अपने भविष्य पर भरोसा नहीं था। अब हमारा अंतिम लक्ष्य अपनी नई आजादी को सुदृढ़ बनाना होना चाहिए।

''फेडरेशन को अपना अलगाव छोड़ देना चाहिए। हम एक छोटी सी जाति हैं और यदि हमें अपनी यथास्थिति बनाए रखनी है तो हमें आगामी चुनाव में किसी राजनीतिक दल के साथ सहयोग करना होगा।

एन.पी. लेकिन इस प्रश्न पर फैसला उस समय देश में विद्यमान राजनीतिक स्थिति की रोशनी में किया जाएगा।''

● ● ●

124

मैं उस चट्‌टान की भाँति हूँ जो पिघलती नहीं, बल्कि नदियों की दिशा बदल देती है

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने चुनाव अभियान के दौरान 27 अक्तूबर, 1951 को रामदासपुर, जालंधर, पंजाब में भाषण दिया।

उन्होंने कहा—

''प्यारे भाइयो और बहनो !

''मुझे पहले भी पंजाब का दौरा करने का ख्याल आया था, लेकिन मैं यहाँ नहीं आ सका और मुझे ज्ञात हुआ है कि जालंधर में अनेक लोग एकत्र हुए थे और यह देखकर निराश हुए थे कि मैं वहाँ नहीं आया। आशा है आप सब को जो असुविधा हुई, उसके लिए मुझे माफ करेंगे। हालांकि मेरे यहाँ न आने से बहुत सारे लोगों को बहुत अधिक असुविधा हुई लेकिन मैं असहाय था और ऐसा निम्नलिखित कारणों से हुआ था। पहला, कांग्रेस सरकार में अपने 4 वर्षों के दौरान मेरे पास सरकारी काम का बहुत अधिक बोझ रहा और मुझे यहाँ आने का समय नहीं मिला। दूसरा, इन सब वर्षों में मेरा स्वास्थ्य भी ठीक नहीं रहा और अब भी बहुत ठीक नहीं है। तीसरा, पूरे भारत के अछूत चाहते हैं कि मैं पूरे भारत का दौरा करूँ और उनसे बात करूँ। लेकिन आप भलीभाँति समझ सकते हैं कि हमारा देश इतना बड़ा 'महाद्वीप' है कि एक आदमी के लिए दो वर्ष में भी पूरे देश का दौरा करना संभव नहीं है। इसलिए मैं लोगों की इच्छा पूरी नहीं कर सका, और जब वे मुझे चाहते थे तब मैं यहाँ नहीं आ सका। इसलिए मैं चाहता हूँ कि हमारे सब लोग अपने पैरों पर पर खड़े हों और संगठित हों ताकि वे मेरी सहायता के बिना तूफान का मुकाबला कर सकें और मुझ पर बहुत ज्यादा जोर न डालें।

''व्यक्ति को 55 वर्ष की आयु के पश्चात् राजनीति छोड़ देनी चाहिए, क्योंकि सरकार भी 55 वर्ष की आयु के बाद सरकारी सेवक को नोटिस दे देती है कि वह अब सेवा के लायक नहीं रहा और उसे सेवानिवृत्त हो जाना चाहिए। लेकिन वर्तमान युग के राजनेता अपनी राजनीति 55 वर्ष की आयु के बाद शुरू करते हैं, ताकि वे अपनी आजीविका कमा सकें, भले ही वे देश की सेवा करने में समर्थ हों या नहीं। उनके दिमाग में केवल एक बात होती है, वह है अपने लिए कुछ प्राप्त करना। मेरा कोई स्वार्थ नहीं

है। मैं राजनीति में अपने स्वार्थ के लिए नहीं हूँ, बल्कि मैं अपने समाज की खातिर राजनीति में हूँ। मैं 1920 में राजनीति में आया था और तब से मैंने राजनीति में भाग लिया और इस समय तक मैं लगभग अपने जीवन के 30 वर्ष अपनी कौम की सेवा में बिता चुका हूँ। हालांकि मैं राजनीति छोड़ना चाहता हूँ, लेकिन समाज को संगठित करने की आवश्यकता को सोचकर मैं राजनीति में रहने के लिए बाध्य हूँ। इन 30 वर्षों में से 8 वर्ष मैं सरकार का सदस्य रहा। मैं नहीं जानता कि कोई ऐसा राजनेता है जो लगातार इतने लंबे समय तक राजनीति में रहा हो। मैं 8 वर्ष सरकार में रहा और यदि मैं चाहता तो हमेशा रह सकता था। मुझे इसका कोई अभिमान नहीं है। मैं जानता हूँ कि मेरी योग्यताओं को देखते हुए यदि मैं वहाँ रहना चाहूँ, तो मुझे कोई निकाल नहीं सकता लेकिन अपने समाज के लक्ष्य के कारण मुझे कांग्रेस सरकार की सदस्यता से त्यागपत्र देना पड़ा। मैं आप लोगों को भरोसा दिलाना चाहता हूँ, कि मैं जहाँ कहीं भी जाता हूँ मेरे मन में अपनी जाति की भलाई हमेशा रहती है।

''जब मैं पीएचडी की डिग्री लेकर इंग्लैंड से आया था, तो भारत में किसी के पास ऐसी योग्यता नहीं थी। इसलिए जब मैं बंबई पहुँचा और उस मुहल्ले में रहने लगा जहाँ से मैं गया था तो बंबई सरकार ने बड़ी कठिनाई के बाद मेरा घर ढूंढा क्योंकि कोई भी नहीं जानता था कि मैं कहाँ रहता हूँ। वह एक अनजान जगह थी, और सरकार ने मुझसे पॉलिटिकल इकोनॉमी के प्रोफेसर का पद स्वीकार करने के लिए कहा, लेकिन मैंने इंकार कर दिया। यदि मैं वह पद स्वीकार कर लेता, तो मैं कम से कम पब्लिक इंस्ट्रक्शन्स का निदेशक होता। मैंने उस पद को लेने से इसलिए इंकार कर दिया था, क्योंकि मेरे मन में अपने समाज की सेवा करने की उत्कट भावना थी जो मैं उस नौकरी में रहकर नहीं कर सकता था। आप जानते हैं कि कोई भी सरकारी सेवक अपने समाज की सेवा नहीं कर सकता, क्योंकि उसे सरकार की इच्छाओं के अनुसार चलना होता है और सरकार की नीति का अनुसरण करना होता है।

''दो–तीन वर्ष कुछ धन कमाने के बाद मैं उच्च अध्ययन के लिए पुनः इंग्लैंड गया और बैरिस्टर बनकर लौटा। जब मैं बंबई पहुँचा, तो पुनः बंबई सरकार ने मुझ से जिला न्यायाधीश का पद स्वीकार करने के लिए कहा। मुझे 2000/– रुपए प्रतिमास देने की पेशकश की गई और यह वायदा किया गया कि मैं कुछ समय बाद उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बन जाऊँगा लेकिन मैंने उसे भी स्वीकार नहीं किया, हालांकि उस समय अन्य स्रोतों से मेरी आय केवल 200/– रुपए थी।

''सन् 1942 में, मेरे सामने दो सवाल थे, एक था उच्च न्यायालय के न्यायाधीश के रूप में सेवा करना और दूसरा था वायसराय की कार्यकारी परिषद् के सदस्य के रूप में भारत सरकार में शामिल होना। यदि मैं उच्च न्यायालय में चला जाता,

तो मेरा वेतन प्रतिमास 5000/– रुपए होता और सेवानिवृत्ति के बाद 1000/– रुपए की पेंशन मिलती, लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। मैं राजनीति में चला गया। मेरा जन्म एक अछूत जाति में हुआ है और मैं अपनी जाति के लिए मरूँगा, अतः मेरे समाज का लक्ष्य मेरे लिए सर्वोपरि है। मैं किसी पार्टी या संगठन में शामिल नहीं हुआ। मैं स्वतंत्र रहा। जब मैं कांग्रेस सरकार में था, तो मैं अपने लोगों के प्रति सच्चा रहा। बहुत से लोग सोचते हैं कि मैं कांग्रेस पार्टी में शामिल हो गया हूँ, क्योंकि मैंने कांग्रेस सरकार में कैबिनेट मंत्री का पद स्वीकार कर लिया था। आलोचकों का कहना है कि डॉ. अम्बेडकर कांग्रेस में शामिल हो गए हैं, इसलिए अनुसूचित जाति के लोग अनुसूचित जाति फेडरेशन में क्यों बने रहें। इस बारे में मैंने लखनऊ में स्पष्ट किया था कि मिट्टी और पत्थर दो भिन्न चीज हैं। वे आपस में कभी मिश्रित नहीं हो सकते। पत्थर पत्थर रहेगा, मिट्टी मिट्टी रहेगी। मैं एक चट्टान की तरह हूँ जो पिघलती नहीं, बल्कि नदियों की दिशा बदल देती है। मैं कहीं भी रहूँ, मैं किसी के भी साथ रहूँ मैं कभी भी अपनी पृथक, पहचान नहीं खोऊँगा। यदि कोई मेरा सहयोग मांगेगा तो मैं अच्छे काम के लिए प्रसन्नतापूर्वक सहयोग दूंगा। मैंने अपनी पूरी ताकत से 4 वर्ष तक कांग्रेस के साथ सहयोग किया और अपनी मातृभूमि की सेवा में पूरी निष्ठा से लगा रहा। लेकिन इन सब वर्षों के दौरान कभी कांग्रेस संगठन में शामिल होने की कोशिश नहीं की।

''हम उस पार्टी के साथ हाथ मिलाना चाहते हैं जो हमारे विचार में अनुसूचित जाति के लोगों से सहानूभूति रखते हैं और जो हमारे लोगों की व्यथाओं को दूर करने के लिए प्रयास करेंगे। लेकिन एक भी ऐसी पार्टी नहीं है, जिसे हमारे लोगों सहानुभूति हो सभी स्वार्थी हैं।

''यहां मैं चुनाव के सिलसिले में आया हूं। मैं आपको बताना चाहता हूं कि जब तक आप एकजुट नहीं होंगे, तब तक कामयाब नहीं होंगे। कामयाब होने के लिए या तो शक्तिशाली हो या धनवान हो। हमारी सफलता के लिए इनमें से एक अनिवार्य है, लेकिन हमारे पास न तो धन है और न ही बहुमत। मारवाड़ियों और बनियों के पास शक्ति नहीं है, लेकिन उनके पास धन है, इसलिए वे धन से कोई भी चीज खरीद सकते हैं। वे धन से पुलिस एवं न्यायालय को भी खरीद सकते हैं। हमारे लोगों के पास न तो शक्ति है और न ही धन है। गांवों में हमारे लोग कम संख्या में हैं और उन्हें हमेशा सवर्ण हिंदुओं तथा अन्य उच्च सवर्ण लोगों की कृपा पर रहना पड़ता है। हमारे लोगों को सभी प्रकार के दुख दिये जाते हैं और जब वे पुलिस पदाधिकारियों से शिकायत करते हैं तो उन्हें सुना नहीं जाता। जब वे शिकायत करते हैं तो उन्हें गालियां भी दी जाती हैं। ऐसी परिस्थितियों में यदि हमने कोई

चीज हासिल की है तो वह है कुछ राजनीतिक अधिकार। यदि हम अनुसूचित जाति फेडरेशन के झंडे तले एकजुट होंगे, तो हम उन अधिकारों को प्राप्त कर सकते हैं और अपने समाज को अव्यवस्था से बाहर निकाल सकते हैं।

''लेकिन हम एक शक्ति प्राप्त कर सकते हैं और वह है राजनीतिक शक्ति। यह शक्ति हमें हासिल करनी होगी। इस शक्ति से लैस होकर हम अपने लोगों के हितों की रक्षा कर सकते हैं।

'क्या आपको भरोसा है कि इस देश की आजादी से आपको यह शक्ति मिल जाएगी।? हम कभी भी देश के स्वाधीन होने के खिलाफ नहीं थे, लेकिन हम एक सवाल का सीधा जबाव चाहते थे। आजाद भारत में हमारा भाग्य क्या होगा? मैंने गांधी जी और दूसरे कांग्रसी नेताओं के सामने भी यह सवाल उठाया था। केवल एक ही सवाल है कि स्वराज्य में हमारे लोगों की स्थिति क्या होगी? क्या हम आज की भांति वही भंगी और चमार बने रहेंगे? क्या हमारे बच्चे आज की तरह विद्यालयों में प्रवेश नहीं पा सकेंगे और हमारे लोग उसी प्रकार दुःख भोगते रहेंगे, जिस प्रकार गांवों में अब भोग रहे हैं। हमारे लोगों का कया होगा? गोलमेज सम्मेलन में यह सवाल दोबारा उठाया गया था कि हम स्वराज चाहते हैं अथवा नहीं? मैंने गांधी जी से पूछा था जिन्होंने इस प्रस्ताव की पहल की थी, कि वह भारत को स्वराज्य मिलने पर गरीब लोगों के लिए क्या करेंगे? क्या हमें वैसे रक्षोपाय दिये जाएंगे जो मेस्लिमों, सिखों, ईसाइयों और एंग्लो इण्डियन को दिये जाने के लिए प्रस्तावित है। लेकन जब 1932 मेंअनुसूचित जाति के लोगों को पृथक अधिकार दिये गये, तो गांधी जी ने तब तक आमरण अनशन शुरू कर दिया था जब तक अनुसूचित जातियों के पृथक निर्वाचन मंडल के इस उपबंध को निरसित नहीं कर दिया जाता। उस समय हमारे बीच एक समझौता हुआ। लेकिन आज जो कुछ हो रहा है वह उस समझौते से बिल्कुल भिन्न है। उस समय उन्होंने वायदा किया था कि कांग्रेस के टिकट पर कोई भी उम्मीदवार अनुसूचित जाति फेडरेशन के उम्मीदवारों के खिलाफ खड़ा नहीं किया जाएगा। हम आरक्षित स्थानों पर अपने लोगों को भेजना चाहते हैं, लेकिन कांग्रेस पार्टी इसमें हस्तक्षेप कर रही है। वे हमारी आरक्षित सीटों पर उन लोगों को खड़ा करने की कोशिश कर रही है जो मूर्ख हैं और स्वार्थी हैं, जो कांग्रेस के पिट्ठू होंगे। जब कोई ब्राह्मण या बनिया कांग्रेस का टिकट मांगता है तो उससे एक सवाल पूछा जाता है वे यह जानना चाहते हैं कि वह कितनी बार जेल गया है। मैं कांग्रेस से पूछना चाहता हूं कि वे यही प्रश्न अनुसूचित जाति के लोगों से क्यों नहीं पूछते, जो कांग्रेस का टिकट मांगते हैं? और वे केवल अनपढ़ तथा अनजान लोगों को क्यों चुनते है।

''संसद में अनुसूचित जाति के 30 लोग हैं। मैं उनसे पूछता हूँ कि उन्होंने वहां क्या किया है? उन्होंने कोई सवाल नहीं पूछा, उन्होंने कोई संकल्प पेश नहीं

किया। और उन्होंने संसद में विचारार्थ कोई विधेयक प्रस्तुत नहीं किया। यदि बाहर से कोई आये और देखे कि संसद के 30 सदस्यों ने कोई भी शिकायत पेश नहीं की है तो वह सोचेगा कि हमारे लोग ठीक–ठाक हैं और उन्हें किसी विशेष रियायत की जरूरत नहीं है। इसलिए हम अपने सच्चे प्रतिनिधियों को भेजना चाहते हैं जो शिकायतों के निवारण के लिए विधानसभाओं के सामने हमारी शिकायतें रखेंगे।

''पहले चुनाव से ही हम कांग्रेस के खिलाफ लड़ रहे हैं, क्योंकि हमारे अधिकारों में अनावश्यक रूप से हस्तक्षेप कर रही है। कांग्रेस पार्टी के नेता पंडित नेहरू को देखिए, उन्होंने पिछले 20 सालों में दो हजार भाषण दिये हैं, लेकिन उन्होंने अनुसूचित जातियों की भलाई के बारे में एक बार भी नहीं बोला। इस बात से आप समझ सकते हैं कि पार्टी को हमारे लोगों से कितनी सहानुभूति हैं उनके नेता ही बहुत अधिक हठधर्मी हैं। पंडित नेहरू हमेशा मुस्लिमों की बात करते हैं। मैं नहीं चाहता, कि मुस्लिमों की अपेक्षा की जाए, लेकिन मैं चाहता हूँ कि मुस्लिम उस समुदाय की कीमत पर मौज न करे, जिसे और अधिक संरक्षण की जरूरत हैं। मैंने सुना है कि कुछ लोग पंडित नेहरू के पास गये थे और उनसे अनुरोध किया था कि अनुसूचित जातियों के लिए कुछ किया जाए, लेकिन पंडित नेहरू ने उन्हें बताया कि उनके लिए बहुत कुछ किया गया है और उन्हें अब किसी विशेष चीज की जरूरत नहीं है। बंटवारे के समय, जब पाकिस्तानी प्राधिकारीयों ने हमारे लोगों से पाकिस्तान में रहने के लिए कहा ताकि उन्हें गंदगी के काम खुद न करने पड़े, तो मैंने गरीब अनुसूचित जातियों की निकासी के लिए कुछ करने के लिए पंडित नेहरू से कहा था, लेकिन पंडित नेहरू ने कुछ नहीं किया। मैंने अपने लोगों को निकालने के लिए दो व्यक्ति पाकिस्तान भेजे थे और हमारी महार बटालियन भी गरीब अनुसूचित जातियों की रक्षा के लिए वहां भेजी गई थी। यदि कांग्रेस नेता को हमारे लोगों से इतनी–सी सहानुभूति है तो प्रश्न है यह कि कांग्रेस हमारे लिए क्या करेगी।

''पंजाब विधानसभा में 120 सीटों में से अनुसूचित जातियों के लिए 21 सीटें आरक्षित थीं और संघीय संसद में तीन सीटें आरक्षित थी। मैं उन सब दलों से जो इन आरक्षित सीटों पर अपनी पसंद के उम्मीदवारों को खड़ा करना चाहते हैं और अनुसूचित जातियों के साथ सहानुभूति दिखाना चाहते हैं एक सवाल पूछना चाहता हूं कि वे क्यों आरक्षित सीटों पर ही उम्मीदवारों को खड़ा करते हैं और साधारण सीटों पर उन उम्मीदवारों को खड़ा क्यों नहीं करते? यदि वे निष्ठावान हैं तो उन्हें हमारे लोगों के लिए साधारण सीटें देनी चाहिए। ये सब पार्टियां हमसे वह सब छीन लेना चाहती हैं, जो कुछ हमने बड़ी कठिनाई के बाद हासिल किया है।

''मैं आप लोगों को एक बताना चाहता हूँ कि राजनीतिक शक्ति के बिना हम इस दुनिया में नहीं रह सकते। हमने प्रांतीय विधानसभाओं में और संघीय संसद में सीटों का आरक्षण तो प्राप्त कर लिया है, लेकिन यह केवल 10 वर्ष के लिए है और कोई नहीं कह सकता कि 10 साल के बाद क्या होगा। यदि हमारे सही प्रतिनिधि विधानसभाओं और संसद में नहीं भेजे जाएंगे तो हमारे सब प्रयास बेकार हो जाएंगे और यदि वे भेजे जाएंगे, तो कुछ न कुछ परिणाम अवश्य निकलेगा। अन्यथा शासन में और स्थानीय निकायों में हमारी कोई आवाज नहीं हो सकती।

''अब भारत में राजनीति का परिदृश्य बदल गया है। पहले कांग्रेस स्वराज्य के लिए लड़ रही थी। इसलिए सब लोग उसमें शामिल हो गये। जिन लोगों ने कांग्रेस का विरोध किया, उन्हें राष्ट्रद्रोही माना गया, लेकिन अब हालात बदल गये हैं। पंजाब के राष्ट्र विरोधी कांग्रेसी पहलवानों को देखिए। एक समय था जब भार्गव और सच्चर भाइयों जैसे थे। उन्होंने एक दूसरे के साथ शांतिपूर्ण रहने का वायदा किया था, लेकिन अब वे सबसे बड़े दुश्मन हैं। पेपर फाइल करने की अंतिम तारीख 5 नवम्बर है और आज 27 अक्टूबर है, लेकिन कांग्रेसी उम्मीदवारों की सूची पंजाब से अभी तक नहीं भेजी गई है। ये दोनों लोग प्रधानमंत्री बनने को आतुर हैं। बिहार में भी यही हो रहा है। मैं यह देखकर चकित हूँ कि कांग्रेस, जो विभाजन के समय इतनी ताकतवर थी, थोड़े ही समय में इतनी कमजोर हो गई। आज गांधी टोपी वाला आदमी सज्जन नहीं समझा जाता, लोग कहते हैं कि सज्जन कांग्रेसी का होना नामुमकिन। अब कांग्रेस पुरानी पड़ गई है और वह दूसरों के साथ लड़ने में समर्थ नहीं है। यह अपनी स्वाभाविक मौत मर जाएगी।

''यदि आप लोग अनुसूचित जाति फेडरेशन के लिए वोट देंगे, तो मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि हमारे उम्मीदवार आगामी आम चुनाव में जीत कर आयेंगे। इसमें कोई संदेह नहीं है। केवल शर्त यह है कि आप हमारे सच्चे प्रतिनिधियों को वोट दें। मतदान के दिन सभी स्त्री–पुरुष काम से छुट्टी लेकर मतदान करने जाएं।

''अनुसूचित जातियों के लिए सीटों का आरक्षण केवल 10 वर्ष के लिए है। मैं चाहता था कि यह आरक्षण तब तक रहे जब तक अस्पृश्यता है, लेकिन कांग्रेसी नेता स्वर्गीय बल्लभ भाई पटेल ने हमारा विरोध किया। इस प्रकार अन्य लोगों की भी, जो समिति में थे, सरदार बल्लभ भाई पटेल का पक्ष लेना पड़ा, क्योंकि वे लोग पटेल की पार्टी के थे। इसलिए हमें विधानसभाओं में अपने सही प्रतिनिधि भेजने की कोशिश करनी चाहिए, ताकि वे हमारे अधिकारों की रक्षा कर सके और 10 वर्षों के बाद भी आरक्षण प्राप्त करने की कोशिश कर सकें। जो लोग दूसरी पार्टियों से टिकट लेने की कोशिश कर रहे हैं वे यह भूल जाते हैं कि 10 वर्षों के बाद वे कहीं

के नहीं रहेंगे। दूसरी कोई भी पार्टी उनसे यह नहीं कहेगी कि वे उनके टिकट पर खड़े हों। आज अन्य पार्टियां केवल हमारी वोटें पाने के लिए और हमारी सीटें हथियाने के लिए चिंतित है, न कि हमसे सहानुभूति रखने के लिए।

''जब विभिन्न पार्टियों को भिन्न–भिन्न प्रतीक चिह्न देने का समय आया तो हमारी पार्टी अर्थात् अनुसूचित जाति फेडेरशन को भी एक अखिल भारतीय दल के रूप में माना गया। दूसरे दलों ने अपने लिए बैल, घोड़े, गधे आदि प्रस्तावित किये। आपकी सुविधा के लिए मैंने अपना प्रतीक 'हाथी' बनाया ताकि लोग हमारी पार्टी के उम्मीदवारों को पहचानने में कोई कठिनाई महसूस न करें। हाथी दूसरे जानवरों से भिन्न आसानी से पहचाना जा सकता है।

''इस बार संचयी मतदान प्रणाली के स्थान पर वितरणीय प्रणाली शुरू की गई है। जहां आरक्षित सीटें हैं वहां उस निर्वाचन क्षेत्र के मतदाता दो वोट डाल सकते हैं एक उस उम्मीदवार को जो आरक्षित सीट पर खड़ा है और दूसरा जो साधारण सीट पर खड़ा है। लेकिन हम एक ही आदमी को वोट नहीं दे सकते। इसलिए हमें किसी पार्टी के साथ गठजोड़ करना होगा, जिसके मतदाता अपना दूसरा मत हमारे पक्ष में डालेंगे। जिस पार्टी के साथ हम समझौता करेंगे उसे कुछ ही दिनों में घोषित कर दिया जायेगा। आप उसी पार्टी को वोट दें। उसके बदले वह पार्टी हमारे उम्मीदवारों का समर्थन करेगी। इस प्रकार हमारे उम्मीदवार कामयाब होंगे। हमारे पास मत संख्या बहुत ज्यादा नहीं है और साथ ही संयुक्त निर्वाचक मंडल है जिससे हमारी स्थिति और भी तकलीफदेह हो जाती है। इसलिए हमें किसी न किसी पार्टी के साथ गठजोड़ करना होगा।

''अंत मैं, में आपको बताना चाहता हूँ कि केवल एक पार्टी है, जो अनुसूचित जातियां के लिए कुछ कर सकती है और वह है अनुसूचित जाति फेडरेशन। मैंने आपके लिए मकान बनाया है और उसे ठीक हालत में रखना आपका काम है। मैंने पौधा लगा दिया है। यदि आप उसे सींचेंगे तो आप उसका फल भोगेंगे और आप उसकी छाया का भी आनन्द ले सकेंगे। यदि ऐसा नहीं हुआ तो आपको धूप में बैठना होगा। हमारी जाति बर्बाद हो जायेगी। इसलिए प्रत्येक अनुसूचित जाति, अनुसूचित जाति फेडरेशन के ध्वज तले एकत्र होनी चाहिए और उसे और अधिक शक्तिशाली बनाना चाहिए। यदि हम एकजुट होंगे, तभी हम कुछ हासिल कर सकते हैं। एकजुट होकर खड़े रहेंगे और विभाजित होकर गिर पड़ेंगे।

●●●

125

संसदीय लोकतंत्र के असफल होने से विद्रोह, अराजकता और साम्यवाद का जन्म होगा

दिनांक 28 अक्तूबर, 1951 को पंजाब के जालंधर शहर में डी0ए0वी0 कालेज की छात्र संसद के समक्ष दिये गये अपने भाषण में डा0 बी0आर0 अम्बेडकर ने संसदीय लोकतंत्र की सरल ढंग से व्याख्या की थी।

उन्होंने कहा :

''प्रधानाचार्य, माननीय प्रेसीडेंट और माननीय स्पीकर महोदय,

''आपने वास्तव में अपनी संसद के विशेष सत्र को संबोधित करने के लिए आमंत्रित करके जो बहुत बड़ा सम्मान मुझे दिया है मैं उसके लिए आपका आभारी रहूंगा। अपने जीवन भर, विषय दर विषय पेशा, दर पेशा रंग बदलता रहा हूँ। मैंने अपना कैरियर इंग्लैंड से लौटने के बाद 1919 में बंबई के गवर्नमेंट कामर्स कॉलेज में राजनीतिक अर्थशास्त्र के प्रोफेसर के रूप में शुरू किया था, लेकिन मैंने शीघ्र ही यह महसूस किया कि सरकारी सेवा ऐसे आदमी के लिए ठीक नहीं है जो जनता की सेवा करना चाहता है। सरकारी सेवक अनुशास ने के नियमों से बंधा होता है। वह सार्वजनिक सेवा के अपने काम में हर कदम पर अवरोध पाता है। इसके बाद मैं इंग्लैण्ड चला गया और बार के लिए योग्यता प्राप्त की। लौटने के बाद मैंने कुछ समय वकालत की और फिर बंबई गवर्नमेंट ला कॉलेज का पद स्वीकार कर लिया। मैं शिक्षण के काम में लौट आया। मैंने ला कॉलेज के प्रधानाचार्य के रूप में 5 वर्ष काम किया। इसके बाद जब भारत शासन अधिनियम, 1935 लागू हुआ तो उससे पहली बार लोकप्रिय विधानमंडल अस्तित्व में आए। जब मैंने राजनीति में कूदने की सोची और मैंने नौकरी छोड़ दी तथा राजनीति में आ गया, तब से मैं बराबर वकालत और जनसेवा करता रहा हूँ। इस प्रकार वकालत और जनसेवा मेरे जीवन में वैकल्पिक धाराएं रही हैं और मुझे नहीं पता कि किस धारा पर मेरे प्राणान्त होंगे? क्या ए.सी. पर या डी0सी0 पर?

''मैं पढ़ाई के पेशे का बहुत शौकीन हूँ। मैं विद्यार्थियों को भी बहुत पसंद करता हूँ। मैंने उनके साथ काम किया है। मैंने अपने जीवन में उन्हें व्याख्यान दिये हैं। यह पहला मौका है जब मैं कैबिनेट से त्यागपत्र के बाद छात्रों को संबोधित करने आया हूँ। मैं छात्रों से बात करके बहुत प्रसन्न हूँ। देश का बहुत कुछ भविष्य

आवश्यक रूप से इस देश के विद्यार्थियों पर निर्भर होना चाहिए। विद्यार्थी समाज के बौद्धिक वर्ग हैं, और वे जनमत तैयार कर सकते हैं। इसलिए मुझे आपको, संसद सदस्यों को संबोधित करते हुए बहुत प्रसन्नता है। और मैं इस मौके के लिए वास्तव में आभारी हूँ।

''जब आपके प्रधानाचार्य ने आपको संबोधित करने के लिए अनुरोध करते हुए मुझे पत्र लिखा तो मैंने कोई विषय विशेष इंगित नहीं किया था। उस विषय के बारे में भी मेरे मन में कुछ नहीं था। जिस पर मैं आज सुबह आपके सामने यहां बोलूंगा। लेकिन जैसा कि प्रायः होता है, पलक झपकते ही अचानक विषय मेरे सामने स्पष्ट हो गया और मैंने 'संसदीय शासन' विषय पर आपके सामने कुछ शब्द बोलने का फैसला किया है। मेरे पास समय बहुत कम है। इसलिए मैं आपको इस विषय का संक्षिप्त विवेचन ही दे पाऊंगा।

''संविधान सभा में चर्चा के दौरान हमारे संविधान के स्वरूप के बारे में नाना प्रकार की संम्मतियां थीं। कुछ लोग ब्रिटिश प्रणाली चाहते थे, कुछ अमेरिकी प्रणाली। दूसरे लोग भी थे, जो इनमे से कोई भी शासन प्रणाली नहीं चाहते थे। लेकिन लंबी बहस के बाद सदस्यों की बहुत बड़ी संख्या इस निष्कर्ष पर पहुंची कि ब्रिटेन जैसी संसदीय शासन प्रणाली हमारे देश के लिए सर्वोत्तम है।

''ऐसे भी कुछ लोग हैं जो संसदीय शासन नहीं चाहते। साम्यवादी, रूसी प्रकार का शासन चाहते हैं। समाजवादी भी वर्तमान भारत के संविधान के खिलाफ हैं, वे इसके खिलाफ आंदोलन कर रहे हैं। उन्होंने घोषणा कर दी है कि यदि वे सत्ता में आए तो वे इसमें बदलाव लाएंगे। व्यक्तिगत तौर पर मैं संसदीय शासन प्रणाली से बहुत अधिक लगाव रखता हूँ। आइये हम यह समझ लें कि इसका क्या अर्थ है और हमें इसे संविधान में सुरक्षित रखना होगा।

''संसदीय शासन का अर्थ क्या है? वाल्टर बेग हॉट की एक पुस्तक है–इंगलिश कांस्टिट्यूशन'। वास्तव में यह एक श्रेण्यग्रंथ है। बाद में लास्की और सांविधानिक शासन के अन्य आधिकारिक विद्वानों द्वारा इसे परिवर्धित किया गया। बेगहॉट ने संसदीय शासन की संकल्पना को एक वाक्य में रखा है। उनके अनुसार संसदीय शासन से विचार–विमर्श द्वारा शासन अभिप्रेत है, न कि लात घूंसों का शासन। ब्रिटिश शासन प्रणाली में आप हमेशा देखेंगे कि वे कोई फैसला लेते हुए बिरले ही लात–घूंसों का सहारा लेते हैं, फैसला हमेशा विचार–विमर्श के बाद लिया जाता है। ब्रिटिश संसद में कोई भी अवरोध पैदा नहीं करता। फ्रांसीसी राजनीति को देखिए, वहां फैसले ज्यादातर पहलवानी दिखाकर दूसरों को परास्त करके लिए जाते हैं। आप आप देखेंगे कि यह प्रणाली उस व्यवस्था में जन्मे लोगों क लिए

समुचित नहीं है। उनके लिए यह अपरिचित संस्था है। हमें सीखना होगा, समझना होगा और इसे कामयाब बनाना होगा।

''इस समय संसदीय लोकतंत्र हमारे लिए अपरिचित है। लेकिन एक समय था जब भारत में संसदीय संस्थाएं थीं। प्राचीन काल में भारत बहुत अधिक उन्नत था। यदि आप **'महापरिनिब्बान'** के सूक्तों को पढ़ेंगे तो आप मेरे मुद्दे के समर्थन में पर्याप्त साक्ष्य पाएंगे। इन सूक्तों में लिखा है कि जिस समय भगवान बुद्ध कुशीनगर में मरणासन्न थे, तब इस आशय का एक संकेत मल्लों को भेजा गया था जो उस समय सत्र में बैठे हुए थे। वे लोग संसदीय संस्थाओं को समर्पित थे। जब उन्हें बुद्ध के बारे में संदेश मिला तो उन्होंने निश्चय किया कि वे सत्र को बंद नहीं करेंगे, बल्कि अपना काम जारी रखेंगे और संसद का काम खत्म होने के बाद ही कुशीनगर जाएंगे। हमारे साहित्य में असंख्य इस बात को साबित करते हैं कि संसदीय शासन प्रणाली हमारे लिए अपरिचित नहीं है।

संसदीय प्रक्रिया के बारे में बहुत सारे नियम हैं। साधारणतया **'मेज पार्लियामेंट्री प्रैक्टिस'** का अनुसरण किया जाता है। एक नियम ऐसा है जिसका अनिवार्यतः सर्वत्र अनुसरण किया जाता है। और वह यह है कि कोई प्रस्ताव आए बिना कोई चर्चा नहीं हो सकती। यही वजह है कि किसी प्रश्न पर चर्चा नहीं होती। प्राचीन काल में भी हमारे देश में इस नियम का पालन होता था। गुप्त मतदान प्रणाली जो इस समय प्रचलित है वह भी हमारे लिए नई नहीं है। बौद्ध संघों में इसका अनुसरण किया जाता था उनके पास मतपत्र होते थे जिन्हें वे 'सालपत्रक ग्राहकाज' कहते थे। दुर्भाग्यवश इस सब अतीत की अच्छी विरासत को हमने खो दिया। भारत के इतिहासकारों को इस सवाल का हल ढूंढना चाहिए कि ये संसदीय संस्थाएं हमारे देश से क्यों गायब हुई। लेकिन मैं देखता हूँ कि वे इसका कारण नहीं ढूंढ सके या ाढूंढ़ना नहीं चाहते। प्राचीन भारत 'विश्व गुरू' था। प्राचीन भारत में ऐसी बौद्धि क आजादी थी, जैसी अन्यत्र कहीं नहीं पाई जाती थी। तब यह प्राचीन सभ्यता क्यों गायब हो गयी? भारत क्यों निरंकुश राजाओं के अधीन हो गया। हम संसदीय संस्थाओं के बारे में जानते थे, हम मतों, मतदान समितियों और संसदीय संस्थाओं से संबंधित अन्य चीजों के बारे में जानते थे। लेकिन आज संसदीय शासन प्रणाली हमारे लिए अपरिचित है। यदि हम गांव में जाएं तो देखेंगे कि गांव के लोग यह नहीं समझते कि मत क्या है, पार्टी क्या है? उन्हें यह कोई विचित्र चीज लगती है, कुछ अपरिचित चीज लगती है। इसलिए बड़ी समस्या है कि इस संस्था को कैसे परिरक्षित किया जाए। हमें लोगो को शिक्षित करना होगा, हमें उन्हें संसदीय लोकतंत्र और संसदीय शासन प्रणाली के फायदे बताने होंगे।

''हम जानते हैं कि संसदीय शासन से बेगहॉट का अभिप्राय क्या था। लेकिन आज उसकी परिभाषा निरर्थक है, बल्कि अपर्याप्त है। संसदीय शासन प्रणाली में तीन मुख्य बातें अंतर्निहित होती हैं।

'संसदीय शासन का अर्थ है पैतृक शासन का निषेध कोई भी आदमी आनुवंशिक राजा होने का दावा नहीं कर सकता । जो कोई शासन करना चाहता है, वह समय–समय पर जनता द्वारा निर्वाचित होना चाहिए। उसे जनता का अनुमोदन प्राप्त करना चाहिए। संसदीय शासन प्रणाली में आनुवंशिक शासन को कोई मंजूरी प्राप्त नहीं है।

''दूसरे लोगों के सार्वजनिक जीवन में लागू कोई कानून, कोई उपाय जनता द्वारा चुने गये प्रतिनिधियों की सलाह पर आधारित होना चाहिए। कोई भी आदमी इस प्राधिकार की परिकल्पना नहीं कर सकता कि वह सब कुछ जानता है, वह कानून बना सकता है और शासन चला सकता है। कानून संसद में जन प्रतिनिधियों द्वारा बनाए जाते हैं। वही लोग उन आदमियों को सलाह देते हैं, जिनके नाम से कानून उद्‌घोषित किया जाता है। राजतंत्र के शासन और लोकतंत्रीय शासन प्रणाली में यही अंतर है। राजतंत्र में, जनता के कार्य राजा के नाम से किये जाते हैं। और राजा के प्राधिकार से किये जाते हैं। लोकतंत्र में, जनता के कार्य राज्याध्यक्ष के नाम से किये जाते है। लेकिन कानून और कार्यपालक उपाय वे प्राधिकार होते हैं जिनसे शासन चलाया जाता है। राज्याध्यक्ष नामधारी प्रमुख होता है वह प्रतीक मात्र होता है, वह एक प्रतिष्ठापित मूर्ति होता है। उसकी पूजा की जा सकती है, लेकिन वह देश का शासन नहीं चला सकता। देश का शासन, उनके नाम से, निर्वाचित जन प्रतिनिधियों द्वारा चलाया जाता है।

''तीसरे और अंतिम, संसदीय शासन प्रणाली का मतलब है कि एक निश्चित अवधि में उन लोगों को जो राज्याध्यक्ष को सलाह देना चाहते हैं, अपने लिए जनता का विश्वास प्राप्त करना चाहिए। ब्रिटेन में, पहले संसद के चुनाव हर 7 वर्ष में होते थे। चार्टिस्टों ने इसका विरोध किया। वे हर साल चुनाव चाहते थे। इस आंदोलन का उद्‌देश्य बहुत प्रशंसनीय था। वास्तव में यदि हर वर्ष चुनाव होते, तो यह जनता के हित में सर्वोत्तम होता। पर ऐसा संभव नहीं हुआ होता। लेकिन संसदीय चुनाव बहुत महंगा काम है। इसलिए एक समझौता हुआ और 5 वर्ष की अवधि ऐसी सही अवधि मानी गयी, जिसके बाद विधायक और मंत्री जनता के पास जाएं और उनका विश्वास पुनः प्राप्त करें।

''यह भी काफी नहीं है। संसदीय शासन प्रणाली विचार–विमर्श द्वारा शासन से कहीं अधिक है। संसदीय शासन प्रणाली के दो स्तंभ हैं। ये वे स्तंभ हैं, जिन पर शासन तंत्र काम करता है। वे दो स्तंभ तंत्र हैं– 1. विपक्ष 2. निष्पक्ष और स्वच्छ चुनाव।

''पिछले 20 या 30 वर्षों से हम एक ही राजनीतिक दल के अभ्यस्त थे। हम संसदीय लोकतंत्र के निष्पक्ष कार्यकरण के लिए विपक्ष की आवश्यकता और महत्ता को भूल से गये थे। हमें बराबर यही बताया गया है कि विपक्ष एक बुराई है। पुनः हम यह भूल रहे हैं कि हमें इतिहास से शिक्षा लेनी होगी। आप जानते हैं कि **वेदों** और **स्मृतियों** की व्याख्या करने के लिए निबंधकार होते थे। वे पहले सवालों को एक पक्ष अर्थात **पूर्व पक्ष** का उल्लेख करके श्लोकों और सूत्रों पर अपनी टीकाएं देना शुरू करते थे। इसके बाद वे उसके **उत्तर पक्ष** की व्याख्या करते थे। ऐसा करके वे हमें यह बताना चाहते थे कि जो सवाल उठाया गया है वह कोई आसान नहीं है। वह ऐसा सवाल है जिस पर विवाद, चर्चा और संदेह है। इसके बाद वे तथाकथित **अधिकरण** देते थे। जिसमें वे दोनों **पक्षों** की आलोचना करते थे। अंततः वे **सिद्धांत** के रूप में अपने निजी फैसले देते थे। इससे हम यह देख सकते हैं कि हमारे सभी प्राचीन गुरू दो दलीय शासन प्रणाली में विश्वास रखते थे।

''संसदीय लोकतंत्र में एक महत्वपूर्ण बात यह है कि यदि सवाल के दो पक्ष हैं तो जनता को दूसरा पक्ष भी जानना चाहिए। इस प्रकार एक सक्रिय विपक्ष आवश्यक है। विपक्ष निष्पक्ष राजनीतिक जीवन की कुंजी है। कोई भी लोकतेत्र उसके बिना नहीं चलाया जा सकता। संसदीय शासन प्रणाली के दो जन्मदाता देश, ब्रिटेन और कनाडा इस महत्वपूर्ण तथ्य को मानते हैं और दोनो देशों में विपक्ष के नेता को सरकार द्वारा वेतन दिया जाता है। वे विपक्ष को अनिवार्य चीज मानते हैं। इन देशों के लोग यह मानते हैं कि विपक्ष भी उतना ही जागरूक होना चाहिए, जितनी सरकार। सरकार तथ्यों को दबा सकती है, सरकार केवल एक तरफा प्रचार कर सकती है। इन दो देशों में जनता के पास इस स्थिति के विपरीत प्रावधान हैं।

''अब सवाल यह उठता है कि सत्तारूढ़ पार्टी ऐसा विपक्ष बनाने की अनुमति देने के लिए इच्छुक है या नहीं। कांग्रेस कोई विपक्ष नहीं चाहती। कांग्रेस छुटपुट विचारों के लोगो को एक छतरी के नीचे लाने का प्रयास करती है। मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या इस देश के राजनीतिक जीवन में एक वांछनीय प्रवृत्ति है?

''निष्पक्ष और स्वच्छ चुनाव दूसरा स्तंभ है जिस पर संसदीय लोकतंत्र निर्भर करता है। समाज के एक वर्ग से दूसरे वर्ग को शांतिपूर्ण तरीके से और बिना किसी खून खराबे के सत्ता हस्तांतरण के लिए निष्पक्ष और स्वच्छ चुनाव आवश्यक है। पुराने जमाने में , यदि राजा मर जाता था, तो महल में कम से कम एक हत्या जरूर होती थी। महल में क्रांति हुआ करती थी। और अपने देश की बागडोर संभालने के लिए नये राजा के सिंहासन पर बैठने से पहले हत्याएं होती थीं। भारत का यही इतिहास

रहा है। चुनाव पूरी तरह निष्पक्ष और स्वच्छ होने चाहिए। लोगों को स्वतंत्र छोड़ दिया जाए, कि वे उन लोगों को चुनें जिन्हें वे विधान मंडलों में भेजना चाहते हैं।

''निष्पक्ष और स्वच्छ चुनाव के बारे में क्या हो? हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि बड़े व्यापार घराने, इस देश की राजनीति में बहुत बड़ी भूमिका निभाने की कोशिश कर रहे हैं। इन बड़े व्यापार घरानों की ओर से कांग्रेस को जो धन दिया जाता है, वह एक बहुत खतरनाक चीज है। यदि धनाढय लोग किसी भी राजनीतिक दल के चुनाव कोष में अंशदान करके चुनावों को प्रभावित करने की कोशिश करेंगे, तो परिणाम क्या होगा। यदि उनके धन से समर्थित दल सत्ता में आता है तो वे या तो वर्तमान विधान को रूपांतरित करके अथवा सत्तारूढ़ दल को ऐसे ढंग से विधान बनाने के लिए प्रभावित करके जो उनके हितों के लिए लाभप्रद हो, अपने लिए रियायत लेने की स्वभावतः कोशिश करेंगे। सज्जनो, मैं आपसे पूछता हूँ कि क्या इन परिस्थितियों में ऐसी आशा की जा सकती है कि संसदीय शासन प्रणाली देश का कोई भला करेगी? मैं आपके सामने महाभारत का हवाला देना चाहूंगा। पांडवों और कौरवों के बीच युद्ध के दौरान भीष्म और द्रोण कौरवों के पक्ष में थे। पांडव सन्मार्ग पर थे, कौरव कुमार्ग पर, यह भीष्म ने स्वीकार किया था। जब किसी ने भीष्म से पूछा कि यदि वह पांडवों को ठीक समझते हैं, तो फिर कौरवों का समर्थन क्यों कर रहे हैं? भीष्म ने इसका उत्तर स्मरणीय वाक्य में इस प्रकार दिया थाः—

''मुझे नमक के प्रति निष्ठावान रहना चाहिए। यदि मैं कौरवों का अन्न खाता हूँ तो मुझे उनका पक्ष लेना चाहिए, भले ही वे गलत हों।

''आज वही चीज हो रही है। कांग्रेस बनियों, मारवाड़ियों और अन्य लखपतियों की वित्तीय मदद स्वीकार कर रही है। कांग्रेस उनका अन्न खा रही है। अतः यह स्वाभाविक ही है कि कांग्रेस को हर महत्वपूर्ण मौके पर इन बड़े घरानों का पक्ष लेना होगा।''

''हम यह भी देखते हैं कि सरकारी सेवक चुनावों को उस पार्टी के पक्ष में प्रभावित करते हैं जो उन्हें और उनके आश्रितों को रोटी देती है। डा0 श्यामा प्रसाद मुखर्जी जैसे व्यक्ति ने हाल ही में दिल्ली में भारतीय जनसंघ के उद्‌घाटन सत्र में सरकारी सेवकों पर यह खुलकर आरोप लगाया था कि वे कांग्रेस की मदद कर रहे हैं और ऐसा करके वे चुनावों को निष्पक्ष और स्वच्छ नहीं होने दे रहे हैं। इन परिस्थितियों में सज्जनो, क्या आप सोचते हैं कि संसदीय लोकतंत्र के बहुत सफल होने की कोई आशा है?

''यदि इस देश में संसदीय लोकतंत्र असफल रहता है और यह मेरे द्वारा बताए गये कारणों से निश्चित रूप से असफल होगा तो इसका मात्र एक परिणाम होगा, विद्रोह, अराजकता और साम्यावाद। यदि सत्तारूढ़ लोग यह नहीं सोचते कि लोग आनुवंशिक प्राधिकार सहन नहीं करेंगे, तो यह देश बर्बाद हो जाएगा। या तो साम्यवाद आएगा जिस प्रकार रूस व्यक्ति की स्वतंत्रता और स्वाधीनता को समाप्त करके हमारे देश पर प्रभुत्व कायम कर लेगा अथवा जनता का वह वर्ग, जो सत्तारूढ़ दल से असफल होने से असंतुष्ट होगा, विद्रोह करना शुरू कर देगा और अराजकता फैल जाएगी। सज्जनो मैं चाहता हूँ कि आप इन भावी निश्चित घअनाओं को ध्यान में रखें। यदि आप चाहत हैं कि संसदीय शासन प्रणाली और संसदीय लोकतंत्र इस देश में प्रचलित हो, यदि आप संतुष्ट हैं तो हमें विचार, बोलने और कार्रवाई की स्वतंत्रता से आश्वस्त किया जाएगा। यदि हमें अपनी स्वाधीनता को बचाकर रखना चाहिए, यदि हम व्यक्ति स्वतंत्रता के अंतर्निहित अधिकार को मानते हैं तो हमारे देश के प्रबुद्ध समाज के रूप में, आप छात्रों का यह कर्तव्य है कि आप इस संसदीय शासन प्रणाली को, उसके सही अर्थ में संजोए रखने के लिए और उस दिशा में कायम करने के लिए अपना भरसक प्रयास करें।''

''सज्जनो, मुझे बस यही कहना था। मैं इस भव्य सभा को संबोधित करने का अवसर देने के लिए आपका धन्यवाद करता हूँ।''[1]

● ● ●

[1] लोक राज्य : डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर विशेषांक, 16 अप्रैल, 1981, पृष्ठ 45–48

126

यदि हमारे सही प्रतिनिधि नहीं चुने जाएंगे तो स्वाधीनता एक ढोंग बन जाएगी

डॉ अम्बेडकर ने 28 अक्तूबर, 1951 को लुधियाना में चुनाव अभियान के दौरान एक भाषण दिया था।

उन्होंने कहा –

''प्यारे भाइयों और बहनो,

''मैं अपने लोगों से बात करने के लिए लुधियाना पहली बार आया हूँ। पहले भी अनेक बार मैंने यहां आने की योजना बनाई थी, लेकिन कुछ अपरिहार्य परिस्थितियों के कारण मैं यहां नहीं आ सका। यह कितना शुभ अवसर है कि आप सब लोग यहां एकत्र हैं।

''आप जानते हैं कि 2–3 महीनों में चुनाव होने वाले हैं, जिनमें बहुत दल भाग ले रहे हैं। अनुसूचित जाति फेडरेशन भी चुनाव में अपने उम्मीदवार खड़े कर रहा है। हम राज्य विधानसभाओं में और संघीय संसद में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सभी स्थानों के लिए चुनाव लड़ेंगे तथा कुछ साधारण सीटों के लिए भी चुनाव लड़ेंगे। जहां हमारे पास पर्याप्त संख्या में वोट हैं। आशा है हमारे उम्मीदवार कामयाब होंगे। हमारे उम्मीदवारों की कामयाबी अधिकांशतः हमारे अपने लोगों पर निर्भर करती है। यदि हमारे सब लोग हमारे उम्मीदवारों के लिए मतदान करेंगे तो मुझे, हमारी सफलता का पक्का विश्वास है और इसीलिए मैं जोर देकर यह कहना चाहूंगा कि अनुसूचित जाति के सभी लोगों को अनुसूचित जाति फेडरेशन द्वारा खड़े किये उम्मीदवारों के लिए मतदान करना चाहिए। यही संगठन अनुसूचित जातियों और अन्य पिछड़े वर्गों की एक मात्र संस्था है।

''मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि अग्रेजों ने भारत पर अपने शासन के दौरान हमारे साथ किस प्रकार धोखा किया था। हालांकि वे भारत से हजारों मील दूर थे फिर भी वह हिन्दुस्तान में अपना राज कायम करने में सफल रहे। जब ईस्ट इंडिया कंपनी, पहली बार भारत आई थी, तो उसका प्रयोजन केवल व्यापार करना था, लेकिन धीरे–धीरे अंग्रेज यहां अपना राज स्थापित करने के लिए उत्सुक हो गये।

वे उस उद्देश्य को कैसे प्राप्त कर पाए। भारत में उनकी अपनी कोई सेना नहीं थी। अब तक यह कोई नहीं बता पाया है कि अंग्रेज अपनी निजी सेना के बिना, भारत के सभी राजाओं और महाराजाओं को अपने अधीन करने में कैसे समर्थ हुए? अंग्रेज लोग अनुसूचित जाति के लोगों की मदद से भारत के शासक बने। ये लोग अछूत कहलाते थे, ये अनपढ़ थे और सवर्ण हिंदू इनके साथ बहुत अपमानजनक व्यवहार करते थे। इन अछूतों के पास आजीविका के कोई साधन नहीं हैं। वे हमेशा इन सवर्ण लोगों की दया पर रहते थे। इस प्रकार ब्रिटिश सेना में शामिल होने और आजीविका कमाने के आलावा उनके पास कोई विकल्प नहीं था। मैं आप लोगों पर यह छाप छोड़ना नहीं चाहता कि जो कुछ हुआ वह ठीक था। लेकिन मैं कुछ दूसरी बात कहना चाहता हूँ। मैं इंगित करना चाहता हूँ कि उन लोगों ने भी जिनकी हमने भारत में राज स्थापित करने में मदद की थी, हमारे लोगों के साथ इस तरीके से व्यवहार किया। इन अंग्रेजों की खातिर सेना में हमारे लोगों ने अपने प्राण दिये। लेकिन बदले में उन्हें क्या मिला? फायदा किन्हें हुआ? इस तथ्य के बावजूद कि अनुसूचित जाति के लोगों ने अंग्रेजों की मदद की थी। ब्राह्मणों और अन्य सवर्ण लोगों ने इसका पूरा फायदा उठाया था। अंग्रेजों ने उनके बच्चों को शिक्षा दी और उन्हें हर प्रकार की वित्तीय सहायता दी जबकि हमारे लोगों का कोई ध्यान नहीं रखा गया। इसका परिणाम यह हुआ कि गरीब अनुसूचित जातियां की कीमत पर इन सवर्ण लागों का भला हुआ और ये अनुसूचित जाति के लोग पहले जैसे रहे। यही कारण है कि अब तक कोई संपन्न अनुसूचित जाति परिवार नहीं है, उनके बच्चे शिक्षित नहीं हैं और वे साधारणतया पिछड़े हैं। परिणामस्वरूप सेना, पुलिस और प्रशासन के अनेक भागों में महत्वपूर्ण पद फिलहाल इन सवर्ण लोगों के हाथ में है। अंग्रेजों को हमारे लोगों की भलाई के लिए कुछ करना चाहिए था, लेकिन उन्होंने हमारे लिए कुछ नहीं किया। 1857 में जब गदर हुआ था तो उसके क्या कारण थे? चूंकि अंग्रेजों ने हमारे लोगों के लिए कुछ नहीं किया था, इसलिए सेना में हमारे लोगों ने उनके खिलाफ विद्रोह कर दिया। जब गदर शांत हुआ और यह पाया गया कि सेना में हमारे लोगों ने अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह किया था तो उन्होंने आगे सेना मं हमारे लोगों का भर्ती करना बंद कर दिया। इसके बजाय उन्होंने हिंदुओं और राजपूतों को भर्ती करना बंद कर दिया। इसके बजाय हिंदुओं और राजपूतों की भर्ती किया। इस प्रकार हमारे लोगों की आय का मुख्य साधन भी बंद हो गया। 1947, जब अंग्रेज भारत छोड़कर गये, तो हमारी दशा वही रही जो अंग्रेजों के भारत आने से पहले में थी। भारतीयों को सत्ता सौंपने के समय अंग्रेजों ने संपूर्ण सत्ता उच्च वर्ग के लोगों को हस्तांतरित की। हमें कुछ नहीं मिला। हमें इन निर्दयी लोगों की दया पर छोड़ दिया गया।

''इससे आप उस ढंग को भली प्रकार समझ सकते हैं जिस ढंग से दूसरों लोगों ने अनुसूचित जातियां के साथ बर्ताव किया। इसी कारण हम अब तक इतने पिछड़े रहे। अब मैं एक सवाल पूछता हूँ कि क्या आप अब भी पिछड़े रहना चाहते हैं और इन सवर्ण लोगों के हाथ में गुलाम बनकर काम करना चाहते हैं? जब आर्य भारत आये तब यह वर्ण व्यवस्था लागू हुई थी। लोगों को उनके जन्म के अनुसार समाज में स्थान दिया था कुछ लोग ब्राह्मण कहलाए कुछ क्षत्रिय, कुछ वैश्य, शूद्र और अछूत। इन वर्णों के अनुसार अछूत सबसे नीचे थे और समाज से पूरी तरह विच्छिन्न थे। सवर्ण हिंदू और अछूत के बीच संबंध पैर और जूते का संबंध था। जब हम अपने घर में घुसते हैं तो हम जूते बाहर छोड़ आते हैं। उसी प्रकार अछूतों को समाज से बाहर रखा जाता था और उन्हें कोई भी अधिकार नहीं दिया जाता। हमने शताब्दियों से सवर्ण हिंदुओं के इस व्यवहार को सहन किया है और हम आज भी सामाजिक दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से और राजनीतिक दृष्टि से कष्ट भोग रहे हैं।

''अनेक वर्षों के संघर्ष के बाद हमने कुछ राजनीतिक अधिकार प्राप्त किये हैं जिन्हें भारतीय संविधान में भी समाविष्ट किया गया है। पूरे 20 वर्ष मैं महात्मा गांधी से लड़ता रहा। वह हमें कोई पृथक अधिकार देने के विचार के खिलाफ थे। उनका तर्क था कि यदि अछूतों को अलग अधिकार दिये गये तो वे कभी भी हिंदू समाज में शामिल नहीं हो पाएंगे। वे हमेशा हिंदुओं से अलग रहेंगे। गोलमेज सम्मेलन में भी महात्मा गांधी ने पृथक निर्वाचक मंडल की हमारी मांग का विरोध किया था। इतने वर्षों के संघर्ष के बाद हमने कुछ राजनीतिक शक्तियां प्राप्त की हैं। अब हम अपने प्रतिनिधियों को अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों पर राज्य विधानसभाओं और संघीय संसद में भेज सकते हैं।

''ऐसी बहुत सी पार्टियां हैं जो इन अधिकारों को छीनने के लिए आतूर हैं। वे हमारे मत प्राप्त करने के लिए और अपने पिट्ठुओं को हमारे लोगों के लिए आरक्षित सीटों पर भेजने के लिए आतुर हैं। आप उनका मंतव्य भलीभांति समझ सकते हैं। वे चाहते हैं कि अनुसूचित जातियां वहीं रहे जहां वे हैं और सत्ता में न आएं ताकि जो नीच कर्म हमारे लोग कर रहे हैं, उसका नुकसान न हो। इसलिए आपको आगामी चुनाव में अपने मतों के बारे में सावधान रहना होगा। आप देखें कि केवल हमारे सच्चे प्रतिनिधि ही हमारे वोटों से चुने जाएं दूसरे नहीं। तभी आपके अधिकार जो संविधान में समाविष्ट किये गये हैं, सुरक्षित रह सकते हैं।

''यदि हमारे सच्चे प्रतिनिधि राज्य विधानसभाओं और संघीय संसद में नहीं चुने जाते हैं तो हम स्वतंत्रता का उपभोग नहीं कर सकते। स्वाधीनता हमारे लोगों के लिए ढोंग बन जाएगी। यह स्वर्ण लोगों की स्वाधीनता हो जाएगी। हमारी नहीं।

किंतु यदि हमारे सच्चे प्रतिनिधि संसद में और राज्य विधानसभाओं में भेजे जाएं, तो हम अपने लक्ष्य के लिए लड़ सकते हैं तभी शिकायतें दूर करवा सकते हैं। तभी हमारे बच्चे उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते हैं। तभी हमारी गरीबी दूर हो सकती है। और तभी हमें जीवन के सभी पहलुओं में बराबर हिस्सा दिया जाएगा। हालांकि भारतीय संविधान में अनुसूचित जाति के लोगों के लिए विशेषाधिकार दिये गये हैं, फिर भी अन्य पार्टियां, विशेषकर कांग्रेस अनावश्यक रूप से उनमें हस्तक्षेप कर रही है। वह चुनाव के लिए अपने पिट्ठुओं को अनुसूचित जाति के लिए आरक्षित सीटों पर खड़े कर रही है। इस प्रकार कांग्रेस के टिकट पर चुने गये लोग हमारे हितों की रक्षा कैसे कर सकते हैं, क्योंकि उन्हें तो अपने मालिक की इच्छाओं के अनुसार चलना होगा? वे हमारे लिए क्या कर सकते हैं?

''मैं आपको उन लोगों के बारे में बताना चाहता हूँ जो अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों पर कांग्रेस के टिकट पर संसद में निर्वाचित हुए थे। उनकी संख्या लगभग 30 थी और वे पिछले 4 सालों से संसद में हैं। 30 में से एक भी सदस्य ने संसद में अनुसूचित जातियों की शिकायतों के बारे में एक भी सवाल नहीं उठाया। यदि संसद में सवाल पूछा गया, तो स्पीकर ने उसे इजाजत नहीं दी आर मामला वहीं खत्म हो गया। यदि स्पीकर उदार हुए और उनहोंने सवाल पूछने की इजाजत दे दी तथा वह सवाल कार्य में शामिल कर लिया तो कांग्रेस का मुख्य सचेतक संबंधित सदस्य के पास जाकर उससे सवाल मुद्रित होने से पहले उसे वापस लेने के लिए कहेगा। संयोगवश, यदि सवाल मुद्रित हो गया है, तो मुख्य सचेतक संबंधित सदस्य से उस दिन के लिए बाहर जाने के लिए कहेगा जब उत्तर अपेक्षित है और इस प्रकार उठाये गये मसले पर संसद में कोई भी चर्चा नहीं होगी। क्योंकि स्वयं वह सदस्य ही वहां नहीं होगा। संसद में एक महीने तक बजट पर चर्चा होती है। उस समय कोई भी व्यक्ति बजट पर बोल सकता है और यह बता सकता है कि अमुक विशेषाधिकार उसके समुदाय या उसकी पार्टी के लिए उपबंधित किये जाने चाहिए। यह वह बता सकता है कि अनावश्यक परियोजनाओं पर इतना सारा खर्च हो रहा है, जबकि महत्वपूर्ण प्रस्तावों की अपेक्षा की गई है। इन चार सालों में मैंने एक भी सदस्य को कटौती प्रस्ताव लाते हुए नहीं देखा है। यह सब कांग्रेस पार्टी के अनुशासन (डंडे के डर) के कारण है। यदि सदस्य कोई संकल्प पेश करना चाहते हैं तो उन्हें इसे पेश करने से बहुत पहले मुख्य सचेतक की इजाजत लेनी होती है। इनमें से किसी भी सदस्य ने इन चार सालों में कोई विधेयक भी पेश नहीं किया। ये अछूत, भारतीय ईसाई, एंग्लो इंडियन आदि संविधान में दिये गये विशेषााधिकारों का प्रयोग कैसे कर सकते हैं। यदि उनके लिए आरक्षित सीटें कांग्रेस के टिकट के माध्यम से उनके शत्रुओं द्वारा कब्जा ली जाती हैं।

'' मैं एक बात स्पष्ट करना चाहता हूँ कि यदि आप लोगों ने कांग्रेस को वोट दिया तो आपको हमेशा नुकसान उठाना पड़ेगा। कांग्रेस के टिकट पर आए हमारे प्रतिनिधि विधानसभाओं और संसद में खामोश रहेंगे। हमारे हितों की रक्षा तभी हो सकती है जब हमारे सच्चे प्रतिनिधि फेडरेशन के टिकट पर चुने जाएं, जो कि अनुसूचित जातियों का एक मात्र संगठन है। यदि कांग्रेस में हमारे शिकायतों के निवारण की कोई भी संभावना होती तो मैं कांग्रेस नहीं छोड़ता। मैं जानता हूँ कि कांग्रेस के पास काफी धन है और वह उससे वोटें खरीदने की कोशिश करेगी। लेकिन आपको इसके बारे में सावधान रहना चाहिए। यदि मैं चाहता, तो मैं हमेशा कांग्रेस में रह सकता था। और निश्चित रूप से वहां मेरा अच्छा स्थान होता लेकिन ऐसा मैं तभी करता जब मेरा स्वार्थपूर्ण उद्देश्य होता और अपने समुदाय के लिए कोई सम्मान नहीं होता। यदि मुझे अपने लिए किसी लाइसेंस या परमिट की जरूरत होती, तो मैं वहां रहता। लाइसेंस और परमिट मांगने वाला आदमी अपनी जाति की कीमत पर ऐसा कर सकता है। वह स्वयं अपने लिए कुछ भी करेगा पर समाज के लिए नहीं। कांग्रेस सरकार में रहने के दौरान मेरा यही अनुभव रहा है।

''अंग्रेज लोग भारत में रहने के दौरान हमारे समाज की भलाई के लिए काम कर सकते थे, यदि उनमें ऐसी इच्छा होती किंतु उन्होंने भी हमें धोखा दे दिया। अब वह समय बीत गया है और एक दूसरा चरण आ गया है। यदि इस समय भी हम सावधान नहीं रहे और हमने अपनी आंखें बंद रखी तो हम बर्बाद हो जाएंगे। यदि आप चाहते हैं कि आपकी आने वाली पीढ़ियां कष्ट न भोगें, जैसा कि आपने भोगा है जो उसके लिए आपको अब कुछ करना चाहिए। जब आप कोई पौधा लगाते हैं तो आपको उसका फल कुछ समय बाद ही मिल जाता है। मैं इस बात पर जोर देना चाहता हूँ कि विधानसभाओं और संसद में सीटों का आरक्षण केवल 10 साल के लिए है हालांकि मैं चाहता था कि यह तब तक रहे जब तक भारत में अस्पृश्यता जारी रहे, लेकिन सवर्ण जातियों के सदस्यों की तो बात क्या, हमारे ही उन सदस्यों ने इसका विरोध किया, जो कांग्रेस से जीतकर संसद में आए। इसलिए यह सोचकर कि न होने से कुछ होना बेहतर है, मैंने 10 वर्ष के आरक्षण पर सहमति दे दी और अपने लोगों के लिए कुछ हासिल कर लिया। यह आरक्षण केवल दो चुनाव के लिए है और उसी समय तक कांग्रेस जैसी हितबद्ध पार्टियां आपके पास आएंगी और वोटों के लिए अनुरोध करेंगी। इस प्रकार यह 10 साल की अवधि बीत जाएगी और इस अवधि को बढ़ाने की मांग करने के लिए कोई नहीं आएगा। मैं आपसे पूछना चाहता हूँ तब क्या होगा? क्या ये कांग्रेसी लोग आपके पास आएंगे और आपसे अपने टिकट पर खड़े होने का अनुरोध करेंगे? निश्चय ही नहीं। वे ततने मूर्ख नहीं हैं। वे आप लोगों को मूर्ख बनाना चाहते हैं। ये कांग्रेसी उन लोगों के मुंह पर थूकेंगे भी नहीं

जो आज कांग्रेस का टिकट मांग रहे हैं। इसलिए आप सब इस समस्या पर विचार करें और फिर तय करें कि आप किस उम्मीदवार को वोट देंगे।

''प्रत्येक पार्टी के पास या तो शक्ति हो या धन। हमारी जाति के पास न तो धन है न शक्ति। हम लोग गांव में इन सवर्ण हिंदुओं की दया पर छोटी–छोटी संख्याओं में रहते हैं। बनिये और मारवाड़ी भी शक्तिशाली नहीं हैं लेकिन उनके पास धन है। वे धन से कुछ भी खरीद सकते हैं। इसलिए आपके पास अपने लिए कुछ करने का यह एक मौका है। यदि आप एकजुट रहते हैं तो आप अपना प्रतिनिधि अपने हितों की रक्षा के लिए विधानसभाओं और संसद में भेज सकते हैं। अन्यथा आप बर्बाद हो जाएंगे। इसलिए आप अपनी जाति को अराजकता से बाहर लाने के लिए अनुसूचित जाति फेडरेशन के बैनर तले एकजुट हो जाएं। प्रत्येक अछूत अपने सच्चे प्रतिनिधि चुने जाने में फेडरेशन की मदद करे। बहुत सी पार्टियां आपके पास आएंगी और वोट मांगेंगी, लेकिन आप गुमराह न हों।

''कुछ दिनां पहले पंडित नेहरू यहां आए थे। अखबारों में छपा था कि उन्हें सुनने के लिए दो–तीन लाख लोग एकत्र हुए थे। मुझे नहीं पता कि कितने लोग थे। कल जब मैं जालंधर गया था तो दो लाख से ऊपर लोग वहां थे लेकिन अखबार वालों ने छापा कि तीस हजार लोग वहां एकत्र हुए थे। मैं जो कुछ आपसे कहना चाहता हूँ वह यह है कि यदि कांग्रेस का कोई सम्मेलन होता है, तो भले ही श्रोता बहुत कम हों फिर भी वे यह छापेंगे कि भारी जन समूह ने सम्मेलन में भाग लिया। पांच के लिए वे पचास कहेंगे, पचास के लिए पांच सौ कहेंगे। पांच सौ के लिए पांच हजार और पांच हजार के लिए पांच लाख छापेंगे। मैं प्रेस वालों की आलोचना करना नहीं चाहता। उन्होंने अनेक वर्षों से मेरी आलोना की है, लेकिन उसके बावजूद मैंने तन–मन से प्रगति की है। मैं विशाल जन समूह देखना नहीं चाहता, मैं चाहता हूँ कि हमारे लोग इन सवर्ण हिंदुओं के अत्याचारों के खिलाफ लड़ने के लिए संगठित हों। मैं चाहता हूँ कि हमारे लोग मुझे सुने। इस बात का कोई महत्व नहीं है कि उनकी संख्या कम है या ज्यादा।

''प्रत्येक राजनीतिक दल ने अपना चुनाव घोषणा पत्र प्रकाशित किया है। प्रत्येक वादा करती है कि यदि वह सत्ता में आई तो वह यह करेगी, वह करेगी। अनुसूचित जाति फेडरेशन ने भी एक बहुत बड़ा घोषणा पत्र छापा है लेकिन जब उन्हें समझ में आया कि आम आदमी इसे नहीं समझ पायेगा तो उन्होंने इसमें संशोधन किया और उसका छोटा घोषणा पत्र बनाया। मुझे आशा है कि धीरे–धीरे उनका घोषणा पत्र छोटा और अधिक छोटा होता जाएगा और एक दिन आएगा जब कांग्रेस

का कोई घोषणा पत्र नहीं होगा। मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि घोषणा पत्र में क्या होना चाहिए, क्या नहीं। मैं सभी राजनीतिक दलों को चुनौती देता हूँ कि वे यह पता लगाने के लिए एक समिति बनाएं कि कान–सा घाषणा–पत्र सर्वोत्तम है। मेरे मन में कोई संदेह नहीं है कि हमारा घोषणा पत्र सबसे अ़च्छा है। सभी दलों ने अपने –अपने घोषणा पत्रों में लोगों से अनेक बातों के वायदे किये हैं। वायदा करना आसान है। लेकिन उसे कार्य रूप देना कठिन है। यदि आप किसी चीज का वायदा करते हैं तो आप सैकड़ों चीजों का वायदा कर सकते है। घोषणा पत्र केवल वायदों की सूची नहीं होना चाहिए, उसमें देश की समस्याएं उठाई जानी चाहिए और इन समस्याओं का समाधान क्या होगा, यह भी बताया जाना चाहिए। क्या कांग्रेस के घोषणा पत्र में ऐसी कोई चीज है? कांग्रेस के घोषणा पत्र में केवल एक चीज पर जोर दिया गया है वह है मुस्लिम समस्या। कांग्रेस के अनुसार देश के सामने और कोई समस्या नहीं है। क्या कोई भी इससे सहमत हो सकता है? बेशक मुस्लिम समस्या तब थी जब भारत संयुक्त था और कोई पाकिस्तान नहीं बना था। लेकिन तब भी यही एकमात्र समस्या नहीं थी। मुसलमान पाकिस्तान चले गये हैं कि भारत में केवल हिन्दू सिख और अन्य अल्पसंख्यक हैं। क्या आप समझते हैं कि भारत के सामने अब भी मुस्लिम समस्या है? क्या आप इससे सहमत हैं कि दलित वर्गों के लिए कुछ नहीं किया जाना चाहिए जो मुसलमानों से दस गुना ज्यादा गरीब और पिछड़े हुए हैं? अनुसूचित जातियां, अनुसूचित जनजातियां और आपरधिक जनजातियां हैं जिन पर सरकार को अधिक ध्यान देने की जरूरत है। लेकिन कांग्रेसी कहते हैं कि लोगों को साम्प्रदायिक प्रवृत्ति का नहीं होना चाहिए, और इन पिछड़े वर्गों के लिए कोई विशेषाधिकार नहीं मांगा जाना चाहिए। दूसरी समस्या भारत में गरीबी की समस्या है। भारत में लोग बहुत गरीब हैं । इतने गरीब कि 90 प्रतिशत लोगों के पास पेट भर भोजन नहीं है। उनके पास कपड़े नहीं है। उनके पास रहने के लिए कोई मकान नहीं है। हर साल करोड़ों रुपये के खाद्य पदार्थ आयात किये जाते हैं। यदि हमें खाद्य पदार्थ भी आयात करना पड़ता है और इतना धन खर्च करना पड़ता है तो हम कैसे आगे चल पाएंगे? लेकिन कांग्रेसियों के दिमाग में ये सब चीज नहीं हैं। उन्हें केवल एक समस्या का हल निकालना है और वह है मुस्लिम समस्या।

''मैं आपको यह बताना चाहता हूँ कि हम अनुसूचित जाति फेडरेशन के माध्यम से आगामी चुनाव में उम्मीदवार खड़े कर रहे हैं। अनुसूचित जाति फेडरेशन सभी पिछड़े वर्गों के लिए है। प्रत्येक पिछे़ वर्ग को प्रतिनिधित्व दिया जाएगा, किसी

को इससे डरने की जरूरत नहीं है। चमार और भंगी सब बराबर हैं। इमें एकजुट रहना चाहिए और किसी को अपने आपको दूसरे से अलग नहीं सोचना चाहिए। मैं सभी स्त्री और पुरुषों से अनुरोध करना चाहता हूँ, कि वे मतदान के दिन हर चीज छोड़कर मतदान केंद्र जाएं और अपना वोट डालें। पहले ही हमारे वोट कम हैं और यदि मतदाता उस दिन अपना वोट नहीं डालते हैं, तो यह हमारे दिए अच्छा नहीं होगा। हमारा प्रतिनिधि नहीं आ पाएगा। मतदान का दिन अनुसूचित जातियों के लिए जीवन –मरण का दिन है।

''प्रत्येक राजनीतिक दल को जो आगामी चुनाव में भाग ले रहा है, एक पार्टी प्रतीक आबंटित किया गया है। हमारे फेडरेशन का प्रतीक हाथी है। मैंने हाथी का चुनाव इसलिए किया है कि हमारे लोगों के मन में कोई भ्रांति न हो। कुछ पार्टियों ने बैल, घो, गधे अपने चुनाव चिह्न के रूप में चुने हैं लेकिन मैंने सबसे अलग हाथी का चुनाव किया है।

''इस बार यहां संचयी मतदान प्रणाली नहीं होगी, ताकि हम अपने सारे मत अपनी पसंद के एक ही उम्मीदवार को डाल सकें। लेकिन यहां वितरणीय प्रणाली होगी। और हमें अपने मतों को विभिन्न उम्मीदवारों में विभाजित करना होगा। ऐसे निर्वाचन क्षेत्र में जहां कोई सीट अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित है, वहां लोगों को दो वोट मिलेंगे, एक साधारण सीट के लिए और दूसरा आरक्षित सीट के लिए। हम दोनों वोट अपनी पार्टी के उम्मीदवारों को नहीं डाल सकते जो आरक्षित सीट पर खड़ा है। हम उसके पक्ष में केवल एक वोट डाल सकते हैं, और दूसरा वोट हमें साधारण सीट पर खड़े दूसरे पार्टी के उम्मीदवार को देना होगा। इसलिए हमें किसी पार्टी के साथ सहयोग करना होगा जो अपना दूसरा वोट हमारे उम्मीदवार को दें और हमारा दूसरा वोट बदले में प्राप्त करें। हमने अभी तक यह तय नहीं किया है कि हम किस पार्टी से हाथ मिलाएंगे। बहुत सी पार्टियों ने गठजोड़ के लिए हमसे निवेदन किया है लेकिन अभी तक कोई अंतिम रूप नहीं दिया गया है। बातचीत चल रही है। किसी पार्टी से हाथ मिलाने से पहले हमें अनेक बार सोचना होगा। लेकिन हमें किसी न किसी पार्टी के साथ तो हाथ मिलाना होगा।

'' अंत में, मैं आप को यह बताना चाहता हूँ कि हजारों लोग पंजाब और उत्तर प्रदेश से तथा अन्य सुदूर स्थानों से अपनी शिकायतें मेरे सामने रखने के लिए दिल्ली आते हैं। कुछ लोगों की शिकायत है कि उन्हें जमींदारों द्वारा पीटा गया

है। जब उन्होंन संबंधित प्राधिकारियों से आवेदन किया तो फैसला उनके खिलाफ दिया गया क्योंकि सत्तारूढ़ लोग भी सवर्ण जातियों के हैं। इस प्रकार ऐसी अनेक शिकायतें हैं, लेकिन मेरे लिए अकेले उन सब से निपटना संभव नहीं है। बहुत से लोग निराश होकर अपने घर लौटते हैं। इसलिए मैंने दिल्ली में एक भवन बनाने का निश्चय किया है और वहां एक अधिवक्ता रखन का फैसला किया है। वह अधिवक्ता लोगों की शिकायतों की जांच करेगा। उन्हें यथोचित सलाह देगा। इस काम के लिए हमने पहले ही नई दिल्ली में एक भूखण्ड खरीद लिया है और उस भूखण्ड पर हम एक भवन बनाना चाहते हैं जो फेडरेशन का प्रधान कार्यालय होगा। वहां बाहर से आये लोगों का स्वागत किया जाएगा और उनकी शिकायतें सुनी जाएंगी। हमारे पास यह भवन बनाने के लिए पर्याप्त धन नहीं है। जबकि वह नितांत अनिवार्य है। इसलिए मेरा अनुरोध है कि आप सब अपने साधनों के अनुसार कुछ अंशदान अवश्य करें। इस प्रकार हम अपना प्रयोजन पूरा करने में कामयाब होंगे। बाबा तुलादास भवन के लिए धन संग्रह करने के लिए पूरे पंजाब का दौरा करेंगे। मैं एक बार पुनः आपसे अनुरोध करता हूँ कि इस महान लक्ष्य के लिए उदारतापूर्वक अंशदान करें।

● ● ●

127
अपना लक्ष्य पाने के लिए गरीबों को अलग से एकजुट होना होगा

पटियाला, पंजाब में 29 अक्टूबर 1951 को चुनाव अभियान के दौरान डॉ. अम्बेडकर का भाषण उन्होंने कहा–प्रिय भाइयो!

''जैसा कि मेरे मित्र श्री राजभोज ने आपको बताया है कि आज मेरी तबीयत ठीक नहीं है। मुझे लंबी सड़क यात्रा करनी पड़ी थी इसलिए मेरा स्वास्थ्य ऐसा है। अतः मैं बहुत लम्बा तो नहीं बोल सकूंगा, लेकिन कुछ महत्वपूर्ण मुद्दे हैं जिन पर मैं बोलूंगा।

चुनावों में पूरा हिंदुस्तान व्यस्त है। बहुत से राजनेता और राजनीतिक दल ऐसे भी हैं, जिनके पास चुनाव के अलावा कुछ और भी नहीं। आगामी चुनावों के प्रति लोगों की चिंता देखकर मुझे अच्छा लगता है और मेरा मानना है कि किसी भी पार्टी या व्यक्ति को वोट देने से पहले हमें सौ मर्तबा सोचना चाहिए। आज जिन लोगों को चुन लिया जाएगा, वे पूरे पांच साल तक लगातार सत्ता में रहेंगे। इसलिए हमें यह काम सावधानी से करना होगा। यह केवल राजनीतिक दलों के लिए ही नहीं, बल्कि लोगों के लिए भी जीवन–मरण का प्रश्न है। अतएव प्रत्येक नागरिक और प्रत्येक राजनीतिक दल को, चुनाव में उचित प्रकार से हिस्सा लेना होगा, क्योंकि उनका अस्तित्व संकट में है।

हम जानते हैं कि भारतवर्ष में कांग्रेस आज सत्तारूढ़ दल है। चालीस वर्ष पुरानी इस पार्टी के पास खर्च करने के लिए काफी धन है। पिछले चार–पांच वर्ष से कांग्रेस पार्टी भारत पर राज कर रही है और कांग्रेसी लोग लोगों से कांग्रेस के लिए वोट मांग रहे हैं। उनका तर्क है कि दूसरी पार्टी इतनी मजबूत नहीं है कि सरकार चला सके औरजो उपलब्धियां अतीत में कांग्रेस ने हासिल कर ली है तथा भविष्य में हासिल कर लेगी, वह किसी दूसरी पार्टी के बूते के बाहर हैं। उनका कहना है कि चूंकि केवल कांग्रेस सरकार के नेतृत्व में ही भारत फल–फूल सकता है, इसलिए लोगों को चाहे उनका मजहब, उनकी जाति या संप्रदाय कुछ भी हो, चाहिए कि वे कांग्रोस के प्रत्याशियों को वोट दें तथा आगामी चुनाव में उन्हें जिताएं। कांग्रेसी यही प्रचार कर रहे हैं।

यह ठीक है कि कांग्रेस के पास प्रचार के इतने साधन उपलब्ध हैं कि कांग्रेस पार्टी के टिकट पर खड़े होने वाले हर उम्मीदवार के पास अपने प्रचार के लिए सौ से भी ज्यादा एजेंट इशारे पर चलने के खड़े होंगे। कांग्रेस के मुख्यालय में उनमें बहुत सारे सरकारी नौकरों की तरह काम कर रहे हैं। उनकी हर शाखा के लिए एक कार्यालय बना दिया है। यह सब धन के बल पर है। कांग्रेस भारत की सबसे समृद्ध पार्टी है। पैसे से वह जो चाहे कर सकती है। बिना धन के कोई पार्टी अपनी प्रचार नहीं कर सकती है और बिना किसी भरपूर प्रचार के कोई दूसरी पार्टी फल–फूल नहीं सकती। कांग्रेस ने प्रचार द्वारा जनमत को अपने पक्ष में इस कदर मोड़ लिया है कि अब इसकी आड़ में वह सब कुछ कर लेने का प्रयास कर रही है। कांग्रेस को सत्ता में आये हुए अब तक चार बरस हो चले हैं और आप सब भली भांति समझ सकते हैं कि कांग्रेस ने लोगों के लिए क्या किया है। न रोटी है, न कपड़ा है और न मकान। यदि इन चार सालों में कांग्रेस ये चीजें नहीं दे पाई तो कोई यह उम्मीद कैसे करें कि एक बार फिर सत्ता में आने के बाद यह लोगों के लिए काम आएगी? कांग्रेस राज में केवल तीन ही उद्योग फले–फूले हैं और वे हैं भ्रष्टाचार, भाई–भतीजावाद तथा कालाबाजारी। आज भ्रष्टाचार तथा अन्य बुराइयां भारत में अंग्रेजी हुकूमत के समय की तुलना में और बढ़ गई है। हम लोग भूख से मर रहे हैं और अमीरों तथा गरीबों के बीच एक गहरी खाई बन चुकी है। अगर कांग्रेस इन विसंगतियों को पांच सालों में समाप्त नहीं कर सकी, तो भविष्य में कैसे कर लेगी? दिन–ब–दिन अमीर आदमी अमीर और गरीब आदमी गरीब होता जा रहा है। इस दिशा में कांग्रेस ने क्या किया है?

कांग्रेस सरकार भ्रष्ट सरकार है। कांग्रेसी मंत्री घूस लेते हैं। वे कालाबाजारी के माध्यम से पैसा प्राप्त करते हैं। वे भ्रष्ट है। और जब हमारे मंत्रीगण इतने पतित चरित्र के हैं तो आप अच्छी तरह समझ सकते हैं कि उनके अधीनस्थों का आचरण क्या होगा और तब पूंजीपतियों के अधीन श्रमिकों की क्या दशा होगी। मुझे उम्मीद थी कि हमारे वर्तमान प्रधानमंत्री इस संबंध में कुछ करेंगे और घूसखोरी, भ्रष्टाचार, कालाबाजारी आदि हमेशा के लिए समाप्त हो जाएंगे। लेकिन मुझे यह देखकर बेहद अफसोस हुआ कि नई दिल्ली में अखिल भारतीय कांग्रेस की आम सभा में पं0 नेहरू ने कहा कि चूंकि भ्रष्टाचार अन्य कई देशों में भी व्याप्त है। इसलिए अगर भारत में भी यह है तो हमें अधिक चिंता करें की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने तो यह भी कहा कि दूसरे देशों की तुलना में हमारे देश में भ्रष्टाचार का स्तर छोटा है। मुझे नहीं पता है कि जब प्रधानमंत्री यह कहकर भ्रष्टाचार को प्रोत्साहन दे रहे हैं तो इसका स्तर यहां छोटा है तो वे इस बुराई को समाप्त कैसे कर पाएंगे? मैं कहता

हूँ कि अगर यह छोटे स्तर पर है तो तब भी इसका उन्मूलन किया जाना चाहिए। इस दिशा में प्रधानमंत्री जी ने क्या किया है? यदि मंत्री और बड़े सरकारी अधिकारी भ्रष्ट हो तो क्या इन्हें चुप रहना चाहिए।

जो कुछ मैंने कहा है वह सिर्फ मेरे द्वारा की गयी आलोचना नहीं है, खुद कांग्रेसियों ने कांग्रेस के मंत्रियों की निंदा की है। जैसे कि मद्रास में श्री टी. प्रकाशम कुछ समय के लिए मुख्यमंत्री थे। जब उन्हें सरकार से निकाल दिया गया था और उनकी गद्दी पर श्री राजे विराजमान हुए, उनके विरूद्ध कुछ आरोप थे और जांच किये जाने पर पाया गया कि उन्होंने घूस इत्यादि से काफी धन कमा लिया था। उन्होंने हजारों लाइसेंस और परमिट जारी किये थे। ठीक यही मध्य प्रदेश में भी हो रहा है। बहुत से मंत्री हैं जिन्होंने घूसखोरी की है। लेकिन वे अभी तक इस काबिल सरकार के मंत्री बने हुए हैं। उनके विरुद्ध कार्रवाई करने की बात तो दूर, उन्हें और भी प्रोत्साहन दिया जा रहा है जो लोग इन मंत्रियों पर आरोप लगाते हैं उन्हें जेल भेज दिया जाता है। पंजाब में क्या हो रहा है? श्रीमान सच्चर तथा डॉ. भार्गव एक दूसरे से लड़ रहे हैं। दोनो ही पंजाब में मुख्यमंत्री थे। दोनों ही अपने निर्दोष होने की बात कह रहे हैं। दोनो ने एक दूसरे के विरुद्ध जांच की मांग की है। इस तथ्य से कोई इनकार नहीं कर सकता है कि पंजाब में अपने कार्यकाल के दौरान दोनों ने घूसखोरी की है तथा कालाबाजारी को प्रश्रय दिया है। अब वे फिर से मुख्यमंत्री की जुगत में लगे हैं। आगामी चुनाव में कांग्रेस की टिकटों पर वे अपने खेमे के इतने प्रत्याशियों को मैदान में उतारना चाहते हैं, जो उनके मुख्यमंत्री बनने के समर्थन करने के लिए पर्याप्त हों। पंजाब में पर्चा दाखिल करने की अंतिम तिथि 5 नवम्बर तक है लेकिन आज 29 अक्टूबर 1951 की तारीख तक आपसी मतभेद के कारण कोई अंतिम सूची नहीं बन पाई है, और मुझे लगता है कि कभी इस पर एकमत नहीं हो पाएंगे।

यदि किसी व्यक्ति ने सरकार के किसी मंत्री अथवा अधिकारी पर घूसखोरी का आरोप लगाया है, तो सरकार का यह कर्तव्य है कि जांच शुरू करे और दोषी को सजा दे। कोई भी यदि सरकार दर अपने मंत्रियों व वरिष्ठ पदाधिकारियों को इस कद घूसखोरी करने की अनुमति दे रही हो, तो उसका अस्तित्व शेष नहीं रह सकता है। अगर सरकार का हर मंत्री पैसा कमाने लगेगा, तो सरकार क्या करेगी? ब्रिटेन के हाउस ऑफ कामन्स के एक मंत्री पर घूसखोरी का आरोप लगा। इंग्लैण्ड के तत्कालीन प्रधानमंत्री मि. ऐटली ने तुरंत जांच का आदेश दिया। मामले की जांच करने के लिए एक आयोग गठित हुआ। अपनी रिपोर्ट में आयोग ने बताया कि

संबंधित मंत्री ने अपने एक मित्र से कुछ कपड़े लिए थे और वह इतफाक से एक व्यवसायी है, इसलिए उनके इस कृत्य को घूसखोरी की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। लेकिन मि. ऐटली ने उस मंत्री को मंत्रिमंडल से यह कहकर निष्कासित कर दिया कि उन्होंने कपड़े बिना कोई पैसा दिये एक व्यवसायी से प्राप्त किये, वह चाहे उनका मित्र हो अथवा शत्रु। लेकिन हमारी कांग्रेस सरकार अपना यह कर्तव्य भी महसूस नहीं करती, कि मंत्रियों के विरुद्ध आरोपों की जांच होनी चाहिए, मंत्रिमंडल से उन्हें बर्खास्त करना तो दूर की बात है।

कांग्रेसी, लोगों से कांग्रेस के लिए वोट डालने के लिए कहते हैं और यह वायदा करते हैं, कि वे सभी के हित के लिए काम करेंगे। उनका कहना है कि वे गरीबी समाप्त कर देंगे और पिछड़े वर्गों को बेहतर जीवन स्तर प्राप्त करने में सहायता करेंगे। मैं आप लोगों से पूछना चाहता हूँ क्या सांप और नेवला साथ–साथ रह सकते हैं? क्या बिल्ली, चूहे की सहायता कर सकती है? क्या हाथी कभी चींटी के साथ रह सकता है? निश्चित रूप से अगर सांप चाहे कि वह नेवले के साथ घुल–मिलकर रहे, और इसका कोई लाभ हो, तो उसकी समझ गलत है। नेवला सांप को खा जाएगा। चूहा अगर बिल्ली की संगत करेगा तो बिल्ली उसे निगल जाएगी। इसी तरह हाथी चींटी के साथ सुखपूर्वक नहीं जी सकता है। नेवला सांप का दुश्मन है, बिल्ली चूहे की शत्रु है और चींटी हाथी की शत्रु है। वे कभी एक–दूसरे के साथी नहीं बन सकते।

इसी तरह इंसानों की दुनिया में, मजबूत और कमजोर दोनों तरह के लोग हैं। वे एक–दूसरे के शत्रु हैं और निश्चित है कि कमजोर लोग मजबूत लोगों की संगति में आराम से नहीं रह सकते। साहूकार अपने फायदे के लिए लेनदार का शोषण करेगा ही। बनिया गरीबों से जितना निचोड़ सकता है उतना निचोड़ेगा। गरीब अनुसूचित जातियों के लिए ब्राह्मण कभी सहानुभूति नहीं दिखाएगा, क्योंकि ऐसा करने पर उनकी सेवा कौन करेगा? इस संसार में बहुत–से वर्ग हैं जो परस्पर शत्रु हैं। धनी वर्ग भी और गरीब वर्ग भी, और सभी हमेशा गरीबों का शोषण करते हैं। अब मेरा आपसे सवाल है कि अगर हम सांप, नेवला, बिल्ली, चूहा, हाथी और चींटी की कोई पार्टी बनाते हैं तो क्या उसमें सांप, चूहा और हाथी सुरक्षित रह सकेंगे? यकीनन तौर पर नहीं। वे हमेशा अपने मालिकों की दया पर निर्भर रहेंगे। इसी प्रकार यदि दलित वर्ग ब्राह्मणों से हाथ मिलाकर एक राजनीतिक पार्टी बना लेते है, तो क्या आपको लगता है कि दलित वर्ग वहां सुरक्षित रहेगा? मैं आप लोगों को आगाह करता हूं कि आप सतर्क हो जाएं और इस मामले पर अच्छी तरह से विचार करें। आप कांग्रेस के बिछाए जाल में न उलझें। अगर आपको लगता है कि सवर्ण जाति

के लोगों से हाथ मिलाकर आपकी स्थिति सुधर जाएगी, तो आप गलत समझ रहे हैं। उच्च वर्ग के लोग पिछड़े वर्गो का सुख छीन लेंगे जबकि हमारे लोग जहां के तहां रह जाएंगे। अमीरों के अधीन रहकर गरीबों का विकास नहीं होगा।इसलिए उन्हें अपनी मंजिल पाने के लिए पृथक रूप से एकजुट होना पड़ेगा।

दलित वर्गों के हितों की रक्षा करने के लिए हमने 'अनुसूचित जाति फेडरेशन' नाम से स्वयं की एक पार्टी गठित की है। अपने प्रयासों से हमने कुछ विशेषाधिकार सुरक्षित करवा लिए हैं, जिन्हें स्वयं संविधान में शामिल किया गया है। राज्यों की विधानसभाओं तथा संघ की संसद में अनुसूचित जातियों के लिए कुछ सीटें आरक्षित कर दी हैं। इन सीटों से केवल अनुसूचित जाति के लोग ही चुने जा सकेंगे। लेकिन अगर हमारे सभी प्रतिनिधि विधानसभाओं के लिए नहीं चुने जाते हैं और कांग्रेसी उम्मीदवार सुरक्षित सीटों से जीत जाते हैं, तब हमारे अधिकारों की रक्षा नहीं हो सकेगी। हमारे वे लोग जो कांग्रेस की टिकटों पर चुने जाएंगे, वे कांग्रेस के हाथ की कठपुतली बन जाएंगे और वे खुद अपना उल्लू सीधा करने लगेंगे। अनुसूचित जाति के दो उप–मंत्रियों का उदाहरण ले लीजिए जो 'पेपसू मंत्रालय' में हैं। उनका चुनाव कांग्रेस के टिकटों पर हुआ है। उन्होंने आपके लिए क्या किया? हमारे बच्चे अशिक्षित हैं। हम जितने गरीब पहले थे, उतने ही अब हैं। हमें जमीनें नही मिलीं। गांवों में हमारे साथ मनुष्यों की तरह व्यवहार नहीं किया जाता। क्या इस संबंध में उन्होंने कुछ किया? मुझे पता चला है कि जैसे ही उन्हें यह भनक लगी कि मैं पटियाला आ रहा हूं, उन्होंने विरोधी प्रचार करना शुरू कर दिया। उन्होंने अनुसूचित जाति के लोगों से रैली का बहिष्कार करने के लिए कहा। अब आप खुद ही निर्णय कर सकते हैं कि कांग्रेस की टिकटों पर चुने हुए लोग हमारे लिए क्या कर सकते हैं? कांग्रेस के टिकट की जुगत में रहने वाले लोग स्वार्थी हैं, और स्वार्थी लोग दूसरों के बारे में कभी नहीं सोचते। आप उनसे किसी चीज की उम्मीद नहीं कर सकते।

कांग्रेस में जाना आसान है। मेरे लिए तो मेरी योग्यताओं के कारण वहां जाना और भी आसान था। सभी लोग कांग्रेस में चले जाएं, यदि उसमें हम सबका लाभ हो। लेकिन यदि कांग्रेस में जाकर भी हमें कोई लाभ न मिले, तो हम वहां क्यों जाएं? हां! मैं मानता हूं कि मैं कांग्रेस सरकार में था। मैंने कभी कोई घूस नहीं लिया, मैंने कभी भी धन–संग्रह के लिए अनुचित साधनों का प्रयोग नहीं किया। मैं दावे के साथ कहता हूं कि मेरे विरुद्ध एक भी आरोप नहीं है।

सत्ता में कांग्रेस के आने से हमारी स्थितियां बदतर हो गयी हैं। हमारी शिकायतों का निपटान करने के लिए कोई भी सार्थक कदम नहीं उठाया गया है।

हमारे लोगों के हित के लिए कहा सब कुछ गया है, किया कुछ भी नहीं गया। हम स्पष्ट कर देना चाहते हैं कि हम भले ही बहुत अधिक दबे हुए हैं, और अगर यह दमन जारी रहा तो क्रांति को कोई नहीं टाल पाएगा। हमने सोचा कि हमारे हिन्दू भाई हमारे लोगों की भलाई के लिए कुछ करेगे, लेकिन हमारी सारी आशाओं के बदले हमें बेवकूफ बनाकर छोड़ दिया गया है। विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों के लिए कुछ सीटें आरक्षित कर दी गयी हैं लेकिन हमारे वास्तविक प्रतिनिधियों को इन सीटों से चुनने नहीं दिया है। यह आरक्षण सिर्फ दस वर्षों के लिए है और उसके बाद क्या होगा, हम नहीं कह सकते हैं। क्या आपको लगता है कि दस वर्षों के बाद हम इतने साधन संपन्न हो जाएंगे कि समाज में उच्च जाति के लोगों की बराबरी कर सकें? क्या हमारे लोग इतने संपन्न हो जाएंगे कि हिंदुओं के साथ बराबरी की हैसियत से लड़ाई लड़ सकें? मैं सवर्ण जाति के लोगों को चेतावनी दे रहा हूं कि यदि हमारी स्थितियां आज की तरह ही बनी रहीं, तो हमें कोई दूसरा हथकंडा अपनाना पड़ेगा। इस तरह के जीवन से हम तंग आ चुके हैं और अब इसे बिल्कुल बर्दाश्त नहीं करेंगे।

ब्राह्मण और बनिये, आजादी के लिए कभी शहीद नहीं हुए, फिर भी आज लाभ लेने वाले भाग्यशाली लोग वे ही हैं। मैं जानना चाहूंगा कि पिछले युद्ध में उनके कितने लोगों की जानें गयी हैं? उनके कितने लोग सेना में हैं? अगर भर्ती हो रही हो, तो हमारे लोग सेना में जाने वालों में सबसे पहले रहते हैं। वे अपना कर्तव्य वैसे ही करेंगे जैसे वे पहले से करते आ रहे हैं। गरीबों ने हमेशा ही अमीरों की सुरक्षा की है, फिर भी अमीरों को गरीबों से कोई सहानुभूति नहीं है। इसीलिए मैं सवर्ण जाति के इन लोगों को चेतावनी दे रहा हूं कि अगर इन पिछड़े वर्गों की बेहतरी के लिए कुछ नहीं किया गया, तो फिर क्रांति अवश्यम्भावी है।

पिछले 30 वर्षों से मैंने अपने समाज के लिए संघर्ष किया है। मेरा कोई स्वार्थ नहीं है। मुझे इस बात की कोई शिकायत नहीं रही कि मैं मंत्री नहीं हूं या फिर यह कि मुझे कोई महत्वपूर्ण पद दे दिया जाए। मैंने स्वयं से भी कभी कोई इच्छा नहीं की है। गांधी ने हमेशा मेरा विरोध किया। जब गांधी स्वराज की मांग कर रहे थे, तो मैंने उनसे कहा था कि मैं उनकी मांग से पूरी तरह सहमत हूं और निश्चित रूप से उनका समर्थन करूंगा लेकिन मैंने उनसे सिर्फ एक सवाल किया था कि उनके तथाकथित 'स्वराज' में अनुसूचित जातियों की स्थिति क्या होगी? क्या हमारे लोगों को अच्छा जीवन–स्तर दिया जाएगा? क्या वे शिक्षित हो पाएंगे? क्या स्वराज में हमारे लोगों का बिल्कुल उत्पीड़न नहीं होगा? अब जब भारत के लोग आजाद हैं, तो हमें इसमें क्या लाभ मिले हैं? अगर आज हम पिछड़े हुए हैं, तो उन सवर्ण लोगों के कारण हैं, जिन्होंने हमें समाज से दूर कर रखा है। उन्होंने

हमें सिर्फ इसलिए कोई विकास नहीं करने दिया, क्योंकि उनकी सेवा करने के लिए कोई अन्य वर्ग नहीं था। कोई ऐसा समुदाय नहीं था, जो उन निकृष्ट कार्यों को करता जो हम करते रहे हैं। हम उनके जैसे ही हैं। फर्क इतना है कि उनके धर्म के अनुसार इस संसार में हम उनकी सेवा के लिए हैं, उनका बराबरी का हक पाने के लिए नहीं। ये उच्च वर्ग के लोग हमारे सामने पहाड़ों जैसी समस्याएं रख रहे हैं। हमारे सामने तरह–तरह की मुसीबतें पैदा की जा रही हैं ताकि हम किसी प्रकार की प्रगति न कर सकें।

हमने कुछ अधिकार प्राप्त तो कर लिए हैं, लेकिन ये कांग्रेसी हमें इन अधिकारों का लाभ प्राप्त करने से वंचित करने के लिए अड़े हुए हैं। अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षित सीटों पर वे अपने खुद के उम्मीदवारों को खड़ा कर रहे हैं। जब सामान्य सीट के लिए कांग्रेस पार्टी किसी उच्च वर्गीय व्यक्ति को टिकट देती है, तब उनसे ढेरों सवाल किये जाते हैं। सबसे पहले वे यह जानना चाहते हैं कि वह आदमी कितनी बार जेल जा चुका है। वे जानना चाहते हैं कि आजादी की लड़ाई में उन्होंने कितनी रुचि दिखाई थी। मैं इन कांग्रेसी लोगों से पूछता हूं कि जब कोई अनुसूचित जाति का उम्मीदवार किसी आरक्षित सीट के लिए उनका टिकट मांगता है, तो ये सारे सवाल उससे क्यों नहीं किये जाते हैं? राष्ट्र को दी गई उनकी सेवाओं को महत्व क्यों नहीं दिया जाता? आरक्षित सीटों के लिए वे केवल गैर–लोकप्रिय और अशिक्षित लोगों का चयन ही क्यों करते हैं? उनके चयन का आधार क्या है? वे उनसे क्यों नहीं पूछते हैं कि सविनय अवज्ञा आंदोलन में उन्होंने कांग्रेस की सहायता की थी अथवा नहीं? क्यों सिर्फ मूर्खों का चयन किया जाता है?

अगर सदनों में 'अनुसूचित जाति फेडरेशन' के माध्यम से हमारे वास्तविक प्रतिनिधियों का चयन हो, तो हमारी समस्याओं का निस्तारण हो सकता है। अगर वे हमारा काम नहीं करते हैं, तो हम उनकी भर्त्सना कर सकते हैं। उनसे जवाबदेही ले सकते हैं। मुझे अब राजनीति में आये 30 बरस हो चुके हैं। मैंने और गांधी ने राजनीति में साथ–साथ कदम रखे थे। आठ वर्षों के लिए मैं मंत्री था। अगर मैं चाहता तो जीवन–पर्यन्त सरकार में मंत्री बना रह सकता था, लेकिन मेरा कोई स्वार्थ नहीं था। इसलिए मैंने कांग्रेस को छोड़ दिया है, क्योंकि मुझे लगता है कि वहां रहते हुए मैं अपने समुदाय के लिए कुछ नहीं कर सकता हूं। अगर आप सबने मेरे अनुरोध पर ध्यान नहीं दिया और हमारे वास्तविक प्रतिनिधियों का चयन नहीं हुआ, तो हम हमेशा के लिए कष्ट में जिएंगे। मैं आपको बताता चलूं कि यह आरक्षण केवल दस वर्षो अर्थात् केवल दो चुनावों के लिए है। दस वर्षों के पश्चात् आरक्षण नहीं रहेगा। मैं तो चाहता था कि आरक्षण तब तक लागू रहे जब तक छुआछूत है, लेकिन हमारे अपने

सदस्यों ने, जिनका संसद में निर्वाचन कांग्रेस की टिकटों पर हुआ था, मेरा विरोध किया कि मैं अन्य जाति के हिंदुओं को छोड़ रहा हूं। कांग्रेस के टिकट की लालसा रखने वाले इन लोगों से मैं पूछता हूं कि जब आरक्षण सामाप्त हो जाएगा तब वे क्या करेंगे? क्या तब कांग्रेस उन्हें अपनी टिकट पर सामान्य सीटों से चुनाव में खड़े होने के लिए कहेगी? तब उन पर कोई थूकेगा भी नहीं। अतीत में इन सवर्ण लोगों ने हमारे साथ अपमानजनक बर्ताव किया था, और जब आरक्षण समाप्त हो जाएगा, तब वे फिर ऐसा करेंगे। मैं आपसे कहे देता हूं कि आज खुद वे हमसे सहानुभूति जता रहे हैं, तो सिर्फ इसलिए कि वे हमें मूर्ख बनाना चाहते हैं और आरक्षित सीटों पर जी–हुजूरी करने वालों को लाना चाहते हैं। आरक्षण समाप्त हो जाएगा, तो फिर से वे हमें भंगी, चमार संबोधित करेंगे। इसलिए मैं आप लोगों से कहना चाहता हूं कि अब आपको बहुत सतर्क हो जाना चाहिए और 'अनुसूचित जाति फेडरेशन' के बैनर तले संगठित हो जाना चाहिए। यह आपका कर्तव्य है कि आप अपना वोट संघ के उम्मीदवारों को दें जो आपके उद्देश्यों के लिए प्राणों की आहुति देंगे।

अब मैं आपको कुछ महत्वपूर्ण बातें बताना चाहता हूं सबसे पहले यह कि अनुसूचित जाति फेडरेशन का चुनाव चिह्न 'हाथी' है। मुझे ज्ञात हुआ है कि किसी अन्य पार्टी ने भी इस चिह्न का चुनाव यह कहकर किया है कि हमारा चिन्ह सिर्फ 'हाथी' है जबकि उनके चिह्न में हाथी पर एक चरखा भी है। इसलिए इससे सतर्क रहें, भ्रमित न हों। हमारी पार्टी का चिन्ह्न मात्र हाथी है, इसमें चरखा नहीं है।

दूसरी बात हमारी संख्या बहुत कम है। अगर हम अपने उम्मीदवार खड़े करते हैं, तो वे दूसरे दलों के सामने नहीं टिक पाएंगे, क्योंकि बहुमत उन्हीं लोगों के पास हैं गांवों में हमारी संख्या सिर्फ 10 प्रतिशत है और आप भी मानेंगे कि इतने कम वोटों से हम आगामी चुनावों में सफल नहीं हो पाएंगे। इसलिए मैं आप सभी से निवेदन करूंगा कि हर स्त्री हर पुरुष अन्य सभी कार्यों को छोड़कर चुनाव के दिन अपना वोट जरूर दें। परिणामतः कम से कम हमें हमारा वोट तो मिलेगा। और यदि हमारे कुछ मतदाताओं ने भी मतदान नहीं किया, तो हमारे उम्मीदवार का जीतना बहुत मश्किल हो जाएगा।

तीसरी बात जो मैं आपके जेहन में डालना चाहता हूं वह ये है कि चूंकि हम अल्पसंख्यक हैं, इसलिए हमें चुनावों में किसी अन्य दल से गठजोड़ करना पड़ेगा। इस बार मतदान की वितरण प्रणाली रहेगी और जहां भी हमारी सीटें आरक्षित हैं, सभी लोगों को दो मताधिकार दिये जाएंगे। एक मत उस उम्मीदवार के लिए जो सामान्य सीट पर चुनाव लड़ेगा और दूसरा मत उस उम्मीदवार के लिए जो आरक्षित सीट पर लड़ेगा। हम अपना एक मत हमारे उस उम्मीदवार को देंगे, जो आरक्षित

सीट पर खड़ा होगा तथा दूसरा मत हम उस पार्टी के उम्मीदवार को देंगे जो अपना दूसरा वोट हमारी पार्टी के उम्मीदवार को देगा। हमें अपना गठबंधन किस पार्टी के साथ करना है, यह हमने अभी तय नहीं किया हैं बातचीत चल रही है और कुछेक दिनों में यह तय हो जाएगा। लेकिन यह बात हमारे मस्तिष्क में बिल्कुल साफ रहनी चाहिए कि हम किसी भी कीमत पर कांग्रेस से हाथ नहीं मिलाएंगे। यह अब कमजोर हो गयी है, और उसके सदस्य आपस में ही लड़ रहे हैं। कांग्रेस अपनी स्वाभाविक मृत्यु को प्राप्त होगी।

अंत में मैं एक बार फिर से आपसे निवेदन करूंगा कि आप उसी उम्मीदवार को वोट दें जो अनुसूचित जाति फेडरेशन के टिकट पर चुनाव लड़ रहा हो। संघ के उम्मीदवार आपके वास्तविक प्रतिनिधि हैं, जो अपने समुदाय के हित के लिए सब कुछ करेंगे। वे स्वार्थी नहीं रहेंगे। वे मरते दम तक अपने समुदाय की सेवा करेंगे।

के हित के लिए सबकुछ करेंगे। वे स्वार्थी नहीं रहेंगे। वे मरते दम तक अपने समुदाया की सेवा करेंगे। हमें अपने भाई–बन्धुओं को बचाना चाहिए।

128

7 नवम्बर, 1951 को डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने लखनऊ विश्वविद्यालय के छात्रों को संबोधित किया। अनुसूचित जाति फेडरेशन के नेता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने ''पिछड़ी जातियों की उपेक्षा'' के विरुद्ध देश को चेतावनी दी और कहा कि ''अगर वे समानता के स्तर तक उठने के अपने प्रयास में विफल कर दिए गए तो अनुसूचित जातियां साम्यवादी व्यवस्था का वरण कर सकती हैं, और तब भारत का भविष्य तहस–नहस हो जाएगा।''

डॉ. अम्बेडकर ने कहा–''यदि हम चाहते हैं कि इस तरह की कोई क्रांति न हो, तो राजनेताओं से मेरा प्रथम निवेदन होगा कि वे तत्काल इस समस्या को स्वीकार कर लें।'' डॉ. अम्बेडकर ने क्षोभ व्यक्त किया और कहा कि यद्यपि संविधान ने भारत के सामाजिक और आर्थिक जीवन में 'एक व्यक्ति एक वोट' के सिद्धांत को मानते हुए व्यस्क मताधिकार की व्यवस्था को मान लिया है, पर उसे स्वीकार नहीं किया गया है। डॉ. अम्बेडकर ने कश्मीर की समस्या का हवाला देते हुए कहा कि कश्मीर एकल राज्य नहीं है। वह एक सामासिक राज्य है जिसमें हिन्दू, बौद्ध तथा मुस्लिम सभी हैं। जम्मू और लद्दाख गैर–मुस्लिम क्षेत्र हैं, जबकि कश्मीर घाटी मुस्लिम क्षेत्र है।

उन्होंने कहा ''कश्मीरी लोग कैसे वोट करेंगे वह हम नहीं बता सकते।

लेकिन भारत सम्पूर्ण जनमत–संग्रह के लिए संयुक्त राष्ट्र के प्रति कटिबद्ध है। अगर जनमत–संग्रह पाकिस्तान के पक्ष में जाता है, तो 20 प्रतिशत गैर–मुस्लिम आबादी का क्या होगा? यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण है। अगर हम सभी कश्मीरियों को नहीं बचा सकते, तो कम से कम हमें अपने भाई–बुंधओं को बचाना चाहिए। यह समझौते का सीधा और स्पष्ट विश्लेषण है जिसको नकारा नहीं जा सकता।''

अहंकारमय भविष्य

एक छात्र के प्रश्न का उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि भारत के भविष्य को लेकर उनमें गहरी निराशा है, क्योंकि विदेशी राष्ट्रों की नजर में भारत कोई महत्वपूर्ण राष्ट्र नहीं है और आंतरिक रूप से ब्रिटिश शासनकाल की तुलना में हमारे प्रशासन का पूरी तरह क्षरण हो चुका है। भ्रष्टाचार और भाई–भतीजावाद हर जगह फैला हुआ है और कांग्रेस के ही मंत्रियों के विरूद्ध कोई जांच नहीं करवाई गई है, बल्कि वे तो उन्हें और भी सुरक्षा प्रदान कर रहे हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि ब्रिटिश शासन में 15–20 वर्षों में एक बार अकाल पड़ा था, लेकिन आजकल हर साल अकाल पड़ता है। वे बोले, ''इस देश की अर्थव्यवस्था को क्या हो गया है? क्या हम मक्खियों की भांति मरने वाले हैं?''

● ● ●

129

मैंने इस्तीफा पहले क्यों नहीं दिया?

''डॉ. भीमराव अम्बेडकर का बंबई में आगमन 20 नवम्बर 1951 को होगा और राज्य समाजवादी पार्टी व अनुसूचित जाति फेडरेशन द्वारा एक संयुक्त कार्यक्रम में उनका स्वागत किया जाएगा।

''डॉ. अम्बेडकर बंबई में राज्य के 6 दिवसीय चुनावी दौरे के लिए आ रहे हैं तथा अनुसूचित जाति फेडरेशन के चुनाव के प्रचार की शुरुआत करेंगे। चुनाव प्रचार अभियान शहर में 22 नवम्बर को एक आम बैठक के दौरान प्रारम्भ किया जाएगा।''

रविवार 18 नवम्बर 1951, को अनुसूचित जाति फेडरेशन के अध्यक्ष, डॉ. भीमराव अम्बेडकर का, उनके बंबई आगमन पर भारी भीड़ द्वारा गर्मजोशी से स्वागत किया गया।[1]

पूर्व विधि मंत्री का मंत्रिमंडल से उनके त्यागपत्र देने के बाद प्रथम बार शहर में आगमन पर स्वागत हेतु विक्टोरिया टर्मिनल पर 6000 से अधिक लोग एकत्रित हुए। जिनमें काफी महिलाएं भी थीं। वे एक सप्ताह तक बंबई में ठहरेंगे और फेडरेशन की ओर से चुनाव अभियान का उदघाटन करने वाले थे।

डॉ. अम्बेडकर उत्तरी बाम्बे सिटी (आरक्षित सीट) के निर्वाचन क्षेत्र से लोक सभा के लिए चुनाव लड़ रहे हैं और वे बष्हस्पतिवार को एक चुनावी सभा को संबोधित करेंगे।

जैसे ही डॉ. अम्बेडकर को लेकर पंजाब मेल स्टेशन पर पहुँची, पूरा वातावरण ''अम्बेडकर जिंदाबाद'' के नारों से गूंज उठा। बाम्बे सोशलिस्ट पार्टी और फेडरेशन द्वारा संयुक्त रूप से प्लेटफार्म पर उनका स्वागत किया गया। पार्टी के महासचिव श्री अशोक मेहता ने आगे बढ़कर उनका स्वागत किया और उनके डिब्बे में उनके साथ तकरीबन 15 मिनट के लिए बैठे रहे।

औपचारिक स्वागत के बाद डॉ. अम्बेडकर प्लेटफार्म सं. 8 तथा 9 के बीच वाले रास्ते से आखिरी छोर तक पहुंचे जहां उनके सम्मान में फेडरेशन की विभिन्न तालुका समितियों की व्यवस्था की थी। यहां तालुका समितियों तथा अन्य संस्थाओं

---

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 12 नवंबर, 1951

की ओर से डॉ. अम्बेडकर का माल्यार्पण किया गया।

डॉ. अम्बेडकर के पुराने सहयोगी श्री एस.के. बोले भी स्वागत करने वाले लोगों में एक थे। चूंकि श्री बोले के लिए अलग से बैठने की व्यवस्था नहीं की गई थी इसलिए जब डॉ. अम्बेडकर ने 85 वर्षीय श्री बोले को अपनी गोद में बैठने के लिए आमंत्रित किया तो सभा में आनंदमयी हास्य का वातावरण बन गया। इस हास्य के बीच में श्री बोले डॉ. अम्बेडकर की गोद में बैठ गए।

''22 नवम्बर 1951 को करीब 6:30 बजे शाम को मुंबई के भोईवाड़ा मैदान में अनुसूचित जाति फेडरेशन के तत्वाधान में डॉ. अम्बेडकर के लिए एक स्वागत समारोह आयोजित हुआ जिसकी अध्यक्षता श्री आर.सी. खरात ने की। लगभग 5,000 लोगों ने इसमें शिरकत की।

अध्यक्ष ने कहा कि बैठक का आयोजन डॉ. अम्बेडकर के स्वागत में अनुसूचित जाति फेडरेशन की मुंबई शाखा द्वारा किया गया है। उनके नेतृत्व में नीले झंडे तले एकत्रित होकर उन्होंने जबरदस्त एकता कायम कर ली है और अब तो दूसरे लोग भी नीले झंडे के पास जुटने लगे हैं। उन्होंने कहा कि डॉ. अम्बेडकर संसदीय चुनाव के लिए खड़े हुए हैं और अपने आम चुनाव के बारे में वे अनुदेश देंगे तथा यह भी कहा कि लोगों को उनके अनुदेशों पर अच्छी तरह से अमल करना चाहिए।

श्री जे.जी. भटनागर ने डॉ. अम्बेडकर तथा श्रीमती अम्बेडकर का माल्यार्पण कर स्वागत किया। उन्होंने बताया कि डॉ. अम्बेडकर को 25,000 रूपये जड़ित एक पर्स भेंट करने का निर्णय लिया गया था, लेकिन अभी तक वे उतनी राशि नहीं जुटा सके हैं। जो कुछ जुटाया गया है वह इन दो थैलों में रखा है और उम्मीद है कि शेष धनराशि शीघ्र ही जुटा ली जाएगी और चुनाव से पहले जल्द ही उनको भेंट कर दी जाएगी।

अपने स्वागत की प्रतिक्रिया में डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि बहुत—से लोग हैं जो उनसे दो सवाल कर रहे हैं, एक यह कि उन्होंने पहले इस्तीफा क्यों नहीं दिया? अगर वह पहले इस्तीफा दे देते तो कांग्रेस के विरुद्ध एक सशक्त मोर्चा बनाना मुमकिन हो जाता। दूसरा सवाल यह कि आखिर क्या वजह है कि पिछले चार सालों से वह कांग्रेस सरकार के मंत्रियों में से एक थे। वे मंत्रालय में इसलिए गए थे ताकि कांग्रेस के शीर्ष नेताओं के घनिष्ठ सम्पर्क में रहकर वे यह जान सकें कि वास्तव में वे लोग हरिजनों की भलाई करने के इच्छुक हैं या नहीं, और उनका अनुभव कहता है कि कांग्रेस के लोग वास्तव में हरिजनों का हित करने की इच्छा नहीं रखते। उन्होंने कहा कि दस सालों के लिए उन लोगों को लोक सभाओं और विधानसभाओं में आरक्षित सीटें मिली हैं, लेकिन उन्हें कोई संदेह नहीं है कि भले ही कांग्रेस सरकार ने छुआछूत समाप्त करने के लिए कानून बनाए हैं, दस सालों बाद भी छुआछूत बरकरार रहेगा और उनकी स्थिति यथावत

बनी रहेगी। उन्होंने बताया कि संविधान में प्रावधान किया गया कि हरिजनों को सरकारी विभागों में 12.5 प्रतिशत नौकरियां दी जानी चाहिए, लेकिन श्री मुंशी तथा अन्य कांग्रेसी लोग इस रियायत पर समय की पाबंदी लगाना चाहते थे, लेकिन उनके विरोध के कारण वे सफल नहीं हुए। एक बार उन्होंने श्री राजगोपालाचारी से पूछा कि कितने प्रतिशत हरिजन सरकारी नौकरियों में हैं तथा उन्होंने विभिन्न विभागों को जारी किए गए परिपत्रों के माध्यम से जानकारी प्राप्त की कि किसी भी विभाग में हरिजनों को रोजगार प्राप्त नहीं था। उन्होंने यह भी कहा कि अंग्रेजों के समय वे वह (कार्यकारिणी परिषद) के सदस्य थे और वह श्रम तथा पी.बी.ओ. जैसे विभागों के इंचार्ज थे और ब्रिटिश सरकार ने विदेशी मुल्कों में हरिजनों की शिक्षा के लिए 3 लाख रुपये की राशि स्वीकृत की। उन्होंने कहा कि वर्तमान सरकार राशि को खर्च तो कर रही है, लेकिन उसने हरिजनों को शिक्षा के लिए विदेशों में भेजना बंद कर दिया है। उन्होंने कहा कि अंग्रेजों के समय में फिटर इत्यादि की शिक्षा पाने के लिए कई हरिजनों को विदेशी मुल्कों में भेजा गया था। उन्होंने आगे कहा कि विभाजन के समय पाकिस्तानी सरकार ने हरिजनों को पाकिस्तान छोड़ने से रोक दिया और बहुतों का मुस्लिम समाज में धर्मांतरण कर दिया। महार बटालियन कुछ हरिजनों को भारत लाने में सफल हो गया। किंतु उन्हें भारत सरकार द्वारा किसी तरह की सहायता नहीं दी गई। कुछ ने राजघाट पर भूख हड़ताल की, लेकिन उनकी हड़ताल पर किसी ने ध्यान नहीं दिया और तब मजबूर होकर उन्हें (डॉ. अम्बेडकर को) उनको बताना पड़ा कि कांग्रेस सरकार उनकी समस्याओं का निस्तारण नहीं करेगी। उन्होंने कहा कि चूंकि वह स्वयं हरिजनों का कोई हित नहीं कर पाए। उन्होंने त्यागपत्र देने का निर्णय लिया और जहां तक कांग्रेस सरकार पर उनके द्वारा लगाए आरोपों की बात थी, तो पंडित नेहरू ने कोई जवाब उन्हें नहीं दिया। उन्होंने कहा कि चूंकि आबादी में वे केवल 8 प्रतिशत हैं, वे किसी राजनीतिक दल की सहायता के बिना चुनाव नहीं लड़ सकते थे, और इसीलिए उन्होने सोशलिस्ट पार्टी से हाथ मिलाने का निर्णय किया। उन्होंने कहा कि अपनी विशेष समस्याओं के निवारण के लिए वे अपने संघ का अस्तित्व जारी रखेंगें। उन्होंने श्रोताओं से कहा कि जिस पार्टी से उन्होंने हाथ मिलाया है, चुनावों के दौरान ईमानदारी से उनका साथ दें। समता सैनिक दल की संतोषजनक कार्यपद्धति से उन्होंने अपना संतोष जाहिर किया और आशा व्यक्त की कि अगले आम चुनावों में वे बहुत उपयोगी साबित होंगे। उन्होंने कहा कि चार दिन बाद वह बंबई दौरे पर चले जाएंगे, और दुबारा उन लोगों के सामने उपस्थित होना संभव नहीं होगा। उन्होंने कहा कि वे अपना वोट अनुसूचित जाति फेडरेशन तथा सोशलिस्ट पार्टी के उम्मीदवारों को दें और चुनावों के दिन कोई भी व्यक्ति घर न बैठा रहे।''

• • •

130

फेडरेशन एक स्वतंत्र इकाई बनी रहेगी[1]

अनुसूचित जाति फेडरेशन के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने चुनाव अभियान के उद्घाटन के समय जो आरोप लगाए थे, उन्हें उन्होंने परेल के सेंट जेवियर कॉलेज में 22 नवम्बर, 1951 को आयोजित विशाल जनसभा में जोर देकर दुहराया और कहा कि स्वयं उसी सरकार में चार साल काम करने के बाद भी उन्होंने उसे इसलिए त्याग दिया, क्योंकि उन्हें यकीन हो गया था कि कांग्रेस और सरकार अनुसूचित जाति और पिछड़ी जातियों के कल्याण और विकास को लेकर बिल्कुल उदासीन हैं।

भारत सरकार के पूर्व कानून मंत्री डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने घोषित किया कि श्री नेहरू जान–बूझकर उन आरोपों का उत्तर देने से बचते रहे, जो उन्होंने सरकार और कांग्रेस पार्टी पर लगाए थे, क्योंकि आरोप सत्य और अखंडनीय थे।

पिछले माह सरकार से इस्तीफा देते समय उन्होंने जो बयान जारी किया था उसे गलत साबित करने के कई मौके श्री नेहरू के पास थे, चूंकि प्रधानमंत्री यह अच्छी तरह से जान रहे थे कि सारे आरोप निर्विवाद हैं इसलिए उन्होंने चुप रहना ही बेहतर समझा। उन्हें कांग्रेसी नेताओं को करीब से देखने के कई अवसर मिले थे और अब वह आत्मविश्वास के साथ कह सकते हैं कि दलित पिछड़े वर्गों के लिए कांग्रेस के मन में कोई सहानुभूति नहीं है।

उन्होंने शिकायती लहजे में कहा कि जब वे कांग्रेस सरकार में मंत्री थे तो न केवल उनको उन प्रभारों को नहीं दिया गया जो प्रधानमंत्री ने उन्हें देने का वादा किया था, बल्कि उन्हें नीति–निर्माता कैबिनेट कमेटी से भी बाहर रखा गया।

एक मंत्री रहते हुए वह सरकार की नीतियों की न तो आलोचना कर सकते थे, न ही वह अनुसूचित जातियों के संबंध में कोई प्रश्न पूछ सकते थे।

डॉ. अम्बेडकर ने कुछ कांग्रेसी लोगों द्वारा लगाए गए इस आरोप को खारिज किया कि संविधान निर्माण में उनकी भूमिका अत्यंत महत्वहीन थी। यह कहते हुए कि इससे बड़ा झूठ कुछ और नहीं हो सकता, उन्होंने यह भी जोड़ा कि दस्तावेजी

---

[1] द टाइम्स ऑफ इंडिया, 23 नवंबर, 1951

सबूतों के साथ यह सिद्ध करने लिए तैयार हैं कि किस प्रकार मसौदा समिति के उनके साथी संविधान का मासौदा बनाने में बिल्कुल रुचि नहीं ने रहे थे वे लोग कभी–कभार ही समिति की बैठकों में हिस्सा लेते थे और इसी कारण पूरा भार उनके और समिति के सचिव के कंधों पर आ पड़ा।

अनुसूचित जातियों की समस्याओं के प्रति कांग्रेस के उदासीन दृष्टिकोण को प्रकट करने वाले विभिन्न दृष्टांतो का एक सूचीबद्ध ब्योरा देते हुए उन्होंने कहा कि विदेशी अंग्रेजी सरकार भी उन लोगों के प्रति अधिक सहानुभूतिपूर्ण तथा उदार थी और उनके सुधार के लिए निष्कपट भाव से कार्य कर रही थी।

सोशलिस्ट पार्टी और फेडरेशन के हाल ही के चुनावी गठजोड़ का हवाला देते हुए उन्होंने अनुसूचित जाति के मतदाताओं से सोशलिस्ट पार्टी और फेडरेशन के उम्मीदवारों के लिए मतदान करने का आह्वान किया। उन्होंने आत्मविश्वास जताया कि उनका समुदाय दृढ़तापूर्वक गठबंधन के साथ खड़ा होगा और इन दोनों दलों द्वारा मैदान में उतारे गए प्रत्याशियों को सदनों में चुनकर भेजेगा।

उन्होंने कहा कि यह गठबंधन 'आदान–प्रदान' की भावना के तहत किया गया है और वे दृढ़तापूर्वक इसका पालन करें। लेकिन फिर भी फेडरेशन एक स्वतंत्र इकाई बनी रहेगी।

डॉ. अम्बेडकर को एक थैली भेंट की गयी जिसमें बैठक के टिकटों की बिक्री से संग्रहित धनराशि रखी हुई थी। धनराशि कितनी थी यह घोषणा नहीं की गयी।

● ● ●

131

हिन्दू कोड बिल से स्त्रियों की दशा में सुधार होगा[1]

''24 नवम्बर, 1951 को बंबई में महिलाओं की एक सभा को संबोधित करते हुए डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने घोषणा की कि हिंदू कोड बिल से स्त्रियों की दशा में सुधार होगा और इससे उन्हें और अधिक अधिकार प्राप्त होंगे। उन्होंने अनुरोध किया कि वे बिल का समर्थन करें और ऐसे उम्मीदवार के लिए मतदान करें जो देश में वास्तविक लोकतंत्र लाएगा। उन्होंने इस बात का अफसोस जाहिर किया कि कुछ कांग्रेसी लोग बिल के खिलाफ थे और येन–केन–प्रकारेण इसको विलंब कर रहे थे।

[1] द बांबे सिक्रेट, अक्तूबर, 1 दिसंबर, 1951

132

लोगों का आलसी और उदासीन बने रहना बुरी बात है

''25 नवम्बर, 1951 को मुबंई की एक चुनावी सभा में डॉ. अम्बेडकर ने श्री नेहरू को कांग्रेस छोड़कर 'देश हित के लिए समाजवादियों और मेरे जैसे लोगों से हाथ मिलाने' का न्योता दिया।''

सोशलिस्ट पार्टी और अनुसूचित जाति फेडरेशन के आह्वान पर आयोजित रैली में दो लाख से अधिक लोगों का शिवाजी पार्क में जमावड़ा हुआ।

फेडरेशन के तारे–जड़ित नीले झंडे और सोशलिस्ट पार्टी के लाल झंडे चारों तरफ नजर आ रहे थे। भीड़ की वजह से शिवाजी पार्क के पास ट्रैफिक जाम हो गया था, जिसको नियंत्रित करने में दोनों दलों के लाल और नीले टोपीधारी सैकड़ो स्वयंसेवक लगे हुए थे।

श्री नेहरू के चौपाटी में दिए गए भाषण, जिसमें प्रधानमंत्री ने उनके आरोपों से इनकार किया था, का हवाला देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने जोर देकर कहा कि कांग्रेस ने अनुसूचित जातियों की दशा में कुछ भी सुधार नहीं किया है और यह भी कहा कि, ''चीन और रूस के संबंध में सरकार की विदेश नीति अनिष्टकारी है।''

उन्होंने कहा कि उनके द्वारा ये आरोप ढाई महीने पहले ही लगाए थे जब उन्होंने मंत्रिमंडल से इस्तीफा दिया था, किंतु तब श्री नेहरू ने उन पर ध्यान नहीं दिया और अब वे उसका खंडन तब कर रहे हैं जब उन्होंने शुक्रवार के अखबारों में वे रिपोर्टें पढ़ी जिनमें उनके (डॉ. अम्बेडकर के) आरोप की पुनरावृति हुई थी। विदेश नीति पर उनके मतभेद के बारे में वे बोले कि उन्होंने अपने मतभेद मंत्रिमंडल के सम्मुख उठाने लायक महत्वपूर्ण मुद्दा नहीं माना था। इसके अलावा वह संविधान का मसौदा तैयार करने जैसे अधिक महत्वपूर्ण और श्रमसाध्य कार्य में पूरी तरह मशगूल थे।

उनके विचार में श्री नेहरू ने उनके आरोपों से इंकार करके अपनी छवि खराब की है। अनुसूचित जातियों के प्रति सरकार की कथित उपेक्षा का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि, ''भले ही श्री नेहरू ने इनसे इंकार किया है, किंतु यह बिलकुल सत्य है।'' प्रधानमंत्री के लिए सही तरीका तो यह होता कि वे एक प्रेस का बयान जारी करते हुए सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों की बेहतरी के लिए किए गए कार्यों का एक ब्योरा देते, ताकि लोग स्वयं निर्णय करते कि गलत वे हैं या कि सरकार।

उन्होंने श्री नेहरू के इस दावे को चुनौती दी कि केवल कांग्रेस ही देश में स्थायी सरकार बनाने में सक्षम होगी। कांग्रेस के भीतर कई आंतरिक मतभेद थे और

कई मामलों का उदाहरण भी दिया। ''जो समीकरण श्री नेहरू कांग्रेस के संबंध में बता रहे हैं वह सत्य नहीं है। ''

यह देखते हुए कि चुनावों की खातिर कांग्रेसी लोगों ने कांग्रेस अध्यक्ष श्री टंडन से सिंहासन छीनकर उनके स्थान पर श्री नेहरू का चयन कर लिया। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि, ''श्री नेहरू सपनों की दुनिया में रह रहे हैं। इस बात को वह जितना जल्दी समझ लें उतना ही अच्छा होगा।''

''श्री नेहरू बहुत भोले व्यक्ति हैं इनको नहीं समझ सकते हैं। मुझे आशंका है कि चुनावों के खत्म हो जाने पर उनकी स्थिति क्या होगी।'' डॉ. अम्बेडकर ने उद्घोष किया कि, ''चूंकि मैं यथार्थवादी हूं, मैं श्री नेहरू से बेहतर यह जानता हूं कि अन्य कांग्रेसी नेता उनके बारे में क्या सोचते है।''

उनका विचार था कि जब भारतीय गणतंत्र के राष्ट्रपति के चुनाव का समय आ जाएगा तब या तो प्रधानमंत्री को हार स्वीकार करनी पड़ेगी अथवा कांग्रेस के बाहर से अपने ही आदमी को चुनना पड़ेगा। डॉ. अम्बेडकर ने सभा में कहा कि जब श्री रफी अहमद किदवई ने कांग्रेस छोड़ी, तब उन्होंने श्री किदवई से कहा था ''नेहरू जैसे लोगों को अपने साथ ले लीजिए और मैं आपके साथ हूं।''

मजबूत विपक्ष के होने के महत्व पर जोर देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि किसी भी पार्टी के पास असीमीत शक्ति नहीं होनी चाहिए और अगर ऐसी नौबत आ जाए तब लोगों का आलसी और उदासीन बने रहना बुरी बात है।

सोशलिस्ट पार्टी और अनुसूचित जाति फेडरेशन चुनाव लोकतांत्रिक समाजवाद के लिए, स्वतंत्रता के लिए और समानता के लिए लड़ रहे हैं।

उनका सोचना था कि भले ही वे एक सरकार न बना पाएं, लेकिन वे एक मजबूत विपक्ष जल्द बना सकेंगे। उन्होंने आगे कहा कि ''संस्थाओं से काई फर्क नहीं पड़ता। विपक्ष की गुणवत्ता मायने रखती है।'' उन्होंने लोगों से अपील की कि वे अगर सोशलिस्ट पार्टी और फेडरेशन के द्वारा उतारे गए सभी प्रत्याशियों को नही ंतो कम से कम सर्वश्रेष्ठ प्रत्याशियों को जरू चुनें, ताकि विपक्ष अच्छी गुणवत्ता का हो। चूंकि श्री मेहता का स्वास्थ्य ठीक नहीं था इसलिए उन्होंने सभा को संबोधित नहीं किया, लेकिन उनके स्थान पर श्री एम. हैरिस ने भाषण दिया। उन्होंने कहा कि लाभ प्राप्ति के इच्छुक दलों ने फेडरेशन के साथ समाजवादियों के गठबंधन की गलत व्याख्याएं देने की कोशिश की है।

इससे पहले कुर्ला से कोलाबा तक पड़ने वाले कई चुनाव क्षेत्रों में जुलूस निकाले गए जो अंत में शिवाजी पार्क में आकर मिल गए। दो प्रमुख जुलूस बायकुला ब्रिज और डाक्स क्षेत्रों से शुरू हुए।''[1]

[1] द नेशनल स्टैंडर्ड, 26 नवंबर, 1951

● ● ●

133

लोगों की भलाई के लिए प्रशासन का स्वच्छ होना आवश्यक है

26 नवम्बर, 1951 को मुंबई के सर कावसजी जहांगीर हाल में प्रजा सोशलिस्ट पार्टी और अनुसूचित जाति फेडरेशन की संयुक्त सभा हुई जिसमें डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने खचाखच भरी हुई सभा को संबोधित करते हुए भाषण दिया। सभा की अध्यक्षता श्री पुरुषोत्तम त्रिकमदास ने की।

भारत सरकार के पूर्व कानून मंत्री डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने सोमवार को आरोप लागया कि नेहरू की सरकार और कांग्रेस पार्टी लोगों को एक स्वच्छ और ईमानदार प्रशासन देने में नाकाम रही है।

कांग्रेस पर जनता को रोटी और कपड़ा न उपलब्ध कराने का आरोप सही ही लगाया गया है। लेकिन रोटी और कपड़े से भी जरूरी एक चीज थी जो मौजूदा सरकार लोगों को नहीं दे सकती है। और वह है भ्रष्टाचार, घूसखोरी, भाई–भतीजावाद तथा पक्षपात से मुक्त एक स्वच्छ प्रशासन।

उत्तर प्रदेश, बिहार तथा मद्रास में हुई भ्रष्टाचार और घूसखोरी की तमाम घटनाओं को उद्धरित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने अपने आरोपों का समर्थन किया और कांग्रेस आलाकमान से प्रश्न किया कि कांग्रेसी विधायकों द्वारा उन राज्यों के मंत्रालयों के विरुद्ध लगाए गए आरोपों की जांच–पड़ताल के लिए उन्होंने जांच समिति बैठाना क्यों उचित नहीं समझा।

उन्हें बहुत ताज्जुब है कि जिस कांग्रेस पार्टी ने देश पर शासन किया, वह अपनी प्रतिष्ठा, सम्मान और ईमानदारी को लेकर इतनी उदासीन है कि अपने खुद के सदस्यों द्वारा सरकार पर लगाए आरोपों की जांच के लिए भी जांच समिति नहीं बैठा रही है। उन्होंने कहा कि हो सकता है कि लोगों को रोटी और कपड़ा उपलब्ध करवाना कठिन है। लेकिन क्या जनता को एक स्वच्छ प्रशासन दे पाना भी मुश्किल है। यह मामला तो पूरी तरह सरकार के हाथ में है। अगर सरकार ने दृढ़ निश्चय कर ही लिया होता कि वह अपने प्रशासन को पारदर्शी और सुगम बनाएगी तो कोई चीज उसके आड़े नहीं आती। लेकिन कांग्रेस तो खुद इसके आड़े आ रही है, क्योंकि प्रशासन की पारदर्शिता में उसे आस्था ही नहीं है।

विशेष तौर पर वह कांग्रेस अध्यक्ष नेहरू के दिल्ली अधिवेशन में दिए उस बयान से आहत हैं जिसमें उन्होंने वस्तुतः देश में व्याप्त भ्रष्टाचार को जायज ठहराया है। श्री नेहरू ने कहा था कि भारत में भ्रष्टाचार इतनी बड़ी बुराई नहीं है कि उस

पर बहुत ध्यान दिया जाए। उन्होंने कांग्रेस के सांसदों द्वारा चुनावों के लिए अयोग्यता की शर्तों वाले उस प्रस्ताव के लिए, जनप्रतिनिधित्व अधिनियम के तहत उनके विरुद्ध संसद में हंगामा खड़ा करने का भी हवाला दिया जिसे वह पारित करना चाहते थे। वह चाहते थे कि काला–बाजारी करने वालों तथा ठेकेदारों इत्यादि को चुनाव लड़ने के लिए अयोग्य कर दिया जाए। लेकिन कांग्रेसी सदस्यों के प्रबल विरोध के कारण उन्हें उस क्लॉज (शर्त) को निकालने के लिए बाध्य होना पड़ा। एक और लड़ाई जो उन्होंने लड़ी, लेकिन जिसमें वह अंततः हार गए वह राजनीतिक दलों द्वारा चुनावों के दौरान किए जाने वाले व्यय से संबंधित थी।

यह पूछते हुए कि, ''क्या कांग्रेस का यह चरित्र और दृष्टिकोण प्रशासन को पारदर्शी बनाए रखने के लिए अनुकूल है? उन्होंने कहा, ''एक ऐसी पार्टी जो प्रशासन की सफलता के प्रश्न पर गंभीर न हो, में किसी का विश्वास नहीं रह गया है।''

लोगों की भलाई के प्रशासन का स्वच्छ होना बहुत आवश्यक है, क्योंकि कानून कैसे बनाया गया के बजाय लोगों की चिंता इस बात में होती है कि कानून को कैसे चलाया गया ?

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि उन्हें बहुत–सी शिकायतें प्राप्त हुई हैं जिनमें आरोप है कि उनके जिलों के कांग्रेसी कार्यकर्ता न्यायिक अधिकारियों पर प्रभाव डाल रहे थे। भारत में एक मजबूत विपक्ष की आवश्यकता पर बल देते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कांग्रेस से गुहार लगाई कि वह अन्य राजनीतिक दलों को विपक्षी दलों के रूप में कार्य करने दे, लोगों की राजनीतिक आवाज का दमन न करे। धनाढय वर्ग को उन्होंने सचेत किया कि वे कांग्रेस पार्टी के कोष में चंदा न जमा करें। कथित रूप से पूर्व कानून मंत्री ने श्री एस.के. पाटिल द्वारा उन पर लगाए गए उस आरोप का भी संदर्भ दिया जिसमें कहा गया था कि चूंकि उन्होंने मंत्रालय से इस्तीफा दिया है इसलिए वे कृतघ्न हैं। उन्होंने कहा कि कृतज्ञता के बारे में श्री पाटिल कुछ हास्यास्पद विचार रखते हुए प्रतीत होते हैं और उन्होंने आयरलैंड के एक दार्शनिक की एक सूक्ति का उद्धरण दिया जो कुछ इस प्रकार था ''अपना सम्मान बेचकर कोई पुरुष कृतज्ञ नहीं बन सकता। अपना सतीत्व बेचकर कोई स्त्री कृतज्ञ नहीं बन सकती और कोई राष्ट्र अपनी स्वतंत्रता बेचकर कृतज्ञ नहीं बन सकता है।''

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि कृतज्ञता की अपनी सीमाएं होती हैं। वह भारत सरकार में गुलाम बनकर नहीं रहना चाहते थे। श्री पाटिल के इस दावे के जवाब में कि उनके ही प्रयत्नों से डॉ. अम्बेडकर को केंद्र सरकार में स्थान मिल पाया था, डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि यह उनके जीवन के महानतम आश्चर्यों में से एक था कि वह कैबिनेट में कैसे लिए गए थे, खासतौर पर तब जब कांग्रेस ने वस्तुतः संकल्प ले लिया था कि वह उन्हें कांस्टीटयूऐंट असेंबली के प्रवेश मार्ग में भी नहीं घुसने देगी।[1]

● ● ●

द [1] टाइम्स ऑफ इंडिया, 27 नवंबर, 1951

134
गठबंधन विरोध के लिए

''श्री अशोक मेहता महासचिव सोशलिस्ट पार्टी ने 23 दिसंबर, रविवार 1951 को चौपाटी में आयोजित एक चुनावी सभा में बताया कि अनुसूचित जाति फेडरेशन के साथ उनकी पार्टी के गठबंधन ने नयी शक्ति को जन्म दिया है।

उसके बाद फेडरेशन के नेता डॉ. अम्बेडकर ने भी कहा कि गठबंधन का निर्माण केवल कांग्रेस के विरोध के लिए किया गया है।

श्री मेहता ने श्री नेहरू द्वारा गठबंधन की गयी आलोचना को आड़े हाथों लिया।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि कांग्रेस ने पिछले चार सालों में कुछ नहीं किया है।

शहर के विभिन्न स्थानों से निकलने वाले जुलूस चौपाटी में हो रही सभा में शामिल हो गए।''[1]

● ● ●

[2] भारत, 24 दिसंबर, 1951

135

देश का हित मेरे हृदय में सर्वोपरि है

''अमेरिका की कोलंबिया यूनिवर्सिटी ने 1950 में लिए गए एक स्पष्ट निर्णय के तहत डॉ. भीमराव अम्बेडकर को स्वतंत्र भारत के संविधान का निर्माण करने में उनकी महती भूमिका के लिए एल.एल.डी. की उपाधि से विभूषित कर सम्मानित करने का निर्णय लिया है। जब डॉ. अम्बेडकर को यह समाचार अपने उस प्राणप्रिय संस्थान से प्राप्त हुआ जहां से वर्ष 1915 तथा वर्ष 1917 में उन्होंने क्रमशः एम.ए. तथा पीएच.डी की उपाधियां प्राप्त की थी, तब वे खुशी से फूले नहीं समाये। लेकिन भारत की नवनिर्मित सरकार के समक्ष कई समस्याएं व कुछ संवैधानिक समस्याएं थीं जिनका समाधान डॉ. अम्बेडकर की विशेषज्ञता के द्वारा किया जाना था। अपने इस दायित्व बोध के कारण डॉ. अम्बेडकर आमंत्रण स्वीकार नहीं कर सके। इसके अलावा उनका खराब स्वास्थ्य भी उनको नहीं जाने देता। उन्होंने बड़ी विनम्रता से यूनिवर्सिटी को सूचना दे दी कि वह समारोह में न आ सकेंगे। जनरल आसेनहावर उस समय कोलंबिया यूनिवर्सिटी के अध्यक्ष थे जिन्होंने बाद में अमेरिका के राष्ट्रपति के रूप में अपनी सेवाएं दी। दीक्षांत समारोह की अध्यक्षता उन्ही को करनी थी। यूनिवर्सिटी अनुपस्थिति में भी उपाधि देने को तैयार थी। लेकिन डॉ. अम्बेडकर ने यूनिवर्सिटी को बताया कि वह एक–दो साल के भीतर उपाधि स्वीकार करने के लिए व्यक्तिगत रूप से आएंगे। यूनिवर्सिटी ने भारत के इस प्रतिभाशाली पुत्र को सम्मानित करने को अपना गौरव समझते हुए यह निर्णय लिया कि समारोह 5 जून, 1952 को आयोजित किया जाए। मई के चौथे सप्ताह में वह सूची प्रकाशित हुई जिसमें उपाधि प्राप्त करने वाले गौरवशाली लोगों के नाम थे, और उनमें डॉ. अम्बेडकर का नाम भी था। उनकी इस सफलता पर मिले प्रशंसको और शुभचिंतकों द्वारा लिखे जाने वाले बधाई पत्रों की बाढ़–सी आ गई। भारत के तत्कालीन उपराष्ट्रपति डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन को भी उनकी इस उपलब्धि पर गर्व हुआ और उन्होंने निम्नलिखित शब्दों में डॉ. अम्बेडकर को बधाई दी। अपने पत्र में उन्होंने कहा :

2, किंग एडवर्ड रोड
नई दिल्ली
26 मई, 1952

सत्यमेव जयते

प्रिय डॉ. अम्बेडकर जी,

अखबारों के माध्यम से यह जानकर मुझे बहुत खुशी हुई है कि कोलंबिया यूनिवर्सिटी आपको डॉक्टर ऑफ लॉ की की मानद उपाधि प्रदान कर रही है। हमारे संविधान के लिए किए गए आपके महान कार्य की यह उपर्युक्त स्वीकृति है। मेरी हार्दिक शुभकामनाएं।

शुरू के एकाध घंटे के लिए आज और कल कोई समय सीमा नहीं रहेगी। इसलिए अगर आप आम बजट पर बोलने के इच्छुक हैं, तो अच्छा रहेगा यदि आप आज या कल दोपहर में बोले।

शुभेच्छाओं सहित
डॉ. बी. आर. अम्बेडकर
सदस्य राज्य सभा
संसद भवन, नई दिल्ली

भवदीय
हस्ता./
एस. राधाकृष्णन

डॉ भीमराव अम्बेडकर का जवाब

26, अलीपुर रोड
दिल्ली
27 मई, 1952

प्रिय डॉ. राधाकृष्णन,

कोलंबिया यूनिवर्सिटी की डॉक्टर ऑफ लॉज की मानद उपाधि मुझे दिए जाने के संबंध में आपका दिनांक 26 मई, 1952 का बधाई संदेश प्राप्त हुआ। धन्यवाद।

मुझे कहते हुए बहुत हर्ष हो रहा है कि कम से कम कुछ ऐसे लोग तो भारत में हैं जो मुझे दिये जा रहे सम्मान को पसंद कर रहे हैं।

शुभकामनाओं सहित

भवदीय
(हस्ता.)
बी.आर. अम्बेडकर

डॉ. एस. राधाकृष्णन
उप–राष्ट्रपति
नई दिल्ली

डॉ. अम्बेडकर की उपलब्धियों की प्रशंसा करते हुए डॉ. पौलुक्स ने इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया दिनांक 15 जून, 1952 को लिखा।

''**ये समाचार, समाचार हुआ ना है**''

''चाहे सरकार में हो या उससे बाहर, डॉ. भीमराव अम्बेडकर हमेशा खबरों में बने रहते हैं। इस सप्ताह में इससे पहले राज्यसभा में दिये उस कठोर भाषण से एक बार वे सुर्खियों में रहे थे जब उन्होंने सरकार की कश्मीर नीति पर धावा बोला, जबकि उसके निर्माण के समय वह भी उस सरकार की इसी कैबिनेट का हिस्सा थे। यह खबर सुनकर निश्चित रूप से उन्होंने कुछ राहत की सांस ली होगी कि कथित खतरनाक डॉ. अम्बेडकर 1 जून को देश से बाहर अपनी पुरानी कोलंबिया यूनिवर्सिटी से एल.एल.डी. की मानद उपाधि प्राप्त करने के लिए वह वायुयान से न्यूयॉर्क जा रहे हैं।

यह उपाधि उन्हे तीन वर्ष पूर्व यूनिवर्सिटी के तत्कालीन अध्यक्ष जनरल आसेनहोवर के हाथों से मिल गई होती, लेकिन मंत्रिमंडल के दायित्वों तथा बाद में चुनाव की तैयारियों के कारण वह नहीं आ सके और यूनिवर्सिटी यह उपाधि अनुपस्थिति में नहीं देना चाहती थी।

डॉ. अम्बेडकर बीस साल बाद अमेरिका जा रहे हैं। पौलुक्स को बताया कि डॉ. अम्बेडकर यात्रा पर उनके साथ इसलिए नहीं आ रहे हैं, क्योंकि डॉलर की प्रचुर आपूर्ति नहीं हो सकी है। न्यूयॉर्क में रहते हुए उनकी योजना किसी अस्पताल में जाकर इलाज करवाने की है।

''पौलुक्स द्वारा लिखित लेख का कॉलम 04 इलस्ट्रेटेड वीकली ऑफ इंडिया, 1–6–1952, पृष्ठ, 8 पर)

डॉ. अम्बेडकर को न्यूयॉर्क के लिए 1 जून, 1952 को रविवार की रात को निकलना था। उनके सम्मान में उनके मित्रों, शुभेच्छुओं, प्रशंसकों और पीपुल्स एजुकेशन सोसायटी के कर्मचारियों ने एक भव्य रात्रि भोज का आयोजन किया। यह आयोजन क्रिकेट क्लब ऑफ इंडिया के विज्ञान लॉन में उनके प्रस्थान के दिन पूर्व अर्थात् 31 मई, 1952 को आयोजित किया गया अगले दिन रविवार की रात में निकलना था। कई नामी–गिरामी व्यक्तित्व जैसे प्रधानाचार्य डॉ. वी.एम. पाटनकर, जो पीपुल्स एजुकेशन सोसायटी के सचिव हैं, श्री के.वी. चित्रे, श्री प्रभाकर श्री बी.एच. राव, श्री डब्ल्यू अल्फ्रेड जो पत्रकार संघ के अध्यक्ष हैं, अपनी महिमामयी उपस्थिति से अवसर को सुशोभित कर रहे थे। इस अवसर पर पाटनकर ने कहा कि बहुत–से

भारतीयों को डर था कि डॉ. अम्बेडकर अमेरिका में अपने प्रवास के दौरान भारत में व्याप्त छुआछूत की समस्या पर भयंकर हमला बोलेंगे, ताकि इस अन्यायपूर्ण रिवाज पर दुनिया का ध्यान खींच सकें तथा इस प्रकार इस समस्या को हल करने में भारतीय सरकार की असफलता को उजागर करेंगे। लेकिन यह भय निराधार है, क्योंकि डॉ. अम्बेडकर सबसे पहले एक भारतीय है और वे अपनी मातृभूमि शान को खराब करने का कोई कार्य नही करेगें।

डॉ. अम्बेडकर ने सबके प्रति अपना आभार व्यक्त करते हुए कहा कि उनका संयुक्त राज्य में भाषण देने का कोई कार्यक्रम नहीं है इसलिए किसी को भी इस भय में रहने की जरूरत नहीं है कि वह इस देश के बारे में कुछ भी ऐसा कहेंगे जो कड़वा हो।

डॉ. अम्बेडकर बोले कि यद्यपि ऐसा कहा जाता है कि मेरा स्वभाव कड़वा है और मैंने कई बार आगे बढ़कर सत्ता के लोगों से संघर्ष करने की स्थिति बनाई है। उन्होंने किसी भी मौके पर देश से गद्दारी नहीं की है। देश के हित उनके हृदय में सर्वोपरि है। बोले कि गोलमेज सम्मेलन में भी वह, ''महात्मा गांधी से 200 मील आगे रहे थे जहां तक कि भारत के हित की बात है।''

(द टाइम्स ऑफ इंडिया, सोमवार, 21 जून, 1952 पष्ठ 2 कॉलम 3)

डॉ. अम्बेडकर के आगमन के अवसर पर आयोजित इस डिनर पार्टी के बारे में प्रकाश डालते हुए 'द इवनिंग न्यूज ऑफ इंडिया' के एक स्तम्भकार ने कहा कि

महान व्यक्तित्व

यह भाग्य की विडंबना है–सिद्धार्थ कालेज के प्राचार्य यू.एम. पाटनकर को उद्धृत करें तो–भारत की किसी भी यूनिवर्सिटी ने हमारे संविधान के निर्माताओं में से प्रमुख डॉ. भीमराव अम्बेडकर को मानद उपाधि से अलंकृत कर उनका सम्मान करने के लिए पहल नहीं की। स्वयं बाम्बे यूनिवर्सिटी जहां डॉ. अम्बेडकर छात्र रह चुके हैं, 'सुस्त और मंद' रही है।

डॉ. अम्बेडकर को डॉक्टर ऑफ लॉज की मानद उपाधि देकर सम्मानित करने में प्रथम होने का श्रेय भी यूनिवर्सिटी को चला गया है जहां हमारे विद्वान डॉक्टर साहब छात्र रह चुके है।

पिछले सोमवार को एक टी.डब्ल्यू.ए. वायुयान द्वारा डॉ. अम्बेडकर संयुक्त राज्य के लिए रवाना हुए। संयुक्त राज्य में वह कुछ सप्ताह ही रुकेंगे जहां वह

अपने पैरों का उपचार भी कराएंगे।

डॉ. अम्बेडकर के प्रस्थान की पूर्व संध्या पर सिद्धार्थ कॉलेज के डॉ. पाटनकर और श्री चित्रे ने सी.सी.आई. में डिनर का आयोजन किया। कभी भी किसी ने गंभीरता से डॉ. अम्बेडकर की देशभक्ति पर प्रश्न चिह्न नहीं लगाया है और डिनर के पश्चात हुई वार्ता में उन्होंने स्पष्ट किया कि अमेरिका प्रवास के दौरान भारत को नीचा दिखाने की उनकी मंशा कभी नहीं रही।

एक अत्यंत दिलचस्प वार्तालाप के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने रहस्योद्‌घाटन किया कि उन्हें मौलाना आजाद की हिंदी बहुत अच्छी लगती है। उन्होंने कहा कि, ''अगर वही वह हिंदी है न कि अत्यंत संस्कृतनिष्ठ हिंदी अपनाने को हमें कहा जाता है तो यह बहुत अच्छी बात होगी।'' डॉ. अम्बेडकर ने यह भी कहा कि मौलाना की हिंदी में अरबी, फारसी या संस्कृत के शब्द नहीं के बराबर होते हैं, फिर वह अत्यंत शुद्ध, स्वच्छ और स्तरीय होती है।''

जिस हवाई जहाज में डॉ. अम्बेडकर सवार थे, उसने लगभग मध्यरात्रि में बंबई के सांताक्रूज एयरपोर्ट से उड़ान भरी। अपने कंधे पर एक ओवरकोट टांगे और सिर पर टोपी पहने हुए डॉ. अम्बेडकर ने काले रंग की टाई लगाई हुई थी। अपनी चिर–परिचित मुस्कान से उन्होंने लोगों को 'गड बाइ' कहा। ये सारी चीजें फ्री बुलेटिन के 2 जून, 1952 के अंक में मुख्य पृष्ठ में छपी एक तस्वीर के रूप में कैद हैं।

कोलंबिया यूनिवर्सिटी में डॉ. अम्बेडकर का सम्मान

न्यूयॉर्क 6 जून, 1952। कल कोलंबिया यूनिवर्सिटी ने अपने 198वें दीक्षांत समारोह में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को मानद उपाधि प्रदान करते समय उन्हें, ''भारत के अन्यतम नागरिकों मे से एक महान समाज सुधारक और मानवाधिकारों का अग्र पंक्ति का योद्धा करार दिया।

कानून और ज्ञान की मानद डॉक्ट्रेट उपाधि डॉ. अम्बेडकर ने भारी उपस्थिति के समक्ष उस समारोह में प्राप्त की जिसमें पढ़ाई पूरी करने के बाद कोलंबिया के 17 स्कूलों और कॉलेजो के 6,848 स्नातक उन्हें देखने आए थे। डॉ. अम्बेडकर के साथ सम्मानित होने वाले अन्य लोगों में कनाडा राष्ट्र के विदेश सचिव श्री लास्टर बी. पीअर्शन, प्रख्यात फ्रांसीसी इतिहासकार श्री डैनियल मोरनेट तथा आठ अमेरिकी नागरिक थे।

(द टाइम्स ऑफ इंडिया, 7–6–1952 पष्ठ 6)

यह समाचार डॉ. अम्बेडकर तथा हार्टफोर्ड कानेक्टयूट के एक्जीक्यूटिव तथा कवि श्री वालेस स्टीवेंस की संयुक्त तस्वीर के साथ प्रकाशित हुआ, जिसमें दोनों को ज्ञान की मानद उपाधि ''डाक्टर ऑफ लॉज'' से सम्मानित किया गया था।

''डाक्टर ऑफ लॉज''

डॉ. अम्बेडकर, जिन्होंने कोलंबिया यूनिवर्सिटी न्यूयॉर्क से डाक्टर ऑफ लॉज की मानद उपाधि प्राप्त की, उनकी तस्वीर में एक और उपाधि प्राप्तकर्ता हैं श्री वालेस स्टीवेंस, कवि तथा हार्टफोर्ड कानेक्टयूट के जीवन बीमा एक्जीक्यूटिव जिन्हें ज्ञान की मानद उपाधि प्राप्त है।

(द टाइम्स ऑफ इंडिया, 13–6–1952य वालेस स्टीवेंस तथा अम्बेडकर की एक तस्वीर के साथ प्रकाशित)

डाक्टर ऑफ लॉज की इस उपाधि का पाठय लैटिन और अंग्रेजी दोनों में है और इसका पाठ यूनिवर्सिटी के तत्कालीन उपाध्यक्ष तथा कुलपति माननीय ग्रेयसन किर्क ने किया। पाठय इस प्रकार है:

पृष्ठ 15

(लैटिन में लिखी प्रशस्ति छोड़ दी गयी है)

प्रशस्ति

कोलंबिया विश्वविद्यालय, न्यूयॉर्क महानगर मे भीमराव रामजी अम्बेडकर एल.एल.डी. की प्रशस्ति में।

भारत में जन्मे और अत्यंत कठिन परिस्थितियों में शिक्षा प्राप्त की : बम्बई विश्वविद्यालय से बीस वर्ष की आयु में बी0ए0 पास किया और विश्वविद्यालय में तीन वर्ष ग्रेजुएट विद्यार्थी रहे, राजनीति विज्ञान में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की, तद्नंतर इन्स ऑफ कोर्ट एवं लंदन विश्वविद्यालय में अर्थशास्त्र में डाक्टरेट उपाधि पाई, विगत तीन दशक से बैरिस्टर रहे। विश्वविद्यालय प्रोफेसर, विधान परिषद सदस्य, भारत के संविधान निर्माता, मंत्रिमंडल और राज्य परिषद के सदस्य, भारत के प्रमुख नागरिक, एक महान समाज सुधारक और मानव अधिकारों के सशक्त योद्धा।

इस विश्वविद्यालय में एतद् न्यासी मंडल द्वारा प्रदत्त अधिकारों का प्रयोग करते हुए मैं आपके सम्मानार्थ सहर्ष डाक्टर ऑफ लॉ की उपाधि प्रदत्त करता हूं जिसको प्राप्त करने का आप अधिकारी है और प्रमाण स्वरूप यह उपाधि दी जाती है।

5 जून, 1952

ग्रेयसन किर्क

उपाध्यक्ष एवं प्रोवोस्ट

138

लोकतंत्र सफलतापूर्वक चलाने के लिए शर्तें

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को पूना जिला लॉ लायब्रेरी के सदस्यों द्वारा निम्नांकित कार्यक्रम संम्पन्न करने के लिए 22 दिसम्बर, 1952 को आमंत्रित किया गया।

● ● ●

136
मेरा सम्पूर्ण ध्यान फेडरेशन के लिए भवन निर्माण करने पर केंद्रित है[1]

''बम्बई के नारे पार्क जी.आई.पी.आर. वर्कशॉप के सामने मैदान पर रविवार 28 दिसम्बर, 1952 को सायं 4 बजे 'अछूतों के एक सम्मेलन का आयोजन करने का निर्णय लिया गया। यह भी निर्णय लिया गया कि डॉ. अम्बेडकर इनको संबोधित करेंगे। तदनुसार अनुसूचित जाति फेडरेशन व मुंबई नगरपालिका कामगार संघ के सचिव श्री जे.जी. भाटनकर, महार जाति पंचायत संघ मुंबई के महासचिव एल.एफ. हिंदलेकर, अनुसूचित जाति सुधार–न्यास के सचिव एस. ए. उपश्याम तथा समता सैनिक दल के जे.ओ.जी., श्री एम. एस. सासालकर द्वारा संयुक्त रूप से हस्ताक्षरित एक पर्चा जारी किया गया।''

मैदान में 'अछूतों' की भारी भीड़ जमा हुई। ठीक 5:30 बजे शाम को डॉ. अम्बेडकर उपस्थित लोगों को संबोधित करने के लिए आए। 'अछूतों' ने नारे लगाकर तालियां बजाते हुए उनका स्वागत किया।

परिचय संबंधी औपचारिक टिप्पणियां करने के बाद उपश्याम ने डॉ. अम्बेडकर से सभा को संबोधित करने का अनुरोध किया।''

औपचारिकताओं के पश्चात् उपश्याम ने– डॉ. अम्बेडकर से निवेदन किया कि वे श्रोताओं को संबोधित करें।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा, फिलहाल उनका पूरा ध्यान फेडरेशन भवन के सभागार बनवाने पर केंद्रित है। वे अगले सप्ताह दिल्ली लौटेंगे और कुछ दिनों तक वापिस नहीं आ सकेंगे। अतएव उन्हें कहा है कि धन संग्रह के कार्य में प्रगति संभव नहीं होगी। उन्होंने समाज के सदस्यों से दिल खोलकर दान देने की अपील की। उन्होंने आशा प्रकट की कि जनसाधारण इस मामले में सहायता करेंगे।

पिछले कुछ महीनों में 22,000 रुपए एकत्रित हुए थे। डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि सभागार का निर्माण बहुत आवश्यक है भले ही ऋण लेना पड़ा। लेकिन अब उन्होंने इरादा बदल दिया है और बताया कि चंदे की प्राप्ति धनराशि से ही सभागार का निर्माण कराया जाएगा।

● ● ●

[1] जनता, 4 अक्तूबर, 1952

137
विश्वविद्यालय शिक्षा को आधुनिक विश्व की आवश्यकताओं को पूरा करने का जरिया समझें छात्र।

''आधुनिक विद्यार्थियों की सभा'' विषय पर डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने एलफिंस्टन कॉलेज में 16 दिसंबर, 1952* को वार्षिकोत्सव मनाने के लिए जुटे छात्रों की सभा को संबोधित किया।

उन्होंने छात्रों से अपील की कि वे विश्वविद्यालयी शिक्षा को आधुनिक विश्व की आवश्यकताओं को पूरा करने का जरिया मानें तथा विश्वविद्यालय को ज्ञान प्राप्ति का केंद्र बनाएं, ना क्लर्कों के प्रशिक्षण की जगह।''[3]

● ● ●

*जनता के अनुसार कार्यक्रम की तिथि 15 दिसंबर, 1952 थी–संपादक

138
लोकतंत्र को सफलतापूर्वक चलाने के लिए शर्तें

(1) स्वर्गीय श्री एल.आर. गोखले की प्रतिमा का अनावरण करना।

(2) श्री ए.बी. सेठना और श्री एच.बी. तुलपुले जो कि दोनों ही बार के वरिष्ठ सदस्य थे, के द्वारा दान की गई पुस्तकों के संग्रह को लोकार्पित करना और उन्हें लॉ लाइब्रेरी में स्वतंत्र अनुभाग के रूप में रखवाना।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर और श्रीमती अम्बेडकर ने सहर्ष यह निमंत्रण स्वीकार कर लिया।

पूना डिस्ट्रिक्ट लॉ लाइब्रेरी के अध्यक्ष के रूप में डिस्ट्रिक्स तथा सेशन न्यायाधीश श्री पी.सी. भट्ट ने समारोह की अध्यक्षता की।

संगीत कलानिधि मास्टर कृष्णराव फुलाम्ब्रिकर ने डॉ. अम्बेडकर एवं उनकी पत्नी के सम्मान में स्वागत गान गाया। आयोजक बंधुओं में से एक श्री एस.जी. भट्ट ने इस स्वागत गीत की रचना की थी। उपाध्यक्ष श्री के.एम. चौव्वल ने स्वागत भाषण दिया। मानद सचिव श्री वी.बी. मोगटे ने पुस्तकालय की रिपोर्ट पढ़कर सुनाई।

श्री बी.डी. पाल ने डॉ. भीमराव अम्बेडकर से अनुरोध किया कि वे स्वर्गीय श्री एल.आर. गोखले की प्रतिमा का अनावरण करें तथा ए.बी. सेठना और एच.बी. तुलपुले द्वारा प्रदत्त पुस्तकों के पुस्तकालय का लोकार्पण करें। इस अवसर पर अध्यक्ष श्री पी.सी. भट्ट ने ये बातें कहीं।

''देवियो और सज्जनों, बेंच के तथा बार के सदस्यों

मुझे यह नेक काम दिया गया है कि मैं हमारे मुख्य अतिथि महोदय से यह अनुरोध करूं कि वे आज के विषय पर चंद शब्द बोलें। मेरा स्वास्थ्य खराब होने के कारण मैं अधिक नहीं बोलूंगा, इसलिए कृपया मुझे माफ करें। अब मैं मुख्य अतिथि महोदय से अनुरोध करता हूँ कि वे कृपया एक विषय पर हमें संबोधित करें।

डॉ. अम्बेडकर का संबोधन

अध्यक्ष महोदय तथा सज्जनो,

जब मुझे बुलावा मिला मैंने आपके सचिव को खत लिखा कि मैं यह जानने का बहुत इच्छुक हूं कि वे कौन–कौन से मुद्दे होंगे जिनमें इस जिला पुस्तकालय के सदस्यों की रुचि होगी। कारण कि ऐसी हो सकता है कि यहां आकर मैं ऐसे किसी विषय पर बोलूं जिसमें उन्हें कोई दिलचस्पी न हो। यदि ऐसा होगा तो मेरे आने का न तो आपको कोई फायदा होगा न मुझे। लेकिन यह उनका बड़प्पन था कि उन्होंने मुझे चार विषयों की एक सूची प्रेषित कर दी। उन्होंने कहा कि, 'आप इन चारो में से कोई एक विषय चुन लें।' मैं उन्हें जवाब भेज देने की हड़बड़ी में था और यह नहीं बता सका कि मैंने वास्तव में किस विषय पर बोलने का निर्णय लिया है। हालांकि मैंने उन्हें मोटे तौर पर यह बता दिया था कि मैं चार में से एक विषय चुन लूंगा और यदि मैंने चार में से एक विषय नहीं चुना तो भी मैं उनके द्व ारा निर्धारित चार विषयों की लक्ष्मण–रेखा का उल्लंघन नहीं करूंगा। उनके द्वारा बाताए गए विषयों में से मुझे संसदीय लोकतंत्र ने आकर्षि किया और मुझे लगा कि यही वह विषय है जिस पर मैं बोल सकूंगा। जो विषय मैंने चुना है वह संसदीय लाकतंत्र से बहुत नजदीक से जुड़ा है और वह मेरे नजरिये से और मैं समझता हूं कि देश के नजरिये से एक अत्यंत महत्वपूर्ण विषय है। तो आज की इस संध्या में मैं जिस मुद्दे पर आपके समक्ष बोलने जा रहा हूं मेरे शब्दों में वह विषय है, ''लोकतंत्र के सफलतापूर्वक परिचालन हेतु पूर्व परिस्थितियां'' वे कौन–सी पूर्व परिस्थितियां हैं जिनका अस्तित्व में होना लोकतांत्रिक सरकार के निर्बाध रुप में कार्य करते रहने के लिए बहुत जरूरी है। इसी विषय पर मैं कुछ बातें कहना चाहता हूं।

विषय के लिए पृष्ठभूमि

अब इससे पहले कि मैं इस मुद्दे पर बोलूं, मैं इस विषय के लिए पृष्ठभूमि के रूप में सर्वप्रथम कुछ आरंभिक तथ्यों को प्रस्तुत करना चाहता हूं।

सबसे पहली निष्पति जो मैं प्रस्तुत करना चाहता हूं वह यह है कि लोकतंत्र के स्वरूप में सदैव परिवर्तन हो रहा है। हम लोकतंत्र की बात करते हैं, लेकिन लोकतंत्र हमेशा एक–सा नहीं रहता है। यूनानी लोग एथेंस के लोकतंत्र की बात करते हैं। लेकिन यह सर्वविदित है कि एथेंस का लोकतंत्र में शामिल लोगों में से लोकतंत्र से उतना ही भिन्न है जितना कि खड़िया मिट्टी से पनीर। एथेंस के लोकतंत्र में शामिल लोगों में से 50 प्रतिशत गुलाम थे, केवल 50 प्रतिशत स्वतंत्र थे। जो 50 प्रतिशत गुलाम थे उनकी सरकार में कोई साझेदारी नहीं थी। इसलिए निश्चित रूप से हमार लोकतंत्र एथेंस के लोकतंत्र से काफी भिन्न है।

एक दूसरा आरंभिक तथ्य जिस पर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा, वह ये है कि एक ही देश में भी लोकतंत्र एक जैसा नहीं होता है। आप चाहें तो

इंग्लैंड का इतिहास ले लें। यह कोई नहीं कह सकता है कि 1688 की इंग्लैंड की क्रांति से पहले ब्रिटिश लोकतंत्र वही था जो 1688 की क्रांति के बाद आया। न तो कोई यह ही कह सकता है कि पहले सुधार विधेयक बिल के पारित होने के समय 1688 से 1832 के बीच में इंग्लैंड का जो लोकतंत्र अस्तित्व में था वह वही लोकतंत्र है जो 1832 के अधिनियम के पारित होने के बाद विकसित हुआ। लोकतंत्र का स्वरूप परिवर्तित होता रहता है।

तीसरी चीज जिस पर मैं आपका ध्यान आकृष्ट करना चाहूंगा वह ये है कि लोकतंत्र के केवल स्वरूप में ही बदलाव नहीं होता है। लोकतंत्र के उद्देश्य में भी बदलाव होते रहते हैं। आप प्राचीन अंग्रेजी लोकतंत्र का उदाहरण लें। उस लोकतंत्र का मकसद क्या था? इसका मकसद राजा पर अंकुश लगाना था। अब के हमारे कानून के शब्दों में कहें तो राजा को उसके विशेषाधिकारों का उपयोग करने से वंचित करना था। राजा ने तो यहां तक कह दिया था कि यद्यपि कानून बनाने वाली संस्था के तौर पर संसद अस्तित्व में रह सकती है, ''राजा के रुप में मुझे यह विशेषाधिकार प्राप्त है कि मेरा कानून अंतिम माना जाएगा।'' राजा की इस प्रकार की तानाशाही थी जिसने लोकतंत्र को अस्तित्व प्रदान किया।

अब लोकतंत्र का उद्देश्य क्या है? आधुनिक लोकतंत्र का उद्देश्य किसी तानाशाह राजा पर अंकुश लगाना नहीं है, बल्कि लोगों का कल्याण करना है। लोकतंत्र के उद्देश्य का यह अंतर अत्यंत विशिष्ट है। इसलिए आप लोग पाएंगे कि मैंने जो शीर्षक अपने विषय को दिया है उसमें जान–बूझकर, ''आधुनिक लोकतंत्र की सफलता के लिए पूर्व शर्तों की आवश्यकता जैसे–शब्दों का प्रयोग किया है।

लोकतंत्र की परिभाषा

अब मैं फिर पूछता हूं कि लोकतंत्र से हमारा क्या आशय है? मैं अपने विषय पर आंऊ उससे पहले हम साफ–साफ समझ लें। जैसा कि आप जानते हैं लोकतंत्र को बहुत–से लोगों ने, राजनीति विज्ञान के लेखकों, दार्शनिकों तथा समाजशास्त्रियों ने परिभाषित किया है। अपने विचार को समझाने के लिए मैं सिर्फ दो का उदाहरण लेता हूं। मुझे मालूम नहीं है कि आप में से कोई अंग्रेजी संविधान पर लिखी वाल्टर बेगहॉट की उस पुस्तक से परिचित है या नहीं जो लोकतंत्र की स्पष्ट तस्वीर देने का प्रथम आधुनिक प्रयास है। अगर आप वाल्टर बेगहॉट की उस पुस्तक का हवाला लें तो लोकतंत्र की परिभाष ''विमर्श द्वारा चुनी हुई सरकार'' है। दूसरा उदाहरण अब्राहम लिंकन का है। दक्षिणी राज्यों की जीत के बाद दिए गए अपने प्रसिद्ध गेटिसबर्ग भाषण में उन्होंने लोकतंत्र का लोगों की, लोगों के द्वारा और लोगों के लिए सरकार'

के रूप में परिभाषित किया था। इसके अलावा कई और परिभाषाएं गिनाई जा सकती हैं जिनसे यह स्पष्ट हो सके कि लोकतंत्र से लोगों का क्या आशय है।

लोकतंत्र की मेरी परिभाषा है–''सरकार का वह स्वरुप और पद्धति जिससे लोगों के आर्थिक और सामाजिक जीवन में बिना रक्तपात किए क्रांतिकारी परिवर्तन लाए जाते हैं'', यह मेरी परिभाषा है लोकतंत्र की। अगर लोकतंत्र इसको चलाने वाले लोगों को इतना सक्षम बना सके कि वे लोगों के सामाजिक और आर्थिक जीवन में आधारभूत परिवर्तन ला दें और लोग भी उन परिवर्तनों को बिना रक्तपात का सहारा लिए अंगीकार कर सकें, तो मैं कहूंगा कि यहां लोकतंत्र है। यही असली परीक्षा है। यही शायद सबसे बड़ी परीक्षा है। लेकिन हम जब किसी पदार्थ की गुणवत्ता की जांच कर रहे हों तो उसका कड़े से कड़ा परीक्षण होना चाहिए। तो जहां तक आज के मेरे संबोधन का प्रश्न है, मैं हर हाल में लोकतंत्र को उसी तरह परिभाषित करना चाहता हूं। अब प्रश्न है कि इस तरह का लोकतंत्र सफल कैसे होगा? यही मेरे संबोधन का मुख्य विषय है। किंतु दुर्भाग्य से, लोकतंत्र के इस विषय पर लिखने वाले तमाम लेखकों में से किसी ने भी उन परिपाटियों के बारे में नहीं बताया है जिससे हमें एक ठोस विचार प्राप्त हो सके कि उनके निर्णय के अनुसार लोकतंत्र को सफल बनाने के लिए कौन–कौन सी आवश्यक पूर्व परिस्थितियां हैं। इसके लिए हमें इतिहास पढ़ना होगा और इतिहास पढ़कर यह पता लागाना होगा कि संसार के विभिन्न हिस्सों में जहां लोकतंत्र रहा है वहां वह सब किस–किस समय असफल हुआ है, और तब हमें अपने निष्कर्ष पर पहुंचना होगा।

शर्त–1

पहली शर्त जो कि मैं समझाता हूं लोकतंत्र के सफल रूप से कार्य करने के लिए आवश्यक शर्त है, यह है कि समाज में भयंकर असमानताएं नहीं होनी चाहिए। उसमें कोई दमित वर्ग नहीं होना चाहिए। वहां ऐसा भी नहीं होना चाहिए कि एक वर्ग को सारी सुविधाएं प्राप्त हों और एक अन्य वर्ग को सारे का सारा बोझ ही उठाना पड़ता हो। इस प्रकार की चीज, इस तरह का बंटवारा, और समाज का इस तरह का संगठन स्वयं के भीतर ही क्रांति के कीटाणु पालता है, और संभवतः किसी लोकतंत्र के लिए उसका इलाज कर पाना ही संभव नहीं हो सकेगा। गेटिस वर्ग के उसी भाषण में लिंकन ने कहा था, हालांकि लोग उनका मतलब नहीं समझ पाये हैं कि, खुद में ही बंटा हुआ घर कभी खड़ा नहीं रह सकता है।'' निश्चित रूप से वे दक्षिणी राज्यों और उतरी राज्यों के पारस्परिक विरोध का संदर्भ दे रहे थे। उन्होंने कहा था, ''अगर दक्षिणी राज्यों के आप और उतरी राज्यों के हम बंटे रहे, तो जब कभी कोई विदेशी शत्रु आएगा, हम साथ खड़े न हो सकेंगे।'' वह शायद यही अर्थ से संप्रेषित करना चाहते थे जब उन्होंने कहा

था कि बंटा हुआ घर कभी खड़ा नहीं रर सकता है। लेकिन मैं समझता हूं कि उनके इस वाक्यांश अथवा वाक्य में गहरा अर्थ छिपा है और मैं जो अर्थ समझता हूं वह यह है कि दो वर्गों के बीच जो गहरी खाइयां हैं वे लोकतंत्र की सफलता में सबसे बड़ी बाधाएं साबित होने वाली हैं। क्योंकि आखिर लोकतंत्र में होता क्या है?

शर्त–2

यह लोकतंत्र की जरूरत है कि सरकार केवल लोगों के 5 वर्ष के दीर्घकालीन वीटो के ही अधीन न हो, बल्कि एक तात्कालिक वीटो भी होना चाहिए। संसद में तत्पर रुप से ऐसे लोग होने चाहिए, जो सरकार को वहीं की वहीं चुनौती दे सकें। अतः यदि आप समझते हैं कि मैं क्या कर रहा हूं, तो लोकतंत्र का अर्थ है कि किसी को भी सतत रुप से शासन करने का अधिकार नहीं है, बल्कि वह शासन लोगों की अनुमति के अधीन है और उसे सदन में ही चुनौती दी जा सकती है। आप समझ पाएंगे कि 'विपक्ष' का होना कितना आवश्यक है। 'विपक्ष' का मतलब है कि सरकार हमेशा कटघरे में रहेगी। सरकार को अपने किए गए कार्यों का स्पष्टीकरण उन लोगों को देना ही पड़ेगा जो उसकी अपनी पार्टी के नहीं है। दुर्भाग्य से हमारे देश में सारे अखबार किसी–न–किसी कारण से, और मुझे लगता है विज्ञापनों से उत्पन्न राजस्व के कारण, विपक्ष की तुलना में सरकार को कहीं ज्यादा प्रचारित करते हैं, क्योंकि विपक्ष से केई राजस्व तो मिलता नहीं है। उन्हें सरकार से राजस्व मिलता है और आप पाते हैं कि दैनिक अखबारों में सताधारी दलों के सदस्यों के स्तम्भ दर स्तम्भ छाये रहते हैं और 'विपक्ष' द्वारा दिए गये बयान शायद कहीं अंतिम पृष्ठ के किसी अंतिम कोने में रख दिये जाते हैं। लोकतंत्र क्या है मैं इसकी आलोचना नहीं कर रहा हूं। मैं यह कह रहा हूं कि लोकतंत्र के लिए क्या है। विपक्ष लोकतंत्र के लिए है। पर क्या आपको पता है कि इंग्लैंड में न केवल 'विपक्ष' को मान्यता दी गयी है, बल्कि 'विपक्ष' के नेता को सरकार 'विपक्ष' को चलाने के लिए वेतन का भुगतान करती है।

उसको एक सचिव मिलता है, आशुलिपिकों एवं लेखकों का एक छोटा–सा स्टाफ मिलता है और अपना काम करने के लिए 'हाउस ऑफ कामन्स' में एक कमरा दिया जाता है। इसी तरह आप देखेंगे कि कनाडा में विपक्ष के नेता को प्रधानमंत्री की तर्ज पर वेतन दिया जाता है। क्योंकि इन दोनों ही मुल्कों में लोकतंत्र को लगता है कि कोई न कोई होना चाहिए जो सरकार की गलतियों पर उंगली उठा सके। और चूंकि यह लगातार और अनवरत रुप से होना चाहिए, इसलिए वे विपक्ष के नेता पर धन खर्च होने की परवाह नहीं करते हैं।

शर्त–3

मेरा सोचना है कि एक तीसरी शर्त भी है जो लोकतंत्र की सफलता के लिए अनिवार्य कही जा सकती है, और वह है कानून और प्रशासन में समानता। इस उत्तर पर कानून के समक्ष बराबरी को लेकर बहुत खुश होने की आवश्यकता नहीं है, हालांकि जहां–तहां ऐसे मामले हो सकते हैं, जब कानून के समक्ष कोई समानता नहीं है। लेकिन जो चीज जरूरी है वह है प्रशासन में समानता का व्यवहार। बहुत संभव है कि आप में से बहुतों को ऐसे वकये याद आ जाएं जिनमें सताधारी दल केवल अपने सदस्यों के लिए प्रशासन चला रहा हो। कम–से–कम मैं तो इस तरह के बहुतेरे वाकये गिना सकता हूं। मान लीजिए कोई ऐसा कानून है जो कहता है कि बिना लाइसेंस लिए कोई भी किसी वस्तु–विशेष का व्यापार नहीं कर सकता है। तो कोई भी उस कानून से नहीं लड़ सकता, क्योंकि यह सबके लिए बना है। उस नियम–विशेष में कोई भेदभाव नहीं है। लेकिन अब हमें यह देखना चाहिए कि जब कोई व्यक्ति किसी अधिकारी या मंत्री के पास उन वस्तु–विशेष का व्यापार करने के लिए लाइसेंस प्राप्त करने हेतु आवेदन लेकर जाता है तब क्या होता है। मैं नहीं जानता, हो सकता है कि मंत्री पहले उस व्यक्ति की टोपी को देखे। किस रंग की टोपी उसने पहन रखी है? अगर उसने ऐसी टोपी पहन रखी है जो उसे लुभाती है और वहीं एक दूसरा आदमी दूसरी वेशभूषा में या दूसरी पार्टी के संबंध रखने वाला होकर जाता है और निर्णय लेने में लाइसेंस व्यक्ति को दे दिया जाता है तथा दूसरे आदमी को मना कर दिया जाता है। जबकि योग्यता के आधार पर दोनों ही लाइसेंस पाने के लिए पात्र हैं, तो स्पष्ट रूप से यह प्रशासनिक भेदभाव है, और उसमें ईमानदारी नहीं है। बेशक लाइसेंस का मुद्दा अर्थात् छोटी–मोटी सुविधाओं का दिया जाना छोटी बात है और इससे लोगों का एक सीमित वर्ग ही प्रभावित होता है। लेकिन अब हमें यह देखना है कि यदि इसी तरह का पक्षपात प्रशासन में आ जाए तब क्या होगा। मान लीजिए किसी पार्टी विशेष के लिए किसी सदस्य पर किसी अपराध विशेष के लिए अभियोजन किया जा रहा है जिसमें पर्याप्त सबूत हैं, और यह भी मान लीजिए कि उस क्षेत्र विशेष के पार्टी का मुखिया जिलाधिकारी के पास जाता है और उससे कहता है कि उस आदमी पर मुकदमा चलाना उसके लिए ठीक नहीं होगा क्योंकि वह उस पार्टी का सदस्य है और फिर कहता है, ''अच्छा, यदि आप ऐसा नहीं करेंगे तो मैं मंत्री के पास मामला भेजूंगा और आपका स्थानांतरण किसी अन्य स्थान के लिए करवा दूंगा।'' आप अंदाजा लगा सकते हैं कि तब प्रशासन में कितनी अराजकता और अन्याय भर जाएंगे। यह बिल्कुल उसी तरह की स्थिति है जो संयुक्तराज्य में हुआ करती थी जिसे भ्रष्ट व्यवस्था कहा जाता है। कहने का

मतलब है कि जब एक पार्टी सत्ता में आ गयी तो उसने क्लर्कों और चपरासियों समेत उन सभी कर्मचारियों को हटा दिया जिनकी नियुक्ति उनके पूर्ववर्ती पार्टी द्वारा की गयी थी और उन्होंने उन पदों पर उन सज्जनों का नियुक्तकर लिया जिन्होंने उस पार्टी को सत्ता दिलान में मदद की थी। सच कहें तो काफी सालों तक संयुक्तराज्य में ऐसी कोई प्रशासनिक व्यवस्था नाम की चीज नहीं थी जिसके बारे में कुछ कहा जाए। बाद में उन्होंने खुद महसूस किया कि यह लोकतंत्र के नजरिए से उचित नहीं है। उन्होंने इस भ्रष्ट व्यवस्था को समाप्त कर दिया। प्रशासन को शुद्ध, निष्पक्ष तथा राजनीति और नीति से दूर बनाए रखने के लिए उन्होंने राजनीतिक कार्यालयों और सरकारी कार्यालयों के रूप में विभेद रखा है। सरकारी सेवा स्थायी है। यह सभी दलों को सेवा प्रदान करती है भले ही सत्ता में कोई हो और मंत्रियों की दखल के बिना प्रशासन चलाती है। ऐसी व्यवस्था अंग्रेजों के समय में हमारे यहां भी थी। भारत सरकार के सदस्य के रूप में अपने कार्यालय में मैंने खुद ऐसा एक अनुभव किया था जो मुझे अच्छी तरह याद है। शायद आप लोगों को याद हो कि दिल्ली में हर गली, हर क्लब का नाम किसी–न–किसी वायसराय के नाम पर पड़ा है। केवल एक ही गर्वनर जनरल जिनका नाम किसी गली या संस्था से नहीं जोड़ा गया था वह थो लॉर्ड लिन्लिथगो उनके निजी सचिव मेरे मित्र थे। उस समय बहुत सारी अन्य चीजों के साथ–साथ लोक निर्माण विभाग का भी प्रभाग मेरे पास था। वह आये और धीमे–से मुझसे बोले, प्रिय डॉक्टर साहब क्या आप कुछ ऐसा कर सकते हैं ताकि लॉर्ड लिन्लिथगो के नाम पर भी किसी संस्था या कार्य का नाम जुड़ जाए?''

उन्होंने कहा कि यह बड़ा अस्वाभाविक है कि उनको छोड़कर और सबका नाम कहीं न कहीं है। मैंने कहा, ''मैं विचार करूंगा।'' उस समय मैं दिल्ली शहर को गर्मी के मौसम में पानी उपलब्ध कराने के लिए जमुना पर एक बांध बनाने के बारे में विचार कर रहा था, क्योंकि गर्मियों में जमुना सूख जाती है। मैंने प्रयास नामक अपने यूरोपीयन सचिव को बताया और कहा, 'मि. प्रियास देखिये, गवर्नर जनरल के सचिव ने मुझसे कहा है। क्या आपको लगता है कि हम लोग कुछ कर सकते हैं?'' आपको क्या लगता है कि उसने क्या जवाब दिया होगा? उसका जवाब था, ''सर, हमें ऐसी कोई चीज बिल्कुल नहीं करनी चाहिए।'' इस देश में किसी भी सूरत में ऐसी चीज होना बिल्कुल असंभव है। मेरी समझ में वहां किसी अधिकारी के लिए कोई ऐसी बात कह पाना, जो कि मंत्री की इच्छाओं के विरुद्ध हो, बिल्कुल असंभव है। लेकिन उन दिनों यह बिल्कुल संभव था, क्योंकि ब्रिटेन की तर्ज पर हमने भी यह बुद्धिमतापूर्ण निर्णय लिया हुआ था कि प्रशासन के कार्यों में सरकार की दखल नहीं होनी चाहिए, और सरकार का कार्य नीति निर्माण करना है तथा दखल करना और पक्षपात करना इसका काम नहीं है। यह बहुत आधारभूत आवश्यकता है और

मुझे डर है कि हम पहले ही उससे अलग हो चुके हैं और जिस चीज को हमने इतने दिनों तक साथ संजोया था हम उसे पूरी तरह नष्ट करके खो देंगे।

शर्त – 4

मेरी दृष्टि से लोकतंत्र के सफलतापूर्वक कार्य करने के लिए चौथी महत्वपूर्ण शर्त है संवैधानिक नैतिकता का पालन। बहुत–से लोग हैं जो संविधान को लेकर खासे उत्साहित दिखते हैं। पर मुझे भय है कि मैं नहीं हूं। मैं उन लोगों का साथ करने के लिए बिल्कुल तैयार हूं जो संविधान को हर हालत में समाप्त करवाना चाहते हैं ताकि उसे फिर से बनाया जा सके। लेकिन हम यह भूल जाते हैं कि जो संविधान हमारे पास है, उसमें केवल विधिक प्रावधान है, वह केवल अस्थिपंजर है। उस अस्थिरपंजर का मांस संवैधानिक नैतिकता में मौजूद है। हालांकि इंग्लैंड में उसे संविधान की नीतियां कहा गया है जिसके नियमों का पालन करने के लिए लोगों का तत्पर होना बहुत जरूरी है। मैं चाहता हूं कि आप मुझे एक–दो उदाहरण रखने दें जो इस समय मुझे सूझ रहे हैं। आपको याद है जब 13 अमेरिकी उपनिवेशों ने विद्रोह कर दिया था, तब वाशिंगटन उनके नेता थे। अगर कहा जाए कि वह केवल एक नेता थे तो वास्तव में अमेरिकी जीवन में उनकी स्थिति को परिभाषित करने का यह बड़ा ही अपर्याप्त तरीका होगा। अमेरिका के लोगों के लिए वाशिंगटन ईश्वर थे। अगर आप उनका जीवन और इतिहास पढ़ें तो जानेंगे कि संविधान बनने के बाद उन्हें अमेरिका का पहला राष्ट्रपति बनाया गया था। जब उनका कार्यकाल समाप्त हो गया तब क्या हुआ? दुबारा खड़े होने से उन्होंने मना कर दिया। मेरे मन में तनिक भी संदेह नहीं है कि यदि वाशिंगटन लगातार दस बार राष्ट्रपति पद के लिए खड़े होते तो वे सर्वसम्मति से निर्विरोध चुन लिए जाते। लेकिन वे दूसरी बार नहीं खड़े हुए। जब उनसे इसका कारण पूछा गया, वे बोले, "मेरे लिए नागरिकों, आप वह मकसद भूल गए हैं जिनके लिए हमने यह संविधान बनाया गया था। हमने संविधान इसलिए बनाया था क्योंकि हम वंशानुगत राजशाही नहीं चाहते थे। अब अगर अंग्रेजी राजा को त्यागकर उसके प्रति निष्ठा को छोड़कर आप मेरे पास आयें और साल दर साल और एक कार्यकाल के बाद दूसरे कार्यकाल आप मेरी पूजा करते रहें तो आपके सिद्धांतों का क्या? अगर आप मुझे अंग्रेजी राजा की जगह स्थापित कर देते हैं तो क्या आप कह सकेंगे कि आपने उसके प्रति विद्रोह करके अच्छा किया?" उन्होंने कहा, "भले ही मेरे प्रति आपकी निष्ठा और समर्पण आपको यह कहने के लिए मजबूर कर रही है कि मुझे दूसरी बार के लिए खड़ा होना चाहिए, मैं आपकी भावनाओं का शिकार नहीं बन सकता हूं क्योंकि मैंने खुद उस सिद्धांत का जाप किया है कि हम वंशानुगत सत्ता नहीं रखेंगे।" अंततः उन लोगों ने उन्हें दूसरी बार खड़ा होने के लिए राजी

कर ही लिया। और वे खड़े हुए। और जब तीसरी बार वे उनके पास गये तो उन्होंने उन लोगों को रुखाई से रवाना कर दिया। मैं आप लोगों को एक और उदाहरण देता हूं। आप विन्डसर एडवर्ड अष्टम् को जानते हैं जिसकी धारावाहिक कहानी अब टाइम्स ऑफ इण्डिया में प्रकाशित हो चुकी है। मैं गोलमेज सम्मेलन में गया हुआ था और वहां विवाद छिड़ा हुआ था कि क्या राजा को उस औरत से विवाह करने दिया जाना चाहिए जिससे वह चाहता है खासतौर पर तब जबकि वह उसे विवाह करना चाहता है ताकि वह रानी न बन जाए अथवा ब्रिटेन के लोगों को राजा यह व्यक्तिगत अधिकार भी न देना चाहिए और सिंहासन छोड़ने के लिए मजबूर करना चाहिए। मि. वाल्डविन निश्चय ही राजा के विवाह के विरुद्ध थे। वह उनको अनुमति नहीं दे रहे थे, और बोले, ''अगर आप मेरी बात नहीं मानते हैं तो आपको जाना पड़ेगा।'' हमारे मित्र चर्चिल एडवर्ड अष्टम के मित्र थे और उनको प्रोत्साहित कर रहे थे। उस समय लेबर पार्टी विपक्ष में थी। उनके साथ बहुमत नहीं था और मुझे भली–भांति याद है कि लेबर पार्टी के लोग यह विचार कर रहे थे कि क्या वे इस मुद्दे का लाभ उठाकर मि. बाल्डविन को हरा सकते थे क्योंकि जो अपनी निष्ठा के कारण राजा का समर्थन करना चाहते थे और मुझे याद है कि स्व. प्रोफेसर लास्की ने 'हेराल्ड' में शृंखलाबद्ध लेख लिखे थे जिसमें उन्होंने लेबर पार्टी के ऐसे किसी भी पहल की भर्त्सना की थी। उन्होंने कहा था, ''हमारी रीति के अनुसार हम सदैव इस बात से सहमत रहे हैं कि राजा को प्रधानमंत्री की सलाह स्वीकार करनी ही पड़ेगी और अगर वे नहीं करते हैं तो प्रधानमंत्री को जबरन उन्हें बाहर निकालना पड़ेगा।'' हमारी ऐसी नीति के होते हुए यह हमारी गलती होगी यदि हम मि. बाल्डविन को एक ऐसे मुद्दे के कारण हराते हैं जिसमें राजा के प्राधिकार में वृद्धि होती है। और लेबर पार्टी ने उनकी सलाह मान ली और ऐसा कुछ भी नहीं किया। वे बोले कि उन्हें खेल के नियमों का पालन करना ही चाहिए। अगर आप अंग्रेजों का इतिहास पढ़ें तो आपको ऐसे कई दृष्टांत मिल जाएंगे जिनमें पार्टी के नेताओं को बहुत–से प्रलोभन के अवसर थे जिनमें वे सरकार में या विपक्ष में बैठे अपने विरोधियों को हानि पहुंचा सकते थे, किसी ऐसे मुद्दे को पकड़कर, जिससे उन्हें अल्पकालिक शक्ति मिल रही थी, लेकिन जिनका शिकार बनने से उन्होंने मना कर दिया, क्योंकि वे जानते थे कि इससे वे संविधान और लोकतंत्र दोनों को क्षति पहुंचा देंगे।

एक और चीज है जो मैं सोचता हूं कि लोकतंत्र के चलने के लिए बहुत जरूरी है और वह ये है कि लोकतंत्र के नाम पर बहुमत द्वारा अल्पमत पर अत्याचार नहीं होना चाहिए। अल्पमत को हमेशा सुरक्षित रहने का बोध होना चाहिए, कि भले ही बहुमत सरकार चला रही है, अल्पमत को चोट नहीं पहुंच रही है या उनके विरुद्ध गलत हथकंडों का इस्तेमाल नहीं किया जा रहा है। हाउस ऑफ कामन्स में इस

बात का अत्यधिक सम्मान किया जाता है। आप लोगों में से बहुतों को सन् 1931 में इंग्लैंड में हुए चुनावों की याद अभी भी होगी जब मि. रैमसे मैंक डोनल्ड ने लेबर पार्टी छोड़कर राष्ट्रीय सरकार बना ली थी। जब चुनाव आये तो लेबर पार्टी, और मैं समझता हूं जिसकी सं. लगभग 150 के आसपास थी, के पास 650 में से केवल 50 सदस्य थे जिसमें प्रधानमंत्री मि. बाल्डविन भी शामिल थे। तब मैं वही पर था। पर मैंने एक भी ऐसा वाकया नहीं सुना जिसमें लेबर पार्टी के 50 सदस्यों वाली इस अल्पमत पार्टी ने कंजरवेटिवस् की विशाल बहुमत वाली पार्टी के अधीन कार्य करते हुए कभी यह शिकायत की हो उन्हें अभिव्यक्ति या विरोध के अधिकार से अथवा किसी प्रकार के प्रस्ताव पारित करने के अधिकार से वंचित किया गया जैसा कि आप शायद जानते हैं। आप हमारे संसद को ले लीजिए। बार–बार निन्दा प्रस्ताव या स्थगन प्रस्ताव लाकर विपक्ष के सदस्य जो कर रहे हैं मैं उसको जायज नहीं ठहरा रहा हूँ। यह बहुत अच्छा नहीं लगता कि संसद में लगातार इन स्थगन प्रस्तावों का इस्तेमाल करते हुए कार्य किया जाए। लेकिन फिर आपने ध्यान दिया होगा कि शायद ही होई स्थगन या निन्दा प्रस्ताव बहस के लिए शामिल किया गया हो। मुझे इस पर बहुत आश्चर्य होता है। जितना मैंने अंग्रेजी संसद की बहसों को पढ़ा है उसमें शायद ही मुझे कोई ऐसा मुद्दा मिला है जिसमें स्पीकर ने स्थगन की मांग को नकार दिया हो, बशर्तें यह सरकार का आदेश हो। जब मैं बॉम्बे लेजिस्लेटिव एसेंबली का सदस्य था तो सरकार में हमारे कुछ मित्र मि. मोरार जी, मि. मुंशी तथा मि. खेर व कुछ अन्य थे। वे किसी एक स्थगन प्रस्ताव को भी बहस की अनुमति नहीं देते थे। या तो तत्कालीन स्पीकर हमारे मित्र श्री मावलंकर इसको मना करते हुए उनकी सहायता करते थे या फिर अगर वे इसको शामिल भी करते थे तो मंत्रीगण इसका विरोध कर देते थे। आपको मालूम है कि जब कोई मंत्री विरोध करता है तो स्थगन प्रस्ताव लाने वाले व्यक्ति को निर्धारित कोटे के अनुसार 30 या 40 लोगों को प्रस्तुत करना पड़ता है। यदि सरकार उन छोटे समुदायों के स्थगन प्रस्तावों का, जिनका सदन में प्रतिनिधित्व 4, 5 या 6 सदस्य ही करते हैं, विरोध लगातार ही करते रहे तो ऐसा हो सकता है कि ऐसे छोटे समुदायों को अपनी शिकायतें अभिव्यक्त करने का कभी अवसर ही न मिल सके। तो क्या होता है कि अल्पमत लोगों का संसद के लोगों के मन में लोगों के प्रति घृणा पैदा हो जाती है और उनके मन में कुछ गर–संवैधानिक क्रांतिकारी भाव विकसित हो जाते हैं। इसलिए यह जरूरी है कि जब लोकतंत्र चल रहा हो तो बहुमत को, जिस पर यह आधारित है, अन्यायपूर्ण तरीके से बर्ताव नहीं करना चाहिए।

एक और मुद्दा है जिसका सन्दर्भ देकर मैं अपनी बात समाप्त करूंगा। मुझे लगता है कि समाज में नैतिक व्यवस्था का कार्य करते रहना लोकतंत्र के लिए बहुत जरूरी है। पता नहीं क्यों हमारे राजनीति–विज्ञानियों ने लोकतंत्र के इस पहलू पर

कभी विचार नहीं किया है। आचरण–शास्त्र कुछ ऐसी चीज है जो राजनीति से पृथक है। आप भले ही आचरण–शास्त्र के बारे में कुछ न जानते हों आप राजनीति सीख सकते हैं मानों आचरण के बिना रानीति चल सकती है। मेरे हिसाब से यह अवधारणा अत्यंत भ्रामक है। लोकतंत्र में आखिर होता क्या है? लोकतंत्र के बारे में कहा जाता है कि वह मुक्त सरकार है। और मुक्त सरकार से हमारा क्या आशय है? मुक्त सरकार का मतलब है सामाजिक जीवन के व्यापक पहलुओं में लोग कानून के हस्तक्षेप के बिना स्वतंत्र होकर जीने के लिए छोड़ दिए जाते हैं, और अगर कानून बनना जरूरी ही होता तो कानून बनाने वाला यह अपेक्षा करता है कि उस कानून को सफल बनाने के लिए समाज के पास पर्याप्त नैतिकता रहेगी। मुझे लगता है कि एकमात्र लास्की ही ऐसा व्यक्ति है जिसने लोकतंत्र के इस पक्ष की बात की है। उन्होंने अपनी एक कृति में अपनी बात में बहुत साफ ढंग से कहा है कि लोकतंत्र में नैतिक व्यवस्था का अस्तित्व सहज ही मान लिया जाता है। अगर नैतिक व्यवस्था बिल्कुल न रहे तो लोकतंत्र की धज्जियां उड़ जाएंगी, जैसा कि शायद हमारे देश में हो रहा है।

अंतिम चीज जिसका सन्दर्भ मैं दे रहा हूं वह यह है कि लोकतंत्र के लिए 'जन चेतना' जरूरी है। इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि यद्यपि प्रत्येक देश में अन्याय मौजूद है, अन्याय का प्रसार समान नहीं है। कुछ देश हैं जहां अन्याय का प्रभाव बहुत कम है। कुछ ऐसे भी हैं जिन पर अन्याय का प्रभाव बहुत अधिक है। और कुछ ऐसे भी हैं जो अन्याय के बोझ तले पूरी तरह से कुचल दिये गये हैं। आप बड़ी आसानी से इंग्लैंड के यहूदियों के मामले को उद्धरित कर सकते हैं। इन लोगों ने कुछ ऐसे अन्याय भोगे हैं जो ईसाईयों ने कभी नहीं भोगे। हुआ यह कि इस अन्याय का उन्मूलन करने के लिए यहूदियों को अकेले ही लड़ना पड़ा। लेकिन अंग्रेजी ईसाईयों ने कभी उनकी सहायता नहीं की। वास्तव में यह उन्हें अच्छा लग रहा था। केवल राजा ही इंग्लैंड का एकमात्र व्यक्ति था, जिसने यहूदियों की सहायता की। यह विचित्र हो सकता है। लेकिन इसका कारण भी विचित्र है और कारण यह है कि पुराने ईसाई नियमों के अनुसार यहूदियों के बच्चे अपने पिता की सम्पत्ति को विरासत में नहीं पा सकते थे। सिर्फ इसलिए कि वह ईसाई न होकर यहूदी थे। और चूंकि राजा राज्य की बची हुई सम्पत्तियों का वारिस था इसलिए मरे हुए यहूदी की सम्पत्ति उसको मिल जाती थी। राजा को यह चीज अच्छी लगती थी। वह बहुत प्रसन्न था। जब यहूदियों के बच्चे दरख्वास्त लेकर राजा के पास पहुंचे तो राजा ने उन्हें उनके मृतक पिता की सम्पत्ति का थोड़ा–सा हिस्सा देकर बाकी उसने अपने पास रख लिया। पर जैसा मैंने बताया किसी ईसाई ने यहूदियों की मदद नहीं की और यहूदी अपनी मुक्ति के लिए लड़ते रहे। यह उसी का परिणाम था जिसे 'जन चेतना' कहा जाता है। जन चेतना का अर्थ है वह चेतना जो किसी भी अन्याय को देखकर उद्वेलित हो जाती हो चाहे उसका भुक्तभोगी

कोई भी हो और इसका मतलब है कि हर कोई चाहे वह उस अन्याय को स्वयं भोग रहा हो अथवा नहीं, भोगने वाले को उससे मुक्त करने के लिए उसके साथ खड़ा हो जाए। आप दक्षिण अफ्रीका को ले लें जो सबसे ताजा उदाहरण है। वहां अन्याय भोगने वाले लोग भारतीय हैं। हैं कि नहीं? श्वेत लोग नहीं भोग रहे हैं फिर भी आप देख रहे हैं कि सम्मानित स्कॉट स्वयं श्वेत होकर भी इस अन्याय को समाप्त करने के लिए पूरी कोशिश कर रहे हैं। अभी मैंने पढ़ा है कि श्वेत प्रजाति के युवा लड़के–लड़कियों का एक विशाल समूह दक्षिण अफ्रीका में भारतीय लोगों के संघर्ष में शामिल हो गया है। इसी को 'जन चेतना' कहते हैं। मैं आप लोगों को चौंकाना नहीं चाहता। लेकिन कभी–कभी लगता है कि हमारी स्मृति कितनी कमजोर है। हम दक्षिण अफ्रीका की बात कर रहे हैं। मैं मन ही मन आश्चर्य कर रहा हूं कि हम जो भेदभाव और न जाने किन–किन मुद्दों पर बात कर रहे हैं, क्या हमारे सभी गांवों में एक दक्षिण अफ्रीका नहीं हैं। हां, हां हैं हमें बस जाकर देखना है। गांवों में हर जगह दक्षिण अफ्रीका है फिर भी मुझ बड़ी मुश्किल से कोई ऐसा मिला है जो अनुसूचित वर्ग का न होकर भी उनके मकसद के लिए लड़ रहा हो, और क्यों? क्योंकि वहां 'जन चेतना' है ही नहीं। मैं और मेरा भारत केवल इन्हीं शब्दों में मैं बंधकर रह गया हूं। अगर ऐसा ही होता है तो अल्पसंख्यक वर्ग अन्याय को झेल रहा है। उसे इस अन्याय से मुक्ति दिलाने के लिए दूसरों से कोई सहायता नहीं मिलेगी। इससे भी क्रांतिकारी सोच का निर्माण होता है जिससे लोकतंत्र खतरे में पड़ जाएगा। अब, जैसा कि मैंने बताया, जो भी मैं कह रहा हूं वह राजनीति–विज्ञानियों द्वारा विकसित किया हुआ विश्वासों के नाम भर नहीं है बल्कि विभिन्न देशों के राजनीतिक इतिहासों का अध्ययन करने के बाद मेरे मस्तिष्क पर जो छाप पड़ी है उसी का परिणाम है, और मेरा मानना है कि लोकतंत्र को बचाये रखने के लिए ये सबसे जरूरी शर्तें हैं।

देवियो और सज्जनो मुझे कोई इल्म नहीं है कि मुझे निमंत्रण देने के पीछे आपका निहित उद्देश्य या मकसद क्या था। हो सकता है कि आप अपने कार्यक्रम में कुछ जोड़ना चाहते थे। मैं आशा करता हूं कि मैंने वह काम कर दिया है। पर जहां तक मेरा प्रश्न है तो मुझे इस बारे में कोई संदेह नहीं है कि मेरे हिसाब से मैंने आज की शाम जिस विषय पर बोला है वह इस राष्ट्र के लिए बड़े ही महत्व का विषय है। किसी तरह से हमारे मन में यह विचार बैठ गया है कि हमें आजादी मिल गयी है। अंग्रेज चले गये हैं। हमें एक संविधान मिल गया है जिसमें लोकतंत्र का प्रावधान किया गया है। तो भला हमें अब और क्या चाहिए? ऐसा कहकर बिना कुछ किये–धरे अब हम और नहीं बैठे रह सकते हैं। इस प्रकार के विचार से मैं आपको सावधान करना चाहता हूं कि संविधान बनने के साथ ही हमारा काम खत्म हो गया है। यह अभी खत्म नहीं हुआ है। यह केवल शुरू भर हुआ है। याद रखिये

कि लोकतंत्र वह पौधा नहीं जो हर जगह उग सके। यह अमेरिका में उगा है। यह इंग्लैंड में उगा है। कुछ हद तक यह फ्रांस में उगा है। जी हां, यही वह उदाहरण है जिनसे हम यह देखने के लिए कुछ साहस प्राप्त कर सकते हैं कि अन्य स्थानों पर क्या हुआ है। आपको याद होगा कि प्रथम यूरोपीय युद्ध तथा आस्ट्रिया–हंगरी सामाज्य के टूटने के परिणामस्वरूप विल्सन ने आस्ट्रिया से मुक्त कुछ छोटे–छोटे राष्ट्रों को उनकी अपनी इच्छाओं आत्मनिर्णय के आधार पर उत्पन्न किया। उन सबकी शुरुआत लोकतांत्रिक संविधान, लोकतांत्रिक सरकार के साथ हुई और उन्होंने अपने संविधान में मूल अधिकारों का प्रावधान किया था जो कि वर्साइल्स के उनके शांति समझौते के पालन के लिए बाध्यकारी थे। मित्रों, उस लोकतंत्र की क्या गति हुई? क्या अब वहां उसका नामों–निशान भी बचा है? यह अब समाप्त हो गया है। सब का सब लुप्त हो गया है। संभवतः अब वे अन्य देशों के वर्चस्व या उनकी निगरानी के अधिन हैं।

अब वहां कोई लोकतंत्र नहीं रहा। कुछ ताजा उदाहरणों को देखें। सीरिया में लोकतांत्रिक शासन था। कुछ वर्ष उपरांत वहां सैनिक विद्रोह हुआ और सीरिया के कमांडर–इन–चीफ ने सीरिया की सत्ता हथिया ली। प्रजातंत्र हवा में उड़ गया। मिश्रका दूसरा उदाहरण लें। सन् 1922 से 30 साल तक वहां भी प्रजातांत्रिक व्यवस्था थी। एक रात्रि को फारुक को हराया गया और नजीब तानाशाह बन बैठे। उसने मिश्रका संविधान समाप्त कर दिया।

ये सब उदाहरण हमारे समक्ष हैं। हमें अपने भविष्य के संबंध में बहुत सावधान और विचारशील बने रहने की आवश्यकता है। आपको विचार करना पड़ेगा कि क्या हमें बहुत सकारात्मक कदम नहीं उठाने चाहिए ताकि हम अपने लोकतंत्र को सुरक्षित रखने के लिए हमारे मार्ग में जो बाधाएं हैं जो अड़चने हैं उन्हें हटा दें। हमने आपके अंदर चेतना नहीं जगाई है, यह एक ऐसी समस्या है जिससे हम बेखबर नहीं रह सकते। मुझे स्वयं को धन्यवाद देना चाहिए कि मैंने वह सब कार्य कर दिया है।

अब देविया और सज्जनो, मैं आपको और अधिक समय तक रूकना नहीं चाहता और मेरे विचार ध्यानपूर्वक सुनने के लिए आप सबको धन्यवाद देता हूं।[1]

● ● ●

---

[1] यह पुस्तिका डी.डी. गंगल, लोक संग्रह प्रेस, 624 सदाशिव 46, पूना–2 द्वारा मुद्रित तथा वी.बी. गोगटे, एल. एल.बी., वकील, मानद, सचिव पूना जिला कानून पुस्तकालय, पूना–5 द्वारा प्रकाशित।

139

ज्ञान मनुष्य के जीवन की बुनियाद है

24 दिसंबर, 1952 को डॉ. अम्बेडकर ने राजाराम कालेज के कोल्हापुर वार्षिकोत्सव पर एकत्रित छात्रों की सभा को संबोधित किया। अपने संबोधन के दौरान उन्होंने कहा ''ज्ञान मनुष्य के जीवन की बुनियाद है और विद्यार्थी की बौद्धिक क्षमता को बनाये रखने और उसकी मेधा को जगाने के लिए हर प्रयास किया जाना चाहिए।'' उन्होंने विद्यार्थियों से अपनी चिंतन क्षमता विकसित करने और उनके द्वारा अर्जित ज्ञान का उपयोग करने का आह्वान किया।[1]

● ● ●

1. कीर, पृष्ठ 445–446

140

महिलाओं की सामाजिक प्रगति में महिला नेताओं की अरुचि

25 दिसंबर, 1952 को कोल्हापुर की महिला संगठनों ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को संबोधित सम्मान पत्र भेंट किया। कार्यक्रम की व्यवस्था राजाराम थियेटर में की गयी थी। इस कार्यक्रम में पुरुष एवं महिलाएं भारी संख्या में उपस्थित थे। श्रीमती विमलाबाई बागले ने उद्घाटन भाषण देते हुए सम्मान पत्र पढ़कर सुनाया। विभिन्न महिला संगठनों ने डॉ. भीमराव अम्बेडकर और श्रीमती भाईसाहेब अम्बेडकर का स्वागत किया। मेजर दादासाहेब निम्बालकर ने भी डॉ. अम्बेडकर एवं श्रीमती अम्बेडकर का स्वागत किया।[1]

उनके संबोधन के प्रत्युत्तर में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने हिन्दू कोड बिल का सन्दर्भ देते हुए कहा, कि प्रमुख भारतीय महिला नेताओं की रुचि महिलाओं की सामाजिक प्रगति में नहीं है और कहा कि हिन्दू कोड बिल अब ठीक उस दूध की तरह रह गया है जो तीक्ष्ण अम्ल मिला देने के कारण फट गया है। वे यह भी बोले कि, ''अगर वे चाहती हैं कि हिन्दू कोड बिल पास हो जाए तो अनशन करने के लिए दो मोटी महिलाओं को ढूंढ लेना चाहिए।''[2]

● ● ●

1 जनता : 3 जनवरी, 1952

2 कीर, पृष्ठ 4400

141

मैं कड़े कदम उठाऊंगा

निपानी के बेलगॉम जिले के फेडरेशन की शाखा के सम्मेलन में दिनांक 25 दिसंबर, 1952 को डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने 50,000 लोगों की सभा को संबोधित करते हुए कहा, ''पिछड़ी जातियों के दुखों, भुखमरी एवं गरीबी के भयावह परिणाम सामने आएंगे।'' उन्होंने फ्रांसीसी और रूसी क्रांतियों की याद दिलाई। उन्होंने सत्तारूढ़ दल को चेतावनी दी कि यदि अगले चुनावों तक पिछड़ी जातियों की दशाओं में सुधार नहीं हुए तो अनुसूचित जाति फेडरेशन कड़े कदम उठाएगा और परिणामतः सरकार गिर सकती है और व्यवस्था ध्वस्त हो सकती है। उन्होंने कहा, ''मैं अपने लोगों की दुर्दशा के उन्मूलन के लिए दो साल और या हद से हद अगले चुनावों तक प्रतीक्षा करूंगा तथा अगर वार्ता से कोई नया समझौता सामने नहीं आता है तो उन्होंने श्री नेहरू द्वारा हाल ही में नागपुर में दिये गये उस बयान का खंडन किया कि भारत में छुआछूत बिल्कुल नहीं है।

चुनावी हार

अनुसूचित जाति फेडरेशन के उम्मीदवारों की चुनावों में हार संगठन की किसी कमी के कारण नहीं, बल्कि साथियों की कमी के कारण हुई थी। अगर कोई संगठन में कमी को सिद्ध कर दे तो वह राजनीति छोड़ देंगे। संघ के उम्मीदवारों को अनुसूचित जाति के लोगों से शत–प्रतिशत वोट मिले थे। इससे पूर्व फेडरेशन के महासचिव श्री पी.एन. राजभोज ने बैठक की अध्यक्षता करते हुए घोषणा की कि संघ की कार्यवाहक समिति फरवरी में दिल्ली में बैठक करेगी....पी. टी. आई.[1]

● ● ●

---

1 द नेशनल स्टैंडर्ड 27 दिसम्बर, 1952

142

उस्मानिया विश्वविद्यालय ने डॉ. भीमराव अम्बेडकर को सम्मानित किया

भारतीय संविधान के प्रमुख निर्माता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने अपने देश के लिए जो महान कार्य किया उसकी सराहना करते हुए अमेरिका की कोलम्बिया यूनिवर्सिटी ने उनका सम्मान किया, जहां के वह विद्यार्थी रह चुके थे। कोलम्बिया ऐसा पहला विश्वविद्यालय था जिसने एक विशेष दीक्षांत समारोह में डॉ. अम्बेडकर को एल.एल.डी. की उपाधि से अलंकृत किया। पूरे देश में केवल हैदराबाद दक्खन की उस्मानिया यूनिवर्सिटी ने 12 जनवरी, 1953 को डॉ. भीमराव अम्बेडकर को डी.लिट. की उपाधि प्रदान की।

इस दीक्षांत समारोह की पूर्व संध्या पर हैदराबाद के अखबार डेकन क्रानिकल में अपने 1953 के 13 जनवरी अंक में कहा।

''डॉ. अम्बेडकर योग्यतम अधिवक्ताओं में से एक माने जाते हैं जो दलितों के मसीहा हैं और जिन्होंने भारतीय संविधान तैयार करने का प्रमुख बीड़ा उठाया था।''

''उस्मानिया विश्वविद्यालय में 12 जनवरी 1953 के दीक्षांत की प्रक्रिया

''कुलाधिपति का बोलना है

''उस्मानिया विश्वविद्यालय का यह दीक्षांत समारोह निम्नलिखित लोगों को मानद उपाधि से अलंकृत करने के लिए आयोजित किया गया है (1) डॉ. एम. राधाकृष्णन भारत के उपराष्ट्रपति, श्री एम.के. वेल्लोडी, (3) डॉ. बी.आर. अम्बेडकर तथा उन अभ्यार्थियों को भी जिन्हें इस उपाधि के लिए प्रमाणित किया गया है, अब उन्हें उपाधियां प्रदान की जाएं।''

(7) तब कुलपति महोदय उद्धरणों का पाठ करेंगे उक्त लोगों को भेंट करेंगे।

(8) प्रत्येक उद्धरण की समाप्ति पर कुलपति उपाधि प्रदान करेंगे और कहेंगे कि :—

''उस्मानिया विश्वविद्यालय का कुलपति होने के कारण मुझमें निहित प्राधिकार

के आधार पर मैं आपकों आपकी महत्वपूर्ण स्थिति और उपलब्धियों के आधार पर आपको डॉक्टर ऑफ लिटरेचर की मानद उपाधि से अलंकृत करता हूं।''

डॉ. अम्बेडकर के लिए पैरा 8 में बोला गया उद्धरण निम्नवत् है :—

''कुलाधिपति महोदय,

यह मेरे लिए सम्मान स्वरूप है कि मैं आपके समक्ष डाक्टर ऑफ लिटरेचर की मानद उपाधि प्रदान करने के लिए डॉ. अम्बेडकर को प्रस्तुत करता हूं।''

1893 में जन्म लेने वाले डॉ. अम्बेडकर की शिक्षा सितारा और बम्बई में सम्पन्न हुई। बॉम्बे यूनिवर्सिटी से स्नातक होने के बाद वह आगे की पढ़ाई के लिए संयुक्त राज्य अमेरिका गये और 24 वर्ष की अल्पायु में उन्होंने वर्ष 1917 में डॉ. ऑफ फिलासफी की उपाधि अर्जित की। हिन्दुस्तान में लौटने के बाद उन्होंने कुछ समय के लिए बड़ौदा राज्य के वित्त मंत्री के रूप में सेवा का और तदनंतर मुंबई के सिडेनहम कॉलेज में राजनीतिक अर्थ व्यवस्था के प्रोफेसर के रूप में कार्यरत रहे। अपनी अगली विदेश यात्रा में वह इंग्लैंड गये और लंदन स्कूल ऑफ इकॉनामिक्स में विज्ञान में डॉक्टरेट की उपाधि के लिए अपना नामांकन करवाया। 'द प्रॉब्लम ऑफ द रुपी' शीर्षक वाले उनके शोध प्रबंध की प्रशंसा पूरे विश्व भर के अर्थशास्त्रियों ने की।

उनका राजनीतिक कैरियर बहुत जल्द ही शुरू हो गया था, किंतु विधानसभा में उनका कैरियर तब शुरू हुआ जब सन् 1926 में उन्होंने बंबई विधानसभा में प्रवेश किया। कई महत्वपूर्ण समितियों और आयोगों के साथ—साथ उन्होंने भारतीय मुद्रा पर गठित रॉय कमीशन और भारतीय मताधिकार पर गठित लोथियन कमेटी के समक्ष साक्ष्य दिए। अपने कैरियर के प्रारम्भ से ही डॉ. अम्बेडकर सभी पददलित लोगों के कट्टर समर्थक रहे हैं। इन लोगों के कारण उनमें करुणा उपजती थी और वे अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के संस्थापक अध्यक्ष बने। अनुसूचित जातियों का प्रतिनिधित्व करने के लिए उन्हें लंदन में आयोजित गोलमेज सम्मेलन (1930—1932) में आमंत्रित किया गया था।

1942—46 से डॉ. अम्बेडकर ने वाइसराय की कार्यकारिणी परिषद में लेबर मेम्बर का महत्वपूर्ण पद संभाला। जब सन् 1947 में भारत एक स्वतंत्र राष्ट्र बन गया तब उन्हें मंत्रिमंडल में कानून मंत्री के रूप में ले लिया गया। भारतीय संविधान का ढांचा तैयार करने की जिम्मेवारी उन पर आ गयी और इस संबंध में उन्होंने जो भूमिका निभायी है वह सभी भली—भांति जानते हैं।

डॉ. अम्बेडकर की पढ़ने की लालसा अपरिचित है। वे सात भाषाएं जानते हैं। एक लेखक के रूप में उनकी पहचान है और उनकी कई पुस्तकें प्रकाशित हैं। 'वॉट कांग्रेस एण्ड गांधी हैव डन फार अनटचेबुल्स' ऐन्हेलेसन ऑफ कास्ट' फेडरेशन वर्कस फ्रीडम'' 'पाकिस्तान एण्ड पार्टीशन ऑफ इंडिया' 'रानाडे एण्ड गांधी' इत्यादि उनमें है।

कुलाधिपति महोदय, डॉ. अम्बेडकर के रूप में मैं एक बहुत ही प्रतिष्ठित, महत्वपूर्ण उपलब्धियों से सज्जित और विशिष्ट सेवाएं प्रदान कर चुके व्यक्ति को प्रस्तुत कर रहा हूं जो योग्यतम अधिवक्ताओं में से एक, एक व्खाति प्राप्त विधायक तथा भारत के पद–दलित और पिछड़े लोगों के पक्षधर हैं। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि डॉ. अम्बेडकर को डी. लिट की मानद उपाधि से अलंकृत करें।'

डॉ. अम्बेडकर को मानद उपाधि निम्न प्रकार प्रदान की गयी।

डाक्टर ऑफ लिटरेचर की मानद उपाधि

डॉ. अम्बेडकर को उनके महत्वपूर्ण पद एवं उनकी उपलब्धियों के संज्ञान में दीक्षांत समारोह में प्रदान की गयी है।

हैदराबाद दक्खन

12 जनवरी, 1853

कुलाधिपति

• • •

143

यदि बुद्ध के उपदेशों को आत्मसात नहीं किया गया तो यूरोपीय संघर्ष का इतिहास एशिया में दुहराया जाएगा

फेडरेशन के महासचिव तथा विश्व बौद्ध सम्मेलन के प्रतिनिधि श्री पी.एन. राजभोज ने 15 फरवरी 1953 को नई दिल्ली में एक स्वागत भोज का आयोजन किया था। यह आयोजन 'इन्डो–जापानी कल्चरल एसोसिएशन' जापान के उपाध्यक्ष श्री एम.आर. मूर्ति के सम्मान में किया गया था जिसमें विचार व्यक्त करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि वर्तमान या भावी पीढ़ी में से किसी न किसी को बुद्ध या मार्क्स में से किसी एक के सिद्धांतों का वरण करना पड़ेगा।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि, ''विश्व की जो मौजूदा स्थिति है, उसका जहां तक मैं अध्ययन कर पाया हूं उसके आधार पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि संघर्ष का स्वरूप चाहे कुछ भी हो किंतु यह अंततः बुद्ध और मार्क्स के विचारों के बीच होगा।''

'उन्होंने कहा कि, इसी अधिवेशन से मैं जापान, चीन व अन्य पूर्वी देशों की ओर आकृष्ट हुआ हूं।' डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि पूरब, पश्चिम से पहले से ही अधिक महत्वपूर्ण बन गया है, लेकिन मुझे संदेह है कि यदि बुद्ध के उपदेशों को आत्मसात नहीं किया गया तो, एशिया में यूरोप के संघर्ष का इतिहास दुहराया जाएगा। बौद्ध धर्म के अलावा जो धर्म है उन्होंने आत्माओं, कर्मकांडों की समस्याओं पर केंद्रित होकर मनुष्य को भुला दिया है। डॉ. अम्बेडकर ने बताया कि केवल बुद्ध ही ऐसे थे जिनसे आत्मा के बारे में बार–बार पूछने पर वे कहते थे, ''ये सारे तर्क बेकार हैं। आत्माओं का अस्तित्व कोई भी सिद्ध नहीं कर सकता है। मेरा ध्यान सिर्फ मनुष्यों पर केंद्रित है। मैं मनुष्यों के बीच नैतिक सद्व्यवहार को प्रतिष्ठित करना चाहता हूं।''[1]

● ● ●

---

[1] खैर मोडे, वाल्यूम 2, पृष्ठ 63–66

144

तथाकथित उच्च वर्गों का सफाया हो जाएगा

अनुसूचित जातियों के नेता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने 2 मई, 1953 दिन शनिवार को बंबई में युवा सभा से गुजारिश की कि वे जनता में जाकर उन्हें उनकी अंधविश्वास की विरासत से छुटकारा दिलायें।

वह सिद्धार्थ कॉलेज में सभा के ग्रीष्मकालीन स्कूल का उद्घाटन कर रहे थे। मात्र अकादमिक कुशलता पर चिंता व्यक्त करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने आधुनिक युवाओं से कहा कि वे एक या दो समकालीन समस्याओं को चुनकर तर्कसंगत ढंग से उनका समाधन करें।

विद्यार्थी जगत में घुसपैठ कर लेने वाली विभिन्न विचारधाराओं जिनकी वजह शायद विदेशी प्रभाव थे, जिससे वे हतप्रभ रह गये थे। उन्होंने सभा से कहा कि वे निश्चित उद्देयों को लक्ष्य करके एक योजना बनाएं और अगर इससे कुछ ठोस परिणाम प्राप्त हों तो वे दर्शन और यूरोपीय के व्याख्यानों को छोड़ सकते हैं।

डॉ. अम्बेडकर ने चेतावनी देते हुए कहा कि अगर तथाकथित उच्च वर्गों ने तत्काल ही वर्तमान स्थितियों का संतुलित मूल्यांकन नहीं किया तो उनका 'सफाया हो जाएगा।'

उन्होंने टिप्पणी की कि अब समय आ गया है कि विद्यार्थियों को छोटे–छोटे समूहों में जनता के बीच जाकर उन्हें तर्कसंगत जीवन जीने की शिक्षा देनी चाहिए।''

उन्होंने आधुनिक समाज को 'विरूपित' समाज की संज्ञा देते हुए कहा कि यह बयान आधुनिक समय में पुरातन आदर्शों को जी रहा है।

उन्होंने कहा कि हमने एक ऐसा संविधान स्वीकार कर लिया है जो वास्तविक रूप में हमारी जीवन पद्धति को नियंत्रित करने वाले सिद्धांतों और नियमों के सर्वथा भिन्न है।

युवा सभा के अध्यक्ष डॉ. बी.जी. गोखले ने डॉ. अम्बेडकर का स्वागत किया।

● ● ●

145

जब तक वर्ग विहीन और जाति विहीन समाज का निर्माण नहीं होता, भारत में कोई प्रगति नहीं होगी।

''संघ सरकार के पूर्व विधि मंत्री डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने बुधवार 27 मई, 1953 को मुबंई में कहा कि अपने शेष जीवन को वह बौद्ध धर्म के सिद्धांतों के प्रचार–प्रसार में लागाएंगे।

नारे पार्क मैदान में भगवान बुद्ध का जन्मदिन मनाने के लिए अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन के तत्वाधान में आयोजित सभा को संबोधित करने के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने जाति व्यवस्था की भर्त्सना की और कहा कि जब तक वर्गविहीन और जातिविहीन समाज का निर्माण नहीं होता, देश में कोई प्रगति नहीं होगी।

वे यह देखकर काफी प्रसन्न हुए कि इस समारोह में भारी संख्या में हिन्दू भी भाग ले रहे थे। उनको पूर्ण विश्वास था कि भारत में बौद्ध धर्म का तेजी से प्रसार होगा।

बुद्ध का जन्मदिन मनाने वाले अन्य संगठनों में बुद्धा सोसायटी तथा बौद्ध धर्म प्रचार समिति भी थे।

बुद्ध जंयती के अवसर पर बंबई में भारत सरकार के कार्यालय बुधवार को बंद रहे।

यह दिन डाक अवकाश का भी दिन था। चूंकि इस दिन सरकारी छुट्टी नहीं थी इसलिए राज्य सरकार के कार्यालय और बैंक रोज की भांति खुले रहे।'[1]

सभा की सी.आई.डी. रिपोर्ट निम्नवत् है –

''27 मई 1953 को नारे पार्क, परेल, में बुद्ध धर्म प्रचार समिति के तत्वाधान आयोजित एक सभा की अध्यक्षता डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने की। सभा के 5000 श्रोताओं को संबोधित करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि हिन्दू धर्म और बौद्ध धर्म में कई बिंदुओं पर मतभेद है और उनके हिन्दू धर्म में रहते हुए, हरिजनों की स्थिति में सुधार नहीं होगा। उन्होंने यह घोषणा भी की कि बौद्ध धर्म का प्रचार करते रहने का उन्होंने दृढ़ निश्चय कर लिया है।''[2]

● ● ●

---

1 द नेशनल स्टैंडर्ड, 28 मई, 1953

2 बाम्बे सिटी, एम.बी., सी.आई.डी. 27 मई, 1953

146

आलोचनाओं से विचलित न हों

डॉ. अम्बेडकर ने अनुसूचित जाति महिला मंडल के तत्वावधान में रावली कैम्प, सीयोन, बंबई में आयोजित एक जनसभा में 3 जून, 1953 को करीब 3,000 श्रोताओं को संबोधित किया। उन्होंने कहा कि ''बुद्ध जयंती'' के दिन उनके द्वारा दिये गये भाषण की काफी आलोचना की गयी है और श्रोताओं को सुझाव दिया कि वे इन आलोचनाओं से भ्रमित न हों।''[1]

अनुसूचित जाति महिला मंडल की सभा में उपस्थित 3000 श्रोताओं को 3 जून, 1953 की सभा में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने लोगों से कहा कि प्रतिकूल आलोचनाओं की परवाह न करते हुए लोग मुक्ति का अपना कार्यक्रम जारी रखे। मंडल ने फेडरेशन के भवन निधि में अपनी पहली किश्त के रूप में 401 रुपये का योगदान किया।''[2]

● ● ●

1 बाम्बे सिटी, एस. बी. फेडरेशन (1) सी.आई.डी. 28 मई, 1953

2 बाम्बे स्टेट पुलिस फेडरेशन एबस्ट्रक्ट ऑफ इंटेलिजेंस

147

राजनीति राष्ट्र के जीवन का सर्वस्व और सर्वसमाप्ति

''जुलाई और अगस्त 1953 में डॉ. बी. आर. अम्बेडकर अपने कॉलेजों के कार्यों में पूरी तरह व्यस्त थे। जुलाई और अगस्त के सभी दिनों के दौरान वह औरंगाबाद में ही रूके रहे। वहां पर उन्होंने हैदराबाद के अनुसूचित जाति फेडरेशन के कार्यकर्ताओं की एक बैठक को संबोधित किया।

राजनीति राष्ट्र के जीवन का सबसे महत्वपूर्ण पहलू नहीं है। उन्होंने उन सभी से निवेदन किया कि वे भारत की समस्याओं को उनके सभी पक्षों, राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक व आर्थिक को दृष्टिगत करते हुए समझें, और फिर स्वेच्छा से दलितों के उद्धार के लिए संघर्ष करें। इस सभा में उन्होंने लोगों को आगाह करते हुए कहा कि वह अपने उन लोगों का बहिष्कार करें जो हिंदू धार्मिक स्थलों की तीर्थयात्राएं करते हैं। उन्होंने कहा कि इससे उन लोगों का कोई हित नहीं होगा।''[1]

●●●

---

1 कीर, पृष्ठ 447—448

148

हम केंद्र सरकार के खिलाफ भी अखिल भारतीय भूमि सत्याग्रह जारी रखेंगे

''आज दिनांक 16 नवंबर, 1953 को नई दिल्ली में अनुसूचित जाति फेडरेशन के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने हैदराबाद राज्य के मराठवाड़ा के अपने पार्टी सदस्यों से औरंगाबाद जिले में अपनी भूमि सत्याग्रह वापस लेने का आग्रह किया।

सत्याग्रहियों के साथ अच्छे बर्ताव के लिए उन्होंने हैदरबाद सरकार को धन्यवाद किया। राज्य सरकार ने भूमि वापस करने के लिए आदेश जारी कर दिये हैं और वह कम्युनिस्ट गतिविधियों वाले जंगली क्षेत्रों में सफाये के पश्चात् उसका आवंटन अनुसूचित जातियों को करने के एक प्रस्ताव पर विचार कर रही है।

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि ''मेरा मानना है कि यह एक वैध शिकायत के लिए एक अच्छी पहल है।'' 1700 सत्याग्रहियों में से कुछ 1100 को बिना किसी शर्त के राज्य सरकार द्वारा बिना मुकदमा चलाये छोड़ दिया गया था। ''मैं यह जरूर कहूंगा कि यह अत्यंत उचित कदम है।''

डॉ. अम्बेडकर ने आगे कहा कि मुझे ज्ञात हुआ है कि कुछ सत्याग्रही पेड़ों को काट रहे है। इसके लिए मैं खेद व्यक्ति करता हूं। हमारा उद्देश्य पेड़ों को काटना नहीं, बल्कि खेती के लिए भूमि प्राप्त करना था।''

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि वह ये बयान की गलतफहमियों को समाप्त करने के लिए जारी कर रहे हैं। फेडरेशन के कुछ सदस्यों का कहना था कि हैदराबाद राज्य के सत्याग्रह को उन्होंने अधिकृत नहीं किया था। ''इस सत्याग्रह को मैंने अधिकृत किया था और बहुत अच्छे कारणों से किया था।''

''पूरे देश में अनुसूचित जातियों के लोग बिना भूमि और बिना काम के भीषण गरीबी रेखा में जी रहे हैं और जब मैंने पाया कि हैदराबाद सरकार ने पहले तो कुछ बंजर भूमि खेती के लिए दे दी थी लेकिन जब लाभाथियों ने उन्हें जोत–बो लिया और फसल काटने का इंतजार कर रहे थे और तब उनसे जमीनें वापस ले लीं, तो कार्यवाही करने के अलावा कोई चारा नहीं बचा था।'' उन्होंने यह भी कहा कि , ''नेताओं का पहला और सर्वप्रमुख कर्तव्य है अनुसूचित जातियों के हितों को

आगे बढ़ाना और यदि उनके हितों पर संकट की नौबत आ जाती है और तब भी नेता कुछ करने के लिए तैयार नहीं हो जाता तो यह उनसे विश्वासघात है।''

डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि, ''यदि हमारे धैर्य का बांध टूट गया, तो हम केंद्र सरकार के खिलाफ भी अखिल भारतीय स्तर पर भी सत्याग्रह जारी रखेंगे। अगर सिख ऐसा कर सकते हैं तो अनुसूचित जातियां क्यों नहीं कर सकती?''

इसलिए जो लोग सत्याग्रह का विरोध कर रहे हैं, उनके लिए बेहतर यही है कि वे फेडरेशन छाड़ दें।

दूसरी गलतफहमी का संबंध हैदराबाद राज्य अनुसूचित जाति फेडरेशन के पुनर्गठन से संबंधित है। अखिल भारतीय फेडरेशन के महासचिव श्री पी.एन. राजभोज का यह बयान, कि महासंघ की कार्यवाहक समिति ने इस शाखा को चार अलग–अलग शाखाओं में बांटने का निर्णय लिया है, एक तथ्य है और निर्णय अंतिम है।

उन्होंने कहा कि संगठन की यह संरचना केवल हैदराबाद राज्य के लिए नहीं बनायी गयी है, बल्कि जहां–जहां फेडरेशन मौजूद है पूरे देश में इसे अपनाया गया है। उन्होंने फेडरेशन के सदस्यों को चेतावनी देते हुए कहा कि भले ही अब तक फेडरेशन का रुख उन लोगों के लिए नरम रहा था जिन्होंने फेडरेशन आदेशों का उल्लंघन किया, आइंदा ऐसे लोगों के प्रति कोई नरमी नहीं दिखायी जाएगी जो उनका उल्लंघन करते हुए काम करेंगे।''[1]

●●●

1 द नेशनल स्टैंडर्ड 17 नवम्बर, 1953

149

धर्म के नाम पर पैसा बटोरकर बर्बाद करना अपराध है।

बंबई के जोवियर कॉलेज में 24 जनवरी, 1954 को आयोजित अखिल भारतीय सांई भक्त सम्मेलन में डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने, एम.एस. पी.एच.डी., बार–ऐट–लॉ द्वारा दिया गया उद्‌घाटन भाषण उन्होंने कहा : आपको संबोधित करने के लिए मुझे जो निमंत्रण दिया गया उसके लिए आप सबको बहुत–बहुत धन्यवाद। मैं इसके योग्य नहीं हूं। मैं उन लोगों में से नहीं हूं जो सांई बाबा के भक्तों के रूप में जाने जाते हैं। सांई बाबा से मिले या उनके दर्शन करने का मेरा सौभाग्य नहीं रहा। मैंने केवल उनके बारे में सुना है यह ज्यादा अच्छा होता यदि इस अवसर पर किसी ऐसे व्यक्ति को बोलने के लिए आमंत्रित किया गया होता जो उन्हें मुझसे बेहतर जानता होता। लेकिन चूंकि जो लोग मुझे निमंत्रित करने आये थे वे बार–बार कह रहे थे कि मुझे बुलाने का निर्णय सर्वसम्मति से लिया गया है, इसलिए 'ना' कहना आसान नहीं था, हालांकि मेरे स्वास्थ्य की वर्तमान स्थिति को देखते हुए मैं आसानी से मना कर सकता था। जैसा कि मैंने पहले कहा, सांई बाबा के बारे में मेरा ज्ञान शून्य है और जो भी थोड़ा–बहुत मैं जानता हूं वह उनके बारे में लोगों से सुनी हुई बातें हैं। कुछ समय पहले बाबा की मृत्यु हो गयी है और मैं समझता हूं कि बाबा अपने पीछे अनुयायियों की जमात छोड़ गये हैं जिनकी संख्या में बाबा की मृत्यु के बाद भी लगातार वृद्धि हो रही है। वह कई लोगों के धर्म गुरू के रूप में जाने जाते हैं।

भारत में धर्म ने कई तरह के रूप–रंग अख्तियार कर लिए हैं। अपने मूल रूप से धर्म व्यक्ति की आत्मा के मोक्ष का निजी मामला था। बाद में धार्मिक दृष्टिकोण एवं उद्‌देश्यों में काफी परिवर्तन हुआ। अब इसके मायने केवल आत्मा का उद्धार न होकर उस मानवीय भाईचारे को कायम करना भी हो गया जिसका आधार पारंपरिक रूप से मनुष्यों को नियंत्रित करने वाले नैतिक नियम है। तब वह तीसरा चरण आया जिसमें मनुष्य उन व्यक्तियों की आराधना करने के लिए प्रेरित हुए जो उनके जीवन के अभावों की तुष्टि करते थे। किसी को बच्चे चाहिए थे, किसी को सोना चाहिए था, कुछ थे जिन्हें मुसीबतों से छुटकारा चाहिए था। यदि कोई व्यक्ति लोगों की इन भौतिक आवश्कताओं को पूरा कर देता था तो वह उनका ईश्वर बन जाता और वे उसकी आराधना करने लगते।

फिर आया चौथा दौर जिसमें उस व्यक्ति की पूजा हुई जो किसी तरह का

चमत्कार दिखा सकता हो, ऐसा चमत्कार जो जन—साधारण के ज्ञान के परे हो। और इस तरह का चमत्कार करने वाले ईश्वर बन गये। यह सब हमें भारत में मिलता है। आज भारत में ऐसा कोई धर्म नहीं है। जिसमें मूर्तियों, साधुओं, संतों और चमत्कार दिखाने वालों की उपासना न होती हो। आज के हमारे धर्म में न तो ईश्वर है और न ही नैतिकता। मुझे कोई संदेह नहीं है कि यह स्थिति मानव मस्तिष्क की पतित स्थिति है और आने वाली पीढ़ियों के लिए यह एक जिम्मेदारी है कि वे धर्म को उसके शुद्ध और दयालु स्थिति में वापस ले आएं। इस बीच हमें तथ्यों को उस रूप में दृष्टिगत करना होगा जैसे वे हैं। हम धर्म के मामले में केवल भटक ही नहीं गये हैं, बल्कि धर्म के नाम पर पैसा उगाह कर उसे ऐसी चीजों के लिए बर्बाद करना एक व्यवसाय बन गया है जिसका कोई सामाजिक स्पष्टकीरण नहीं है। संसार में इतनी निर्धनता, इतना दुख है कि धर्म के नाम पर पैसा इक्ट्ठा करना और उसे ब्राह्मणों एवं तीर्थयात्रियों को खिलाकर बर्बाद करना अपराध है।

बुद्ध ने इस प्रश्न पर भली—भांति विचार किया है। अपनी नैतिक संहिता में बुद्ध ने पंचशील, अष्टांग मार्ग और निब्बान का उपदेश दिया। लेकिन इसके अतिरिक्त उन्होंने अपने अनुयायियों को दस गुण विकसित करने की भी शिक्षा दी—(1) प्रज्ञा (2) शील (3) नेखम्म (4) शील (5) वीर्य (6) खन्ति (7) सच्च (8) अधित्थान (9) मैत्री (10) उपेक्खा।

प्रज्ञा का अर्थ है बुद्धि, ज्ञान का वह प्रकाश जो अज्ञान या अविद्या का अंधकार समाप्त करती है, मोह नव—विज्ञान है। शील का अर्थ नैतिक स्वभाव है, अच्छा होने का और बुरा न करने का स्वभाव। नेखम्म सांसारिक सुखों का परित्याग करता है। दान का अर्थ बिना कुछ पाने की इच्छा किये अपनी समस्त भौतिक उपलब्धियों से लेकर शरीर एवं जीवन का दान कर देना। वीर्य का अर्थ है सच्चा प्रयत्न—पीछे हटने के बारे में सोचे बिना जो कुछ भी आपने करने का जिम्मा लिया है उसको अपनी पूरी शक्ति से करना। खन्ति का आशय है सहिष्णुता, घृणा का उत्तर घृणा से न देना। सच्च है सत्य, किसी व्यक्ति को कभी भी झूठ नहीं बोलना चाहिए जो वह कहता है वह केवल सत्य होना चाहिए, सत्य के सिवाय कुछ भी नहीं। अधित्थान का तात्पर्य लक्ष्य प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय है। मैत्री का तात्पर्य है सभी जीवों से प्रेम करना, केवल मित्रों से ही नहीं, बल्कि शत्रुओं से भी, केवल मनुष्यों से नहीं, बल्कि सभी जीवों से। उपेक्खा का अर्थ वैराग्य है जो कि उदासीनता से अलग है। इसका अर्थ है मन की वह दशा जिसमें ना तो आसक्ति है और न विरक्ति परिणामों से अविचलित रहकर कार्य साधना में लीन रहना। इसलिए पालि साहित्य में उन्हें पारमिताएं कहा जाता है।

भले ही बुद्ध ने दान पारमिता का उपदेश दिया था, किंतु उन्होंने खासतौर पर यह उल्लेख किया है कि दान सुपात्र को ही किया जाना चाहिए। दान देते समय यह दाता को जब श्रेष्ठ बनाती हो तो पाने वाले को यह पतित न करती हो। दान उन लोगों को दी गयी सहायता है जो गिर गये है ताकि वे जीवन के मार्ग पर स्वावलंबित होकर चल सकें।

यदि आपने उस संत के नाम पर पैसा इक्ट्ठा किया है जिनका आप सम्मान करते हैं तो आपको यह पैसा ऐसे कार्यों में लगाना चाहिए जो पारमिताओं में बताये गये हैं। संसार में इतना दुख, इतनी अज्ञानता और इतने कष्ट हैं कि, जैसा कि मैंने कहा, संपन्न लोगों को खिलाने के लिए इसका प्रयोग करना निर्दयता होगा। इस तरह के दान स्वरूप प्राप्त धन का प्रयोग अस्पतालों के लिए, शिक्षा के लिए, छोटे–छोटे उद्योग लगाने के लिए जिससे बेसहारा लोगों, विधवाओं को काम मिल सके, के लिए किया जाना चाहिए। अगर आप लोग मेरे विचारों से सहमत है तो इसके अतिरिक्त भी कई उदाहरण हैं जिनका अनुसरण आप कर सकते हैं, आपको बस व्यावहारिक उदाहरणों के लिए अपने आसपास देखने की आवश्यकता भर है।

मुझे याद है कि मैंने आप लोगों के चिंतन के लिए कुछ विचार दे दिए हैं। यदि आपने पैसा एकत्रित किया है तो इसका प्रयोग वैसे ही करें जैसा मैंने बताया है। इससे आपका ही भला होगा, इसमें सांई बाबा का नाम भी उज्जवल होगा।''[1]

● ● ●

---

1 बंबई में जनवरी, 1995 का आयोजित सांई सम्मेलन में परिचालित एक मुद्रित पुस्तिका स लकर पुनर्मुदित

150

मेरा जीवन दर्शन

'प्रत्येक व्यक्ति का एक जीवन दर्शन होना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य का एक ऐसा स्तर होना चाहिए जिससे वह अपने चरित्र को माप सके। और दर्शन मापने के पैमाने के अतिरिक्त और कुछ नहीं है।

नकारात्मक रूप से, मैं भगवद्गीता में दिये गये हिंदू जीवन दर्शन को खारिज करता हूं, क्योंकि यह सांख्य दर्शन के त्रिगुण पर आधारित है जो कि मेरे हिसाब से कपिल के दर्शन का विभक्त विरूपण है और जिसने जाति व्यवस्था और श्रेणीगत असमानता को हिंदू सामाजिक जीवन का नियम बना दिया है। सकारात्मक रूप से, आप कह सकते हैं कि मेरा जीवन दर्शन तीन शब्दों में निहित है स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व। हालांकि आप यह मत कहिए कि मैंने अपना दर्शन फ्रांस की क्रांति से उधार लिया है। ऐसा नहीं है। मेरे दर्शन की जड़ें धर्म में है न कि राजनीति विज्ञान में। मैंने उन्हें अपने मार्गदृश्य बुद्ध से ग्रहण किया है। उनके दर्शन में स्वतंत्रता और समानता को जगह दी गयी है लेकिन उन्होंने यह भी कहा है कि असीमित स्वतंत्रता समानता को नष्ट कर देती है, और संपूर्ण समानता में स्वतंत्रता के लिए जगह नहीं बचती है। उनके दर्शन में कानून को जगह केवल स्वतंत्रता और समानता में विघटन से सुरक्षा देने के लिए दी गयी है लेकिन उनका यह मानना नहीं था कि कानून स्वतंत्रता और समानता में विघटन की गारंटी बन सकता है। स्वतंत्रता, समानता या बंधुत्व की मनाही के एकमात्र सुरक्षा उपाय के रूप में बंधुत्व को उन्होंने सर्वोच्च स्थान प्रदान किया है जो कि भाईचारे या मानवतावाद का ही एक पर्याय है, और ये धर्म के पर्याय है। कानून धर्म–निरपेक्ष है जिसको कोई भी तोड़ सकता है जबकि बंधुत्व या धर्म पवित्र होता है जिसका सम्मान करना सबके लिए आवश्यक है। मेरे दर्शन का एक उद्देश्य है। मुझे धर्मान्तरण का कार्य करना है। क्योंकि मुझे त्रिगुण सिद्धांत के अनुयायियों से इसको छुड़वाकर अपने दर्शन स्वीकार करवाना है। आज भारतीय दो विचारधाराओं स नियंत्रित हो रहे हैं। संविधान को प्रस्तावना में उद्धृत उनका राजनीतिक आदर्श एक ऐसे जीवन की पुष्टि करता है जिसमें स्वतंत्रता, समानता और बंधुत्व है। उनके धर्म में स्थापित उनका सामाजिक आदर्श इनको निषिद्ध करता है।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर

(दिनांक 03 अक्तूबर, 1954 को भाषण का आकाशवाणी पर प्रसारण)

● ● ●

151

मैं गौतम बुद्ध, कबीर, महात्मा फुले का भक्त हूं तथा ज्ञान, आत्म–सम्मान और चरित्र का पुजारी हूं

"दिनांक 28 अक्तूबर, 1954 को करीब 6:30 बजे नएगांव के पूरनदरे स्टेडियम में लगभग 25000 लोगों की उपस्थिति में एक जनसभा हुई जिसका आयोजन डॉ. अम्बेडकर हीरक जयंती समारोह समिति के तत्वाधान में किया गया। श्री आर. डी. भण्डारे ने इसकी अध्यक्षता की।

कोष के संग्रह का ब्यौरा देते हुए श्री शंकर अनन्त उपशाम ने बताया कि डॉ. अम्बेडकर ने 14 अप्रैल, 1952 को 60 वर्ष पूरे कर लिए थे, और समारोह 1952 में ही हो जाना चाहिए था, लेकिन वे उस तिथि को समारोह नहीं कर सके थे, इसलिए वे उस दिन समारोह मना रहे हैं। उन्होंने बताया कि अब तक 93,000 रुपये जुटा लिए गए और खर्चे निकलने के बाद 88,000 रुपये शेष रह जाएंगे। यह संग्रहण ग्रेटर बंबई के उनके समुदाय के लोगों से इक्ट्ठा किया गया था। उन्होंने आगे बताया कि बंबई के बाहर के लोगों ने भवन निर्माण के लिए लगभग 32000 रूपये जुटाये थे और उस राशि को ऊपर बतायी गयी राशि में जोड़कर कुल राशि एक लाख अठारह हजार रुपये डॉ. अम्बेडकर को दी जानी है।

अपने भाषण के दौरान अध्यक्ष ने कहा कि डॉ. अम्बेडकर व्यास, मनु, अब्रहम लिंकन और यहां तक कि कार्ल मार्क्स से भी महान व्यक्ति हैं। उन्होंने कहा कि भारत में कोई ऐसा नेता नहीं है जिसकी तुलना डॉ. अम्बेडकर से की जा सके। वास्तविक विभाजन होने से दस वर्ष पहले ही विभाजन के परिणामों की भविष्यवाणी कर दी गई थी। उन्होंने दलितों के उत्थान के लिए अपना पूरा जीवन न्यौछावर कर दिया था और एक लाख अठारह हजार रुपये की थैली उनको भेंट करते हुए वह लोगों की ओर से डॉ. अम्बेडकर से अनुरोध करते हैं कि इस राशि का उपयोग वे अपने उद्देश्यों के लिए करें। उन्होंने डॉ. अम्बेडकर को आश्वासन दिया कि उनकी इच्छा के अनुसार भवन निर्माण के लिए वे अलग से निधियां जुटा लेंगे।

उत्तर में डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि उनको दी गयी धनराशि का इस्तेमाल एक हॉल बनवाने के लिए किया जाएगा। उन्होंने कहा कि इस उद्देश्य के लिए जमीन पहले ही खरीदी जा चुकी है और जो लोग उस जमीन पर रह रहे हैं उनको वहां से हटाया जा रहा है। उन्होंने आगे यह भी कहा कि यह मान लिया

जाना कि वे शुरू से ही अत्यंत मेधावी छात्र रहे हैं, गलत होगा। वे अपने समुदाय के अन्य लड़कों की तरह ही साधारण थे। उन्होंने बताया कि उनके पिता ने उनका जन्मदिन का रिकॉर्ड सुरक्षित रखना जरूरी नहीं समझा था और उनके जन्म की ठीक–ठीक तिथि ज्ञात नहीं है। वह साठ से ज्यादा या साठ से कम हो सकती है। उन्होंने बताया कि यह सत्य है कि उनका जन्म आधी रात में 12 बजे हुआ था और उनके जन्म के समय उनकी मां को असहनीय प्रसूति पीड़ा हुई थी। उन्होंने आगे कहा कि उनका जन्म खराब नक्षत्र में हुआ था और जैसा कि ज्योतिषी ने बताया था उनकी मां शीघ्र ही परलोक सिधार जाएंगी। इस कारण से उनके भाई–बहन उनसे नफरत करते थे। उन्होंने कहा कि मां मृत्यु के बाद उनका पालन–पोषण उनकी चाची ने किया था। उन्होंने कहा कि बचपन के अपने दिनों में उन्होंने महाभारत, भगवद्गीता–जैसी धार्मिक पुस्तकों को अध्ययन किया था, लेकिन जब उन्हें गौतम बुद्ध के बारे में पुस्तक मिली तो इसका उनके मानस–पटल पर गहरा प्रभाव पड़ा और उसी समय से वह बुद्ध के अनुयायी बन गए। उन्होंने कहा कि हिंदुओं को भी अपने भले के लिए बौद्ध धर्म को अपनाना पड़ेगा। उन्होंने आगे कहा कि वह गौतम बुद्ध, कबीर, महात्मा फूले के भक्त तथा ज्ञान, आत्मसम्मान और चरित्र के पुजारी है। उन्हें कोई बुरी लत नहीं थी, लेकिन उन्हें पढ़ने का शौक था। उन्होंने कहा कि जीवन में उन्नति करने के लिए विद्या प्रत्येक व्यक्ति के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। उन्होंने श्रोताओं से आग्रह किया कि वे इस बात को समझें कि अपनी आय का कुछ हिस्सा अपने समुदाय के लिए योगदान करना है और अपने फेडरेशन के लिए पूरे मनोयोग से कार्य कर सकें, क्योंकि अभी तक वे लक्ष्य से दूर हैं। वे अब लक्ष्य पाने की डगर पर हैं और उन्होंने जरा–सी भी सुस्ती दिखाई तो वे गिर जाएंगे। उन्होंने श्रोताओं से अपील की कि वे नेतृत्व पाने के लिए न लड़ें। उन्होंने कहा कि वह हमेशा समाज की सेवा करना चाहते थे, और जीवन पर्यन्त सरकारी सेवा से विरत रहे। अगर उन्होंने कोई सरकारी पद ले लिया होता तो अब तक वे पेंशनधारी हो गये होते। उन्होंने कहा कि 7–8 वर्ष से अधिक वह उन लोगों को मार्गदर्शन नहीं दे पाएंगे। उनके रहते ही उन लोगों को आकर उनका स्थान ग्रहण करना पड़ेगा। समारोह लगभग 8:45 बजे समाप्त हो गया। लगभग 300 संगठनों और व्यक्तियों ने डॉ. अम्बेडकर और उनकी पत्नी का माल्यार्पण किया।''[1]

●●●

---

1 पुलिस रिपार्ट : स्रोत सामग्री, खण्ड –1 पृष्ठ 421–422

152

भारत में बौद्ध आन्दोलन एक रूपरेखा

बुद्ध को वीजा या पासपोर्ट की जरूरत नहीं है

4 दिसंबर, 1954 को रंगून (बर्मा) में अंतरराष्ट्रीय बौद्ध सम्मेलन का आयोजन हुआ। डॉ. भीमराव अम्बेडकर ने सम्मेलन में भाग लिया। उन्होंने सम्मेलन में भाषण दिया। उन्होंने अपनी वार्ता का वृहद संस्करण दो भागों वाले ज्ञापन के रूप में तैयार किया था : ज्ञापन के भाग 1 में भारत में बुद्ध धर्म के प्रचार का कार्यक्रम दिया गया है। ज्ञापन 1 में जो बिंदु डॉ. अम्बेडकर ने उठाये थे, उनमें से दो बिंदुओं को उन्होंने स्वयं पूरा कर लिया था :–

(1) ''बुद्ध और उनका धर्म'' शीर्षक के अंतर्गत बुद्ध के उपदेशों को प्रकाशित करवाकर; तथा

(2) बौद्ध धर्म में धर्मांतरण के लिए एक कार्यक्रम की प्रस्तावना करके।

भाग–2 में दक्षिण भारत में भारतीय बौद्धों की स्थिति के बारे में वर्णन किया गया है – संपादक।

ज्ञापन–1

बर्मा के बुद्धिस्ट शासन काउंसिल से मेरी वार्ता का रिकार्ड वृहद् संस्करण :

(1) यदि शासन काउंसिल के लक्ष्यों में एक लक्ष्य बुद्ध धर्म का बर्मा से बाहर फैलाने का है तो भारत पहला देश है जहां उनको अपना मुख्य प्रयास करना चहिए। इस संबंध में भारत से अधिक परिणामदायक देश कोई दूसरा नहीं होगा।

(2) कारण स्पष्ट है। भारत बुद्ध धर्म की जन्म स्थली है। 543 ई. पूर्व से 1400 ई. तक करीब 2000 वर्षों तक यह भारत में फला–फूला यद्यपि बुद्ध धर्म वहां से लुप्त हो गया है, वहां अभी भी बुद्ध का नाम बड़े आदर से लिया जाता है और उनके धर्म की स्मृतियां अभी तक ताजी हैं। भारत में बौद्ध धर्म एक सूखा पौधा जरूर है लेकिन यह कोई नहीं कह सकता है कि इसकी जड़ें

मर चुकी हैं। हिंदू उन्हें विष्णु का अवतार मानते हैं। भारत में हमें किसी नये पैगम्बर को इस तरह प्रतिष्ठा नहीं दिलानी है जिस प्रकार यहूदियों के बीच अपने देवताओं को प्रतिष्ठा वापस दिलाने के लिए नेबुर्चनेरर को करना पड़ा था। हमें सिर्फ उनके (बुद्ध के) धर्म को वापस ले आना है। फलदायी प्रयासों के लिए इतनी सरल स्थितियां किसी अन्य देश में नहीं मिल सकतीं। वहां के समाज में बहुत पहले से स्थापित और अच्छी स्थिति वाले धर्म है और बौद्ध धर्म को बिना पासपोर्ट का घुसपैठिया नहीं समझा जाएगा। जहां तक भारत की बात है, बुद्ध को न तो पासपोर्ट की आवश्यकता है और न ही वीजा की।

(1) हिंदुओं में एक ऐसा वर्ग है जो हिंदू धर्म छोड़कर बौद्ध धर्म में जाने के लिए उत्सुक है। इन वर्गों में अछूत और पिछड़ी जातियां हैं। वे हिंदू धर्म की श्रेणीगत असामानता के सिद्धांत के कारण इसके विरोधी हैं। अपने बौद्धिक जागरण की वर्तमान स्थिति में वे हिंदू धर्म के विरुद्ध कमर कर कर खड़े हो गये हैं। उनके असंतोष का फायदा उठाने का यही सबसे उचित समय है।

उनके लिए ईसायत की तुलना में बौद्ध धर्म चुनने के निम्नलिखित तीन आधार हैं :

(i) बुद्ध धर्म भारत के लिए कोई विदेशी धर्म नहीं है।

(ii) बुद्ध धर्म का मूल उपदेश सामाजिक समानता है और वे इसी की तलाश में हैं।

(iii) बुद्ध धर्म एक तर्कसंगत धर्म है जिसमें अंधविश्वास की कोई जगह नहीं है।

(4) इस आधार पर बुद्ध धर्म में शुरुआती चरणों में आने वाले अधिकांश लोग निचले तबके से होंगे, अभियान शुरू करने में कोई हिचक नहीं होनी चाहिए। शासन काउंसिल को वे गलतियां नहीं दुहरानी चाहिए जो भारत में ईसाई मिशनरियों ने किया था। ईसाई धर्म प्रचारकों ने ब्राह्मणों को धर्मान्तरण कराने के प्रयास से शुरुआत की। उनकी रणनीति यह थी कि यदि पहले ब्राह्मणों का धर्मान्तरण करा लिया गया, तो बाकी हिंदुओं के धर्मान्तरण में कठिनाई नहीं होगी। उनका तर्क था कि यदि पहले ब्राह्मणों का धर्मान्तरण कर लिया गया तो गैर–ब्राह्मणों के पास जाकर कह सकेंगे कि, ''अब ब्राह्मणों ने ईसाइयत कबूल कर लिया है तो आप लोग क्यों नहीं करते। वे तो आपके धर्म के अगुआ हैं।'' ईसाइयों की यह रणनीति कुछ ईसाई धर्म प्रचारकों के लिए घातक साबित हुई। वे भला क्यों करने वाले हैं धर्मान्तरण? हिंदू

धर्म का सारा लाभ उन्हें ही मिलना था। ब्राह्मणों का धर्मान्तरण करने के अपने प्रयास में सैकड़ों साल बर्बाद करने के बाद भारत में ईसाई धर्म प्रचारकों को अपनी गलती का अहसास हुआ और उन्होंने अछूतों पर अपना ध्यान केंद्रित किया। और जब तक उन्होंने अछूतों की तरफ रुख किया, राष्ट्रवाद की भावना जोर पकड़ चुकी थी और ईसाइयत के साथ हर विदेशी चीज को देश के लिए शत्रुतापूर्ण माना जाने लगा। परिणाम यह हुआ कि ईसाई धर्म–प्रचारक बहुत थोड़े–से अछूतों का ही धर्म–परिवर्तन करवा पाये। मिशनरियों के 400 साल तक चलने वाले प्रयासों के बावजूद, यह बड़े आश्चर्य की बात है, भारत ईसाई आबादी बहुत छोटी है। अगर उन्होंने शुरूआत ही अछूतों और पिछड़ी जातियों से की होती तो वे उन सबका धर्मान्तरण कर चुके होते।

(5) रोम में ईसाइयत के प्रवेश पर ध्यान दिया जा सकता है। इससे काफी सीख मिलेगी। गिब्बन के ''डिक्लाइन एण्ड फॉल द रोमन एम्पायर'' के पन्नों में यह स्पष्ट किया गया है कि ईसाइयत का प्रवेश सबसे पहले रोम की जनता के उस वर्ग में हुआ जो गरीबी और घृणा के शिकार थे। गरीबों और पददलितों के धर्म के रूप में गिब्बन ने ईसाइयत का मजाक उड़ाया है। लेकिन गिब्बन की यह धारणा सरासर गलत थी। वह ये महसूस नहीं कर सके कि गरीबों को ही धर्म की जरूरत होती है। क्योंकि धर्म, यदि वह धर्म सच्चा हो, उन गरीबों को उद्धार की आशा प्रदान करता है जिनके पास और कुछ न होने की आशा प्रदान करता है, राहत प्रदान करने का जरिया बनता है। अमीरों के पास तो सब कुछ है। उन्हें आशा पर जीने की आवश्यकता नहीं है। वे अपनी भौतिक उपलब्धियों पर जीते हैं। दूसरी बात यह कि गिब्बन यह महसूस नहीं कर सके कि धर्म अगर सच्चा हो तो यह लोगों को उन्नत करता है, उन्हें श्रेयस्कर बनाता है। लोगों से धर्म पतित नहीं होता है।

(6) अब मैं उस शुरुआती पहल की बात करुंगा जो भारत में बुद्ध धर्म की वापसी के लिए की जानी चाहिए। मैं नीचे उनके बारे में उल्लेख करुंगा जो मुझे उचित लगती है :

(i) बुद्ध के उपदेश तैयार करना जो कि धर्मान्तरण करने वाले का नियमित साथी बन सकेगा। बुद्ध की शिक्षाओं को समाहित करने वाली किसी उपदेश–पुस्तिका की कमी बुद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार में बड़ी बाधा है। पाली में लिखे गये धार्मिक ग्रंथों के 73 खंडों को पढ़ने की उम्मीद आम लोगों से नहीं की जा सकती है। 'बाईबल' नाम की छोटी पुस्तिका में ईशू मसीह के संदेशों को समेटकर ईसाइयत बुद्ध धर्म की तुलना में काफी लाभप्रद स्थिति में है। बुद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार के मार्ग की इस बाधा को समाप्त

किया जाना चाहिए। बुद्ध के उपदेशों की पुस्तिका बनाते समय बुद्ध की सामाजिक और नैतिक शिक्षाओं पर जोर दिया जाए, इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए। मैं इस पर जोर देकर कह रहा हूं क्योंकि अभी तक केवल ध्यान, चिंतन और अभिधम्मों पर ही बल दिया जाता रहा है। बुद्ध धर्म को यदि इसी तरीके से भारतीयों के बीच लाया गया तो हमारे मकसद के लिए घातक होगा।

(ii) आम जनता के लिए ईसाइयत में बपतिस्मा जैसा धार्मिक संस्कार रखा गया है। वास्तव में धर्मान्तरण अर्थात् बुद्ध का एक साधारण शिष्य बनने के लिए किसी तरह का धार्मिक संस्कार मौजूद ही नहीं है। धर्मान्तरण के संबंध में जो कुछ संस्कार है वह भिक्षु बनने और संघ में चले जाने तक सीमित है। ईसाईयों में दो धार्मिक संस्कार होते हैं।

(1) ईसाइयत स्वीकार करने के लिए बपतिस्मा

(2) पुजारी बनने के लिए बुद्ध धर्म में बपतिस्मा की तर्ज पर कोई संसकर नहीं है। यही मुख्य कारण है कि एक बार बुद्ध धर्म स्वीकार करने के बाद भी लोग इसे छोड़कर चले जाते हैं। हम जो धार्मिक संस्कार लाये वह ईसाई बपतिस्मा की तरह नहीं होना चाहिए कि जिसे बौद्ध कहलाने के लिए हर आम आदमी को यह अनुभूति करवाना पड़े। केवल पंचशील का उच्चारण कर लेना भर काफी नहीं है। किसी आदमी को यह अनुभूति कराने के लिए कि वह अब हिंदू नहीं रहा और एक नया मनुष्य बन रहा है, कई अन्य चीजें भी शामिल की जानी चाहिए।

(iii) कई सारे साधारण उपदेशकों की नियुक्ति करना जो जा–जाकर बौद्ध लोगों के बीच उपदेश दे सकें और यह देख सकें कि वे बुद्ध धम्म का कितना पालन कर रहे हैं। इन साधारण उपदेशकों को वेतन जरूर दिया जाए और दूसरी बात वे विवाहित होने चाहिए। आरंभ में वे अंशकालिक कार्यकर्ता भी हो सकते हैं।

(iv) एक बौद्ध धार्मिक केंद्र की स्थापना करना जहां उपदेशक बनने के इच्छुक व्यक्तियों को बुद्ध धर्म की तथा अन्य धर्मों के तुलनात्मक अध्ययन की शिक्षा दी जा सके।

(v) प्रत्येक रविवार को बुद्ध विहार में सामूहिक पूजा का प्रावधान करना जिसके बाद उपदेशों का एक सत्र हो।

(7) हमारे प्रचार–प्रसार अभियान की सहायता के लिए इन शुरुआती पहलों के अतिरिक्त भी कुछ आवश्यक चीजें हैं जिन्हें व्यापक पैमाने पर किये जाने

की जरूरत है। इस संबंध में मेरा प्रस्ताव निम्नलिखित है :

(i) चार महत्वपूर्ण नगरों (1) मद्रास (2) बंबई (3) नागपुर और (4) दिल्ली में बड़े–बड़े मंदिरों एवं विहारों का निर्माण करना।

(ii) निम्नलिखित नगरों में हाई स्कूलों और महाविद्यालयों का निर्माण करना (1) मद्रास (2) नागपुर (3) कलकत्ता तथा (4) दिल्ली।

(iii) बुद्ध धर्म के विषयों पर निबंध आमंत्रित करना और प्रथम तीन प्रतिभागियों को पर्याप्त राशि से पुरस्कृत करना ताकि लोग बुद्ध धर्म का साहित्य पढ़ने के लिए अपना अधिकतम प्रयास करें। निबंध लेखन प्रतियोगिता–हिंदू, मुसलमान, ईसाई स्त्री एवं पुरुष सभी के लिए खुली होनी चाहिए। बौद्ध धर्म के अध्ययन में लोगों की रुचि जगाने के लिए यह सबसे अच्छा तरीका है।

(8) मन्दिर इतने विशाल होने चाहिए कि उन्हें देखकर ऐसा लगे कि वास्तव में कुछ महत्वपूर्ण कार्य संपन्न हो रहा है। हाईस्कूल तथा महाविद्यालय जरुरी पूरक हैं। उनके द्वारा युवाओं में बौद्ध धर्म का वातावरण बनाने में मदद होती है। इसके अलावा वे सिर्फ मार्ग ही प्रशस्त नहीं करेंगे बल्कि लाभ भी अर्जित करेंगे जिसका उपयोग धर्म प्रचार के अन्य कार्यों में हो सकेगा। ध्यान रहे कि अधिकांश ईसाई धर्म प्रचारक संस्थान अपनी गतिविधियों के संचालन के लिए धन उसी राजस्व से प्राप्त करते हैं जो उनके द्वारा चलाये जा रहे स्कूलों तथा महाविद्यालयों से अर्जित होता है।

(9) मैंने ऊपर बताया है कि प्रारंभिक कदम उठाये जाने आवश्यक है। मुझे लगता है कि मुझे यह भी बताना चाहिए कि वे कौन–कौन सी सावधानियां हैं जो भारत में बौद्ध धर्म को पुनर्जीवित किये जाने के अभियान को शुरू करने के लिए बरती जानी चाहिए जिससे कि बुद्ध धर्म पुनः लुप्त न हो जाए।

(10) भारत से बौद्ध धर्म के लुप्त होने का कारण यह नहीं रहा कि इसके सिद्धांत झूठे पाये गये या साबित हुए। भारत में बौद्ध धर्म के लुप्त होने के कारण अलग हैं। इससे बड़ी बात तो यह है कि बुद्ध धर्म को भारत ब्राह्मणों ने अपने बाहुबल से हरा दिया।

यह तो अब अच्छी तरह से मालूम है कि सम्राट अशोक के उत्तराधिकारी और मौर्य वंश के अंतिम शासक की हत्या पुष्य मित्र नाम के ब्राह्मण सेनापति ने की थी जिसने सिंहासन हथिया कर ब्राह्मण को राज्य के धर्म के रूप में स्थापित कर दिया था। उससे भारत में बुद्ध धर्म का दमन हुआ जो कि इसके पतन का एक कारण है। एक तरफ ब्राह्मण के उदय ने भारत में बुद्ध धर्म का दमन किया, दूसरी

तरफ भारत पर हुए मुस्लिम ब्राह्मण ने विहारों को तहस–नहस करने और भिक्खुओं की हत्या करने में की गई हिंसा द्वारा इसे पूरी तरह नष्ट कर दिया।

(11) इस्लाम से बुद्ध धर्म को तो अब कोई खतरा नहीं है, लेकिन ब्राह्मण से है। ब्राह्मण बुद्ध धर्म का सबसे ताकतवर विरोधी होगा। ब्राह्मण चाहे जो रंग धारण करे और चाहे जिस दल में रहे, वह रहेगा ब्राह्मण ही। इसका कारण यह है कि ब्राह्मण श्रेणीकृत सामाजिक असमानता को बनाये रखना चाहता है। क्योंकि इसी श्रेणीकृत असमानता ने ही ब्राह्मण को उठाकर सबस ऊपर आसीन कर दिया है। बुद्ध धर्म समानता में विश्वास करता है। यह उनकी प्रतिष्ठा और शक्ति की जड़ें ही खोद डालता है। यह कारण है कि ब्राह्मणों को इससे नफरत हैं बहुत संभव है कि यदि ब्राह्मण को बुद्ध धर्म की पुनर्वापसी के आंदोलन का नेतृत्व करने दिया जाए तो वे अपनी शक्ति का प्रयोग इसे नष्ट करने या दिग्भ्रमित करने में लगा दें। इसलिए कम–से–कम हमारे आंदोलन के शुरुआती चरणों में उन्हें उनकी शक्तिशाली स्थितियों से बाहर करना बहुत जरूरी है।

(12) इस सारे प्रस्तावों के बाद धन का प्रश्न उठता है। यह प्रश्न भारत हल नहीं कर सकता है, ऐसा कहने में कोई संकोच नहीं होना चाहिए। केवल बौद्ध लोग ही हैं जो भारत में सहायता कर सकते हैं, लेकिन शुरुआती चरणों में उनकी संख्या बहुत कम होगी। इसलिए इसका बोझ भारत से बाहर के देशों द्वारा किया जाना चाहिए। इस उद्देश्य के लिए अपने दान को भारत में भेजकर मैं समझता हूं वे आसानी से ऐसा कर सकते हैं।

(हस्ता) भीमराव अम्बेडकर

ज्ञापन–2

दक्षिण भारत में बौद्ध धर्म की स्थिति पर एक रिपोर्ट :

1. मैं भारतीय बौद्ध समुदायों की स्थिति स्वयं देखने के लिए दक्षिण भारत में प्रवास पर गया जहां मैं 7 से 14 जुलाई तक रहा।

2. मैंने पाया कि वहां निम्नलिखित स्थानों पर बौद्ध समुदाय मौजूद हैंः

3. मद्रास शहर के पास दो केंद्र हैं :

(i) पेरम्बर तथा

(ii) कांचीपुरम (चिंगेपुत)

(ब) मद्रास शहर के भीतर :

(i) पालिकोण्डा (उत्तरी आरकॉट जिले में)

(ii) त्रिपुरम (उत्तरी आरकॉट जिले में)

(iii) बेल्लातूर (बेल्लूर जिले में) तथा

(iv) वाणीवेद (बानीपेट में)

(स) मैसूर राज्य में

(i) कोलार गोल्ड फील्ड

(ii) प्रार टाउन, कैन्टोनमेंट, बंगलौर सिटी और

(iii) बंगलौर सिटी में सेंट्रल जेल के पास

दक्षिण भारत में बुद्ध धर्म के ये केंद्र लगभग 30—40 वर्षों से अस्तित्व में हैं। इससे पता चलता है कि ब्राह्मणों और हिंदुओं से घिरे रहने के बावजूद वे कितनी मजबूती से बुद्ध धर्म से लगातार जुड़े हुए हैं।

4. अपने ही संसाधनों से जो विहार उन्होंने बनाये हैं वे बड़ी दयनीय संरचनाएं मात्र हैं। अगर उनके विहारों के जीर्णोद्धार, पुर्निर्माण तथा सौन्दर्यीकरण के लिए उनकी कुछ मदद की जा सके, तो इससे काफी हौंसला बढ़ेगा।

5. मैंने 8 जुलाई को मैसूर राज्य के राज्य प्रमुख, महाराज से मुलाकात की और बंगलौर में अपने कार्य हेतु एक केंद्र खोलने के लिए उनसे अनुरोध किया कि वे बंगलौर स्थित अपनी निजी संपत्ति में से जमीन का एक टुकड़ा हमें दे दें। महाराजा ने सहर्ष ही 5 एकड़ जमीन दान कर दी। माननीय महाराजा के निजी सचिव से प्राप्त पत्र की एक प्रति मैंने इसके साथ संलग्न कर दी है। कृपया इस मामले को अभी गोपनीय ही रखें। उपहार—नामा (गिफ्टडीड) बनाया जाना अभी शेष है।

6. यह भूखंड बहुत सुंदर है और अत्यंत मनोरम स्थान पर स्थित है। यह काफी कीमती भी है। मैंने विचार बनाया है कि इस जगह का इस्तेमाल हमारे उपदेशकों एवं भिक्षुओं की दीक्षा के लिए एक बौद्ध धार्मिक प्रशिक्षण केंद्र के लिए एक केंद्र का निर्माण करने के लिए हो।

(हस्ता) भीमराव अम्बेडकर

● ● ●

153

बुद्ध ही पाण्डुरंग थे

25 दिसंबर, 1954 को पूना के निकट देहू रोड पर बुद्ध की एक नयी प्रतिमा का अनावरण करने के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने अपने श्रोताओं को बताया कि पंढरपुर में भगवान विनोबा की तो प्रतिमा है वह दरअसल बुद्ध की ही प्रतिमा है। उन्होंने आगे कहा कि भगवान पाण्डुरंग के नाम की व्युत्पति पुण्डलिक से हुई है। पुण्डलिक का अर्थ है कमल और कमल को पालि में पाण्डुरंग कहते हैं। इसलिए बुद्ध ही पाण्डुरंग थे। डॉ. अम्बेडकर के अनुसार बुद्ध धर्म को नष्ट करने के लिए ब्राहमणों ने कई अन्य देवी–देवताओं की स्थापना कर दी थी जिनकी पूजा आमजनों द्वारा की जाने लगी, क्योंकि आमजन का दृष्टिकोण अस्थिर था, और इसलिए बुद्ध धर्म का लोप हो गया।[1]

● ● ●

---

1 लगभग 4000 लोगों ने कार्यक्रम में भाग लिया सोर्स मेटीरियल, वा. 1 पज 423
कुबेर, अम्बेडकर, ए क्रिटिकल स्टडी

154

बुद्ध धर्म में और जैन धर्म में अंहिसा के जो उपदेश अलग–अलग दिये गए हैं उनमें अंतर है

महाबोधि सोसायटी ऑफ इंडिया, नई दिल्ली के तत्वाधान में 5 फरवरी, 1956 को बुद्ध विहार में आयोजित एक सभा में डॉ. भीमराव अम्बेडकर द्वारा दिये गए भाषण का सारांश।

कोई भी धर्म जो साम्यवाद का विकल्प नहीं प्रस्तुत करेगा बचा नहीं रह पाएगा। मेरी समझ से बौद्ध धर्म ही एकमात्र धर्म है जो साम्यवाद के रूप में कार्य कर सकता है।

मैं उन लोगों से सहमत नहीं हूं जो हर पंथ में विश्वास करते हैं और हर जगह से थोड़ा–बहुत ग्रहण कर लेते हैं। भारत में इस तरह का दृष्टिकोण देखा जाता है। व्यक्ति को अपना चुनाव खुद करना चाहिए और फिर उस चयन के साथ जुड़ा रहना चाहिए।

एक धर्म दूसरे से अलग हो सकता है। बौद्ध धर्म और जैन धर्म में अंहिसा के जो उपदेश अलग–अलग दिये गये हैं उनमें अंतर है। जैन धर्म में अंहिसा एकदम उत्कर्ष पर ला दी गई है।

पुनर्जन्म में मेरा पूरा विश्वास है। मैं वैज्ञानिकों के लिए यह सिद्ध कर सकता हूं कि पुनर्जन्म तर्कसंगत है। मेरे जरिये में, मनुष्य नहीं बदला है, पदार्थ या तल बदल गये हैं।

● ● ●

155

मुझे बुद्ध धर्म क्यों प्रिय है

मुझे दिये गये थोड़े–से समय में मुझसे दो सवालों का जवाब देने के लिए कहा गया है। पहला सवाल है कि ''मुझे बौद्ध धर्म क्यों प्रिय है?'' और दूसरा ये है कि ''मौजूदा परिस्थितियों में यह संसार के लिए कितना उपयोगी है?''

मुझे बौद्ध धर्म बेहतर लगता है, क्योंकि यह समन्वित रूप से तीन सिद्धांत देता है जैसा कि कोई अन्य धर्म नहीं देता। अन्य सभी धर्म ईश्वर, आत्मा और मृत्यु के बाद जीवन इत्यादि प्रश्नों से परेशान है। बौद्ध धर्म प्रज्ञा (अंधविश्वास एवं प्राकृतिवाद के उलट समझ एवं बुद्धि) का उपदेश देता है। यह करूणा का पठ पढ़ाता है। यह समता (समानता) की शिक्षा देता है। पृथ्वी पर अच्छे एवं खुशहाल जीवन के लिए मनुष्य इन्हीं चीजों को पाना चाहता है। बौद्ध धर्म के यही तीन सिद्धांत मुझे आकर्षित करते हैं। यही तीन सिद्धांत दुनिया का भी आकर्षण होने चाहिए। ईश्वर या आत्मा समाज को नहीं बचा सकते हैं।

एक तीसरी बात भी है जिसे दुनिया को, खासतौर पर इसके दक्षिणी एशियाई हिस्से को अपनी तरफ आकर्षित करना चाहिए। दुनिया को कार्ल मार्क्स और साम्यवाद जिनके वे जनक बनाए गए हैं, का समाना करने की नौबत आ गयी है। यह बड़ी गंभीर चुनौती है। क्योंकि मार्क्सवाद और साम्यवाद धर्मनिरपेक्षता से संबंधित मसले हैं। उन्होंने सभी देशों के धर्मों की नींवे हिलाकर रख दी हैं।

मैं दक्षिण पूर्व एशिया के देशों में बुद्ध धर्म के लोगों का रूझान साम्यवाद की ओर होता देखकर बहुत अचंभित हूं। इसका मतलब है कि वे लोग यह नहीं समझते हैं कि बौद्ध धर्म है क्या मेरा दावा है कि बौद्ध धर्म मार्क्स और उनके साम्यवाद का पूर्ण जबाव है।

रूसी प्रकार का साम्यवाद एक रक्त रंजित के द्वारा साम्यवाद लाना चाहता है। बौद्ध धर्म का साम्यवाद रक्त रहित मानसिक क्रांति द्वारा साम्यवाद लाना चाहता है। जो लोग साम्यवाद को अपनाने के लिए आतुर हैं वे ध्यान रखें कि संघ एक साम्यवादी संगठन है। यहां कोई निजी सम्पत्ति नहीं है। ऐसा किसी हिंसा द्वारा नहीं किया गया है। यह सिर्फ विचारों के बदलाव द्वारा लाया गया है और फिर भी 2500 सालों से चलता आ रहा है। हो सकता है कि उसमें कुछ गिरावट आयी हो,

लेकिन यह विचार अभी भी बहुत ओजस्वी है। रूसी साम्यवाद के इस प्रश्न का उत्तर देना ही होगा। इसके अलावा उन्हें दो और प्रश्नों का उत्तर देना होगा पहला यह कि साम्यवादी व्यवस्था की जरूरत हमेशा के लिए क्यों है? यह माना जाना चाहिए कि उन लोगों ने ऐसा काम कर दिया है जो कि रूस के लोग कभी न कर पाते। लेकिन जब काम पूरा हो गया है तो जैसा कि बुद्ध ने उपदेश दिया है लोगों को स्वतंत्रता के साथ–साथ प्रेम क्यों न मिले। इसलिए दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के रूसी जाल में कूदने से सचेत रहना चाहिए। इसमें से वे कभी नहीं निकल पाएंगे। उनके लिए जरूरी सिर्फ इतना है कि वे बुद्ध और उनकी उन शिक्षाओं का अध्ययन करें जिन्हें उन्होंने उचित बताया है और उनकी शिक्षाओं को राजनीतिक रूप प्रदान करें। गरीबी तो है और हमेशा ही रहेगी। रूस में भी तो गरीबी है, लेकिन गरीबी मनुष्य की स्वतंत्रता की बलि चढ़ाने का बहाना नहीं हो सकती है।

दुर्भाग्य से बुद्ध की शिक्षाओं की सही व्याख्या कर उनको नहीं समझा गया है इस तथ्य को पूरी तरह से गलत तरीके से समझा गया है कि उनका उपदेश शिक्षाओं और सामाजिक सुधारों का संग्रह है। एक बार यह समझ लिया गया कि बुद्ध धर्म सामाजिक उपदेश है तो बुद्ध धर्म का पुनरोदय दुनिया के लिए शाश्वत घटना होगी और तब पूरी दुनिया समझ जाएगी कि बुद्ध धर्म सबको इतना आकर्षित क्यों करता है।

(हस्ता) भीमराव अम्बेडकर
26, अलीपुर रोड
नई दिल्ली,
दिनांक : 12 मई, 1956
बी.सी. लंदन
द्वारा प्रसारित भाषण,
12 मई, 1956

● ● ●

156

भारत में बुद्ध धर्म की लहर कभी कमजोर नहीं होगी

12 मई, 1956 को प्रबुद्ध भारत में एक पत्र प्रकाशित हुआ जिसमें भारतीय बौद्ध परिषद की सभी शाखाओं से 2500वीं बुद्ध जंयती मनाने का निवेदन किया गया था। तदनुसार 24 मई, 1956 को बंबई के 'नारे पार्क' में एक ऐतिहासिक सभा की व्यवस्था की गयी थी। इस सभा के लिए करीब पचहत्तर हजार लोग इक्ट्ठे हुए थे। सभा की अध्यक्षता बंबई राज्य के पूर्व प्रधानमंत्री श्री बालासाहेब खेर ने की। उन्होंने बुद्ध और बुद्ध के धम्म पर अपने विचार व्यक्त किये।[1]

उनके भाषण के बाद डॉ. अम्बेडकर ने घोषणा की कि वह अकबर 1956 में बौद्ध धर्म स्वीकार कर लेंगे। वीर सावरकर ने बुद्ध धर्म में उपदेशित अहिंसा पर कई लेख लिखे थे। डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण में सावरकर पर तीक्ष्ण प्रहार किए। क्रोध में आकर डॉ. अम्बेडकर ने कहा कि–

अगर हमें ठीक–ठीक पता चल जाता कि सावरकर कहना क्या चाहते हैं तो वह उनका जवाब देते। ऐसा लग रहा था कि जैसा बौद्ध धर्म और हिंदू धर्म के नेताओं के बीच भयंकर घमासान छिड़ गया हो। डॉ. अम्बेडकर ने गरजते हुए कहा कि जो लोग उनके उत्थान के लिए प्रयास करना चाहते हैं केवल उनको ही और उनके लोगों की आलोचना का अधिकार है। उनके आलोचक उन्हें अकेला रहने दें उन्हें और उनके लोगों को गर्त में गिरने दें।

डॉ. अम्बेडकर ने साथ–साथ कहा कि हां उनके लोग भेड़ हैं और वह उनके चरवाहे हैं। उनसे बड़ा धर्मशास्त्री कोई और नहीं है। वे उनके पीछे–पीछे चलें और धीरे–धीरे उन्हें ज्ञान प्राप्त हो जाएगा।

उनके लिए बौद्ध हिंदू धर्म से काफी अलग है। उन्होंने आगे कहा ''हिंदू धर्म ईश्वर में विश्वास करता है। बौद्ध धर्म में कोई ईश्वर नहीं है। बौद्ध धर्म के अनुसार आत्मा जैसी कोई चीज नहीं होती है। हिंदू धर्म चतुर्वर्ण और जाति व्यवस्था में आस्था रखता है। बौद्ध धर्म में चर्तुर्वर्ण और जाति–व्यवस्था के लिए कोई जगह नहीं है।''

---

[1] प्रबुद्ध भारत, 2 जून, 1956

उन्होंने अपने अनुयायियों को बताया कि बौद्ध धर्म पर उनकी पुस्तक जल्दी की प्रकाशित होगी। बौद्ध धर्म के संगठन के सभी सुराखों को उन्होंने बंद कर दिया है और अब वे इसे प्रकाशित करके रहेंगे। साम्यवादियों को बौद्ध धर्म का अध्ययन करना चाहिए, ताकि वे जान सकें कि मानवता की बुराइयों को कैसे समाप्त किया जाए।

अपने भाषण के दौरान डॉ. अम्बेडकर ने अपनी तुलना मोजेज से की जिन्होंने अपने लोगों को मिस्र से स्वतंत्रता की धरती फिलीस्तीन पहुंचाया। उनके अनुसार किसी धर्म के पतन के तीन कारण होते हैं। उस धर्म में बाध्यकारी सिद्धांतों का अभाव बहुमुखी प्रतिभा एवं मन जीतने वाले वाचकों की कमी और आसानी से समझ आने वाले सिद्धांतों का अभाव।

उन्होंने यह घोषणा भी की कि वह बुद्ध का एक विशाल मंदिर बनवाने वाले हैं।

बंबई में इस प्रकार उनके अंतिम भाषण की समाप्ति हुई।[2]

● ● ●

---

2 कीर, पृष्ठ 492–93

157

भारत में लोकतंत्र के लिए संभावनाएं*

मुझे विषय दिया गया है कि, ''भारत में लोकतंत्र के लिए क्या संभावनाएं हैं?'' बहुत–से भारतीय इतने गर्व से बात करते हैं जैसे उनके देश मे पहले से ही लोकतंत्र आ चुका। और जब विदेशी भी भारत में राजनयिक सम्मान देते हुए रात्रिभोज के लिए बैठते हैं, तो वे महान भारतीय प्रधानमंत्री और महान लोकतंत्र की बातें करते हैं।

इससे यह निर्विवाद रूप से मान लिया जाता है कि जहां भी गणतंत्र है, वहां लोकतंत्र होगा ही होगा। यह भी मान लिया जाता है कि जहां जनता द्वारा वयस्क मताधिकार द्वारा चुनी गई संसद है और जहां प्रत्येक पांच सालों में जनता के प्रतिनिधियों द्वारा संसद में कानून बनाये जाते हैं, वहां पर लोकतंत्र है। दूसरे शब्दों में कहें तो लोकतंत्र को राजनीतिक उपकरण समझा जाता है और यह मान लिया जाता है कि जहां यह राजनीतिक उपकरण है वहां लोकतंत्र है।

क्या भारत में लोकतंत्र है या फिर भारत में लोकतंत्र बिल्कुल ही नहीं है? सच क्या है? जब तक गणतंत्र को लोकतंत्र के समतुल्य रख देने और लोकतंत्र को संसदीय सरकार के समतुल्य रख देने से उत्पन्न हुए भ्रम को समाप्त नहीं कर दिया जाता, इस प्रश्न को कोई सकारात्मक उत्तर नहीं दिया जा सकता।

लोकतंत्र संसदीय सरकार के साथ–साथ गणतंत्र से भी बिल्कुल अलग चीज है। सरकार चाहे संसदीय हो या फिर कोई और, लोकतंत्र की जड़ें उसमें नहीं होती हैं। लोकतंत्र केवल सरकार का स्वरूप भर नहीं है। प्राथमिक रूप से यह सामुदायिक जीवन की एक पद्धति है। लोकतंत्र की जड़ें सामाजिक संबंधों में, समाज का निर्माण करने वाले लोगों के सामुदायिक जीवन के मायनों में तलाशी जानी चाहिए।

'समाज' शब्द का वृहद् अर्थ क्या है? संक्षेप में कहें तो जब हम 'समाज' की बात करते हैं तो हम समाज की कल्पना इनके गुण–धर्म के रूप में करते हैं। इस सामूहिकता के साथ–साथ जो विशेषताएं जुड़ी होती हैं, वे हैं उद्देश्य की प्रशसीय एकनिष्ठता व कल्याण की कामना, जनहितों के प्रति आस्था और सहानुभूति एवं सहयोग की पारस्परिकता।

---

* [1] वॉइस ऑफ अमेरिका, 20 मई, 1956

क्या ये आदर्श समाज में दिखते हैं? भारतीय समाज व्यक्तियों से नहीं बना है। भारतीय समाज असंख्य जातियों का ऐसा जमावड़ा है जिनका जीवन परस्पर कटा हुआ है, जिनके कोई साझा जीवन अनुभव नहीं है, तथा जिनमें बंधुत्व की सहानुभूति का कोई जुड़ाव नहीं है। इस तथ्य के रहते हुए इस बिंदु के लिए तर्क करना जरूरी नहीं है। जाति व्यवस्था का अस्तित्व समाज के इन आदर्शों के अस्तित्व के लिए और इसलिए लोकतंत्र के अस्तित्व के लिए भी एक साक्षात चुनौती है।

भारतीय समाज जाति व्यवस्था में इतना रचा–बसा हुआ है कि यहां हर चीज जाति के आधार पर तय होती है। भारतीय समाज में जाइए और आपको जाति बिल्कुल भयानक रूप में मिल जाएगी। कोई भारतीय किसी अन्य भारतीय के साथ केवल इसलिए विवाह नहीं कर सकता, खान–पान नहीं कर सकता, क्योंकि वह उसकी जाति से संबंधित व्यक्ति नहीं है। आप राजनीति में चले जाएं, जाति वहां भी मिल जाएगी। भारतीय व्यक्ति चुनाव में मतदान कैसे करता है? वह उस उम्मीदवार को अपना वोट देता है जो उसी की जाति से हो, न कि किसी अन्य जाति से। भारतीय कांग्रेस भी चुनाव के उद्देश्य के लिए जाति व्यवस्था का इतना शोषण करती है जितना कोई अन्य पार्टी नहीं करती है। चुनावी क्षेत्रों के सामाजिक संरचनाओं के संबंध में यदि आप इसके प्रत्याशियों की सूची की छांट करें तो पाएंगे कि उम्मीदवार उसी जाति का होगा जिस जाति का संबंधित चुनाव क्षेत्र में बाहुल्य होगा। सच तो यह कि जिस जाति के अस्तित्व को लेकर ऊपरी तौर पर कांग्रेस इतना हो–हल्ला मचाती है, उसी व्यवस्था का वह समर्थन करती है। आप उद्योगों के क्षेत्र में चले जाएं। वहां आप क्या पाएंगे? आप पाएंगे कि सबसे अधिक वेतन लेने वाले सर्वोच्च लोग उसी जाति विशेष के होंगे जिस जाति का उद्योगपति होगा। बाकी लोग उस सीढ़ी के सबसे निचले पायदान पर बहुत थोड़े–से वेतन के साथ जीवन–पर्यन्त चिपके रहते हैं। आप वाणिज्य के क्षेत्र में जाइए और आपको यही तस्वीर देखने को मिलेगी। पूरा वित्तीय संस्थान किसी जाति विशेष का शिविर बन जाता है जिसमें बाहरी लोगों का प्रवेश निषिद्ध होगा।

आप दान–धर्म के क्षेत्र में जाइए। एकाध अपवादों को छोड़ दें तो भारत में सभी तरह के दान–धर्म संप्रदायिक होते हैं। यदि कोई पारसी मरता है तो वह अपना धन पारसी लोगों के लिए छोड़ जाता है। यदि कोई जैन मरता है तो वह अपना जैनों के लिए छोड़ जाता है। यदि कोई मारवाड़ी मर जाता है तो वह अपना धन मारवाड़ियों के छोड़ जाता है। यदि कोई ब्राह्मण मरता है तो अपना ध ब्राह्मणों के लिए छोड़ जाता है। इस प्रकार पददलितों और समाज से बहिष्कृतों के लिए राजनीति

में, उद्योग में? वाणिज्य में अथवा शिक्षा में, कहीं भी कोई जगह नहीं रहती है।

जाति व्यवस्था की अन्य विशेषताएं भी हैं जो लोकतंत्र के खिलाफ है और जिनका लोकतंत्र पर बुरा असर पड़ता है। जाति व्यवस्था की ऐसी ही एक विशेषता इसमें पायी जाने वाली 'श्रेणीगत असमानता' है। जातियों की सामाजिक परिस्थितियां समान नहीं होती। वे एक–दूसरे से ऊपर–नीचे रहती हैं। वे एक–दूसरे से ईष्या करती हैं। यह घृणा का आरोही पैमाना है एवं उपेक्षा का अवरोही पैमाना है। जाति व्यवस्था की यह विशेषता सबसे बुरे परिणामों को जन्म देती है। यह सचेष्ट सहयोग एवं सह–भागिता को नष्ट कर देती है। जाति और वर्ग इस मामले में एक–दूसरे से भिन्न है कि वर्ग व्यवस्था का यह दूसरा कुप्रभाव है। यह इस तथ्य में भी प्रकट होता है कि जो जातियों के बीच उद्दीपन एवं प्रतिक्रिया केवल एक पक्षीय होती है। उच्च जाति के लोग मनचाहे तरीके से व्यवहार करते हैं जबकि निम्न जाति के व्यक्ति को श्वास रूप से स्थापित तरीके से ही प्रतिक्रिया देनी होती है। इसका मतलब यह है कि जब उद्दीपन एवं प्रतिक्रिया प्राप्त करने में समान अवसर नहीं है तो परिणामस्वरूप जो प्रभाव एक व्यक्ति को मालिक बना देते हैं वही दूसरों को दास के रूप में शिक्षित कर देते हैं। जब जीवन अनुभव की विभिन्न पद्धतियों का स्वतंत्र आदान–प्रदान बंध जाता है तो दोनों ही पक्षों के अनुभवों के मायने गायब हो जाते हैं। उसका परिणाम एक विघटित समाज होता है जिसमें एक सुविधा भोगी वर्ग और दूसरा वंचित वर्ग बन जाता है। इस तरह का विलगाव सामाजिक आमेलन में बाधा बनता है।

जाति व्यवस्था के दुर्गुण के रूप में एक तीसरी विशेषता भी है जो लोकतंत्र की जड़ें काट देती है। वह विशेषता यह है कि कोई जाति किसी व्यवसाय विशेष से बंधी रहती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि समाज उस समय सुव्यवस्थित होता है जब प्रत्येक व्यक्ति वह कह रहा हो जिसके प्रति उसके अंदर स्वाभविक रूझान हो ताकि दूसरों को इससे लाभ होय इसमें भी संदेह नहीं है कि यह समाज की जिम्मेदारी है कि वह इन रूझानों का पता लगाए और प्रगामी रूप से व्यक्तियों को सामाजिक उपयोग के लिए प्रशिक्षित करे। लेकिन किसी भी व्यक्ति में कार्यों और क्षमताओं की असीम बहुलताएं हो सकती हैं जिससे उस व्यक्ति विशेष की सारी क्षमताओं का उपयोग कर सके। व्यवसाय के आधार पर वर्गीकरण व्यक्ति के विकास को रोकता है, और जानबूझकर व्यक्ति का विकास होने से रोकना जानबूझकर लोकतंत्र से वंचित करना है।

जाति व्यवस्था समाप्त कैसे हो? सबसे पहली बाधा श्रेणीगत समानता में निहित है जो कि जाति व्यवस्था की आत्मा है। जहां लोग उच्च और निम्न वर्गों में बंटे हों, तो यह ज्यादा सरल है कि उच्च वर्ग के लोगों से संघर्ष करने के लिए

निम्न वर्ग के लोग आपस में जुड़ जाएं क्योंकि निम्न वर्ग कोई एक व्यक्ति नहीं होता है। वर्ग में नीचे के लोग होते है और निम्नतर लोग होते हैं। नीचे के लोग निम्नतर लोगों में नहीं मिल पाते हैं। क्योंकि उन्हें भय होता है कि यदि वे अपने से नीचे वालों (अर्थात् निम्नतर) को ऊपर उठाने में सफल हो जाएंगे तो वे स्वयं उस उच्चतर स्थिति को खो देंगे जो उन्हें और उनकी जाति को प्राप्त है।

दूसरी बाधा यह है कि भारतीय समाज एकजुट होकर कार्य करने में अक्षम हैं। यह नहीं जानता है कि सबाक हित किस में है। प्लेटो ने कहा है कि समाज का संगठन अंततः इस ज्ञान पर निर्भर करता है कि उसके अस्तित्व का लक्ष्य क्या है। अगर हमें इसका अंतिम लक्ष्य पता नहीं है, अगर हमें यह पता नहीं है कि इसका हित किस में है तो हम संयोग और दुर्घटनाओं पर आश्रित हो जाएंगे। जब तक हमें अंतिम लक्ष्य की अच्छाइयों के बारे में पता नहीं होगा, तो तर्कसंगत रूप से यह तय करने के लिए हमारे पास कोई पैमाना ही नहीं होगा कि किन–किन संभाव्यताओं को हमें आगे बढ़ने देना है। सवाल है कि क्या भारतीय समाज अपनी जातीय संरचना की मौजूदा दशा के साथ उस मूल प्रश्न को प्राप्त कर सकेगा? अब हम सबसे विकट बाधा से रूबरू होते हैं कि जब तक एक न्यायपूर्ण और सौहार्दपूर्ण सामाजिक व्यवस्था का अस्तित्व संभव है? भारतीयों की मस्तिष्क सर्वत्र झूठे दृष्टिकोणों और झूठे मूल्यों द्वार भ्रमित और लक्ष्य से भटका हुआ है। एक विघटित और विभाजित समाज कई–कई आदर्श और मानक स्थापित करता है। ऐसी स्थिति में जाति के मुद्दे पर किसी भारतीय व्यक्ति के लिए सधी हुई मानसिकता पर पहुंच पाना नामुमकिन है।

क्या शिक्षा जाति को समाप्त कर सकती है? जवाब 'हां' भी है और 'ना' भी। यदि शिक्षा वैसे ही दी जाती रही जैसी कि यह आज है तो जाति पर इसका कोई असर नहीं होगा। इसका सबसे ज्वलंत उदाहरण है ब्राह्मण जाति। ब्राह्मण शत–प्रतिशत शिक्षित हैं, या फिर कह लें कि अधिकांश ब्राह्मण उच्च शिक्षा प्राप्त हैं। लेकिन एक भी ब्राह्मण ने अपने को जाति के विरुद्ध प्रदर्शित नहीं किया है। दरअसल उच्च जाति का शिक्षित व्यक्ति शिक्षित होने के बाद, उस समय की तुलना में जब वह अशिक्षित था, जाति व्यवस्था बनाये रखने में और अधिक रूचि लेने लगता है। क्योकि बड़ी नौकरियां पाने के अतिरिक्त अवसर खोलकर शिक्षा उसे जाति व्यवस्था बनाये रखने के लिए और भी रूचि प्रदान कर देती है।

इस दृष्टिकोण से जाति को समाप्त करने के लिए शिक्षा एक साधन के रूप में उपयोगी नहीं है। यहां तक तो शिक्षा का नकारात्मक पक्ष है। लेकिन समाज के निचले तबके में लागू किये जाने पर शिक्षा उद्धारक हो सकती है। यह विद्रोह

की उस भावना को भड़का देगी। अज्ञानता की अपनी मौजूदा स्थिति में वे जाति व्यवस्था के समर्थक हैं। एक बार आंखे खुल जाने पर वे जाति व्यवस्था से लड़ने के लिए तत्पर हो जाएंगे।

वर्तमान नीतियों में दोष यह है कि यद्यपि शिक्षा व्यापक पैमाने पर दी जा रही है, यह भारतीय समाज के सही पात्र, तबके को नहीं दी जा रही ह। यदि आप भारतीय समाज के उस तबके को शिक्षा देते हैं जिसका जाति व्यवस्था से प्राप्त लाभों के कारण इसे बनाये रखने में निहित स्वार्थ है, तो जाति व्यवस्था मजबूत होगी। वही दूसरी तरफ यदि आप भारतीय समाज के उस निम्नतम तबके को शिक्षा प्रदान करते हैं जो जाति व्यवस्था को उखाड़ फेंकना चाहते हैं, तो जाति व्यवस्था उखड़ जाएगी। वर्तमान में भारत सरकार तथा अमेरिकन फाउंडेशन द्वारा शिक्षा को जो अंधाधुंध सहायता मिल रही है, वह जाति व्यवस्था को मजबूती प्रदान करेगी। अमीर को और अमीर तथा गरीब को और गरीब बनाना, गरीबी का उन्मूलन करने का तरीका नहीं है।

जाति व्यवस्था को समाप्त करने के लिए शिक्षा को एक साधन के रूप में इस्तेमाल करने के संबंध में भी यही लागू होता है। ऐसे लोगों को शिक्षा देना जो जाति व्यवस्था कायम रखना चाहते हैं। भारत में लोकतंत्र के लिए संभावनाओं में सुधार लाना नहीं, बल्कि हमारे भारत के लोकतंत्र को और बड़े संकट में डालना है।

हस्ता. भीमराव अम्बेडकर
26, अलीपुर रोड
नई दिल्ली
दिनांक 20 मई, 1956

लोकतंत्र में सभी को, चाहे वे दलि.... हों, शोषित हों जिन्हें उनके अधिकारों से वंचित कर दिया गया हो और जो सारा बोझ ढो रहे हों या फिर चाहे वे हों जिन्हें सारी सुविधाएं प्राप्त हैं, एक ही प्रकार से मतदान का अधिकार है। और संभवतरु सुविधा संपन्न लोग संख्या में सुविधाविहीन लोगों से कम ही है। चूंकि इस बहुमत के नियम को निर्णय का नियम मानते हैं, बहुत संभव है कि यदि कुछ सुविधासंपन्न लोग स्वेच्छा से और इच्छापूर्वक अपनी सुविधाएं नहीं छोड़ते हैं तो उनके और निम्नतर वर्गों के बीच की दूरी लोकतंत्र को नष्ट कर देगी और किसी बिल्कुल नयी चीज को जन्म देंगी। इसलिए मेरे मन में कोई संदेह नहीं है कि अगर आप संसार के विभिन्न हिस्सों में लोकतंत्र के इतिहास की जांच करें तो पाएंगे कि इन सामाजिक

विसंगतियों का अस्तित्व ही लोकतंत्र के असफल होने का एक कारण है।

शर्त–2

दूसरी चीज जो किसी लोकतंत्र के सफलतापूर्वक कार्य करने के लिए आवश्यक है, वह है 'विरोध का अस्तित्व'। मैंने न केवल इस देश में वरन इंग्लैंड में भी देखा है कि लोग दलीय व्यवस्था की भर्त्सना करते हैं। यहां आने से ठीक पहले अभी मैं हन्सर्ड सोसायटी द्वारा प्रकाशित एक छोटी–सी पुस्तक पढ़ रहा था जो इंग्लैंड की दलीय व्यवस्था पर लिखी गई थी। और इस पुस्तक में पूरा एक अध्याय ही इस प्रश्न को समर्पित किया गा था कि क्या दलीय व्यवस्था अच्छी व्यवस्था है और इसे चलने देना चाहिए। कई तरह के दृष्टिकोण हैं। लेकिन मुझे पता है कि वे सारे लोग जो दलीय व्यवस्था का विरोध करते हैं और इसलिए जिन्हें 'विपक्ष' का भी विरोधी माना जा सकता है, वे लोकतंत्र क्या है यह पूरी तरह से नहीं समझ पाते प्रतीत होते हैं। लोकतंत्र का अर्थ क्या है? मैं इसको परिभाषित नहीं कर रहा हूं। मैं एक प्रकार्यात्मक प्रश्न पूछ रहा हूं। मुझे ऐसा लगता है कि लोकतंत्र का अर्थ है वीटो ऑफ पॉवर। लोकतंत्र आनुवांशिक सत्ता या तानाशाही सत्ता का निषेध है। लोकतंत्र का मतलब है कि कहीं न कहीं किसी न किसी मुकाम पर उन लोगों की शक्ति पर एक वीटो होना ही चाहिए जो देश पर शासन कर रहे हैं। तानाशाही में कोई वीटो नहीं है। जो एक बार राजा चुन लिया जाता है वह स्वयंभू और दैव–प्रदत्त अधिकारों के तहत शासन करता है। उसे हर पांच साल की समाप्ति पर अपनी प्रजा के बीच जाकर यह नहीं कहना होता है, "क्या आपको लगता है कि मैं अच्छा आदमी हूं? क्या आपको लगता है कि मैंने पिछले पांच वर्षों में अच्छा कार्य किया है? यदि हां तो क्या आप मुझे फिर चुनेंगे? लोगों के पास राजा की शक्ति पर लागू करने के लिए कोई वीटो नहीं होता है। लेकिन लोकतंत्र में ऐसा प्रावधान है कि सत्ताधारी लोगों को हर पांच साल बाद लोगों को हर पांच साल बाद लोगों के पास जाना ही है और उनसे पूछना है कि क्या उनकी नजर में वे इतने सुयोग्य हैं कि उनके हितों की देखभाल के लिए, उनके प्रारब्ध को आधार देने के लिए, उनकी रक्षा के लिए उन्हें शक्ति और सत्ता सौंप दी जाए। इसी को मैं वीटो कहता हूं। लोकतंत्र किसी ऐसे वीटो से संतुष्ट नहीं होता कि सरकार केवल पांच साल में एक बार लोगों के पास जाएगी और बीच के समय में सरकार की सत्ता पर प्रश्न चिन्ह् लगाने वाला कोई न हो।

● ● ●

158

बौद्ध धर्म विश्व का उद्धारक होगा

डॉ. अम्बेडकर ने बौद्ध धर्म अपनाने की घोषणा नई दिल्ली में जारी अपने इस वाक्य से की :

20, अलीपुर रोड
सिविल लाइन्स, दिल्ली
23 सितंबर, 1956

मेरे द्वारा बौद्ध धर्म अंगीकार करने की तिथि एवं स्थान का निर्धारण अब अंतिम तौर पर हो गया है। यह नागपुर में दशहरा के दिन, अर्थात् 14 अक्तूबर, 1856 को सुबह 9 बजे से 11 बजे के बीच होगा और शाम को उसी दिन मैं सभा को संबोधित करुंगा।

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर
23 सितंबर, 1956

यह कार्यक्रम विस्तार से 'प्रबुद्ध भारत' साप्ताहिक में प्रकाशित हुआ था। यह सूचित किया गया था कि धर्मांतरण के इच्छुक व्यक्ति को 18 वर्ष से अधिक आयु का होना चाहिए।[1]

इस कार्यक्रम को आयोजित करने का पूरा उत्तरदायित्व 'भाारतीय बौद्ध परिषद' की नागपुर शाखा को सौंपा गया था। समिति के सचिव श्री डब्ल्यू.एम. गोडबोले ने तदनुसार यह पर्चा प्रकाशित कराया :

'सामूहिक धर्मान्तरण'

भारतीय बौद्ध समाज के संस्थापक एवं अध्यक्ष श्रद्धेय डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर नागपुर में विजयादशमी के दिन रविवार, 14 अक्तूबर, 1956 को प्रातः 8 बजे बौद्ध धर्म अंगीकार करेंगे। यह धर्मांतरण बर्मा के पूजनीय भिक्षु चंद्रमनी महाथेरा, जो आजकल भारत में हैं, के द्वारा संपन्न किया जाएगा।

---

0 अशोक विजयादशमी

1 प्रबुद्ध भारत, 29 सितम्बर, 1956

धर्मांतरण के इच्छुक लोग धर्मानुष्ठान में ऐसा कर सकेंगे और उनको साफ तथा सफेद वस्त्र पहनकर आना चाहिए।

कोष के लिए निवेदन :

इस परोपकारी समारोह में लाखों के भाग लेने की आशा की जा रही है और वे भारतीय बौद्ध जन समिति की स्थानीय शाखा को हरसंभव सहायता प्रदान करेंगे। श्रद्धेय बाबा साहेब ने इस महान समारोह के प्रबंध दायित्व इसी समिति को सौंपा है। वित्तीय सहायता प्रदान करते समय स्थानीय दानदाताओं को संबंधित समिति से रसीद लेने का आग्रह करना चाहिए। बाहर के लोग अपना धन कृपया मनी आर्डर से भेजें।

जो लोग समारोह के प्रबंध में सहायता देना चाहते हैं, वे 30 सितंबर तक या उससे पहले अधोहस्ताक्षर से मिलें।

डब्ल्यू.एम. गोडबोले
मंत्री
भारतीय बौद्ध जन समिति
नागपुर शाखा, कोठारी मेंसन
सीताबुल्डी, नागपुर।
दिनांक 21 सितंबर, 1956

निम्न एक पत्र के द्वारा डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने श्रद्धेय भिक्षु चंद्रामणी से धर्मांतरण संपन्न करने की प्रार्थना की।

26 अलीपुर रोड

24 सितंबर, 1956

श्रद्धेय भिक्षु चंद्रमणी

कुशीनारा, गोरखपुर जिला

उत्तर प्रदेश

श्रद्धेय भंते,

इसके द्वारा मैं आपको सूचित करना चाहूंगा कि मैंने और मेरी पत्नी ने बौद्ध अंगीकार करने का निर्णय किया है। धर्मांतरण समारोह 14 अक्तूबर, 1956 को नागपुर में होगा। समारोह का समय प्रातः 9 से 11 बजे का तय किया गया है। हमारी बड़ी इच्छा है धर्मानुष्ठान का कार्य आप करें। आप भारत के सबसे वयोवृद्ध भिक्षु हैं अतः हमारे विचार से धर्मानुष्ठान आपके द्वारा ही उपयुक्त होगा।

हम महसूस करते हैं कि आपकी शारीरिक स्थिति के कारण आपके लिए नगापुर आना कठिन हो सकता है, परंतु हम आपके लिए कुशीनारा से नागपुर तक की हवाई या रेल यात्रा का और नागपुर में आपके ठहरने का प्रबंध कर सकते हैं। हम किसी को भेज सकते हैं जो कुशीनारा से नागपुर तक आपके साथ रहे। कृपया सूचित करें कि क्या आप हमारा आमंत्रण स्वीकार कर सकते हैं। हार्दिक धन्यवाद सहित।

आपका
(हस्ताक्षर) बी.आर. अम्बेडकर[1]

इस अवसर पर प्रबुद्ध भारत ने 12 अक्तूबर, 1956 को एक विशेष परिशिष्ट प्रकाशित किया।

''सूचित किया गया था कि यह कार्यक्रम सबके लि. निःशुल्क है, परंतु समिति ने उनसे अनुरोध किया किय एक रुपये का चंदा देकर वे सदस्य बन जाएं। नागपुर के लोग समस्त व्यय वहन करेंगे। स्वागत समिति की सदस्यता 25 रु. थी और यह सबके लिए खुली थी।

यह सूचित किया गया कि धर्मांतरण का पंजीयन 11 अक्तूबर, 1956 से प्रारंभ होगा और कार्यालय धर्मांतरण स्थल पर भी चलता रहेगा। सभी पंजीयत प्रतिनिधियों के लिए दो टिकट जारी किए गए हैं जो धर्मांतरण स्थल में प्रवेश के लिए उपयोगी हैं।

स्वयंसेवकों को सफेद निकर और सफेद कमीज में आने का निर्देश दिया गया है। नागपुर में बाहर से आने वाले स्वयं सेवकों का मार्गदर्शन करने का उत्तरदायित्व श्री के.वी. उम्रे, श्री सच्चिदानंद मानके और श्री आर.आर. पाटिल को सौंपा गया है।

लोगों की मांग को ध्यान में रखते हुए लोगों को बंबई से नागपुर लाने के लिए रेलवे द्वारा एक विशेष रेलगाड़ी का प्रबंध किया गया था। यह ट्रेन 12 अक्तूबर, 1956 को शाम को 9:15 मिनट पर बंबई वी.टी. से छूटेगी और उसी के अनुसार रेलवे अधिकारियों द्वारा एक नोटिस प्रकाशित किया गया था। उस सबके बावजूद नागपुर जाने वाली तमाम ट्रेनें लोगों से भरी थीं। जिस किसी स्टेशन पर ये ट्रेने रुकतीं, उनमें और ज्यादा लोग आ जाते थे। इन लोगों के रहने का प्रबंध नागपुर के स्कूलों में किया गया था।

---

1 वामनराव गोडबोले, पृष्ठ 266
खैर मीडे खण्ड 12, पृष्ठ 48

कार्यक्रम की व्यवस्था नागपुर में वेक्सीन इंस्टीट्यूट, साउथ अम्बाजरी रोड के पास के खुले मैदान में की गई थी। मैदान को बांसों की परतों से ढका गया था, और पूरे मैदान में 3000 से ज्यादा बिजली के बल्ब लगाए गए थे। स्त्रियों के लिए अलग प्रबंध किए गए थे।

श्री रेवाम कावडे और श्री डब्ल्यू.एम. गोडबोले ने धर्मांतरण समारोह विवरण देते हुए एक पुस्तिका निकाली।

शनिवार 13.10.1956

सायं 5–8 बजे, परित्र्याणा 8′10 बजे

श्री वालासिन्हा, महामंत्री

महाबोधि सोसाइटी का भाषण

बुद्ध के जीवन और भारत

के सुविदित बौद्ध स्थलों

पर चित्रदर्शी लालटेन

(मैजिक लेनटर्न) का प्रदर्शन

रविवार 14.10.1956

(अशोक विजयादशमी)

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर श्रीमती मेम साहिब अम्बेडकर और अन्य लोगों का धर्मांतरण समारोह

प्रातः 11–11:25

महाबोधि समाज, कलकत्ता द्वारा डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को बुद्ध की मूर्ति भेंट

सायं 6–7

महाबोधि समाज के महामंत्री

श्री डी. वालिसिंहा का भाषण

सायं 8–11

मिलिंद कालेज, औरंगाबाद द्वारा,

एक मराठी, नाटक 'युग यात्रा' का मंचन

सोमवार 15.10.1956

प्रातः 8.11 बजे

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर का भाषण

सायं 8–11 मैजिक लेंटर्न प्रदर्शन

नवयुग दिनांक 21 अक्तूबर, 1956

14 अक्तूबर, 1956 को लोग जल्दी उठ गए और नारे लगाते हुए एक जुलूस की शक्ल में दीक्षा भूमि की ओर चल पड़े। 2–2.5 लाख की भीड़ से 7 बजे तक आधा पंडाल भर चुका था। समारोह की व्यवस्था नागपुर और बंबई के 'समता सैनिक दल' को सौंपी गई थी। इस समारोह के लिए केवल 10–15 पुलिस वाले तैनात किए गए थे। मीडिया के लिए विशेष प्रबंध किया गया था। भारत और अन्य देशों से लगभग 30 प्रेस रिपोर्टर थे। धर्मांतरण के इच्छुक लोगों की संख्या इतनी अधिक थी कि सारे प्रवेश पत्र समाप्त हो गए थे और अंत में व्यवस्थापकों को घोषणा करनी पड़ी कि समारोह सबके लिए खुला है।

धर्मांतरण समारोह

महास्थिवर भिक्षु चंद्रमणी के साथ डॉ. बी.आर. अम्बेडकर स्थल पर 9:30 पर आए। उस समय तक वहां 5–6 लाख लोग जमा हो चुके थे। समारोह में उपस्थित अन्य भिक्षु ये थे :

1. थीरो पन्नाटिस, सांची विहार, भोपाल।
2. वेन भिक्षु एच सिद्धातिस्सा, पइए, श्रीलंका।
3. वेन एम. सोघरत्ना, सारनाथ, बनारस।
4. भिक्षु जी, प्रज्ञानद, बुद्ध बिहार, लखनऊ।
5. रेव. परमसंधि।

समारोह का आरंभ कुमारी इंदुताई वाराले के स्वागत गान के साथ हुआ। इस अवसर पर डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के पिता रामजी मालोजी सूबेदार को हार्दिक श्रद्धांजलि दी गई। तत्पश्चात् डॉ. बाबा साहेब और माई साहिब करबद्ध भगवान बुद्ध की मूर्ति के सामने खड़े हुए। महास्थिवर चंद्रमणी ने उनके लिए पाली में त्रिशरन एवं पंचशील का पाठ किया :

नमोतस्सा भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धासा

नमोतस्सा भगवतो अरहतो सम्मा सम्बुद्धासा

नमोतस्सा भगवतो अराहतो सम्मा सम्बुद्धासा

अर्थ :

(उसके सम्मान में जो पवित्र है, जो योग्य है, जो पूर्णतया प्रबुद्ध है)

बुद्धम् शरम् गच्छामि
धम्मम् शरणम् गच्छामि
संघम् शसरणम् गच्छामि
दुतियाम्पी बुद्धम् गच्छामि
दुतियाम्पी धम्म् शरणम् गच्छामि
दुतियाम्पी संघम् शरणम् गच्छामि
ततियाम्पी बुद्धम् गच्छामि
ततियाम्पी धम्म् शरणम् गच्छामि
ततियाम्पी संघम् शरणम् गच्छामि

अर्थ :

मैं बुद्ध का अनुसरण करता हूं

मैं धम्म का अनुसरण करता हूं

मैं संघ का अनुसरण करता हूं

द्वितीय बार मैं बुद्ध का अनुसरण करता हूं

द्वितीय बार मैं धम्म का अनुसरण करता हूं

द्वितीय बार मैं संघ का अनुसरण करता हूं

तृतीय बार मैं बुद्ध अनुसरण करता हूं

तृतीय बार मैं धम्म का अनुसरण करता हूं

तृतीय बार मैं संघ का अनुसरण करता हूं

पंचशील

1. पानातिपाता वेरामनि–सिक्कखापद्म समादियामी
2. आदिन्नादाना वेरामनि–सिक्कखापद्म समादियामी
3. कामेसु मिच्छकारा वेरामनि–सिक्कखापद्म समादियामी
4. मुसावदा वेरामनि–सिक्कखापद्म समादियामी
5. सुरामेगटया–मज्ज–पमादत्थावाना वेरामानि–सिक्क्–खापद्म समादियामी।

अर्थ

1. मैं जीवित प्राणियों की हत्या नहीं करने के नियम का पालन करने का वचन देता हूं।
2. मैं उन चीजों को नहीं लेने के नियम का पालन करने का वचन देता हूं जो मुझे दी नहीं गई है।
3. मैं लैंगिक दुराचार से दूर रहने के नियम का पालन करने का वचन देता हूं।
4. मैं असत्य वचन से दूर रहने के नियम का पालन करने का वचन देता हूं।
5. मैं नशीले द्रव्यों और औषधियों से दूर रहने के नियम का पालन करने का वचन देता हूं।

इस प्रकार महास्थिवर चंद्रमणी ने डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर और माई साहब अम्बेडकर को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया।

तत्पश्चात् डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने खुद मूर्ति पर माल्याणि किया और इसके समक्ष तीन पर झुककर अभिवादन किया।

जनसामान्य के लिए धर्मांतरण अनुष्ठान प्रातः 10 बजे शुरू हुआ। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने घोषण की कि जो–जो हिंदू धर्म का परित्याग और बौद्ध धर्म को ग्रहण करना चाहते हैं, वे हाथ जोड़कर खड़े हो जाएं और उनके पीछे–पीछे त्रिशरण एवं पंचशील का पाठ करें। इस घोषणा के प्रत्युत्तर में उपस्थित सारे लोग खड़े हो गए और डॉ. अम्बेडकर ने उनको बौद्ध धर्म की दीक्षा दी।

धर्मानुष्ठान के अंग के रूप में डॉ. बी.आर. अम्बेडकर ने 22 शपथों का पाठ पढ़ाया :

1. मैं ब्रह्म विष्णु और महेश में कोई विश्वास नहीं रखूंगा और ना ही उनकी पूजा करूंगा।
2. मैं राम और कृष्ण में कोई आस्था नहीं रखूंगा और ना ही उनकी पूजा करूंगा।
3. मैं गौरी, गणपति तथा हिंदू धर्म के अन्य देवी–देवताओं में कोई आस्था नहीं रखूंगा और ना ही पूजा करूंगा।

4. मैं देवताओं के अवतार के सिद्धांत में विश्वास नहीं करूंगा।

5. मैं यह विश्वास नहीं करता और ना ही करूंगा कि भगवान बुद्ध विष्णु के अवतार थे। मैं मानता हूं कि यह शरारतपुर्ण और झूठा दुष्प्रचार है।

6. मैं श्राद्ध नहीं करूंगा और ना ही पिंड दान दूंगा।

7. मैं किसी भी प्रकार से बुद्ध के सिद्धांतों और शिक्षाओं के विपरीत काम नहीं करूंगा।

8. मैं ब्राह्मणों से कोई अनुष्ठान नहीं कराऊंगा।

9. मैं मानव मात्र की समानता में विश्वास करता हूं।

10. मैं समानता स्थापित करने का प्रयास करूंगा।

11. मैं बुद्ध के सिखाए गए अष्टांग मार्ग का पालन करूंगा।

12. मैं बुद्ध द्वारा विरूपित 'दस पारमिताओं' पर चलूंगा।

13. मैं सभी जीवित प्राणियों के प्रति संवेदन का भाव रखूंगा और उनका सावधानी से पोषण करूंगा।

14. मैं चोरी नहीं करूंगा।

15. मैं झूठ नहीं बोलूंगा।

16. मैं सांसारिक पाप नहीं करूंगा।

17. मैं मद्‌यपान नहीं करूंगा।

18. मैं अपने जीव को बुद्ध के तीन सिद्धांतों अर्थात् प्रज्ञा, बुद्धि, शील (चरित्र) और करूणा के अनुरूप जीने का प्रयत्न करूंगा।

19. मैं उसके द्वारा अपने पहले के हिंदू धर्म को जो मानव मात्र को समृद्धि के लिए हानिकर और इंसानों के बीच भेदभाव करता है तथा उनको नीचा मानकर व्यवहार करता है, परित्यागकर बौद्ध धर्म अंगीकार करता हूं।

20. मैं दृढ़तापूर्वक विश्वास करता हूं कि बौद्ध धर्म सद्धर्म है।

21. मुझे विश्वास है कि मैं नए जीवन में प्रवेश कर रहा हूं।

22. मैं शपथ लता हूं कि भविष्य में बुद्ध की शिक्षाआं क अनुसार आचरण करूंगा।

तत्पश्चात् अखिल भारतीय महाबोधि सोसाइटी के महामंत्री श्री वली सिंहा ने डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को बुद्ध की प्रतिमा भेंट की।

बौद्ध धर्म को अंगीकार करने वाले प्रमुख लोग ये थे–बार बी.डी. उर्फ राजाभाऊ खोबरागड़े, अनुसूचित जाति फेडरेशन के महासचिव बी.आर. उर्फ दादा साहेब गायकवाड़, अध्यक्ष बंबई राज्य, अ.जा. फेडरेशन आर.डी. भंडारे, अध्यक्ष अ.जा. फेडरेशन बंबई क्षेत्र शताबाई दानी, सी.एन. मोहिटे, जी.टी. परमार, अध्यक्ष गुजरात शाखा अ.जा. फेडरेशन के.के. परमार, डी.जी. जाधव, सरोजिनी जाधव, बी.आर. रनपिसे, पुणे, एम.एम. ससाालकर, हरिदास अवाले, सदानंद फुलजेले अहोटे, वी.एस. पगारे, एस.ए. उपश्आम, बी.एस. मोरे, बी.एच. वाराले, ढोंडीराम पगारे, यशवंत राव अम्बेडकर (डॉ. बी.आर. अम्बेडकर के पुत्र), मुकुंदराव अम्बेडकर, बी.सी. काम्बले इत्यादि।

इस अवसर पर न्यायाधीश भवानी शंकर नियोगी, श्री बी. एम. कुलकर्णी, सचिव बुद्ध समिति, श्री एम.बी. चिटनिस, प्रधानाध्यापक, मिलिंद कॉलेज औरंगाबाद और श्री बी.एस. कबीर जैसे उच्च जातियों के महानुभावों ने भी बौद्ध धर्म स्वीकार किया।

धर्मांतरण समारोह के समापन के पश्चात् विभिन्न संदेश पढ़े गए जो डॉ. बी.आर. अम्बेडकर की प्रशंसा में अभिनंदन के रूप में आए थे। कुछ चुने हुए संदेश जिनकी ओर से प्राप्त हुए वे थे–यू.बी. स्वे प्रधानमंत्री बर्मा, तथा यू नू भूतपूर्व प्रधानमंत्री बर्मा, कोलंबो के एच.डब्लू, अमरसूर्या, कलकत्ता के डॉ. अरविंद बरूआ, तथा रंगून से महाथेरो यू पन्नालोक इत्यादि। यह कार्यक्रम 11 बजे दिन में समाप्त हुआ।

14 अक्तूबर की शाम को औरंगाबाद के मिलिंद कॉलेज के छात्रों ने 'युग यात्रा' नामक नाटक प्रस्तुत किया।

15 अक्तूबर, 1956 को धर्मांतरण के अवसर पर डॉ. अम्बेडकर का मराठी भाषण

उन्होंने कहा,

मेरे समस्त बौद्ध साथियों एवं उपस्थित अतिथियों :

कदाचित एक विचारक के लिए दीक्षा समारोह के स्थान के महत्व को समझ पाना कठिन है जो कल और आज सुबह संभव हुआ था। उनकी और मेरी

---

1. प्रबुद्ध भारत–अम्बेडकर बुद्ध दीक्षा, विशेषक अंक

27 अक्तूबर, 1956

भी राय में जो धर्मानुष्ठान कल हुआ था वो आज और आज के बाद कल होना चाहिए था। यह समझना जरूरी है कि हमने यह उत्तरदायित्व अपने कंधों पर क्यों लिया था, और कि इसकी जरूरत क्या थी और फिर उसका परिणाम क्या होगा। उसको समझकर हमारे मिशन की आधारशिला मजबूत हो जाएगी। समझने की इस की प्रक्रिया शुरूआत पहले हो जानी चाहिए थी। लेकिन कुछ चीजें इतनी अनिश्चित रहती हैं कि वे अपने आप होती चलती हैं। इस धर्मानुष्ठान के बारे में जो कुछ होना था वो हुआ। लेकिन दिनों के बदलने के सिवा कोई और नुकसान नहीं हुआ।

अनेक लोगों ने पूछा है कि इस धर्मानुष्ठान के लिए आपने नागपुर को ही क्यों चुना? यह किसी अन्य स्थान पर क्यों नहीं किया गया? कुछ लोग यह कहेंगे कि चूंकि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ की बड़ी भारी टुकड़ी नागपुर में है और यह धर्मानुष्ठान उनको व्याकुल करने के लिए नागपुर में किया जा रहा है। यह कतई सही नहीं है। यह धर्मानुष्ठान नागपुर में इस उद्देश्य से नहीं किया जा रहा है। हमारा मिशन इतना विशाल है कि जीवन का प्रत्येक क्षण कम हैं मरे पास अपनी नाक खुजाकर दूसरे का बुरा करने का समय नहीं है।

इस स्थान को चुनने का कारण कुछ और है। जिन लोगों ने बौद्ध इतिहास का अध्ययन किया है उनको पता होगा कि भारत में बौद्ध धर्म का प्रचार करने वाले लोग नाग थे। नाग लोग आर्यों के घोर शत्रु थे। आर्यों और अनार्यों के बीच अनेक भीषण युद्ध हुए थे। पुराणों में इसके उदाहरण मिलते हैं जिनमें आर्यों ने नागों को जला दिया था। अगस्त मुनि केवल एक नाग को बचा पाए थे। हम उसी के वंशज है। नाग लोगों ने अत्याचार सहन किए थे और उनको उठाने के लिए किसी महान पुरुष की आवश्यकता थी जो उनको गौतम बुद्ध में प्राप्त हुआ था। संपूर्ण भारत में गौतम बुद्ध की शिक्षाओं का प्रचार–प्रसार नागों ने किया था। हम ऐसे ही नाग हैं। नागों का प्रमुख आवास–स्थल नागपुर और इसके आसपास था। यह नगर इसलिए नाग–पुर, नागों का नगर कहलाता है। इस स्थान से लगभग 27 मील की दूरी पर नागार्जुन पर्वत है। पास में बह रही नदी नाग नदी है। स्पष्ट है कि इस नदी का यह नाम वहां रहने वाले लोगों के नाम पर पड़ा है। नागों के आवास के पास से बहने वाली नदी नाग है। इस स्थान को, नागपुर को चुनने का मुख्य कारण यही है। किसी को चिढ़ाने की कोई बात नहीं, यह इरादा भी नहीं। आरएसएस का कारण तो मेरे दिमाग को छूकर भी नहीं गया था। किसी को यह व्याख्या नहीं करनी चाहिए।

विरोध शायद अन्य कारणों से हो सकता था। मैं यह पहले ही स्पष्ट कर चुका हूं कि इस स्थान का चयन किसी विरोध के लिए नहीं किया गया था। उस मिशन को प्रारंभ करने के लिए अनेक लोगों और समाचार–पत्रों ने मेरी आलोचना की है।

कुछ की आलोचना बहुत कड़ी है। उनके विचार से मैं अपने गरीब अछूतों को गलत दिशा में ले जा रहा हूं। यह कहकर वे हमारे लोगों को बहका रहे हैं कि आज के अछूत, अछूत ही रहेंगे। और जो अधिकार उनको मिले हैं, उनको वे खो देंगे। हमारे बीच से अनपढ़ लोगों को वे परंपरागत रास्ते पर चलते रहने की सलाह देते हैं। इसका असर हमारे कुछ युवा और वयस्क लोगों पर पड़ रहा हो सकता है। इससे लोगों के दिमाग में कुछ संदेह पैदा हो गए हों, तो उनको दूर करना हमारा कर्तव्य है, और इन संदेह को साफ करने से हमारे आंदलोन का आधार मजबूत होगा।

पहले एक आंदोलन चला था, मांस नहीं खाने का। छूतों ने सोचा कि उनके लिए यह बिजली की कड़क है। क्या यह विचित्र चीज नहीं कि जीवित भैस का दूध वे पिएं और उसके मरने के बाद उसकी लाश को हम अपने कंधों पर ढोएं। हम उनसे पूछते हैं कि तुम अपनी मृत मां को हमें क्यों नहीं ढोने देते? उन्हें अपनी मृत मां को इस अपनी मरी हुई भैस की तरह हमें दे देना चाहिए। पत्र व्यवहार द्वारा किसी ने 'केसरी' में लिखा है कि कुछ गांवों में हर साल 50 मवेशी मरते हैं, जिनकी खालों, सींगों, खुरों, गोश्त, हड्डियों और पूछों से 500 रु. कमाए जा सकते हैं, और कि उस मरे हुए गोश्त की तो बात अलग जिसके लाभ से ये लोग वंचित रह जाएंगे। तो 'केसरी' के द्वारा इस तरह का कुप्रचार किया जा रहा है। सच तो यह है कि इस तरह के कुप्रचार का उत्तर देने की जरूरत ही क्या थी? हमारे लोगों को लगा कि हमारे साहेब (नेता) क्या कर रहे हैं जो इस तरह के कुप्रचार का जवाब नहीं दे रहे हैं।

एक बार एक मीटिंग के लिए मैं संगमनेर में था। वहां रात के खाने का प्रबंध किया गया था। तब ही 'केसरी' का एक रिपोर्टर आया और एक पर्ची दी और पूछा, ''आप लोगों को मरे हुए जानवरों का मांस नहीं चााने की सलाह दे रहे हैं। वे कितने गरीब हैं। उनकी औरतों के पास साड़ी नहीं, पहनने के लिए ब्लाउज नहीं, उनके पास खाना नहीं, खेत नहीं। जब उनकी हालत इतनी दयनीय है, तब आप उनके 500 रु. साल की आमदनी छोड़ देने को कह रहे हैं जो उनको खालों, खुरों, गोश्त से होती है। क्या यह आपके लोगों का नुकसान नहीं?

मैंने पूछा, ''मैं तुम्हें जवाब दूं? यहां इस गलियारे में या मीटिंग में? इसका जवाब लोगों के सामने देना बेहतर होगा।'' मैंने उस आदमी से पूछा, ''क्या आप यही जानना चाहते हैं या कुछ और भी?'' उसने कहा, ''यही काफी है और बस इसका जवाब दीजिए।'' मैंने उस आदमी से पूछा, ''तुम्हारे कितने बच्चे हैं और तुम कितने लोग हो?'' उसने कहा, ''मेरे पांच बच्चे हैं और मेरे भाई के पांच–सात हैं।'' मैंने कहा, ''इसका मतलब है कि आपका बड़ा परिवार है। इसलिए तुम्हें और तुम्हारे

रिश्तेदारों को उस गांव के तमाम मुर्दा जानवरों को ढोकर ले जाना और 500 रु. की आमदनी करनी चाहिए। आपको यह लाभ उठाना चाहिए। उसके अलावा मैं आपको 500 रु. देने का इंतजाम करूंगा। मेरे लोगों का क्या होता है, उनको खाना और कपड़ा मिलता है या नहीं, यह मैं देखूंगा। फिर आप यह फायदा क्यों छोड़ रहे हैं? आप वह खुद क्यों नहीं करते? अगर हम करें तो यह लाभप्रद है अगर आप करें तो लाभप्रद क्यों नहीं है? चलिए मरे जानवरों को ढोइए।''

कल मेरे पास एक ब्राह्मण लड़का आया और बोला, ''संसद और विधानसभा में आपको आरक्षित सीटें दी गई हैं। आप उनको छोड़ क्यों रहे हो?'' मैंने कहा, ''आप महार बन जाइए और संसद तथा विधानसभा की उन सीटों को भर दीजिए। नौकरियों में खाली जगहें भर गई है, इसलिए पदों के लिए ब्राह्मण और अन्य आवेदन देते हैं। आप ब्राह्मण लोग महार बनकर इन आरक्षित सीटों को वैसे ही क्यों नहीं भर देते जैसे कि आप नौकरियों के मामले में करते हैं?''

उनसे मेरा सवाल है कि हमारे नुकसान पर आप क्यों रोते हैं? वास्तव में मनुष्य को आत्म–सम्मान अधिक प्यारा है भौतिक लाभ से। सद्गुणी और चरित्रवान स्त्री को पता होता है कि अनैतिक आचरण में कितना लाभ है। हमारी बंबई में वेश्याओं का मोहल्ला है। ये औरतें सुबह 8 बजे सोकर उठती हैं और पास के होटल में नाश्ते का आर्डर देती हैं। (डॉ. अम्बेडकर ने इसकी आवाज बदलकर नकल उतारी) ''ये सुलेमान एक प्लेट कीमा और रोटी देना।'' सुलेमान चाय, केक के साथ यह लाता है। लेकिन मेरी गरीब बहनों को सादी चटनी खाकर (नमक–मिर्च की चटनी और रोटी) तक नसीब नहीं होती, पर वे सम्मान और चरित्र के साथ रहती है।

हम आदर और आत्म–सम्मान के साथ लड़ रहे हैं। हम मानव मात्र को पूर्णता की ओर ले जाने को तैयार हो रहे हैं, और इसके लिए हम कोई भी बलिदान करने के लिए तैयार हैं। ये अखबार के लोग (उनकी ओर इशारा करते हुए) मेरे पीछे चालीस साल से पड़े हैं। आज तक उन्होंने मुझे कितना बदनाम किया है। मैं उनसे कहता हूं कि वे कम से कम अब तो विचार करें, इस बचपने को छोड़ें और समझदार बनें।

बौद्ध धर्म अंगीकार करने के बाद भी मुझे विश्वास है मुझे राजनीतिक अधिकार मिलेंगे (डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर के नाम के नारे और जोरदार तालियां)। मैं नहीं कह सकता कि मेरी मृत्यु के बाद क्या होगा। इस आंदोलन के लिए हमें अधिक संघर्ष करना पड़ेगा। बौद्ध धर्म स्वीकार करने से क्या होगा, ये सारी कठिनाइयां हैं, इनसे कैसे बचा जा सकता है। मैंने इस पर विस्तार से सोचा है कि क्या कहना है

और क्या प्रयास करने हैं। मेरी जेब (धर्मानुष्ठान के प्रत्यक्षदर्शियों का कथन है कि डॉ. अम्बेडकर ने बैग शब्द के स्थान पर 'मेर कोट की जेब में' शब्दों का इस्तेमाल किया था।) भरा पड़ा है समाधानों से। ये कौन है जिन्हें मैं अच्छी तरह से जानता हूं। इन अधिकारों को मैंने अपने लोगों के लिए हासिल किया है, वह इनको फिर से हासिल कर लेगा। इन अधिकारों और सुविधाओं को अगर मैंने प्राप्त किया है, तो मुझे विश्वास है कि मैं उनको दोबारा प्राप्त कर लूंगा। इसलिए कम से कम अब तक तो मुझ में विश्वास बनाए रखना चाहिए कि विरोध प्रचार में कोई सच नहीं है।

मुझे इस चीज पर आश्चर्य है। हर जगह बड़े स्तर पर बहस चल रही है। लेकिन किसी ने मुझसे एक सवाल नहीं पूछा है कि मैंने बौद्ध धर्म क्यों अपनाया। मैंने यही धर्म क्यों अंगीकर किया अन्य क्यों नहीं? धर्मांतरण के बाद भी कुछ लोग इसी वाक्यांश के उद्धृत करते रहे थे—संपादक गण। धर्मांतरण के किसी भी आंदोलन में यह सबसे मूल और महत्वपूर्ण सवाल है। धर्मांतरण के समय यह प्रश्न किया जाना चाहिए—कौन—सा धर्म और इसे क्यों अंगीकार करना चाहिए। हिंदू धर्म छोड़ने के आंदोलन की शुरूआत हमने 1935 के येओल के प्रस्ताव के माध्यम से की थी। मैंने बहुत पहले यह प्रण किया था, ''हालांकि मेरा जन्म हिंदू के तौर पर हुआ था, पर मैं हिंदू के तौर पर मरूंगा नहीं,'' और इसे मैंने कल सिद्ध कर दिया। मुझे बहुत खुशी है, मैं बहुत उत्साहित हूं। मुझे लगता है कि मैं जेल से रिहा कर दिया गया हूं। मैं अंधभक्ति नहीं चाहता। जो लोग बौद्ध धर्म अपनाना चाहते हैं, उनको समझ—बूझ कर करना चाहिए।

मानव जाति के विकास के लिए धर्म पूरी तरह से आवश्यक है। मैं जानता हूं कि कार्ल मार्क्स को पढ़ने के बाद एक संप्रदाय पैदा हुआ था जिसके अनुसार धर्म निरर्थक है। उनके लिए धर्म का कोई महत्व नहीं है। सुबह उनको डबलरोटी, मक्खन, क्रीम, मुर्गे की टांग आदि का नाश्ता मिलता है। भरपेट भोजन और गहरी नींद मिलती है। वे फिल्में देखते हैं, और बस। उनका दर्शन यही है। मैं उस विचार का नहीं। मेरे पिता गरीब थे, मुझे इस तरह के ऐश नसीब नहीं हुए। मेरी तरह की सरल जिंदगी किसी ने नहीं जी है। इसलिए मुझे यह समझ है कि ऐशो—आराम की गैरमौजूदगी में मनुष्य का जीवन कितना सरल हो सकता है। मैं जानता हूं कि आर्थिक प्रगति का आंदोलन आवश्यक है। मैं उसके खिलाफ नहीं। मनुष्य को आर्थिक प्रगति करनी चाहिए।

लेकिन इस मामले में मैं एक महत्वपूर्ण अंतर करता हूं। भैस, बैल और इंसान में अंतर है। भैस और बैल को हर दिन चारा चाहिए। इंसान को भी भोजन चाहिए। लेकिन दोनों में अंतर यह है कि भैस और बैल में मस्तिष्क नहीं होता। मनुष्य के पास शरीर और मस्तिष्क दोनों हैं। इसलिए विचार दोनों पर करना चाहिए। मस्तिष्क

का विकास करना चाहिए। मस्तिष्क को सुसंस्कृति बनाना चाहिए। मैं ऐसे देश या ऐसे लोगों से कोई संबंध रखना नहीं चाहता जो कहते हैं कि मनुष्य और सुसंस्कृत मस्तिष्क के बीच भोजन के सिवा और कोई अंतर नहीं। लोगों के साथ संबंध रखने के लिए जिस प्रकार मनुष्य के पास स्वस्थ शरीर होना चाहिए, उसी प्रकार शरीर को स्वस्थ बनाने के साथ–साथ मस्तिष्क को भी सुसंस्कृत करना जरूरी है। अन्यथा यह नहीं कहा जा सकता है कि मानव जाति ने प्रगति की है।

मनुष्य का शरीर या मस्तिष्क बीमार क्यों है? इसका कारण यह है कि या तो उसका शरीर रोगी है अथवा उसके मस्तिष्क में कोई उत्साह नहीं है। अगर मस्तिष्क में उत्साह नहीं तो प्रगति संभव नहीं। वहां यह उत्साह क्यों नहीं है? पहला कारण तो यह है कि इंसान को इस तरह से रखा गया है कि उसे उठने का कोई अवसर नहीं मिले या उसे कोई आशा न हो। ऐसे में वह उत्साहित कैसे रहेगा? वह बीमार रहेगा। जिस व्यक्ति को उसके कामों का फल मिलता है वह उत्साहित रहेगा। नहीं तो स्कूल का मास्टर कहने लगेगा, '''यहा कौन है? महार है। महार पहला दर्जा कैसे पास करेगा? उसे पहला दर्जा क्यों चाहिए? तीसरे में ही बने रहो, पहला दर्जा ब्राह्मण के लिए है।'' इस हालत में लड़के को क्या उत्साह मिलेगा? वह प्रगति कैसे कर सकता है? उत्साह पैदा करने की जड़ उस मस्तिष्क में है जिसका शरीर और मस्तिष्क भी स्वस्थ है, जो साहसी है और जिसमें विपरीत परिस्थितियों को पार करने का विश्वास है। उत्साह उसी मैं पैदा होता है और केवल वह ही आगे बढ़ता है। हिंदू धर्म में एक ऐसा दर्शन शामिल किया गया है जो कभी भी उत्साह को प्रोत्साहन नहीं दे सकता है। मनुष्य को उत्साहहीन बनाने की परिस्थितियां हजारों वर्ष से बनाए रखी गई हैं, जिनमें ज्यादातर ऐसे लोग पैदा कि जाएंगे जो अपना पेट बाबूगीरी से पालेंगे। और क्या होगा? अपने बाबुओं को बनाए रखने के लिए एक बड़ा बाबू चाहिए।

मनुष्य के उत्साह के पीछे उसका मस्तिष्क है। आप मिल मालिकों को जानते हैं? अपनी मिलों के लिए वे मैनेजर रखते हैं और उनमें मजदूर से काम मैनेजर का द्वारा लेते हैं। मिल मालिक एक ना एक बुरी आदतों में फंसे रहते हैं। उनका मस्तिष्क सांस्कृतिक रूप से विकसित नहीं होता। हमने अपने मस्तिष्क में उत्साह भरने का आंदोलन प्रारंभ किया, उसके बाद शिक्षा शुरू की जाएगी। मैंने अपनी पढ़ाई धोती–लंगोटी पहन शुरू की थी। स्कूल में मुझे पीने को पानी तक नहीं मिलता था। स्कूल में मैंने बहुत–से दिन पानी के बिना ही काटे थे। यह स्थिति बंबई के एलफिंस्टन कॉलेज तक में बनाए रखी गई थी। इन हालात में और क्या पैदा होगा–सिवाय क्लर्कों के, बाबुओं के।

जब मैं दिल्ली की कार्यपरिषद में था, तब वायसराय लार्ड लिन्लिथगो थे।

मैंने उनसे कहा, ''आम खर्च के अतिरिक्त मुस्लिमों की शिक्षा के लिए अलीगढ़ मुस्लिम यूनिवर्सिटी पर आप हर साल तीन लाख रुपये खर्च करते हैं। उसी तरह से तीन लाख रुपये आप बनारस हिंदू यूनिवर्सिटी को देते हैं। लेकिन हम न तो हिंदू हैं न मुस्लिम। अगर आप हमारे लिए कुछ करने की साचते हैं, तब उनकी तुलना में हमारे लिए हजार गुना अधिक करना चाहिए। कम से कम मुस्लिमों जितना तो करिए।'' इस पर लार्ड लिन्लिथगो ने कहा, ''आपको जो कुछ कहना है लिखकर दीजिए।'' तो मैंने एक स्मृतिपत्र (मेमारंडम) तैयार किया, जो अब तक मेरे पास है। यूरोपीयन को बहुत सहानुभूति थी। उन्होंने मेरा प्रस्ताव मान लिया। समस्या यह थी कि पैसा किस मद में खर्च किया जाए? उन्होंने सोचा कि हमारी लड़कियां शिक्षित नहीं हैं, उनको शिक्षा देनी चाहिए। उनके लिए होस्टल शुरू किया जा सकता है और पैसा उस पर खर्च करना चाहिए। अगर हमारी लड़कियों को शिक्षा मिलती है और वे शिक्षित की जाती हैं, तो हमारे घर पर तरह–तरह की चीजें बनाने का सामान कहां है? उनकी शिक्षा का कुल नतीजा क्या होगा? सरकार हमारे ऊपर खर्च करे और शिक्षा की राशि रोक ले। इसलिए शिक्षा पर खर्च पर बात करने के लिए मैं एक दिन लार्ड लिंन्तिथगो के यहां गया। मैंने कहा, ''अगर आप नाराज न हों तो मैं आपसे एक सवाल पूछना चाहूंगा। मैं अकेला पचास ग्रेजुएटों के बराबर हूं, हूं ना?'' उनको मानना पड़ा। फिर मैंने पूछा, ''इसकी वजह क्या है?'' उन्होंने कहा, ''हम वजह नहीं जानते।'' मैंने कहा, ''मेरा ज्ञान इतना ज्यादा है कि मैं महल की चोटी पर बैठ सकता हूं। ''मुझे ऐसे लोग चाहिए। क्योंकि वहां से कोई पूरी निगरानी कर सकता है। हमारे लोगों को सुरक्षा चाहिए और फिर तेज नजर वाले लोग पैदा करने चाहिए। कोई बाबू क्या कर सकता है? उस समय लार्ड लिंन्तिथगो मेरी बातों से सहमत हो गए और उच्च शिक्षा के लिए 16 लोगों को इंग्लैंड भेज दिया गया। जैसे कि मिट्टी के कुछ बरतन अधपके रह जाते हैं और कुछ पक जाते हैं, वैसे ही यह अलग मामला है। बाद में सी. राजगोपालाचारी ने उच्च शिक्षा की इस योजना को खत्म कर दिया।

इस देश में ऐसे हालात हैं जो हमें आने वाले हजारों साल तक के लिए हताश कर देंगे। जब तक यह स्थिति है, तब तक हमारी प्रगति के लिए कोई उत्साह नहीं हो सकता है। इस मामले में इस धर्म में बने रहकर हम कुछ नहीं कर सकते हैं। मनुस्मृति में चर्तुवर्ण है। चर्तुवर्ण व्यवस्था मानव जाति की प्रगति के लिए बहुत हानिकारक है। मनुस्मृति में कहा गया है कि शव को केवल शारीरिक श्रम करना चाहिए। उनको शिक्षा की क्या जरूरत? ब्राह्मणों को शिक्षा लेनी चाहिए, क्षत्रियों को हथियार लेने चाहिए, वैश्यों को व्यापार करना चाहिए, और शद्रों को सेवा करनी चाहिए। इस व्यवस्था को कौन खोलेगा। ब्राह्मणों क्षत्रियों और वैश्यों को कुछ लाभ है, लेकिन शूद्रो को क्या?

इन तीन वर्णों के सिवा क्या किसी अन्य को उत्साह होगा? चतुर्वर्ण व्यवस्था संयोगवश नहीं है यह कोई रिवाज नहीं है यह धर्म है। हिंदू धर्म में कोई समानता नहीं। एक बार मैं श्री गांधी के पास था। उन्होंने कहा, ''मैं चतुर्वर्ण में विश्वास करता हूं?'' मैंने कहा, ''आप जैसे महात्मा चतुर्वर्ण में विश्वास करते हैं। लेकिन यह चतुर्वर्ण है क्या और कैसे है?'' (डॉ. अम्बेडकर ने अपने हाथ उंगलियों को एक के ऊपर और हथेली को चौरस स्थिति में रखते हुए व्यक्त किया था)। यह चतुर्वर्ण ऊपर है या चौरस? चतुर्वर्ण कहां से शुरू होता है और कहां खत्म होता है? गांधीजी ने इसका उत्तर नहीं दिया और इसका क्या उत्तर देते? जिन्होंने हमें बर्बाद किया है वे इसी धर्म से तबाह होंगे। मैं इस हिंदू धर्म पर अनावश्यक आरोप नहीं लगाता। हिंदू धर्म से कोई समृद्ध नहीं होगा। यह धर्म अपने आप में विनाशक धर्म है। हमारा देश विदेशियों के शासन में क्यों पहुंचा? 1945 तक यूरोप ने युद्ध देखे हैं। चाहे जितने सैनिक मारे गए हों उनकी जगह नई भर्ती से उतने ही सैनिक आ जाते थे। उस समय कोई यह नहीं कह सकता था कि हमने युद्ध जीत लिया। हमारे देश में सब कुछ अलग है अगर क्षत्रिय मारे जाते हैं, हमारा सत्यानाश हो जाता है। अगर हमारे पास हथियार रखने का अधिकार होता, तो इस देश को गुलाम नहीं होना पड़ता। इस देश को कोई नहीं जीत पाता।

हिंदू धर्म में बने रहकर कोई भी किसी भी तरह से संपन्न नहीं हो सकता। स्तरीकरण के चलते तथ्य यह है कि लाभ ऊंचे वर्णों और जातियों का होता है। लेकिन दूसरे? बच्चे को जन्म देते ही ब्राह्मण स्त्री की आंखे हाईकोर्ट के उस पद पर लग जाती है कि वो वहां खाली पड़ा है। इसके विपरीत जब एक मेहतर स्त्री बच्चे को जन्म देती है, तो उसकी आंखे मेहतर के पद पर लगती हैं, कि वो कहां खाली पड़ा है। इस प्रकार के विचित्र सामाजिक ढांचे के लिए जिम्मेदार हैं हिंदू धर्म की वर्ण व्यवस्था। इसमें क्या विकास हो सकता है? संपन्नता केवल बौद्ध धर्म से आ सकती है।

बौद्ध धर्म में पचहत्तर फीसदी भिक्षु ब्राह्मण थे। शूद्र और अन्य पच्चीस फीसदी थे। लेकिन भगवान बुद्ध ने कहा, 'हे भिक्षुओं, तुम भिन्न–भिन्न देशों और जातियों से आए हो। नदियां जब अपने–अपने क्षेत्रों में बहती हैं वे अलग–अलग बहती हैं, लेकिन जब वे सागर में मिलती हैं तो अपनी पहचान खो देती हैं। वे एक और एक समान हो जाती हैं। बौद्ध संघ एक सागर के समान है। इस संघ में सब बराबर हैं।'' सागर में मिल जाने के बाद गंगा या महानदी के पानी को पहचाना नहीं जा सकता है। इस तरह से जब हम बौद्ध संघ में सम्मिलित होते हैं, हम अपनी जाति खो देते हैं और एक समान बन जाते हैं। इस प्रकार की समानता का उपदेश केवल एक महान व्यक्ति ने दिया था, और वह महान व्यक्ति हैं भगवान बुद्ध (तालियों की जोरदार गड़गड़ाहट)।

कुछ लोग कहते है, 'धर्मातरण करने में आपने इतना समय क्यों लिया? इन तमाम दिनों आप क्या कर रहे थे? यह महत्वपूर्ण प्रश्न है। धर्म को बदलना आसान काम नहीं है। यह एक व्यक्ति का मिशन नहीं है। जो कोई धर्म के बारे में सोचता है, यह जानता है। दुनिया में किसी के कंधे पर इतनी जिम्मेदारी नहीं जितनी मुझ पर है। अगर मुझे लंबा जीवन मिलता है, मैं अपना काम पूरा करूंगा (''डॉ. बाबा साहेब अम्बेडकर अमर रहे'' के नारे)।

कुछ लोग यह कहेंगे कि महार यदि बौद्ध बन जाते है तो क्या होगा। मैं उनसे कहता हूं कि उनको ऐसा नहीं कहना चाहिए। उनके लिए यह खतरनाक होगा। उच्च और धनाढय वर्ग को धर्म की जरूरत महसूस नहीं होगी। उनके बीच के अफसरों के पास रहने को बंगले हैं, सेवा करने को नौकर–चाकर हैं, उनके पास पैसा है, संपत्ति है और सम्मान है। इस प्रकार के लोगों को धर्म के बारे में सोचने की जरूरत नहीं।

धर्म गरीब के लिए जरूरी है। धर्म उत्पीड़ितों, दलित लोगों के लिए आवश्यक है। गरीब आदमी आशा पर जिंदा रहता है। जीवन का आधार आशा है। अगर आशा नहीं रहती है, तो जीवन का क्या होगा? धर्म आशावान बनाता है, और गरीबों तथ दलितों को संदेश देता है, भयभीत मत हो। यह अवश्य होगा। गरीब और दलित इसीलिए धर्म से चिपके रहते हैं।

यूरोप में जब ईसाई धर्म ने प्रवेश किया, रोम और पड़ोसी देशों की स्थिति बहुत बुरी थी। लोगों को पर्याप्त भोजन नहीं मिलता था। गरीबों के बीच खिचड़ी बांटी जाती थी। ईसा के अनुयायी कौन बने? गरीब और दलित। यूरोप के गरीब और निचले तबके के लोग ईसाई बन गए। गिब्बन ने कहा था कि ईसाइयत भिखारियों का धर्म है। गिब्बन इसका उत्तर देने को जीवित नहीं कि ईसाई धर्म यूरोप में सबका धर्म कैसे बन गया, अन्यथा उनको इसका उत्तर देना होता।

कुछ लोग कहेंगे कि बौद्ध धर्म महारों और मांगों का है। ब्राह्मण लोग भगवान को 'भो गौतम' अर्थात् 'अरे गौतम' कहकर पुकारते थे। भगवान बुद्ध को ब्राह्मण इसी तरह से चिढ़ाते थे। उनको देखना चाहिए कि विदेशों में, राम, कृष्ण और शंकर की मूर्तियां यदि बेची जाएं तो कितनी बिकती हैं। इसके विपरीत यदि भगवान बुद्ध की मूर्ति बेचने के लिए रखी जाती हैं तो एक भी मूर्ति नहीं बचेगी (जोरदार तालियां)। भारत में यह बहुत है, कुछ चीज बाहर जाकर दिखाइए, दुनिया में जाना–पहचाना नाम बुद्ध का है। तो इस धर्म का प्रचार कैसे रोका जाएगा।

हम अपने रास्ते चलेंगे आप अपने पर चलिए। हमने अपना रास्ता पा लिया

है। यह आशा का दिन है। यह उत्थान और उन्नति का मार्ग है। यह नया रास्ता नहीं। यह कहीं से लिया गया नहीं है। यह रास्ता यहीं से है। यह पूर्णतया भारतीय है। भारत में बौद्ध धर्म 2000 साल से है। सच तो यह है कि हमें खेद है कि हमने बौद्ध धर्म पहले ग्रहण क्यों नहीं किया। भगवान बुद्ध की शिक्षाएं अमर हैं। लेकिन भगवान बुद्ध ने ऐसा दावा नहीं किया था। समय के परिवर्तन के साथ परिवर्तन का प्रावधान है। यह उदारता किसी अन्य धर्म में नहीं।

बौद्ध धर्म के नष्ट होने का मुख्य कारण मुस्लिमों का आक्रमण है। अपने हमलों के दौरान मुसलमानों ने भगवान बुद्ध की मूर्तियों को नष्ट कर दिया। बौद्ध धर्म पर यह पहला आक्रमण था। उनके आक्रमण से भयभीत होकर बौद्ध भिक्षु भाग गए। कुछ तिब्बत चले गए, कुछ चीन तो कुछ अन्य स्थानों पर चले गए। धर्म की रक्षा के लिए सामायोजन आवश्यक है। उत्तर पश्चिम में मिलिंद नाम का एक राजा था। वह हमेशा बहस करता था। उसमें उसे आनंद आता था। वह हिंदुओं से कहता था जो बहस करने वाला है वह आगे आए और बहस करे।

एक दिन उसने बौद्ध लोगों से बहस का विचार किया। बौद्ध लोगों ने नागसेन से प्रार्थना की कि बहस में बौद्धों का प्रतिनिधित्व वह करें। नागसेन विद्वान था। पहले वह ब्राह्मण था। पुस्तक के द्वारा दुनिया भर को पता है कि नागसेन और मिलिन्द के बीच क्या बहस हुई। पुस्तक का नाम 'मिलिंद पन्त' है। मिलिंद ने एक प्रश्न पूछा था, 'धर्म का पतन क्यों होता है?' नागसेन ने उसके तीन कारण बताए थे। पहला कारण यह है कि एक धर्म विशेष स्वयं में अपरिपक्व है। ऐसे धर्म के मूल सिद्धांतों में कोई गहराई नहीं है। यह अस्थायी धर्म बन जाता है और ऐसे धर्म का जीवन बहुत कम होता है। दूसरा कारण यह है कि उस धर्म में जब कोई विद्वान उपदेशक नहीं होते, उस धर्म का पतन हो जाता है। विद्वानों को उस धर्म के दर्शन का उपदेश देना चाहिए। उस धर्म के उपदेशक यदि विरोधियों के साथ वाद–विवाद करने के लिए तैयार नहीं, तब धर्म का पतन हो जाता है। और तीसरा कारण यह है कि धर्म और धार्मिक सिद्धांत केवल शिक्षित लोगों के लिए है। आम लोगों के लिए तो केवल मठ–मंदिर है। वहां वे अलौकिक शक्ति की पूजा करने जाते हैं।

बौद्ध धर्म ग्रहण करते समय हमें यह बातें ध्यान में रखनी चाहिए, कोई यह नहीं कह सकता कि बौद्ध धर्म के सिद्धांत अस्थायी हैं। आज 2000 साल बाद भी सारा विश्व बौद्ध धर्म का आदर करता है। अमरीका में 2000 बौद्ध संस्थाएं हैं। इंग्लैंड में तीन लाख रुपए की लागत से बौद्ध मंदिर का निर्माण किया गया है। जर्मनी में भी 3–4 हजार बौद्ध संस्थाएं हैं। बुद्ध के सिद्धांत अमर हैं। फिर भी बुद्ध ने यह दावा नहीं किया है कि यह भगवान का धर्म है। बुद्ध ने कहा कि उनके पिता एक

साधारण व्यक्ति थे और उनकी मां एक साधारण स्त्री। अगर महसूस करते हैं इस धर्म को स्वीकार करिए। यह धर्म आपके विवेक को सही लगता है तो इसे स्वीकार करिए। किसी अन्य धर्म में ऐसी उदारता नहीं।

बुद्ध धर्म का मूल आधार क्या है? बौद्ध धर्म और अन्य धर्मों में भारी अंतर है। दूसरे धर्मों में परिवर्तन करना संभव नहीं, क्योंकि वे मनुष्य को ईश्वर से जोड़ते हैं। अन्य धर्म यह उपदेश देते हैं कि प्रकृति को ईश्वर ने पैदा किया है। आकाश, वायु, चंद्रमा, सूरज आदि—सबकी रचना ईश्वर ने की है। भगवान ने हमारे करने के लिए कुछ नहीं छोड़ा है इसलिए हमें भगवान की पूजा करनी चाहिए। ईसाई धर्म के अनुसार मृत्यु एक न्याय का दिन होता है, और सब कुछ उसके न्याय पर निर्भर है। बौद्ध धर्म में ईश्वर और आत्मा का कोई स्थान नहीं। भगवान बुद्ध ने कहा समस्त विश्व में दुख है, 90 प्रतिशत लोग दुख झेल रहे हैं। इन गरीब और उत्पीड़ित लोगों को दुख से मुक्त करना ही बौद्ध धर्म का प्रमुख काम है। कार्ल मार्क्स उसे अलग क्या कहते हैं जो बुद्ध कह रहे हैं? भगवान बुद्ध ने कुछ भी टेढ़े—मेढ़े ढंग से नहीं कहा। भाइयों जो मैं आपसे कहना चाहता था, वो कह चुका हूं। यह धर्म हर मामले में परिपूर्ण है। इस पर कोई दाग नहीं है। हिंदूवाद के सिद्धांत ऐसे हैं कि जिनसे कोई उत्साह पैदा नहीं हो सकता। हजारों साल से आज तक हमारे समाज से एक भी स्नातक या शिक्षित व्यक्ति पैछा नहीं हुआ। मुझे यह बताने में कोई झिझक नहीं कि मेरे स्कूल में जो एक औरत झाडू लगाती थी, वो मराठा थी। वह मुझे छूती नहीं थी। मेरी मां कहती थी कि बड़े व्यक्ति को मामा कहना चाहिए। मैं डाकिए को मामा कहता था (जोर की हंसी)। बचपन में मुझे अपने स्कूल में प्यास लगी। मैंने अपने अध्यापक से कहा। अध्यापक ने मेरे बचाव के लिए चपरासी बुलाया और उससे मुझे नल तक ले जाने को कहा। हम नल तक गए। चपरासी ने नल खोला। मैंने पानी पिया। स्कूल में आमतौर पर मुझे पीने को पानी नहीं मिलता था। बाद में मेरे पास जिला जज बनने का प्रस्ताव मिला। लेकिन मैं उस तरह के काम पर आस्थावान नहीं था। मेरी समस्या थी—मेरे भाइयों का मिशन कौन आगे बढ़ाएगा। इसलिए मैं उस बंधन में नहीं पड़ा।

व्यक्ति के तौर पर मेरे लिए इस देश में कुछ भी असंभव नहीं (तालियां)। आपके सिर पर वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण सिर के ऊपर बिठाए हैं वे नीचे गिरेंगे। यह असली सवाल है। अतः आपको इस धर्म से संबंधित पूरी जानकारी देना मेरा कर्तव्य है। पुस्तकें लिखकर मैं आपके सारे संदेहों और सारी आशंकाओं को समाप्त कर दूंगा और आपको संपूर्ण ज्ञान की अवस्था तक ले जाने का प्रयास करूंगा। कम से कम इस समय तो आपको मुझ पर विश्वास करना चाहिए।

परंतु आपका भी उत्तरदायित्व बड़ा है। आपका आचरण ऐसा होना चाहिए

कि दूसरे लोग आपका आदर–सम्मान करें। यह नहीं सोचिए कि इस धर्म का अर्थ यह है कि हम अपने गले में लाश बांधकर अकड़ जाएं। जहां तक बौद्ध धर्म का संबंध है भारत की धरती का कोई महत्व नहीं। हमें बौद्ध धर्म का पालन सबसे अच्छे ढंग से करने का संकल्प रखना चाहिए। यह नहीं होना चाहिए कि महार लागों ने बौद्ध धर्म को अपमानित किया। हमें दृढ़ संकल्प रखना चाहिए। अगर हम यह प्राप्त कर लेते हैं, तब हम अपने राष्ट्र ही नहीं, बल्कि संपूर्ण विश्व में फले–फूलेंगे। क्योंकि विश्व को केवल बौद्ध धर्म ही मुक्ति दिलाएगा। जब तक न्याय नहीं है, विश्व में शांति नहीं होगी।

यह नया रास्ता उत्तरदायित्वों से भरा है। नौजवानों को यह ध्यान में रखना चाहिए कि हमने कुछ संकल्प किए हैं और कुछ इच्छाएं प्रकट की हैं। उनको स्वार्थी आलसी नहीं बनना चाहिए। हमें यह तय करना चाहिए कि हम अपनी आय का कम से कम बीसवां हिस्सा उस उद्देश्य के लिए दें। मैं अपने साथ आप सबको लेना चाहता हूं। प्रारंभ में तथागत ने थोड़े–से लोगों को दीक्षा दी थी और उनको निर्देश दिया था, ''उस धर्म का प्रसार करो।'' उसके पश्चात् यश और उसके चालीस मित्रों ने बौद्ध धर्म ग्रहण किया था। यश धनी परिवार से था। भगवान बुद्ध ने उनसे कहा, ''यह धर्म किस तरह का है? धर्म ''बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय, लोकानुकम्पाय, धम्म आदि कल्यानम, मध्य कल्यानम्, पर्यावासन कल्यानम'' है। तथागत ने अपने धर्म का प्रचार करने का मार्ग उस समय की परिस्थितियों के अनुसार तय किया था। अब हमें कार्यविधि तैयार करनी है। इस धर्मानुष्ठान के पश्चात् प्रत्येक को दीक्षा देनी है प्रत्येक को। मैं घोषणा करता हूं कि प्रत्येक बौद्ध को दीक्षा देने का अधिकार है।''

बौद्धों और आमंत्रितों की तालियों के बीच डॉ. अम्बेडकर ने अपने भाषण को समाप्त किया।

...खुशी के आंसू बह निकले

''इस अवसर की शोभा बढ़ाने के लिए भारत के महाबोधि सोसाइटी के महामंत्री श्रद्धेय डी. वलीसिंहा को विशेष रूप से आमंत्रित किया गया था। धर्मांतरण समारोह का उनका प्रत्यक्षदर्शी वृत्तांत उस उत्साह का प्रचुर प्रमाण है जो बौद्ध धर्म को अंगीकार करते समय बाबा साहेब के अनुयायियों ने प्रदर्शित किया था। इस

---

1 मराठी भाषण प्रबुद्ध भारत के अम्बेडकर दीक्षा विशेषांक, 27 अक्तूबर, 1956 में प्रकाशित हुआ था। अंग्रेजी अनुवाद संपादकों का है। (फाउंडरेशन द्वारा हिंदी अनुवाद प्रस्तुत)

ऐतिहासिक घटना के बारे में श्रद्धेय डी. वलीसिंहा लिखते हैं :

''आधुनिक भारत के इतिहास में 14 अक्तूबर, 1956 का दिन स्मरणीय था। अपने पांच लाख अनुयायियों के साथ डॉ. अम्बेडकर ने इसी दिन त्रिसरना एवं पंचशील का पाठ किया। इस महान घटना का स्थल महाराष्ट्र प्रदेश के नागपुर नगर में चालीस एकड़ जमीन का खाली टुकड़ा था। उस पर समारोह के लिए एक विशाल पंडाल लगाया गया था। मुझे इसमें आमंत्रित किए जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था, और त्रिसरना तथा पंचशील के प्रत्येक शब्द को दोहराती हुई मानवता के इतने विशाल समूह का अपूर्व दृश्य मेरी स्मृति में अभी तक स्पष्ट बना हुआ है। मैंने अपने जीवन में कभी इतने उत्साहित जनसमूह को नहीं देखा। पिछली पूरी रात को और 14 अक्तूबर को पूरी सुबह आकाश 'भगवान बुद्ध की जय' के नारों से गूंजता रहा था। पुरुषों, स्त्रियों और बच्चों के विशाल समूह, जिनमें से कुछ लोगों के हाथों में बच्चे थे और कुछ बौद्ध धर्म की पताकाओं को हाथ में लिए थे, देश के सभी भागों से अंतहीन धाराओं में आकर अहाते में जमा होते जा रहे थे। अहाते में अपना स्थान पाने की प्रतीक्षा में हजारों सड़क के किनारे बैठे थे। हमने पूरे शहर का चक्कर लगाया और हम वहां भी गए। हमने एक के बाद एक जुलूसों को सभा स्थलों की ओर बढ़ते देखा। उस जगह तक पहुंचने के बाद स्वयंसेवकों ने बड़ी कठिनाई से हमारी कार को मंच के पीछे तक पहुंचने का रास्ता बनाया था। मंच से चारों ओर नजर दौड़ाने पर मुझे मानव सिरों के सागर के अतिरिक्त और कुछ दिखाई नहीं पड़ रहा था। पूरा दृश्य वास्तव में हृदय में हिलोरें भरने वाला था। यह अपूर्व था। जीवित स्मृति में इतने विशाल स्तर पर धर्मांतरण कभी नहीं हुआ था। डॉ. अम्बेडकर की सेहत बहुत अच्छी नहीं थी, पर बौद्ध धर्म को ग्रहण करने के कारणों को स्पष्ट करते हुए वह एक घंटे से अधिक तक बोले। वहां एकत्र जनसमूह को स्वयं उन्होंने पंचशील वचन दिए और उसने इन शब्दों को एक स्वर में दोहराया। वो आवाज अवश्य ही काफी दूर तक गई होगी। महाबोधि सोसाइटी की ओर से डॉ. अम्बेडकर को जब मैंने भगवान बुद्ध की प्रतिमा भेंट की और माला पहनाई तो मेरे गालों पर खुशी के आंसू बहने लगे। महाबोधि सोसाइटी को उनमें 70 वर्ष के अपने प्रयास सफल हुए थे।''

डॉ. अम्बेडकर का धर्मांतरण भारत में बौद्ध शासन की पुर्नस्थापना है

''इसी प्रकार से रंगनू, बर्मा के सर्वोच्च न्यायाधीश यू चान ने भी उनके ऐतिहासिक धर्मांतरण के लिए डॉ. अम्बेडकर को हार्दिक बधाई दी, तथा 'बुद्ध और उनका धर्म' के प्रकाशन संबंधी प्रयासों के बारे में सूचित किया। पत्र निम्नलिखित है–

सुप्रीम कोर्ट ऑफ यूनियन ऑफ बर्मा

दिनांक 22 अक्तूबर, 1956

प्रिय डॉ. अम्बेडकर,

अपने उस महानतम योगदान के लिए कृपया मेरी हार्दिक बधाई स्वीकार करें जो आपने भारत में बुद्ध शासन की पुर्नस्थापना करने की दिशा में किया है। इस जयंती वर्ष में आपकी स्मरणीय उपलब्धि के लिए बर्मा के सभी बौद्धों का हृदय उमड़ा पड़ता है। बुद्ध शासन कौंसिल और बर्मा के बौद्ध यह जानकर अत्यधिक प्रफुल्लित हैं कि आपके नेतृत्व में अब बुद्ध के देशवासी उस प्रकाश में आना प्रारंभ कर रहे हैं जिसको बुद्ध ने प्रज्जवलित किया था। हमें विश्वास है कि भारत के सभी भागों में बुद्ध शासन पुर्नस्थापित हो जाएगा।

अपनी ओर से मैं छोटे स्तर पर उसका अनुगमन कर सका हूं जो आपने बर्मा में तीसरे डब्लू.एफ.बी. सम्मेलन के दौरान प्रारंभ किया था। पिछले महीने की 28 तारीख को संगायन ग्रेट केव में आयोजित एक अत्यंत प्रभावोत्पादक समारोह में महाथेराओं की उपस्थिति में लगभग 5,000 तमिलों ने विधिवत बौद्ध धर्म स्वीकार कर लिया। केंद्रीय मंत्री तथा बौद्ध नेता तथा रंगून और बर्मा के अन्य भागों से बहुत–से अन्य तमिल आपकी पहल का अनुसरण करने के लिए जाग्रत किए जा रहे हैं।

आपको पहले नहीं लिख पाने के लिए मुझे आपको बहुत–से स्पष्टीकरण करने हैं और हजारों बार क्षमा मांगनी है। इस बीच मैं छट्ट संगायन तथा विदेशों, विशेषतया जापान में बौद्ध धर्म का प्रचार करने संबंधी गतिविधियों में बहुत व्यस्त रहा हूं। आपको कदाचित यह जानकर प्रसन्नता होगी कि जापान में थेरवाद बौद्ध धर्म की स्थापना के उद्देश्य से एक समिति का गठन करने के लिए मैंने जापान के प्रभावशाली बौद्ध नेताओं को राजी कर लिया है। वहां इस प्रकार जो केंद्र मई 1957 तक स्थापित होने

1 बालिसिंहा, डॉ. अम्बेडकर एंड हिज कंट्रीब्यूशन टु बुद्धिज्म'', इन थॅट्स ऑन डॉ. अम्बेडकर कंपाइल्ड बाई होती लाल निम, सिद्धार्थ एजुकेशन एंड कल्चरल सोसाइटी आगरा, 1969, पृष्ठ 94–95 बुशी डॉ. पृष्ठ 320

जा रहे हैं उनमें लगभग 15 महाथेरा बर्मा से है। मोजी और उसोशिरा में भवन निर्माण कार्य चल रहा है। जापानी समिति का एक प्रतिनिधिमंडल पहले से ही है। यहां और पिछले महीने की 27 तारीख से मेरे साथ प्रतिदिन चर्चा कर रहा है।

जहां तक बौद्ध धर्म पर आपकी रचना के प्रकाशन की लागत में योगदान का संबंध है, मैं आपको पहले ही लिख चुका हूं कि मै। एशिया फाउंडेशन से कोई सहायता प्राप्त न कर सकूंगा। क्योंकि उसके प्रतिनिधि बदल गए हैं। जब आप यहां थे तब जिस प्रतिनिधि ने आपसे बात की थी, उसका मनीला ट्रांसफर हो गया है, और ऐसा लगात है कि नए प्रतिनिधि को इस प्रकार की चीजों में कोई दिलचस्पी नहीं है। मैं आशा कर रहा था कि...

निबंध प्रतियोगिता में चयनित विद्यार्थियों के लिए छात्रवृत्ति के विषय में प्रमुख सदस्यों के साथ मेरा वार्तालाप हुआ है और उन्होंने यह प्रस्ताव सिद्धांततः स्वीकार कर लिया है। मैं चाहता हूं इसलिए आप या श्रीमती अम्बेडकर एक विस्तृत योजना का प्रारूप भेज दें जो काउंसिल के समक्ष प्रस्तुत किया जाएगा। नौ व्यक्ति जिसमें यूनू, मुख्य न्यायाधीश यू थियन मौंग और मैं स्वयं नई दिल्ली जयंती समारोह में आ रहे हैं जिसका निमंत्रण हमें भारतीय जंयती समारोह समिति द्वारा प्राप्त हुआ है। मैं काठमांडू एक दस सदस्य प्रतिनिधि मंडल के साथ बर्मा से चतुर्थ डब्लू एफ बी सम्मेलन में भाग लेने जा रहे हैं। मेरी पत्नी भी मेरे साथ जाएंगी। हम लुम्बिनी से नई दिल्ली आएंगे। इस माह की 22 तारीख को अथवा उसके आस–पास हम नई दिल्ली पहुंच जाएंगे।

कृपया श्रीमती अम्बेडकर और अपने अन्य साथियों को मेरी ओर से शुभकामनाएं प्रेषित करें।

सेवा में

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर
सदस्य, राजसभा, नई दिल्ली
धम्मानुरागी आपका
यू चान हून
जज, सुप्रीम कोर्ट बर्मा संघ रंगून

समय मैं इतने बड़े और यदि मैं यह कह सकूं कि इतने अतिविशालव्यापक विषय पर चर्चा करने के लिए पूरी तरह से तैयार नहीं हूं। इस विषय पर आधी दुनिया का ध्यान लगा है, और मैं जानता हूं कि इसमें बड़ी संख्या में बौद्ध देशों के छात्रों की भी भारी दिलचस्पी है। मामले के इस दूसरे पक्ष को मैं भारी चिंता के

साथ देखता हूं। इन देशों की युवा पीढ़ी अगर यह नहीं समझ पाती कि बौद्ध धर्म द्वारा प्रस्तावित जीवन पद्धति कम्युनिज्म द्वारा प्रस्तुत जीवन पद्धति से बेहतर है, तो बौद्ध धर्म का अंत निश्चित है। यह एक या दो पीढ़ियों से अधिक जीवित नहीं रह सकता है। अतः जो लोग युवा पीढ़ी को नियंत्रित करने के लिए बौद्ध धर्म में विश्वास करते हैं, उनको यह बताना बहुत आवश्यक है कि कम्युनिज्म का स्थान क्या बौद्ध धर्म ले सकता है। बौद्ध धर्म केवल तब ही बने रहने की आशा कर सकता है। हम सबको याद रखना चाहिए कि आज यूरोप के लोगों का विशाल बहुमत और एशिया के युवाओं को विशाल बहुमत कार्ल मार्क्स को ही मसीहा मानता है जिसकी पूजा की जा सकती है। और वे मानते हैं कि बौद्ध संघों को विशाल भाग संकट मात्र है। कार्ल मार्क्स से अपनी तुलना तभी प्रतिस्पर्धा कर सकता है।

उस भूमिका के साथ मैं आपको बौद्ध धर्म और मार्क्सवाद या कम्युनिज्म की मुख्य विशेषताएं बताना चाहूंगा ताकि आप यह देख सकें कि दोनों के बीच समानताएं क्या हैं और अंतर क्या है। और तीसरे, क्या लक्ष्य तक पहुंचने की बौद्ध जीवन पद्धति स्थायी है अथवा क्या लक्ष्य को प्राप्त करने का कम्युनिस्ट मार्ग स्थायी है। क्योंकि उस मार्ग पर चलने का कोई लाभ नहीं जो स्थायी होने नहीं जा रहा है अगर आपको यह जंगल में ले जा रहा है, या अराजकता की ओर ले जा रहा है, तो उस पर चलने का कोई फायदा नहीं। लेकिन अगर आपको विश्वास है कि आपसे जिस मार्ग पर चलने को कहा जा रहा है, वो धीमा है, वो टेढ़ा–मेढ़ा हो सकता है, उसमें लंबे–लंबे घुमाव हो सकते हैं, पर अंततया यह आपको सुरक्षित, ठोस आधार पर ले जाता है, ताकि जिन अन्य आदर्शों का पीछा कर रहे हैं वे वहां आपकी मदद करने, आपके जीवन को स्थायी रूप से ढालने के लिए मौजूद हैं, तो मेरे विचार से, तेजी से ऊपर पड़ने और उस पर चलेन, जिसे हम शॉर्ट कट 'छोटा रास्ता' कहते हैं, की अपेक्षा धीमें, टेढ़े–मेढ़े चक्करदार रास्ते पर चलना बेहतर है। जीवन में शॅर्ट कट हमेशा खतरनाक होते हैं, बहुत खतरनाक। अब मैं विषय पर आता हूं। कम्युनिज्म का सिद्धांत क्या है? यह किससे शुरू होता है? कम्युनिज्म इस सिद्धांत के साथ शुरू होता है कि दुनिया में शोषण है और धनी लोग निर्धनों का शोषण अपनी संपत्ति के कारण करते हैं और आमजन को गुलाम बनाते हैं, और यह गुलामी दुख और दरिद्रता पैदा करती है। कार्ल मार्क्स का यही प्रस्थान बिंदु है। कार्ल मार्क्स इसका क्या इलाज बताते हैं? वह यह कहते हैं कि एक वर्ग की निर्धनता और तकलीफों से बचाने के लिए निजी संपत्ति को समाप्त करना जरूरी है। किसी को निजी संपत्ति नहीं रखनी चाहिए क्योंकि इसका उपयोग या दुरुपयोग निजी मालिक ही करता है। कार्ल मार्क्स की तकनीकी भाषा में, मजदूर जो अतिरिक्त मूल्य पैदा करता है, वो मजदूर को नहीं मिलता। उसको मालिक हड़प लेता है।

कार्ल मार्क्स यह प्रश्न पूछते हैं कि उस अतिरिक्त मूल्य को मालिक को क्यों हड़पा जाना चाहिए जिसको मेहनतकश मजदूर अपनी मेहनत से पैदा करता है? उनका स्तर है कि मालिक केवल राज्य है। और इसी के चलते कार्ल मार्क्स ने उस सिद्धांत का प्रतिपालन किया कि सर्वहारा की तानाशाही होनी चाहिए। यह कार्ल मार्क्स की तीसरी प्रस्थापना है। सरकार शोषित वर्गों की होनी चाहिए, सर्वहारा की तानाशाही का यही अर्थ है। रूस में कम्युनिज्म का आधार कार्ल मार्क्स की ये मूल प्रस्थापनाएं ही हैं। 'निस्संदेह उनका विस्तार भी किया गया है, और उनमें जोड़ा भी गया है, इत्यादि। लेकिन प्रस्थापनाएं ये ही हैं।

आइए अब थोड़ी देर के लिए हम बौद्ध धर्म पर विचार करते और देखते हैं कि कार्ल मार्क्स द्वारा उठाए गए प्रश्नों पर बुद्ध क्या कहते हैं। जैसा कि मैं बता चुका हूं, कार्ल मार्क्स उस बात से शुरू करते हैं जिसे वह गरीबों का शोषण कहते हैं। इस प्रश्न पर बुद्ध का क्या मत है? वह कहां से शुरू करते हैं? अपने धर्म के ढांचे को उन्होंने किस आधारशिला पर स्थापित किया है? बुद्ध ने 2000 या कम से कम 2400 साल पहले ठीक यही बात कही थी। उन्होंने कहा था, ''जगत में दुख है।'' उन्होंने शोषण शब्द का प्रयोग नहीं किया था लेकिन अपने धर्म की आधारशिला उन्होंने उस पर स्थापित की थी जिसे उन्होंने दुख कहा था। जगत में दुख है इसमें कोई संदेह नहीं कि दुख शब्द की व्याख्या अनेक प्रकार से की गई है। इसकी व्याख्या पुनर्जन्म अर्थात् जीवन के अर्थ में की गई है। मैं इससे सहमत नहीं। बौद्ध साहित्य मैं ऐसे बहुत–से स्थान हैं जहां दुख शब्द का प्रयोग निर्धनता के अर्थ में किया गया है। अतः जहां तक आधारशिला का संबंध है वास्तव में कोई भी अंतर नहीं है।

बौद्धों को आधारशिला तक पहुंचने के लिए कार्ल मार्क्स पर जाना जरूरी है। वहां आधारशिला पहले से मौजूद है, और भली–भांति स्थापित थी। बुद्ध अपना पहला प्रवचन, धर्म चक्र प्रवर्तन सूक्त यहीं से शुरू करते हैं। अतः मैं यह कहूंगा कि जो लोग कार्ल मार्क्स के प्रति आकर्षित हैं उनको धर्म परिवर्तन सूकत पढ़ना और यह समझना चाहिए कि इस बारे में बुद्ध क्या कहते हैं। और इस सबंध में आपको काफी संतोष मिलेगा। बुद्ध ने अपने धर्म की आधारशिला न तो ईश्वर पर स्थापित की थी और न ही आत्मा पर अथवा ऐसी किसी अलौकिक वस्तु पर। उन्होंने अपनी उंगली जीवन की इस वास्तविकता पर रखी थी कि लोग दुख में रह रहे हैं। इसलिए जहां तक मार्क्सवाद या कम्युनिज्म का ताल्लुक है, बौद्ध मत में यह सब पर्याप्त है। और यह सब बुद्ध ने मार्क्स के जन्म लेने से 2000 साल पहले कहा था।

हम इसे गुणधर्म का सवाल मानते हैं। आप पाएंगे कि बुद्ध की शिक्षाओं और कार्ल मार्क्स के सिद्धांतों में कहीं कुछ भारी समानता है। कार्ल मार्क्स ने कहा

था कि शोषण रोकने के लिए उत्पादन के साधन अर्थात् संपत्ति का स्वामित्व राज्य के पास होना चाहिए। धरती राज्य की होनी चाहिए, उद्योग पर राज्य का अधिकार होना चाहिए ताकि कोई भी निजी मालिक हस्तक्षेप न कर सके और मजदूर की मेहनत के लाभ को लूट न सके।

आइए अब हम संघ, बौद्ध संघ की बात करें और उन नियमों को देखें जो बुद्ध ने मठवासियों के लिए निर्धारित किए थे। वे नियम क्या थे? बुद्ध ने कहा था कि किसी भी मठवासी की अपनी निजी संपत्ति नहीं होगी। अगर आदर्श की बात करें तो कोई भी मठवासी निजी संपत्ति का स्वामी नहीं हो सकता है। और हालांकि यहां कुछ कमियां हो सकती हैं, और कुछ देशों में मैंने मठवासियों को निजी संपत्ति का स्वामी होते देखा है, पर बहुलांश मामलों में मठवासियों के पास कोई निजी संपत्ति नहीं होती। वास्तव में संघों के लिए बौद्ध नियम उन से कहीं अधिक कड़े हैं जो कम्युनिस्टों ने रूस में बनाए है। मैं इसे एक ऐसे विषय के रूप में लेता हूं जिस पर अभी तक न तो किसी ने चर्चा की है और ना ही कोई निष्कर्ष निकाला है। बुद्ध ने संघों का गठन किस उद्देश्य ये किया था? उन्होंने ऐसा क्यों किया? थोड़ा इतिहास में मुड़ा जाए। बुद्ध जब उस धर्म को प्रसारित करने में लगे थे जिसे आज हम 'परिव्राजक' कहते हैं, तो वो उनसे बहुत पहले से मौजूद था। 'परिव्राजक' शब्द का अर्थ विस्थापित व्यक्ति है जिसने अपना घर खो दिया है। कदाचित आर्य काल के दौरान आर्यों के विभिन्न कबीले एक–दूसरे के विरूद्ध युद्धरत थे जैसा कि सभी जनजातियों में होता है। कुछ छिन्न–भिन्न बचे हुए समूह अपनी भूमि खो बैठे और इधर–उधर भटकने लगे थे। इन्हीं घुमंतुओं को 'परिव्राजक' कहा गया था। बुद्ध ने इन 'परिव्राजकों' को एक निकाय में संगठित किया और जीवन के जो नियम दिए थे वे 'विनयपिटक' में हैं। इन नियमों में भिक्षु को संपत्ति रखने की अनुमति नहीं है। भिक्षु केवल सात वस्तुएं रख सकता है–एक उस्तरा, पानी के लिए लोटा, एक भिक्षापात्र और तीन चीवार और सिलाई के लिए सुई। तो मैं जानना चाहूंगा कि यदि कम्युनिज्म का सार निजी संपत्ति को अस्वीकार करना है तो निजी संपत्ति को लेकर क्या उससे अधिक बड़े और अधिक कड़े नियम हो सकते हैं जो 'विनयपिटक' में मिलते हैं। मुझे ऐसा एक भी नहीं मिलता। इसलिए अगर कोई लोग या युवा कम्युनिस्ट व्यवस्था में निहित नियमों की ओर आकर्षित होते हैं कि कोई निजी संपत्ति नहीं होगी, तो वे इनको यहां पा सकते हैं। प्रश्न केवल यह है कि निजी संपत्ति को अस्वीकार करने के इस नियम को किस सीमा तक पूरे समाज पर लागू किया जा सकता है? यह मामला औचित्य, समय, परिस्थितियों और मानव समाज के विकास का है। परंतु जहां तक सिद्धांत का प्रश्न है निजी संपत्ति को समाप्त करने में यदि कुछ गलत नहीं है तो जो कोई यह करना चाहता है तो बौद्ध धर्म उसके रास्ते में नहीं आता क्योंकि बौद्ध संघों को निर्माण में इसने इसका अनुमोदन पहले से ही कर रखा है।

अब हम विषय के दूसरे पक्ष की ओर बढ़ते हैं और वो यह है कि कम्युनिज्म को लाने के लिए कार्ल मार्क्स या कम्युनिज्म किन उपायों का इस्तेमाल करना चाहते हैं? यह एक महत्वपूर्ण प्रश्न है। कम्युनिज्म जिससे मेरा आशय दुरूख को स्वीकारने और निजी संपत्ति की समापित से है, को लाने के लिए कम्युनिस्ट अपने विरोधी के विरुद्ध हिंसा और हत्या का रास्ता अपनाना चाहते हैं। बुद्ध और मार्क्स के बीच मूलभूत अंतर यही है। सिद्धांत को स्वीकार करने के लिए बुद्ध का तरीका लोगों को समझाने–बुझाने का, नैतिक शिक्षा का और प्रेम का है। वह इस सिद्धांत को आत्मसात कराकर विरोधी को जीतना चाहते हैं कि सब कुछ प्यार से जीता जा सकता है शक्ति से नहीं। मूलभूत अंतर इसी में निहित है कि बुद्ध हिंसा की अनुमति नहीं देते, कम्युनिज्म देते हैं। इसमें संदेह नहीं कि कम्युनिस्टों को सीधे परिणाम मिलते हैं, क्योंकि जब आप लोगों को समाप्त करने के उपाय का सहारा लेते हैं तो वे आपका विरोध करने के लिए बचते ही कहां हैं।

आप अपनी विचारधारा के साथ चलिए, आप काम करने के अपने ढंग से चलिए। जैसा कि मैं कह चुका हूं, बुद्ध का रास्ता लंबा है, और कुछ लोग शायद इसे कठिन कह सकते हैं। लेकिन मुझे कोई संदेह नहीं कि यही सुनिश्चित मार्ग है।

अपने कम्युनिस्ट मित्रों से मैंने हमेशा दो या तीन प्रश्न किए हैं और मैं स्पष्ट कहना चाहता हूं कि वे उनके ऊपर उत्तर नहीं दे पाए। जिसे सर्वहारा की तानाशाही कहते हैं, उसे वे हिंसा के द्वारा स्थापित करते हैं। वे संपत्ति रखने वाले सभी लोगों से उनके राजनीतिक अधिकार छीन लेते हैं। वे विधानसभा में अपना प्रतिनिधि नहीं रख सकते हैं। उनको मत देने का अधिकार नहीं हो सकता है। उनको, जिसे वे कहते हैं राज्य का दूसरे दर्जे का नागरिक शासित बने रहना पड़ेगा, और उनकी सत्ता में कोई भागीदारी नहीं हो सकती है। जब मैंने उनसे पूछा, ''क्या आप मानते हैं कि तानाशाही लोगों पर शासन करने का अच्छा तरीका है।'' तब वे कहेंगे, ''नहीं! हम तानाशाही पसंद नहीं करते।'' तब हम पूछेंगे, ''फिर आप इसकी इजाजत क्यों देते हैं?'' लेकिन वे कहते हैं, ''यह अंतरिम काल है जिसमें तानाशाही का होना जरूरी है।'' आप आगे बढ़ते और पूछते हैं, ''आपके इस अंतरिम काल की अवधि क्या है? कितना लंबा चलेगा यह काल? बीस साल? चालीस साल? पचास साल?'' कोई उत्तर नहीं। वे बस यह दोहराते रहते हैं कि सर्वहारा की तानाशाही किसी तरह से अपने आप गायब हो जाएगी।

''ठीक है हम मान लेते हैं कि तानाशाही समाप्त हो जाएगी? फिर इसका स्थान कौन लेगा? क्या लोगों को किसी न किसी तरह की सरकार की जरूरत नहीं होगी।'' इसका उनके पास कोई उत्तर नहीं होता। हम बुद्ध पर फिर वापस लौटते हैं

और यह प्रश्न उनके धर्म (धम्म) के संबंध में पूछते हैं। वह क्या कहते हैं? बुद्ध का एक महानतम काम विश्व को यह बताना रहा है कि विश्व को लोगों की सोच को, विश्व की सोच को बदले बिना विश्व को सुधारा नहीं जा सकता है। अगर सोच बदल जाती है, अगर मस्तिष्क कम्युनिस्ट व्यवस्था स्वीकार कर लेता है और इससे निष्ठापूर्व प्राप्त करता तथा इसे लागू करता है, तब यह एक स्थायी चीज होगी। व्यक्ति को व्यवस्था में रखने के लिए इसे सिपाही या पुलिस अफसर की जरूरत नहीं पड़ेगी। क्यों? उत्तर यह है बुद्ध ने अपनी चेतना को उर्जित कर दिया है जो आपको आपके मार्ग पर रखने के लिए प्रहरी के रूप में काम कर रहा है। जब आपका मस्तिष्क बदल जाता है तो कोई समस्या नहीं होती, चीच स्थायी बन जाती है।

कम्युनिस्ट व्यवस्था बल पर आधारित है। कल्पना करिए कि रूस में कल तानाशाही विफल हो जाती है, और हमें इसकी विफलता के संकेत दिखाई पड़ते हैं, तब क्या होगा? मैं सच को ही जानना चाहता हूं कि कम्युनिस्ट व्यवस्था का क्या होगा? मुझे यह दिखता है कि राज्य की संपत्ति को हड़पने के लिए रूसियों में खूनी जंग होगी। इसका यही परिणाम होगा। क्योंकि कम्युनिस्ट व्यवस्था को उन्होंने स्वेच्छा से स्वीकार नहीं किया है। वे इसका पालन कर रहे हैं। क्योंकि उनको फांसी पर चढ़ाए जाने का डर है। ऐसी व्यवस्था जड़ें नहीं जमा सकती हैं। इसलिए मैं मानता हूं कि जब कम्युनिस्ट इन प्रश्नों का उत्तर ही नहीं दे पाते, तो उनकी व्यवस्था का क्या होगा? जब बल गायब हो जाता है, तब उस पर काम करने का कोई लाभ नहीं। क्योंकि अगर मस्तिष्क आश्वस्त नहीं तो हमेशा बल की जरूरत होगी। और निष्कर्ष के तौर पर मैं यह कहना चाहता हूं कि बौद्ध धर्म की एक सबसे महान चीज यह है कि इसकी व्यवस्था जनतांत्रिक है। जब अजातशत्रु का प्रधानमंत्री बुद्ध से यह कहने गया कि अजातशत्रु वज्जियों पर विजय प्राप्त करना चाहता है, तब उन्होंने कहा कि राजा तब तक ऐसा नहीं कर पाएगा जब तक वज्जी अपनी युगों पुरानी व्यवस्था का पालन करते रहते हैं। कुछ अज्ञात कारणों से बुद्ध ने स्पष्ट शब्दों में नहीं बताया कि इसका अर्थ क्या है, लेकिन इसमें कोई संदेह नहीं कि वह वज्जी सरकार के जनतांत्रिक और गणराज्य रूप की ओर इशारा कर रहे थे। उन्होंने कहा था जब तक वज्जी अपनी व्यवस्था का अनुसरण कर रहे हैं, वे अपराजेय रहेंगे। निस्संदेह बुद्ध एक महान जनवादी थे।

इसलिए मैं कहता हूं और यदि अध्यक्ष मुझे अनुमति दें, तो मैं कहना चाहूंगा कि मैं राजनीति का एक विद्यार्थी रहा हूं, मैं अर्थशास्त्र का विद्यार्थी रहा हूं और अर्थशास्त्र का प्रोफेसर था, और कार्ल मार्क्स तथा कम्युनिज्म का अध्ययन करने में बहुत समय लगाया है और बौद्ध धर्म के अध्यय में भी काफी समय लगाया है। इन

दोनों की तुलना करने के बाद मैं इस निष्कर्ष पर पहुंचा हूं कि विश्व की महान समस्या, अर्थात् दुख के संबंध में बुद्ध की सलाह यह है दुख को समाप्त किया जाना चाहिए, और कि बुद्ध की पद्धति सबसे सुरक्षित और विश्वस्त थी। अतः बौद्ध देशों की युवा पीढ़ी को मैं यह सलाह देना चाहूंगा कि उनको बुद्ध की वास्तविक शिक्षाओं पर अधिक ध्यान देना चाहिए। निष्कर्ष के तौर पर यदि मैं यह कहूं कि बौद्ध देश में धर्म को यदि कोई संकट आता है, तो उसका दोष भिक्षुओं को देना चाहिए, क्योंकि व्यक्तिगत रूप से मैं यह सोचता हूं कि वे अपने कर्तव्य का पूरी तरह से पालन नहीं कर रहे हैं। प्रवचन कहां है? अपना भोजन करते हुए, निस्संदेह एक ही बार करते हुए भिक्षु अपने विहार में रह रहा है और चुपचाप बैठा है। वह संभवतया पढ़ रहा है, और अधिक संभावना यह है कि उसे सोते हुए पाता हूं, और शाम को थोड़ा संगीत श्रवण का अवसर आता है। धर्म के प्रचार–प्रसार का यह तरीका नहीं।

मेरे मित्रों मैं आपसे यह कहना चाहता हूं कि मैं किसी की आलोचना करना नहीं चाहता, लेकिन यदि धर्म समाज के पुनरूत्थान के लिए नैतिक शक्ति है तो आपको इसे लोगों के कानों में डालते रहना चाहिए। बच्चे को स्कूल में कितने दिन और कितना समय बिताना पड़ता है? आप बच्चे को एक दिन स्कूल भेजकर दूसरे दिन घर पर बिठा लेते हैं और फिर यह आशा करते है। कि पढ़ाई में आगे बढ़ जाएगा और शिक्षित हो जाएगा। बच्चे को हर स्कूल जाना होता है, पांच घंटे तक वहां बैठना होता है और लगातार पढ़ना–लिखना पड़ता है। केवल और केवल तब ही बच्चा उससे संतृप्त हो पाता है जिसे ज्ञान कहा जाता है, शिक्षा कहा जाता है। यह मठ कोई राज्य नहीं है। मैंने कभी नहीं देखा कि भिक्षु लोगों को मठों में किसी एक दिन बुलाकर किसी समय प्रवचन या नैतिक शिक्षा देते हों।

मैं श्रीलंका गया और लोगों से कहा कि मैं खासतौर पर यह देखने को उत्सुक हूं कि भिक्षु किस तरह से प्रवचन देते हैं। उन्होंने कहा कि उनके पास बन है। वे बन शब्द का इस्तेमाल करते हैं, जिसका अर्थ मुझे बाद में पता चला कि 'वनक' है। 11 बजे से मुझे एक स्थान पर, एक छोटी–सी चौकोर, इस मेज जितनी बड़ी चीज पर ले गए और मैं जमीन पर बैठ गया। एक भिक्षु अंदर बुलाए गए। अनेक महिलाएं और पुरुष पानी लाए और उसके पांव धोए, और फिर वह उठा और वहां बैठ गया। उसके पास एक पंखा था। भगवान ही जानता है कि उसने क्या कहा। निश्चित है कि उसने प्रवचन सिंहली में ही दिया होगा। यह दो मिनट से ज्यादा नहीं चला और दो मिनट के बाद वह चला गया।

आप ईसाइ चर्च में जाइए, वहां क्या होता है? लोग वहां हर सप्ताह जमा होते हैं। वे उपासना करते हैं, और एक पादरी बाइबिल के विषय पर प्रवचन करता

है। यह लोगों को याद दिलाने के लिए किया जाता है कि ईसा मसीह ने उनसे क्या करने को कहा था। आपको शायद ताज्जुब होगा कि 90 फीसदी ईसाइयत, सार और रूप दोनों में, बौद्ध धर्म की नकल है। आप रोम जाकर प्रधान चर्च को देखिए और आपको बेरूत के उस विशाल मंदिर की याद आएगी जिसे 'विश्व कर्म' के नाम से जाना जाता है। विशाबिग्ने ने, जिन्होंने बौद्ध धर्म पर एक पुस्तक लिखी थी और चीन में प्रचारक थे, इस पर बड़ा आश्चर्य व्यक्त किया था कि बौद्ध और ईसाई धर्म के बीच यह समानता क्यों है। जहां तक दृष्टिकोण का प्रश्न है, उन्होंने यह कहने का साहस नहीं किया कि बौद्धों ने ईसाइयों की नकल की, परंतु उन्होंने यह भी स्वीकार नहीं किया कि ईसाइयों ने बौद्धों की नकल की। मेरे विचार से समय आ गया है कि बौद्ध लोगों के बीच अपने धर्म का प्रचार करने के लिए हम ईसाइयों के कुछ तरीकों की नकल करें। उनको पता रहना चाहिए कि बुद्ध का धर्म हर समय, हर दिन मौजूद है, उनके साथ एक पुलिस के सिपाही की तरह उनकी सुरक्षा के लिए खड़ा है कि कहीं वे गलत रास्ते पर न चले जाएं। उसके बिना यह धर्म शायद बहुत पतन की स्थिति में रहेगा। मैं पाता हूं कि बौद्ध देशों तक में इसकी स्थिति बहुत जीर्ण–शीर्ण है। लेकिन इसके प्रभाव को लेकर कोई संदेह नहीं है।

अंत में मैं आपको एक बहुत दिलचस्प चीज बताना चाहूंगा जो मैंने बर्मा में देखी थी। मैं बर्मा गया था जहां मुझे एक सम्मेलन में भाग लेने के लिए बुलाया गया था। वे मुझे यह दिखाने ले गए कि वे गांवों का किस तरह से पुनर्निर्माण करने जा रहे हैं। मैं बहुत खुश था। उनके साथ मैं उन गांवों में गया जिनकों उन्होंने सुधारने की योजना बनाई थी उनकी गलियां हमेशा की तरह बदसूरत, यहां–वहां मुड़ी हुई थी। कुछ भी व्यवस्थित नहीं था। इसलिए कमेटी ने लोहे के खंभे गाड़ दिए और लाइन में रस्सियां लगा दी कि यह सड़क इस ओर से निकलनी चाहिए। बहुत सारे मामलों में पाया कि कमेटी द्वारा खींची गई लाइनें जमीन के उस एक टुकड़े से होकर जाती थीं जो किसी व्यक्ति का था। जब मैं वहां गया और और वहां देखकर पूछा, ''वे इसका इंतजाम कैसे करेंगे? जिस जमीन को आप लेने जा रहे हैं, क्या आपके पास उसका भुगतान करने के पैसे है?'' उन्होंने कहा, ''किसी को पैसा नहीं चाहिए। हर किसी ने कहा यदि आप चाहते हैं, इसे ले लें।'' ऐसा क्यों, जबकि मेरे देश में यदि आप हरजाना दिए बगैर किसी की जमीन का एक टुकड़ा भी लेते हैं तो खूनखराबा हो जाता है। लेकिन यहां ऐसा क्यों? बर्मा लोगों को अपनी संपत्ति की इतनी फिक्र क्यों नहीं। वे इसकी परवाह क्यों नहीं करते? कारण यह है कि बुद्ध ने 'सर्वम अनित्यम' की शिक्षा दी है। जो कुछ आप देखते हैं, अस्थायी है। अस्थायी चीजों के लिए क्यों लड़े? अगर आप चाहते हैं, तो लीजिए जमीन।

आप देवियों और सज्जनों मैं अब भाषण जारी नहीं रखूंगा और ऐसा करने की जरूरत भी नहीं है। मैं आपको देखने का दृष्टिकोण भर देना चाहता था। कम्युनिस्ट सफलता के बहकावे में यह आए। मुझे पूरा विश्वास है कि हम सब यदि बुद्ध के दसवें भाग के बराबर प्रबोधित हो जाएं, तो हम प्रेस, न्याय और सदेच्छा के द्वारा वे ही परिणाम प्राप्त कर सकते है। बहुत–बहुत धन्यवाद।[1]

1 विश्व बुद्धिस्ट के फेलोशिप को चौथी सम्मेलन की रिपोर्ट काठमांडू, नेपाल

परिशिष्ट–1

डॉ. बी.आर. अम्बेडकर द्वारा धर्मांतरण की घोषणा पर गांधीजी का लेख

हरिजन में 26 अक्तूबर, 1935 को ऑन इट्स लास्ट लेग, शीर्षक से प्रकाशित इस लेख में गांधीजी ने बताया था :–

''कुछ आलोचक यह कहने से हिचके नहीं है कि डॉ. अम्बेडकर की यह धमकी कि एक हिंदू के तौर पर मरने के बजाए वह किसी अन्य धर्म को स्वीकार कर लेंगे, के उत्तर में मेरे यह दावा करना निरर्थक था कि कविथा के बावजूद, छुआछूत अपने अंतिम चरण में है। वास्तव में मेरे दावे का समर्थन कविथा स्वयं करती है। कविथा अपने जन्म से तब तक शांतिपूर्वक रहती रही है, जब तक कि अपनी सीमाओं को न जानते हुए किसी अति उत्साही कार्यकर्ता ने कविथा हरिजनों को अपने बच्चों को स्थानीय स्कूलों में भेजने की चुनौती नहीं दे डाली, हालांकि वह जानता था कि कुछ सवर्ण उसका विरोध करेंगे। दूसरी जगहों की तरह उसने यहां भी आशा की थी कि हरिजन अपने बच्चों को सार्वजनिक स्कूलों में भेजने के अपने अधिकार की रक्षा करेंगे। लेकिन कविथा सवर्णों ने यह दिखाया कि वे समय की भावना को मान्यता नहीं देते।

''कुछ वर्ष पहले तक कविथा की घटना पर किसी का ध्यान नहीं जाता! तब केवल थोड़े–से सुधारक थे। ये थोड़े–से अधिकतर कस्बों और शहरों में मिलते थे। अब भगवान की कृपा से उनकी संख्या बढ़ रही है और अब वे प्रत्येक गांव में मिलते हैं। लेकिन कुछ पहले हरिजनों को किसी भी हालत में छुआछूत का विरोध करने को प्रेरित नहीं किया जा सकता था। सवर्णों की ही तरह यही भी उनकी आस्था का अंग था। इन स्तंभों में छुआछूत के खिलाफ अभियान की साप्ताहिक प्रगति के पर्याप्त प्रमाण हैं। हालांकि असाधारण प्रगति हुई है, पर कविथा और ऐसी ही घटनाओं से प्रदर्शित होता है कि अनेक स्थानों पर इसका प्रभाव अधिकांश सवर्णों पर नहीं पड़ा है। यह तथ्य सुधारकों तथा हरिजनों के लिए चेतावनी है कि सवर्णों के कठोर हृदयों को पिघलाने के लिए अभी बहुत कुछ किया जाना है।

''आगे यह कहा जाना चाहिए कि कविथा त्रासदी को समाने लाने और उसे अखिल भारतीय महत्व देने का काम सवर्ण सुधारकों ने ही किया था। मैंने सवर्ण चेतना को हरिजनों के क्रोध से अधिक आंदोलित किया है। मुझे शर्म और दुख के

साथ यह नोट करना पड़ता है कि अब कविथा के हरिजन अपने अधिकारों के लिए आंदोलन नहीं करना चाहते हैं। उनकी सहायता करने के तमाम प्रस्तावों के बावजूद वह कविथा नहीं छोड़ेंगे। ईमानदारी के साथ मेहनत करके कहीं दूसरी जगह अपनी रोजी–रोटी कमाना केवल कुछ के लिए आसान है। सुधारकों ने अपनी सुरक्षा में उनको कविथा छोड़ने को प्रेरित करने के जो प्रयास किए थे, वे असफल रहे है।

''धर्म की जन्मजात अपर्याप्तता के चलते नहीं, बल्कि उसके अनेक अनुयायियों के विवेकहीन पूर्वाग्रहों के कारण, यदि धर्मांतरण सही हो तो भी वर्तमान उदाहरण में यह उस उद्देश्य को विफल कर सकता है जिसकी यह सेवा करना चाहता है। डॉ. अम्बेडकर जैसे साहसी लोगों के अलग होने से हरिजनों की प्रतिरक्षाएं केवल कमजोर पड़ती है। हम जानते हैं कि गैर–हिंदू हरिजन, चाहे वह कितना ही प्रतिष्ठित क्यों न हो, हिंदू हरिजनों की मदद नहीं कर पाएगा। अपने अपनाए हुए धर्म में वे अब भी बहुत अलग हैं। भारत के लोगों पर भारतीय प्रकार की छुआछूत का इतना अधिक प्रभाव है।

'' डॉ. अम्बेडकर के क्रोध से सुधारक को निरुत्साह नहीं होना चाहिए, उसको और अधिक प्रयास करने चाहिए। क्योंकि जहां यह सही है कि छुआछूत विरोधी कार्यकताओं की संख्या में भारी वृद्धि हुई है, वही इसमें कोई संदेह नहीं कि युगों के पूर्वाग्रहों पर काबू पाने के लिए यह संख्या अब भी बहुत छोटी है। फिर भी कोई भी अभियान, जिसने छुआछूत विरोधी अभियान का आकार ले लिया है, और जिसमें छोटी–सी भी अप्रिय घटना सारी दुनिया का ध्यान खींच सकती हो, तो केवल अपने अंतिम चरण में ही हो सकता है। मानवता अब और अधिक समय तक दुख नहीं झेल सकती है।''[1]

21 मार्च, 1936 के हरिजन में प्रकाशित लेख में बापूजी के विचार :

''डॉ. अम्बेडकर ने धर्मांतरण की धमकी के रूप में हिंदू समाज के बीच जब से एक बम–सा फेंक दिया है, उनको प्रस्तावित कदम उठाने से रोकने के लिए जबरदस्त कोशिशें की जा रही है। डॉ. अम्बेडकर की धमकी का प्रभाव उन हरिजनों पर भी पड़ा है जो साक्षर हैं और अखबार पढ़ सकते हैं। उन्होंने पदों, वजीफों या ऐसी ही मांगों के साथ हिंदू संस्थाओं या सुधारकों से बात करना शुरू कर दिया है। और उनके साथ यह लिखा है कि उनकी मांग को अस्वीकार किए जाने की स्थिति

---

1 भारत सरकार, महात्मा गांधी की संकलित रचनाएं, प्रकाशन, विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली, खण्ड एलएक्स 11, पृष्ठ 64–65 पुनमुर्दित विस. डॉ. पृष्ठ 299–301

में लेखक दूसरा धर्म अपनाने को मजबूर होगा, क्योंकि उस धर्म के प्रतिनिधियों की और सहायता का प्रस्ताव किया गया है।

इसमें कोई संदेह नहीं कि ये धमकियां मजबूत हैं और उनके लिए चिंता का विषय है जो अपने पुरखों के धर्म का जरा खयाल करते हैं। लेकिन जो लोग हिंदूवाद से, या इस मायने में किसी भी धर्म से अपनी आस्था खो चुके हैं, उनके साथ समझौता करने से कुछ हासिल होने वाला नहीं। धर्म लेन–देन का मामला नहीं। यह तो व्यक्ति पर निर्भर करता है कि वह किस धर्म का होकर रहना चाहता है। वह उसको किसी भी आकार या रूप में नहीं खरीदता। या इस प्रकार की अभिव्यक्ति का प्रयोग आत्मा की वस्तुओं के संबंध में किया जा सकता है, तो धर्म केवल अपने रक्त से खरीदा जा सकता है। अतः यदि कोई हरिजन हिंदू धर्म को छोड़ना चाहता है तो वह ऐसा करने के लिए पूरी तरह से स्वतंत्र है।

''सुधारक को अपना हृदय टटोलने की जरूरत है। धर्म छोड़ने का कारण क्या उसका अपना या उसके पड़ोसियों का व्यवहार है? अगर यह है, और अगर अनुचित पाया जाता है तो उसे (व्यवहार को) बदलना चाहिए।

यह एक स्वीकृत तथ्य है कि अपने आपको सनातनी कहलाने वाले बहुत अधिक हिंदुओं का व्यवहार सारे भारत में हरिजनों के लिए परेशानी और उत्तेजना का कारण है। आश्चर्य यह है जितने हरिजनों ने हिंदू धर्म छोड़ दिया है, उससे कहीं ज्यादा ने क्यों नहीं छोड़ा है? इससे पता लगता है कि हिंदू धर्म के प्रति या इसके अंतर्निहित गुणों के प्रति उनकी निष्ठा का, कि उसी धर्म का नाम पर समानवीयताएं झेलने के बावजूद दसियों लाख हरिजन उसी से चिपके हुए है।

हरिजनों की यह अद्भुत निष्ठा और उनका असाधरण धैर्य प्रत्येक सवर्ण हिंदू के लिए यह देखना आवश्यक बनता है कि हरिजनों के साथ वही व्यवहार होता है जो अन्य हिंदुओं के साथ होता है। इसलिए सवर्णों के सामने रास्ता एक ओर तो यह है कि जो हरिजन हिंदू धर्म को छोड़कर जाना चाहते हैं उनको नौकरी या वजीफे की शक्ल में रिश्वत देने की पेशकश करके जाने से रोकने की कोशिश करें, और दूसरी ओर इस बात पर जोर दें कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हरिजनों के साथ न्याय किया जाता है। वास्तव में सुधारक को हरिजनों की आवश्यकताओं को पहले से समझना चाहिए और उनकी शिकायत तक इंतजार नहीं करना चाहिए। छुआछूत मिटाने के लिए सबसे बड़ी संस्था हरिजन सेवक संघ है। यह यथासंभव हरिजनों को नौकरी देता है। हरिजन जिन नौकरियों के उपयुक्त हैं और जिनके लिए वे अपने को प्रस्तुत करते हैं, आमतौर पर ऐसी नौकरियों की कोई कमी नहीं है।

हजारों हरिजनों के सामने सबसे बड़ी परेशानी पीने और घर के इस्तेमाल के लिए साफ पानी के अभाव की, सार्वजनिक स्कूलों तथा अन्य संस्थाओं में प्रवेश ने मिलने और गांवों में लगातार दुखी किए जाने के साथ–साथ अंत में उपासना के मंदिरों में घुसने से इनकार किए जाने को लेकर है। ये असमर्थताएं हरिजनों के विशाल बहुमत के जीवन की कठोर सच्चाइयां हैं। अगर वे हिंदू धर्म को समूह के तौर पर छोड़ते हैं, तो वे ऐसा उन आम असमर्थताओं के चलते करेंगे जो उन पर हिंदू समाज के कोड़ियों की छाप लगाती हैं। हिंदू धर्म एक भयंकर अग्नि परीक्षा से गुजर रहा है। इसका विनाश व्यक्तिगत धर्मांतरण से नहीं, सामाजिक धर्मांतरणां से भी नहीं, बलिक तथाकथित सवर्ण हिंदुओं के द्वारा हरिजनों को प्राथमिकता न्याय से अधर्मी रूप से वंचित रखने के कारण होगा। अतः धर्मांतरण की प्रत्येक धमकी सवर्णों के लिए एक चेतावनी है कि अगर वे समय रहते नहीं जागते तो बहुत देर हो जाएगी।

''एक शब्द अधीर और अभावग्रस्त हरिजनों से। हिंदू संस्थाओं या व्यक्तियों से सहायक प्राप्त करने के लिए मिलते समय उनको धमकियों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। उनको अपने मामले की शक्ति पर भरोसा करना चाहिए जो सुनवाई की मांग करता है। हरिजनों के बहुमत को यह नहीं पता कि धर्म परिवर्तन का क्या अर्थ हो सकता है? वे चुपचाप उस सतत अधोगति को झेलते रहते हैं जिसे अपने स्वार्थ को पूरा करने के लिए उन पर थोप दी गई है। वे चाहे शिकायत करें अथवा नहीं, हिंदू सुधारकों को उनका ध्यान रखना चाहिए। जो अधोगति को जानने तथा महसूस करने के लिए प्रबुद्ध और यह जानते हैं कि धर्म परिवर्तन का क्या अर्थ है, वे या तो बहुत भले हिंदू हैं जो अपने पूर्वजों के धर्म को छोड़ नहीं सकते हं और वे हर प्रकार की सहायता के योग्य हैं, या व हं जो धर्म के प्रति उदासीन हैं और हिंदू धर्म में बने रहने के बदले सवर्ण हिंदुओं से किसी मदद का दावा नहीं करते। अतः मैं प्रबुद्ध हरिजनों से उनकी अपनी खातिर यह आग्रह करूंगा कि धर्मांतरण की धमकी के नीचे वे भौतिक लाभ नहीं ढूंढें। और जबकि सुधारकों को किसी भी धमकी के आगे किसी हालत में नहीं झुकना चाहिए, उनको सवर्ण हिंदुओं के हाथों हरिजनों के लिए न्याय दिलाने का निरंतर प्रयास करते रहना चाहिए।''[1]

---

1 भारत सरकार, महात्मा गांधी की संकलित रंचनाएं, प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, नई दिल्ली खण्ड एलएक्स 11, पृष्ठ 281 पुनमुर्दित पृष्ठ 306–308

परिशिष्ट—II

समता सैनिक दल का संविधान

सैनिक की शपथ[1]

मैं, अनुसूचित जाति समुदाय का एक सदस्य समता सैनिक दल में प्रवेश कर रहा हूं, और यह शपथ लेता तथा सत्यनिष्ठा से सौगंध खाता हूं कि अपने वर्ग को उत्पीड़न, शोषण और दासता से मुक्त कराने के महत् उद्देश्य में मैं एक सम्मानित साहसी, अनुशासित और योद्धा बना रहूंगा।

अपने वर्ग एवं समुदाय के न्यायोचित तथा मानव अधिकारों की रक्षा के लिए सं.सै.द. के आदेश पर आगे बढ़ने के लिए मैं सदा तैयार रहूंगा।

इस शपथ को यदि मैं अपनी कमजोरी, कायरता या बुरी नीयत से तोड़ता हूं या अपने लोगों के हितों के साथ विश्वासघात करता हूं, तो मैं दल के द्वारा पूरा दंड सहन करने को तैयार हूं।

समता सैनिक दल का संविधान
नाम और संगठन

(1) संगठन का नाम 'समता सैनिक दल' होगा, जिसका उल्लेख उसके आगे एसएसडी के तौर पर किया जाएगा।

---

1 समता सैनिक दल का एक सम्मेलन 30 जनवरी, 1944 को कानपुर में आयोजित हुआ था। सम्मेलन के अध्यक्ष श्री बी.के. गायकवाड थे, जिसमें डॉ. अम्बेडकर भी मौजूद थे और उन्होंने सम्मेलन को संबोधित भी किया था। सम्मेलन में कुछ प्रस्ताव पारित किए गए थे। छठे प्रस्ताव के अनुसार बी. के. उर्फ दादासाहेब गायकवाड की अध्यक्षता में सैनिक एकता दल का संविधान बनाने के लिए एक समिति का गठन किया गया था। समिति के अन्य सदस्य श्री एम.ए. ससालेकर, एस.टी. जाधव, आर.आर. पाटिल, के.एन. वाल्मिकी, ए.एम. कोस्तरे, पी.एल. लिलिंगकर थे। (जनता दिनांक 6 जनवरी, 1945)
तदनुसार श्री बी. के. गायकवाड़ ने 8 दिसम्बर, 1944 को संविधान का प्रारूप डॉ. बी.आर. अम्बेडकर को भेजा (खामरमोद, खण्ड 9, पृष्ठ 405) जो डॉ. बी. आर. अम्बेडकर को 13 दिसम्बर, 1944 को मिला। डॉ. बी. आर. अम्बेडकर ने पत्रा प्राप्ति को इन शब्दों के साथ स्वीकार किया, ''मुझे आपका पत्र और समता सैनिक दल के संविधान की प्रति भी मिल गई है।''
(वही पृष्ठ 407)

(2) समता सैनिक दल अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन से संबद्ध होगा। फेडरेशन की कार्य समिति की सलाह फेडरेशन का अध्यक्ष फेडरेशन का एक प्रतिनिधि नामांकित करेगा जिसका काम प्रत्येक शहर और प्रांत में समता सैनिक दल के कामकाज की देखरेख करना होगा, और प्रत्येक शहर तथा प्रांत में समता सैनिक दल एक निरीक्षक के मार्गदर्शन में काम करेगा जिसको इसी प्रकार से नियुक्त किया जाएगा।

लक्ष्य एवं उद्‌देश्य :

(1) समता सैनिक दल का लक्ष्य नस्ल, जाति, लिंग अथवा वर्ग पर आधारित हर प्रकार की असमानता को दूर करने तथा स्वतंत्रता एवं सबकी समानता पर आधारित समाज का निर्माण करने के उद्‌देश्य से संघर्ष करने के लिए अनुसूचित जाति समुदायों के सभी सदस्यों को एकजुट करना है।

(2) इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए

(i) समता सैनिक दल अपने झंडे के नीचे अनुसूचित जाति के युवाओं को एकजुट और संगठित करेगा।

(ii) समता सैनिक दल अनुसूचित जातियों और विशेष तौर पर युवाओं के बीच सामाजिक, सांस्कृतिक तथा अन्य गतिविधियों को बढ़ावा देगा ताकि उनके मस्तिष्कों में आत्मसम्मान, आत्मनिर्भरता और आत्म बलिदान की भावना को मन में उतारा जाए।

(iii) समता सैनिक दल ऐसे सभी संगठनों और आंदोलनों से सहयोग करेगा जो उसके लक्ष्यों और उद्‌देश्यों को आगे बढ़ाने में सहायक हों।

(3) सदस्यता

अनुसूचित जाति का 18 वर्ष की आयु से अधिक का कोई भी व्यक्ति जो उपरोक्त लक्ष्यों एवं उद्‌देश्य को मानता हो, वह बारह आने प्रतिवर्ष का चंदा देकर समता सैनिक दल का सदस्य बन सकता है।

(4) प्रशिक्षण

(i) समता सैनिक दल के प्रशिक्षण में शारीरिक, बौद्धिक और सैनिक प्रकार का प्रशिक्षण होगा।

(ii) समता सैनिक दल समय–समय पर और आवश्यकतानुसार प्रशिक्षण,

शिविरों, स्कूलों, क्लबों, कक्षाओं, भाषणों, वाद–विवादों तथा पुस्तकालयों तथा अन्य प्रकार की गतिविधियों का आयोजन एवं संगठन करेगा।

(iii) अखिल भारतीय समता सैनिक दल की शाखाएं भारत के सभी प्रांतों में काम करेंगी और जहां भी संभव होगा इसकी शाखाएं भारतीय राज्यों में भी खोली जाएंगी।

प्रत्येक प्रांतीय शाखा अपनी समितियों का गठन करेगी और प्रत्येक जिला कमेटी शहर और ग्राम समितियों की।

(iv) समता सैनिक दल की शहर या गांव की समिति, अपनी श्रेणी के हिसाब से 5 सदस्यों की शहर या ग्राम समिति, एक अध्यक्ष, दो सचिवों के साथ–साथ जिला सम्मेलन के लिए अपने बीच से प्रतिनिधियों का चयन करेगी जो इस ढंग से किया जाएगा।

एक से पच्चीस सदस्यों पर एक प्रतिनिधि, पच्चीस से पचास सदस्यों पर–दो प्रतिनिधियों और इसी अनुपात में आगे।

जिला सम्मेलन 10 सदस्यों की एक जिला समिति, एक अध्यक्ष और दो सचिवों के अलावा अपने बीच से उनके पदों के अनुसार प्रांतीय सम्मेलन के लिए निम्न प्रकार से प्रतिनिधियों का चयन करेगा। जिला सम्मेलन के लिए 5 प्रतिनिधि और 1 प्रतिनिधि प्रांतीय सम्मेलन के लिए। पांच से अधिक और दस तक की संख्या में जिला प्रतिनिधियों के लिए प्रांतीय सम्मेलन के लिए दो प्रतिनिधि इत्यादि।

(vi) अपनी श्रेणी के हिसाब से प्रत्येक सम्मेलन एक बीस सदस्यीय प्रांतीय समिति, एक अध्यक्ष, दो सचिवों के साथ–साथ अखिल भारतीय सम्मेलन के लिए प्रतिनिधियों का भी चयन करेगी। अखिल भारतीय सम्मेलन के लिए ऐसे सदस्यों की संख्या प्रत्येक प्रांत की कुल सदस्य संख्या की 5 से अधिक नहीं होगी।

(vii) समता सैनिक दल का अखिल भारतीय सम्मेलन एक अखिल भारतीय परिषद का चयन करेगा जिसमें एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष, एक महामंत्री, दो संयुक्त मंत्री, और प्रत्येक प्रांत से अखिल भारतीय केंद्रीय समिति द्वारा चयनित एक सदस्य होगा।

(viii) अखिल भारतीय समता सैनिक दल से संबद्ध सभी प्रांतीय इकाइयां अखिल भारतीय समता सैनिक दल को 25 रु. प्रतिवर्ष के हिसाब से संबद्धता शुल्क, और अपनी कुल वार्षिक आय का 5 अदा करेंगी।

(ix) समता सैनिक दल का अखिल भारतीय सम्मेलन प्रत्येक वर्ष में कम से कम एक बार आयोजित किया जाएगा।

5. संरचना :

(i) 12 (बारह सैनिक—एक अनुभाग)

एक अनुभाग का निर्माण बारह सैनिकों का दल करता है। प्रत्येक अनुभाग के दो निर्वाचित सदस्यों को प्रथम और द्वितीय अनुभाग प्रमुख कहा जाएगा।

(ii) 24 (2 अनुभाग—एक प्लाटून) इस प्रकार के दो अनुभाग एक प्लाटून का निर्माण करते हैं। अनुभाग द्वारा निर्वाचित प्लाटून प्रमुख प्लाटून कहा जाएगा।

(iii) 96 (चार प्लाटून——एक कम्पनी) इस प्रकार के चार प्लाटून नायकों द्वारा निर्वाचित प्रमुख कम्पनी कमांडर कहा जाएगा।

(iv) 384 (चार कम्पनी कमांडर एक बटालियन) बटालियनों के कम्पनी कमांडरों द्वारा निर्वाचित प्रमुख प्रमुख लेफ्टीनेंट कहा जाएगा।

(v) 1152 (तीन बटालियनों—एक रेजीमेंट) इस प्रकार की तीन बटालियनें एक रेजीमेंट का निर्माण करेंगी। लेफ्टीनेंटों द्वारा निर्वाचित प्रमुख जी. ओ.सी. कहा जाएगा।

(6) सभी जिलों और प्रांतों के ऐसे सभी 2500 जी.ओ.सी. एक डिवीजन का निर्माण करेंगे। इस डिवीजन के निर्वाचित प्रमुख को अखिल भारतीय कमांडर इन चीफ (सेनाध्यक्ष) कहा जाएगा।

(i) कोरम—एसएस दल प्रत्येक छह महीने में कम से कम एक बार बैठक करेंगे, और समय पर इस संविधान से मेल खाते हुए विनियम बनाएंगे।

(ii) छमाही बैठकों की तारीखें अध्यक्ष तय करेगा, और वह जब कभी उचित समझे और कम से कम एक तिहाई सदस्यों के अनुरोध पर और इस अनुरोध की प्राप्ति के बीस दिन के भीतर एक विशेष की तारीख तय करेगा।

(iii) छमाही बैठक के लिए कम से कम पंद्रह दिन और विशेष बैठक के लिए कम से कम दस दिन का नोटिस सदस्यों में प्रचारित किया

जाएगा जिसमें इस बैठक के समय, स्थान और इसकी जानकारी होगी कि इसमें क्या काम होता है।

(iv) किसी भी बैठक में यदि कुल सदस्यों मे ंसे किसी भी समय प्रारंभ से अंत तक एक तिहाई से कम सदस्य उपस्थित रहते हैं, तो सभापति बैठक को स्थगित कर उसे अगले या आगे के किसी अन्य दिन किसी उचित समय के लिए वे ही काम तय कर सकता है जो पहले की बैठक में लाए गए थे और इनको ऐसी बैठक में निपटाया या तत्पश्चात् के लिए स्थगित किया जा सकता है, चाहे बैठक का कोरम पूरा होता हो अथवा नहीं।

(v) प्रत्येक बैठक की अध्यक्षता अध्यक्ष या उसकी अनुपस्थिति में उपाध्यक्ष अथवा यदि वह भी उपस्थित नहीं है तो बैठक द्वारा चुने गये सदस्य द्वारा की जाएगी और उस समय के लिए अध्यक्षता वह ही करेगा।

(vi) सभी प्रश्नों पर निर्णय उपस्थित सदस्यों के बहुमत से किए जाएंगे। बराबर मत पड़ने की स्थिति में अध्यक्ष, उपाध्यक्ष या सभापति का दूसरा अथवा निर्णायक मत हो सकता है।

(7) नियमित कार्य

सोमवार – – नैतिक
मंगलवार – – खेलकूद और शारीरिक व्यायाम
बुधवार – – सैनिक कवायद
बृहस्पतिवार – – खेलकूद और शारीरिक व्यायाम
शुक्रवार – – प्राथमिक चिकित्सा
शनिवार – – सैनिक कवायद
रविवार – – राजनैतिक एवं सामाजिक

(8) अनुशासन :

यदि दल का कोई सैनिक या अधिकारी धूम्रपान, शराब पीने या वैध आदेशों को न मानने का अथवा अन्य बुरी आदतों का दोषी पाया जाता है तो उसे एक बार चेतावनी दी जाएगी। और यदि चेतावनी के बावजूद वह इन हरकतों से बाज नहीं आता तो उससे उसकी यूनीफॉर्म और पदवी ले ली जाएगी और उसे दल से निकाल दिया जाएगा।

(9) यूनीफॉर्म :

वस्त्रों के संबंध में दल के सैनिकों एवं अधिकारियों को निम्नलिखित नियमों का पालन करना चाहिए :

सैनिक खाकी हाफ पैंट
खाकी हाफ शर्ट
फोल्डिंग कैप
कैनवस के कत्थई जूते या
पठानी मोजे और चप्पल

गैर–अधिकारी खाकी हाफ पैंट
खाकी हाफ शर्ट
कत्थई जूते
खाकी ऊनी मोजे
एक छड़ी, एक सीटी और खाकी पट्टी

वरिष्ठ–अधिकारी बुशकोट के साथ सब कुछ जो ऊपर दिया गया है।

(10) दल का कोष :

(1) दल का पूरा धन अखिल भारतीय अनुसूचित जाति फेडरेशन और दल के जी.ओ.सी. दोनों के द्वारा नियुक्त विरीक्षक के द्वारा एस.एस.डी. के नाम से स्वीकृत बैंक या बैंकों में जमा किया जाएगा जिसका संचालन दल का जी.ओ.सी. और महामंत्री करेगा।

(2) एस.एस. दल की सभी शाखाएं अपने–अपने प्रांतों या जिलों में बैंक अथवा बैंकों को चुनेंगी और एस.एस. दल का सारा धन इस बैंक अथवा बैंकों में उसके नाम से जमा करेंगी इस खाते का संचालन उसकी और आम सभा द्वारा अधिकृत किन्हीं तीन लोगों द्वारा किया जाएगा।

(11) झंडा :

अखिल भारतीय समता सैनिक दल का झंडा 4 फुट लंबा और ढाई फुट चौड़ा होगा। झंडे का रंग गहरा नीला होगा जिसके सबसे ऊपर बायें कोने पर सफेद रंग का 11 कोणीय तारा बना होगा। झंडे के बीच में सफेद रंग का सूरज भी होगा। सूरज के नीचे नीले रंग से मोटे अक्षरों में एस.सी.एफ. लिखा होगा। झंडे के नीचे के दायें कोने पर सफेद रंग से एस.एस.डॉ. अक्षर बने होंगे। झंडे का अर्थ स्वतंत्रता, समता, भाईचारा और अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए लड़ना है।

परिशिष्ट – III

"खरी खरी बात"

22 सितंबर, 1944 की शाम को डॉ. भीमराव अम्बेडकर का नागरिक अभिनंदन कर मद्रास ने स्वयं को गौरवान्वित किया है। डॉ. अम्बेडकर एक विशाल समुदाय के सर्वमान्य नेता हैं जिसको सदियों से सामान्य नागरिक के अधिकारों से वंचित रखा गया है। अपनी उच्च उपलब्धियों, अपने साहसी नेतृत्व और असाधारण गुणों से उन्होंने स्वयं को एक ऐसा नेता प्रमाणित कर दिया है, छोटे–छोटे मामलों पर मतभेदों के बावजूद हर किसी के द्वारा सम्मान किए जाने योग्य है। अतः यह खेद का विषय है कि ऐसे व्यक्ति के नागरिक अभिनंदन का विरोध एक राजनीतिक पार्टी–कांग्रेस पार्टी द्वारा किया जा रहा है और कि इसके सदस्य समारोह में शामिल नहीं हुए हैं। परंतु यह रूख न तो नया है और न ही आश्चर्यजनक। जो पार्टी हमेशा से सर्वसत्तावादी तरीकों से निदेशित रही है और जिसने कभी भी सार्वजनिक जीवन तथा सार्वजनिक आचरण में शिष्टाचार का प्रदर्शन किया है, उससे यह आशा नहीं की जानी चाहिए कि वो अन्य राजनीतिक विचारधारा के नेताओं के प्रति अपना बैर–भाव दिखाने का कोई अवसर चूकेगी। परंतु हम महसूस करते हैं कि डॉ. अम्बेडकर का नागरिक अभिनंदन उस मायने में और भी अधिक अर्थपूर्ण था जिसमें इसका आयोजन किया गया था क्योंकि इसका आयोजन किया गया था क्योंकि यह सभ्यता की परंपरागत लीक से हटकर था। अभिनंदन के उत्तर में डॉ. अम्बेडकर सरलता के साथ बोले और अपने विचार व्यक्त किए जिनसे हमारे देशवासियों का बड़ा हिस्सा सहमत है। एक ऐसे समय में जब राजनीतिक सुधारों की योजना पर विचार हो रहा है, और जब स्वाधीनता के लक्ष्य पर जोर दिया जा रहा है, तब ऐसे विभन्न कारणों का सही मूल्यांकन करना है जिन पर ध्यान रखना चाहिए। अतः इन परिस्थितियों में यह स्वाभाविक ही है कि अतीत के सबको, खासतौर पर निकट अतीत के सबको भुलाया नहीं जाए। इन सबको का उल्लेख करते हुए डॉ. अम्बेडकर ने विचार व्यक्त किया, "इस देश में चाहे उन्होंने कुछ भी किया हो, शासक समुदाय हमेशा ब्राह्मण रहे हैं। ऊपर केवल वे आए हैं, और कोई नहीं। सात प्रांतों में ब्राह्मण प्रधानमंत्री (या मुख्यमंत्री)? ब्राह्मण थे और मंत्रिमंडल में ब्राह्मणों की संख्या आधी थी। चुनावों ने यह सिद्ध कर दिया है कि इस देश में शासक वर्ग बनना केवल एक समुदाय के भाग्य में है और वो शासक वर्ग के रूप में सामने आया है। हमारे पाठकों को यह नोट करना दिलचस्प होगा कि मंत्रिमंडल में फेरबदल होने के समय प्रधानमंत्री के तौर पर केवल ब्राह्मण को ही चुना गया था और इस प्रकार यह परंपरा कायम कर दी

गई थी कि समर्थ का वारिस केवल समर्थ ही होना चाहिए। यह सुनिश्चित करने पर बढ़िया तरीका कांग्रेस संसदीय दल का गठन या कि सत्ता और नियंत्रण सदा सम्मानित शासक वर्ग के पास ही रहे। उम्मीदवार के चुनाव में अंतिम निर्णय प्रांतीय कांग्रेस कमेटियों का नहीं, बल्कि संसदीय दल के अध्यक्ष का था। इस मामले में प्रांतीय कमेटियों के अध्यक्षों का भी कोई दखल नहीं था, बल्कि इन सिफारिशों पर ससंदीय दल की अंतिम स्वीकृति प्राप्त करने का काम कांग्रेस के श्री राजगोपालाचारी जैसे सदस्यों के जिम्मे था। इन परिस्थितियों में इसमें आश्चर्य की क्या बात कि उन गैर–ब्राह्मणों के लिए उम्मीदवार के तौर पर नामजद किए जाने तक की कोई संभावना नहीं जो किसी न किसी हद तक स्वतंत्र थे और अपने आपको दब्बू तथा आज्ञाकारी सिद्ध नहीं कर सकते थे। इन हालात में क्या हमारे किसी भी देशवासी को इस पर कोई आश्चर्य होगा कि डॉ. रामलिंगा रेड्डी जैसे व्यक्ति को जो पिछली विधानसभा में कांग्रेस विरोध पक्ष के नेता थे, चुना नहीं गया और उनको ठंडे बक्से में डाल दिया जबकि सैंकड़ों अचानक मशहूर हो गए और उम्मीदवार चुन लिए गए अभी तक जिनके नाम और ख्याति कांग्रेस के अभिलेखागार में दबे पड़े थे?

सत्ता के लिए उम्मीदवारों का चुनाव तक संसदीय बोर्डों में केंद्रित था। अतः कोई आश्चर्य की बात नहीं कि मुख्यमंत्रियों को चुनने का काम पूरे तौर पर थोड़े–से लोगों पर छोड़ दिया गया था। स्वाभाविक रूप से सभी मुख्यमंत्री ब्राह्मण थे। श्री राजगोपालचारी, श्री खेर, पंडित पंत, श्री बार्दोलाई, पंडित शुक्ला इत्यादि जैसे सभी महाचुनाव चयनित जाति के ही होते थे, और अपनी ओर से उन्होंने यह ध्यान रखा कि उनके मंत्रिमंडल के कम से कम आधे सदस्य शासक नस्ल के सदस्य हों। आप मताधिकार का चाहे कितना विस्तार कर लें, आप वयस्क मताधिकार दे सकते हैं, लेकिन ऊपर केवल शासक नस्ल के लोग ही आएंगे। मंत्रिमंडलों से न केवल पचास प्रतिशत ब्राह्मण थे, बल्कि प्रतिष्ठा और अधिकार के प्रायः महत्वपूर्ण मंत्रालय उन्हीं के हाथों में उनके नियंत्रण में रहने चाहिए। अतः यदि अपनी ही प्रेसीडेंसी को देखा जाए तो पुलिस, सार्वजनिक सेवाएं, राजस्व, औषधि एवं सार्वजनिक स्वास्थ्य, उद्योग, धार्मिक स्थायी निधि–वास्तव महत्व की ब्राह्मण उनके नियंत्रण में रहनी चाहिए। उसके ऊपर और अतिरिक्त झूठन के तौर पर जो कुछ विभाग गैर–ब्राह्मणों मुस्लिमों या दलित वर्ग के मंत्रियों को दिए गए थे, उन पर भी मुख्यमंत्री का नियंत्रण और निर्देश होना चाहिए और उसका आदेश चलना चाहिए। जिस कार्यविधि के द्वारा पूरी सत्ता प्रभावशाली ढंग से छोटे समुदाय के प्रतिनिधियों में केंद्रित की गई थी, उसको अन्य छह प्रांतों में भी, और वो भी एक बार फिर सरकार के जनतांत्रिक रूप की आड़ में लागू किया गया था–पेशवाओं के उत्तराधिकारियों का बुद्धिमतापूर्ण नियम

जारी रखा गया। इस नीति का अनिवार्य परिणाम यह हुआ कि अन्य राष्ट्रीयताओं की दासता जारी रही और ब्रिटिश प्रशासकों तथा गवर्नरों की मदद से सत्ता और अधिकार का बेलगाम इस्तेमाल होता रहा जिसका मकसद ऐसे तत्वों को दबाना था जो विरोध की अपनी कमजोर आवाजों को उठाने की हिम्मद कर सकते हों। इस प्रेसीडेंसी में इन तथाकथित हिंदी आंदोलनकारियों को दबाने केंद्रीय प्रदेशों और बंबई में विद्यामंदिर स्थापित करने के लिए बहुत बदनाम फौजदारी कानून, संशोधन अधिनियम का प्रयोग जनतंत्र की प्रकृति का एक स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत करते हैं, जिसकी आशा भी की जानी चाहिए।

इसलिए डॉ. अम्बेडकर ने जो चेतावनी दी है वो सामयिक और आवश्यक है, ''हमें यह प्रश्न करना चाहिए'' वह कहते हैं, ''क्या किसी देश विशेष के शासक वर्ग में उत्तरदायित्व की कोई भावना है जिसमें कि उस देश की सरकार को उसके हवाले किया जा सके। हम सब यह तथ्य भूल चुके हैं कि शासन करने के अधिकार का निर्धारण शासक वर्ग के उत्तरादायित्व की भावना के प्रकाश में किया जाना चाहिए। शासक वर्ग का दृष्टिकोण क्या है? उसका दर्शन क्या है? वो किसमें विश्वास करता है?'' इन प्रश्नों का उत्तर देते हुए डॉ. अम्बेडकर उचित ही कहते हैं, ''अगर आपका शासक वर्ग श्रेणीगत असमानता में विश्वास करता है, अगर वह उसमें विश्वास करता है कि आपको किसी अन्य मनुष्य को नहीं छूना चाहिए, अगर वो विश्वास करता है कि शिक्षा पाने का अधिकार केवल किसी एक वर्ग को है, दूसरे को नहीं, अगर वो विश्वास करता है कि संपत्ति का अधिकार केवल एक वर्ग को है और दूसरा वर्ग केवल गुलामी करने और गुलामी में मरने को पैदा हुआ है, ऐसे में यदि कोई राष्ट्रीय सरकार बनती है और ऐसे हाथों में जाती है तो क्या आप सोचते है कि ऐसी राष्ट्रीय सरकार वर्तमान भारत सरकार से बेहतर होगी? ये संदेह किसी भी तरह से काल्पनिक नहीं है। दूसरी ओर वे अतीत के कड़वे अनुभवों और वर्तमान की आशंकाओं पर आधारित है। इस सच को छुपाने का कोई लाभ नहीं कि शासक वर्ग की सामान्यजन से कोई दिलचस्पी नहीं और यदि है भी तो बहुत कम। महान डाथोस के शब्दों में उनके वक्ता बर्क या कोबडेन की तरह भाषण झाड़ सकते हैं, लेकिन उनके काम उनकी बातों की कलई उतार देते हैं। शिक्षा में उनकी दिलचस्पी अपने समुदायों को सुविधाएं दिलाने तक सीमित है। नौकरियों के लिए उनका संघर्ष तभी जोरदार होगा जब उनका लाभ उनके नाते–रिश्तेदारों को पहुंचाता हो। स्व–शासन के पक्ष में उनके सबसे शक्तिशाली तब तक ही होंगे जब तक इससे उनके लोगों को सत्ता में बने रहने में सहायता मिलती है। अगर इस प्रकार की सफलता की कोई संभावना नहीं होती वे कलाबाजी करेंगे और धारा–93 को लागू करने को कहेंगे।

डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी ने ब्रिटिश सरकार से जब बंगाल के मौजूदा मंत्रिमंडल को उलट देने और धारा–93 के अधीन सरकार प्रस्तुत करने का आग्रह किया था तब वह किसी प्रकार से अपने निजी विचारों या इच्छाओं को व्यक्त नहीं कर रहे थे। वह किसी मायने में अपवाद नहीं थे। और भावी संविधान का निर्माण करने में विभिन्न राष्ट्रीयताओं को उन तथ्यों का ध्यान रखना चाहिए और देखना चाहिए कि भारत का राजनीतिक भविष्य गुलामी के गड़े मुर्दे के आगे नहीं झुकता और शासक वर्ग को एक बार फिर अधिनायकवादी सिंहासन पर नहीं बिठाती है। अपनी खरी–खरी बातों से ''डॉ. अम्बेडकर ने स्वतंत्रता के लक्ष्य की भारी सेवा की है और भारत के भविष्य की। इसके लिए हम उनको हृदय से धन्यवाद देते हैं।''

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान
DR. AMBEDKAR FOUNDATION

☎ 23320571
23320589
23320576
FAX : 23320582

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
MINISTRY OF SOCIAL JUSTICE AND EMPOWERMENT
भारत सरकार
GOVERNMENT OF INDIA

निदेशक
DIRECTOR

15, जनपथ,
15, JANPATH
नई दिल्ली - 110001
NEW DELHI-110001

दिनांक – 31.10.2019

रियायत नीति (Discount Policy)

सक्षम प्राधिकारी द्वारा यह निर्णय लिया गया है कि पहले के नियमों के अनुसार CWBA वॉल्यूम के संबंध में रियायत नीति (Discount Policy) जारी रखें। तदनुसार, CWBA इंग्लिश वॉल्यूम (डिलक्स संस्करण–हार्ड बाउंड) के एक पूर्ण सेट की कीमत और CWBA हिंदी वॉल्यूम (लोकप्रिय संस्करण–पेपर बाउंड) के एक पूरे सेट की कीमत निम्नानुसार होगी :

क्र.सं.	सीडब्ल्यूबीए सेट	रियायती मूल्य प्रति सेट
	अंग्रेजी सेट (डिलक्स संस्करण) (वॉल्यूम 1 से वॉल्यूम 17)– 20 पुस्तकें।	रू 2,250/–
	हिंदी सेट (लोकप्रिय संस्करण) (खंड 1 से खंड 40 तक)– 40 पुस्तकें।	रू 1073/–

2. एक से अधिक सेट के खरीदारों को सेट की मूल लागत (Original Rates) यानी रू 3,000/–(अंग्रेजी के लिए) और रू 1,430/–(हिंदी के लिए) पर छूट मिलेगी जो कि निम्नानुसार है।

क्र.सं.	विशेष	मूल लागत पर छूट का प्रतिशत
	रू 1000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	10%
	रू 1001–10,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	25%
	रू 10,001–50,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	33.3%
	रू 50,001–2,00,000/– रुपये तक की पुस्तकों की खरीद पर	40%
	रू 2,00,000/– से ऊपर की पुस्तकों की खरीद पर	45%

3. इच्छुक खरीदार प्रतिष्ठान की वेबसाइट : www.ambedkarfoundation.nic.in पर विवरण के लिए जा सकते हैं। संबंधित CWBA अधिकारी / पीआरओ को स्पष्टीकरण के लिए दूरभाष नंबर 011–23320588, पर कार्य दिवसों में पूर्वाह्न 11:30 बजे से शाम 5:30 बजे तक संपर्क किया जा सकता है।

(देबेन्द्र प्रसाद माझी)
निदेशक, डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

बाबासाहेब डॉ. अम्बेडकर सम्पूर्ण वाङ्मय (भाग-II)

खंड 22	बुद्ध और उनका धम्म
खंड 23	प्राचीन भारतीय वाणिज्य, अस्पृश्य तथा 'पेक्स ब्रिटानिका', ब्रिटिश संविधान भाषण
खंड 24	सामान्य विधि औपनिवेशिक पद, विनिर्दिष्ट अनुतोशविधि, न्यास–विधि टिप्पणियां
खंड 25	ब्रिटिश भारत का संविधान, संसदीय प्रक्रिया पर टिप्पणियां, सामाजिक व्यवस्था को बनाए रखना–विविध टिप्पणियां
खंड 26	प्रारूप संविधान : भारत के राजपत्र में प्रकाशित : 26 फरवरी 1948
खंड 27	प्रारूप संविधान : खंड प्रति खंड चर्चा (9.12.1946 से 31.7.1947)
खंड 28	प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–5) (16.5.1949 से 16.6.1949)
खंड 29	प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–6) (30.7.1949 से 16.9.1949)
खंड 30	प्रारूप संविधान : भाग II (खंड–7) (17.9.1949 से 16.11.1949)
खंड 31	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग– I)
खंड 32	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और हिंदू संहिता विधेयक (भाग– II)
खंड 33	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख और वक्तव्य (20 नवंबर 1947 से 19 मई 1951)
खंड 34	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख और वक्तव्य (7 अगस्त 1951 से 28 सितंबर 1951)
खंड 35	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : मानवाधिकारों के परिप्रेक्ष्य में
खंड 36	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : सामाजिक, राजनीतिक, धार्मिक गतिविधियों के परिप्रेक्ष्य में
खंड 37	डॉ. भीमराव अम्बेडकर और उनकी समतावादी क्रांति : भाषण
खंड 38	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य, भाग–1 (वर्ष 1920 – 1936)
खंड 39	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य, भाग–2 (वर्ष 1937 – 1945)
खंड 40	डॉ. भीमराव अम्बेडकर : लेख तथा वक्तव्य, भाग–3 (वर्ष 1946 – 1956)

ISBN (सेट) : 978-93-5109-129-5

रियायत नीति के अनुसार
सामान्य (पेपरबैक) खंड 01-40
के 1 सेट का मूल्य : ₹ 1073/-

प्रकाशक :

डॉ. अम्बेडकर प्रतिष्ठान

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
भारत सरकार
15, जनपथ, नई दिल्ली – 110 001
फोन : 011–23320571
जनसंपर्क अधिकारी फोन : 011–23320588
वेबसाइट : http://drambedkarwritings.gov.in
ईमेल : cwbadaf17@gmail.com